सैद्धान्तिकी

संपादक

डॉ॰ माला मिश्र

प्रोफेसर, अदिति महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

डॉ॰ एस. लिंगमूर्ति

असिस्टेंट प्रोफेसर, कर्नाटक केन्द्रीय विश्वविद्यालय, कलबुर्गी

रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन एवं हाशमी पी. जी. कॉलेज अमरोहा के संयुक्त तत्वाधान में
रघुराज पीपल मैन रिसर्च समिति द्वारा आयोजित

द्विदिवसीय अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी एवं शोध-पत्र वाचन

दिनांक: 19 और 20 अप्रैल 2024

विशेषांक

"पर्यावरणीय मुद्दे और उसका सतत विकास"

"ENVIRONMENTAL ISSUES & SUSTAINABLE DEVELOPMENT"

मुख्य संपादक

डॉ० नम्रता जैन

संयोजक एवं समन्वयक अंतरराष्ट्रीय संगोष्ठी
अध्यक्ष, रघुराज पीपल मैन रिसर्च समिति

अलका पब्लिकेशन्स

220, पॉकेट-5, मयूर विहार, फेज-I, दिल्ली-110091

वर्ष : 17 अंक : 2 ❑ अप्रैल–जून, 2024

सैद्धान्तिकी

संपादकीय सम्पर्कः

220, पॉकेट–5, मयूर विहार, फेज–1,
दिल्ली–110091
फोन : 011–40564514, 011–22753916, 8510050610
e-mail : saidhantiki.journal@gmail.com

शाखा कार्यालयः

502, सरस्वती टॉवर, कुसुमपुरम, पटना–801503
फोन : 6201418851

मुख्य संपादक

डॉ॰ नम्रता जैन

संयोजक एवं समन्वयक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी
अध्यक्ष, रघुराज पीपल मैन रिसर्च समिति

मुख्य सह संपादक

डॉ॰ रघुराज

कार्यक्रम निदेशक, अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी चेयरमैन, रघुराज पीपल मैन रिसर्च समिति

डॉ॰ ग्यासुद्दीन हाशमी

कार्यक्रम सचिव, अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी पर्यावरण अधिवक्ता (उच्चतम न्यायालय)

सह संपादक

डॉ॰ रत्नेश जैन, डॉ॰ कल्पना जैन

सह–समन्वयक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

विनय कुमार, धर्मेन्द्र सिंह

सह–संयोजक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी

सम्पादक की कलम से

पर्यावरण विज्ञान और सतत विकास का यह विशेष अंक विकासशील क्षेत्रों में सतत विकास और पर्यावरण प्रबंधन के लिए एकीकृत दृष्टिकोणों पर केंद्रित है, जो समकालीन पर्यावरणीय और सामाजिक चुनौतियों के विभिन्न पहलुओं को संबोधित करता है। आज प्रत्येक राष्ट्र में पर्यावरण के प्रति जागरूकता विकसित हुई और पर्यावरणीय नीतियों का निर्माण किया गया है। हुई जनसंख्या और विभिन्न विकास योजनाओं ने पर्यावरण का संकट उत्पन्न किया है। चरागाह नष्ट हो रहे हैं, जिससे चारा जुटाने का भार जंगलों और फिर खेती की जमीन पर आ गया है। केस स्टडीज पर लागू बहु–विषयक दृष्टिकोणों का उपयोग करते हुए, लेखक यह पता लगाते हैं कि जलवायु परिवर्तन, प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन और सामुदायिक भागीदारी शहरों और समुदायों की स्थिरता को कैसे प्रभावित कर सकती है। इस विशेष अंक में योगदान शहरी विकास से संबंधित वैश्विक चुनौतियों का समाधान करने, टिकाऊ भूमि प्रबंधन को बढ़ावा देने, कार्बन उत्सर्जन को कम करने, प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने और शहरी और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में अधिक जिम्मेदार प्रथाओं को प्रोत्साहित करने के लिए एक सुसंगत और सहयोगी दृष्टिकोण के महत्व को भी दर्शाता है।

पर्यावरण दो शब्दों 'परि' और 'आवरण' से मिलकर बना है जिनका शाब्दिक अर्थ 'परि' = चारों और 'आवरण' = घेरा है अर्थात् हमें चारों ओर से घेरने वाला पर्यावरण है। लुई थॉमस ने अपनी पुस्तक The Lives of a Cell में धरती को एक जीवन्त सेल कहा है और उसके चारों ओर के वातावरण की उसकी रक्षा का एक परदा बताया है। यह रक्षा कवच पर्यावरण है जो धरती की सतह के ऊपर हवा को रोक रखने में सहायता करता है। पर्यावरणीय ज्ञानकोष (1975) के अनुसार पर्यावरण उन सब परिस्थितियों और प्रभावों का कुल योग है जो जीवधारियों के जीवन और विकास को प्रभावित करते हैं। साधारण शब्दों में, जीवित प्राणियों के अस्तित्व, जीवन और पुनरुत्पादन को प्रभावित करने वाले सभी तत्व और कारक पर्यावरण कहलाते हैं। प्रकृति एक निश्चित नियमवद्धता से कार्य करती है। यदि उसके किसी अवयव या क्रिया के साथ छेड़खानी की जाये तो उसका सन्तुलन बिगड़ जाता है। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के प्रयोग से बढ़ायी गयी मानव की उत्पादन क्षमता ने पर्यावरण के प्रदूषण का संकट उत्पन्न किया है।' पर्यावरण के विविध अंगों जल, स्थल, आकाश, वायु आदि में ऐसा परिवर्तन जो कि उपर्युक्त तत्वों के भौतिक, रासायनिक, जैविक गुणों में हानिकारक परिवर्तन कर दे, प्रदूषण कहा जाता है।

वर्तमान समय में हमारी प्रमुख समस्या प्रदूषण है। विश्व में औद्योगीकरण और तकनीकी विकास के फलस्वरूप पर्यावरणीय प्रदूषण इतना बढ़ चुका है कि प्रकृति का सन्तुलन बिगड़ता जा रहा है। विश्व पर्यावरण एवं विकास आयोग की रिपोर्ट के अनुसार जीवाश्मिक ईंधन के दहन से वायुमण्डल में कार्बन डाइऑक्साइड की मात्रा बढ़ रही है जो विश्व के तापमान को धीरे-धीरे बढ़ा रही है। आगामी शताब्दी के आरम्भ में यह 'ग्रीन हाउस प्रभाव' विश्व के औसत तापमान 'को इतना बढ़ा सकता है कि हमें कृषि उत्पादन के क्षेत्र बदलने पड़ सकते हैं, समुद्री जल–स्तर बढ़कर तटीय नगरों में बाढ़ ला सकते हैं तथा राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था चरमरा सकती है। आयोग ने इन्हें विकास की असफलताएँ और मानवीय पर्यावरण के व्यवस्थापन की कमियाँ कहा है। यह समस्या विकसित और विकासशील दोनों देशों के समक्ष है यद्यपि उसका स्तर और स्वरूप भिन्न हो सकता है। अतः विश्व के समस्त देशों में जनसाधारण अब पर्यावरण के प्रदूगण और प्राकृतिक संसाधनों के तीव्र विनाश के प्रति चिन्तित हो गये हैं और पर्यावरण संरक्षण के लिए वन–आन्दोलन विश्व स्तर पर देखे जा सकते हैं। आज प्रत्येक राष्ट्र में पर्यावरण के प्रति जागरूकता विकसित हुई और पर्यावरणीय नीतियों का निर्माण किया गया है।

डॉ० नम्रता जैन

संयोजक एवं समन्वयक अन्तर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, अध्यक्षा, रघुराज पीपल मैन रिसर्च समीति

रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन की कलम से...

“पर्यावरणीय मुद्दे एवं सतत विकास को बढ़ावा दे रहा हैं रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन”

“पृथ्वी के पास हमारी जरूरतों के लिए पर्याप्त संसाधन हैं लेकिन हमारे लालच के लिए नहीं।”

महात्मा गांधी जी का यह अकेला कथन ही “पर्यावरण संरक्षण पर्यावरणणीय मुद्दे उसका सतत विकास” की उन तमाम परिभाषाओं को जीवंत कर देता है। जो यह समाज सदियों से देता आ रहा है........खैर, आज यह कहने में हमें गर्व होगा कि हम आधुनिकता के इस दौड़ में अन्य लोंगो से कहीं आगे हैं......, हाँ...शायद यह सच भी है, क्योंकि विकास के आगे हमने आँखें बड़ी खोल रखी हैं। लेकिन जब भी हम उसी आँख से विकास के साथ पर्यावरण की स्थिति को देखते हैं तो हमारी आँखें धुंधली नजर आती हैं। यह पहली बार नही है कि बदलते समय के साथ पर्यावरण की परिभाषायें भी बदली हैं, लेकिन हमें यह समझना होगा कि ‘पर्यावरण’ एक जीवित सच्चाई है जिसके बिना मानव शून्य है।

लेकिन हम लोंगों में से ही कईयों ने धुंधली आंखों को साफ किया और सच्चाई को स्वीकार कर कुछ कर गुजरने का निर्णय लिया। उनमें से ही एक किरदार हैं रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन का जो पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरणीय मुद्दे और सतत विकास के लिये निरंतर कार्य कर रही हैं। आइये जानते हैं.....

रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन के बारे में....

रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन हमीरपुर उत्तर प्रदेश एक गैर-लाभकारी संगठन है जो पर्यावरण संकट, जलवायु परिवर्तन, जल संरक्षण, स्वास्थ्य, मिट्टी संरक्षण, ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में शिक्षा को बढ़ावा देने और दुनिया में कुपोषण से निपटने के साथ-साथ भोजन की बर्बादी को रोकने के लिए काम कर रहा है। पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में जागरूकता। संगठन वर्तमान में पर्यावरणीय चुनौतियों का समाधान विकसित करने के लिए सरकारों, व्यवसायों और अन्य गैर-लाभकारी संगठनों और नागरिकों के साथ मिलकर काम करता है। संगठन हितधारकों के बीच संबंध भी बनाता है और दुनिया भर में विकास को लागू करने और बढ़ावा देने में भी मदद करता है

अभी तक फाउंडेशन के माध्यम से पुरे भारत में लगभग 40-45 हजार विभिन्न प्रकार के पौधों का रोपण किया जा चुका हैं साथ ही फाउंडेशन से प्रेरित होकर देश अन्य देश के सामाजिक कार्यकर्ताओं और नागरिकों ने फाउंडेशन के नाम कई लाख पौधों का रोपण कर मिशाल कायम की हैं और जनजागरूकता का माध्यम बने हैं, वही तेजी से बढ़ते भौतिकतावादी युग में पर्याप्त भोजन ना मिलने की वजह से कई अन्तर्राष्ट्रीय रिपोर्ट में देखा गया हैं अधिकांश नागरिक भूख से और कुपोषण के शिकार हो रहें हैं उसको देखते हुए फाउंडेशन ने भोजन बर्बाद न हो उसके लिए पीपल मैन द्वारा दिया गया स्लोगन..

“थाली में भोजन उतना ही ले जितना आप खा सकें,

पैसे जरूर आपके हैं सांसधान सभी के हैं मुहीम को भी आगे बढ़ाया और अभी तक भारत के साथ-साथ कई पड़ोसी देशों में यह अभियान जनजागरूकता का माध्यम बन गया हैं पिछले कई वर्षो से चल रहें इस अभियान से कई लाख नागरिक जागरूक हुए और कई हजार नागरिकों के लिए भोजन बचाने का काम फाउंडेशन ने किया।

वह फाउंडेशन द्वारा समय समय पर स्कूल, कॉलेज, कोचिंग, यूनिवर्सिटी, पब्लिक प्लेस में नुक्कड़ वार्तालाप कर एवं सेमिनार के माध्यम से अभी तक लगभग 5 लाख बच्चों को पेड़ लगाने, पर्यावरण संरक्षण जल संरक्षण, भोजन ना बर्बाद करने शिक्षा, स्वास्थ्य, महिलाओं के संरक्षण आदि के लिए जागरूक किया जा चुका हैं आगे भी फाउंडेशन के निदेशक नितेश कुमार जी, निदेशक रजनी मंन्द्रे जी एवं फाउंडेशन की टीम पर्यावरणीय मुद्दे और सतत विकास के लिए और राष्ट्रीय के विकास के लिए संकल्पबध्य हैं और प्रकृति और विश्व के लिए समर्पित हैं।

– डॉ० रघुराज

कार्यक्रम निदेशक एवं चेयर परसन, रघुराज पीपल मैन फाउंडेशन

पर्यावरण सामाजिक मुद्दे, सुरक्षा, समस्याएँ, सतत विकास

डॉ. गयास उद्दीन हाशमी एडवोकेट

पर्यावरण संरक्षक, पर्यावरणविद

प्रिय साथियों

पर्यावरणविद, ...

मैं आपको आज संबोधित करते हुए अत्यंत खुश हूँ, क्योंकि हम आज विश्वास के साथ साथ सुस्थितिपूर्ण विकास और पर्यावरण के महत्वपूर्ण विषयों पर चर्चा करने जा रहे हैं। मैं डॉ. गयास उद्दीन हाशमी हूँ, जो कि पर्यावरण संरक्षक, पेशे से वकील और एक डॉक्टर हूँ। मेरा संघर्ष पर्यावरण के संरक्षण और संवर्धन के लिए हमेशा से रहा है, और आज भी जारी है। मैंने अपने जीवन के दौरान 1,57,000 से अधिक पेड़ लगाए हैं, जो मेरे प्यार और समर्पण का प्रतीक है।

पर्यावरण क्या है? मेरी समझ से तो यह हमारा अपना घर है, जिसमें हम सभी रहते हैं। यह कुछ ऐसा नहीं है जो हमसे जुदा हो और हमारे घर के बाहर कहीं दूर स्थित हो, और जिसमें होने वाले किसी भी परिवर्तन का हम पर कोई भी प्रभाव न पड़ता हो। कम से कम हमारा भारतीय दर्शन तो यही कहता है।

भारतीय दर्शन के अनुसार पर्यावरण से मानव का सम्बन्ध माता-पिता व सन्तान का बताया गया है, अर्थात मानव का अस्तित्व पर्यावरण पर ही निर्भर है। किंतु मानव-बुद्धि की श्रेष्ठता के अहंकार और अत्याधुनिक प्रौद्योगिकी क्षमता की सफलता से ओत-प्रोत होकर इंसान ने स्वयं अपने अस्तित्व के लिये संकट खड़ा कर लिया है।

पर्यावरण के मामले में, विश्व की वातावरणिक स्थिति एक चिंताजनक मुद्दा बन चुका है। आज के दिनों में, जलवायु परिवर्तन और ग्लोबल वार्मिंग की समस्या विश्वभर में बढ़ चुकी है। इसके परिणामस्वरूप, जीवन के संपूर्ण क्षेत्रों में नुकसान हो रहा है, चाहे वह प्राकृतिक आपदाएं हों, वाणिज्यिक उत्पादन के असंतुलन या जनसंख्या की बेतहाशा बढ़ोतरी।

पेड़ों का महत्व और वनों की कटाई के प्रभाव पर चर्चा करते हुए, हमें यह समझना चाहिए कि पेड़ों और वनों का प्राकृतिक संसाधनों में महत्व क्या है। पेड़ों का अत्यधिक महत्व है जैसे कि ऑक्सीजन प्रदान करना, वायुमंडल को शुद्ध करना, जल को संचयित करना, और जलवायु परिवर्तन का सामना करने में मदद करना।

लेकिन दुर्भाग्यवश, हमारी मानव समुदाय ने बड़ी संख्या में वनों की कटाई की है, जिससे पर्यावरण को बड़ा नुकसान हुआ है। वनों की कटाई के कारण, हमारे प्राकृतिक जीवनसंस्थानों को नुकसान हुआ है, जलवायु परिवर्तन के साथ-साथ जलवायु त्रासदी का भी सामना करना पड़ रहा है।

अब हमें इस समस्या का समाधान निकालना होगा और संवेदनशील विकास के माध्यम से हमें अपने प्राकृतिक संसाधनों का सही उपयोग करना होगा। संवेदनशील विकास का मतलब है कि हमें विकास के प्रति जिम्मेदारीपूर्वक दिशा निर्देशित करना होगा, ताकि हम आने वाली पीढ़ियों को भी सुशासनपूर्ण प्राकृतिक संसाधनों का लाभ मिल सके। हमें अपने आप को एक संतुलित और समर्थ समाज के रूप में विकसित करना होगा, जो पर्यावरण के साथ हमारे संबंध को सही तरीके से बनाए रखेगा। इस प्रकार, हम स्थायी विकास की दिशा में अग्रसर होकर एक संतुलित और समृद्ध भविष्य का निर्माण कर सकेंगे।

2017 में आयी एक शानदार हिन्दी फिल्म "कड़वी हवा" में गुलजार साहब की एक अत्यंत मार्मिक कविता है-

> "बंजारे लगते हैं मौसम; मौसम बेघर होने लगे हैं।
> जंगल, पेड़, पहाड़, समंदर; इंसान सब कुछ काट रहा है,
> छील-छील कर खाल जमी की; टुकड़ा-टुकड़ा बाँट रहा है,
> आसमान से उतरे मौसम; सारे बंजर होने लगे हैं,

मौसम बेघर होने लगे हैं। दरियाओं पर बाँध बने हैं;
फोड़ते हैं सिर चट्टानों से, 'बंदी' लगती है ये जमीन;
डरती है अब इंसानों से, बहती हवा पर चलने वाले;
पाँव पत्थर होने लगे हैं, मौसम बेघर होने लगे हैं।"

हम यदि पिछले 25–30 वर्षों में अपने इर्द–गिर्द हो रहे परिवर्तनों और उनके परिणामों पर दृष्टि डालें तो कवि द्वारा रचित शब्दों का यह खेल, क्या अत्यंत कटु यथार्थ सिद्ध नहीं होता है?

अब से लाखों वर्ष पूर्व जब हमारे पूर्वज दो पैरों पर खड़ा होना सीख रहे थे और जब उनकी पूँछ हुआ करती थी, तब से लेकर अब तक, जब हम लोग मंगल ग्रह तक पहुँच रहे हैं, पर्यावरण ही हमेशा व्यक्ति के अस्तित्व का आधार रहा है। जब मानव इस धरा पर नहीं था, वायु, जल, वन, वन्य–जीव आदि प्राकृतिक तत्व तब भी पृथ्वी पर फल–फूल रहे थे। यानि पर्यावरण से ही हम हैं, हमसे पर्यावरण नहीं है। बिना हवा, पानी, मिट्टी, वनों और जैव–विविधता के हम लोग अपने अस्तित्व की कल्पना भी नहीं कर सकते, जिसके कारण विश्व की लगभग सभी प्राचीन सभ्यताओं में इन्हें देवतुल्य मानकर इनकी उपासना की गयी है। लेकिन दुर्भाग्य यह है कि इन प्राकृतिक तत्वों में अब कुछ भी पहले जैसा नहीं रहा है वरन इन सभी की स्थिति प्रत्येक गुजरते दिन के साथ बद–से–बदतर होती जा रही है, जिसके लिये स्पष्टतः अनियोजित व अंधाधुंध मानवीय गतिविधियां उत्तरदायी हैं।

दहाड़ जदीद सांध्य दैनिक समाचार पत्र रविवार 19 मई 2024 पृष्ठ-3

मेरा संघर्ष पर्यावरण के संरक्षण और संवर्धन के लिए हमेशा से रहा है : डॉ. ग्यास उद्दीन हाशमी

कहने की आवश्यकता नहीं है कि पर्यावरण में होने वाले इस ह्रास का सीधा प्रभाव मनुष्य पर पड़ रहा है और हमारे जीवन–स्तर में वास्तविक रूप से गिरावट आती जा रही है। 2013 की केदारनाथ त्रासदी (जिसके चिन्ह आज 10 वर्षों बाद भी साफ देखे जा सकते हैं) 2017 में अमेरिका में आये अति विनाशक चक्रवात श्इरमाश और श्हार्वेश (सिम्पसन स्केल पर क्रमशः कैटेगरी–4 व कैटेगरी–5 के तूफान), 2019 में अटलांटिक महासागर में उठे बेहद शक्तिशाली समुद्री तूफान श्डोरियनश (कैटेगरी–5 क्षमता का तूफान), 2022 में यूरोप की अविश्वसनीय हीट वेव (जिसने 6000 से अधिक जानें ले ली), 2023 में भारत में आया शबिपरजॉयश चक्रवात तो सिर्फ बानगी हैं। वास्तविकता इनसे कहीं अधिक भयानक रूप धारण कर रही है। यही कारण है कि मानव–बुद्धि की श्रेष्ठता स्थापित करने और अत्याधिक प्रौद्योगिकी विकास करने के बाद भी हमें प्रत्येक वर्ष पर्यावरण संरक्षण के लिये दुनिया भर के ताम–झाम, राष्ट्रीय व अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन, कॉन्फ्रेंस और सेमिनार, समझौते करने

के लिये मजबूर होना पड़ता है।

वास्तव में पर्यावरण में होम्योस्टेसिस क्रियाविधि (अर्थात किसी प्रकार के पारिस्थितिकी असंतुलन को स्वत: ठीक करने वाली स्वचालित क्रियाविधि) कार्य करती है परंतु यदि मानवीय गतिविधियों के फलस्वरुप उत्पन्न पारिस्थितिकी क्षरण की गति इस होम्योस्टेसिस क्रियाविधि को भी पीछे छोड़ दे, उस दशा में हम स्वयं अपना ही अस्तित्व समाप्त करने की इबारत लिख रहे होते हैं।

पर्यावरण संरक्षण में आम जन का सहयोग जरूरी है पर्यावरण संरक्षण हमारी संस्कृति का अंग है, परंतु मानव में अपने स्वार्थ के लिए प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की प्रवृत्ति ने पर्यावरण संकट की नई चुनौती को जन्म दिया है। कोविड–19 महामारी ने हमें साफ हवा की कीमत समझा दी है। पर्यावरण संरक्षण के निमित्त आमजन का सहयोग अनिवार्य हो गया है। आज मानव को हरित मानसिकता विकसित करने की आवश्यकता है। दैनिक कार्यों में प्लास्टिक का कम से कम प्रयोग किया जाए, ताकि पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सके। घरों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थों को अलग–अलग वर्गों में विभाजित किया जाना चाहिए। किसान जैविक खेती करें। कम से कम उर्वरक व कीटनाशकों का प्रयोग किया जाए। प्रत्येक व्यक्ति अपने आसपास गमलों में छोटे–छोटे पौधे लगाएं। कम बिजली, कम पानी, कम गैस का प्रयोग कर कोई भी व्यक्ति पर्यावरण संरक्षण में महती भूमिका निभा सकता है। प्रदूषण रोकने के लिए जलाऊ लकड़ी का उपयोग कम करना जरूरी है, जिसके लिए विद्युत शवदाह गृहों का उपयोग करना चाहिए। प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के लिए कम दूरी तय करने के लिए साइकिल एवं अधिक दूरी तय करने के लिए सार्वजनिक वाहनों का उपयोग करें। छोटे–छोटे प्रयास करके भी पर्यावरण को ठीक रखा जा सकता है।

पर्यावरण और आर्थिक विकास एक–दूसरे से परस्पर जुड़े हुए है, वही दूसरी तरफ एक देश की आर्थिक तरक्की भी पर्यावरण को प्रभावित करती है। उसी तरह पर्यावरण संसाधनो में गिरावट भी आर्थिक विकास को प्रभावित करता है। ऐसे कई सारी पर्यावरण नीतियां है। जिन्हे अपनाकर हम अपने पर्यावरण को भी बचा सकते है और अपनी आर्थिक उन्नति भी सुनिश्चित कर सकते है। सतत विकास के अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनो के संरक्षण का प्रयास किया जाता है, जिससे उन्हे आने वाली पीढ़ीयों के जरुरतो को पूरा करने के लिए बचाया जा सके। सबसे जरुरी यह है कि हमे अपने आने वाले पीढ़ीयो के सुरक्षा के लिए हमे सतत विकास को इस प्रकार से बरकरार रखने की आवश्यकता है जिससे पर्यावरण को सुरक्षित रखा जा सके।

आर्थिक विकास एक देश के उन्नति के लिए बहुत आवश्यक है। एक देश तभी विकसित माना जाता है जब वह अपने नागरिको को पार्याप्त मात्रा में रोजगार मुहैया करवा पाये। जिससे वहा के निवासी गरीबी से छुटकारा पाकर एक अच्छा जीवन व्यतीत कर सके। इस तरह का विकास आय में असमानता को कम करता है। जितना ज्यादे मात्रा में एक देश आर्थिक तरक्की करता है, उसके राजस्व कर में भी उतनी ही वृद्धि होती है और सरकार के बेराजगारी और गरीबी से जुड़ी कल्याण सेवाओं के खर्च में उतनी ही कमी आती है। वर्तमान में ग्लोबल वार्मिंग और पर्यावरण से जुड़ी कुछ मुख्य समस्याएं है। ग्लोबल वार्मिंग का तात्पर्य पृथ्वी में हो रहे स्थायी जलवायु परिवर्तन, औद्योगिक प्रदूषण पृथ्वी पर बढ़े रहे पर्यावरण प्रदूषण, ग्रीन हाउस गैसो के उत्सर्जन और ओजोन परत में हो रहे क्षरण आदि कारणो से पृथ्वी के तापमान में होने वाली वृद्धि के समस्या से है। वैज्ञानिको ने भी इस तथ्य को प्रमाणित किया है की पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है और इसे रोकने के लिए यदि आवश्यक कदम नही उठायें गये तो यह समस्या और भी ज्यादे गंभीर हो जायेगी, जिसके नकरात्मक प्रभाव हमारे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य पर होंगे।

पर्यावरण एक देश के आर्थिक उन्नति में बहुत ही महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। एक राष्ट्र के विकास का एक बड़ा हिस्सा विभिन्न क्षेत्रों में उत्पादन से जुड़ा होता है। प्राकृतिक संसाधन जैसे कि पानी, जीवाश्म ईंधन, मिट्टी जैसे प्राकृतिक संसाधनो की उत्पादन क्षेत्र के विभिन्न क्षेत्रो में आवश्यकता होती है। हालांकि, उत्पादन के परिणामस्वरूप पर्यावरण द्वारा प्रदूषण का भी अवशोषण होता है। इसके अलावा उत्पादन के लिए संसाधनों के ज्यादे इस्तेमाल के वजह से पर्यावरण में संसाधनों की कमी की समस्या भी उत्पन्न हो जाती है। प्राकृतिक संसाधनों का तेजी से हो रहा दोहन भी एक प्रमुख चिंता बन गया है। जनसंख्या ज्यादे होने के कारण पृथ्वी पर प्राकृतिक संसाधनों पुनर भंडारण होने के पहले ही उनका खपत हो जा रहा है। ग्लोबल वार्मिंग की समस्या कृषि उत्पादों के उत्पादन की कम दर तथा प्राकृतिक संसाधनों में होती कमी के कारण उत्पन्न हो रही है। अगर ऐसा ही रहा तो आने वाले समय में जल्द ही धरती की जनसंख्या न केवल भोजन की कमी का सामना करेगी, बल्कि किसी भी विकास प्रक्रिया को पूरा करने के लिए संसाधनों की कमी से भी जूझना होगा।

प्राकृतिक संसाधनो के लगातार हो रहे उपभोग तथा बढ़ते प्रदूषण स्तर के कारण पर्यावरण संसाधनो की गुणवत्ता खराब हो जायेगी, जिससे ना सिर्फ उत्पादन की गुणवत्ता प्रभावित होगी। बल्कि की इसके उत्पादन में लगे मजदूरो में भी तमाम तरह की स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न होंगी और इसके साथ यह उनके लिए भी काफी हानिकारक सिद्ध होगा, जिनके लिए यह बनाया जा रहा है। खाद्य और कृषि उत्पादन की कमी को दूर करने के लिए, इनके उत्पादन में रसायनों का उपयोग किया जाता है। यह न केवल मिट्टी के गुणवत्ता को कम करता है, बल्कि मानव स्वास्थ्य को भी नकारात्मक तरीके से प्रभावित करता है। अगर यह प्रक्रिया इसी तरह जारी रहती है तो पृथ्वी के लोगो को इसके गंभीर परिणाम भुगतने होंगे। इन बीते वर्षो में पृथ्वी के पर्यावरण और इसके संसाधनों को इन्ही कारणो से कई नुकसान हुए हैं। यदि पर्यावरण संकट के समाधान के लिए महत्वपूर्ण कदम नही उठाये गये तो इस समस्या के और ज्यादे भयावह होने की संभावना है।

ग्लोबल वार्मिंग के समस्या को रोकने के लिए वनो और झीलो की सुरक्षा भी आवश्यक है। पेड़ो को तब तक नही कटा जाना चाहिये जब तक बहुत ही आवश्यक ना हो। इस समय हमें अधिक से अधिक वृक्षारोपण करने की पआवश्यकता है, हमारे इतने बड़े आबादी द्वारा उठाया गया एक छोटा सा कदम भी पर्यावरण की सुरक्षा में अपना अहम योगदान दे सकता है। यह पर्यावरण संरक्षण, जैव विविधता, और वन्य जावो के सुरक्षा के लिहाज से भी बहुत महत्वपूर्ण है। इसके अलावा पृथ्वी के प्रत्येक निवासी को ओजोन परत के क्षरण को रोकने के लिए अपने ओर से महत्वपूर्ण योगदान देने की आवश्यकता है।

ओजोन परत के क्षरण के लिए जिम्मेदार पदार्थो का उपयोग ज्यादेतर रेफ्रीजरेटरो और एयर कंडीशनरो में होता है जिसमें हाइड्रोक्लोरोफ्लोरोकार्बन (HCFC) और क्लोरोफ्लोरोकार्बन (CFC) रेफ्रीजरेंट के तौर पर इस्तेमाल किये जाते है। यह वह मुख्य तत्व है जिनके कारण ओजोन परत का क्षरण हो रहा है। इसलिए यह काफी महत्वपूर्ण है कि हम HCFC और CFC का उपयोग रेफ्रीजरेंट के तौर ना करे, इसके अलावा हमें ऐरोसोल पदार्थो का भी उपयोग करने से बचना चाहिए क्योंकि इनके द्वारा भी HCFC और CFC का उपयोग किया जाता है। ऊपर दिए गये उपायो को अपनाकर और सावधानी बरतकर हम पर्यावरण में कार्बन के उत्सर्जन को कम कर सकते है।

आर्थिक विकास का आंनद लेने के लिए यह काफी जरूरी है कि हम पर्यावरण संसाधनो के संरक्षण को विशेष महत्व दे। पर्यावरण और आर्थिक विकास के संतुलन के मध्य संतुलन स्थापित करना काफी आवश्यक है, इस प्रकार से प्राप्त हुई तरक्की का आनंद ना सिर्फ हम ले पायेंगे बल्कि की हमारी आने वाली पीढ़ीया भी इससे लाभान्वित होंगी। सतत विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए, यह काफी जरुरी है कि हम पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आवश्यक कदम उठायें। इस तरीके से यह सिर्फ ना वर्तमान के जनसंख्या के लिए लाभकारी होगा बल्कि की आने वाले पीढीया भी इसका लाभ ले सकेंगी और यही सतत विकास का मुख्य लक्ष्य है। इसलिए सतत विकास पर्यावरण की रक्षा के लिए यह काफी अहम है।

Contents

विश्नोई समाज की पर्यावरण संरक्षण में भूमिका–विजय सिंह माली 13

संत जाम्भोजी महाराज की 'सबदवाणी' में पर्यावरण चेतना–वेणु श्रीराम तायडे; प्रो. प्रवीण देशमुख 16

पर्यावरण लेखाद्यकन–डॉ० विभा पाण्डेय 19

जैन मूर्तियों का संरक्षण और बचाव एवं उसका अस्तित्व–वास्तुविद वर्षा जैन; डॉ० रत्नेश कुमार जैन 24

वर्तमान पर्यावरण में ध्यान एवं रेकी हीलिंग के द्वारा मानसिक अनुभूति–श्रीमति चारू जैन; प्रो. जिनेंद्र कुमार जैन 27

कबीर के पर्यावरण संबंधी दोहे–डॉ० अनुपमा 29

पर्यावरणीय मुद्दें और उसका सतत विकास (समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरणीय संकट)–प्रीति कुमारी 32

साहित्य और पर्यावरण: अन्तस्सम्बन्ध के बिन्दु–डॉ० दीपक त्रिपाठी 35

नीरजा माधव की कविताओं में पर्यावरणीय चेतना–प्रियंका यादव 38

समकालीन हिन्दी कविताओं में पर्यावरण विमर्श–डॉ० कला ए. 43

प्लास्टिक-प्रदूषण का सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रभाव–डॉ० मंजरी खरे 49

सिद्धकवि सदानन्द डबराल विरचित 'नरनारायणीयम्' महाकाव्य में पर्यावरणीय चेतना–अंशुल 53

हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय अध्ययन–रिया प्रविन पाहुजा 57

शहरीकरण और पर्यावरण–डॉ० स्मृति कुमारी सिंह 61

''उचित जल प्रबन्धन न होने से पहाड़ों में जल की हानि''–महेन्द्र सिंह राणा 63

पर्यावरणीय नैतिकता–डॉ० हेमन्त कुमार सिंघल 74

पर्यावरणीय शिक्षा-एक परिचय–डॉ० लेखा पी 77

पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य–पूनम दीक्षित 79

'शहरीकरण एवं पर्यावरण'–अंजु कुमारी 83

बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन
–हरेन्द्र कुमार यादव; प्रोफेसर अफजाल अहमद 86

जैव-विविधता संरक्षण व पर्यावरण: वैदिक वांग्मय के सन्दर्भ में–डॉ० अशोक कुमार 91

पर्यावरणीय मुद्दे और उसका सतत् विकास–शशिकला यादव 94

अग्नि पुराण में वनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन के उपाय–डॉ० अल्पना शर्मा 97

बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) और सामान्य संपत्ति अधिकार (सीपीआर): एक अवलोकन–डॉ० ममता रानी 103

"उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन"
–मिस लवलीन शर्मा 107

"माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण संकल्पनाके आधार पर पर्यावरण जागरूकता का अध्ययन"
–डॉ० राखी शर्मा 111

भारतीय संविधान एवं पर्यावरण–डॉ० श्रद्धा सिंह 116

'कामायनी' में पर्यावरण अनुशीलन–डॉ० हनी दर्शन 123

पर्यावरण प्रदूषण एवं सार्वजनिक स्वास्थ–अनामिका यादव 126
हरिद्वार में गंगा की स्थिति और प्रमुख पर्यटन स्थल एक सर्वेक्षण–डॉ० मोहित कुमार; डॉ० फरहा अकरम 130
संस्कृत साहित्य में पर्यावरणशिक्षा एवं महत्व–डॉ० जी. उमानरसिम्हा मुर्ति 134
शिक्षण–अधिगम कों प्रभावित करने वाले वातावरण से सम्बन्धित कारकों का अध्ययन –विनीत कुमार आर्य; डॉ० रामबाबू सिंह 137
हिन्दी साहित्य में पर्यावरण चिन्तन के विविध रूप–डॉ० निशा वालिया 141
हिंदी साहित्य के काव्य चेतना में पर्यावरणीय अध्ययन–प्रो. डॉ. सतीश दत्तात्रय पाटील 145
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र सतत् विकास: एक समीक्षा–डॉ० ज्योत्सना पाण्डेय 147
समकालीन हिंदी गजलों में पर्यावरणीय चिंतन–प्रीति सुमन 150
समकालीन कहानियों में पर्यावरण–डॉ० सजिना० पी० एस 153
पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य: एक ज्वलंत मुद्दा–अंकित तिवारी 156
मानव और पर्यावरणीय सतत विकास–डॉ० आशा बाला 159
संत कबीर के काव्य में पर्यावरणीय चेतना–सिद्धार्थ कुमार 162
पर्यावरण संरक्षण में वैदिक कालीन पर्यावरणीय शिक्षा की प्रासंगिकता–डॉ० अजीत शुक्ल 164
आधुनिक कविता में पर्यावरण चेतना की कुछ झलकियाँ–डॉ० शंकर कुमार 168
मध्यकालीन हिन्दी काव्य में पर्यावरणीय चेतना का स्वरूप एवं उसकी प्रासंगिकता–डॉ० बुद्धदेव प्रसाद सिंह 173
पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एवं सतत विकास–डॉ० विनय कुमार बैठा 178
भूमंडलीकरण के दौर में प्रकृति और मनुष्य की अंतर्संबंधता: 'हरा आकाश' उपन्यास–कमलेश 182
किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर स्वच्छता के प्रभाव का अध्ययन–डॉ० रिनी गुप्ता 185
पर्यावरण संरक्षण एवं स्वच्छता–डॉ० विजय कुमार गुप्ता 189
पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता–डॉ० विद्या प्रकाश सिंह 194
भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण संरक्षण का महत्व–डॉ० अपर्णा चतुर्वेदी 200
अक्षय ऊर्जा–श्रीमती आराधना कुमारी 202
पर्यावरण का हमारे मानसिक और सामाजिक स्तर पर प्रभाव–सुश्री ऐश्वर्या सक्सेना; सुश्री नैन्सी 205
बायोमेडिकल कचरा-पर्यावरण के लिए खतरा–डॉ० अदिती गोस्वामी; डॉ० अवन्ती गोस्वामी 211
शहरीकरण और पर्यावरण–सुश्री अंजलि सिन्हा 215
माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों का अध्ययन-भारतीय परिपेक्ष में–विनीत कुमार आर्य; डॉ० रामबाबू सिंह 220
पर्यावरण नैतिकता के विभिन्न आयाम–डॉ० चेतना उपाध्याय 224
पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य–डॉ० शर्मिला विश्वास 229
पर्यावरण प्रदूषण एवं सार्वजनिक संसाधन–मठुआ अहिरवार 231
आचार्य पं. श्रीराम शर्मा का पर्यावरणीय नैतिक चिंतन–डॉ० कृष्ण चौधरी 240
हिन्दी साहित्य के काव्य चेतना में पर्यावरणीय अध्ययन–डॉ० विजय लक्ष्मी 243
पर्यावरण प्रदूषण का जीवन पर प्रभाव–डॉ० प्रमोद नाग 246
जैन धर्म एवं पर्यावरणीय चेतना–श्रीमती सोनू जैन 249
पर्यावरण और शहरी प्रकृति का प्रभाव–डॉ० ममता धाकड़ 252

‘धार’ उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण चेतना—फरीदा खातून 255
पर्यावरण जागरुकता में संप्रेषण एवं मनोविज्ञान की भूमिका—डॉ० नरेश कुमार नेमा 257
“पर्यावरण प्रदूषण एवं संरक्षण विवेचना”—डॉ० हंसा शुक्ला 259
भारत में सतत विकास और पर्यावरणीय मुद्दे—डॉ० बिन्दु कनौजिया 263
पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में सरकार द्वारा विद्यालय में स्वच्छता के प्रति किये गये प्रयास: एक अध्ययन —डॉ० सीमा गुप्ता 266
राजेन्द्र भण्डारी के काव्य में पर्यावरण चेतना—ज्ञानवती कुमारी साह 270
आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा में पर्यावरण—डॉ० अवधेश झा 272
समाज पर पर्यावरण प्रदूषण का प्रभाव—प्रो. शैलेन्द्र सिंह; डॉ० जितेन्द्र कुमार 277
बालसाहित्य में पर्यावरणीय चेतना—डॉ० ज्योति गौतम 281
अनबीता व्यतीत उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण संकट—डॉ० जयन्ती सिंह 285
जनपद बिजनोर में जल संसाधन संरक्षण व प्रबंधन: एक विश्लेषण—ज्योति; डॉ० श्रीमति रेशमी एस रावल 287
Exploring Environmental Risk Factors for Diabetes: A Comprehensive Review —Ms. Srishti Maheshwari; Prof. (Dr.) Archna Saxena 1
Widening Exposure to Noise Pollution and Resulting Psychological and Physical Health Hazards—Dr. Mahewash Hasan 8
Environmental Ethics and its Need in Present Scenario—Dr. Rishika Verma 15
Urbanization and Its Repercussions on Environment: A Comprehensive Analysis—Dr. Priya 19
Environmental Enlightenment in Indian English Poetry: A Vital Connection between Nature and Society —Dr. Naresh A. Parmar 23
Enhancing Environmental Awareness among Secondary School Students through Cartoon-Based Instruction —Dr. Sojia John 28
Environmental Resources and Sustainable Development—Sharad Sharma 34
CSR and its Role in Environmental Sustainability—Shalini sharma 39
Plastic Pollution New Generation Chelllenge—Smt.Deepmala Suryavanshi 44
Biodiversity Conservation and Sustainable Development—Sarika 48
From Challenges to Solutions: The Impact of SAGES’ Role in Enhancing Green Education Aligned with NEP 2020 for Sustainable Development in Indian K-12 Schools—Prof. (Dr.) Shalini Verma 51
Environmental Law And Enforcement—Dr. Anjana 54
A Study of Environmental Awareness: Secondary School Student of Prayagraj City—Dr. Dharmendra Shukla 59
A Comprehensive Study of Environment and Culture of Shahjahanpur—Keshav Shukla; Mumtaz Husain; Abhishek Dixit; Rahul Kumar; Adarsh Pandey 66
Jainism and Environment Conservation—Richa Jain; Dr. Ratnesh Kumar Jain 72
Environmental Pollution and Public Health—Rashmi Verma 80
Green Economy: A Pathway to Sustainable Development and Bright Future—Mr. Yasharth Yadav 86
Environmental Education Global Pespective—Dr. Rafat Anis 90
Legislative Protection of Forests In India—Dr. Vivek Kumar 93
Air Pollution and Control Legislation in India Abstract—KM. Sunita Kumari 100

विश्नोई समाज की पर्यावरण संरक्षण में भूमिका

विजय सिंह माली

प्रधानाचार्य, श्री धनराज बदामिया राजकीय बालिका उच्च माध्यमिक विद्यालय, सादड़ी (जिला-पाली), राजस्थान

कार्तिक वदी अष्टमी विक्रम संवत 1542 तदनुसार 1485 ईस्वी को समराथल में जांभोजी ने विश्नोई पंथ की स्थापना की। विश्नोई यानी बीस और नौ कुल उन्तीस नियमों को पालने वाले। गुरु जांभोजी की वाणी सबदवाणी के रुप में प्रसिद्ध है। सबदवाणी के अंग के रूप में उन्तीस नियम भी शामिल हैं। ये नियम विश्नोई समुदाय के आचरणीय नियमावली है। इसमें कई ऐसे नियम है जिनसे पर्यावरण की रक्षा और प्राकृतिक संसाधनों को बचाना संभव हुआ। अधिकांशतः विश्नोई मनसा वाचा कर्मणा इन नियमों के प्रति अपनी प्रतिबद्धता से पर्यावरण की रक्षा की दिशा में अपना योगदान सुनिश्चित कर रहे हैं। उन्तीस नियमों में से कुल छः नियमों का सीधा संबंध पारिस्थितिकी व पर्यावरण रक्षा से है-

नियम 6- बाहरी व आंतरिक शुद्धता व पवित्रता को बनाए रखना

नियम 9- निष्ठा व प्रेम पूर्वक हवन करना

नियम 19- जीवों के प्रति दया का भाव रखना

नियम 20- हरा वृक्ष नहीं काटना

नियम 23- परोपकारी पशुओं की रक्षा करना

नियम 29 बैलो को बधिया नहीं करवाना।

इन नियमों को अपने आचरण में लाकर

विश्नोई समाज पर्यावरण संरक्षण महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। विश्नोई समाज के लोग प्रकृति उपासक हैं जो अपने गुरु जांभोजी की शिक्षाओं के आधार पर अपना जीवन यापन करते हैं। जांभोजी ने पवित्रता, अहिंसा, सदाचार एवं उपासना से संबंधित 29 नियमों की आचार संहिता देकर विश्नोई संप्रदाय की स्थापना की थी।इन नियमों में जीव दया व हरे वृक्ष न काटना भी सम्मिलित हैं। "जीव दया पालणी अर रूंख लीलो नहीं घावै। जांभोजी मानते थे कि धरती पर स्थित प्राणियों के विभिन्न वर्ग प्रारंभ से ही पर्यावरण संरक्षण में सहायक रहे है। किसी भी वर्ग के प्राणियों की हत्या करने से जीवों का आपसी संतुलन बिगड़ जाएगा और प्राणियों के इस संतुलन के बिगड़ते ही धरती पर प्रदूषण फैलना प्रारंभ हो जाएगा। इसलिए उन्होंने समस्त जीवों पर दया करने की बात कही है। उनतीस नियमों में पानी, जलाने की लकड़ी (ईंधन) तथा दूध को छानकर प्रयुक्त करने के नियम का उद्देश्य सूक्ष्म जीवों की रक्षा से ही। थाट (भेड़ बकरी) अमर रखना तथा बैल को बधिया (नपुंसक) नहीं करवाना आदि नियम भी जीवरक्षा एवं दया से ही प्रेरित है।मांस नहीं खाने का नियम भी पर्यावरण संरक्षण तथा जैविकी चक्र की सुरक्षा हेतु सार्थक है। जांभोजी ने पर्यावरण संरक्षण को धर्म से जोड़ कर और अधिक सशक्त एवं लोकग्राह्य बना दिया जांभोजी ने स्वयं अपने जीवन में इन उन्तीस नियमों का पालन किया। उत्तर प्रदेश के लोदी पुर में खेजड़ी का वृक्ष लगाया। जांभोजी अपनी मुंहबोली बहन नौरंगी का भात भरने रोटू गांव गए तो वहां खेजड़ी का बाग लगाया। खेजड़ी को राजस्थान का कल्पवृक्ष माना जाता है क्योंकि इसकी जड़, पत्ते, छाल, टहनी सभी उपयोगी है। जोधपुर के तत्कालीन शासक मालदेव को लोहावट के जंगलों में एक खेजड़ी के पेड़ के नीचे उपदेश दिया।रावल जैतसी के निमंत्रण पर जैसलमेर गए तथा उनसे राज्य में हरे वृक्ष न काटने व जीवों की हत्या न करने की राज्याज्ञा जारी करवाई। जांभोजी ने अपना नश्वर शरीर भी 1536 ई में लालासर की साथरी पर एक हरी कंकेडी के नीचे छोड़ा। जांभोजी को प्रकृति का हरा भरा वातावरण अत्यंत प्रिय लगता था इसलिए उन्होंने अपनी तपस्थली का निवास स्थान कंकेडी के पेड़ों के मंडप के बीच रखा था जिसका वर्णन उन्होंने अपनी वाणी में किया-

हरी कंगहडी,मंडप मैडी, तहां हमारा बास।

जांभोजी ने शब्द वाणी के रुप में ज्ञानोपदेश दिया।

जांभोजी ने पर्यावरण शुद्धि के लिए हवन पर भी विशेष बल दिया क्योंकि हवन पर्यावरण शुद्धि में विशेष रूप से सहायक है।हवन की अग्नि से वातावरण में व्याप्त प्रदूषण दूर होता है। उन्होंने कहा-

"होम हित चित्त प्रीत सू होय,बांस बैकुंठ पांवों।"

सबद वाणी में कहा गया-

उठ प्रभाते होम करीजै।

हित सू होम करो सब लोई।।

आज भी विश्नोइयों के घरों में नित्य प्रातःकाल हवन होता है जिससे घर का वातावरण शुद्ध रहता है। आज भी विश्नोइयों के सभी धार्मिक स्थलों पर नित्य सामूहिक हवन होता है जिसमें कई मन घी का उपयोग होता है।

जांभोजी ने पर्यावरण सुरक्षा हेतु अपने अनुयायियों को मृत्यु के बाद प्राणी की देह को अग्नि दाग के स्थान पर भूमि दाग देने की प्रेरणा दी।सबद वाणी में कहा गया-

ले काया बासंदर होमुंला दोष चडैला भारी। अर्थात मृत्यु के बाद शरीर को अग्नि में जलाना भारी दोष है। अग्नि दाग में प्रयुक्त होने वाली लकड़ी के लिए लाखों करोड़ों वृक्षों को काटा न जाएं तथा चिता का धुआं वातावरण को दूषित न करें।उन्होंने मृतक को जलाने की अपेक्षा गाड़ने पर बल दिया ताकि वृक्षों की कटाई बच सके और मृतक के जलने से दूषित होने वाला पर्यावरण बच सके।

विश्नोइयों में स्वच्छता को भी महत्व दिया गया। वील्होजी ने कहा- "चौके बिना रसोई कबहु मत करो।" विश्नोई पंथ में शारीरिक स्वच्छता हेतु नित्य स्नान के बारे में कहा गया।

जांभोजी पर्यावरण चेतना को जागृत करने वाले प्रथम पर्यावरण चिंतक थे। जांभाणी दर्शन में पर्यावरण के पांच तत्वों का परस्पर समन्वय बताया गया है-

आकाश, वायु,तेज जल धाणी।तामा सकल सृष्टि की करणी।

जांभोजी ने अपनी वाणी में स्वयं का ध्यान पृथ्वी में एवं निवास वनस्पति जगत में मानते हुए कहा- मोरे धरती ध्यान, वनस्पति वासों।

जांभाणी दर्शन में वृक्ष को देवता का निवास स्थान बताया गया है जांभाणी कवि साहेब राम कहते हैं- दैव रहे नित वन के माही,लीली लकड़ी तोड़े नाही।साहेब राम कहते हैं- जांटी और ग्वाल जब जावे। पेड़ पेड़ परमेश्वर पावै। जांभाणी दर्शन में वृक्षों को माता पिता के सदृश माना गया है। मनुष्य वृक्षों के पुत्र हैं,वृक्ष अपने अमृत तत्व से समस्त मानव जाति का प्राणी जगत का पालन पोषण करते हैं। वील्होजी के अनुसार हरे वृक्ष को काटना पाप की शुरुआत है। हरे वृक्ष को काटने का कृत्य कुंभीपाक नरक में ले जाने वाला है।

जांभोजी के ध्येय आदेश "जीव दया पालणी, रुंख लीलो नहीं घावै।" को स्वस्थ पर्यावरण, जीवरक्षा व प्रकृति रक्षा की आचार संहिता कहें तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी।

आज भी विश्नोई समाज के लोग जांभोजी की इन शिक्षाओं का अक्षरशः पालन करते हैं। वे जलाने हेतु सदैव सूखी व स्वच्छ लकड़ी का ही प्रयोग करते हैं। थाट अमर रखना तथा बैल को बधिया न करवाना आदि नियम जीवरक्षा और दया से भी प्रेरित है। मांस न खाने का नियम भी पर्यावरण और जैविक चक्र की सुरक्षा हेतु सार्थक है। जंभ सार के अनुसार जिस प्रकार हम विष्णु का नाम स्मरण करते हुए अपने धर्म का पालन करते हैं, उसी प्रकार दया भाव से प्रतिबद्ध होकर जीव-जंतु एवं वृक्षों की रक्षा करना भी धर्म का मार्ग है। इसी कारण विश्नोइयों को वृक्षों का रखवाला अर्थात रक्षक घोषित किया गया।

विश्नु विश्नु नाम उचारे।जागरु जीव जंत नहीं मारै।

दया धर्म करत प्रितपाला।रुंख राय के सदा रुखाला।।

विश्नोई सभी को हिंसा करने व वृक्षों को काटने से रोकते हैं। उन्हें ऐसा न करने के लिए समझाता, मनाता एवं रोकता भी है। "बरजत मारै जीव, तहां मर जाइयै।" इसके उपरान्त अगर शत्रु नहीं माने तथा अत्यंत शक्तिशाली है तो विश्नोई समाज के लोग संघर्ष करते हुए प्राणों की बाजी लगा देते हैं। विश्नोई समाज में जांभोजी, विल्होजी, सुरजनदास, केसोदास, परमानंद, उदोजी आदि अनेकानेक संत शिरोमणि हुए जिनके उपदेश, वाणी, साहित्य, ग्रंथ जेठ वदी दूज विक्रम संवत 1661(1604ईस्वी) को जोधपुर रियासत के रामासडी गांव में ठाकुर द्वारा भेजे गए वृक्ष काटने वाले कारिंदों को करमा और गौरा विश्नोई ने प्रतिकार करते हुए ललकारा। करमा ने अपनी सहेली गौरा को कहा-

करमणी गौरा लिवी बुलाय,ओ अवसर छै आपणों।
आपणों अवसर राम गौरा,लिखी कलम सोहनि मिटै।
जाय चौहटे शीश मांडयों,लिखी स्याही ना मिटै।

यह हमारे धर्म पालन का अवसर है गौरा भाग्य का लेख अमिट है, हमें इस अवसर का लाभ उठाना है। ठाकुर के कारिंदों ने करमा और गौरा के शीश पर तलवार चला दी। अपने शीश न्यौछावर करके वृक्षों को बचाया। इसी प्रकार जोधपुर रियासत के तिलासणी गांव में श्रीमती खींवणी खोखर, मोटा जी खोखर, श्रीमती नैतू नैण ने वृक्षों को बचाने के लिए अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। वील्होजी की साखी में इसे यों कहा गया-

"पहली मूंही खींवणी खड़ी सत सू घणों करार।
विष्णु भगत मोटो खडयो, गुरु सू हेत पियार।
इहि उपर नेतृ खड़ी,चाली जनम सुधार।

1643 में नागौर के पोलास गांव में बूचोजी ऐचरा के बलिदान ने विश्नोईयों की गौरवशाली परंपरा को आगे बढ़ाया। इसी कड़ी में खेजडली के खंडाणे को कैसे भूला सकते हैं। खेजडली गांव में महाराजा अभय सिंह के हाकिम गिरधारी दास भंडारी द्वारा वृक्षों के काटने का वहां के विश्नोई संप्रदाय के लोगों ने विरोध किया। उन्होंने भंडारी द्वारा दिए गए पैसों के प्रलोभन को ठुकरा दिया और सिर साटे रुंख रहे तो भी सस्तो जाण को मानते हुए अमृता देवी अपनी तीन बेटियों आशु,रतनी,भागु बाई के साथ भाद्रपद कृष्ण दसमी विक्रम संवत 1787 (1730ईस्वी) को पेड़ों से चिपक गई। एक के बाद एक 363 स्त्री पुरुष जिसमें 111 महिलाएं भी सम्मिलित थी पेड़ों को बचाने के लिए शहीद हो गए। इस घटनाक्रम ने महाराजा अभय सिंह को विश्नोई गांवों में वृक्ष न काटने के आदेश जारी करने के लिए बाध्य किया। अमृता देवी का यह बलिदान आगे चलकर हिमालय के चिपको आंदोलन व कर्नाटक के अप्पिको आंदोलन का प्रेरणा बना।

10 मई 1978 को हरियाणा के हिसार जिले के नाढोडी गांव में बिछड़े हिरण के नवजात शिशु का रामीदेवी विश्नोई ने अपने घर लाकर अपना स्तनपान कराकर अपने बच्चे की तरह ही पालन-पोषण किया।मेहराणा की शारदा विश्नोई ने 1980 में शिकारियों से संघर्ष कर हिरणों को बचाया।धांगड की परमेश्वरी विश्नोई ने भी अपना दूध पिला कर हिरण के बच्चों को बचाने में सफल रही। 1996 में निहाल चंद विश्नोई ने जंगली जानवरों की रक्षा के लिए प्राणों का बलिदान कर दिया। इनकी इस कहानी पर "विलिंग टू सेक्रीफाइज" फिल्म बनाई गई जो ब्रास्तिलाना में आयोजित 5वें अंतरराष्ट्रीय महोत्सव में सर्वश्रेष्ठ पर्यावरण फिल्म का पुरस्कार दिया गया। सितंबर 1998 में बालीवुड अभिनेता सलमान खान द्वारा जोधपुर में हम साथ साथ हैं की शूटिंग के दौरान रात्रि विश्राम के दौरान काले हिरण के शिकार का विश्नोई ग्रामीणों ने विरोध किया तथा उनके विरुद्ध मामला दर्ज करवाया। इससे स्पष्ट है कि जांभोजी की सबद वाणी पर्यावरण संरक्षण की वाणी है जिसका आज भी जांभोजी के अनुयाई विश्नोई पालन कर रहे हैं। वास्तव में विश्नोई समाज की पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका है। हमें विश्नोई समाज पर गर्व है।

संदर्भ-

1. सबद वाणी
2. जंभ सार
3. वील्होजी की वाणी- डॉ कृष्ण लाल विश्नोई
4. राजस्थानी साहित्य संस्कृति मांय पर्यावरण चेतना
5. जंभसागर-टीकाकार आचार्य कृष्णानंद
6. भारतीय साहित्य के निर्माता: जांभोजी- हीरालाल माहेश्वरी

संत जाम्भोजी महाराज की 'सबदवाणी' में पर्यावरण चेतना

वेणु श्रीराम तायडे

शोधार्थी, एम.ए. (हिंदी), एम.एड.

प्रो. प्रवीण देशमुख

शोध मार्गदर्शक, प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष, गुलाम नबी आजाद कला वाणिज्य व विज्ञान महाविद्यालय, बार्शीटाकली, अकोला-215

युगों से पर्यावरण और मानव का अभिन्न संबंध रहा है। इस संसार में प्रत्येक प्राणी अपने चारों और के वातावरण अर्थात बाह्य जगत पर आश्रित रहता है, जिसे सामान्य भाषा में 'पर्यावरण' कहा जाता है। विश्वकोश के अनुसार ''पर्यावरण अजैविक और जैविक संघटकों का ऐसा समुच्चय है, जो जीवधारियों के विकास के लिए अनुकूल निवास प्रदान करता है। हमारा भारत देश विश्व में सभी देशों में 'सुजलाम् सुफलाम' था। डाल-डाल पर सोने की चिडियॉ बसेरा करती थी और आज क्या से क्या हो गया है। अन्धाधुन्ध औद्योगिकरण, आधुनिकीकरण, जनसंख्या वृद्धि, उपभोग की वृत्ति, निर्ममता और स्वार्थ की भावना ने जल-जंगल जमीन, जानवर सबका विनाश हो रहा हैं। हवा में कार्बनडाई ऑक्साइड का प्रमाण बढ़ रहा है। शहरों में साँस लेना मुश्लिक हो गया है। वर्तमान समय में असंतुलित पर्यावरण 21 वीं सदी में मानव समाज के लिए सबसे बड़ी घातक एवं विकराल समस्या है। प्रकृति मनुष्य के जीवन का मूल आधार है। लेकिन फिर भी मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करते हुए इन्हें नष्ट कर रहा है, जिससे प्रकृति और मनुष्य के मध्य संबंध नष्ट होते जा रहे है। प्रदुषण आज एक अन्तर्राष्ट्रीय समस्या बन चुका है। विश्व के विचारक पर्यावरण प्रदुषण को समस्या से चिंतित है। इस समस्या के समाधान के लिए प्रयत्नशील है। भारत में वैदिक काल से ही पर्यावरण एवं प्रकृति संरक्षण को लेकर ऋषियों-मुनियों के प्रयास सराहनीय रहे है, जिन्होंने प्रकृति की रक्षा को धार्मिक मान्यताओं से जोडते हुए इसके संरक्षण का कार्य किया। हम देखते है कि धर्मशास्त्र में भी पेड़ों के महत्व को बताया गया है। जैसे कि भगवान बुद्ध को जिस वृक्ष के नीचे तपस्या करने के बाद ज्ञान प्राप्त हुआ, वह पीपल का पेड था। 'श्रीमद् भागवत गीता' में भगवान श्रीकृष्ण ने भी पीपल के वृक्षों को श्रेष्ठ कहा है। जैसे- हूँ- अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां (10/26)[1]

आयुर्वेदाचार्यो की दृष्टि में देखें तो विश्व में ऐसी कोई वनस्पति नहीं, जो औषधि के गुणों से युक्त न हो। इसलिए वृक्षों को देवतुल्य मानकर इन्हें व्यर्थ रुप से काटने पर नैतिक प्रतिबन्ध लगाया गया है। 'श्वेताश्वतारोपनिषद्' में वृक्षों को साक्षत बृहम के सदृश्य बताया गया है- ''वृक्ष इवस्तबधों दिवि तिष्ठात्येक:।''[2]

महाभारत एवं रामायण में वृक्षों के प्रति मनोरम कल्पना की गई है। महाभारत के भीष्म पर्व में वृक्ष को सभी मनोरथों को पूरा करने वाला कहा गया है। इस संदर्भ कहा गया है- ''सर्वकाम फला: वृक्षा।''[3]

पुरातन काल में वृक्षों का देवता के समान पूजन किया जाता था। हमारे ऋषि-मुनि एवं पुरखे कोई भी कार्य करने से पूर्व प्रकृति को पूजना नही भूलते थे। भारतीय संस्कृति में धार्मिक कृत्यों में वृक्ष पूजा का अत्याधिक महत्व है। तुलसी को वायुशोधन एवं पवित्रता के लिए हर आँगन में लगाने की प्रथा है। तुलसी को सर्वाधिक ऑक्सीजन प्रदायक पौधा माना जाता है। इसका पर्यावरण से घनिष्ठ संबंध है। इसके पास हानिकारक जीवाणु-विषाणु या कीडे-मकोड़े नही पनपते। यह घातक कृमि और कीटों को नष्ट करती है। वास्तविकता यह है कि पेड़-पौधो की पूजा, अर्चना, वंदना एवं प्रार्थना के पीछे कर्मकाण्ड नहीं अपितु इनके पीछे कई मानवोपयोगी वैज्ञानिक तथ्य छिपे हुए है, जो किसी न किसी रूप में स्वास्थ एवं आयुर्वेद की दृष्टि में उपयोगी तथा पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से धार्मिक आस्था के रूप में योगदान देते है। वृक्षों की सुरक्षा हो इसके लिए यह जरुरी था कि उन्हें कटने से बचाया जाए। पीपल, नीम, बरगद, आदि अनेक वृक्ष जो दिन-रात वायु को शुद्ध करते है, प्राणियों को सॉस लेने के लिए ऑक्सीजन प्रदान करते है, ऐसे वृक्षों को धार्मिक मान्यताओं एवं आस्थाओं से जोड़ना एक दूरदृष्टि का काम था। कालांतर में पर्यावरण का लेकर ऐसी ही दूरदर्शिता एवं चिंता मध्यकालीन सन्त श्री जाम्भोजी में देखने को मिलती है। पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से मध्यकाल में उत्पन्न श्री जाम्भोजी के विचार वर्तमान परिप्रेक्ष्य में उल्लेखनीय और प्रासंगिक है। संत जाम्भोजी के प्रकृति एवं पर्यावरण संबंधी विचार तत्कालीन युग से ज्यादा वर्तमान में प्रासंगिक है।

गुरू जाम्भोजी का उद्भव उस समय हुआ जब भारत में अराजकता की स्थिति थी। धर्म और भक्ति को लेकर ऐसे आडंबर फैले हुए थे, जिनसे साधारण जनता त्रस्त थी। राजनीति के क्षेत्र मे अव्यवस्था होने के कारण उस समय के भयंकर अकाल, अतिवृष्टि, अनावृष्टि जैसे परिस्थितीयों मे जनता की समस्याओं को सुनने वाला कोई नही था, ऐसी स्थिति में गुरू जाम्भोजी का जन्म हुआ। गुरू जाम्भोजी प्रकृति-प्रेमी व्यक्तित्व के धनी थे। उन्हें भौतिक सुविधाओं से विरत प्रकृति की गोद में रहना प्रिय था। उन्होंने प्रकृति के साथ-साथ वन-संस्कृति को भी बचाने का कार्य किया जाम्भोजी का जीवन वन-संस्कृति के साथ बहुत गहरे रूप से जुड़ा हुआ था। दूरदृष्टि सम्पन्न एवं दिव्य व्यक्तित्व सन्त गुरू जाम्भोजी वस्तुत: आज के पर्यावरण संकट तथा उससे जुड़े आधुनिक युग की विकट समस्याओं को शायद अपने युग में ही महसूस कर चुके थे। यही कारण है कि वे जीवनभर तत्कालीन समाज को पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूक करते रहे। उनके बनाए 29 नियमों में ही कुछ नियम ऐसे हैं, जो पूर्णतया प्रकृति एवं पर्यावरण की रक्षा हेतु कहे जा सकते है। इन्हें समझकर हम उनके पर्यावरण संबंधी चिंतन को जान सकते है। गुरू जाम्भोजी के समय में भयंकर अकाल की समस्या थी। किंतु आज की तरह पर्यावरण प्रदुषण की कोई समस्या नहीं थी। फिर भी उन्होंने इस समस्या की भयंकरता को समझा और स्थापित किया कि मानव के विकास एवं अस्तित्व के लिए प्रकृति के विभिन्न आयामों में संतुलन रहना आवश्यक है। पर्यावरण संरक्षण के सम्बन्ध में उन्होंने जो विचार व्यक्त किए है, उनके आधार पर उन्हें विश्व का प्रथम पर्यावरण विदू कहा जा सकता है।

संत जाम्भोजी ने 29 धर्मो की व्याख्यानमाला से मानव की अंतर्बाहय शुद्धता के साथ-साथ जल, जंगल, जमीन, जानवर की रक्षा के विषय में भी सचेत किया है। उनकी धर्म को पर्यावरण संरक्षण के साथ जोड़ने की सोच उल्लेखनीय और अद्वितीय है। उनके बतलाए गए नियमों में जल, जंगल, जमीन समान इत्यादि की शुद्धता के उपाय शामिल है। गुरू जाम्भोजी द्वारा प्रतिपादित नियम आज भी इस अशान्त भौतिक युग में उतने ही सार्थक है, जितने की ये प्रवर्तन के समय में थे। गुरू जाम्भोजी के अनुसार एक नियम है- 'हरा वृक्ष ना काटें।' वर्तमान संदर्भो में पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण है- 'वृक्षों की अंधाधुंध कटाई।' वृक्षारोपण के अभाव तथा पेड़ों की अंधाधुंध कटाई से मानव जाति पर अस्तित्व का संकट मँडराने लगा है। देश के कई शहरों में प्रदुषण का उच्च स्तर तक पहुँचना इस बात का प्रमाण है कि समस्या कितनी गंभीर हो चुकी है। गुरू जाम्भोजी ने मनुष्य को यह तथ्य समझाने का प्रयास किया कि मानव और वृक्ष का आपस में अभिवन रिश्ता है। मानव जन्म से लेकर मृत्यु तक वृक्षों पर ही आश्रित है, इसलिए उन्होंने मनुष्य को वृक्ष से प्रेम करने की शिक्षा दी और स्थान-स्थान पर भ्रमण करते हुए इसी भावना का प्रचार-प्रसार किया। गुरू जाम्भोजी के वृक्ष-प्रेम की भावना का उनके मतावलंबियों पर गहरा प्रभाव पड़ा, वे न तो हरा वृक्ष काटते थे और न ही किसी को काटने देते थे। गुरू जाम्भोजी ने हरे वृक्ष को काटना जीव हत्या के समान बताया है। पर्यावरण की रक्षा के लिए मनुष्य और अन्य प्राणियों के संतुलन बनाए रखने के लिए गुरूजी ने वृक्ष ना काटने का नियम बनाया था। उनका मानना था कि वृक्ष प्राणवान है, इसलिए जीव दया की भावना के कारण अन्य प्राणियों की रक्षा की तरह वृक्षों की भी रक्षा करना आवश्यक है। इन्ही सब कारणों के आधार पर गुरू जाम्भोजी ने हरे वृक्ष न काटने की आज्ञा दी।[4] वर्तमान में प्रकृति और पर्यावरण को बचाने इसे फिर से संरक्षित, सुरक्षित और समृद्ध करने के लिए हमें इसके प्रति फिर से भावात्मक सम्बन्ध स्थापित करने होंगे। इसके साथ ही भारतीय वैदिककालीन संस्कृति की प्राचीन मान्यताओं को सामयिक परिप्रेक्ष्य में कसोटी से कसकर फिर से हमे 'माता भूमि: पुत्रोहं पृथिव्या:।' का उद्घोष करना होगा। हमारे अंदर वृक्षों के प्रति जब तक गहरी संवेदना संप्रेषित नहीं होती तब तक पर्यावरण का शोषण एवं दोहन होता रहेगा।

जाम्भोजी कहते हैं कि प्राणीमात्र पर दया करना, मानवीय भाव की रक्षा करनी चाहिए। उन्होंने कहा हैं कि जीव दया का सिद्धान्त अहिंसा का मूल आधार है। पर्यावरण सन्तुलन की दृष्टि से यह नियम समस्त संसार के लिए अनुकरणीय है। जीव दया पर सर्वाधिक बल देते हुए गुरू महाराज कहते हैं-

"जां जां दया न धरमूं, तां तां विक्रम करमूं।
तिहकै गले करद क्यूं सारो, थे पढ़, सुण रहिया खाली।"[5]

जीवों पर दया करना अर्थात् जिसतरह प्राणी को प्राण प्रिय होते है, उसी भाव से पशु, पक्षी व निर्दोष जीवों की रक्षा करनी चाहिए। अपने से कमजोर प्राणियों की रक्षा करने से मनुष्य अनोखे सुख का अनुभव करता है। दया की भावना के बिना मनुष्य कठोर और निष्ठूर बन जाता है। आज मनुष्य अपने भौतिक एवं आर्थिक लाभ हेतु लगातार प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ने का कार्य कर रहा है। वह जिस प्रकार से वन्य प्राणियों का शिकार और जंगलो को निरंतर काटता है, उससे धरती का प्राकृतिक संतुलन बिगड़ता जा रहा है। अनेक पशु-पक्षीं विलुप्ति की ओर जा रहे है। वन्य प्राणियों की संख्या लगातार कम होती जा रही है। वन्य जीवों के संरक्षण में ही मनुष्य के अस्तित्व की रक्षा का सार तत्व मौजूद है। वन्यजीव संरक्षण बेहद महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि एक पर्यावरणीय अनिवार्यता भी है क्योंकि अगर हम वन्यजीवों का संरक्षण नहीं करते है, तो पृथ्वी के पारिस्थितिकी तंत्र में असंतुलन निर्माण होता है। यही बात गुरू जाम्भोजी उनके नियमों के जरिए से समाज तक पहुँचाना चाहते थे। आज भी यह उतनी ही सार्थक और प्रासंगिक दिखाई देती है।

मानव के विकास एवं अस्तित्व के लिए प्रकृति के विभिन्न आयामों में संतुलन रहना आवश्यक है। प्रकृति के प्रमुख तीन घटक है, मनुष्य पेड़-पौधे और मानवेत्तर प्राणी इन तीनों में मानव अपनी सुरक्षा स्वयं कर सकता है। लेकिन अन्य दोनों घटकों की सुरक्षा मानव की इच्छा पर निर्भर है। इन तीनों की सुरक्षा से प्रकृति से विभिन्न आयामों में संतुलन रहता है तथा पर्यावरण दूषित हो जाता है। इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखते हुए गुरु जाम्भोजी ने मंत्र दिया है, वह है-

"जीव दया पालनी रूख लीलों नहिं धावै।"[6]

पर्यावरण को शुद्ध रखने व प्रदुषण को समाप्त करने के लिए वृक्ष सबसे उत्तम साधन है। मानव व वृक्ष का गहरा संबंध है। वृक्ष मानव के लिए बहुत उपयोगी है। वृक्षों के बिना मानव का जीवन अधुरा है। वृक्षोंकी उपयोगिता को समझकर गुरू जाम्भोजी ने वृक्ष-प्रेम की भावना पर बल दिया था। पर्यावरण को शुद्ध रखने तथा वृक्ष-प्रेम की भावना जाग्रत करने के उद्देश्य से ही उन्होंने स्थान-स्थान पर खेजडी के वृक्ष लगाये थे, जो आज भी देखे जा सकते है। उन्होंने अपनी 'सबदवाणी' में हरे वृक्षों काटने का घोर विरोध किया है। उनका कहना था हरे वृक्षों को काटना एक तरह से जीव हत्या करना है। वृक्ष के बीना हमारे जीवन की कल्पना नहीं की जा सकती क्योंकि जीवनदायनी ऑक्सीजन का एकमात्र स्त्रोत वृक्ष ही है। मानव जीवन वृक्षों पर ही निर्भर है। वर्षा भी वृक्षों के वजह से ही होती है। अगर हम निर्दथता पूर्वक वृक्षों की कटाई करते रहेंगे, तो एक तरफ जहाँ मरुस्थल बढता जायेगा, वहाँ दूसरी तरफ प्राकृतिक विपदा बाढ, अकाल, इत्यादि की रोकथाम भी सम्भव नहीं हो पाएगी। उनका मानना है कि यदि सिर कटवाने पर ही वृक्षों की रक्षा हो सकती है, तो यह सौदा सस्ता है। वे कहते हैं- "सिर सांटे रुख रह, तो भी सस्तो जाण।"[7]

जाम्भोजी महाराज के उपदेशों से प्रेरित होकर लोगों ने वृक्षों की रक्षा के लिए अपने प्राणो तक की आहुति दे दी। 1787 में खेजड़ली आंदोलन हुआ, जिससे अमृता देवी के नेतृत्व में 363 स्त्री, पुरूषों ने वृक्षों से चिपककर, उनकी रक्षा में अपने प्राण न्यौछावर कर दिए। इस आंदोलन के प्रेरणास्त्रोत गुरू जाम्भोजी ही है, जिनसे प्रेरणा लेकर सन 1972 में उत्तराखंड में सुन्दरलाल बहुगुणा के नेतृत्व में जो 'चिपको आंदोलन' चला वे बिश्नोई समाज द्वारा प्रारंभ किये गए आंदोलन की एक कड़ी ही है।

गुरू जाम्भोजी ने बैलों को नपुंसक कराने को निषिद्ध कहा है क्योंकि यह एक पीड़ादायक तथा अमानवीय प्रक्रिया है। प्रजनन शक्ति प्रकृति प्रदत्त है इसमें दखल देना घातक है। अतः यह कहना उचित होगा कि पर्यावरण प्रदुषण समाज की सबसे बड़ी समस्या है और यह मानवनिर्मित है। पर्यावरण प्रदुषण के संकट को समाप्त करना आवश्यक ही नहीं बल्कि अनिवार्य है। मनुष्य का कर्तव्य है कि प्रकृति और पर्यावरण के संतुलन को बनाए रखे तथा मानवता की धरोहर को सुरक्षित रखे। गुरू जाम्भोजी ने पर्यावरण संरक्षण के जो उपाय बतलाए है, वे पूर्णतः वैज्ञानिक है और इन उपायों द्वारा पर्यावरण प्रदुषण की समस्या को हल किया जा सकता है।

गुरू जाम्भोजी ने वर्तमान की समस्या के लिए ही अपने उपदेशों मे हमेशा पर्यावरण को बचाने को उपदेश दिया। गुरू जाम्भोजी ने पर्यावरण की रक्षा हेतु लोगों को वृक्ष लगाने के लिए और वृक्षों से प्रेम करने की भावना को प्रेरित किया। जाम्भोजी का यह नियम आज की पर्यावरणीय दृष्टि से अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। आज लोगों को अधिक से अधिक वृक्ष लगाने और उनसे प्रेम करने की आवश्यकता है। अतः हमें आज मनुष्य के अस्तित्व पर आए संकट को दूर करने के लिए वनों की रक्षा तथा वन्य प्राणियों की सुरक्षा करने का दृढ़ संकल्प लेना होगा।

संदर्भ ग्रथ सूची-

1. https://www.breaknlinks.com 'वेदों में वृक्षों और उनका महत्व'
2. https://www.breaknlinks.com 'वेदों में वृक्षों और उनका महत्व'
3. https://www.breaknlinks.com 'वेदों में वृक्षों और उनका महत्व'
4. प्रो मोहन, प्रो कृष्ण कुमार कौशिक, डॉ. मनमोहन लटियाल वर्तमान परिदृश्य में गुरू जाम्भोजी का चिंतन, जाम्भाणी साहित्य अकादमी, बीकानेर, राजस्थान, 2019, पृ. क्र. 147
5. संपादक मण्डल प्रो. मोहन, प्रो. कृष्ण कुमार कौशिक, डॉ. मनमोहन लटियाल, 'वर्तमान परिदृश्य में गुरू जाम्भोजी का चिंतन', अमन प्रकाशन, 2015, कानपुर,पृ. 207
6. कृष्णलाल बिश्नोई, 'गुरू जाम्भोजी का जीवन दर्शन', बीकानेर, राजस्थान, 2014, पृ. 118
7. वही, पृ. 119

पर्यावरण लेखाद्यकन

डॉ० विभा पाण्डेय

Asst- Professor (Commerce), Govt. P.G. College, ObraSonbhadra, U.P.

पर्यावरण लेखाद्यकन क्या है?

पर्यावरणीय लेखाद्यकन उस पद्धति को संदर्भित करता है जिसमें संगठन अपने व्यावसायिक परिणामों में पर्यावरणीय लागतों को शामिल करने के लिए लेखाद्यकन और वित्त के पारंपरिक सिद्धांतों का उपयोग करते हैं। इस दृष्टिकोण का प्राथमिक लक्ष्य पारंपरिक पर्यावरण और आर्थिक लक्ष्यों के बीच संभावित व्यापार-बंदों को प्रबंधित करने और समझने में संगठनों की सहायता करना है।

व्यवसायों को समाज के प्रति जिम्मेदार होने और टिकाऊ बने रहने के लिए यह तकनीक आवश्यक है। यह उन्हें यह समझने की अनुमति देता है कि उनके कार्य पर्यावरण को कैसे प्रभावित करते हैं और उनके वित्तीय निर्णयों और रिपोर्टों में पर्यावरणीय समस्याओं को शामिल करके संबंधित लागतों को जानते हैं। यह व्यवसायों को अधिक जवाबदेह और पारदर्शी बनाता है। दृष्टिकोण के विभिन्न प्रकार हैं जैसे स्थिरता और पूर्ण लागत लेखाद्यकन।

पर्यावरण लेखाद्यकन के उद्देश्य-

पर्यावरण खातों को अलग करना-

पर्यावरण खातों को अलग करके, कंपनियां पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए आवश्यक धन को समझती हैं। इससे हमें यह देखने में भी मदद मिलती है कि हमारे कार्यों से उत्पन्न होने वाली किसी भी समस्या, जैसे प्रदूषण, को ठीक करने में कितना खर्च आता है। ऐसा करके हम पर्यावरणीय जोखिमों और अवसरों का प्रबंधन कर सकते हैं।

उदाहरण के लिए, कोई कंपनी पर्यावरण को नुकसान पहुंचा सकती है। लेकिन यह नवीकरणीय ऊर्जा या टिकाऊ प्रथाओं का उपयोग करके उस नुकसान को भी कम कर सकता है। कंपनियां पर्यावरण-अनुकूल उत्पाद बेचकर भी पैसा कमा सकती हैं। इस अभ्यास से उनकी प्रतिष्ठा में सुधार हो सकता है। पर्यावरण लेखाद्यकन से कंपनियों को पैसा कमाने में मदद मिलती है और साथ ही पर्यावरण को भी मदद मिलती है।

पर्यावरण एवं संसाधन खातों को जोड़ना-

पर्यावरण लेखाद्यकन के कुछ लक्ष्य हैं। इसका उद्देश्य पर्यावरण, संसाधनों और धन को जोड़ना है ताकि यह देखा जा सके कि वे कैसे संबंधित हैं। प्राकृतिक संसाधनों और वित्तीय जानकारी को जोड़कर, हम यह निर्धारित कर सकते हैं कि संसाधनों का बेहतर उपयोग कैसे करें और अधिक पैसा कैसे कमाया जाए। यह मूल्यांकन करता है कि हम संसाधनों का कितना उपयोग कर रहे हैं और कितना पैसा कमा रहे हैं।

पर्यावरणीय लागत और लाभ का आकलन करना-

पर्यावरण लेखाद्यकन किसी कंपनी के कार्यों के अच्छे और बुरे प्रभावों को निर्धारित करता है। हम प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग जैसी चीजों को मापते हैं। इससे कंपनियों को बेहतर विकल्प चुनने में मदद मिलती है। इसलिए वे कानून नहीं तोड़ते या अपनी प्रतिष्ठा को नुकसान नहीं पहुंचाते। पर्यावरणीय लागतों को जानने से कंपनियों को उनके प्रभाव को कम करने के तरीके खोजने में मदद मिलती है।

मूर्त संपत्ति रखरखाव के लिए लेखाद्यकन-

पर्यावरण लेखाद्यकन यह भी ट्रैक करता है कि हम मशीनों जैसी चीजों की देखभाल कैसे करते हैं। उनका अच्छी तरह से रखरखाव करना महत्वपूर्ण है ताकि वे काम करें और पर्यावरण को नुकसान न पहुँचाएँ। यह निगरानी करता है कि वे कितनी ऊर्जा और संसाधनों का उपयोग करते हैं और कम उपयोग करने के तरीके खोजने का प्रयास करते हैं। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि इनकी उपेक्षा करने से पर्यावरणीय जोखिम पैदा हो सकता है। मूर्त संपत्ति रखरखाव के लिए लेखाद्यकन करके, कंपनियां सुनिश्चित करती हैं कि उनकी संपत्ति कुशलतापूर्वक काम करती है। और पर्यावरण को नुकसान न पहुंचाएं।

हरित उत्पाद और आय मेट्रिक्स-

पर्यावरण लेखाद्यकन के लिए संकेतक विकसित करने और मापने की आवश्यकता होती है। संकेतक दिखाते हैं कि उत्पादों का उत्पादन और उपयोग पर्यावरण को कैसे प्रभावित करते हैं। यह महत्वपूर्ण है क्योंकि जीडीपी जैसे पारंपरिक वित्तीय संकेतक केवल पैसे पर विचार करते हैं। और वे पर्यावरणीय लागतों की अनदेखी करते हैं।

आर्थिक गतिविधियों की वास्तविक लागतों और लाभों की अधिक सटीक तस्वीर प्राप्त करने के लिए। हमें पर्यावरणीय खर्चों और लाभों को शामिल करने के लिए इन संकेतकों को बदलना होगा। ऐसा करके हम उत्पादों और सेवाओं के आर्थिक मूल्य को बेहतर ढंग से समझ सकते हैं।

पर्यावरण लेखाद्यकन के प्रकार-

1. वित्तीय पर्यावरण लेखाद्यकन: यह पर्यावरण पर कंपनी की गतिविधियों की लागत और लाभों को जोड़ने और उन पर एक डॉलर का मूल्य डालने के बारे में है। यह पर्यावरणीय प्रभाव को मूल्य टैग देने जैसा है, जिससे इसे वित्तीय रिपोर्टों में शामिल करना आसान हो जाता है। कंपनियाँ इस जानकारी का उपयोग यह देखने के लिए कर सकती हैं कि पर्यावरणीय लागतों को कैसे कम किया जाए (जैसे प्रदूषण के लिए जुर्माना) और लाभ कैसे बढ़ाया जाए (जैसे ऊर्जा बचत)।
2. भौतिक पर्यावरण लेखाद्यकन: पैसे के बजाय, यह प्रकार पर्यावरण को प्रभावित करने वाली भौतिक सामग्री को मापता है। उपयोग किए गए गैलन पानी या उत्पादित टन कचरे की गिनती करने के बारे में सोचें। यह इस बात पर नजर रखने जैसा है कि आपने अपनी पैदल यात्रा पर कितने कदम उठाए हैं। कंपनियाँ इस डेटा का उपयोग अपने पर्यावरणीय पदचिह्न को समझने और इसे कम करने के तरीके खोजने के लिए कर सकती हैं।
3. राष्ट्रीय पर्यावरण लेखाद्यकन: यह एक विहंगम दृश्य की तरह है कि किसी देश की संपूर्ण अर्थव्यवस्था पर्यावरण को कैसे प्रभावित करती है। यह प्रकृति के साथ सभी कंपनियों के कारनामों और अनुभवों की एक राष्ट्रीय डायरी की तरह है। सरकारें इस बड़ी तस्वीर वाली जानकारी का उपयोग ऐसी नीतियां बनाने के लिए करती हैं जो व्यवसायों को अधिक पर्यावरण के अनुकूल होने के लिए प्रोत्साहित करती हैं।

पर्यावरण लेखाद्यकन के घटक-

पर्यावरणीय लागत: कल्पना करें कि आप एक बगीचा शुरू कर रहे हैं, और आपको बीज, मिट्टी और उपकरण खरीदने की जरूरत है। ये आपकी लागतें हैं. पर्यावरणीय प्रभाव के कारण ये पर्यावरणीय लेखाद्यकन में कंपनी के खर्च हैं। इसमें प्रदूषण साफ करना, पर्यावरणीय क्षति के लिए जुर्माना भरना या हरित प्रौ।गिकियों में निवेश करना शामिल है। यह बगीचे की देखभाल के लिए मूल्य टैग की तरह है।

पर्यावरणीय लाभ: अब, अपने बगीचे से काटे गए स्वादिष्ट फलों और सब्जियों के बारे में सोचें। ये आपके फायदे हैं. पर्यावरण लेखाद्यकन में, ये वे पुरस्कार हैं जो एक कंपनी को पर्यावरण के अनुकूल होने से मिलते हैं। इसमें ऊर्जा बिलों पर पैसा बचाना, जुर्माने से बचना, या हरित कंपनी के रूप में अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाना शामिल है। यह बगीचे की देखभाल के लिए प्रतिफल की तरह है।

पर्यावरणीय प्रभाव: अपने बगीचे के आस-पास के प्रभावों की कल्पना करें, जैसे मधुमक्खियों को आकर्षित करना या मिट्टी में सुधार करना। पर्यावरण लेखाद्यकन में, ये वे परिवर्तन हैं जो किसी कंपनी की गतिविधियों के कारण पर्यावरण में होते हैं। इसमें उत्सर्जित ग्रीनहाउस गैसों, उपयोग किए गए पानी या उत्पादित अपशिष्ट की मात्रा शामिल है। यह आपके बगीचे द्वारा धरती पर छोड़े गए पदचिह्न की तरह है।

पर्यावरण नीतियां और विनियम: कल्पना करें कि आप एक बागवानी क्लब का हिस्सा हैं, और हानिकारक कीटनाशकों का उपयोग न करने जैसे नियमों का पालन करना है। पर्यावरण लेखाद्यकन में, कंपनियों को पर्यावरण की रक्षा के लिए इन कानूनों और दिशानिर्देशों का पालन करना चाहिए। इसमें उत्सर्जन पर सीमा या अपशिष्ट निपटान की आवश्यकताएं जैसी चीजें शामिल हैं। यह बगीचे की देखभाल के लिए नियम पुस्तिका की तरह है।

पर्यावरण प्रबंधन प्रणालियाँ: इस बात पर विचार करें कि आप अपने बगीचे की योजना कैसे बनाते हैं और उसे व्यवस्थित करते हैं, जैसे यह तय करना कि प्रत्येक फसल कहाँ लगानी है या कितनी बार पानी देना है। पर्यावरण लेखाद्यकन में, कंपनियाँ अपने पर्यावरणीय प्रभाव को कम करने के लिए इन रणनीतियों और योजनाओं का उपयोग करती हैं। इसमें अपशिष्ट को कम करने के लिए लक्ष्य निर्धारित करना या ऊर्जा-बचत उपायों को लागू करने जैसी चीजें शामिल हैं। यह बगीचे की देखभाल के लिए गेम प्लान की तरह है।

पर्यावरण लेखाद्यकन के घटक बगीचे के तत्वों की तरह हैं। वे कंपनियों को पर्यावरण पर उनके कार्यों की लागत, लाभ और प्रभावों को समझने में मदद करते हैं और उन्हें बेहतर विकल्प चुनने में मार्गदर्शन करते हैं। एक सुव्यवस्थित बगीचे की तरह, एक कंपनी जो अपनी पर्यावरणीय जिम्मेदारियों का ख्याल रखती है वह लगातार फल-फूल सकती है और विकसित हो सकती है।

पर्यावरण लेखाद्यकन रणनीतियाँ-

पर्यावरणीय लेखाद्यकन रणनीतियाँ संगठनों द्वारा अपनी वित्तीय रिपोर्टिंग, निर्णय लेने की प्रक्रियाओं और समग्र व्यावसायिक संचालन में पर्यावरणीय विचारों को शामिल करने के लिए उपयोग की जाने वाली दृष्टिकोण और तकनीकें हैं। ये रणनीतियाँ संगठनों को उनकी गतिविधियों से जुड़े पर्यावरणीय प्रभावों और लागतों का आकलन, माप और प्रबंधन करने में मदद करती हैं। यहां कुछ प्रमुख पर्यावरण लेखाद्यकन रणनीतियाँ दी गई हैं:

जीवन चक्र मूल्यांकन (LCA)- LCA किसी उत्पाद, प्रक्रिया या सेवा के निर्माण से लेकर उसके जीवन के अंत तक निपटान तक के पर्यावरणीय प्रभाव का आकलन करने के लिए एक व्यापक तरीका है। यह संपूर्ण जीवन चक्र के दौरान ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन, ऊर्जा खपत और संसाधन उपयोग जैसे पर्यावरणीय प्रभावों की मात्रा निर्धारित करता है। उत्पाद डिजाइन, सोर्सिंग और अपशिष्ट प्रबंधन के बारे में सूचित निर्णय लेने के लिए संगठन एलसीए डेटा का उपयोग कर सकते हैं।

पर्यावरणीय लागत लेखाद्यकन: इसमें व्यावसायिक गतिविधियों से जुड़ी पर्यावरणीय लागतों की पहचान करना, मात्रा निर्धारित करना और उन पर नजर रखना शामिल है। इन लागतों में प्रत्यक्ष लागत (जैसे, प्रदूषण नियंत्रण उपकरण), अप्रत्यक्ष लागत (जैसे, नियामक जुर्माना), और छिपी हुई लागत (जैसे, संसाधन की कमी) शामिल हो सकती हैं। पर्यावरणीय लागत लेखाद्यकन संगठनों को उनके पर्यावरणीय प्रभावों के वित्तीय निहितार्थों को समझने और लागत में कमी के अवसरों की पहचान करने में मदद करता है।

कार्बन लेखाद्यकन: कार्बन लेखाद्यकन किसी संगठन के ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को मापने और प्रबंधित करने पर केंद्रित है। इसमें संचालन, उत्पादों या सेवाओं के कार्बन पदचिह्न की गणना करना और उत्सर्जन को कम करने के लिए रणनीति विकसित करना शामिल है। कार्बन लेखाद्यकन से कार्बन तटस्थता पहल, कार्बन ऑफसेट कार्यक्रम और कार्बन मूल्य निर्धारण रणनीतियाँ बन सकती हैं।

पर्यावरण प्रदर्शन संकेतक (KPI): संगठन अपने पर्यावरणीय प्रभावों से संबंधित प्रमुख प्रदर्शन संकेतक स्थापित कर सकते हैं और उन्हें नियमित रूप से ट्रैक कर सकते हैं। सामान्य ज्ञच्प् में ऊर्जा खपत, जल उपयोग, अपशिष्ट उत्पादन और उत्सर्जन शामिल हैं। लक्ष्य निर्धारित करने और इन संकेतकों के विरुद्ध वास्तविक प्रदर्शन की तुलना करने से संगठनों को अपनी प्रगति की निगरानी करने और सुधार के क्षेत्रों की पहचान करने में मदद मिलती है।

स्थिरता रिपोर्टिंग: स्थिरता रिपोर्ट ऐसे दस्तावेज हैं जो किसी संगठन के पर्यावरण, सामाजिक और शासन (ESG) प्रदर्शन का खुलासा करते हैं। वे हितधारकों को कंपनी के स्थिरता प्रयासों और प्रभावों के बारे में पारदर्शी जानकारी प्रदान करते हैं। स्थिरता रिपोर्टिंग के लिए लोकप्रिय ढांचे में ग्लोबल रिपोर्टिंग इनिशिएटिव (GRI) और स्थिरता लेखा मानक बोर्ड (SSB) मानक शामिल हैं।

ट्रिपल बॉटम लाइन (TBL) लेखाद्यकन: TBL लेखाद्यकन आर्थिक प्रदर्शन के साथ-साथ सामाजिक और पर्यावरणीय आयामों को शामिल करने के लिए पारंपरिक वित्तीय रिपोर्टिंग का विस्तार करता है। यह किसी कंपनी की सफलता का आकलन तीन निचली रेखाओं के आधार पर करता है: लाभ, लोग और ग्रह। TBL लेखाद्यकन संगठनों को अपने कार्यों के सामाजिक और पर्यावरणीय परिणामों पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

पर्यावरण प्रबंधन प्रणाली (EMS)– ISO 14001 जैसे ईएमएस ढांचे, पर्यावरण प्रबंधन के लिए एक संरचित दृष्टिकोण प्रदान करते हैं। वे संगठनों को पर्यावरणीय उद्देश्य निर्धारित करने, उन्हें प्राप्त करने के लिए प्रक्रियाओं को लागू करने और प्रदर्शन की निगरानी करने में मदद करते हैं। म्डै के माध्यम से एकत्र किए गए पर्यावरणीय डेटा का उपयोग पर्यावरणीय लेखाद्यकन उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है।

संसाधन दक्षता कार्यक्रम: संगठन अपशिष्ट को कम करने, ऊर्जा और पानी की खपत को कम करने और सामग्री के उपयोग को अनुकूलित करने के लिए संसाधन दक्षता कार्यक्रम लागू कर सकते हैं। इन कार्यक्रमों के परिणामस्वरूप अक्सर पर्यावरणीय प्रभावों को कम करते हुए लागत बचत होती है।

पर्यावरणीय जोखिम मूल्यांकन: पर्यावरणीय जोखिमों का आकलन और मात्रा निर्धारित करना, जैसे नियामक अनुपालन जोखिम या पर्यावरणीय कारकों के कारण आपूर्ति श्रृंखला में व्यवधान, संगठनों को शमन रणनीति विकसित करने और तदनुसार संसाधनों को आवंटित करने की अनुमति देता है।

हरित खरीद: हरित खरीद प्रथाओं में ऐसे आपूर्तिकर्ताओं और उत्पादों का चयन करना शामिल है जिनका पर्यावरणीय प्रभाव कम हो। खरीद संबंधी निर्णय लेते समय संगठन कच्चे माल की स्थिरता, ऊर्जा दक्षता और पुनर्चक्रण जैसे कारकों पर विचार कर सकते हैं।

नवीकरणीय ऊर्जा में निवेश: सौर या पवन ऊर्जा जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों में परिवर्तन, जीवाश्म ईंधन पर कंपनी की निर्भरता को कम कर सकता है और इसके कार्बन पदचिह्न को कम कर सकता है। पर्यावरण लेखाद्यकन ऐसे निवेशों के वित्तीय और पर्यावरणीय लाभों का आकलन करने में मदद कर सकता है।

सर्कुलर इकोनॉमी पहल: रिसाइक्लिंग, पुन: उपयोग और पुन: निर्माण जैसे सर्कुलर इकोनॉमी सिद्धांतों को अपनाने से अपशिष्ट को कम किया जा सकता है और संसाधन दक्षता को बढ़ावा दिया जा सकता है। पर्यावरण लेखाद्यकन सर्कुलर प्रथाओं के आर्थिक और पर्यावरणीय लाभों को ट्रैक करने में मदद कर सकता है।

पर्यावरण बेंचमार्किंग: किसी संगठन के पर्यावरणीय प्रदर्शन की तुलना उद्योग के बेंचमार्क या सर्वोत्तम प्रथाओं से करने से उन क्षेत्रों को उजागर किया जा सकता है जहां सुधार की आवश्यकता है और रणनीतिक निर्णयों का मार्गदर्शन किया जा सकता है।

पर्यावरण लेखाद्यकन के लाभ–

बेहतर निर्णय लेना: जैसे एक लंबी पैदल यात्रा डायरी आपको यह तय करने में मदद करती है कि अगली बार कौन से रास्ते तलाशने हैं, पर्यावरण लेखाद्यकन कंपनियों को सूचित निर्णय लेने के लिए उपयोगी जानकारी प्रदान करता है। अपनी पर्यावरणीय लागतों और लाभों को समझकर, कंपनियां बेहतर विकल्प चुन सकती हैं, जैसे पर्यावरण-अनुकूल प्रौद्योगिकियों में निवेश करना या कचरे को कम करने के तरीके ढूंढना। यह पिछले अनुभवों के आधार पर अपनी पदयात्रा के लिए सर्वोत्तम मार्ग चुनने जैसा है।

बेहतर प्रतिष्ठा: कल्पना करें कि यदि आप अपनी लंबी पैदल यात्रा डायरी दोस्तों के साथ साझा करते हैं और वे देखते हैं कि आप पर्यावरण की कितनी परवाह करते हैं तो आपको कितना गर्व महसूस होगा। उसी तरह, जब कंपनियां यह दिखाने के लिए पर्यावरण लेखाद्यकन का उपयोग करती हैं कि वे ग्रह की देखभाल कर रही हैं, तो इससे उनकी प्रतिष्ठा बढ़ती है। ग्राहक, निवेशक और अन्य हितधारक उन कंपनियों की सराहना करते हैं जो पर्यावरण की परवाह करते हैं, और इस सद्भावना से बिक्री, निवेश या समर्थन में वृद्धि हो सकती है। यह साथी पदयात्रियों का सम्मान और प्रशंसा अर्जित करने जैसा है।

लागत बचत: लंबी पैदल यात्रा डायरी रखने से आपको यह याद रखने में मदद मिलती है कि कौन सा उपकरण सबसे अच्छा काम करता है, जिससे भविष्य की यात्राओं पर आपके पैसे की बचत होती है। इसी तरह, पर्यावरण लेखाद्यकन कंपनियों को पैसे बचाने के अवसरों की पहचान करने में मदद करता है। कंपनियाँ ऊर्जा उपयोग, पानी की खपत या बर्बादी को कम करने के तरीके खोजकर अपनी परिचालन लागत कम कर सकती हैं। यह आपकी पदयात्रा के लिए सबसे कुशल गियर ढूंढने जैसा है।

विनियमों का अनुपालन: जैसे एक लंबी पैदल यात्रा डायरी आपको उन नियमों की याद दिलाती है जिनका आपको पालन करने की आवश्यकता है, पर्यावरण लेखाद्यकन कंपनियों को पर्यावरण कानूनों और विनियमों का अनुपालन करने में मदद करता

है। अपने पर्यावरणीय प्रभावों और कार्यों पर नजर रखकर, कंपनियाँ यह सुनिश्चित कर सकती हैं कि वे नियमों का पालन कर रहे हैं और जुर्माने या जुर्मानों से बच रहे हैं। यह यह सुनिश्चित करने जैसा है कि आप मुसीबत में पड़ने से बचने के लिए परीक्षण दिशानिर्देशों का पालन कर रहे हैं।

उन्नत पर्यावरणीय प्रदर्शन: अपनी डायरी प्रविष्टियों से सीखकर, कल्पना करें कि एक यात्री के रूप में आप कितना सुधार करेंगे। उसी तरह, पर्यावरण लेखाद्यकन कंपनियों को अपने पर्यावरणीय प्रदर्शन में लगातार सुधार करने में मदद करता है। अपने डेटा का विश्लेषण करके, कंपनियां लक्ष्य निर्धारित कर सकती हैं और अधिक टिकाऊ बनने की दिशा में अपनी प्रगति को ट्रैक कर सकती हैं। यह व्यक्तिगत रिकॉर्ड स्थापित करने और एक बेहतर यात्री बनने के लिए खुद को चुनौती देने जैसा है।

निष्कर्ष–

किसी समुदाय की स्थिरता आर्थिक और पर्यावरणीय स्वास्थ्य को एकीकृत करने, सामाजिक समानता को बढ़ावा देने और योजना और कार्यान्वयन में व्यापक नागरिक भागीदारी को बढ़ावा देने पर निर्भर करती है। पर्यावरण लेखाद्यकन (ईए) रिकॉर्डिंग और माप से परे है क्योंकि यह निर्णय लेने और संसाधनों के संरक्षण में कदम उठाने से संबंधित है। पर्यावरणीय लेखाद्यकन (ईए) को कॉर्पोरेट प्रबंधकों और पर्यावरण अधिवक्ताओं द्वारा निजी क्षेत्र के भीतर बेहतर पर्यावरणीय निर्णय लेने के लिए एक आवश्यक पूरक के रूप में देखा जाता है।

पिछले पांच वर्षों में लेखाद्यकन के भीतर एक प्रमुख क्षेत्र "पर्यावरण के लिए लेखाद्यकन" रहा है, जिसने लेखाद्यकन शिक्षाविदों और पेशेवर लेखाकारों के दायरे से परे रुचि पैदा की है। प्रबंधकों, मीडिया, राजनेताओं और जनता ने पर्यावरणीय और इसलिए सामाजिक समस्याओं पर ध्यान दिया है, जिनका समाधान, कम से कम व्यवसाय और पर्यावरण के बीच की बातचीत को पहचानकर, उसका मूल्यांकन करके किया जा सकता है। अतीत में ऐसी स्थिति नहीं रही है, और समीक्षा जो सामाजिक और पर्यावरणीय लेखाद्यकन के समग्र क्षेत्र के भीतर विभिन्न गतिविधियों के उतार–चढ़ाव और बदलती किस्मत का अनुसरण करती है।

References:

https://www.sciencedirect.com/topics/earth-and-planetary-sciences/environmental-accounting#:~: text=Environmental% 20accounting%2C%20Also%20called% 20green,operational%20costs%20of%20natural%20resources.

https://www.epa.gov/p2/introduction-environmental-accounting-business-management-tool-key-concepts-and-terms

https://www.toyota-industries.com/csr/reports/items/63-64.pdf

https://www.epa.gov/sites/default/files/2014-01/documents/busmgt.pdf

जैन मूर्तियों का संरक्षण और बचाव एवं उसका अस्तित्व

वास्तुविद वर्षा जैन

शोधार्थी, तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद

डॉ० रत्नेश कुमार जैन

मार्गदर्शन, सेंटर फॉर जैन स्टडी, मुरादाबाद (उ. प्र.)

हर शासन काल मे महान जैनाचार्य एवं अनेक जैन धर्मावलम्बी राजा-महाराजाओं द्वारा जैन संस्कृति का संरक्षण किया गया है, इसी का शुभ परिणाम है कि आज भी जैन संस्कृति की धर्म-ध्वजा फहरा रही है तथा इस संस्कृति के माध्यम से समूची मानव जाति को अहिंसा का संदेश दिया जाता है।इस संस्कृति के प्राण हैं देश-विदेश में स्थित जैन मंदिरो कि मूर्तियां, जो हजारों वर्षों से हैं और जैन धर्म की यश गाथा गा रही हैं।

जैन धर्म को मानने वाले अनुचरो द्वारा पूजनीय मूर्तियां जैन मूर्तियां कहलाती है। जैन धर्मावलम्बियों द्वारा २४ तीर्थकरों की मूर्तियाँ या प्रतिमाएँ पूजी जाती हैं। जैन मूर्तिकला की कुछ विशेषताएं अन्य संप्रदायों की कल्पना से भिन्न हैं, जो मूर्ति को जैन तिर्थकर कि मूर्ति के रूप में पहचान दिलाती हैं। आमतौर पर नग्न, तिर्थकरों की मूर्तियां कठोर तपस्या के आदर्श का प्रतीक हैं- जो जैन धर्म अभ्यास का केंद्र है। इसमें कोई विशिष्ट चेहरे की विशेषताएं, कपड़े या केश विन्यास नहीं हैं

यदि सम्पूर्ण भारत की दृष्टि से देखा जाए तो मौर्य वंश के सम्राट सम्प्रति ने जैन धर्म का पालन और संरक्षण प्रदान किया. सम्प्रति के द्वारा निर्मित तीर्थकरों की अनेक जैन प्रतिमाएं आज भी मिलती है. उड़ीसा के सम्राट खारवेल ने भी जैन धर्म का पालन किया और धर्म के प्रसार के लिए बहुत काम किया. उड़ीसा की खंडगिरि उदयगिरि की गुफाएं उनकी कृति के रूप में प्रसिद्द है. चालुक्य वंशीय गुजरात नरेश कुमारपाल ने भी जैन धर्म के विस्तार में बहुत बड़ा योगदान दिया. महाराजा कुमारपाल निर्मित अनेक जैन मंदिर आज भी दृष्टिगोचर होते हैं.

पत्थर की मूर्तियों का इतिहास उत्पत्ति के बारे मे देखे तो गुफाओं की दीवारों पर पेट्रोग्लिफ या चट्टान की नक्काशी शायद पत्थर पर नक्काशी का सबसे प्रारंभिक रूप था।मूर्तियाँ को प्राचीन परिस्थितियों में भविष्य की पीढ़ियों तक पहुंचाया जाए वर्तमान मे आवशयक है

ऐसा प्रतीत होता है कि मूर्तिकला ईसा पूर्व पिछली सदियों से जैन परंपरा का हिस्सा रही है, लेकिन संभवत: ज्यादातर लकड़ी से बनी थी, जो बची नहीं है। जैन मूर्तिकला के पहले ज्ञात उदाहरण पहली शताब्दी ईसा पूर्व के पत्थर के स्थापत्य हैं, जो मथुरा की कला में पाए गए, विशेष रूप से कंकाली टीला के जैन टीले से।

शायद कला का सबसे प्रसिद्ध एकल जैन कार्य गोम्मटेश्वर प्रतिमा है, जो एक अखंड, बाहुबली की 18 मीटर की मूर्ति है, जिसे 983 के आसपास गंगा मंत्री और कमांडर चावुंदराय ने बनवाया था। यह कर्नाटक राज्य के हसन जिले में श्रवणबेलगोला में एक पहाड़ी की चोटी पर स्थित है। इस प्रतिमा को भारत के सात अजूबों में से पहली के रूप में चुना गया था।

छोटी कांस्य प्रतिमाएँ संभवत: घरों में मंदिरों के लिए थीं। इनमें से कई मध्ययुगीन संग्रहों की खुदाई की गई है,। इनमें वसंतगढ़ भंडार, अकोटा कांस्य भंडार,, हांसी भंडार, और चौसा कांस्य भंडार शामिल हैं।

दाबिद्री के जैन मंदिरों में एक अखंड मनस्तंभ एक मानक विशेषता है। इनमें शीर्ष पर संरक्षक यक्ष के रूप में ब्रह्मदेव की एक मूर्ति शामिल है।

बाहुबली की 58 फीट ऊंची अखंड जैन प्रतिमा विंध्यगिरि पहाड़ी पर स्थित है, श्रवणबेलगोला 983 ईस्वी में निर्मित 2016 तक सबसे बड़ी मुक्त खड़ी अखंड मूर्ति थी, 108 फीट की अखंड मूर्ति अहिंसा की मूर्ति (प्रथम जैन तीर्थंकर, ऋषभनाथ की मूर्ति) मंगी-तुंगी में बनाया गया था।

पत्थर की मूर्तियों की देखभाल और संरक्षण:-, पत्थर से बनी मूर्तियां तीन आयामी वस्तुएं हैं जिन्हें एक से अधिक टुकड़ों को जोड़कर तराशा या इकट्ठा किया जा सकता है। पत्थर एक टिकाऊ सामग्री है, दुनिया के विभिन्न हिस्सों में कई पत्थर की मूर्तियां वर्षों से बची हुई हैं। पत्थर की मूर्तियां, हमारे चारों ओर हर जगह पाई जाती हैं। ये मंदिर के देवता, पूजा की मूर्तियाँ, गेट के खंभों पर खड़े शेर और पक्षी और पत्थर पर नक्काशीदार बाहरी प्रदर्शनियाँ हो सकती हैं जो हमारे मंदिरो में दिखाई देती हैं।

मूर्तियों में सोपस्टोन, एलाबस्टर, बलुआ पत्थर, चूना पत्थर, संगमरमर, बेसाल्ट और ग्रेनाइट जैसे पत्थरों का उपयोग किया जाता है। पत्थर की मूर्तियों कि देखभाल, सफाई, रखरखाव, आसान होता है और ये दीर्घायु होती हैं। हालाँकि, किसी भी सामग्री की तरह, पत्थर भी समय के साथ प्राकृतिक अपक्षय और गिरावट से गुजरते हैं। मूर्तियो को साफ सुथर, उचित व्यवस्था, प्रदर्शन और भंडारण महत्वपूर्ण है कि एक बार जब हम पदार्थ, खराब होने के संकेत और निवारक देखभाल के तरीकों को जान लेते हैं तो मूर्तियों की देखभाल करना आसान हो जाता है। पत्थर के शिलालेख आज २५०० वर्ष पूर्व के भी मिलते हैं।

प्राय: कई प्राचीन जैन तीर्थ हमारी कम जनसंख्या के चलते हमारे हाथ से छूटते जा रहे हैं। अन्य लोग उस पर कब्जा जमा रहे हैं।समाज और संस्थाएं उन्हें बचाने का पूरा प्रयास भी करती हैं लेकिन फिर भी कब तक खींच पाएंगे यह पता नहीं, ज्यादा से ज्यादा २००-३०० साल, नित नए तीर्थ, धाम, आयतन भी अरबों की लागत से हम बना ही रहे हैं। जहां कालांतर में अन्य मत के बाहुबलियों को सिर्फ तीर्थंकर की मूर्ति बदलने का पुरुषार्थ करना होगा ... बाकी देवी देवता, उनका श्रृंगार, कला, शिखर, मंदिर, बेदी सब उनके अनुकूल बना बनाया मिल ही जाएगा।फिर उसके बाद जब जैन जनसंख्या महज २ या ३ लाख ही रह जाएगी तब कितना क्या हम बचा पाएंगे? यह तो समय ही बताएगा, आज हमारी ताकत भले ही कम है लेकिन कालांतर में जब हम पुन: प्रभाव में होंगे तब यही प्रमाण भविष्य के लोगों के लिए ज्ञान के सबसे बड़े स्रोत होंगे। इतिहास हमें प्रमाणित करेगा

पुरातत्वविज्ञों, जैन समाज के व सरकार के प्रमुख व्यक्तियों को, एक विनम्र सुझाव यह है कि अभी जो कुछ भी हमारे अधिकार क्षेत्र में है वहां उस तीर्थ से संबंधित वास्तविक इतिहास, वर्तमान स्थिति, अन्य मत के बाहुबलियों के अतिक्रमण,कब्जे आदि उल्लेखों से संबंधित दो चार शिलालेख,ताम्रलेख संस्कृत प्राकृत भाषाओं में खुदवाकर स्मृति स्वरूप वहां जमीन में गड़वा दें, पत्थर की दीवालों पर, पहाड़ आदि पर अवश्य अंकित करवा दें।

प्राचीन पुरातत्व धरोहरों के संरक्षण व संवर्धन मंदिरों, मूर्तियों की सुरक्षा और जीर्णोद्धार प्राचीन पुरातत्व महत्व की संपदा के संरक्षण-संवर्धन व जीर्णोद्धार को प्राथमिकता देनी चाहिए. अन्य सभी उपायों के साथ साथ हमें यह अभियान भी बहुत व्यापक रूप से चलाना चाहिए।

भारत के साथ-साथ विदेशों में भी उपलब्ध जैन पुरातत्व धरोहरों की जानकारी का संकलन आवश्यक है, विश्व पटल पर जैन संस्कृति को पुन: प्रतिष्ठापित करने का प्रयास करने होंगे, जिसमें समाज का सहयोग अपेक्षित है. मंदिरों, मूर्तियों को बचाना हमारी सबसे पहली प्राथमिकता होनि चाहिये. पुरातत्व संपदा हमारी अनमोल धरोहर है मूर्तियों के संरक्षण-संवर्धन व जीर्णोद्धार की अविलम्ब आवश्यकता है. प्राचीन पुरातत्व संपदा की सुरक्षा करना सच्चा कर्तव्य है. जैन धरोहरों की सुरक्षा में हर संभव प्रयास आवश्यक है.

संदर्भ ग्रंथ सूची;-

- उदय डोक्रास. (2021), जैन आर्किटेक्चर इन इंडिया, इंडो नार्डिक ऑथर'स कलेक्टिव. https://su-se.academia.edu/DrUdayDokras
- आईएएस रौस. (2023), भारत की वास्तुकला में जैन धर्म का योगदान, रौस आईएएस स्टडी सर्किल. सर्किल-सर्किल. https://compass.rauias.com/art-culture/contributions-jainism-architecture-india/
- रवि वजीराम (2023), जैन कला और वास्तुकला, वजीराम एंड रवि इंस्टिट्यूट फॉर आईएएस एग्जामिनेशन. https://vajiramandravi.com/quest-upsc-notes/jain-art-and-architecture/
- जैन एस. (1998), जैनागम धर्म में स्तूप, इन श्वेताम्बर स्थानकवासी जैन सभा हीरक जयंती ग्रन्थ. https://jainqq.org/explore/211045/3
- शाह अदिति. (2019), कंकाली टीला: मथुरा का जैन स्तूप, लाइव हिस्ट्री इंडिया, https://hindi.livehistoryindia.com/story/treasures-of-india/kankali-tila-mathura/
- रानी ए. (2020), यूनिक केव्स ऑफ दॉ जैन ट्रेडिशन: उदयगिरि एंड खंडगिरि, शोधकोष: जर्नल ऑफ विसुअल एंड परफार्मिंग आर्ट्स 1(1), 1-9- https:/doi.org/10.29121/shodhkosh.v1.i1.2020.3

- मेघल ए. पी. के. (2018), डेवलपमेंट ऑफ जैन आर्किटेक्चर फ्रॉम केव्स टू टेम्पल आर्किटेक्चर इन महाराष्ट्र, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग रिसर्च, 7(स्पेसल२), 188-188. https://kdoi.org/10.5958/2319-6890.2018.00054.5
- ह्मूब. (2026), एलोरा की गुफाएं, ãwc, https://www.hmoob.in/wiki/Ellora_Caves
- उदय डोक्रास. (2020), 20 मोस्ट फेमस जैन टेम्पल्स इन इंडिया, इंडो नार्डिक ऑथर'स कलेक्टिव. https://www.academia.edu/43628793/20_Most_Famous_Jain_Temples_in_India
- अमित कुमार. (2018), जैन मंदिर परम्परा की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं उनकी विशषेताएँ, परिपेक्ष- इंडियन जर्नल ऑफ रिसर्च. 7(2), 49-50. https://www.worldwidejournals.com/paripex/recent_issues_pdf/2018/February/February_2018_1517926763__72.pdf
- प्रनोती किरण मेघल. (2018), डेवलपमेंट ऑफ जैन आर्किटेक्चर फ्रॉम केव्स टू टेम्पल आर्किटेक्चर इन महाराष्ट्र, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंजीनियरिंग रिसर्च. 7(2),188-194. https://www. researchgate. net/publication/322639115_ Development_ of_Jain_Architecture_ from_Caves_to_ Temple_Architecture_in_Maharashtra

वर्तमान पर्यावरण में ध्यान एवं रेकी हीलिंग के द्वारा मानसिक अनुभूति

श्रीमति चारू जैन

शोधार्थी, तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद

प्रो. जिनेंद्र कुमार जैन

मार्गदर्शक, सेंटर फॉर जैन स्टडीज, मुरादाबाद (उ. प्र.)

वर्तमान पर्यावरण में जहाँ मनुष्य अपनी भौतिक व सांसारिक इच्छाओं को पूर्ण करने के लिए लगातार एक दूसरे से प्रतिस्पर्धा कर रहा है, व इसी स्पर्धा में अपने अनुसार फल न मिलने या अपेक्षा से कम प्राप्त होने पर मानसिक उलझनों में उलझता जा रहा है, व मानसिक रूप से लगातार बीमार रहने के कारण व्यक्ति शारीरिक रूप से भी अस्वस्थ हो रहा है, इसके फलस्वरूप एक अस्वस्थ व्यक्ति अपने समाज व पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचा रहा है, क्योंकि अस्वस्थ व्यक्ति एक अस्वस्थ समाज का ही निर्माता हो सकता है और जब समाज अस्वस्थ होगा तो पर्यावरण और प्रकृति को भी स्वाभाविक रूप से हानि ही होगी!

इसी लिए मनुष्य को स्वस्थ रहने के लिए स्वयं के भीतर झांकना होगा

यदि हर मनुष्य ज्ञान एवं स्वत: उपचार की प्रक्रिया को सीख जाए वह स्वयं पर इसका प्रयोग करें तो निश्चित रूप से वह अपनी हर स्वस्थ इच्छा को पूर्ण कर सकता है, हर मनुष्य को इस प्रकृति ने यह शक्ति दी है कि वह अपनी प्राण ऊर्जा पर ध्यान केंद्रित करके स्वयं का उपचार कर सके यदि वह इसका निरंतर अभ्यास करता है तो एक मनुष्य अपने आसपास की हर वस्तु हर व्यक्ति को सकारात्मक ऊर्जा देकर स्वस्थ कर सकता है स्वता: उपचार की अनेक प्रक्रियाएं प्रचलन में है जैसे रेकी उपचार, प्राणिक हीलिंग, लामा फेरा आदि!

इन सभी प्रक्रियाओं के लिए अभ्यास की व उचित मार्गदर्शन की आवश्यकता होती है यदि मनुष्य अपनी दिनचर्या में से कुछ समय निकाल ले तो वह निश्चित रूप से अपने चारों ओर एक सकारात्मक ऊर्जा का निर्माण कर सकता है वह अपने आसपास की हर वस्तु हर व्यक्ति तक सकारात्मक ऊर्जा भेज सकता है ज्ञान के माध्यम से व्यक्ति अपनी आत्मा से संवाद स्थापित कर सकता है जो उसे अपने परिवार समाज व आसपास के वातावरण से अधिक मजबूत संबंध बनाने में सहायता करती है व मनुष्य एक स्वस्थ परिवार व समाज का निर्माण कर सकता है क्योंकि;

"एक स्वस्थ मनुष्य एक स्वस्थ समाज का निर्माण करता है और एक स्वस्थ समाज ही एक स्वस्थ राष्ट्र का निर्माण कर सकता है"

रेकी इन्हीं विधियों में से एक विधि है जिससे विभिन्न रोगों का परेकी पार जीवन की जटिलतम समस्याओं रेकी एक जापानी शब्द है। रे का अर्थ इस शक्ति पर सभी प्राणियों का जन्म से ही समान अधिकार है। बच्चों में यह जीव-प्राण-शक्ति बहुत अधिक तरंगित रहती है। जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जाता है विभिन्न प्रकार के भावनात्मक अवरोधों के कारण यह कम होती चली जाती है और धीरे-धीरे शरीर में असन्तुलन विकसित होने लगता है जो अनेक व्याधियों को जन्म देता है। जो व्यक्ति रेकी मास्टर अर्थात् रेकी के गुरु के द्वारा शक्तिपात (Attunement) प्राप्त कर लेता है, उसे पुन: वह शक्ति मिल जाती है जिससे वह अपना आध्यात्मिक व मानसिक उत्थान कर सकता है साथ ही स्वयं को नीरोग भी रख सकता है। जीव-प्राण-शक्ति।

अपने चारों ओर व्याप्त ऊर्जा को प्रयोग करने की विधि रेकी चिकित्सा कहलाती है जो एक गैर परम्परागत चिकित्सा प्रणाली की एक नवीनतम कड़ी है। यह सर्वव्यापी प्राण शक्ति वायुमण्डल में उच्च स्तर में सदैव से प्रवाहित होती रही है, जिसे प्रयोग करने की विधियां सैकड़ों वर्षों से विकसित की जाती रही हैं।

अब यह मान्यता आम हो चुकी है कि परम्परागत चिकित्सा प्रणाली विशेष रूप से ऐलोपैथी रोग को कुछ समय के लिए दबा तो देती है मगर पूर्णतया जड़ से ठीक नहीं कर पाती। रेकी किसी भी बीमारी को जड़ से ठीक करने का ही एक माध्यम है। यह मानव के लिए ईश्वर प्रदत्त अद्भुत वरदान है जो बहुत सुखमय और आनन्ददायक है। रेकी की सबसे बड़ी विशेषता

है–इसकी सरलता। इसे कोई भी व्यक्ति बहुत आसानी से सीख सकता है। इसमें कोई बन्धन नहीं केवल संकल्प होना चाहिए। यही इसकी मूलभूत आवश्यकता है। इससे किसी प्रकार की हानि नहीं होती। इसकी ऊर्जा तरंगें शरीर के अन्दर विभिन्न अंगों में फैलती हैं और जहाँ कहीं किसी भी प्रकार का असन्तुलन होता है, वहां सन्तुलन बनाती हैं। शरीर के अंग जितनी ऊर्जा की आवश्यकता महसूस करते हैं वे उतनी ही ऊर्जा ग्रहण करते हैं।

हमारा शरीर असंख्य अणुओं का समूह है जो सदैव ऊर्जा क्षेत्र में रहता है और शरीर में विभिन्न ऊर्जा केन्द्र–अर्थात् चक्र इस ऊर्जा को ग्रहण कर संपूर्ण शरीर को ऊर्जा प्रदान करते हैं। ये ऊर्जा केन्द्र सदैव गतिमान रहते हैं और इनकी गति भावनात्मक, मानसिक व शारीरिक स्थिति पर निर्भर करती है। चक्रों की गति डी.एन.ए./आर.एन.ए. को प्रभावित करती है और एन्जाइम्स (Engymes) और प्रोटीन का सन्तुलन बनाती है। प्रत्येक चक्र उन अंत:स्रावी रसोत्पादक नलिकाहीन ग्रंथियों (Endocrine Glands) से संबन्धित होता है जो शरीर में हारमोन्स (Hormones) उत्पन्न करती हैं। रेकी के द्वारा इन हारमोन्स का सन्तुलन बना रहता है जिससे शरीर के विभिन्न अंग संतुलित बने रहते हैं। रेकी इन्हीं चक्रों को स्वस्थ या सन्तुलित करने की अद्‌भुत प्रणाली है। रेकी चौनल (जिस व्यक्ति ने रेकी सीखी है) इस ऊर्जा को अपने सहस्रार चक्र (Crown Chakra), आज्ञा चक्र (Third Eye) तथा हृदय चक्र (Heart Chakra) से गुजारते हुए वह इसे अपनी हथेलियों से प्रवाहित करता है। जिस व्यक्ति के शरीर पर हाथ रखा जाता है वह अपनी ग्रहण शक्ति के अनुसार ही इस जीव–प्राण–ऊर्जा को प्राप्त करता है। इसी कारण रेकी चिकित्सा से किसी प्रकार की हानि संभव नहीं है। जिस प्रकार पाइप की सहायता से नल से पौधों तक पानी पहुँचाया जाता है उसी प्रकार रेकी–चौनल की सहायता से जीव–प्राण–ऊर्जा को वायुमण्डल से लेकर रोगी तक पहुँचाया जाता है। जब तक नल को खोला नहीं जाएगा, तब तक पानी प्रवाहित नहीं होगा उसी प्रकार जब तक रेकी–चौनल सही संकल्प नहीं लेगा तब तक रेकी प्रवाहित नहीं होगी। रबड़ के पाइप से पानी अधिक प्रवाहित हो सकता है, परन्तु रेकी उतनी ही प्रवाहित होती है जितनी कि रोगी की शरीर को आवश्यकता है। रेकी का मूल सिद्धान्त है कि इसे कभी दिया नहीं जाता अपितु लिया जाता है-पूरी श्रद्धा, विश्वास और आशा के साथ।

रेकी चौनल कोई भी साधारण मनुष्य पुस्तकों से पढ़ कर नहीं बन सकता। इसके लिए एक उपयुक्त और योग्य गुरु की आवश्यकता होती है। गुरु का चुनाव व्यक्ति अपनी समझ से स्वयं कर सकता है किन्तु जिस प्रकार से गुरु को सही शिष्य की तलाश रहती है उसी तरह एक शिष्य को सही गुरु की तलाश रहती है। लेकिन यह बहुत ही दु:ख का विषय है कि श्गुरुश जैसा गरिमाशील और सम्माननीय पद अब केवल व्यापार का पर्याय बन कर रह गया है इसलिए गुरु का चुनाव बहुत सोच समझ कर करना चाहिए ताकि व्यक्ति को सही मार्गदर्शन मिल सके। रेकी एक ऐसी वस्तु नहीं जिसे किसी भी केमिस्ट से खरीद लिया जाय और प्रभाव एक–सा हो। गुरु का सही मार्गदर्शन, उसका आशीर्वाद और उसका संकल्प शिष्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

कबीर के पर्यावरण संबंधी दोहे

डॉ० अनुपमा

सह आचार्य, हिंदी विभाग, जी.डी.सी., सीताफलमंडी, हैदराबाद

सार

समाजसुधारक भक्तिकालिन कवि कबीर पर्यावरण पर दोहे लगभग तीन सौ साल पहले ही लिखे गये है। कबीर ने पर्यावरण संरक्षण बात कहीं थी वे अपने समय के आगे चल रहे ये और उन्होंने समाज से पर्यावरण बचाने और उस सही प्रयोग पर बल दिया है। कबीर के पर्यावरण पर लगभग 111 दोहे हैं। यहाँ पर मैंने 10 दोहे को चुना है जो हमें आज के संदर्भ में सही अर्थ रखते हैं। कबीर के दोहे पानी, बादल, वर्षा, फल, पेड़, अनाज, हवा, समुद्र, किसान, कांटा, जानवर, पर्वत कुल मिलाकर प्रकृति पर आधारित हैं।

बीज शब्द- कबीर, पर्यावरण, धरती, पानी, प्रकृति, समुद्र एवं प्राणी।

लेख

कबीर कहते हैं प्रकृति की सेवा संयम से करनी चाहिए। समय के साथ परिवर्तन होता ही है। पानी पर कबीर के कई दोहे हैं।

बहता पानी निरमला, बंधा गंदा होय।
साधुजन रमता भला, दाग न लागै कोय।

–दोहावली, पृ.सं.423

कबीर कहते हैं बहतर नीर निर्मल होता है, बंधा हुआ पानी गंदा होता है जो बदबू भी देता है, आगे कहते हैं साधुजन हमेशा एक स्थान से दूसरे स्थान पर घूमते रहते हैं और निर्मल हृदय से सेवा करते हैं। और वहाँ की गंदगी सांफ करते हुए आगे बढ़ते जाते है। एक ही स्थान पर नहीं रहते इसलिए उन्हें कोई दाग या कलंक नहीं लगता।

कबीर समुझा कहत है, पानी आह बतायता
सद्‌गुरु का कटै, तो औघट डूबे जाय।

–दोहावली, पृ.सं.69

कबीर कहते हैं कि पानी को ध्यान से देखिए, पानी जमीन की गहराई बताता है, कुंआ खोदते समय इसका उपयोग होता है। जमीन कसी है इसका ज्ञान हो जाता है। वें कहते हैं पानी की शुद्धता सद्‌गुरू जैसी है जिसका उपयोग कई लोग करते हैं, मुर्ख लोग कुँआ का उपयोग आत्महत्या करने के लिए करते हैं।

तरुवरु एकु अनंत डार साखा, पुहप पत्र रस भरी।
इह अम्रित की बाड़ी है रे, तिनी हरि पूरै करीआ।

–आदिग्रंथ पृ.970

कबीर कहते हैं कि एक झाड़ पर कई टहनियाँ होती है उनकी भी कई शाखाएँ होती है उन पर अनगिनत पत्ते लगते हैं, वहीं पर फूल, फल लगते हैं और सारा वातावरण हराभरा दिखाई देता है, कबीर प्रकृति को हराभरा रखने का संदेश देते हैं।

गगन गरजै बरसै अमी, बादल गहीर अभ्भीर
चहु दिसी दमके दामिनी, भीजै दास कबीर।
तरुवर जड़ सो काटिया, जबै सम्हांरो जहाज
तारै पर बोटे नहीं, बांह गई की लाज।

–अमृतवाणी, पृ.45

कबीर उन पर प्रहार करते हैं जो पेड़ लगाने के बजाय काटने को तत्पर रहते हैं। लोग झाड को जड़ से मिटाना चाहते हैं, उसी की लकड़ी से जहाज बनाया जाता है उसमें बैठकर लोग सैर करते हैं, एक जगह से दूसरी जगह जाते हैं, तूफान में जहाज की लकड़ी ही सहारा बनती है, भलें और बड़े लोग भी उपकार को याद रख वैसा ही व्यवहार करते हैं। लकड़ी का स्वभाव भी ऐसा ही है, किसी भी स्थिती में पेड़, लकड़ी मनुष्य के काम आती है, इसलिए कबीर कहते हैं कि मनुष्य को पेड़ पौधे से लगाव रखना चाहिए और उसे नष्ट करने वालों को क्षमा नहीं करना चाहिए।

धरती जानती आप गुण, कधी न होती डोल
तिल तिल होती गारुआ, रहति टिको की मोल।

–बीजक पृ.सं.423

इस दोहे में कबीर कहते हैं कि धरती कितनी मूल्यवान हैं, उसमें बहुत से गुण है, वह ऊर्वट है, जननी है, सहनशील है उसे अनमोल समझकर उसका संवर्धन करना चाहिए। मनुष्य अपने ज्ञान और विज्ञान को समझकर धरती का संगोपनकर्ता बनना चाहिए। धरती को वचाना हर मनुष्य का परम कर्तव्य है सभी यह वसुंधरा बची रहेगी। वह अनमोल है यही संदेश कबीर देते हैं।

काया खेत किसान मन, पाप पुण्य दो बीज
बोया लूनै आपना, काया करुकै जीव।

–अमृतवाणी, पृ.सं.187

कबीर कहते हैं कि हमारा शरीर खेत समान है और मन जो है शरीर का किसान है। पाप और पुण्य ये दो प्रकार के बीज हैं, वे कहते हैं कि हम बीज बोयगें उसी तरह की फसल उत्पन्न होगी। अगर में पाप बोते हैं तो निश्चित ही पाप मिलेगा। इसीलिए सही बीज का प्रयोग करेंगे और करेंगे और किसान की परोपकार की भावना से खेत जोतेगा तो उसे अच्छी फसल प्राप्त होगी। मुनष्य जो ग्रहण करेगा वैसा ही उसका तन बनेगा इसीलिए कबीर किसान का सलाह देते हैं कि वे सही बीज का प्रयोग करें।

अंबर बटसे धरती बीजै, यहु जाने बिटला कोय
धरती बटसे अंबर भीजै, बुझे बिरला कोय।

–दोहावली पृ.सं.42

कबीर इस दोहे में पानी का महत्व बताते हुए कहते हैं कि आकाश से पानी बरसता है, धरती उससे भीगती हैं उससे पहले वह गरम भांप आकाश तक पहुँचती है और बाद पानी ग्रहण करती है। यहाँ पंचमहाभूत कसे समाया गया है, सभी का परस्पर संबंध है, सभी एक दूसरे के पूरक है। पानी, हवा, धरती, गरमी, आकाश एक दूसरे बिना अधूरे हैं, प्रकृति की इसी बात को मनुष्य भी स्वीकार कर अपने जीवन में उतारे तो जीवन सुगम हो जाएगा, यह कबीर का संदेश है।

मच्छ कच्छ घटियार बियाने, रुधिर नीर जल भरिया
नदिया नीर नटक बहि आई, पशु मानुष सब सरिया।

–बीजक, पृ.सं.113

कबीर कहते हैं कि जिस नदी का पानी हम ग्रहण करते हैं उसमें कई जलचर रहतें हैं जैसे मछली, कछुआ, मगर इत्यादी, उनका प्रजनन उसमें होता हैं, उनका रक्त उस पानी में मिलता हैं, वहीं पानी नदी, नाला में बहता है, वही पानी मनुष्य पीता है, कई नाटकीय तत्व नदी में बहाये जाते हैं, मृत प्राणीयों को उसमें डाला जाता है, मनुष्य की अस्थियों को उसमें विसर्जित किया जाता है, यह सब संबंध पानी में मिल जाता है तो ऐसा पानी शुद्ध कैसा माना जाएगा। कबीर इसमें जलप्रदुषण की बात बताते हैं। शुद्ध पानी कहाँ प्राप्त होगा यह प्रश्न कबीर उठाते हैं। जल प्रदुषण की समस्या कैसे निपटा जा सकता है यह कबीर की चिंता है। पाणी माहै प्रजली भई अप्रबंल आगिबहली सालिता रहि गई, मंछ रहे जल त्यागि। कबीर कहते हैं कि समुद्र में मछली प्रजनन करती है उसकी मर्यादा समाप्त होते ही समुद्र अग्नि निर्माण करता है परंतु उसका गुणधर्म ऐसा है कि उसकी है पानी बहता रहता है और लहरें अपने प्रवाह के साथ मछलियों को किनारे पर फेंक देती हैं। समुद्र जैसे अपनी मर्यादा दिखाता है वैसे ही मनुष्य को अपनी मर्यादा रखने की सीख कबीर देते हैं। और पर्यावरण की रक्षा ।करने की सलाह देते हैं।

मीठा सब कोय खात है, विष व्है लागे धाय।
नीम न कोई पीवसी, सबे रोग मिट जाय।

–दोहावली, पृ.सं.121

कबीर कहते हैं कि सभी को मीठा पसंद होता है, मीठा बड़े शौक से खाते हैं पर उसका शरीर पर विष के समान प्रभाव पड़ता है इस पर कोई भी सोचता नहीं है। नीम का रस जो औषधी है कोई इसको पसंद नहीं करता, जिसका प्रभाव रामबाण इलाज है। लगाना नहीं चाहते जो गुणकारी हैं, कबीर कहते हैं कि यह प्रकृति का नियम है इसे स्वीकारे करें तो मनुष्य निरोगी जीवन जी सकता है।

निष्कर्ष-

कबीर संत थे, भ्रमण करना उनका शौक था तथा प्रकृति के साथ अपनेआप को जोड़कर उन्होंने जीवन जिया था। कबीर ने पर्यावरण का महत्व जाना और समाज को जागृत किया था वे सभी को प्रकृति को बचाने का संदेश देते हुए आगे निकल जाते थे। अपना बोधप्रद ज्ञान वे सभी को बाँटते थे तथा प्रकृति के साथ अपना अस्तित्व जोड़कर उसके महत्व को जनता तक पहुँचाने में उन्हें सफलता प्राप्त हुई। आज के संदर्भ में भी कबीर और पर्यावरण प्रासंगिक है।

संदर्भ सूची-

1) मूल बीजक-कबीर पंथी- महात्मा पूरन साहेब, खेमराज श्रीकृष्ण दास, मुंबई- 1918.
2) कबीर-शब्दावली- लक्ष्मी वेंकटेश्वर प्रेस, मुंबई, 1924.
3) कबीर ग्रंथावली- डॉ. श्याम सुंदर दास, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी- 2001.
4) कबीर दोहावली- प्रभात प्रकाशन, दिल्ली- 2013.
5) कबीर गाथा- ललित पब्लिकेशन, पुणे- 2019.

पर्यावरणीय मुद्दें और उसका सतत विकास (समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरणीय संकट)

प्रीति कुमारी

शोधछात्रा, हिन्दी विभाग, कोल्हान विश्वविद्यालय, चाईबासा

शोध सारांश

वर्तमान समय, जैव विविधता और मानव सभ्यता के संकट का समय है। प्रतिदिन नष्ट होती प्राकृतिक संपदा इस बात की सूचक है कि मनुष्य को स्वयं को बचाने के लिए पर्यावरण को बचाना पड़ेगा। मनुष्य ने प्रकृति का इतना अधिक दोहन किया है कि प्रकृति अपना विकराल रूप दिखाने के लिए विवश है। बाढ़, सूखा, सुनामी और भूकंप जैसी प्राकृतिक आपदाएँ मनुष्य के स्वार्थ का ही परिणाम है और समकालीन कवियों ने इन सब की अभिव्यक्ति अपनी कविताओं में की है। आज पर्यावरणीय मुददें पूरे विश्व के लिए ज्वलंत समस्या और चुनौती है। भौमताप का बढ़ना, समय पर बारिश नहीं होना, पेयजल की बढ़ती किल्लत आदि भविष्य का भयंकर चेहरा दिखाने में सक्षम हैं। समकालीन कवियों ने अपनी कविताओं के माध्यम से इन ज्वलंत समस्याओं और मुद्दों को उठाकर आम जनता को जागरूक करने का सार्थक प्रयास किया है।

Figure : 00 References : 09 Table : 00

बीज शब्द: पर्यावरण, विकास, संकट, चुनौती, मनुष्य, स्वार्थ, ज्वलंत समस्या, प्रकृति

भारतीय संस्कृति पूरे विश्व में आकर्षण का केंद है। हमारी संस्कृति में पेड़-पौधे, सूर्य, चाँद, नदी, धरती आदि सभी की पूजा प्रकृति के साथ रागात्मक संबंध स्थापित करती है, लेकिन मनुष्यों ने अपने स्वार्थों की पूर्ति के लिए प्रकृति का भरपूर दोहन किया और अब भी कर रहे हैं परिणाम स्वरूप आज प्राकृतिक आपदाओं को मनुष्य स्वयं ही न्योता दे रहा है। बढ़ते उद्योग, बढ़ती जनसंख्या, वनों की कटाई, प्लास्टिक कचरा, नष्ट होती जैव विविधता, प्रदूषण, विलुप्त होते जीव-जन्तु, शहरीकरण आदि ने पर्यावरणविदों, भूगोलविदों, वैज्ञानिकों आदि के साथ-साथ साहित्यकारों को भी विचार-विमर्श करने के लिए बाध्य कर दिया है।

साहित्य में आरंभ से ही प्रकृति के सुंदर और मनोरम दृश्यों को चित्रित किया गया है परंतु समकालीन साहित्यकारों ने पर्यावरण संकट के कारणों और उसके भयंकर परिणामों पर अपनी लेखनी चलाई है। आज समय पर बारिश न होना, बाढ़ आ जाना, भूकंप का आना, भौमताप का बढ़ना, आदि प्राकृतिक आपदा का कारण मनुष्य का स्वार्थ ही है। मनुष्य अपनी सुविधाओं और उपभोक्तावादी जीवन शैली को बनाए रखने के लिए लगातार प्रकृति का शोषण कर रहा है। इस संदर्भ में शिवगोपाल मिश्र लिखते हैं-

"विशेषकर वैश्विक तापमान के फलस्वरूप जो जलवायु परिवर्तन हुआ है या जिसके होने की संभावना है, उसमें मनुष्य का एवं आधुनिक वैज्ञानिक कार्य कलापों का बहुत बड़ा हाथ है।"[1]

मनुष्य अपनी सभी आवश्यकताओं की पूर्ति प्रकृति से ही करता है इसलिए विकास की अंधी दौड़ में मानव ने पर्यावरण का नाश करके कारखाने, फैक्ट्रियाँ, मल्टीनेशनल कंपनियाँ, पंचतारा होटले और बहुमंजिले इमारतें आदि का निर्माण करके पर्यावरण का संतुलन बिगाड़कर रख दिया है, जो धीरे-धीरे विनाश का ही कारण बन रहे हैं और विकास, विनाश का रूप धारण करता जा रहा है। इस संबंध में समकालीन कवि ज्ञानेंद्रपति लिखते हैं-

"आँखें थक गयी है देखते
निर्माण की शक्ल में उमड़ते विनाश को
जैविक विविधता को रौंदती भौतिक एकतानता
चौतरफा धरती पर पसरती, आकाश छेंकती भव्य इमारतें

कि जिनकी नींव की सख्तदिल ईंटें
कोई फॉसिल नहीं अँकने देती अपने ऊपर।"[2]

आज की भौतिकवादी और उपभोगवादी संस्कृति को अपनाते हुए 21वीं सदी का मानव अपने आप को सभ्य कहता है। वह नदियों को प्रदूषित करता है, बगीचों के स्थान पर शहरीकरण को बढ़ावा देता है और विभिन्न प्रकार के भौतिक सुखों का उपभोग करके सभ्य कहलाता है। कवि अरुण इसी बात पर व्यंग्य करते हुए 'इक्कीसवीं शताब्दी की ओर' शीर्षक कविता में लिखते हैं-

"हर नदी का घाट श्मशान
हर बगीचा कब्रिस्तान बन रहा है
और हम इक्कीसवीं शताब्दी की ओर जा रहे हैं।"[3]

मानव ने विकास के नाम पर प्रकृति की नैसर्गिक सौंदर्य और व्यवस्था को बिगाड़ कर रख दिया है। शहरीकरण के दुष्प्रभाव से कई प्रकार की समस्याएँ जन्म ले रही हैं। गाँव के लोग भी सुविधाओं को देखते हुए शहर की ओर पलायन कर रहे हैं। इस विषय में उपेंद्र नाथ पाण्डेय का कहना बिल्कुल सत्य है-

"शहरीकरण गाँवों को निगल रहा है व जंगलों का बलिदान ले रहा है। विकास के नाम पर पर्यावरण का ही गला घोंटा जा रहा है।"[4]

पर्यावरण संरक्षण प्रत्येक मनुष्य की जिम्मेदारी है और सभी के प्रयासों से ही पर्यावरण को संरक्षित किया जा सकता है। इसके लिए हमें प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग करना होगा ताकि मनुष्य जाति समेत सभी जीव-जंतुओं को विनाश से बचाया जा सके। समकालीन कवयित्री निर्मला पुतुल अपनी कविता 'आओ मिलकर बचाये' में सभी प्राकृतिक संसाधनों को बचाने का संदेश देती हुई कहती हैं-

"आओ, मिलकर बचाएँ
कि इस दौर में भी बचाने को
बहुत कुछ बचा है,
अब भी हमारे पास!"[5]

पर्यावरण से सभी प्राणी संबंधित होते हैं इसलिए किसी भी चीज का प्रभाव सभी जीवों पर पड़ जाता है। इस संबंध में लेखक सुभाष शर्मा कहते हैं-

"पर्यावरण में सजीव और निर्जीव, मनुष्य और पशु-पक्षी व अन्य जीव-जंतुओं और वनस्पतियों के बीच गहरा संबंध होता है और एक के प्रभावित होने पर दूसरा प्रभावित होता है।"[6]

एक समय था जब मनुष्य प्रकृति के साहचर्य के साथ सहज रूप से जीवन व्यतीत करता था परंतु आज वह प्राकृतिक रूप से स्वच्छ वातावरण में जीने के बजाय कई कृत्रिम वस्तुओं और रासायनिक पदार्थों के बीच जीवन जीने के लिए विवश है। आज देश में हम कई रासायनिक कंपनियों को देख सकते हैं। इनमें बनाए जाने वाले रासायनिक पदार्थ घातक होते हैं। भोपाल गैस त्रासदी भी इसी का परिणाम थी। कवि ऐसी दशा को देखकर चिंतित हो उठते हैं और पंजाब के माध्यम से पूरे देश के लिए 'पंजाब कुछ कविताएँ' शीर्षक कविता में प्रश्न करते हैं-

"कुल मिलाकर कितने यूनियन कार्बाइड हैं
पंजाब में
बताओ प्रार्थना करते लोगों के फेफड़ों में
कितना मिथाइल आइसोसायनेट हैं?
बताओ
पंजाब में
कितने भोपाल हैं?"[7]

पर्यावरणीय चिंता वैश्विक चिंता है जो मानवीय हस्तक्षेप के कारण बढ़ी है और इस समस्या की भयावह भविष्य की स्थिति को देखते हुए समकालीन कविता में पर्यावरणीय संकट की गंभीर अभिव्यक्ति हुई है। जिसे देखते हुए के० वनजा लिखती हैं-

"हिन्दी के समकालीन कवियों में यह पारिस्थितिक चिंता कई रूपों में प्रकट हुई। एक ओर विकास के फलस्वरूप सर्वत्र उग आयी मल्टीनेशनल कंपनियों से उत्पन्न पर्यावरण प्रदूषण है तो कहीं खो जाने वाली संस्कृति की पीड़ा है।"[8]

समकालीन हिन्दी कविता पर्यावरणीय बोध की चिंता और चेतना जागृत करने में सक्षम है। त्रिलोचन शास्त्री, उदय प्रकाश, ज्ञानेंद्रपति, वीरेन डंगवाल, राजेश जोशी, स्वप्निल श्रीवास्तव, मंगलेश डबराल, मदन कश्यप आदि समकालीन कवियों ने पर्यावरण संबंधी ज्वलंत मुद्दों पर अपनी लेखनी चलायी है। इन कवियों ने पर्यावरणीय संकट की यथार्थ अविव्यक्ति कर वर्तमान समस्यों के कारणों और भविष्य का रौद्र रूप दिखाया है। साथ-ही-साथ पर्यावरण संरक्षण का संदेश देते हुए पृथ्वी पर जीवन बचाए रखने पर बल दिया है। डॉ० कृष्ण कुमार शर्मा का कहना है-

"समकालीन कविता वैश्विक समस्याओं से दो-चार होती है। विश्व की ज्वलंत समस्याओं में मानव और उसके भविष्य से जुड़ी एक बड़ी समस्या है यह पर्यावरण प्रदूषण, कुछ भी तो प्राकृतिक शुद्ध नहीं रहा है। जल, वायु आदि पर्यावरण के प्रमुख अंग मैले हो गए हैं। समकालीन कविता में रामदरश मिश्र, अरुणकमल, ज्ञानेंद्रपति, उदयप्रकाश आदि ने इस विषय पर लिखा है और पूरी शिद्दत के साथ।"[9]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि प्रत्येक जीव की साँसों की डोर एक संतुलित पर्यावरण पर ही निर्भर है। भारत देश में आरंभ से ही पशु-पक्षी, पेड़-पौधों, वायु, अग्नि, जल आदि की पुजा की जाती है। इसका उद्देश्य पर्यावरण संतुलन को बनाए रखना ही रहा होगा क्योंकि यदि पर्यावरण का संतुलन बिगड़ता है तो सम्पूर्ण पृथ्वी का संतुलन बिगड़ जाएगा परंतु वर्तमान समय में पर्यावरण का संकट पूरे विश्व में चिंता का विषय बना हुआ है। कई देश इस समस्या से निपटने के लिए आए दिन बैठक करते रहते हैं परंतु मनुष्य वन, पहाड़, नदियाँ, वायु आदि प्राकृतिक संसाधनों का विकास के नाम पर जो दुरुपयोग कर रहा है उससे निश्चित रूप से महाविनाश को न्योता मिल रहा है। समकालीन कवियों ने अपनी पर्यावरण संबंधी कविताओं के माध्यम से कटते जंगल, प्रदूषित होती नदियाँ, बढ़ते शहरीकरण, प्रतिदिन लुप्त होती प्रजातियाँ, नष्ट होती जैव विविधता, जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण आदि का सहज बोध कराया है और आम जनता को पर्यावरण संकट के प्रति जागरूक करने का सार्थक प्रयास किया है।

संदर्भ-ग्रंथ

1) शिवगोपाल मिश्र, प्राकृतिक आपदाएँ, ज्ञान गंगा, प्रथम संस्करण 2010, दिल्ली 110006,
2) ज्ञानेंद्रपति, प्रकृति और कृति (ई-बुक), प्रथम संस्करण 2023, पृ० 55
3) अरुण कमल, सबूत, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृ० 76
4) उपेंद्र नाथ पाण्डेय, पर्यावरण, प्रकृति और प्रदूषण, मधुलिका प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण 2009, पृ 21)
5) आरोह (भाग-1), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, नई दिल्ली, संस्करण 2020, पृ 183)
6) सुभाष शर्मा, भारत में मानवाधिकार, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली 110070, प्रथम संस्करण 2009 पृ० 171
7) उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, वाणी प्रकाशन, पृ० 83
8) के० वनजा, साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण 2011, पृ० 44
9) डॉ० कृष्ण कुमार शर्मा, समकालीन कविता: समय की साक्षी, एम० बी० पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, जयपुर 302001, प्रथम संकरण 2012, पृ० 63

साहित्य और पर्यावरणः अन्तस्सम्बन्ध के बिन्दु

डॉ० दीपक त्रिपाठी

असिस्टेंट प्रोफेसर, हिन्दी-विभाग, रामकृष्ण कॉलेज, मधुबनी

शोध-सारः साहित्य का उद्‌भव और विकास प्रकृति और पर्यावरण के संग-साथ का प्रतिफल है। आदिकवि ने भी प्रकृति के ही निरूपण से स्वयं को व्यक्त किया था। प्रकृति की निकटता बढ़ने पर साहित्य में नये-नये भाव-पल्लव विकसित होते चले गये। प्रकृति जितनी व्यापक और सर्वग्राही है साहित्य ने स्वयं को उतना विस्तृत और व्यापक करने का उपक्रम किया है, परन्तु आज भी ऐसा नहीं हो पाया है कि साहित्य प्रकृति के सम्पूर्ण अवगाहन में सफल रहा हो। आज के आधुनिक युग की शब्दावली में 'प्रकृति' को 'पर्यावरण' शब्द से सम्बोधित किया जाने लगा है। पहले भी 'प्रकृति' शब्द प्रत्येक भाषा में मौजूद था, लेकिन 'पर्यावरण' शब्द ने प्रकृति को विज्ञानपरक बना दिया है। 'प्रकृति' शब्द से हमें एक परम्परागत भाव-बोध प्राप्त होता है। 'पर्यावरण' शब्द हमें भाव के स्तर से उठाकर शिक्षा और जागरूकता के स्तर पर ले जाता है, जहाँ पीपल के वृक्ष से हमें इसलिए नहीं प्यार करना है कि उसमें किसी प्रकार के देवी-देवता का निवास है, बल्कि हमें इसलिए प्रेम करना है कि इस वृक्ष के पर्यावरणीय फायदे हैं। हमारे अन्दर प्रकृतिगत मौसम के बिगड़ने-बदलने से अधिक इस बात की चिन्ता होनी चाहिए कि मनुष्यगत असन्तुलन से जलवायु परिवर्तित हो रही है। प्रस्तुत शोधपत्र में उन बिन्दुओं को खोजने-समझने की कोशिश की गयी है जिन पर साहित्य पर्यावरण से जुड़ता है।

बीज शब्दः साहित्य, पर्यावरण, प्रकृति, काव्य, संस्कृत, हिन्दी

भूमिकाः प्रकृति और पर्यावरण से हमारा सम्बन्ध वास्तविक है, न कि कल्पना या परम्परागत मिथक पर आधारित। वास्तविक इसलिए है कि सम्पूर्ण प्रकृति और पर्यावरण ऐन्द्रिक है, अर्थात हम प्रकृति को सुन सकते हैं, देख सकते हैं, सूँघ सकते हैं, इसका स्वाद ले सकते हैं और इसे छू भी सकते हैं। इस प्रकार प्रत्येक व्यक्ति प्रकृति को अपने स्तर पर महसूस करता है। "वर्ड्सवर्थ के लिए सम्पूर्ण प्रकृति एक जीवित सत्ता थी।"[1] इसी क्रम में यह भी ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि प्रकृति कोई ऐतिहासिक घटना भी नहीं है, कि जो एक बार कभी घटित हो चुकी हो और लोग उसे आज तक सच मानकर या श्रद्धा के वशीभूत होकर गाते-दुहराते रहें। प्रकृति को प्रत्येक व्यक्ति सतत रूप से अपने स्तर पर अनुभव करता है। प्रकृति संस्मरण भी नहीं है कि हम दूसरे की आँखों देखी पर विश्वास करें। प्रकृति सदैव वर्तमान है और अपना साक्ष्य स्वयं है।

काव्य और पर्यावरणः अधिकांश कवियों ने प्रकृति और पर्यावरण को अपने काव्य के मूल आधार में से एक माना है। उन्होंने न सिर्फ प्रकृति के आलम्बन रूप का वर्णन किया, बल्कि उसे प्रतीक रूप में प्रयोग करते हुए अपनी आध्यात्मिक अभिव्यक्ति के लिए भी प्रकृति का ही प्रयोग किया। यही नहीं, आधुनिक हिन्दी-काव्यधारा में छायावाद के पश्चात प्रगतिवाद का आगमन हुआ और उसके बाद प्रयोगवाद का समय शुरू हुआ। इन सबमें प्रकृति और पर्यावरण को अलग-अलग ढंग से प्रस्तुत किया गया। प्रयोगवादी अज्ञेय ने प्रकृति को साहित्यिक स्तर पर ही नहीं प्रस्तुत किया, बल्कि सारे प्राकृतिक उपादानों को एक पर्यावरणीय चेतना के साथ प्रस्तुत किया।

पर्यावरण पर सुव्यवस्थित और व्यापक रूप से लिखनेवाले सुप्रसिद्ध पर्यावरणविद अनुपम मिश्र अपने एक आलेख 'पर्यावरण और साहित्य' में लिखते हैं- "हिन्दी-संसार में साहित्य की परिभाषा थोड़ी भिन्न है। यहाँ पर्यावरण का काम, उस पर कुछ लिखा उस हद तक साहित्य नहीं माना जाता जिस हद तक उपन्यास, कविता, आलोचना, नाटक आदि को माना जाता है। इसे एक अलग ठप्पा मिलता है। वह है- साहित्येतर। तो साहित्य से इतर शब्द हमें इतराकर देखता है शायद।"[2]

समकालीन कवियों ने भी प्रकृति को अपने काव्य में स्थान दिया है, लेकिन अपने पूर्व के कवियों से इतर भावाभिव्यक्ति के साथ। पहले के कवि प्रकृति के साथ एक रागात्मक सम्बन्ध रखते थे, जबकि अब के कवि प्रकृति और पर्यावरण के प्रति एक चिन्ता और दुख का भाव रखते हुए उससे मुखातिब हैं। यथार्थ और वास्तविकता के अंकन में उनका रिश्ता प्रकृति से टूटा नहीं है, बल्कि उस रिश्ते का प्रकार बदल गया है। यह कुछ उसी प्रकार है जैसे आप अपने किसी प्रिय के स्वस्थ और हृष्ट-पुष्ट होने पर उसके साथ उमंग और उत्साह के साथ आनन्दपूर्वक दिन व्यतीत करते हैं, जबकि उसके बीमार हो जाने पर आप भी दुखी और क्षुब्ध-विक्षुब्ध होकर बीमार-से हो जाते हैं, चिन्तित हो जाते हैं।

प्रकृति के कई उपादान साहित्य में प्रयुक्त होते हैं साथ ही पर्यावरण के लिए कार्यरत संस्थाएँ भी उनका प्रयोग प्रतीक के रूप में करते हैं, जैसे "लंदन विलोपन का प्रतीक- डोडो, ब्रह्माण्ड का पालना-भारतीय कमल, विश्व प्रकृति कोष का प्रतीक-विशाल पांडा, प्रजनन शक्ति का प्रतीक- बैल, मुम्बई प्राकृतिक इतिहास सोसाइष्टी का प्रतीक-धनेश।"[3]

धर्म-शास्त्र और पर्यावरण: "प्राचीन संस्कृत साहित्य में कथा के चार प्रकार मिलते हैं- लोक-कथा, नीति-कथा, पशु-कथा तथा मुग्ध-कथा। यद्यपि लोक-कथा में भी पशु-पात्र हो सकते हैं, पर मुख्य रूप से यह मनोरंजन के लिए कही जाती है तथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी इसका प्रचलन होता है। नीति-कथा मुख्य रूप से कोई नैतिक विचार या सन्देश प्रस्तुत करती है। पशुकथा को अंग्रेजी में इिसम कहा जाता है। इसमें पशुओं को प्रतीकात्मक रूप में मानव-चरित का प्रतिनिधि बनाकर प्रस्तुत किया जाता है। आचार्यों ने इसे निदर्शना कहा है।"[4]

संस्कृत भाषा के आदि-ग्रंथ वेदों से ही प्रकृति और मनुष्य की संगति का प्रमाण मिलने लगता है। यहाँ तक कि तमाम देवी-देवता भी ऐसे निर्धारित किये गये हैं जो प्रकृति के ही उपादान हैं, जैसे सूर्य, जल (वरुण), वायु, अग्नि, चन्द्र आदि। इनके अतिरिक्त गाय, तुलसी, पीपल, केला, हल्दी, फल आदि को धार्मिक अनुष्ठानों में स्थान देना प्रकारान्तर से प्रकृति को धर्म में स्थान देना है। अथर्ववेद के बारहवें काण्ड के प्रथम सूक्त का नाम 'पृथ्वी-सूक्त' है। इसमें कुल 63 मंत्र हैं। ऋषि ने इन मन्त्रों में मातृभूमि के प्रति अपनी प्रगाढ़ भक्ति का परिचय दिया है।[5]

स्पष्ट है कि यहाँ मातृभूमि का आशय पृथ्वी के उस भू-भाग से है जिस पर ये मनुष्य रहता है। ऋग्वेद से सम्बन्धित आयुर्वेद भी पूर्ण रूप से प्रकृति और पर्यावरण पर ही आधारित है। वेदों के अतिरिक्त विभिन्न उपनिषदों में भी प्रकृति और पर्यावरण परघ गहराई से न सिर्फ चिन्तन-मनन किया गया है, अपितु इन्हें ही जीवन का मूल आधार माना गया है।[6]

इसी प्रकार आरण्यक ग्रंथ भी संस्कृत में प्राप्त होते हैं। 'अरण्य' का अर्थ वन या जंगल होता है। "इन ग्रंथों का पठन-पाठन अरण्यों में होने से इनकी संज्ञा आरण्यक हुई।"[7]

धर्म और शास्त्रों के आगे संस्कृत में जो नाटक और महाकाव्य जैसे साहित्यिक ग्रंथ प्राप्त होते हैं वे भी प्रकृति के सहारे ही विकसित और पुष्पित-पल्लवित हुए हैं। बिना प्रकृति का के वर्णन किये संस्कृत का कोई साहित्य पूरा ही नहीं होता। महाकाव्य के विभिन्न लक्षणों में से एक प्रकृति का पर्याप्त वर्णन भी आवश्यक और अनिवार्य लक्षण है।

यहाँ इन सब तथ्यों को उल्लिखित करने के पीछे उद्देश्य यह है कि साहित्य और प्रकृति का सम्बन्ध आदिकाल से ही अविच्छिन्न है। धर्म का मूल पर्यावरण है, प्रकृति है। आप जितने ही सही अर्थों में धार्मिक होते जायेंगे उतना ही प्राकृतिक होते जायेंगे। धर्म के वाह्य कर्मकाण्डों से ऊपर उठते हुए आप अहिंसक और 'वसुधैव कुटुम्बकं' की भावना से भर उठेंगे। प्रत्येक जीव-जन्तु और सम्पूर्ण जलवायु के प्रति जागरूक तथा संवेदनशील होते जायेंगे।

भाव-विभाव और प्रकृति: साहित्य के दोनों ही क्षेत्रों, यथा- ग। और प। में, प्रकृति एवं पर्यावरण का उपयोग मानव-समाज के भाव-संसार की अभिव्यक्तियों के लिए होता है। ग। भले ही हिन्दी-साहित्य में अधिक पुराना नहीं, लेकिन प। में निहित प्रकृति-चेतना से अनुप्राणित होने के कारण आधुनिक ग।कारों ने भी इस दिशा में पर्याप्त सृजन किया है।

निबन्ध-विधा में भारतेन्दु युग से लेकर आज तक लगभग सभी ने अपने भाव-जगत को प्रकृति तथा पर्यावरण से सिंचित-अभिसिंचित किया है। महावीरप्रसाद द्विवेदी, हजारीप्रसाद द्विवेरी, अज्ञेय, कुबेरनाथ राय तथा वि।।निवास मिश्र आदि ऐसे निबन्धकार हैं जिन्होंने न सिर्फ अपने समकालीनों को अपने लेखन से प्रभावित किया, बल्कि आनेवाली लेखक-पीढ़ी को भी दिशा दी। निबन्धों के अलावा कहानी, उपन्यास, नाटक तथा अन्य कथेतर विधाओं के अन्तर्गत भी भाव और विचार के मिले-जुले रूप में प्रकृति पर विमर्श जारी रहा। नागार्जुन तथा रेणु ने मिथिलांचल के पर्यावरण को अपने कथा-साहित्य में जीवन्त कर दिया। बरगद, पीपल, नीम, बाग, नदी आदि ऐसे पर्यावरणीय उपादान हैं जो किसी चलते-फिरते मनुष्य की तरह कथा-साहित्य में उपस्थित होते रहते हैं। प।-साहित्य के अन्तर्गत संस्कृत साहित्य की सुदीर्घ परम्परा से लेकर आधुनिक हिन्दी-कविता तक प्रकृति से रागात्मक सम्बन्ध बना हुआ है। एक बुनियादी अन्तर यह आया है कि पहले प्रकृति को हम कोमल और सुकुमार अनुभूतियों की अभिव्यक्ति के लिए चुनते थे, लेकिन अब वैश्विक पर्यावरणीय संकट के चलते उसके सम्बन्ध में हम चिन्तित भी रहने लगे हैं। एक वैचारिक विमर्श का प्रकटन काव्य के माध्यम से हो रहा है। एक समय था जब प्रकृति के आलम्बन और उद्‌घ्दीपन रूप का वर्णन प्रधान था, परन्तु अब इसका प्रतीकात्मक रूप भी कविताओं में दिखायी देता है।

आधुनिक विमर्श और पर्यावरण: समय के साथ-साथ साहित्य ने अपने दायित्वों में गम्भीरता से वृद्धि की है। पर्यावरण पर संकट वस्तुत: मानव सभ्यता ही नहीं, बल्कि मानव-जाति पर संकट है। वन्य जीव संरक्षण, जल-जंगल-जमीन, प्रदूषण, पारिस्थितिकी, ग्रीन हाउस गैस उत्सर्जन, आदिवासी संकट, परम्परागत ऊर्जा स्रोत का संकट, जल-संकट आदि ऐसे मुद्दे हैं जिनको आधुनिक हिन्दी-साहित्य ने अपने में समाहित किया है। ग.-प. के साथ-साथ कथेतर हिन्दी-साहित्य में भी इन मुद्दों पर सार्थक और महत्त्वपूर्ण लिखा जा रहा है। सिर्फ हिन्दी-साहित्य में ही नहीं वरन विश्व की समस्त भाषाओं में ऐसा हो रहा है। "1789 की फ्रेंच क्रान्ति ने तत्कालीन जनमानस को झकझोर दिया और यूरोप की प्राचीन संस्कृति में परिवर्तन के चिह्न दृष्टिगोचर हुए। जहाँ इस क्रान्ति ने धर्म, राज्य-व्यवस्था तथा परम्परागत संस्कारों को बदला वहीं साहित्य के क्षेत्र में भी नवीन जीवन-दृष्टि का उन्मेष हुआ और साहित्यकारों ने प्राचीनता का त्याग कर नवीन भाव-रश्मियों से साहित्य का श्रृंगार किया। रूसो इस रोमांटिक विचारधारा का प्रतिनिधि था, उसने स्वतंत्रता पर बल देकर लोगों के मन में विद्रोह का स्वर मुखरित किया। 'प्रकृति की ओर लौटने' का नारा उसी का था। फलत: स्वतंत्रता की लालसा, बन्धन को तोड़ने की इच्छा तथा प्रकृति के प्रति आकर्षण ने साहित्य को अनुप्राणित किया और उसमें उपर्युक्त सभी तत्वों की अभिव्यक्ति हुई।"[8]

परम्परागत प्रकृति-दृष्टि से इतर एक नवीन दृष्टि का विकास प्रत्येक महत्त्वपूर्ण भाषा के साहित्य में हुआ। इस दृष्टि में प्रकृति के अनछुए विस्तार को भी छूने का प्रयास हुआ। ऐसा उन साहित्यकारों ने भी किया जो जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में क्रान्तिकारी और परम्परा-भंजक थे। "विलियम ब्लेक (1757-1827) संक्रान्ति काल का कवि था, जिसकी कविताओं में तर्क, बुद्धिवाद के प्रति विरोध तथा अध्यात्मवाद के प्रति समर्थन का स्वर था। उसकी कविताएँ सहज स्वाभाविक, प्रतीकवादी तथा रहस्यात्मक थीं और उनमें जीवन और जगत के सामान्य तथा उपेक्षणीय विषयों का वर्णन किया गया था। उसने फूल, पत्ते, पहाड़, नदी, झरने, तारे, आकाश, शेर और कुत्तों का अपने काव्य का विषय बनाकर इसमें असामान्यता और विलक्षणता की सृष्टि की। वह पशु-पक्षियों में भी ईश्वरत्व की छाया देखता था।"[9]

निष्कर्ष: इस प्रकार साहित्य और पर्यावरण का अन्तस्सम्बन्ध कोई स्थिर सम्बन्ध नहीं है। जैसे-जैसे पर्यावरण-विमर्श का दायरा बढ़ रहा है वैसे-वैसे साहित्य अपने नवीन दायित्वों में उत्तरोत्तर वृद्धि कर रहा है। निश्चित रूप से साहित्य का यह भावात्मक एवं वैचारिक विकास उसके अपने स्वरूप में श्रीवृद्धि ही नहीं कर रहा, बल्कि यह मानव एवं मानवता को बचाने का एक साहित्यिक उपक्रम भी है। साहित्य अपने उद्‌भव और आदिकाल से ही प्रकृति-संगी रहा है। पारिस्थितिकी का अनुगामी-सहगामी रहा है। यह संग-साथ जैसे-जैसे समाप्त हो रहा है वैसे-वैसे ही दोनों पक्षों के लिए संकट उत्पन्न हो रहा है। हमें पर्यावरणीय संकट के बारे में मात्र चिन्तित हो जाने से मुक्ति नहीं मिल जायेगी। एक साहित्यकार से अधिक हमें एक व्यक्ति, एक मनुष्य के रूप में सोचना होगा।

सन्दर्भ:

1. डॉ. कुमार विमल, सौन्दर्यशास्त्र के तत्त्व, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 1998, पृ.156
2. अनुपम मिश्र, बिन पानी सब सून, (सम्पा. पीयूष दईया), राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2020, पृ. 283
3. पर्यावरण कोश, सम्पा. डॉ. अनिल कुमार मिश्र, प्रभात पेपरबैक्स, नई दिल्ली, सं. 2017, पृ. 281
4. राधावल्लभ त्रिपाठी, भारतीय साहित्यशास्त्र की नई रूपरेखा, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, सं. 2022, पृ. 41
5. कल्याण (वेद-कथांक), सम्पा. राधेश्याम खेमका, गीताप्रेस, गोरखपुर, सं. 2069 (संवत), पृ. 439
6. ईशादि नौ उपनिषद्, शांकरभाष्यार्थ, गीताप्रेस, गोरखपुर, इक्कीसवाँ पुनर्मुद्रण सं. 2079 (संवत)
7. डॉ. राधावल्लभ त्रिपाठी, संस्कृत साहित्य का अभिनव इतिहास, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, सं. 2007, पृ. 44
8. डॉ. राजवंश सहाय 'हीरा', पाश्चात्य साहित्यकोश, बिहार हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, पटना, सं. 1998, पृ. 428
9. वही, पृ. 429

नीरजा माधव की कविताओं में पर्यावरणीय चेतना

प्रियंका यादव

शोधार्थी, हिन्दी विभाग, बैंगलोर विश्वविद्यालय, कर्नाटक

शोध सारांश-

पर्यावरण, प्रकृति और संस्कृति का परस्पर आपसी संबंध है। यह एक-दूसरे से महत्वपूर्ण रूप में अभिन्न एवं संबद्ध है। प्रकृति और पर्यावरण की गोद में जन्मा और पला-बढ़ा मनुष्य अंत में उसी में पंचतत्व को प्राप्त करता है। जीवन को भौतिक सुख-सुविधाओं से युक्त बनाने की इस अंधी दौड़ में भागता मनुष्य प्राकृतिक संसाधनों का उपभोग करता रहा। मानव सक्रियता और विज्ञान ने मानव को प्रकृति प्रेम एवं संरक्षण की भावना से अलग कर दिया। मानव एवं प्रकृति की यह एकता विश्व के जीवन का आधार रूप है। अतएव प्रकृति की रक्षा करने का अर्थ है- स्वयं अपनी रक्षा करना। आधुनिक युग में पर्यावरण एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय के रूप में हमारे समक्ष आया है। हिंदी साहित्य की जानी-मानी लेखिका नीरजा माधव ने अपनी कविताओं के माध्यम से जन-जन तक पर्यावरण शिक्षा का विकास कर पर्यावरण के प्रति चेतना जागृत करने का कार्य किया है।

बीज शब्द- पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण संवर्धन, प्राकृतिक संसाधन, मानवीय दायित्व, औद्योगीकरण, प्रदूषण।

प्रस्तावना-

भारतीय संस्कृति में वन एवं वनस्पति को आदिकाल से ही प्रधानता दी गई है। प्राचीन युग में हमारे ऋषि-मुनि वन में सन्यासी जीवन व्यतीत करते थे। प्रकृति से उनका गहन संबंध था। मनुष्य, वन्य प्राणी, पेड़-पौधे, पर्वत, नदियों एवं ऋतुओं का परस्पर अंतर्संबंध है। ये सभी पर्यावरण के अंग हैं। संस्कृति एवं पर्यावरण रक्षा के प्रति मानव को दायित्वबोध कराने का कार्य हिंदी साहित्यकारों ने सदैव ही किया है। इसी क्रम में हिंदी साहित्य की सुप्रसिद्ध रचनाकार नीरजा माधव ने अपनी काव्य रचनाओं के माध्यम से लोगों में पर्यावरणीय संरक्षण के प्रति चेतना जागृत की है।

विषय प्रवेश-

आज के समय में पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता एवं इसकी महत्ता संपूर्ण विश्व के लिए समान रूप से है क्योंकि प्रत्येक देश किसी न किसी रूप में पर्यावरणीय असंतुलन से जूझ रहा है। अपनी प्रगति एवं विकास हेतु नित-नए आविष्कारों की चाह में लगा मानव जाने-अनजाने में प्रकृति का निरन्तर दोहन करता रहा है। "माना जाता है कि हर साल भूगर्भ से 600000 टन कच्चा लोहा निकाला जाता है। अन्य खनिजों की भी यही हालत है। कहा जाता है कि यही रहा तो ऐसे में अल्युमिनियम 570, लोहा 250, जिंक 23, तांबा 29, सीसा 19 और टिन 35 साल तक चल पाएगा। 2500 ई. तक सोना-चांदी मिलना मुश्किल हो जाएगा। यही स्थिति कोयला, गैस और तेल की है। लगभग 150 वर्ष हम और इनकी आशा कर सकते हैं। अपने स्वार्थ के लिए मानव ने पृथ्वी को बुरी तरह लूट डाला है।"[1]

इसके परिणाम स्वरूप आज यह स्थिति उत्पन्न हो गई कि संपूर्ण धरती आज विनाश के कगार पर आ खड़ी हुई है।

"यह भी विचारणीय है कि सन् 1972 में 'क्लब ऑफ रोम' ने एक पुस्तक प्रकाशित की थी- लिमिट्स टू ग्रोथ (वृद्धि या विकास की सीमाएँ)। इसमें मानवता के अंत की भविष्यवाणी की गई थी। अब इसी के लेखकों (डॉनेला मेडोज और योगेन रौण्डर्स) ने एक और पुस्तक लिखी है- बियोण्ड द लिमिट्स (सीमा से परे)। जैसा कि पुस्तक के नाम से स्पष्ट है, इसमें संकेत दिया गया है कि सारे संसाधनों का उपयोग सीमा से परे किया जा चुका है। विश्व की जनसंख्या और उत्पादन एक ऐसे बिंदु पर पहुँच गए हैं जहाँ से आगे जाना संभव नहीं। जल, ऊर्जा, वन, मृदा, खनिज सबका जरूरत से ज्यादा इस्तेमाल हो चुका है।"[2]

इसमें सभी विकसित एवं विकासशील देश अपनी अलग-अलग पर्यावरणीय समस्याओं के होते हुए भी इस विषय में एक मत हैं कि पर्यावरण का संरक्षण एवं बचाव मानवीय जीवन के अस्तित्व हेतु प्राथमिक आवश्यकता है। प्राचीन काल से ही भारतीय साहित्य एवं दर्शन के अंतर्गत पर्यावरण केंद्र में रहा है। अन्य शब्दों में, पर्यावरण के संरक्षण में साहित्य की भूमिका

प्रमुख रही है। “पर्यावरण संरक्षण का अभिप्राय पर्यावरण को संरक्षित रखना होता है। इसी तरह पर्यावरण के संबंध में एक अन्य महत्वपूर्ण शब्द है, पर्यावरण संवर्धन, पर्यावरण संरक्षण से पर्यावरण संवर्धन शब्द अधिक विशेष एवं व्यापकता-युक्त है क्योंकि वर्तमान समय में पर्यावरण संरक्षण के साथ पर्यावरण संवर्धन की आवश्यकता अधिक है।”[3]

समाज में घटित होने वाली प्रत्येक वृतांत का प्रभाव स्वाभाविकत: साहित्य पर भी पड़ता है। प्रारंभ से ही पर्यावरण और हिंदी साहित्य का संबंध प्रगाढ़ रहा है। इसके अंतर्गत प्राकृतिक संसाधनों का सौंदर्य वर्णन, प्रकृति प्रदत्त उपहार की प्रति कृतज्ञता का भाव एवं प्रकृति के दोहन के परिणाम स्वरुप उसके रौद्र रूप आदि घटनाओं के वर्णन के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया गया है। “हिंदी के कई नामी साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं में पर्यावरण संकट के मुद्दों को खूब उभरा है और वह सिलसिला आज भी जारी है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने अपनी रचनाओं द्वारा औद्योगीकरण के फलस्वरुप प्रकृति पर होने वाली अत्याचार और उससे उत्पन्न संस्कृति एवं पर्यावरण संकट की ओर इशारा किया है।”[4]

हिंदी काव्य के अंतर्गत श्रीधर पाठक, सुमित्रानंदन पंत, जयशंकर प्रसाद, सूर्यकांत त्रिपाठी निराला, अज्ञेय आदि कवियों ने अपनी रचनाओं में पर्यावरणीय चेतना की सशक्त रूप में अभिव्यक्ति की है। जंगलों के कटाव के कारण खत्म हुई हरियाली के कारण पर्यटन के संदर्भ में निम्नलिखित पंक्तियाँ दृष्टव्य हैं-

“विद्यानिवास मिश्र के विचार में पर्यटन में एक ही भाव होना जरूरी है कि हम नदियों, पर्वतों, अरण्यों, सागरों और स्रोतों के हैं। हम इनको देखें तो अपने स्वरूप को पहचानें, इनको छुएँ तो कालजयी हो जायें क्योंकि इनको छूने की क्षण में हम कई सहस्त्राब्दियों के स्पर्श को छूते हैं”[5]

देखा जाए तो प्रकृति कविता की आत्मा है। प्रकृति से मनुष्य का मेलजोल और तालमेल अनिवार्य है। इस दृष्टिकोण से उपजे परिस्थिति बोध को कविता का बोध बना सामान्य ही है। नई काव्य धारा के कवि नागार्जुन की कविता ‘धरती’, केदारनाथ सिंह रचित ‘पानी की प्रार्थना’, लीलाधर जगूडी कृत ‘उस दिन का जंगल’, अरुण कमल रचित ‘गंगा को प्यार’, अनामिका की कविता ‘हरियाली है एक पट्टी का खो जाना’, ज्ञानेंद्रपति रचित ‘गंगा स्नान’, तथा ओमप्रकाश वाल्मीकि कृत ‘पेड़’ की प्रासंगिकता यहाँ उल्लेखनीय है। इसी कड़ी में हिंदी साहित्य की प्रसिद्ध रचनाकार नीरजा माधव ने अपनी कविताओं के माध्यम से अपनी विशिष्ट उपस्थिति दर्ज कराई है।

अपनी कविताओं के माध्यम से नीरजा माधव ने प्राकृतिक संरक्षण का महत्व एवं आवश्यकता पर गंभीर चिंतन व्यक्त किया है। नीरजा जी ने इन काव्य रचनाओं के माध्यम से वनों का महत्व, वृक्षारोपण की आवश्यकता, वन संपदा का संरक्षण, वन्य जीवों का संरक्षण, सौरमंडल, पृथ्वी, वायु, जल, भूमि, एवं आकाश के प्रति कृतज्ञता भाव तथा पर्यावरणीय समस्याओं की उत्पत्ति में मानव की भूमिका के विभिन्न बिंदुओं पर भी ध्यान केंद्रित किया है।

सन् 2021 में प्रकाशित काव्य संग्रह ‘‘बचा सकें धरती को’’ के माध्यम से नीरजा जी ने संपूर्ण धरती की सुरक्षा हेतु आग्रह किया है। यह संग्रह लेखिका ने ब्रह्मांड में विचरते सर्वव्यापी पितृसत्ता को समर्पित किया है। इस कविता-संग्रह की प्रस्तावना में नीरजा जी लिखती हैं कि- “बचा सकें धरती को” संग्रह पिता के बहाने पूरी धरती को बचा लेने का एक मानसिक संकल्प है जो धरती के पर्यावरण, ऋतुओं, संबंधों और उनसे भी ऊपर उठता हुआ पूरी सृष्टि को अपने में समेटता है।”[6]

पर्यावरणीय संकट से चिंतित कवयित्री अपनी इस कविता में लिखती हैं कि-

मुझे नहीं मालूम
पृथ्वी के गर्भ में
कैसी हलचलें हैं,
कब तक रोक सकेगा
शेषनाग
अपने सिर पर
गर्म होता कंदुक,
कब तक खोजा जा सकेगा
ब्रह्मांड के ‘काले विवर’ का भेद,
कब रुकेगा

पृथ्वी-पुत्रों द्वारा
मारक, संहारक हथियारों
का आविष्कार
और इस प्रकार
माँ-पृथ्वी का विनाश,"[7]

अपनी एक अन्य कविता जिसका शीर्षक है "छोड़ देंगे प्रेम करना" में नीरजा जी प्रकृति से प्रेम करना छोड़ देने पर होने वाले दुष्परिणामों को लेकर हमें चेतावनी देती हैं-

"सूख जायेगा
घास का हरापन
अंगारों की तरह
चमकेंगी ओस की बूंदें,
बढ़ जाएगी उमस
हवाओं में
धरती की गर्म सांसों से
नहीं निकलेगी चिड़िया कोई
घोंसलों से
चुगने के लिए दो दाने
अपने चिरौंटों के लिए,
नहीं आयेंगे नये पत्ते
पतझड़ के बाद
पेड़ों में,
भरी रहेगी आमों में खटास
बारिश के बिना,"[8]

अपनी एक अन्य कविता "जीवन चक्र" के माध्यम से नीरजा जी नदियों, पर्वतों तथा झरनों आदि का महत्व बताते हुए कहती हैं कि-

"अब जबकि
हम खड़े हैं
एक भयानक समय के सम्मुख
देख रहे हैं
बादलों का फटना
भूस्खलन
नदियों का सूखना
पर्वतों का हाँफना
धरती की कोख का
बंजरपन
झरनों के जल का कसैलापन
तेजाबी बरसात
और विलुप्त होते
पशु, पक्षी, पेड़,"[9]

"तुम्हारे सिवा" नामक कविता के अंतर्गत नीरजा जी व्यथित होकर लिखती हैं कि-

"उग आए हैं छाले यहाँ
बारूदी धमाकों से
धरती के बंजर सीने पर"[10]

"युद्ध की खबरें" नामक कविता के अंतर्गत दो देशों के मध्य विनाशक युद्ध से पर्यावरणीय संकट की स्थिति को देखकर कवयित्री चिंतित होकर लिखती हैं कि-

"धरती पर लिखी जा रही
नई खूनी इबारतें
मासूम-रक्त से
स्याह पड़ रहा सूरज
मुरझाती नई फसलें,
बुनने लगी हैं मकड़ियाँ
अब अपना जाल
मेरे ललाट पर
आड़े-बेड़े-टेढ़े"[11]

"धरती" नामक कविता के अंतर्गत नीरजा जी ने धरती को सर्वसहनशीला बताया है। वह कहती हैं कि धरती हमारा माता के समान पालन पोषण करती है। धरती नाश का नहीं वरन् निर्माण का प्रतीक है। दुर्भाग्य की बात यह है कि प्रकृति के दुर्बल प्राणी मनुष्य आधुनिक मशीन के आविष्कार से सबल हो गए। धरती की निःस्वार्थता के विषय में लेखिका का मत है कि-

"बादल बूँदे और बारिश
धरती कब रख पाती है
अपने लिए?
वृक्षों की नई कोपलों के लिए
जड़ों में जीवन-रस बन
नदी,नद, सागरों में
सीप से चमकते
नन्हे-नन्हे ब्रह्म-तत्व
सूर्य की अग्नि को
भाप की तरह हल्के से
अनंत की ओर उछालती
धरती कब बचा रखती है
दो-चार घूँट
जल के
अपने लिए?
सबमें सब लुटा
रीत कर भी
तृप्त हो जाती है
धरती
माँ की तरह।"[12]

“चिड़िया नहीं जानती” नामक कविता में पेड़ों के अंधाधुंध कटाव एवं एवं उससे पशु पक्षियों को होने वाली पीड़ा को महसूस करते हुए नीरजा जी व्यथित होकर कहती हैं-

“चिड़िया समझ नहीं पाती
क्या बचा उसका अपना
पेड़ के कट जाने के बाद
जो केवल एक पेड़ नहीं
माँ था, प्राण था, श्वास था, आकाश था
रिश्तों का संपूर्ण सजाल था
चिड़िया नहीं जानती
उसके स्वप्न की जड़ों पर
कुल्हाड़ी चलाने वाले को
मनुष्य कहा जाये।”[13]

निष्कर्ष-

नीरजा जी की कविताएँ राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय पारिस्थितिक समस्याओं पर गंभीर चिंतन एवं विमर्श की आवश्यकता को व्यक्त करती हैं। आज के समय में पर्यावरणीय संकट को देखते हुए जनमानस के भीतर पर्यावरणीय चेतना को जागृत करना अत्यंत आवश्यक कार्य है। जहाँ एक ओर हम पर्यावरण के प्रति लापरवाह हो गए हैं। वहीं विकास की इस दौड़ में हम जाने-अनजाने में पर्यावरण को नष्ट कर रहे हैं। वास्तव में हम पर्यावरण को नहीं अपितु स्वयं को नष्ट कर रहे हैं घ। नीरजा जी अपनी कविताओं के माध्यम से स्पष्ट संदेश देती हैं कि दुनिया को रहने योग्य बनाए रखने के लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि प्राकृतिक संसाधनों का संयमित प्रयोग एवं प्रदूषण से बचाव के उपायों पर प्रभावपूर्ण ढंग से कार्य किया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

(1) पर्यावरण प्रदूषण और इक्कीसवीं सदी, डॉ. सुजाता बिष्ट, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2005, पृष्ठ क्रमाँक-26
(2) वही, पृष्ठ क्रमाँक-27
(3) पर्यावरण प्रदूषण के दुष्प्रभाव, उमेश राठौर, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2014, पृष्ठ क्रमाँक-12
(4) पारिस्थितिकी पाठ और हिंदी साहित्य, संपा.- डॉ. सुमा एस., डॉ. एस. आर. जयश्री, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2021, पृष्ठ क्रमाँक-17
(5) पर्यावरण परंपरा और अपसंस्कृति, डॉ. गोविंद चातक, तेज प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2000, पृष्ठ क्रमाँक-129
(6) बचा सकें धरती को, नीरजा माधव, ए.बी.एस. पब्लिकेशन, वाराणसी, प्रकाशन वर्ष-2021, पृष्ठ क्रमाँक-प्रस्तावना(अपप)
(7) वही, पृष्ठ क्रमाँक-15
(8) वही, पृष्ठ क्रमाँक-30
(9) वही, पृष्ठ क्रमाँक-33
(10) वही, पृष्ठ क्रमाँक-35
(11) वही, पृष्ठ क्रमाँक-48
(12) प्यार लौटना चाहेगा, नीरजा माधव, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, प्रकाशन वर्ष- 2014, पृष्ठ क्रमाँक-80
(13) वही, पृष्ठ क्रमाँक-48

समकालीन हिन्दी कविताओं में पर्यावरण विमर्श

डॉ० कला ए.

Assistant Professor In Hindi, Bharata Mata College, Thrikkakara, Ernakulam

शोध सारांश

समकालीन कविता यथार्थ परिस्थिति में जन्मी कविता है। समकालीन हिन्दी कविता में पर्यावरण प्रदूषण और संरक्षण का उल्लेख सर्वत्र दिखाई देते हैं। पर्यावरण कविता प्रकृति कविता से अलग मानव और प्रकृति के बीच की जटिल संबंधों की पड़ताल करती है। आज का कवि प्राकृतिक दुनिया पर हमारे प्रभाव के बारे में चिंतित है। वे जलवायु परिवर्तन के गवाह के रूप में काम कर रहे हैं और महत्वपूर्ण पर्यावरणीय मुद्दों पर ध्यान दिलाना चाहते हैं। समकालीन कवियों जैसे कुँवर नारायण, केदारनाथ सिंह, वीरेन डंगवाल, ज्ञानेन्द्रपति, मदन कश्यप, कुमार अंबुज, लीलाधर मंडलोई, एकांत श्रीवास्तव, उदयप्रकाश, जसिंता करकेट्टा की कतिपय कविताओं में चित्रित पर्यावरण और पर्यावरणीय मुद्दे पर शोध आलेख तैयार करने का प्रयास करती हूँ। मनुष्य की निर्मिति में पर्यावरण की महत्वपूर्ण भूमिका है। मिट्टी, जल, वायु, अग्नि, आकाश से ही हमारी देह की निर्मिति संभव होती है।

भारत में भी जल, वायु, मृदा की स्वच्छता में गिरावट होती जा रही है। विश्व के सभी देशों के सामने ग्लोबल वार्मिंग की समस्या खड़ी है। भूमंडलीकरण, औ।ोगीकरण, नगरीकरण, खनन, जंगल की कटाई आदि की वजह से विकास के साथ साथ कई पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हुए हैं। पर्यावरण असंतुलन विश्व भर में सबसे बड़ी समस्या बन गई है।

बीज शब्द- पर्यावरण, नगरीकरण, भूमंडलीकरण, खनन, जंगल, गौरया, प्रदूषण, प्राकृतिक असंतुलन

आमुख

हिन्दी साहित्य में आदिकाल से लेकर पर्यावरण को एक महत्वपूर्ण स्थान होता है। फादर कामिल बुल्के के अनुसार पर्यावरण (environment) का अर्थ आस-पड़ोस अथवा परिसर। पर्यावरण शब्द का अर्थ होता है हमारे चारों ओर का आवरण। हमें जो चारों ओर से घेरे हुए हैं,वही पर्यावरण होते हैं। पर्यावरण की संकल्पना अतिव्यापक है। मनुष्य की निर्मिति में पर्यावरण की महत्वपूर्ण भूमिका है।

कवि कुँवर नारायण अपनी कविता 'एक वृक्ष की हत्या' में पेड़ से उनकी दोस्ती, अपनत्व और लगाव को स्पष्ट करते हैं।

"अबकि घर लौटा तो देखा वह नहीं था
वही बूढ़ा चौकीदार वृक्ष"

प्रस्तुत कविता द्वारा कवि कहते हैं कि पेड हमारे अच्छे मित्र हैं, हमारे जीवन का प्रमुख अंग होते हैं और पेड को काटना भी बहुत ही दुखदायक है। कवि ने पेड़ को घर का बूढ़ा चौकीदार कहकर परिवार का अहं सदस्य मानता है। कवि वृक्ष को प्राचीन सभ्यता, संस्कृति, और पर्यावरण की रक्षा करनेवाला पहरेदार बताता है। कवि कुदरत के लूटे जाने पर चिंता व्यक्त कर रहे हैं। जंगलों का महत्व, वन की रक्षा और सुरक्षा तथा जंगलों को काटने से पूरे पर्यावरण पर होनेवाले प्रभाव को अच्छी तरह व्यक्त किया गया है। पेडों के अंधाधुंध कटाई से प्राकृतिक असंतुलन को बढ़ावा मिल रहा है। मानव जीवन के लिए असंतुलन मुख्य बात बनकर हमारे सामने आने लगा। समकालीन कवि प्रकृति संपदा को लेकर, उसके संरक्षण को लेकर चिंतित है।

बचाना है नदियों को नाला हो जाने से
हवा को धुआँ हो जाने से
खाने को जहर हो जाने से
बचाना है जंगल को मरुस्थल हो जाने से
बचाना है, मनुष्य को जंगल हो जाने से।"[1]

कवि कुँवरनारायण यह संदेश देना चाहते हैं कि आज हमारे चारों ओर का वातावरण प्रदूषित हो गया है। ऐसे प्रदूषित माहौल

में समाज को बचाना आज के समय की मांग है। अन्यथा हमारी नदियाँ नाला बन जाएगी और हमारा खाना अधिकाधिक जहरीला होता जाएगा। हमारा जीवन खतरे में पड़ जाएगा।

कवि केदारनाथ सिंह अपनी कविता 'बाघ' में वन्यजीवियों के अपने घर नष्ट हो जाने से वे शहरों- गाँवों में घूमते रहने का चित्रण करते हैं।

"आज सुबह के अखबार में एक छोटी सी खबर थी
कि पिछली रात शहर में आया था बाघ
किसी ने उसे देखा नहीं
अंधेरे में सुनी नहीं किसी ने
उसके चलने की आवाज"[2]

उक्त कविता में कवि यह कहने का प्रयास कर रहे हैं कि मनुष्य अपनी स्वार्थ पूर्ति के लिए जंगलों का नाश कर जंगली जीवों का वासस्थान नष्ट कर देते हैं।

वीरेन डंगवाल की कविता 'गंगा स्तवन' में उन्होंने ऐसे लिखा कि

"जिस तरह चीखती हुई बहती है
हिमवान की गलती हुई देह
लापरवाही से चिप्स का फटा हुआ पैकेट फेंकता वह आधुनिक यात्री
चमड़े का रस मिला उसे भी पी लेना
गाद-कीच-तेल तेजाबी रंग सभी पी लेना
ढ़ो लेना जो लाशें मिलें सड़ती हुई"[3]

प्रस्तुत पंक्तियों में वीरेन डंगवाल पवित्र गंगा में किसी आधुनिक यात्री चिप्स का फटा हुआ पैकेट फेंक कर नदी को प्रदूषित करने का वर्णन करते हैं। मनुष्य पुण्य नदि या स्थान को भी कूड़े-कचरे का ढ़ेर बना देते हैं।

ज्ञानेन्द्रपति अपनी कविता 'पालिथिन' में पालिथिन के बेहद उपयोग से उत्पन्न समस्याओं का चित्रण करते है।

"आया था देवार्पित फूल मालाओं को
सविनय गंगा में छोड़ने वह पालिथिन
उनके पीछे पीछे
उन्हें सद्गति देता असद्गति
कूद गया आदमी के पीठ-पीछे
गंगा में वह पालिथिन
चला, जलजीवों के साँस रुँधने"

यहाँ कवि ज्ञानेन्द्रपति कहते हैं कि पालिथिन के अंधाधुंध प्रयोग से सारे पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है। गंगा नदी में पालिथिन इधर उधर बह रहे हैं। इसलिए जल जीवों की जान पालिथिन के पड़ने से खघ्तरे में पड़ी हैं। पहले ही शहरों की नालियों और कारखानों की प्रणालियों से प्रवाहित पानी से गंगा पहले ही प्रदूषित हो गई है। अब निर्भार पालिथिन के पड़ने से उसका जी और भारी हो जाती है।

"ये बॉक्साइट के पहाड़ नहीं हमारे पुरखे हैं
आप इन्हें सेंधा नमक सा इसे चाटना बंद कीजिए
यह लाल लोहामाटी हमारी माता है
आप बेसन का लड्डू सा इन्हें भकोसना बंद कीजिए
ये नदियाँ हमारी बहनें हैं
इन्हें इंग्लिश बियर की तरह गटकना बंद कीजिए"

कवि मदन कश्यप अपनी कविता 'अपना ही देश' में खनन से उत्पन्न जलप्रदूषण के बारे में लिखते हैं। उक्त पंक्तियों में बॉक्साइट के खनन से होनेवाली प्रदूषण का चित्रण मिलता है।

ओडीशा में माली पर्वत आदिवासियों के लिए उनके जीवन और आजीविका का एक अभिन्न अंग है। इस भूमि का पारिस्थितिक, धार्मिक और आर्थिक खिंचाव ऐसा है कि सालों से कॉरपोरेट दबाव के बावजूद स्थानीय समुदाय राज्य सरकार द्वारा प्रस्तावित खनन नीलामी के खिलाफ भूमि की रक्षा के लिए संघर्ष जारी रखे हुए थे। आदिवासियों का कहना है कि माली पर्वत से 36 बारहमासी नदियाँ बहती हैं जो ग्रामीणों के लिए उनकी कृषि और पीने के उद्देश्य के लिए जल का स्रोत है। अत: बॉक्साइट खनन परियोजना को रद्द कर देना चाहिए।

खनन से कई तरह की समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। खनन के नाम पर पहाड़ों की बलि दी जा रही है। अत्यधिक खनन से भूमि कटाव, धूल, और नमक से भूमि के उपजाऊपन में परिवर्तन, जल का खारा होना, जैसी समस्याएं पर्यावरण के लिए चिंता का विषय बन चुका है।

जसिंता केरक्केटा की कविता 'नदी, पहाड़ और बाजार' में पर्यावरण में आनेवाली क्षरण पर इशारा करती है।

"गाँव में वो दिन था, एतवार
मैं नन्ही पीढ़ी का हाथ थाम निकल गई बाजार
सूखते दरख्तों के बीच देखा
एक पतली पगडंडी
मैं ने नन्ही पीढ़ी से कहा
देखो, यही थी कभी गाँव की नदी
आगे देख जमीन पर बड़ी सी दरार
मैं ने कहा इसी में समा गया सारा पहाड़
अचानक वह सहम के लिपट गए मुझसे
सामने दूर तक फैला था भयावह कब्रिस्तान
मैंने कहा देख रही हो इसे
यहीं थे कभी तुम्हारे पूर्वजों के खलिहान
नन्ही पीढ़ी दौड़ी: हम आ गए बाजार
क्या क्या लेना है पूछने लगा दुकानदार
भैया, थोडी बारिश, थोडी गीलि मिट्टी
एक बोतल नदी, वो डिब्बा बंद पहाड़
उधर दीवार पर टंकी एक प्रकृति भी दे दो
और बारिश इतनी मँहगी क्यों?
दुकानदार बोला यह नमी यहाँ की नहीं
दूसरे ग्रह से आई है
मंदी है, छटाँग भर मँगाई है
पैसे निकालने सारी की कोर टटोली
चौंकी
देखा, आँचल की गाँठ में रुपयों की जगह
पूरा वजूद मुड़ा पड़ा था।।"

उक्त कविता द्वारा कवयित्रि जंगल के उजाड़ने, बारिश की कमी, सूखी हुई नदियाँ, पहाड़ों का खनन आदि के कारण हमारी प्रकृति नष्ट हो जाने का चित्रण करती है। इस प्रकार होने से आनेवाली पीढ़ियों को विकास के लिए नहीं जीने के लिए संघर्ष

करने पड़ेगे। पर्यावरण का संतुलन नष्ट हो जाने से उसका असर बच्चों पर ही पड़ता है।

प्रसिद्ध कवि कुमार अंबुज की कविता 'कहीं कोई जमीन नहीं' में वे लिखते हैं,

"चारों तरफ से नवनिर्माण की आवाजें
और निर्माण केवल बिल्डर कर रहे हैं
बाकी लोग सिर्फ बेच रहे हैं अपनी जमीनें
अब सारी जमीन बिल्डरों के पास हैं
सारी तरकीबें, अध्यात्म और दर्शन बिल्डरों के पास है
पृथ्वी बिल्डर की डायनिंग टेबल पर रखा एक अध खाया फल।।"[3]

पहले जहाँ खेत, जंगल, वन था वहाँ अब बड़ी बड़ी मल्टिस्टोरी बिल्डिंग एवं कल-करखाने स्थापित हो गए हैं।

लीलाधर मंडलोई की एक कविता 'अगर न माने' में वे लिखते हैं कि

"यहाँ एक गाँव था अपना
यहाँ कुछ गाँव थे प्यारे
मीठे दिन थे मीठी रातें
रस की बूँदें,
रस की धारे,
इस धरती पे भी कल तक,
जंगल थे और नदियाँ थीं,
जगमग जगमग झरने थे,
महुआ, आम आदि थे,
खुशियाँ थीं,
पके हुए खेतों को हँसते हुए,
देख यहाँ खुशहाली थी,
उस दुश्मन की आँख लगी कि,
तहस-नहस सब धीरे धीरे,
लोहा, ईंट, सिमेंट के आगे,
नदी बंध गई उजड़े गाँव।।"[4]

मनुष्य विज्ञापन और विकास के नाम पर प्रकृति का लगातार विनाश करता जा रहा है। प्रकृति का अमर्यादित उपभोग, वनों की कटाई, उद्योग धंधों की भरमार, उपभोक्ता वस्तुओं का अधिकतर उत्पादन आदि प्रकृति, पर्यावरण और पृथ्वि के लिए हानिकारक बन जाते हैं। जनसंख्या की वृद्धि प्राकृतिक संसाधनों के दोहन का कारण बन जाती है। भूमि अपरदन, मरुस्थलीकरण, वनोन्मूलन, वर्षों की कमी आदि समस्याओं से मनुष्य को जूझना पड़ता है। वन की कटाई के कारण वर्षा में कमी, वातावरण में कार्बनडाइऑक्साइड की वृद्धि, ऑक्सिजन की कमी आदि समस्याएं उत्पन्न होती है। जंगलों की कटाई के कारण वन्य जीव जंतुओं के घर नष्ट हो रहे हैं कई तरह के पौधों को विल्प्त होते हुए दिखाई पड़ती है।

लीलाधर मंडलोई की कविता 'न के बराबर' में लिखते हैं,

"हमारे बुजुर्ग जानते थे,
कितना जरूरी है,
गौरया का होना
...............वे घोंसला बनाती थीं वहाँ,
कि ध्वनि, शोर, तरंगों से

सुरक्षित थीं उनकी जिन्दगी,,,,,,,,,,,,,
वे उड़ गई हैं या
खो गई कहीं हवाओं में
कहना मुश्किल, बस कभी कभी
आती है उनकी भयभीत आवाज जब
हम याद करते हैं उन्हें।।"

गौरया का अचानक गायब हो जाने का कारण है मोबाइल फोन के टवर से निकलनेवाली इल्कट्रोमैगनेटिक तरंगें और ज्यादा मात्रा में छोटे पेड़ो के काट जाना। अगली पीढ़ी इस छोटी सी चिड़िया से क्या मिल पाएगी। अब गौरया की जो प्रजाती लुप्त होती जा रही है। कहीं कहीं तो यह बिल्कुल दिखाई नहीं देती।

एकांत श्रीवास्तव अपनी 'दु:स्वप्न में पृथ्वी' कविता में लिखते हैं

"सूखी हुई लहरें थीं रेत में,
शंख, सीपी और घोंघे थे,
एक पूरा समुद्र था सूखा हुआ,
मगर पानी कहीं नहीं था,
पेड थे मगर उनके पत्ते,
बरसों पहले टूट चुके थे,
सूखी टहनियों पर सूने घोंसले थे,
और परिंदे कहीं नहीं थे।।"

उक्त पंक्तियो में आज की पृथ्वि की भयानक स्थिति का वर्णन है। प्रकृति का अत्यधिक दोहन और उनकी वजह से उत्पन्न होनेवाले प्रदूषण के घातक प्रभावों को कवि यहाँ अंकित करता है। पर्यावरण का ह्रास होते रहने से प्राकृतिक संतुलन नष्ट हो जाएँगे। आज का कवि प्रकृति के हर स्पंदन से परिचित है।

उदय प्रकाश की कविता 'पर्दा' में पर्यावरण के बारे में ऐसे लिखते हैं-

"वह लुप्तप्राय जानवर,
परदे के भीतर खोजेगा हरी घास,
उसे अपने जीवन के लिए चाहिए,
कुछ अजनबी कीड़े,
कुछ अजनबी वनस्पतियाँ,
फिर परदे पर दिखाई देगा,
लुप्त होता कोई जंगल,
और पृष्ठभूमि में आते रहेगा,
समय और दृश्य में विलीन होता,
एक विलुप्त जाति का संगीत।।"[5]

कवि उक्त पंक्तियों में विलुप्त होती जातियों की पीड़ा और मनुष्य की बर्बरता को व्यक्त करते हैं। प्रकृति का दोहन इस कदर आगे बढ़ गया है कि पशुओं की प्रजाति की विलुप्त होने की संभावना भी व्यक्त करते हैं। वे आगे कहते हैं कि जो लुप्त हो जानेवाले जानवर मानो अतीत में तब्दील हो जाएंगे। भविष्य में उनके अस्तित्व का कोई निशान भी नहीं बचेगा। मनुष्य अपने भौतिक वासनाओं की पूर्ति के लिए जीव जंतुओं, वृक्ष, वायु सबको नुकसान पहूँचाते हैं। ऐसी स्थिति में जीव-जंतुएँ हरियाली को परदे के अंदर खोजना पड़ेगा। जंगल भी लुप्त होता जा रहा है। वे तो परदे के पृष्ठभूमि में देखना पडेगा। उनकी आवाज, उनका संगीत समय और दृश्य में विलीन हो जाएंगे।

"कुल मिलाकर कितने यूनियन कारबैड है पंजाब में?
बताओ

प्रार्थन करते लोगों के फेफड़ों में
कितना मीथैल आइसो सायनेट है?
बताओ
पंजाब में
कितने भोपाल हैं?"

प्रस्तुत पंक्तियों में कवि उदय प्रकाश पंजाब में भोपाल को खोजते हुए भोपाल ग्यास रिसाव की घटना को याद दिलाते हैं जिसमें कई लाख लोगों के जान माल की क्षति हुई थीं। पंजाब में भी कुछ ऐसा दृश्य सामने आता है। इसलिए कवि पूछते हैं कि बताओ पंजाब में कितने भोपाल है? यूनियन कारबाइड जहर का असर किन-किन लोगों को क्षत-विक्षत कर रहा है। औ।ोगीकरण के साथ जो यंत्रीकरण हुआ वह हमारे भौतिक विकास को मात्र लक्ष्य करता है। उस सिलसिले में हमारे यहाँ कई रासायनिक कारखाने हैं वहाँ निर्मित कई रसायनिक पदार्थ जानलेवा है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के रूप में कह सकते हैं कि पर्यावरण में होनेवाले प्रदूषण और प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक दोहन के कारण उत्पन्न समस्याएँ मानव की ही नहीं सभी जीव जंतुओं के अस्तित्व को भी प्रभावित करते हैं। इसलिए सभी स्तर के लोगों में पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ाने की आवश्यकता है। धरती के प्रत्येक प्राणी के जीवन में संतुलन लाना है। पर्यावरण चिंतन वर्तमान समय में सिर्फ मनुष्य पर ही केन्द्रित नहीं करते हैं बल्कि समस्त जीव जंतुओं के संरक्षण पर विचार करता है। प्राकृतिक संतुलन बिगड़ जाने से सभी जीव-जंतुओं को इसके दुष्परिणाम को झेलना पड़ता है। शहरीकरण, आधुनिकीकरण, के नाम पर खत्म हो रही जंगल वन जीवियों की आवास व्यवस्था को भी खराब कर देते हैं। पर्यावरणीय समस्याएँ मनुष्य के अस्तित्व को खतरे में डालती है। विकास के साथ साथ हम को पर्यावरण की सुरक्षा पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. कुँवर नारायण- प्रतिनिधि कविताएँ- पृ 207- राजकमल प्रकाशन- 2008
2. केदारनाथ सिंह- बाघ (नेट से साभार)
3. कुमार अंबुज, अमीरी रेखा, राधाकृष्ण प्रकाशन
4. लीलाधर मंडलोई, मनवा बेपरवाह, दूसरा संस्करण, साहित्य भंडार, इलाहाबाद
5. उदय प्रकाश, रात में हारमोनियम, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 110002,
6. वनजा के, साहित्य का पारिस्थितिक दर्शन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली
7. "(फादर कामिल बुल्के, अंग्रेजी हिन्दी कोश, प्रसंग 214

प्लास्टिक-प्रदूषण का सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रभाव

डॉ० मंजरी खरे

सहायक प्राचार्य, विश्वविद्यालय हिंदी विभाग, ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

शोध सार:

सफलता और विकास की पहली सीढ़ी ही है व्यक्ति का उत्तम स्वास्थ्य। कोई भी आविष्कार मानव जीवन के कल्याण के लिए होता है। यदि वही खोज जन-जन के लिए हानि का कारण बन जाए तो वह विनाश का ही प्रतीक कहलायेगा। परन्तु विडम्बना यह है कि आज जीवन का शायद ही कोई क्षेत्र शेष रह गया हो जिसके अन्तर्गत प्लास्टिक ने अपना हस्तक्षेप न किया हो। 'प्लास्टिक' के अनियन्त्रित प्रयोग और गैर-वैज्ञानिक निस्तारण ने सर्वत्र प्लास्टिक-प्रदूषण की समस्या खड़ी कर दी है। जिसका सीधा सार्वजनिक प्रभाव मानव तथा सहचर प्राणियों के साथ-साथ इस धरती के स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है। प्लास्टिक प्रदूषण को व्यक्तिगत, सामूहिक तथा कानूनी उपायों द्वारा रोक कर हम निश्चित रूप से अपने वर्तमान तथा भविष्य को सुंदर तथा स्वस्थ्य रख सकेंगे।

बीज शब्द: 'प्लास्टिक-प्रदूषण', श्सार्वजनिक स्वास्थ्य, समुद्री-जीव, वैज्ञानिक-निस्तारण, सिंगल-यूज-प्लास्टिक, विकार, पर्यावरणीय-चेतना इत्यादि।

प्रस्तावना- 'जान है तो जहान है।' धरती पर रहते हुए मानव उन सभी आकांक्षित स्थितियों, वस्तुओं की प्राप्ति और क्रियाओं को तभी कर सकता है जबकि वह स्वस्थ हो। सफलता और विकास की पहली सीढ़ी ही है व्यक्ति का उत्तम स्वास्थ्य। यह तभी प्राप्त हो सकता है जब हमारी गतिविधियाँ और पर्यावरण ठीक हों। हमारा वर्तमान पर्यावरणीय परिदृश्य अत्यंत शीघ्रता के साथ बदल रहा है। यह बदलाव शुभ संकेतों का नहीं है। इन परिवर्तनों के पीछे छिपे कारणों की पड़ताल की जाए तो या स्पष्ट पता चलता है कि मानवीय अनुचित क्रियाकलाप महत्वपूर्ण रूप से उत्तरदायी हैं। भौतिक उन्नति के क्रम में मानव द्वारा नित नई खोजें की गईं। इसी क्रम में 'प्लास्टिक' की भी खोज हुई। तबसे लेकर आज तक 'प्लास्टिक सर्वव्यापी और लोकप्रिय होती चली गयी है। कम मूल्य, सरलता से उपयोग, जंगरोधी, विभिन्न रूपों में आसानी से ढल जाने वाली प्रकृति आदि के कारण 'प्लास्टिक' सभी के लिए उपयोग की पहली पसन्द बन चुकी है। दैनिक जीवन के उपयोग की अनेकानेक वस्तुएं, जैसे कि- बॉटल, कप, कन्टेनर, इलेक्ट्रॉनिक-उपकरण, फर्नीचर, बच्चों के खेल-खिलौने इत्यादि न जाने कितनी ही वस्तुएं प्लास्टिक द्वारा बनाई जा रही हैं। जब से औघोगिकरण हुआ और नगरीय विकास के लिए जमीन, जंगल का अत्यधिक दोहन किया गया, तब से लकड़ी की कमी को प्लास्टिक के विकल्प के रूप में प्रमुखता से अपनाया जाने लगा। फलस्वरूप आज जीवन के लगभग सभी क्षेत्रों में 'प्लास्टिक' विविध स्वरूपों में उपस्थित दिखाई पड़ता है। इस रूप में देखा जाए तो वर्तमान समय "प्लास्टिक युग" कहा जा सकता है। निःसन्देह 'प्लास्टिक' ने मानव जीवन को सरल तथा सुगम बनाया भी है, फिर भी ध्यातव्य है कि कोई भी आविष्कार कल्याण-भाव स्वयं के भीतर समेटे रखता है। यदि वही खोज सार्वजनिक हानि का कारण बन जाए तो वह विनाश का ही प्रतीक कहलायेगा। 'प्लास्टिक' के अनियन्त्रित प्रयोग और गैर वैज्ञानिक-निस्तारण ने जल, थल, वायु तक में 'प्लास्टिक-प्रदूषण' की गंभीर समस्या खड़ी कर दी है। जिसका सीधा सार्वजनिक प्रतिकूल प्रभाव मानव तथा सहचर प्राणियों के साथ-साथ इस धरती के स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है।

प्लास्टिक तात्पर्य तथा स्रोत- 'प्लास्टिक' शब्द बहुप्रचलित है। परनु प्लास्टिक है क्या? इसे जाने-समझे बिना 'प्लास्टिक-प्रदूषण' और उसका सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रभाव का आकलन नहीं किया जा सकता वस्तुतः "प्लास्टिक' संश्लेषित अथवा अर्ध-संश्लेषित कार्बनिक ठोस पदार्थ के एक बड़े समूह का सामान्य नाम है। इससे बहुत सारे औघोगिक उत्पाद निर्मित होते हैं। जिनमें मूल्य कम करने या अधिक कार्यक्षम बनाने के लिए कुछ अन्य पदार्थ भी मिश्रित किये जा सकते हैं।"[1] सामान्य भाषा में कहें तो प्लास्टिक 'कार्बन' की व्यापक श्रृंखला है। यदि इसके स्रोत के विषय में बात की जाए तो यह प्राकृतिक रूप से कच्चा-तेल, सेल्युलोज आदि से प्राप्त होता है।

प्लास्टिक की बढ़ती हुई मांग को देखते हुए उत्पादन में वृद्धि हेतु कई प्रकार के अन्य सस्ते पदार्थ मिश्रित किये जाते हैं। इस तरह से तैयार प्लास्टिक द्वारा जीव-जंतुओं, मानव तथा उसके वातावरण को प्रतिकूल रूप में प्रभावित किया जाना ही 'प्लास्टिक प्रदूषण' कहलाता है। "केन्द्रीय प्रदूषण नियन्त्रण बोर्ड (Central Pollution Control Board-CPCB) की रिपोर्ट के अनुसार भारत में प्रतिवर्ष 56 लाख टन प्लास्टिक अपशिष्ट का उत्पादन होता है जिसमें से 689.5 टन अकेले दिल्ली द्वारा उत्पादित होता है।"[2] इस प्रकार प्लास्टिक-प्रदूषण आज वैश्विक समस्या बन गया है।

प्लास्टिक का सार्वजनिक स्वास्थ्य पर प्रभाव- प्लास्टिक ने य।पि मानव जीवन को नि:सन्देह सरल बनाया है। किन्तु इसके खतरनाक और हानिकारक प्रभावों से सार्वजनिक स्वास्थ्य भी संकटग्रस्त हो गया है। मानव स्वास्थ्य की यदि बात की जाए तो प्लास्टिक मानव स्वास्थ्य पर भयंकर दुष्प्रभाव डालता है। प्लास्टिक जिन रसायनों से निर्मित होता है वह मानव शरीर में कई प्रकार के रोगों को जन्म देते हैं; जैसे कि कैंसर, अन्त:स्त्रावी-समस्या, मस्तिष्क समस्या, थायरायड, हृदय-सम्बन्धी विकार, श्वसन तंत्र, तंत्रिका-तंत्र, डायबिटीज, मोटापा, लीवर, त्वचा आदि की समस्या। लेड, सीसा, मरकरी, कैडमियम जैसे विषैले तत्व प्लास्टिक द्वारा धीरे-धीरे जाने-अनजाने ही हमारे शरीर के भीतर पहुंचते रहते हैं और जानलेवा बीमारियों से व्यक्ति को ग्रसित कर लेते हैं। इतना ही नहीं इसका प्रभाव केवल वर्तमान जीवन पर ही नहीं वरन आनुवांशिक रूप से पीढ़ियों तक देखा जा सकता है। लंबे समय तक प्लास्टिक उत्पादों के प्रयोग से श्ब्रेनश से जुड़ी गम्भीर समास्याएं भी हो जाती है। मस्तिष्क जो कि समस्त शरीर में संतुलन स्थापित करता है। उसके गड़बड़ होने पर व्यक्ति की क्रियाशीलता भी उसी अनुरूप प्रभावित हो जाती है। इस तरह प्लास्टिक-प्रदूषण का तुरंत तात्कालिक प्रभाव भले ही न दिखें; परन्तु यह धीमा जहर अनेक प्रकार से अप्रत्यक्षत: व्यक्ति पर घातक प्रभाव छोड़ता है।

भूमि की उर्वरता, स्वच्छता आदि भी प्लास्टिक उत्पादों के उपयोग के बाद इधर-उधर फेंकने से प्रदूषित हो जाती है। कृषि में यदि प्लास्टिक रसायन से युक्त प्रदूषित जल द्वारा सिंचाई की जाए या फिर मिट्टी में प्लास्टिक अपशिष्ट धीरे-धीरे जमा होते रहें तो उससे खाद्य-श्रृंखला भी प्रभावित हो जाती है। फसल के माध्यम से प्लास्टिक के अतिसूक्ष्म कण मानव शरीर में प्रवेश कर उसे संक्रमित भी कर देते हैं। मिट्टी की उर्वरा क्षमता भी धीरे-धीरे प्लास्टिक अपशिष्ट के कारण नष्ट होती रहती है। परिणामस्वरूप भूमि बंजर हो जाती है। साथ ही खाद्यान्न के लिए संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है, जिससे कि बड़ी आबादी के लिए भुखमरी की समस्या खड़ी होने की प्रबल संभावना रहती है। स्थल पर प्लास्टिक-प्रदूषण ने भूमि के साथ-साथ पशुओं को भी व्यापक रूप से प्रभावित किया है। ये बेजुबान जानवर गंभीर रोगों के शिकार हो रहे हैं। प्लास्टिक सेवन से दुधारू पशुओं में दूध की मात्रा प्रदूषित एवं प्रभावित होती है। संक्रमित दूध का सेवन करने वाले व्यक्ति भी इसके प्रभाव से अछूते नहीं रह पाते और वे भी उसी अनुरूप रोगग्रस्त हो जाते हैं। प्लास्टिक की थैलियाँ- गाय, भैंस आदि मवेशियों के पेट में जमा होती रहती हैं, जिससे कि उनका आहार घटने लगता है, उन्हें अपना पेट भरा-भरा महसूस होता है, फलस्वरूप पशु कमजोर तथा रोगग्रस्त होकर धीरे-धीरे मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

तेज हवा या पानी द्वारा हल्की प्लास्टिक नदी, नालों, तालाबों आदि में उड़कर पहुंच जाती है और जल के प्रवाह को बाधित करने के साथ-साथ उसमें गन्दगी, बदबू, मच्छर, कीड़े-मकोड़ों को जन्म देती है। यह सार्वजनिक स्वास्थ्य को गम्भीर रूप से प्रभावित करता है जैसे कि पेचिश, मलेरिया, त्वचा सम्बन्धी रोग होने की संभावना रहती है। बारिश के मौसम में तो प्लास्टिक अपशिष्ट द्वारा ऐसी समस्याएं नित-प्रति ही उठ खड़ी होती हैं। हवा और पानी के सहज प्रवाह को बाधित करने के कारण प्लास्टिक प्राण-घातक भी है।

पृथ्वी के इस विशाल प्रांगण में सभी को अपना विकास करने का समान अधिकार प्राप्त है। इसीलिए- ".... पृथ्वी पर हर जीव-जन्तु का अपना महत्त्व है। चाहे एक कीट हो या एक पत्ता। सब का प्रकृति के अटूट बन्धन में अपना अलग महत्व है। इसके बावजूद पृथ्वी पर आज कई तरह के प्रहार हो रहे हैं और यह इसलिए हो रहे हैं कि मनुष्य अपने आपको समझता है कि मैं सुप्रीम हूँ और पृथ्वी हमारी है। लेकिन मनुष्य को एक भले इंसान के रूप में यह समझना जरूरी है कि पृथी सिर्फ मानव की नहीं, बल्कि कई लाख जीव-जन्तुओं की माँ है।"[3] मानव द्वारा अन्धाधुन्ध प्लास्टिक निर्माण से निकले रसायन ने जलीय जीवों के सामने भी विषम स्थिति ला दी है। नदी, तालाबों, झीलों और महासागरों तक पहुंची प्लास्टिक तथा उसके अपशिष्टों में उलझ कर बहुतेरे जलीय-जीव प्राण त्याग देते हैं। बड़ी मात्रा में ऐसा होने से जल भी प्रदूषित हो जाता है। भोजन के भ्रम में प्राय: ये प्लास्टिक सामग्री जलीय जीवों के पेट में पहुंच जाती है। ऐसा भोज्य-पदार्थ जीवों की गतिविधियों को तो प्रभावित करती ही है उन्हें मृत्यु की कगार पर भी पहुँचा देती है। अनगिनत जलीय जीवों की मृत्यु 'प्लास्टिक अपशिष्ट' के

कारण ही प्रतिवर्ष हो जाती है; व्हेल, शार्क, समुद्री कछुए, छोटी-बड़ी मछलियाँ तथा जल की सतह पर भोजन की तलाश में उतरने वाले पक्षी इत्यादि इनमें प्रमुख हैं। जब इनमें से कुछ जलीय जीवों को मनुष्यों द्वारा ग्रहण किया जाता है तो इनके माध्यम से प्लास्टिक के सूक्ष्म कण मानव शरीर में भी प्रवेश कर जाते हैं। उन प्लास्टिक कणों में व्याप्त जहरीले रसायन मानव को गंभीर रूप से रोग ग्रसित कर सकने की क्षमता रखते हैं। "अंतरराष्ट्रीय मेरी टाइम आर्गेनाइजेशन (IMO) की रिपोर्ट के अनुसार सागरों एवं महासागरों में प्लास्टिक प्रदूषण की यदि इसी प्रकार वृद्धि होती रही तो वर्ष 2050 तक समुद्र में मछलियों से अधिक प्लास्टिक की मात्रा होगी।"[4]

जल के भीतरी पारिस्थकीय तंत्र को भी प्लास्टिक प्रदूषण ने प्रतिकूल रूप से प्रभावित किया है। झीलों, सागरों के भीतर स्थिति प्रवाल भित्तयाँ तथा उन पर आधारित जीव, प्लास्टिक अपशिष्ट के कारण श्वसन नहीं कर पातीं और धीरे-धीरे निर्जीव होकर उनकी मृत्यु हो जाती है। उन भित्तियों पर निर्भर रहनेवाले परजीवी भी संकट की स्थिति में आ जाते हैं।

प्लास्टिक प्रदूषण से हमारा वायुमंडल भी अछूता नहीं रहा है। प्लास्टिक के दहन से निकलनी वाली कार्बन, डॉयोक्सीन, फ्यूरान, जैसी जहरीली गैसे वायु को विषाक्त बना देती हैं। ऐसे वातावरण में रहने से श्वसनतंत्र के साथ-साथ अनेक प्रकार की शारीरिक रुकावटें भी आ जाती हैं। मौसम का असमय बदलते रहना, ग्लोबल वार्मिंग होना, इत्यादि अन्य चिन्तनीय पर्यावरणीय समस्याओं में 'प्लास्टिक' दहन' से उत्पन्न 'कार्बन' भी महत्वपूर्ण कारक है।

समाधान- 'प्लास्टिक' प्रदूषण को सतत रूप में कम करना आज नितान्त आवश्यक हो गया है। सर्वव्यापी रूप से इसने मानव की वर्तमान जीवन-शैली को अधिकाधिक उस पर निर्भर बना दिया है। परन्तु यह ध्यातव्य है कि यदि इसके अनियन्त्रित प्रयोग पर रोक नहीं लगाई गयी तो निश्चित रूप से इसके भयंकर परिणाम भुगतने होंगे। कुछ सामान्य और कुछ वैज्ञानिक उपायों द्वारा हम प्लास्टिक प्रदूषण को धीरे-धीरे कम कर सकते हैं। उनमें से कुछ प्रमुख उपाय हैं-

1) प्लास्टिक उत्पादों के स्थान पर परम्परागत-सामग्रियों यथा- जूट, कपड़ा, लकड़ी, धातु, मिट्टी आदि से बनी वस्तुओं को प्रमुखता से उपयोग में लाया जाए।
2) प्लास्टिक उत्पादों के पुनर्चक्रण पर बल दिया जाए।
3) प्लास्टिक अपशिष्टों का समुचित निस्तारण किया जाए।
4) खरीददारी के लिए घर से ही बैग या झोला ले जाया जाए। बार-बार नये-नये कैरी-बैग्स के प्रयोग से प्लास्टिक-प्रदूषण की मात्रा में अत्यधिक वृद्धि हुई है। यही कारण है कि धीरे-धीरे प्लास्टिक की मोटाई बढ़ाई जा रही है।
5) पर्यटकों को पर्यटन-स्थल पर प्लास्टिक कचरे को उचित प्रकार से निस्तारित करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। पर्यटन-स्थलों पर विशेष रूप से व्यापक-मात्रा में प्लास्टिक कचरा बिखरा दिखाई पड़ता है, जो कि पर्यटन स्थल के नैसर्गिक सौन्दर्य को सीधे तौर पर बाधित कर देता है।
6) प्लास्टिक के अनावश्यक-प्रयोग पर दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिए।
7) सिंगल-यूज-प्लास्टिक पर कड़ाई से रोक लगायी जानी चाहिए।
8) विभिन्न प्रकार के उत्पादों जैसे सौंदर्यवर्द्धक-सामग्रियों, वस्त्रों आदि में किन्हीं अंशों में प्रयुक्त प्लास्टिक पर भी रोकथाम लगायी जानी चाहिए।
9) गन्ना, मकई, गोंद, साबुदाना आदि प्राकृतिक उत्पादों को प्रयोगों द्वारा प्लास्टिक का विकल्प बनाने का प्रयत्न किया जाना चाहिए। प्राकृतिक उत्पादों का पुनर्चक्रण सरलतापूर्वक किया जा सकता है।
10) पर्यायवरणीय चेतना की शिक्षा के अन्तर्गत विशेष रूप से 'प्लास्टिक-प्रदूषण' के संदर्भ में आम-जन को जागरूक किया जाना चाहिए।

सृष्टि के आरंभ से ही 'प्रकृति' जीवन का मूलभूत आधार रही है। इसी कारण से प्रकृति के विभिन्न उपादानों में देवी-देवताओं का वास बताया गया; प्रकट करता है कि हमें प्रकृति के प्रति वैसा ही प्रेम और श्रद्धा का भाव रखना चाहिए जैसा कि हम अपने इष्ट के प्रति रखते हैं। प्रदूषणों के कारण मानव तथा प्रकृति का यह भावात्मक सम्बन्ध आज टूटता जा रहा है। प्रकृति के सुरम्य वातावरण में पल बढ़ कर ही आज मानव-जाति इतनी ऊँचाईयों को स्पर्श कर सकीं है; इसके लिए हम सभी को प्रकृति के कृतज्ञ होना चाहिए। जो प्रकृति नि:स्वार्थ भाव से हमें सदैव देती ही आई है, उसे प्रदूषित करने का हमें कोई अधिकार नहीं है। हिंदी के साहित्यिक कवियों ने प्रकृति के अनवरत दान पर उनके मार्मिक रचनाएँ कर हमें 'प्रकृति'

की रक्षा का पाठ पढ़ाया है। कवि रहीम दास जी प्रकृति के उसी निश्चल अवदान की ओर संकेत करते हुए कहते हैं कि-

"तरवर फल नहिं खात है, सरवर पियहि न पान।
कहि रहीम परकाज हित, सम्पति संचहि सुजान।।"[5]

वस्तुतः प्रदूषण किसी भी तरह का क्यों न हो व्यक्ति, समाज, परिवेश सभी पर अलग-अलग ढंग से अपना प्रभाव डालता है। ये प्रदूषण केवल भौतिक रूप से ही नहीं वरन मनोवैज्ञानिक रूप में भी विचलित करते हैं। इन्हीं कारणों से प्रदूषण के वर्तमान मुख्य घटक प्लास्टिक-प्रदूषण पर चिंतन करने की आज युद्ध-स्तर पर जरुरत है; साथ ही प्लास्टिक के विकल्पों एवं उनके सम्यक निस्तारण के उपायों की भी खोज नितांत आवश्यक हो गयी है। जल, जंगल, जमीन की रक्षा के लिए 'प्लास्टिक' को प्राथामिकता में नजरअंदाज करना ही होगा; तभी हम अपनी इस 'धरती' के साथ-साथ स्वयं को भी बचा पायेंगे।

संदर्भ ग्रंथ-सूची-

1. https//hi.m.wikipedia.org>wiki
2. पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण: प्रधान सम्पादक- शिव कुमार ओझा, बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद, पृष्ठ-216.
3. 'पर्यावरण शिक्षा एवं भारतीय सन्दर्भ', डॉ० के० पाण्डेय, पृष्ठ-6.
4. 'पारिस्थितिकीय एवं पर्यावरण': प्रधान सम्पादक- शिव कुमार ओझा, बौद्धिक प्रकाशन, इलाहाबाद' पृष्ठ-216.
5. 'रहीम रचनावली', संपादक: सत्यप्रकाश मिश्र, पृष्ठ-64.

सिद्धकवि सदानन्द डबराल विरचित 'नरनारायणीयम्' महाकाव्य में पर्यावरणीय चेतना

अंशुल

शोधच्छात्र, संस्कृत-विभाग, हे०न०ब०ग०वि०वि०(केन्द्रीय विश्वविद्यालय), श्रीनगर गढ़वाल, उत्तराखण्ड
बी०जी०आर० परिसर, पौड़ी गढ़वाल, उत्तराखण्ड

शोध सारांश- साहित्य तथा पर्यावरण का अन्तर्सम्बन्ध सृष्टि के आदिकाल से ही सुस्थापित रहा है। वैदिक काल से अद्यावधि पर्यन्त तक से समग्र साहित्य में पर्यावरण की समस्त गतिविधियों को दर्शाया गया है, जिसका उद्देश्य मात्र साहित्य से प्रेरित होकर पर्यावरण के प्रति स्वकीय कर्तव्यों का बोध तथा उसके संरक्षण एवं संवर्धन में महद्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करना रहा है। जिसका पूर्णत: अनुगमन सिद्धकवि सदानन्द डबराल द्वारा 'नरनारायणीयम्' महाकाव्य में भी किया गया है। विंशति शताब्दी में विरचित यह महाकाव्य नौ सर्गों में विभक्त पौराणिक कथा पर आधारित एक धार्मिक महाकाव्य है, जिसमें नारियों के लज्जागुणों से मण्डिता मूर्ति ने ईश्वरांशभूत तथा तेजस्विता से युक्त दो ऋषिपुत्र नर-नारायण को जन्म दिया। जिनका जन्म संसार के कल्याण भाव मात्र के लिए हुआ था। इसी भावना से प्रेरित होकर ऋषिकुमार माता की अनुमति प्रदान कर पावन भू-वैकुण्ठ कहे जाने वाले तथा प्राकृतिक सौंदर्य से समृद्ध विशाला (बदरीवन) क्षेत्र में समाधिलीन होते हैं। प्रस्तुत महाकाव्य में पावन चरित्रों के साथ-साथ सुरम्य विशाला (बदरीवन) के प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन भी किया है, जिसके माध्यम से काव्य पाठकों में प्रकृति तथा पर्यावरण के प्रति आत्मीयता विकसित हो सके क्योंकि मनुष्य स्वयं प्रकृति की अद्भुत संरचना है एवं यह प्रकृति ही अव्यक्त ब्रह्म का व्यक्त प्रसार है।

कूट शब्द- सृष्टि, तत्व, मोक्ष, दर्शन, वैराग्य, निदान, हैमवत, विशाला, महामृगेन्द्र।

संस्कृत साहित्य भारतीय संस्कृति के आध्यात्मिक भावना तथा तद्ववज्ञान का उत्कृष्ट दर्पण रहा है। भारतवर्ष के ऐतिहासिक, धार्मिक, सांस्कृतिक, आध्यात्मिक, राजनैतिक तथा पर्यावरणीय सम्बंधित जीवन की प्राय: सम्पूर्ण व्याख्या को इस वाङ्मय में संकलित किया गया है। इस पावन धरा धाम पर स्वस्थ जीवन यापन हेतु सुयोग्य पर्यावरण का होना अत्यन्त अपरिहार्य है। मानव एक सामाजिक प्राणी है, जिसे समाज में अपने अस्तित्व को बनाये रखने के लिए समुचित पर्यावरण तथा मानवीय मूल्यों की पग-पग पर आवश्यकता होती है। प्रकृति का अत्यन्त सूक्ष्म परिशीलन संस्कृत वाङ्मय में सुदीर्घ प्राचीन काल ये ही प्राप्त होता है। इस वाङ्मय के प्रत्येक सुकवि ने अपनी कालजयी रचनाओं में पर्यावरणीय महत्व को तथा उसके अनुपम सौन्दर्य को विस्तार पूर्वक प्रतिपादित किया है। पर्यावरण शब्द की निष्पद्वि पाणिनीय व्याकरणाऽनुसार 'परि+आx उपसर्ग पूर्वक वृ धातु से ल्युट् प्रत्यय' के योग से होती है।

(परीत: आव्रियतेऽनेनेति पर्यावरणम् या परित: आसमन्ताद् वृणोति यत् तत् पर्यावरणम् इति।)

उपर्युक्त विवरण से ज्ञात होता है कि पर्यावरण का सामान्य अर्थ उस भौतिक परिवेश से है जो समस्त भू-मण्डल के जैव-जगत् को आबद्ध किये हुए है- 'परित: आवरणं पर्यावरणम्' जिनका मानव प्रत्यक्षत: एवं अप्रत्यक्षत: उपभोग करता है तथा जिसके माध्यम से जन-मानस की भौतिक, आत्मिक एवं मानसिक चेतना भी स्पन्दित होती है।

भारतीय संस्कृति में सुदीर्घ प्राचीन काल से ही प्रकृति एवं पर्यावरण का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। यह सुसमृद्ध भारतवर्ष प्राकृतिक, सांस्कृतिक मूल्यों और धार्मिक लोकाचार की अलौकिक परम्परा से समृद्ध राष्ट्र है। प्राचीन भारतीय ग्रन्थों में जहाँ एक और प्रकृति का विस्तृत उल्लेख प्राप्त होता है वहीं दूसरी और प्रकृति के प्रति आत्मीयता का भाव दृष्टिगोचर होता है। वैदिक काल से ही मानव ने प्रकृति को बिना क्षति पहुँचाये उसकी समृद्धि में अपना बहुमूल्य जीवन अर्पित किया है। प्रकृति के पावन आँचल को अपना निवास स्थान बनाया तथा पशु-पक्षियों के सुमधुर सामीप्य एवं नदियों के पवित्रतम् संगम को चयनित कर स्वस्थ जीवन यापन किया है। इसी कथन को ऋग्वेद में भी वर्णित किया गया है कि पर्वत कन्दराओं एवं नदियों के पवित्रतम् समागम स्थलों पर विचारशील ऋषियों ने अपने निवास स्थान बनायें-

उपहवरे गिरीणां संगमे च नदिनाम् धियो विप्रो अजायन्त:।।[1]

ऋषि-मुनि भौतिक एवं आध्यामिक प्रकृति के प्रति प्राचीन काल से ही सचेत थे। ऋषि-महर्षियों का यह दृष्किोण ऋग्वेद के सर्वप्रथम मन्त्र में ही दृष्टव्य है, जहाँ अग्नि का प्रारम्भ में ही देव के रूप में वर्णन कर पूजनीय माना है- अग्निमीळे पुरोहितं यज्ञस्य देवमृत्विजं होतारं रत्नधातमम्।।[2]

इस वैभवशाली परम्परा के माध्यम से बोध होता है कि वैदिक काल में इन्द्र, वरुण, सूर्य, उषस्, पर्जन्य आदि सभी प्राकृतिक तत्वों को देवतुल्य मानकर पूजा जाता था। यथा वैदिक साहित्य में सूर्य को चरा-चर जगत् की आत्मा के रुप में परिभाषित किया है- 'सूर्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च।।'[3] तथा यजुर्वेद एवं अथर्ववेद में प्राकृतिक आभा से सुसज्जित पृथ्वी को माता के रुप में सम्बोधित किया है-

पृथिवी माताौष्पिता।।[4] माता भूमि पुत्रौऽहं पृथिव्या।।[5]

प्रस्तुत विवरण से यह ज्ञात होता है कि प्राचीन काल में प्रकृति को ही सर्वोपरि माना जाता था। इसी कथन को स्पष्ट करते हुए यजुर्वेद के षोडशवें अध्याय में पर्यावरण के प्रमुख स्तम्भ वृक्षों के विषय कहा गया है कि शिव वृक्ष, वनस्पति, वन तथा औषधि आदि के स्वामी हैं। शिव कार्बन डाई-आक्साइड (co_2) रूपी विषपान करते हैं एवं ऑक्सीजन (o_2) रुपी अमृत (प्राणवायु) प्रदान करते हैं। संसार को जीवन-रक्षक प्राणवायु (o_2) देने वाले वृक्ष वस्तुतः शिव के ही मूर्त स्वरूप हैं। ये वृक्ष ही पर्यावरण के मूल आधार हैं। अथर्ववेद में भी वृक्षों में चेतनत्व सिद्ध करते हुए कहा गया है कि- महद् ब्रह्म...........येन प्राणन्ति वीरूधः।।[6]

अस्थुर्वृक्षा ऊर्ध्वस्वप्ना:।।[7]

वैदिक-साहित्य के समान लौकिक-साहित्य में भी आदिकवि वाल्मीकि, व्यास, महाकवि कालिदास, भवभूति, बाणभ', तथा दण्डी आदि महाकवियों ने सहृदयों के हृदय को प्रफुलित करने वाले रमणीय काव्यों में पर्यावरण के महत्त्व को प्राचीन काल में ही प्रतिपादित किया है। महाकवि कालिदास ने प्रायः अपनी सभी रचनाओं में पर्यावरण के प्रत्येक पक्ष का अत्यन्त मनोहारी निरुपण प्रस्तुत किया है। यथा अभिज्ञानशाकुन्तलम् के नान्दी प. में भगवान श्री त्रिपुरान्तक साम्बसदाशिव की अष्ट मूर्तियों (जल, अग्नि, यजमान, सूर्य, चन्द्र, आकाश, पृथिवी तथा वायु)[8] का उल्लेख कर अष्टमूर्ति शिव को सम्पूर्ण सृष्टि धारण करने वाले प्रकृति के सर्जक व संहारक देव कहा हैं, जो पर्यावरणीय आभा के प्रमुख प्रतीक हैं।

इसी प्रकार संस्कृत वाङ्मय की यह परम्परा गढ़वाल(हिमालय) परिक्षेत्र में भी सुदीर्घ वैदिककाल से पावन अलकनन्दा के समान निरन्तर प्रवाहित होती आ रही है। वैदिक-साहित्य के गहन अन्वेषण से ज्ञात होता है कि वैदिक ऋषि-मुनियों की तपस्थली एवं शोध-केन्द्र गढ़वाल (हिमालय) की कन्दराएँ ही थी। इसका उल्लेख स्कन्दपुराण में स्पष्ट रुप से प्राप्त होता है, कि जाबालि, गालब, मार्कण्डये, महात्मा च्यवन, तेजस्वी भृगु आदि महर्षियों की तपः सिद्धि का क्षेत्र यही केदारखण्ड(गढ़वाल) रहा है।

इस देव रूपी धरा में संस्कृत साहित्य की दीपशिखा को पुनः विंशति शताब्दी में उद्दीप्त करने का प्रयास संस्कृत साहित्यानुरागीजनों के हृदयसिंहासन पर विरामान सिद्धकवि सदानन्द डबराल ने अपनी विलक्षण काव्य प्रतिभा के माध्यम से किया। इनके द्वारा विरचित् 'नरनारायणीयम्' महाकाव्य प्राकृतिक सौंदर्य से परिपूर्ण एक अकल्पनीय ग्रन्थ है। जिसमें सिद्धकवि के निष्काम भाव व स्वान्तः सुखाय की प्रवृद्धि तथा कवि की विद्वद्या के साथ-साथ काव्य-कौशल भी दृष्टिगोचर होता है। नरनारायणीयम् महाकाव्य में सर्वत्र मानवीय भावनाओं के उच्चतम आदर्श निहित है। यथा विवेकशीलता, दूरदर्शिता, मानवीय मूल्य एवं पर्यावरणीय चेतना इत्यादि।

प्रस्तुत महाकाव्य में सिद्धकवि ने विशाला(बदरीवन) के प्राकृतिक सौंदर्य का अद्भुत वर्णन किया है, जिससे प्रत्येक सहृदयी व प्रकृति प्रेमी को लोकोत्तर आनन्दाअनुभव की प्राप्ति होती है। महाकाव्य में धर्म प्रजापति तथा मातामूर्ति के विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न दो पुत्र नर व नारायण लोककल्याण की भावना से ओतप्रोत भू-वैकुण्ठ विशाला(बदरीवन) में तप हेतु माता के उपदेशों को अनुग्रहीत कर पथ पर अग्रसर होते हैं। बदरीवन के सुरम्य तथा पावन छटा को देख-कर नारायण के मुख से सिद्धकवि ने हिमाछादित हुए पर्वतों का सजीव चित्रण प्रस्तुत किया है। फल-फूल की समृद्धि से सम्पन्न, उठते-गिरते नये-नये बादलों की रमणीय आभा से युक्त एवं पक्षियों के मुख से सुमधुर कूजित ऐसे उच्च शिखरों पर सुपल्वित हुए वृक्षों की रमणीयता को देख-कर नर व नारायण आनन्द का अनुभव प्राप्त करते हैं-

फलप्रसूनादिविभूतिमखि, रूद्धैर्नमुर्निवनीरदाभैः।
कलं क्वणुस्तिरूभिः खगास्यैरलंकृतानुन्नतशृंङरूढैः।।[9]

मेघमालाओं की संलापमयी ध्वनिवृष्टि तथा वि्ुत कटाक्षों से विचलित् किये जाने के प्रयासों में भी अपनी अचलता को न त्यागने वाले अत्यन्त सहनशील विशाला(बदरीवन) के पर्वतों का वर्णन सिद्धकवि ने अपनी काव्य कौशल से सम्पति लेखनी से किया है। सिद्धकवि ने पर्वतों को भी तपोलीन सा प्रस्तुत किया है, तपस्या के आधार होने पर भी वे पर्वत स्वयं तपस्वियों के लिए आदर्श से बन हुए हैं-

शब्दायमानैर्मधुरं विरंङ्गर्ज्जुरूग्रं च महामृगेन्द्रैः।

अधिष्ठितानप्यभितः स्वमौन, व्रतं दुरूच्छेदतमं दधानाम्।।[10]

यहाँ यह ध्वनित है कि साधक अनेक विघ्न-बाधाओं और प्राणघातक विषम स्थितियों में भी अविचल रहते हैं। तप हेतु नर-नारायण को वे पर्वत मानों तपस्या के दृबन्त दे रहे हो। इस प्रकार का वर्णन तप में सन्लीन कोई तपस्वी ही कर सकता है। नरनारायणीयम् महाकाव्य में बदरीवन में पाई जाने वाली अनेक औषधियों का भी वर्णन प्राप्त होता है। औषधि तथा वनस्पति से न केवल पृथ्वी की शोभा बढ़ती है अपितु इस धरा-धाम पर विद्यमान जीवों के लिए भी वे अमृतस्वरूपा है। अतएव वेदों में कहा गया है- प्राणों वै वनस्पतिः।।[11] इसी लिए सिद्धकवि ने भी औषधि तथा वनस्पतियों का सजीव चित्रण कर इन्हें अधिकाधिक बढ़ानें का निर्देश दिया है, जो प्राचीन पर्यावरणीय आधारित चिकित्सा विज्ञान को भी प्रदर्शित करता है-

शक्राग्निसूर्यमदनेन पद्मा, ब्राह्मोशिवाभिश्च हरिप्रियौघैः।

मन्दाररम्भासुतनः समूहैः स्वगर्गायमाणान् वसुभि' सुरभ्या।।[12]

शक्र(इन्द्रः एक वनौषधि), अग्नि(पावकः चित्रकलता), सूर्य(भास्करः आँखो का पौधा), मदन कामदेव(मदनवृक्ष), पद्मा(लक्ष्मीः अचितरा लता), ब्राह्मी(सरस्वतीः ब्राह्मी का पौधा, ठंबवचं डवददपमतपद्धए शिवा(पार्वतीः हरीतकी, Terminalia Chebula), हरिप्रिया(तुलसी के पुंज, Holy Basil), मन्दार(कल्पवृक्ष, Calotropis Gigantea), रम्भा(कदलीवृक्ष, Musa Paradisiaca),

सुमनसगण(मालतीपुष्पत, Rangon Creeper), वसु(बहुमुल्य खनिज) तथा सुरभि आदि अनेकों औषधियों का वर्णन किया गया है।

विशाला नगरी में समुचित पर्यावरण को बताते हुए सिद्धकवि के महाकाव्य में अकल्पनीय तप्तकुण्ड का वर्णन करते हैं, जिसमें स्नान करने से यदि कोई अलौकिक आनन्द की अनुभूति नहीं कर पाता तो उस पुरूष का जीवन व्यर्थ है। प्राकृतिक सौंदर्य से सर्वदा परिपूर्ण कमल नयना अलकनन्दा के तरंग बाहुओं के द्वारा आलिंगिता तथा हिमाद्रि शृंगों द्वारा चारों और से घिरी हुई विशाला दूर से ही दिखाई देने वाले मोक्षार्थीयों के नयनों को सदैव सुख प्रदान करती है-

न तप्तकुण्डोदविगाहनोत्थाम्, न कूर्मधाराम्बुरसोपजाताम्।

ज्ञातुर्मुदं तां जननं गतार्थम्, खगारवैरेवमुदाहरन्तीम्।।

आलापयन्त्या कलपण्डितेन, दृष्टेन कादम्बकुलेन संख्या।

श्रीगंगया तुंगतरंगदोर्भिराश्लिष्यमाणां सरसीरूहाक्ष्या।।[13]

मोक्षप्रदायिनी भगवती अलकनन्दा का वैशिष्ठ्य प्राचीन काल से ही संस्कृत साहित्य में रहा है। यह पतित पावन अलकनन्दा हिमालय से प्रवाहित होती हुए मानव जीवन के सूक्ष्म तथा स्थूल पक्षों को निर्मल कर धनधान्य से समृद्ध बनाती है तथा मोक्ष के पथ पर भी प्रशस्त करती है। सिद्धकवि द्वारा मोक्ष प्रदायिनी भगवती अलकनन्दा का यह सरस वर्णन सुधिजनों का यह अमूल्य संदेश प्रदान करता है कि मानवीय गतिविधियों के कारण इसकी पवित्रता में कमी न हो तथा पर्यावरण के इस अभिन्न अंग का सदैव संरक्षण किया जाए। जिसके विषय में वर्तमान समय में वैज्ञानिक भी चिन्तित है तथा प्रशासन द्वारा अनेक अभिनव प्रयास भी किये जा रहें हैं यथा- स्पर्श गंगा, नमामि गंगे आदि।

इस प्रकार प्राकृतिक चेतनत्व से समृ्ा विशाला की गोद में निर्भय होकर नर और नारायण ने तपस्यार्थ आसन जमायें। महाकाव्य के षष्ठ सर्ग में सिद्धकवि सदानन्द डबराल जी ने महाकवि कालिदास के खण्डकाव्य ऋतुसंहार के समान षड् ऋतुओं का अलौकिक वर्णन किया है। जिससे पाठ्कों का हृदय आन्नदित हो उठता है। महाकवि की भाँति ही सिद्धकवि ने ग्रीष्म ऋतु से यह ऋतु क्रम आरम्भ किया है। वसन्तऋतु के वर्णन में सूर्य का सारथि अरूण हिमालय पर्वत पर भ्रमण करते हुए अनुपम सौन्दर्य से युक्त रम्भा के समीप जाकर मधुर वाणी में कहता है- हे सुदति! हे सखि! देखो बड़ी-बड़ी आँखो वाली रमणियों के साथ धीर गम्भीर वनेचर मृगों की भाँति हिमालय पर्वत पर विचरण कर रहे हैं एवं मणियों के सदृश पत्थर पर रमणियाँ अपने पतियों के साथ विहार कर रही हैं-

भ्रमरसंक्रमसंपल्वकोरकौ, मधुलतासहकारकुटाविव।
इह परस्परमेलनकोलृसत्, करदलौ रदलौल्यरतावुभौ।।
सुदति पश्य कुरंगदृगम्बुजे सफलयाऽऽलि विलोचनदीर्घताम्।
गिरिरपूर्वरमो हिमवानयम निरवधीरवधीरवनेचर:।।[14]

सिद्धकवि सदानन्द डबराल जी ने प्राकृतिक सम्पदा को मानवीयकरण के रूप में चित्रित किया है, जिसके माध्यम से प्रकृति के प्रति जन-मानस की आसक्ति बने एवं उसे प्रकृति के महद्वव का बोध हो सके।

कविवर ने पावन विशालानगरी में पाये जाने वाले वृक्षों का वर्णन कर प्रत्येक काव्यपाठक को उनके संरक्षण तथा संवर्धन का अमूल्य संदेश भी दिया है। क्योंकि कहा गया है कि- 'दशकूपसमा वापी, दशवापीसमो ह्रद:। दशह्रदसम: पुत्र:, दशपुत्रसमो द्रुम:।।'[15] अर्थात दश कुओं के समान एक बावड़ी, दस बावड़ीयों के समान एक तालाब, दश तालाबों के समान एक पुत्र तथा दश पुत्रों के समान एक वृक्ष होता है।

निष्कर्ष-

समग्र संस्कृत वाङ्मय में प्रकृति को देवतुल्य स्थान प्राप्त है। प्राचीन सभ्यता से ही प्रकृति के नाना रूपों यथा- सूर्य, पृथ्वी, नदी, पीपल, गाय आदि की पूजा का विधान भारतीय संस्कृति का अभ्िा अंग रहा है। आधुनिक संस्कृत महाकाव्यों में प्रकृति को मुख्य विषय बनाकर प्रकृति की विस्तृत एवं सजीव विवेचना की गयी है। इसी समृद्ध परम्परा में 'नरनारायणीयम्' महाकाव्य का विशिष्ट स्थान है जिसमें सिद्धकवि ने प्रकृति का सांगोपांग वर्णन प्रस्तुत कर प्रत्येक प्राणधारी को पर्यावरण संरक्षण के प्रति सचेत किया है। प्रकृति चित्रण महाकाव्य का अत्याज्य अंग है। य।पि उक्त ग्रन्थ में सिद्धकवि ने प्राकृतिक सौन्दर्य का ही अधिक वर्णन किया है किन्तु पर्यावरण सम्बन्धी जो मार्मिक चित्रण कविवर द्वारा प्रस्तुत किया गया है उससे प्रत्येक काव्यपाठ्क को पर्यावरणीय चेतना तथा उसके संरक्षण-संमवर्धन की प्ररेणा अवश्य मिलती है। अघ्त: पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से यह ग्रन्थ अत्यन्त ही लाभप्रद व अनुकरणीय है।

संदर्भ सूची-

1. ऋग्वदे 8/6/28
2. ऋग्वदे 1/1/1
3. ऋग्वदे 1/115/1
4. यजुर्वेद 2/10/11
5. अथर्ववेद 12/1/12
6. अथर्ववेद 1/32/1
7. अथर्ववेद 6/44/1
8. अभिज्ञानशाकुन्तलम् 1/1
9. नरनारायणीयम् 2/2
10. वहीं 2/5
11. ऐत० ब्रा० 2/4
12. वहीं 2/16
13. वहीं 2/19-20
14. वहीं 6/6-8
15. मत्स्यपुराण

सन्दर्भ ग्रन्थ-

1. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, डॉ० द्विवेदी कपिलदेव, विश्वविद्यालय प्रकाशन वाराणसी, सप्तम् संस्करण- 2018
2. संस्कृत-साहित्य का इतिहास, शर्मा उमाशंकर, चौखम्बा भारती अकादमी, वाराणसी प्रकाशित वर्ष-2017
3. पर्यावरण एवं वाङ्मय, दिवाकर महेश, अखिल भारतीय साहित्य एवं कला मंच, प्रकाशित वर्ष-2007
4. नरनारायणीयम् महाकाव्य, सिद्धकवि डबराल सदानन्द, सुवीरा प्रकाशन ऋषिकेश, प्रकाशित वर्ष-1993
5. संस्कृत-हिन्दी कोश, आप्टे वामन शिवराम, मोतिलाल बनारसीदास पब्लिशिंग हाऊस दिल्ली, प्रकाशन वर्ष-2021

हिंदी साहित्य में पर्यावरणीय अध्ययन

रिया प्रविन पाहुजा

हिंदी विभाग, श्रीमती कौशल्यादेवी माहेश्वरी महिला महाविद्यालय, नागपुर, महाराष्ट्र, इंडिया

शोध सार-

भारतीय संस्कृति एंव साहित्य में पर्यावरण को आदिकाल से ही प्रमुख स्थान दिया गया है और प्रकृति के पंच महाभूतों पृथ्वी, जल,अग्नि, वायु और आकाश के संतुलन पर ही मानव-जीवन को आधारित मानकर आहार-विहार से पर्यावरण को जोड़ा गया है, जन्म से लेकर मरण तक मानव का जीवन 'पर्यावरण' से गहरे रूप से जुड़ा रहता हैं। 'पर्यावरण-सरंक्षण' एंव विकास को लेकर भारतीय धर्म, दर्शन, संस्कृति समाज और साहित्य सदैव जागरूक रहे है।

हमारी धरती माता ब्रह्मांड का सबसे मूल्यवान उपहार है। 'प्रकृति' की रक्षा ही मानवजाति के भविष्य के विकास की कुंजी है, प्रकृति की रक्षा करना हर व्यक्ति का कर्तव्य और दायित्व होता है। 'पर्यावरण' की समझ का महत्व यहीं दिखाई देता है। हमारे पर्यावरण के ह्रास का संबंध विकास की प्रक्रिया से तथा पर्यावरण संतुलन के प्रति जनता के अज्ञान से है। सच तो यह है कि विश्व का कोई भी नागरिक पर्यावरण से संबंधित प्रश्नों से उदासीन नहीं रह सकता इसलिए यह आवश्यक है कि पर्यावरण पर पड़नेवाले हर एक प्रभावों को हमें समझना होगा ताकि दीर्घकाल तक प्रकृति के जिन संसाधनों की हमें आवश्यकता है, वे हमें मिलते रहे।

बीज शब्द- पर्यावरण विमर्श, पर्यावरण-असंतुलन, जागरूकता, विषाक्त स्वछता एंव पवित्रता, पोलिथिन, औद्योगिकीकरण

प्रस्तावना- पर्यावरण में उपस्थित प्राणवायु गैस ऑक्सीजन मानव के लिए प्राणदायक है। हम सब श्वास द्वारा ऑक्सीजन लेते है और कार्बन डाई ऑक्साइड गैस बाहर निकालते है। इसी गैस को पेड़-पौधे अपना भोजन बनाने के लिए उपयोग में लाते है और हमें आक्सीजन लौटा कर हमारी रक्षा करते है। प्रकृति की यह बहुत ही सुंदर व्यवस्था है कि प्रकृति जो कुछ भी एक ओर से लेती है वह दूसरी ओर से लौटा देती है जिससे वातावरण में आवश्यक संसाधनों का संतुलन बना रहता है। पर्यावरण में वायु के साथ-साथ जले, पृथ्वी, जीव-जंतु, वनस्पति, तथा अन्य प्राकृतिक संसाधन भी शामिल होते है। ये सभी मिलकर हमारे लिए संतुलित पर्यावरण की रचना करते है। 'पर्यावरण' शब्द का अर्थ अत्यंत ही व्यापक है। इसके अंतर्गत पूरा ब्रह्मांड समाया हुआ है। साधारण अर्थ में कहै तो 'परि' का अर्थ होता है 'हमारे चारों ओर' और 'आवरण' का अर्थ हुआ 'ढकना' या 'घेरा' अर्थात प्रकृति में हमारे चारों तरफ जो कुछ भी तत्व फैला हुआ है जैसे वायु, जल, पेड़-पौधे तथा जीव-प्राणी आदि वह सभी तत्व पर्यावरण के अंग है। इन्हीं से पर्यावरण की रचना होती है। प्रकति का मानव के साथ अटूट और अन्योन्याश्रय संबंध है मानव शरीर का निर्माण भी प्रकृति के ही इन पांच तत्वों से मिलकर हुआ है। प्रकृति से आवश्यक तत्वों का संकलन करके, प्रकृति शरीर का निर्माण करती है और जीवन के अंत होने के बाद उन तत्वों को पुनः प्रकृति को लौटा देती है।

तुलसीदास जी ने रामचरितमानस के 'किष्किन्धाकाण्ड' मैं लिखा है-

"क्षिति जल पावक गगन समीरा, पंच तत्व से बने सरीरा"

अर्थात पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि और वायु से मिलकर हमारा शरीर निर्मित हुआ है।[१]

हिंदी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति को हमेशा विशिष्ट स्थान मिला है। प्रकृति का वर्णन अनेकों वर्षो से, सभी काल में, कविता, कहानी, उपन्यास, के माध्यम से किया जाता रहा है? साहित्य और प्रकृति का संबंध पुराना है। पर्यावरण सरंक्षण के नाम पर समस्त संसार के लिए प्रेरणास्त्रोत राजस्थान के खेजड़ीली गाँव में खेजड़ो के वृक्षों को बचाने हेतु बिश्नोई समाज के 363 नर-नारियों ने अपने प्राणों की आहुति दे दी थी। जिससे श्चिपको आंदोलन को प्रेरणा मिली।

परिभाषा

पर्यावरण शब्द दो शब्दों परि एंव आवरण के योग से बना है जिसका अर्थ है वह वातावरण जो हमें चारों ओर से ढके हुए है। पर्यावरण को समस्त भूमंडलीय विरासत और सभी संसाधनों की समग्रता के रूप में परिभाषित किया जाता है। इसमें वे

सभी जैविक और अजैविक तत्व आते है जो एक दूसरे को प्रभावित करते है।

"आक्सफोर्ड शब्दकोश ने पर्यावरण के स्वरूप को परिभाषित करते हुए कहा है कि "वह प्राकृतिक संसार जो भूमि, वायु और जमीन के बीच अंतसबंधों के साथ- साथ अन्य जीवों, पौधों, सूक्ष्म जीवो और संपदाओं के बीच अंतरसबंधो को सम्मिलित किए रहता है।"

इस प्रकार हम कह सकते है कि पर्यावरण वह आवृत्त है जिससे जीवन घिरा हुआ है।

उद्देश्य

पर्यावरण अध्ययन का उद्देश्य बहुआयामी और व्यापक है, इसके लिए हमें पर्यावरण के विभिन्न पहलुओं को समझना आवश्यक है।

१. पर्यावरण को सुरक्षित रखने के लिए हमें अपनी अनेक गतिविधियों को नियंत्रित करना होगा।

२. पर्यावरण हमारे जीवन का आधार है इसलिए उसका संरक्षण करना हमारा कर्तव्य है।

३. हमें यह भी समझना होगा कि पर्यावरण के सभी घटक (जैविक एंव अजैविक) सुरक्षित रहेंगे तभी हम भी सुरक्षित रह सकेंगे।

आधुनिक प। साहित्य में पर्यावरण चिंतन

हिंदी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति को विशिष्ट स्थान मिला है। प्रकृति का वर्णन अनेको वर्षो से सभी काल में, कविता, कहानी, उपन्यास के माध्यम से किया जाता रहा है। साहित्य और प्रकृति का संबंध बहुत पुराना है। हड़प्पा सभ्यता सिंधुनदी है आदि कवि वाल्मीकि को काव्य प्रेरणा क्रांच जोड़े को देखकर मिली थी, कालीदास की संपूर्ण रचना प्रकृति की गोद से ही जन्मी, विरह का बारहमासा द्वारा प्रकृति का चित्रण, उसी प्रकार हिंदी के महान आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने ग्रंथो अशोक के फूले, शिरीष के कूलश आदि मे प्रकृति का वर्णन किया है। आज की कविताओं में पर्यावरण के रमणीय दृश्यों के साथ-साथ प्रकृति में होनेवाली प्राकृतिक विपदाओं का भी हदय विदारक चित्र अंकित किया गया है। आधुघनिक काल के महाकाव्य श्कामायनी में जयशंकर प्रसाद ने कामायनी के चिंता सर्ग में प्रकृति के महानाश की कथा कहकर उपभोग के प्रति हमें आगाह किया है।

आधुनिक ग। साहित्य में पर्यावरण चिंतन

20 वीं व 21 वीं शताब्दी पर्यावरण चिंतन के हिसाब से जागरूकता की कसौटी पर सफल प्रतीत होती जान पड़ती है। जहाँ न सिर्फ साहित्य बल्कि अनेक स्तरों पर पर्यावरणीय चेतना दिखाई देती है। पर्यावरण को लेकर जो आधुनिक चिंतन हुआ है उसका विस्तार हमें हिंदी साहित्य में भी प्राप्त हुआ है। समकालीन उपन्यासों में भी इन समस्याओं पर विचार विमर्श हुआ है। समकालीन हिंदी उपन्यासों में भी उपन्यासकारों ने ऐसे उपन्यास लिखे है जो पर्यावरण चिंतन संबंधी आधुनिक प्रश्नों को उठाते है। जैसे भगवती शरण मिश्र का उपन्यास लक्ष्मण रेखा, नासिरा शर्मा का "कुइयां जान", शांता कुमार का उपन्यास "वृंदा', महुआ माझी का उपन्यास 'मरंग घोड़ा, नीलकंठ हुआ", अनुपम मिश्र का "राजस्थान की रजत बुँदे", पंकज चतुर्वेदी का "जल मांगता जीवन" आदि उपन्यासों में पर्यावरण को लेकर गंभीर चिंतन दिखाई देता है। पर्यावरण का विषय केवल प्रदूषण तक सीमित नहीं है। इसका सबसे प्राथमिक पहलू प्राकृतिक संसाधनों के स्वत: घटित पारस्परिक संतुलन की रक्षा है।

साहित्य में पर्यावरण के विविध क्षेत्र

१. प्राकृतिक पर्यावरण

भारतीय सभ्यता- संस्कृति का लंबा दौर प्रकृति की पावन गोद में ही विकसित हुआ है जिसमे शुद्ध वायु, खुले आकाश, अखण्ड हरीतिमा एंव निर्मल जलधारा के साहित्य में हमारी चिंतन-धारा को अनुप्राणित करनेवाले ग्रंथ रचे गए। पंकज चतुर्वेदी ने भी अपने साहित्य पर्यावरण का मूल आधार जल माना है जो हमारे जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है और किस तरह, हम उसे खोते जा रहे है। वे कहते है "जल और जीवन एक दूसरे के पूरक है। प्रकृति के हर कोने में प्रत्येक जीव-जंतु, वनस्पति में जल अत्यावश्यक घटक है। जल जीवन का आधार है।"[२]

२. मानव निर्मित पर्यावरण

मानव का प्रथम कर्तव्य होता है की वह प्रकृति की रक्षा करें परंतु आज का मनुष्य अपने स्वार्थ व विकास के लिए प्रकृति को भूलता जा रहा है। विडंबना यह है कि मनुष्य की भौतिक सुख, बढ़ती लालसा और कथित विकास की अवधारणा एक भयानक समस्या को जन्म दे रही है। मानव ये भूल गया है की अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति का संरक्षण न करना एक गंभीर समस्या को जन्म दे सकता है, जंगल की अंधाधुंध कटाई से वर्षा कम हो गई है, नदियां सुखने लगी है, तालाब तो गायब से हो गए है। इस प्राकृतिक विपदा से बचने के लिए अब हमारा मानव समाज जागृत हो रहा है, अब लोग प्रकृति को बचाने के लिए अपनी पुरानी परंपराओं को अपना रहे है। भारत के लोग प्रकृति के संग जीने के आदी है और नैसर्गिकता के करीब जीवनयापन करने की सीख उन्हें उनकी संस्कृति देती है।

३. सामाजिक पर्यावरण

पंकज चतुर्वेदी के अनुसार "भारत में पर्व केवल सामाजिक अनुष्ठान नहीं है, बल्कि वे प्रकृति के संरक्षण का संकल्प और कृतज्ञता ज्ञापित करने का अवसर होते हैं।"[३] भारत देश में सभी प्रकार के पर्व मनाये जाते है। जिसमें सामाजिक आस्था और पर्यावरण का महत्वपूर्ण स्थान है। गणेश स्थापना, दुर्गा पूजा, दिपावली, होली यह त्यौहार भारत में मनाए जाने वाले त्यौहार है जो भारतीय संस्कृति की परंपराओं के प्रतीक माने जाते है ये त्यौहार प्राचीन समय में धूम-धाम से रीति-रिवाज, खान-पान और पर्यावरण को ध्यान में रखकर ही मनाए जाते थे। आज के मानव जिंदगी में पर्व के मायने बदल चुके है अब त्योहारों में पर्यावरण, समाज और संस्कृति का क्षय होता है।

पर्यावरण संरक्षण के उपाय एंव परियोजनाएं

१. सामाजिक प्रयास

प्रकृति और पर्यावरण को संरक्षित और सुरक्षित रखना समाज की प्रथम जिम्मेदारी है। पर्यावरण के प्रति लोगों को हमेशा जागरूक रहना चाहिए। इसके लिए सबसे पहले में पानी को प्रदुषित होने से बचना होगा। क्योंकी जल है तो जीवन है। कारखानों, सीवरेज और घरों की नालियों से निकले पानी को नदियों और समुद्र में जाने से रोकना होगा। जंगलो को काटने से बचाना होगा और सभी जनसमुदाय को ज्यादा से ज्यादा पेड लगाने के लिए प्रेरित करना होगा, उसी के साथ आवश्यकता के अनुसार ही बिजली का उपयोग करें यह समाज की जिम्मेदारी है।

२. सरकारी परियोजनाएँ

हवा, पानी, पेड़ इन तीनों में से यदी एक भी न हो तो मानव जीवन का अस्तित्व ही नहीं रहेगा। ये तीनो ही एक दुसरे के पूरक मने जाते है इसलिए किसी भी एक की कमी से पूरी मानव जाति के अस्तित्व पर संकट खड़ा हो सकता है। इसलिए इनका संरक्षण जरुरी है यही वजह है की भारत समेत पूरी दुनिया विश्व पर्यावरण को लेकर काफी गंभीर है और इनके जतन और संरक्षण के लिए कई नीतियां और योजनाएं बना रही है।

३. गैर सरकारी परियोजनाएं

हमारे देश में कई सरकारी और गैर सरकारी संगठनो ने पर्यावरण संरक्षण, के लिए कार्य किया है। उन्होंने पर्यावरण संरक्षण, प्रकृति एंव प्राकृतिक संसाधनों के रख रखाव में बढ़ती रूचि के लिए नेतृत्व किया है। पुरे विश्व और भारत में पर्यावरण को इसकी दुर्दशा से बचाने के लिए इस क्षेत्र में बहुत सारी संस्थाएं और गैर सरकारी संगठन है जो कार्य कर रहे है।

इसी तरह पर्यावरण के प्रति हमारा यह कर्तव्य बनता है कि हम विकास के हर कदम पर पर्यावरण की सुरक्षा का दायित्व भी उठाएं।

निष्कर्ष

समाज में नैतिक मूल्यों का पतन हो गया है तथा समाज में असुरक्षा, अशांति, अव्यवस्था व्याप्त है। आज हम सब मानसिक स्तर से प्रदूषित हो गये है। यदि मानवता को भावी संकट से उबारना है तो साहित्य व पर्यावरण के इस संबंध को जीवन की

प्रक्रिया वा अनिवार्य अंग बनाना होगा ताकि मानवता और मानव मूल्यों की रक्षा हो सकें। साहित्य ने हमेशा इस बिन्दु पर प्रकाश डाला है कि जिस तरह मनुष्य युद्ध करना सीखता है उसी तरह वह शांति से रहना भी सीख सकता है। इसके लिए साहित्य व पर्यावरण के अटूट संबधो को बनाये रखना होगा और प्रतिपल यह अनुभव करना होगा कि मानव पर्यावरण की उपज हैं और साहित्य मानव की गतिविधियां हैं, जो उसे वातावरण की समीपता से प्राप्त होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. तुलसीदास, 1633, रामचरितमानस, 2/236/3
2. नासिका शर्मा, 2005, कुइयाँजान, सामयिक प्रकाशन
3. पंकज चतुर्वेदी, 2016, जल मांगता जीवन, आधार प्रकाशन, हरियाणा
4. पंकज चतुर्वेदी, 2018, लोक आस्था और पर्यावरण, परिकल्पना, दिल्ली
5. समकालीन हिंदी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, सम्पादक- डॉ. ए. ऐस सुमेष
6. अप्रैल-जून-2008, प्रगतिशील वसुधा, पत्रिका

शहरीकरण और पर्यावरण

डॉ० स्मृति कुमारी सिंह

सहायक प्राफेसर, सोफिया महाविद्यालय (स्वायत), मुंबई

शोध सारांश

आज के आधुनिक युग में निरंतर गांव से लोगों का पलायन शहरों की तरफ हो रहा है। गांव की तुलना में शहरों में रोजगार के साथ-साथ उच्च जीवन स्तर एवं आधुनिक सुख-सुविधा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है। जिसके कारण गांव से लोगों का पलायन शहरों की तरफ बढ़ता जा रहा है। शहरों की बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण लोगों की माँग की पूर्ति के लिए वनों को काटकर कल-कारखानों की स्थापना की जा रही है। पेड़ों को धरले से काटे जाने के कारण पर्यावरण प्रदूषित होता जा रहा है। प्रदूषण कई प्रकार के होते हैं। जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि। इसके कारण लोग को विभिन्न प्रकार की बीमारियों से ग्रसित हो रहे हैं और कई बार लोग और जानवर मौत के मुंह में भी जाने को विवश हो रहे हैं। पर्यावरण के बिगड़ते पारिस्थितिक-तंत्र का प्रभाव आदिवासी समुदाय पर भी प्रत्यक्ष रूप से पर रहा है। वनों के काटे जाने से प्रकृति पर मूल रूप से निर्भर रहने वाले आदिवासी अपना जीवन-निर्वाह नहीं कर पा रहे हैं। आदिवासी अपने पूर्वजों एवं प्रकृति को ही अपना भगवान मानते हैं। जंगलों की सफाई से आदिवासी अपने भगवान को खोते जा रहे हैं। वनों के काटे जाने से अनेक पशु-पक्षी विलुप्त होते जा रहे हैं। बढ़ती शहरीकरण से पर्यावरण पूरी तरह से प्रभावित हो रही है।

बीज शब्द- पलायन- गांव-शहर- पेड़ों की कटाई- प्रदूषण- आदिवासी- पूर्वज- प्रकृति- रोकथाम।

शहरीकरण और पर्यावरण

प्रस्तावना:

"वक्त का ये परिंदा रुका है कहां
मैं था पागल जो इसको बुलाता रहा
चार पैसे कमाने में आया शहर
गांव मेरा मुझे याद आता रहा"[1]

"कई बच्चे बड़े हुए इस घर में
गिरते पडते आखिरकार
खाने-कमाने की खोज में तितर- बितर होते हुए
यहां कुछ मौतें भी हुई।
कुछ स्त्रियां रोई इस तरह
कि बस इनका सुबकना सुनाई दे
कुछ बहुत पुरानी चीज अब भी बजती है घर में।"[2]

गांव से शहरों की तरफ लोगों का पलायन आज एक विकट समस्या के रूप में सामने प्रकट होता जा रहा है। आज गांव से लोग अपनी पुरानी पुश्तैनी संपत्ति, अपने लोगों को, अपने वृद्ध माता-पिता, एवं सभी को छोड़कर शहरों की ओर रुख बड़ी तेजी से करते जा रहे हैं। इसका मुख्य कारण रोजगार की विभिन्न एवं नए अवसर की उपलब्धता गांव की तुलना में शहरों में ज्यादा है। इसके साथ ही आधुनिक जीवन में निजी परिवारों की संख्या में बढ़ोतरी, उच्च जीवन स्तर, उज्जवल भविष्य की कामना आदि भी इसके प्रमुख कारण हैं। कारण जो भी हो पर यह सत्य है कि आज गांव की संख्या कम और शहरों की संख्या दिनों दिन बढ़ती जा रही है। शहरों की संख्या में बढ़ोतरी और शहरों में बढ़ते लोगों के कारण पर्यावरण पर इसका सीधा प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है।

पर्यावरण अंग्रेजी के 'Environment' शब्द का हिंदी रूपांतरण है। पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ होता है- परि + आवरण=पर्यावरण। परि का अर्थ होता है- चारों ओर और आवरण का अर्थ होता है- घेरा हुआ अर्थात चारों ओर से घिरा हुआ या ढका हुआ। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि हमारी पृथ्वी के चारों ओर जिस आवरण घिरा हुआ या फैला हुआ है उसे ही हम 'पर्यावरण' कहते हैं।

विभिन्न विद्वानों ने अपने-अपने अनुसार पर्यावरण को परिभाषित किया है:-

"पृथ्वी माता की धूल तथा पितृ- तुल्य आकाश का प्रकाश मंगलमय हो, सूर्य अपने पूर्ण तेज के साथ अपने अंश से जुड़ा रहे।"[3]

"Environment isAn eternal power which influences ने".[4]

लगातार शहरों में जनसंख्या में वृद्धि होती जा रही है। इसका सीधा प्रभाव हमारे पर्यावरण पर पड़ रहा है। बढ़ती हुई जनसंख्या के लिए मानव की मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान की पूर्ति के लिए लगातार पेड़ों को काटा जा रहा है। जंगलों का सफाया किया जा रहा है। जंगलों के खातमे के कारण बहुत से पशु-पक्षी विलुप्त होने की कगार पर हैं और कई हो चुके हैं। जिसका खामियाना न केवल वर्तमान पीढ़ी उठा रही है, बल्कि आने वाली पीढ़ियां भी इसका खामियांजा भुगतने को विवश होगी। जहां कल हरे-भरे खेत खलियान हुआ करते थे। वहां आज बड़े-बड़े कल कारखाने बनते जा रहे हैं। इन बढ़ती हुई जनसंख्याओं की मांग की पूर्ति के लिए इन कल- कारखानों को खोला जा रहा है। इतना ही नहीं इन कल-कारखानों से निकलने वाला जहरीला धुआं संपूर्ण वातावरण को प्रदूषित करता जा रहा है। पर्यावरण को प्रदूषित करने में वाहनों से निकलने वाला धुआं भी कम प्रभावित नहीं करता है। इन कारखानों से निकलने वाला गंदा पानी नदियों, तालाबों, झीलों आदि में बड़े धड़ल्ले से छोड़ दिया जाता है, जिससे शुद्ध पेयजल में लगातार कमी आती जा रही है। इन अशुद्ध पानी को पीकर अनेक बेजुबान जानवर एवं मनुष्य बीमार पड़ रहे हैं और कई मर भी रहे हैं।

शहरीकरण एवं बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण पर्यावरण अनेक प्रकार से प्रदूषित होती जा रही है यथा- जलवायु, ध्वनि, जैव, प्रदूषण आदि। जल प्रदूषण औद्योगिक रसायन, वाहित मल- मूत्र, रसायन, घरेलू अपशिष्ट, कूड़ा करकट आदि के कारण फैलता है। वायु प्रदूषण कारखाने से निकलने वाले धुएं में aSO_2 सांसों के लिए बहुत खतरनाक होता है। मोटर गाड़ियों से निकलने वाले धुएं से CO_2 स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होता है। मृदा प्रदूषण खेतों में इस्तेमाल किए गए रसायनों, मल, अपशिष्ट आदि के कारण होता है। जिसका प्रभाव पशुओं, पेड़- पौधों, वनस्पतियों एवं मानवों पर पड़ता है। आज बढ़ती हुई विभिन्न प्रकार के प्रदूषण विश्व संपूर्ण विश्व के लिए एक बहुत बड़ी समस्या बनकर खड़ी हो गई है। प्रदूषण के कार्य कारण हमारी संपूर्ण पर्यावरण विनाश की तरफ लगातार अग्रसर है।

वनों के काटे जाने से हमारे संपूर्ण आदिवासी समुदाय पर भी इसका बुरा प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। ये आदिवासी आज भी पूरी तरह से अपने जीवन निर्वाह के लिए प्रकृति पर ही निर्भर करते हैं। उनकी जीवनकोपार्जन का स्रोत पशु- पालन, खेती, मत्स्य-पालन, बाँस की चीजें बनाना, आदि है। वनों के सफाई होने से इनका आय श्रोत पूर्णत: नकारात्मक रूप से प्रभावित हो रहा हैं। इतना ही नहीं, इन आदिवासियों के देवी-देवता भी ये प्रकृति एवं उनके पूर्वज होते हैं। प्रकृति के विनाश का अर्थ उनके लिए अपने भगवान को खोने के बराबर है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि जहां एक ओर हमारी आबादी का एक हिस्सा सुख-सुविधा से आबाद हो रही है, वहीं दूसरी ओर हमारी आबादी का एक हिस्सा अपने वर्तमान सुख- सुविधा एवं अपनी पहचान खोती जा रही है।

बढ़ती शहरीकरण के कारण हमारी पूरी स्थिति के तंत्र बुरी तरह से प्रभावित हो रही है ज्यादा जमीन की जरूरत को पूरा करने के लिए पैरों के काटे जाने के कारण वर्ष अनियमित रूप से होती होने लगी है कभी बहुत बारिश के कारण बाढ़ की स्थिति उत्पन्न हो जाती है तो कभी सुख की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

निष्कर्ष:

इस विनाश को रोकने के लिए यह बहुत जरूरी है कि पर्यावरण के लिए जन चेतना लाई जाए। पर्यावरण संरक्षण के लिए अनेक समाधानों के साथ-साथ बढ़ती शहरीकरण को भी रोकना होगा। इसके लिए पलायन करने वाले लोगों के लिए उनके ही स्थान पर रोजगार के बेहतर से बेहतर अवसर प्रदान करने होंगे, जिससे उनकी मूलभूत सुविधाओं के साथ-साथ, उन्हें एसो-आराम भी मिल सके और वे उज्जवल भविष्य की ओर अग्रसर हो सके।

सन्दर्भ:

क्र. सं. लेखक का नाम प्रकाशन वर्ष पुस्तक का नाम प्रकाशक का नाम प्रकाशक का स्थान

१ https://deshmere.blogspot.com/2009/10/waqt-ka-ye-parinda-ruka-hai-kahan.html

२ मंगलेश डबराल २०१७ मध्यकालीन एवं आधुनिक काव्य- पृष्ठ सं-६५-६६ वाणी प्रकाशन नई दिल्ली

३ सुधा सिंह २०११ पर्यावरण शिक्षा, पृष्ठ सं- ११ लोकभारती प्रकाशन नई दिल्ली

४ सुधा सिंह २०११ पर्यावरण शिक्षा, पृष्ठ सं- १३ लोकभारती प्रकाशन नई दिल्ली

''उचित जल प्रबन्धन न होने से पहाड़ों में जल की हानि''

महेन्द्र सिंह राणा

शोधकर्ता, रा0इ0का0 सिलोगी, पौड़ी गढ़वाल उत्तराखण्ड

परिचय वर्तमान समय में पहाड़ी से जिस प्रकार पलायन हो रहा है व कृषि योग्य भूमि पर खेती नही कि जा रही है, इसका उत्तराखण्ड के सामाजिक, पर्यावरण तथा स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है। विगत सात-आठ वर्षो से आस पास के गाँवों के अध्ययन से ज्ञात किया गया कि जिन खतो पर पहले अनाज उगाया जाता था। वो खेत आज बजंर है। इसका पहाड़ी के भौगोलिक वातावरण तथा जैव मण्डल पर काफी दुष्प्रभाव पड़ रहा है।

खेती करने पर प्रभाव

- जिन खेतों में पहले अच्छी फसल होती थी उन खेतो पर समय-समय पर हल चला करते थे जिस कारण खेत की नमी बनी रहती थी।

- मिट्टी की उवर्रक शक्ति अच्छी थी। बरसात में खते मिट्टी के छोटे-छोटे कणों द्वारा पानी सोखते रहते थे व भूमि का जल स्तर भी अच्छा बना रहता था। इसके साथ ही खेतों में विभिन्न प्रकार के कीट पतंगें रहते थे।

- जो कि जैव मण्डल को स्वस्थ रखते थे व खेतों में कैचुऐं, टिड्डे, गुबरेला, साप, चुहे आदि जीव जन्तु सन्तुलन बनाने का कार्य करते थे।

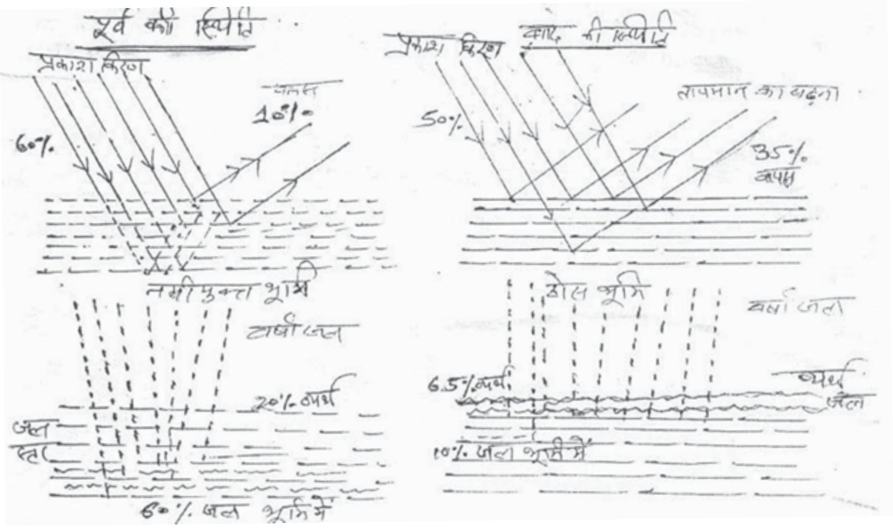

- गर्मीयों में सूर्य की तजे किरणें खेतों की सतह में बने छोटे-छोटे छिद्रो से भूमि की मिट्टी में समा जाती थी व वापस लौट कर बहुत कम मात्रा में आ पाती थी। जिससे वायु मण्डल का तापमान भी सन्तुलित रहता था, इसी प्रकार खेतों में अनाज बोने पर अनाज के साथ-साथ उगने वाली घास पशुओं के चारा के रूप प्रयागे किया जाता था। जिससे पशुओं को पोष्टिक अहार प्राप्त होता था। व दूध देने वाले पशुओं के दूध में आवश्यक तत्व भी भरपूर मात्रा में रहते थे। इस दूध का सेवन करने वाले ग्रामीणों का स्वास्थ्य भी अच्छा रहता था। कृषि छोडने से पर्यावरण पर दुष्प्रभाव
- मैने पाया कि जबसे लोगों ने खेतों में अनाज बोना बन्द कर दिया तो वो ही खेत जहां भरपूर अनाज होता था उन खेतों की मिट्टी सुखने लगी है।
- काफी दिनों तक हल नही चलने से मिट्टी के कण धीरे-धीरे एक साथ मिलकर सख्त हो गये है जिस कारण बरसात में पानी जमीन के भीतर प्रवेश नही कर पाता क्योंकि पानी के रिसने के लिए मिट्टी के कणों के बीच छिद्र बन्द हो गये थे।

- पानी का स्तर भी धीरे-धीरे कम हाने लगा व खते सुखे हो गये जमीन की उपरी सतह काफी कठोर व सपाट हाने लगी। अब इस जमीन पर सूर्य की किरणे पडने पर ज्यादा भाग वापस वायुमण्डल में लाटे ने लगा जिससे कि वातावरण का

तापमान भी काफी बढ़ जाता है क्योंकि प्रकाश कि किरणों को भूमि में प्रवेश करने के लिये छोटे–छोटे छिद्र नही मिल पाते और वो वापस वायुमण्डल मे लौट जाता है।

- जिस भूमि में पहले हरी घास व अन्य चारा उगता था वहाँ अब सूखी झाड़ी या विषेली घास उगती है। जिस कारण पशुओं को चारा नही मिल पाता व उनके दूध में पोष्टिकता कि कमी हाने लगी। इसका सीधा प्रभाव ग्रामीणों पर पड़ रहा है।

सर्वेक्षण

- इस का विभिन्न अध्ययनों के पश्चात देखा गया कि सात–आठ वर्ष पर्वू व आज के वातावरण में काफी अन्तर हैं। जहाँ कुछ वर्ष पूर्व मई-जून में ठंड का एहसास होता था वहीं आज मार्च आते मौसम का तापमान बढ़ जाता है।

कारण

- इसका प्रभाव जंगलों की आग पर भी पड़ रहा है क्योंकि पहले जंगल में दूर-दूर तक हरियाली व खेती होती थी जोकि आग व जंगली जानवरों को आग बढ़ने से राके ती थी। सूखी घास हाने के कारण वनाग्नि गांव-गांव तक पहुँच गई है।
- समय रहते हमने उत्तराखण्ड के खेतो को उपजाऊ नही किया तो कुछ वर्षो बाद शहरों की अपेक्षा गांव मे जल संकट, पर्यावरण असन्तुलन, मानव जन्तु, संर्घष आदि अनेक समस्या उत्पन्न हो जायेंगी।

पर्वू की स्थिति

बाद की स्थिति

- इसका प्रभाव उत्तराखण्ड के ग्रामीणों के स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है।
- कृषि करने मोटा अनाज, दालें, सब्जी, फल आदि प्राप्त होती थी जिससे की उनका जीवन स्वस्थ व सन्तुलित रहता था।
- आज कल ग्रामीण ज्यादातर अनाज, फल, सब्जियां, दूध आदि अनेक खाने पीने की वस्तुऐं बाजार से ही ला रहे है जिसमें कि मिलावट अशुद्वियां अधिक मात्रा में होती है जिसका ग्रामीणों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ रहा है।
- मैनें स्वयं गावं-गांव जाकर वहां की स्थिति देखी व वहां के स्थानीय लोगों से उनके अनुभव से जानकारी प्राप्त की तो अन्तर स्पष्ट दिखाई दिया स्थानीय ग्रामीणों से जानकारी एकत्रित की गयी।
- अत: हमें उत्तराखण्ड के पर्यावरण व समाजिक स्तर को अभी से ध्यान में रखना होगा नही तो भविष्य में स्थिति और भी भयावह व चिन्ताजनक हो जायेगी।

जल समस्या

जहां एक और सम्पूर्ण विश्व जल की समस्या से ग्रसित है। वहीं हम उचित जल प्रबन्धन न हाने से पहाड़ों में प्रतिवर्ष हजारों लीटर शुद्ध जल बरबाद कर दते है।

बरसात के मौसम में स्थानीय लोगों द्वारा जल प्रबन्धन किया जा तो वर्ष भर के लिए जल संचय किया जा सकता हैं तथा गर्मियों के मौसम में जल समस्या से बचा जा सकता है। हमने अपने क्षेत्रों के गावों का सर्वेक्षण किया तो पाया कि बरसात में प्राकृतिक जल स्रोते शुद्ध जल से लबालब रहते हैं, निरंतर दिन रात प्रवाहित हाते रहते हैं, जिससे लाखों ली0 जल प्रतिमाह बर्बाद होता रहता है।

सिलोगी में जल समस्या हमने सिलोगी कडथ़ी, भुवरसैंण, जसपुर, ग्वील आदि अनेकों गावों का सर्वेक्षण किया तो पाया कि ग्रामीणों द्वारा प्राकृतिक जल स्रोते का उचित प्रबन्धन नही किया जाता जिससे हजारों ली0 जल व्यर्थ हो रहा है।

- सिलोगी में परिवारों की कुल संख्या–लगभग 65
- सदस्यों की संख्या–लगभग 350
- प्रतिदिन औसतन पानी की आवश्यकता–50 से 60 ली0
- प्राकृतिक जल स्रोत से प्रतिदिन व्यर्थ जल की मात्रा– लगभग 72000 ली0

यदि हम इस जल का सही संचय या प्रबन्धन कर दते तो ये ही जल पूरे सिलोगी गावं को वर्षभर के लिए पर्याप्त था। जिससे कि गर्मियों व सूखे के समय हमें जल की समस्या से नही जूझना पड़ेगा।

जल संरक्षण की आवश्यकता पर्वतीय क्षेत्रों में जल का मुख्य स्र्रोत वर्षा आधारित जल हैं। जल कृषि और औद्योगिक क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण स्रोत हैं। पर्यावरण में हुए विपरीत परिवर्तनों के कारण प्राकृतिक जल स्र्रोत सूखते जा रहे है। जिसके तहत जल की उपलब्धता एवं संरक्षण का महत्वपूर्ण यागे दान हैं।

- प्रदेश का भौगोलिक क्षेत्रफल- लगभग 51 लाख हे0
- वर्ष भर में स्थल ओसतन वर्षा- 124 सेमी
- वर्षा जल का संरक्षण प्रतिशत- 0.68 प्रतिशत जल संरक्षित कर ली जाने से हमारी पेयजल की आवश्यकता तथा वर्षा जल का 2.36 प्रतिशत भाग संरक्षित कर ली जाने से सिंचाई की आवश्यकता पूरी हो जायेगी।

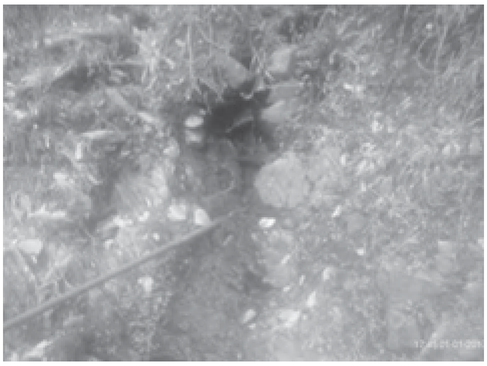

प्रदेश में जल की आवश्यकता कुल वर्षण के 3.86 प्रतिशत संरक्षित कर लिये जाने से पूर्ण हो जायेगा। अत: जल संरक्षण के विभिन्न विधियों के क्रियान्वयन हेतु स्थानीय लोगों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। जल संरक्षण की विधियां-

जल संरक्षण के अनेक महत्वपूर्ण विधियां है जिनमें स्थलीय या संभरण या सतही अवपाह जल संभरण है। यह स्थान के अनुसार अपनायी जा सकती है।

- खेतों की मेड़ों पर झाड़ी का रोपण तथा मेड़ों का निमार्ण।
- पवर्ततीय क्षेत्रों में कृषि भूमि में मुख्य समस्या भू- क्षरण तथा नमी संरक्षण की कमी तथा मृदा की कम गहरायी का होना है। ऐसी स्थिति में मेड़ों का निर्माण तथा खेतों पर घास- झाड़ी का रापेण करके व जल के प्रभाव को धीमा किया जा सकता है। इससे मृदा संरक्षित होगी, भूमि क्षरण से बचाव और भू जल का रिचार्ज होगा।
- मेंड़ों पर घासों के रोपण से चारा उत्पादन मिलेगा।
- संतुलित आरे सतत् पर्यावरण के विकास में इस तकनीकि का महत्वपूर्ण यागे दान होगा।

यह तकनीकि कृषकों के लिए सरल व सस्ती है। समोच्च रेखीय खन्तिया एवं फर्रो का निर्माण साधारणतया पर्वतीय क्षेत्रों में अकृषि भूमि मेंमृदा एवं जल संरक्षण के लिए समाच्चे रेखीय खन्तियां खोदी जाती है जिससे खन्तियां ढ़लान पर अपवाह

के प्रभाव को कम कर लेती है। तथा जल का अधिकतर भाग गहर मृदा के परतों में समा जाता है। यह मुख्यत: 0.30मी0 गहरी / चौड़ी तथा 3 मी0 की खन्तियां होती है। जब कि ढलान के क्षत्रे ों में 0.50 मी0 गहरी / चौड़ी तथा 3 मी0 लम्बाई की खन्तियां उपयोगी होती है। यह सभी प्रकार के जल संरचनाओं में अपवाह को राके ने में प्रभावशाली तकनीक है।

जीवित कन्टूर मेड़ों का निमार्ण

भूमि पर समान उंचाई के विभिन्न बिदुंओं को आपस में जोड़ने वाली रेखाओं पर यदि मेड़ों का निर्माण कर उसमें स्थानीय प्रजाति के घास एवं झाड़ियों का रोपण किया जाय तो पानी की अधिकतम मात्रो को मिट्टी में संरक्षित किया जा सकता है। चाल–खाल का संरक्षण एवं निर्माण पर्वतीय क्षेत्रों में जहां ढाल टूटकर एक मैदान सा निर्मित हो जाता है चाल–खाल का निर्माण किया जा सकता है। इसमें वर्षाकाल का एकत्रित जल जानवरों को पिलाने व सिंचाई आदि के लिए उपयोग किया जाता है। पुराने चाल– खाल का मलबा, घास आदि की सफाई कर जीर्णोद्वार किया जा सकता है। जिसमें जल संरक्षित हो सके।

नौले व धारे का संरक्षण व निर्माण

पर्वतीय क्षेत्रों में पेयजल का अधिकांश भाग नौले/ धारे से प्राप्त होता है। वर्तमान में कला और तकनीकि से अभूतपर्वू पारंपरिक निर्माण की साफ–सफाई व संरक्षण के द्वारा हम अपनी जल आवश्यकताओं को पारू कर सकते है। हमें समय–समय पर नौले व धारों का पुर्न:निर्माण करना चाहिए।

रिचार्ज पिट

नौला में जलवृद्धि हेतु नौला के जल ग्रहण क्षत्रे में 1 x 1 x 1 मीटर साईज के रिचार्ज पिट खोदे जाते है पिट खादे ने के बाद सर्वप्रथम पिट में 30- 40 मिलिमीटर साईज के पत्थर के टुकड़े 25 सेमी उंचाई तक भरे जाते है। उसके बाद 25 सेमी उचांई तक बालू भरी जाती है। तत्पश्चात 50 सेमी उंचाई तक 100-15 मिलीमीटर साईज के पत्थर भरे जाते है। इस प्रकार रिचार्ज पिट तैयार किया जाता है।

कच्चे तालाब निर्माण

कृषि क्षत्रों में अपवाहित जल का भडांर करने के लिए या तो भूमि बन्धों द्वारा या तालाब खोदकर वर्षा जल संचय एक प्रभाावशाली तकनीकि है। हमें अपने क्षत्रों में ऐसे स्थान चिन्हित कर जहां पर मिट्टी चिकनी हो तालाबों का निर्माण प्राते साहित करना चाहिए, 5 x 3 x 1 .5 मी0 कच्चे तालाब में लगभग 20-25 हजार लीटर वर्षा जल संग्रहण किया जा सकता है।

रेन रूफ टॉप वॉटर हारवेस्टिंग टैंक वर्षा जल को संग्रह करने हेतु छत के पानी को एक टेकं बनाकर एकत्रित किया जा सकता है। इसका उपयागे किचन, गार्डन के साथ- साथ घरेलू उपयोग में किया जाता है।

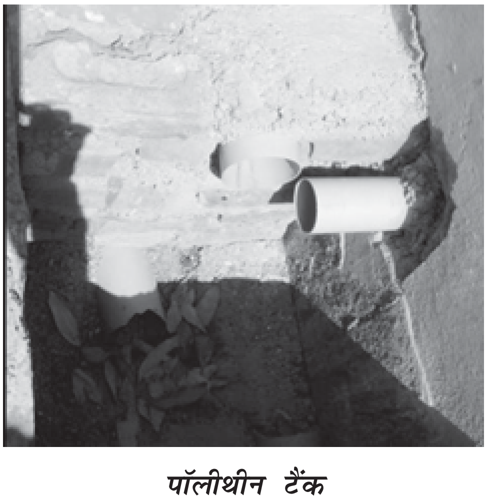

पॉलीथीन टैंक

वर्षा जल एकत्रित करने का एक स्राते पॉलीथीन टैंक है थोड़ी तस्त्रीनुमा ढाल वाले स्थान पर 5 x 4 x 1.5 मी0 का 1: 1.5 के ढाल पर खुदाई उपरांत इसके अंदर की दीवारों व तल पर एक सार पॉलीथीन सीट बिछाने पर इसमें लगभग 16 हजार ली0 जल संग्रहण किया जा सकता है। गली प्लग एवं चौक डेम

ये संरचानायें भूक्षरण राके ने के लिए गली में बनायी जाती है, ये संरचानाये अपवाह एवं राके गये जल का 0.5 से 1.0 मी0 गहरायी तक भंडारण करती है। जो प्रत्येक संरचना के आकार पर निभर्र करता है। ये सचं रनायें वर्षा के मौसम में बहने वाले पानी को कई बार संचय करते है।

इन्ट्रीगेटेड फार्मिंग सिस्टम बेस्ड मल्टीपरपज वाटर हार्वेस्टिंग टैंक

राष्ट्रीय कृषि विकास याजे ना के अंतर्गत सचं ालित इस परियाजे ना का उद्देश्य जल संरक्षण टैकों का उपयोगी सिंचाई के साथ-साथ मत्स्य पालन तथा मुर्गी पालन ईकाईयो को बढ़वा देकर किसानों के लिए अतिरिक्त आय सृजन करना है। टैंको का निर्माण मत्स्य पालन टैंक, चौक डेम टैक, मुर्गी पालन, पाली हाउस की स्थापना ड्राई लेंड हॉर्टीकल्चर के अंतर्गत पौध रोपण नैपियर घास रौपण आदि है।

सर्वेक्षण

जल की बहुतायत वाले भू भाग में नालो ओर नदियो का विस्तृत जाल फैला हुआ हैं। उत्तराखंड राज्य के 11 पहाड़ी जिलों में काली नदी से लेकर टौसं तक भागीरथी, भिंलगना, मंदाकिनी, अलकनंदा, पिंडर, रामगंगा, धौली, जैसी बड़ी नदियां है जिसके विशाल जल ग्रहण क्षत्रे है। इसके अतं र्गत छोटे- छोटे पनढाल है जिन्हैं 1103 सूक्ष्म जलागम क्षत्रे ों के रूप में चिन्हित किया गया है।

जिलावार सूक्ष्म जलागम		
क0	जनपद	सूक्ष्म जलागमों की संख्या
1	चमोली	150
2	रूद्रप्रयाग	45
3	टिहरी	133
4	उत्तरकाशी	147
5	पौड़ी	127
6	देहरादून	98
7	बागे वर	62
8	अल्मोड़ा	105
9	पिथौरागढ़	124
10	चम्पावत	27
11	नैनीताल	82

जलागम विकास के प्रमुख बिंदु

- भूमि की क्षरण और मिट्टी के कटाव को रोकना
- भूमि एवं जल स्रोतों का मूल अवस्था में पुर्नस्थापना।
- प्राकृतिक जल स्रोतों का संरक्षण व विकास एवं भू- जल भंडारों का पुर्नभरण।
- पारिस्थितिक संतुलन कायम करने के लिए हरित आवरण जैव संपदा वृद्धि।

		उत्तराखंड में पेयजल आपूर्ति					
क.		जनपद	पेय जल योजनाओं से आच्छादित गांव			अवशेष	योग
			आबाद	गैर आबाद	आंशिक		
1		चमोली	2379	1	27	1	2408
2		रूद्रप्रयाग	1171	0	16	2	1189
3		टिहरी	3915	12	324	31	4282
4		देहरादून	1810	1	104	3	1918
5		पौडी	3818	2	22	18	3860
6		उत्तरकाशी	1037	0	0	0	1037
7		हरिद्वार	530	0	0	0	530
8		पिथौरागढ़	3899	0	74	5	3978
9		चम्पावत	4161	0	45	13	1519
10		अल्मोड़ा	4736	1	138	22	4897
11		बागेवर	1865	0	83	8	1956
12		नैनीताल	2302	0	75	4	2381
13	नगर	ऊधमसिंह	1053	0	0	0	1053
		योग	29976	17	908	107	31008

निश्कर्श उत्तराखडं में औसतन वर्षा- 1300 मिलीमीटर 53484 वर्ग किमी क्षेत्रफल में फैले13 जिलों में प्रतिवर्ष ओसतन 1300 मिलीमीटर वार्षिक वर्षा के आधार पर 6952 करोड़ घन जल बरसता है। जिसमें से लगभग 3000 कराड़े घनमीटर जल बिना उपयागे के बह जाता है यदि इसका 2.5 प्रतिशत भी संग्रहित कर लिया जाय तो पीने के लिए पर्याप्त पानी के अलावा पूरी कृषि भूमि तथा व्यवसायिक कार्यों के लिए भरपूर पानी प्राप्त हो सकता है। अत: हमें बरसात के मौसम में हाने वाली वर्षा जल को जितना हो सके संरक्षित करना चाहिए तथा विभिन्न उपायों को अपनाना चाहिए। इससे हमारे पीने तथा कृषि संबन्धी आवश्यक कार्यो की पूर्ति हो जायेगी, जो कि उचित जल प्रबन्धन से ही संभव है।

संदर्भ

- हमारा पर्यावरण- गांधी शांति प्रतिष्ठान, दिल्ली।
- उत्तराखडं पये जल संसाधन विकास एवं निर्माण निगम।
- राजीव गाधीं राष्ट्रीय पेयजल मिशन की रिपोर्ट।
- सांख्यिकी पत्रिका गढ़वाल एवं कुमाउं मंडल।
- उत्तराखडं में भूमि उपयोग-सांख्यिकी पत्रिका।
- उत्तराखडं में जल संसाधन प्रबन्धन-डा0 भगवती प्रसाद पुरोहित।

पर्यावरणीय नैतिकता

डॉ० हेमन्त कुमार सिंघल

पीजीटी भौतिकी, शिक्षा भारती ग्लोबल स्कूल, द्वारका, नई दिल्ली

शोध आलेख: पर्यावरण दर्शन में पर्यावरण नैतिकता व्यावहारिक दर्शन का एक स्थापित क्षेत्र है जो आवश्यक प्रकार के तर्कों का पुनःनिर्माण करता है जो प्राकृतिक संस्थाओं की रक्षा और प्राकृतिक संसाधनों के स्थायी उपयोग के लिए किए जा सकते हैं। पर्यावरण नैतिक दर्शन शास्त्र का वह भाग है जो मानव और प्राकृतिक पर्यावरण के बीच नैतिक संबंधों को समझता है यह आवश्यक है कि मनुष्य को प्रकृति के साथ सद्भाव में जीना सिखाना चाहिए प्रकृति परी तंत्र के बीच संतुलन को बनाए रखने के लिए विभिन्न घटकों के बीच विभिन्न प्रक्रियाओं जिनमें स्वांगीकरण एवं पुनः चक्रीकरण शामिल है संतुलित होना चाहिए लेकिन बढ़ती मानव जनसंख्या के द्वारा संसाधनों के अतिदोहन के कारण प्राकृतिक संतुलन विगड़ जाता है। प्रौद्योगिकी के इस्तेमाल और आर्थिक विकास के कारण पारिस्थितिकीय समस्याओं की वृद्धि होती है। आर्थिक उन्नति की प्राप्ति पर्यावरण की कीमत पर मिलती है। जिसके कारण प्रदूषण में बढ़ोत्तरी जैव विविधता में कमी एवं आधारभूत संसाधनों की अत्यधिक गरमी हो जाती है। नैतिक मूल्यों या आचारों की भूमिका महत्वपूर्ण होती है क्योंकि यह किसी भी विकासात्मक प्रक्रियाओं की शक्ति एवं कमजोरियाँ होती हैं जैसे वनोन्मूलन बांध का निर्माण खनन आर्दभूमि से पानी का निकास इत्यादि। बहुत से नैतिक निर्णय लिये गये हैं कि मनुष्य को अपने पर्यावरण के प्रति सद्भावना बनाए रखने की जरुरत है।

संकेत शब्द: पर्यावरण नैतिकता, प्रौद्योगिकी, आर्थिक विकास, नैतिक मूल्यों एवं आचारों

प्रस्तावना: पर्यावरणीय नीतिशास्त्र व्यावहारिक दर्शनशास्त्र की एक शाखा है जिसके अंतर्गत आसपास के पर्यावरण के संरक्षण से संबंधित नैतिक समस्याओं का अध्ययन किया जाता है। अर्थात् मनुष्य एवं पर्यावरण के आपसी संबंधों का नैतिकता के सिद्धांतों एवं नैतिक मूल्यों के आलोक में अध्ययन किया जाता है। मुख्यतः मनुष्य के उन क्रियाकलापों का नैतिक आधार पर मूल्यांकन किया जाता है जिससे पर्यावरण प्रभावित होता है। नेचर पत्रिका के अनुसार पर्यावरणीय नीतिशास्त्र व्यावहारिक दर्शनशास्त्र की एक शाखा है जिसके अंतर्गत पर्यावरणीय मूल्यों की आधारभूत अवधारणाओं के अध्ययन के साथ-साथ जैव विविधता एवं पारिस्थितिकी तंत्र के संरक्षण एवं उसे बनाए रखने के लिये आस-पास के सामाजिक दृष्टिकोण, कार्य एवं नीतियों जैसे मुद्दों का अध्ययन किया जाता है।''

पर्यावरणीय नैतिकता: पर्यावरणीय नैतिकता इस विश्वास पर आधारित है कि मनुष्य के साथ-साथ पृथ्वी के जैवमंडल में निवास करने वाले विभिन्न जीव-जंतु, पेड़-पौधे भी इस समाज का हिस्सा हैं। अमेरिकी विद्वान एल्डो लियोपोल्ड (Aldo Leopold) का मानना है कि सभी प्राकृतिक पदार्थों में मूल्य अंतर्निहित होते हैं, इसलिये मानव द्वारा दावा किये जा रहे सभी अधिकार, सभी प्राकृतिक पदार्थों पर भी लागू होते हैं तथा मानव को उनका सम्मान करना चाहिये। पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित मुद्दे प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोगः प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग एवं अत्यधिक दोहन से पर्यावरण में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो रही है। क्योंकि मानव प्रकृति का हिस्सा है, अतः प्रकृति के साथ सहयोग एवं समन्वय स्थापित करके प्राकृतिक संसाधनों का धारणीय उपयोग किया जा सकता है। वनों का विनाशः बड़े-बड़े उद्योगों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों की स्थापना हेतु वनों की अंधाधुंध कटाई की जा रही है। इसके अलावा कृषि के लिये भी वनों का सफाया किया जा रहा है। वनों के विनाश से न केवल गरीब एवं जनजातीय लोगों जो कि आजीविका हेतु वनों पर निर्भर रहते हैं, पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है बल्कि जैव विविधता में भी कमी आ रही है। निर्वनीकरण के कारण पशु-पक्षियों के निवास स्थान समाप्त हो रहे हैं। अतः वनों का संरक्षण पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित है। पर्यावरण प्रदूषण विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा मिल रहा है। इसका सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव गरीब एवं वंचित वर्गों पर पड़ रहा है। प्रदूषण जैसी मानवीय गतिविधियाँ प्राकृतिक श्रृंखला में व्यवधान डालती हैं तथा संतुलन की स्थिति को असंतुलित कर देती है। मानव पर्यावरण का महत्त्वपूर्ण घटक है, अतः मानव का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह पर्यावरण को प्रदूषित न होने दे। इक्विटी प्राकृतिक संसाधनों पर सभी का समान अधिकार है, परंतु आंशिक रूप से मजूबत लोगों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का अधिकांश दोहन एवं दुरुपयोग किया जा रहा है, जबकि अन्य गरीब एवं वंचित लोग इनका उपभोग नहीं कर पा रहे हैं। पशु अधिकार जीव-जंतुओं एवं पौधों का भी प्राकृतिक संसाधनों पर मानव के समान अधिकार है। अतः नैतिकता के आधार पर मानव को प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग रोकना चाहिये। पशु कल्याण की भावना पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित है, क्योंकि पशु भी प्राकृतिक पर्यावरण में रहते हैं, अतः पशुओं के अधिकारों का भी संरक्षण होना चाहिये। पर्यावरणीय नैतिकता को बनाए रखने के उपाय अमेरिकी विद्वान एल्डो लियोपोल्ड (Aldo Leopold) ने 'भूमि नैतिकता'(Land Ethics) की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने

कहा कि हमें भूमि को संसाधन मात्र समझने के विचार को रोकना/त्यागना होगा। वस्तुतः भूमि का अभिप्राय केवल मृदा नहीं है, बल्कि भूमि ऊर्जा का प्रवाह प्रदान करती है जिसमें मृदा के साथ-साथ जीव-जंतु एवं पौधे पनपते हैं। अतः भूमि को संसाधन मानकर इसके दुरुपयोग को रोकना होगा तथा भूमि का संरक्षण करना होगा। पृथ्वी पर मानवीय एवं गैर-मानवीय कल्याण एवं समृद्धि स्वयं में एक मूल्य है। यह मूल्य मानवीय उद्देश्यों के लिये गैर-मानवीय जीवन की उपयोगिता से स्वतंत्र है। प्राकृतिक संसाधनों की समृद्धि एवं विविधता का स्वयं में ही मूल्य है, अतः मानव को यह समझना होगा कि इनके दोहन का अधिकार इसे नहीं है। मानव जीवन एवं संस्कृति की समृद्धि के लिये जनसंख्या को नियंत्रित करना भी आवश्यक है। गैर-मानव जीवन की समृद्धि के लिये भी जनसंख्या में कमी करने की आवश्यकता है। आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग को रोककर संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है। पर्यावरण संरक्षण की पारंपरिक गतिविधियों को व्यवहार में लाने की आवश्यकता है। मार्शल की 'संरक्षण नैतिकता' की श्रेणी गैर-मानवीय जैविक दुनिया में उपयोग-मूल्य का विस्तार है। यह केवल मनुष्यों के लिए इसकी उपयोगिता या उपयोगिता के संदर्भ में पर्यावरण के मूल्य पर ध्यान केंद्रित करता है। यह 'गहन पारिस्थितिकी' के आंतरिक मूल्य विचारों के विपरीत है, इसलिए इसे अक्सर 'उथले पारिस्थितिकी' के रूप में जाना जाता है, और आम तौर पर इस आधार पर पर्यावरण के संरक्षण के लिए तर्क दिया जाता है कि इसका बाहरी मूल्य है- जो मानव कल्याण के लिए महत्वपूर्ण है। इसलिए संरक्षण अंत का एक साधन है और यह पूरी तरह से मानव जाति और अंतर-पीढ़ीगत विचारों से संबंधित है। यह तर्क दिया जा सकता है कि यह वह नैतिकता है जिसने 1997 में क्योटो शिखर सम्मेलन में सरकारों द्वारा प्रस्तावित अंतर्निहित तर्कों और 1992 में रियो पृथ्वी शिखर सम्मेलन में हुए तीन समझौतों का निर्माण किया।

स्वतंत्र भारत में पर्यावरण नीतियां तथा कानूनः

भारतीय संविधान जिसे 1950 में लागू किया गया था परन्तु सीधे तौर पर पर्यावरण संरक्षण के प्रावधानों से नहीं जुड़ा था। सन् 1972 के स्टॉकहोम सम्मेलन ने भारत सरकार का ध्यान पर्यावरण संरक्षण की ओर खिंचा। सरकार ने 1976 में संविधान में संशोधन कर दो महत्त्वपूर्ण अनुच्छेद 48 ए तथा 51 ए (जी) जोड़ें। अनुच्छेद 48 ए राज्य सरकार को निर्देश देता है कि वह 'पर्यावरण की सुरक्षा और उसमें सुधार सुनिश्चित करे, तथा देश के वनों तथा वन्यजीवन की रक्षा करे'। अनुच्छेद 51 ए (जी) नागरिकों को कर्तव्य प्रदान करता है कि वे 'प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा करे तथा उसका संवर्धन करे और सभी जीवधारियों के प्रति दयालु रहे'। स्वतंत्रता के पश्चात बढते औद्योगिकरण, शहरीकरण तथा जनसंख्या वृद्धि से पर्यावरण की गुणवत्ता में निरंतर कमी आती गई। पर्यावरण की गुणवत्ता की इस कमी में प्रभावी नियंत्रण व प्रदूषण के परिप्रेक्ष्य में सरकार ने समय-समय पर अनेक कानून व नियम बनाए। इनमें से अधिकांश का मुख्य आधार प्रदूषण नियंत्रण व निवारण था।

भारत में पर्यावरण संबंधित कानूनों का निर्माण उस समय किया, गया था जब पर्यावरण प्रदूषण देश में इतना व्यापक नहीं था। अतः इनमें से अधिकांश कानून अपनी उपयोगिता खो चुके हैं। परन्तु अभी भी कुछ काननू व नियम पर्यावरण संरक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं

पर्यावरणीय स्वास्थ्य नैतिकताः पर्यावरणीय स्वास्थ्य नैतिकता के छह प्रस्तावित सिद्धांत। स्थिरता, उपकार, गैर-नुकसान, न्याय, समुदाय और एहतियाती प्रतिस्थापन के नैतिक सिद्धांत एक रूपरेखा प्रदान करते हैं। जिसका उपयोग पर्यावरणीय रसायनों के मूल्यांकन के लिए किया जा सकता है। यह ढांचा पारंपरिक लागत-लाभ विश्लेषण से परे सिंथेटिक यौगिकों के बारे में निर्णय लेने की अनुमति देता है तकनीकी प्रगति जीवन को सुरक्षित और अधिक सुविधाजनक बनाती है। दुर्भाग्य से, इनमें से कई प्रगति संवेदनशील व्यक्तियों और सार्वजनिक स्वास्थ्य, पर्यावरण और अन्य प्रजातियों और पारिस्थितिक तंत्रों की लागत के

साथ आती हैं। उपभोक्ता उत्पादों में सिंथेटिक रसायन लाभ और बोझ दोनों की जटिलता का एक सर्वोत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। यह महत्वपूर्ण है कि विभिन्न दृष्टिकोणों को ध्यान में रखा जाए ताकि मनोभ्रंश की रोकथाम के लिए षसिल्वर बुलेटष दृष्टिकोण से बचा जा सके, जैसा कि औषधीय हस्तक्षेपों के साथ हुआ है। जिस प्रकार मनोभ्रंश के जोखिम कारकों पर शोध के लिए स्वास्थ्य न्याय पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार सक्रिय अनुसंधान पर भी ध्यान देना चाहिए जिसका उद्देश्य समाज को स्वस्थ और निष्पक्ष बनाना है।

निष्कर्ष: पर्यावरणीय नैतिकता का सम्बन्ध प्राकृतिक पर्यावरण के साथ मनुष्यों के नैतिक समबन्धों से है यह इस तथ्य को प्रकट करती है कि पृथ्वी पर उपस्थित सभी जीवों को जीवन जीने का अधिकार प्राप्त है। प्रकृति को नष्ट करके, हम सभी जीवों के जीवन जीने के इस अधिकार को अस्वीकृत कर रहे हैं। यह कार्य अन्यायपूर्ण और अनैतिक है। न केवल अन्य मनुष्यों, बल्कि प्रत्येक जीव का सम्मान करना और उनके जीने के अधिकार को स्वीकृति प्रदान करना हमारा कर्तव्य है। भारत संसार के उन थोडे से देशों में से एक है जिनके संविधानों में पर्यावरण का विशेष उल्लेख है। भारत ने पर्यावरणीय कानूनों का व्यापक निर्माण किया है तथा हमारी नीतियाँ पर्यावरण संरक्षण में भारत की पहल दर्शाती हैं। पर्यावरण संबंधी सभी विधेयक होने पर भी भारत में पर्यावरण की स्थिति काफी गंभीर बनी हुई है। नाले, नदियां तथा झीलें औद्योगिक कचरे से भरी हुइ हैं। दिल्ली में यमुना नदी एक नाला बनकर रह गई है। वन क्षेत्र में कटाव लगातार बढता जा रहा है जिसके परिणाम हमें हाल ही में बिहार में आई भीषण बाढ़ के रूप में स्पष्ट देखने को मिलता है। भारत में जिस प्रकार से पर्यावरण कानूनों को लागू किया जा रहा है उसे देखते हुए लगता है कि इन कानूनो के महत्त्व को समझा ही नहीं गया है। इस दिशा में पर्यावरण नीति (2004) को गंभीरता से लागू करने की आवश्यकता है। पर्यावरण को सुरक्षित करने के प्रयासों में आम जनता की भागीदारी भी सुनिश्चित करने की जरूरत है।

पर्यावरण संरक्षण में न्यायपालिका ने भी एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके प्रयासों से स्वच्छ पर्यावरण मौलिक अधिकार का एक महत्त्वपूर्ण अंग बन गया है। दिल्ली में प्रदूषित इकाइयों की बंदी तथा स्थानांतरण, सी.एन.जी का प्रयोग, ताजमहल को प्रदूषण से बचाना, पर्यावरण को शैषणिक पाठ्यक्रम का अनिवार्य अंग बनाना तथा संचार माध्यमों के द्वारा पर्यावरण के महत्त्व का प्रचार-प्रसार आदि न्यायपालिका के सराहनीय प्रयासों की एक झलक है। जनहित याचिकाओं ने पर्यावरण संरक्षण की दिशा में गैर-सरकारी संगठनों, नागरिक समाज तथा आम आदमी की भागीदारों को प्रोत्साहित किया है। यह इसके प्रयासों का ही फल है कि आज सरकार तथा नीति निर्माताओं की सूची में पर्यावरण प्रथम मुद्दा है तथा वे पर्यावरण संरक्षण के प्रति गंभीर हो गये हैं। पर्यावरणीय नैतिकता पृथ्वी के पर्यावरण की रक्षा करने और पर्यावृणीय गिरावट को द्र करने के उद्देश्य से सामाजिक नीतियों के लिए नैतिक आधार प्रदान करती है। इसीलिए यह देखा जा सकता है कि पर्यविरणीय नैतिकता में हमारे बीच पारिस्थितिक चेतना शामिल है।

सन्दर्भ:

1. ओट, कोनराड (2020)। "पर्यावरण नैतिकता"। किरचॉफ में, थॉमस (सं.)। ऑनलाइन विश्वकोश प्रकृति का दर्शन / ऑनलाइन लेक्सिकॉन नेचरफिलोसोफी। डीओआई: 10.11588/ओईपीएन.2020.0.71420।
2. माउटनर, माइकल एन. (2009)। "जीवन-केंद्रित नैतिकता, और अंतरिक्ष में मानव भविष्य" (पीडीएफ)।जैवनैतिकता।23(8): 433-440।doi:10.1111/र.1467-8519.2008.00688.x।पीएमआईडी19077128.एस2सीआईडी25203457।
3. "क्रिश्चियन एड के अनुसार, निकट भविष्य में जलवायु परिवर्तन के पीड़ितों की संख्या लाखों में होने का अनुमान है"। 2008-08-07 को मूल से संग्रहीत। 2008-08-04 को पुन:प्राप्त.
4. "ग्लोबल वार्मिंग से हजारों लोग मारे जा रहे हैं"। वायर्ड। 11 दिसंबर 2003- www-wired-com के माध्यम से। [[cite magazine]]: अज्ञात पैरामीटर पर।agency=ध्यान नहीं दिया गया (सहायता)
5. माउटनर, माइकल एन. (2000)। ब्रह्मांड में जीवन का बीजारोपण: हमारे ब्रह्मांड संबंधी भविष्य को सुरक्षित करना (पीडीएफ)। वाशिंगटन डीसी: लिगेसी बुक्स। आईएसबीएन 0-476-00330-एक्स.
6. स्टीफन, विल (2015)। "ग्रहों की सीमाएँ: बदलते ग्रह पर मानव विकास का मार्गदर्शन" (पीडीएफ)।
7. व्हाइट, लिन (मार्च 1967)। "हमारे पारिस्थितिक संकट की ऐतिहासिक जड़ें"। विज्ञान। 155 (3767): 1203-1207। बिबकोड: 1967विज्ञान...155.1203डब्लू। डीओआई: 10.1126/विज्ञान.155.3767.1203। पीएमआईडी 17847526। एस2सीआईडी 8076858।

पर्यावरणीय शिक्षा-एक परिचय

डॉ० लेखा पी

Associate Professor, PRNSS College, Mattanur (PO) Kannur, Kerala

शोध सारः-

पर्यावरण अध्ययन सामाजिक एवं प्राकृतिक संबंधों का अध्ययन है। आधुनिक काल परिवर्तन का काल है। इस कारण से कई प्रकार की समस्याएं दैनिक जीवन में उत्पन्न होना स्वाभाविक है। इसलिए छात्रों को पर्यावरण अध्ययन एक विषय के रूप में पढ़ाना भी अत्यंत आवश्यक है। पर्यावरण संरक्षण के पूर्व प्रदूषण के कारणों पर विचार करना और जाँचना अनिवार्य है। राष्ट्रीय नीति 1986 के अनुसार- "पर्यावरणीय के प्रति जागरूकता पैदा करने की बहुत जरूरत है और यह जागरूकता बच्चों से लेकर समाज के सभी आयु वर्गों और क्षेत्रों में फैलनी चाहिए। पर्यावरण के प्रति जागरूकता विद्यालयों और कॉलेजों की शिक्षा का अंग होना चाहिए। इससे शिक्षा की पूरी प्रक्रिया में समाहित किया जाएगा"[1]

पर्यावरण संरक्षण के लिए 'पर्यावरण संतुलन' का संचालन करना अनिवार्य है।

बीज शब्दः- प्राकृतिक पर्यावरण, सामाजिक पर्यावरण, प्रदूषण, संरक्षण, संतुलन

मूल आलेखः-

हमारे चारों ओर के वातावरण जिसमें वायु, जल, धरती आदि से संपूर्ण प्राकृतिक वातावरण है। इस वातावरण का संरक्षण हमारे जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है। पर्यावरण प्रदूषण सबसे बड़ा और मुख्य कारण वैज्ञानिक प्रगति है। दूसरा कारण जनसंख्या विस्फोट है। प्राकृतिक प्रदूषण में प्रमुख है जल प्रदूषण, वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण आदि।

पर्यावरण संरक्षण के लिए जनमानस में इसके प्रति जागरूकता उत्पन्न करना चाहिए। शिक्षा पाठ्यक्रमों में पर्यावरण विषयक सामग्री को शामिल कराना, पर्यावरण पुरस्कारों की स्थापना, पर्यावरण संरक्षण कार्यशाला, पर्यावरण प्रबंध पर प्रशिक्षण आदि पर्यावरण शिक्षण के अंतर्गत रखा जा सकता है।

एक अच्छा पर्यावरण और जीवन पृथ्वी पर जीवन की उत्पत्ति एक अच्छा पर्यावरण का नतीजा है। पर्यावरण संतुलन न होने पर भूमि पर जीवन का अस्तित्व बनाए रखना संभव नहीं। एक अच्छे एवं उचित पर्यावरण के लिए कई बातों पर ध्यान रखना चाहिए। "समस्त जीवित एवं अजीवित एक दूसरे को प्रवाहित करते हैं जिसे हम पर्यावरणीय संतुलन कहते हैं"।[2]

आवास की उचित व्यवस्था, पर्याप्त जल लभ्यता, स्वास्थ्यवर्धक पर्यावरण, पोषक आहार की उपलब्धि, मनोरंजन एवं स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त सुविधाएं आदि अच्छे पर्यावरण के लिए अनिवार्य हैं।

प्राकृतिक संपदाओं का संरक्षणः-

किसी भी राष्ट्र के विकास में प्राकृतिक संपदाओं का योगदान महत्वपूर्ण हैं। पानी, भूमि, भोजन, खनिज, ऊर्जा आदि संपदाओं का अति उपयोग एवं शोषण दोनों पर्यावरण के लिए अहितकर है। "छोटी-छोटी बूंदों को इकट्ठा होने पर एक समुद्र बनता है"।[3]

प्राकृतिक संपदाओं को बचाए रखना पर्यावरण संरक्षण का पहला कदम है। भूमि संरक्षण, जल संरक्षण व्यक्ति संपदाओं का बचाने का मार्ग है।

विकास की अंधी प्रवृत्ति ही पर्यावरण को असंतुलित कर रही है। इसी का परिणाम बाढ़, भूस्खलन, चक्रवात आदि घटनाएं बढ़ने लगी है। प्राकृतिक आपदाओं से नुकसान की कमी के लिए संयुक्त राष्ट्र ने एक अंतरराष्ट्रीय प्राकृतिक आपदा न्यूनीकरण दशक के रूप में (1990-1999) मनाया है।

मानव के सामने आने वाले संकट को प्राकृतिक, मानव जनित- दो रूप में वर्गीकृत कर सकते हैं। प्राकृतिक में भूकंप, भूस्खलन, शैलपात, समुद्री तूफान, जंगल की आग, बाढ़, सूख, अकाल, सुनामी आदि कई रूपों में हैं। मानव जनित संकट में तकनीकी संकट, भोपाल गैस त्रासदी और चेरनोबिल दुर्घटना आदि आते हैं।

"राष्ट्रीय आपदा न्यूनीकरण दिवस के आयोजन का उद्देश्य जनता में प्राकृतिक आपदाओं और उनके दुष्प्रभाव के बारे में जागरण कथा पैदा करना तथा उन्हें इनसे निपटने के लिए तैयार रखकर नुकसान को कम कम से कम करना है"।[4]

प्रकृति और मानव का अटूट रिश्ता है, जो आदिकाल से अनवरत रहा है। प्रकृति और मानव के बीच के उपादान के कारण संपूर्ण जीवन पूर्ण हुआ है। प्रकृति हित के लिए जीने वाले आदिमानव से आधुनिक मानव बिलकुल भिन्न है। प्रकृति को नष्ट करने के परिश्रम में असफलता केवल मनुष्य को ही होती है। "पर्यावरणीय अध्ययन मानव जीवन की विभिन्न समस्याओं के कारण पर प्रकाश डालते हुए उसे समाधान भी स्वयं ही सुझाता है। उनका हल ढूंढने के लिए हमें भी प्रेरित करता है तथा वर्तमान के इस विज्ञान के प्रगतिशील एवं परिवर्तनशील युग में मानव अपना सुखद जीवन यापन कर सकें"।[5]

शशि शेखर व्यास के अनुसार- "शिक्षा के माध्यम से अब हमें पर्यावरण का अध्ययन मात्र नहीं करना है, बल्कि अबला, वृद्ध सभी को विभिन्न स्तरों से पर्यावरण की रक्षा के लिए कृत संकल्प बनाना है। इस हेतु औपचारिक शिक्षा के प्रारंभिक स्तर से उच्चतम स्तर तक पर्यावरण के रक्षण की बात पर्यावरण अध्ययन विषय के अंतर्गत रखी जानी चाहिए"।[6]

निष्कर्ष:-

मानव जीवन में प्राकृतिक, सामाजिक और मानवीय तत्वों का समान महत्व है। तकनीकी का उपयोग एवं विकास का प्रभाव इसमें काफी पड़ता है। पारिस्थितिक तंत्र जीवधारी और उनके वातावरण दोनों से मिलकर बना होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1) पर्यावरण अध्ययन शिक्षण- डॉ. के. जी. जांगिड, शंकर लाल कसवां, तरुण प्रकाशन, प्र.संस्करण- 2011, पृ.169
2) पर्यावरण- सी. रंजन- विनोद बुक सेंटर, प्र.सं.- 2008- पृ.10
3) पर्यावरण संरक्षण-मनोज कुमार- कुनाल प्रकाशन- प्र.सं- 2009, पृ 75
4) पर्यावरण संरक्षण-मनोज कुमार- कुनाल प्रकाशन- प्र.सं- 2009, पृ 183
5) पर्यावरण अध्ययन शिक्षण- डॉ. के. जी. जांगिड, शंकर लाल कसवां, तरुण प्रकाशन, प्र.संस्करण- 2011, पृ.1
6) पर्यावरण अध्ययन शिक्षण- डॉ. के. जी. जांगिड, शंकर लाल कसवां, तरुण प्रकाशन, प्र.संस्करण- 2011, पृ.169

पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य

पूनम दीक्षित

सहायक अध्यापिका, जनपद-हाथरस

हमारे आस-पास की हर चीज- जिस हवा में हम सांस लेते हैं, जो पानी हम पीते हैं और हमारे भोजन के लिए मिट्टी-हमारे स्वास्थ्य और कल्याण को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। लेकिन क्या होगा अगर यह केवल जीवन शक्ति का स्रोत होने के बजाय गंभीर स्वास्थ्य खतरे भी पैदा कर रहा हो? अस्वास्थ्यकर वातावरण के संपर्क में आने के कारण हर साल दुनिया भर में 12 मिलियन से अधिक लोग अपनी जान गंवाते हैं। तो, हम पर्यावरण और अपनी सुरक्षा के लिए क्या कर सकते हैं?

पर्यावरण प्रदूषण-

पर्यावरण प्रदूषण, जिसे अक्सर प्रदूषण कहा जाता है, प्राकृतिक पर्यावरण में हानिकारक पदार्थों या प्रदूषकों का संदूषण या परिचय है और यह एक गंभीर मुद्दा है जो मनुष्यों, जानवरों और पौधों के स्वास्थ्य और कल्याण को प्रभावित करता है।

ये प्रदूषक ठोस, तरल या गैसीय पदार्थों के रूप में हो सकते हैं, जिससे बीमारी, मृत्यु, जैव विविधता में कमी, जलवायु परिवर्तन और पारिस्थितिक असंतुलन जैसे प्रतिकूल प्रभाव पड़ते हैं। प्रदूषण औद्योगिक गतिविधियों, कृषि पद्धतियों, परिवहन, घरेलू अपशिष्ट, खनन, वनों की कटाई और शहरीकरण सहित विभिन्न स्रोतों के कारण होता है।

प्रदूषण के विभिन्न प्रकार और उनका स्वास्थ्य पर प्रभाव-

वायु प्रदूषण-

वायु प्रदूषण मुख्यतः वायुमंडल में हानिकारक गैसीय प्रदूषकों के छोड़े जाने के कारण होता है। वायु प्रदूषकों का सबसे प्रमुख मानव निर्मित स्रोत परिवहन और विनिर्माण हैं। वायु प्रदूषकों के उदाहरणों में कार्बन डाइऑक्साइड शामिल है जो ईंधन के दहन से निकलता है। बेंजीन, जो गैसोलीन में पाया जाता है; ड्राई क्लीनिंग सुविधाओं पर्क्लोरोएथिलीन आदि में उपयोग किया जाने वाला रासायनिक विलायक।

ये प्रदूषक विभिन्न स्वास्थ्य समस्याओं से जुड़े हैं। जिनमें हृदय रोग, फेफड़ों का कैंसर और श्वसन संबंधी रोग, साथ ही फेफड़ों की कार्यक्षमता में कमी, आंख और गले में जलन और सिरदर्द जैसे लक्षण शामिल हैं। वायु प्रदूषण के लगातार संपर्क में रहने से समय से पहले मौत भी हो सकती है। दरअसल, WHO के अनुसार, 2019 में वायु प्रदूषण के कारण वैश्विक स्तर पर 4.2 मिलियन समय से पहले मौतें होने का अनुमान लगाया गया था।

जल प्रदूषण-

जल प्रदूषण तब होता है जब प्रदूषकों को पर्याप्त उपचार के बिना प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से जल धाराओं में छोड़ दिया जाता है।जिससे भौतिक, जैविक और रासायनिक परिवर्तन होते हैं। इस प्रकार का प्रदूषण मुख्य रूप से मीठे पानी की धाराओं में रासायनिक पदार्थों के निर्वहन के कारण होता है, यानी तेल और रासायनिक कंटेनरों से रिसाव से।

पानी में प्रदूषकों की मौजूदगी से स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है।जैसे हेपेटाइटिस, एन्सेफलाइटिस, गैस्ट्रोएंटेराइटिस, दस्त, उल्टी, पेट दर्द,यहां तक कि प्रजनन संबंधी समस्याएं और तंत्रिका संबंधी विकार भी। भारी धातुओं के साथ जल प्रदूषण के कारण तंत्रिका संबंधी विकार भी हो सकते हैं और प्रदूषित पानी के सेवन से विकास संबंधी समस्याएं हो सकती हैं, खासकर बच्चों में।

मिट्टी का प्रदूषण-

मृदा प्रदूषण, जिसे भूमि प्रदूषण के रूप में भी जाना जाता है, खतरनाक और जहरीले रसायनों के साथ भूमि का प्रदूषण है। इस प्रकार का प्रदूषण अधिकतर मानव-निर्मित कार्यों, औद्योगिक गतिविधियों, कृषि रसायनों और अपर्याप्त अपशिष्ट निपटान

के कारण होता है। भूमि प्रदूषण में शामिल सबसे आम रसायन पेट्रोलियम हाइड्रोकार्बन, सॉल्वैंट्स, कीटनाशक, सीसा, पारा और अन्य भारी धातुएं हैं।

ये उपरोक्त प्रदूषक मानव स्वास्थ्य पर अनेक प्रकार के प्रतिकूल प्रभाव उत्पन्न करने की क्षमता रखते हैं। ये प्रभाव हल्के लक्षणों जैसे सिरदर्द, आंखों में जलन और त्वचा पर चकत्ते से लेकर गंभीर स्वास्थ्य स्थितियों तक हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, मिट्टी में सीसे का बढ़ा हुआ स्तर छोटे बच्चों के मस्तिष्क में विकासात्मक हानि पैदा कर सकता है। इसके विपरीत, पारा के संपर्क में आने से गुर्दे और यकृत को नुकसान सहित अंग क्षति की संभावना बढ़ जाती है।

ध्वनि प्रदूषण–

ध्वनि प्रदूषण पर्यावरण में अत्यधिक, विघटनकारी या अवांछित शोर की उपस्थिति है, जो अक्सर परिवहन, औद्योगिक मशीनरी और शहरी विकास जैसे स्रोतों के कारण होता है। ध्वनि प्रदूषण के लंबे समय तक संपर्क में रहने से तनाव, सुनने की हानि और नींद में खलल सहित विभिन्न स्वास्थ्य समस्याएं हो सकती हैं।

उच्च डेसीबल स्तर के लगातार संपर्क में रहने से सुनने की क्षमता में कमी, उच्च रक्तचाप, नींद में खलल और तनाव का स्तर बढ़ सकता है। इसका मानसिक स्वास्थ्य पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है, जिससे चिंता और संज्ञानात्मक हानि हो सकती है।

प्रकाश प्रदूषण–

प्रकाश प्रदूषण शब्द का तात्पर्य अत्यधिक, गलत निर्देशित या दखल देने वाली कृत्रिम रोशनी से है जो रात के आकाश के प्राकृतिक अंधेरे को बाधित करती है। इसका पक्षियों और कीड़ों सहित वन्यजीवों के साथ–साथ मानव सर्कैडियन लय और नींद के पैटर्न पर नकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।प्रकाश प्रदूषण मनुष्यों और जानवरों की सर्कैडियन लय को बाधित कर सकता है, जिससे नींद संबंधी विकार, अवसाद और तनाव बढ़ सकता है। यह शरीर में मेलाटोनिन के उत्पादन में भी बाधा डाल सकता है, जिससे कुछ कैंसर का खतरा बढ़ जाता है

प्रजनन स्वास्थ्य–

पर्यावरण प्रदूषण से प्रजनन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। थोड़ी मात्रा में प्रदूषकों के संपर्क में आने से पुरुष और महिला के प्रजनन कार्य पर भी काफी प्रभाव पड़ता है। पर्यावरणीय विषाक्त पदार्थों के संपर्क में आने से सुपरऑक्साइड डिसम्यूटेज, कैटालेज और ग्लूटाथियोन पेरोक्सीडेज जैसे एंटीऑक्सीडेंट एंजाइमों का उत्पादन कम हो जाता है और ऑक्सीडेटिव तनाव बढ़ जाता है। प्रतिक्रिया में, आरओएस उत्पन्न होता है, जो कोशिकाओं में लिपिड, प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और डीएनए को नुकसान पहुंचाता है। ऑक्सीडेटिव तनाव रोगाणु कोशिकाओं और एपोप्टोसिस में असामान्यताएं पैदा करने में भूमिका निभाता है, जो पुरुषों में बांझपन के लिए जिम्मेदार है।प्रभावित शुक्राणु विकासशील भ्रूण को आनुवंशिक क्षति पहुंचा सकता है, जिससे प्रारंभिक गर्भावस्था हानि या अन्य विकास संबंधी समस्याएं हो सकती हैं। गर्भावस्था के दौरान या गर्भावस्था से पहले पीएम 2.5 के संपर्क में आने से प्रजनन अंगों की एंटीऑक्सीडेंट क्षमता कम हो जाती है। यह प्रतिक्रियाशील ऑक्सीजन प्रजातियों (आरओएस) का उत्पादन करके ऑक्सीडेटिव तनाव प्रतिक्रिया और प्रजनन कार्य में गिरावट का कारण बनता है।

पर्यावरण प्रदूषक–

वे रसायन जो मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हैं और मानव गतिविधि के कारण पर्यावरण में पहुँच गए हैं, पर्यावरण प्रदूषक कहलाते हैं। इसके अतिरिक्त, ज्वालामुखी विस्फोट जैसी प्राकृतिक घटनाओं के कारण भी पर्यावरण प्रदूषण होता है। मानवीय गतिविधियाँ जल, वायु और मिट्टी को प्रदूषित करके प्रदूषकों का परिचय देती हैं। साँस लेना, मौखिक अवशोषण और अंतर्ग्रहण तीन मुख्य तरीके हैं जिनसे दूषित पदार्थ मानव शरीर तक पहुँचते हैं। उपभोग किए जाने वाले किसी विशिष्ट प्रदूषक की मात्रा को इंगित करने के लिए, "खुराक" शब्द का प्रयोग अक्सर किया जाता है। खुराक एक्सपोजर की अवधि और तीव्रता पर निर्भर है। एक्सपोजर स्तर के आधार पर, विभिन्न स्वास्थ्य प्रभाव हो सकते हैं। य।पि औ।गीकरण किसी देश का विकास करता है, लेकिन यह पर्यावरण में बड़ी संख्या में प्रदूषकों को शामिल करता है, जो उजागर होने वाले लोगों के स्वास्थ्य को नुकसान पहुंचाता है। पर्यावरण प्रदूषण के संपर्क में आना पूरी दुनिया में स्वास्थ्य जोखिमों का एक महत्वपूर्ण स्रोत है।

सामान्य तौर पर प्राकृतिक और मानव निर्मित दोनों स्रोतों से खतरनाक पदार्थ हवा को प्रदूषित करते हैं। प्रदूषकों के मुख्य स्रोतों में ऑटोमोबाइल उत्सर्जन, बिजली संयंत्र, कचरा जलाना, रासायनिक कंपनियां और ज्वालामुखी विस्फोट प्रदूषक जैसे सल्फर डाइऑक्साइड (SO_2))कार्बन मोनोऑक्साइड (CO), नाइट्रोजन ऑक्साइड (NO), भारी धातुएं, जैविक प्रदूषक, ओजोन, तंबाकू शामिल हैं। धुआं, आदि सभी हवा में छोड़े जाते हैं जो सांस के जरिए अंदर जाते हैं, जब ये प्रदूषक शरीर में प्रवेश करते हैं, तो वे शरीर के आंतरिक कामकाज में बाधा डालते हैं, जिससे कैंसर, हृदय, प्रजनन, प्रसव पूर्व केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और श्वसन स्वास्थ्य संबंधी समस्याएं जैसी बीमारियां होती हैं। तम्बाकू का धुआं, जिसमें बेंजीन, कैडमियम, आर्सेनिक, फॉर्मेल्डिहाइड और निकोटीन जैसे हानिकारक रसायन होते हैं, स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों के लिए जिम्मेदार है। इससे न केवल धूम्रपान करने वाले को कैंसर होगा, बल्कि निष्क्रिय धूम्रपान करने वाले (जो तंबाकू के धुएं के संपर्क में है और धूम्रपान करने वाला नहीं है) को भी प्रभावित करेगा। किसी व्यक्ति को अस्थमा, ब्रोंकाइटिस, गले में संक्रमण और आंखों में जलन हो सकती है। बैक्टीरिया, वायरस, घर की धूल, घुन, तिलचट्टे और पराग जैसे जैविक प्रदूषकों के संपर्क में आने से अस्थमा, हे फीवर और अन्य एलर्जी संबंधी बीमारियाँ हो सकती हैं और वाष्पशील कार्बनिक यौगिकों के कारण आँख, नाक और गले में जलन, सिरदर्द, मतली और नुकसान हो सकता है।लंबे समय तक संपर्क में रहने से शरीर के कुछ हिस्सों, मुख्य रूप से लीवर को नुकसान हो सकता है। सीसे के संपर्क में आने से मस्तिष्क और पाचन तंत्र को नुकसान हो सकता है और कुछ परिस्थितियों में इसके परिणामस्वरूप कैंसर हो सकता है। ओजोन के संपर्क में आने से आंखों में खुजली होती है, जलन होती है, अस्थमा जैसे श्वसन संबंधी विकार विकसित हो सकते हैं और सर्दी और निमोनिया के प्रति हमारी प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाएगी। सर्दियों में, नाइट्रोजन के ऑक्साइड के संपर्क में आने से बच्चों को श्वसन संबंधी समस्याएं हो सकती हैं।

अनेक पर्यावरणीय प्रदूषक मानव रोग में महत्वपूर्ण योगदान देते हैं, जलवायु परिवर्तन और सार्वजनिक एवं व्यक्तिगत स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप मृत्यु दर और रुग्णता में वृद्धि होती है। अपर्याप्त अपशिष्ट प्रबंधन, उच्च स्तर की गरीबी और नई तकनीक को सीमित अपनाने के कारण कम विकसित देशों में प्रदूषण के जोखिम के बारे में जानकारी की कमी के कारण, प्रदूषकों और स्वास्थ्य प्रभावों के बीच संबंधों की अधिक जांच की जानी चाहिए। इसी तरह की स्थिति कई विकसित देशों में मौजूद है, जहां नुकसान होने के बाद ही समाधान खोजा जाता है और सुरक्षा उपायों की आवश्यकता कम हो जाती है। जोखिम के स्तर को मापने में कठिनाइयों और व्यवस्थित निगरानी की कमी के कारण पर्यावरणीय विषाक्त पदार्थों और स्वास्थ्य के बीच संबंध को बेहतर ढंग से समझने की आवश्यकता है। पुरानी और गंभीर दोनों तरह की बीमारियों के लिए अलग-अलग प्रदूषक जिम्मेदार हैं।

इसके अतिरिक्त, जब लंबे समय तक संपर्क में रहने के बाद रोग संबंधी समस्याएं देखी जाती हैं तो शोध चुनौतीपूर्ण हो जाता है। इस आलेख का उद्देश्य इस ज्ञान अंतर को पाटने में पर्यावरणीय विषाक्त पदार्थों और मानव स्वास्थ्य के बीच संबंध की वर्तमान समझ पर चर्चा करना है। इस अवलोकन में कैंसर की उत्पत्ति और मानव शरीर के हृदय, श्वसन, प्रजनन, प्रसवपूर्व और तंत्रिका स्वास्थ्य पर विभिन्न पर्यावरणीय प्रदूषकों के प्रभाव के बारे में भी वर्णन किया गया है।

भारत में प्रदूषण की स्थिति:

भारत की बात करें तो यहां की स्थिति चिंताजनक है। पूरा देश प्रदूषण की गिरफ्त में आता दिख रहा है। महानगरों की स्थिति अधिक खघ्राब है। देश की राजधानी दिल्ली में प्रदूषण इतना बढ़ गया है कि सांस लेने के लिए स्वच्छ वायु मिलना कठिन होता जा रहा है। सांस संबंधी रोग भी बढ़ रहे हैं। दिल्ली का नाम संसार के सर्वाधिक प्रदूषित शहरों में काफी ऊपर है।

प्रदूषण से बचने के उपाय:

इस विकट स्थिति से निपटने के लिए अधिक से अधिक संख्या में पेड़ लगाने की आवश्यकता है। पेड़ पौधे ही हमें आक्सीजन देंगे। किसी भी परिस्थिति में पेड़ों को काटना नहीं चाहिए। प्रकृति वंदना करें। हर शुभ अवसर पर पेड़ लगाए। मोटर गाड़ियों का कम उपयोग करें। अपने आसपास गंदगी न फैलाएं। स्वच्छ विश्व स्वस्थ विश्व का नारा सार्थक बनाएं।

निष्कर्षतः, पर्यावरण प्रदूषण के स्वास्थ्य प्रभाव दूरगामी और चिंताजनक हैं। न केवल अपने स्वास्थ्य के लिए बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी कार्रवाई करना एक साझा सामूहिक जिम्मेदारी है। नुकसान को कम करने के लिए, संगठन स्थायी प्रथाओं को अपना सकते हैं, स्वच्छ ऊर्जा पहल का समर्थन कर सकते हैं और सख्त पर्यावरणीय नियमों की वकालत कर सकते हैं।

पर्यावरन संरक्षन रोऐ-रोऐ कै पुकार रयौ, मोऐ धरा तैं नाय उखारौ।
खून तै भीज गयौ हूं मैं, कुल्हारी अब नाय मारौ।
जा आसमान के बादर तै पूछौ, मोऐ कैसूं पालौ है।
हर मौसम में सींचौं हमकूं, मिट्टी करकट झारौ है।
बा धीमीं हवाअन तै पूछौ, जिननें झूलौ हमैं झुलायौ है।
हरछन मेरौ खियाल रखौ, अंकुर तबई उगाऔ है।
तुम सूखे जा उपबन में, पेरन कौ इक बाग लगायौ है।
रोऐ- रोऐ कै..........
जा धरा की सुंदर छाया, हम पेरन तै बनी भई है।
मदुर-मदुर जे मंद बयार, अमरित बनकै चली भई है।
हमहिं सूं नातौ बा जीबन कौ,जो धरा पै आविंगे।
हमहिं सूं नातौ जन- जन कौ, जो धरा तै जाविंगे।
साखा आंधी तूफानन में टूटी, ठूंठ आंखन में अब मति डारौ।
रोऐ-रोऐ कै..........
हमहिं करावैं सब जन कूं, अमरित कौ रसपान।
हमहिं ते बनैं औसधि कितनीं, नई पनपे इक जान।
कितनेई फल फूल हम देवैं, फिरू अनजान बनै हौ।
लिऐ कुल्हारी ताक रहे हौ, उत्तर देऊ चौं बेजान खरे हौ।
हमहिं ते सुंदर जीबन मिल्यौ, बुरी नजर मोपै मति डारौ।
रोऐ- रोऐ कै.......ङ्क....
गर धरा पै नाय रहे हम, जीनौ दूभर है जाऐगौ।
त्राहि- त्राहि जन-जन में होऐगी, हाहाकार मच जाऐगौ।
तबि पछिताऔगे तुम बंदे, हमनेई जिनैं बिगारौ है।
हमहिं ते घर- घर सब मिलत है, जे खड़ौ भयौ किबारौ है।
गरी- गरी में पेर लगावौ,
सब प्रानिन में आस जगावौ।
रोऐ- रोऐ कै पुकार रयौ, मोए धरा ते नाय उखारौ।
खून तै भीज गयौ हूं मैं, कुल्हारी अब नाय मारौ।

'शहरीकरण एवं पर्यावरण'

अंजु कुमारी

(UGC NET/JRF) शोधार्थी, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना

शोध-सारांश-

हमारे जीवन में पर्यावरण का महत्वपूर्ण योगदान है स्वस्थ्य जीवन तथा बेहतर सुविधाएँ की पूर्ति पर्यावरण की देन है तो इसे शुद्ध और स्वच्छ रखना हमारी जिम्मेदारी, लेकिन आधुनिकीकरण के दौर में मनुष्य अपनी मूल जरुरत की पूर्ति हेतु पर्यावरण को दरकिनार कर आधुनिकीकरण की रेस का हिस्सा मात्र बनकर रह गया है। यू कहें कि विकास के नाम पर प्रकृति का दोहन कर उसे नुकशान पहुँचाया जा रहा है। शहरीकरण के कारण पर्यावरण में होने वाले प्रदूषण मानव जीवन को घोर संकट की तरफ धकेल रहा है। उदाहरण के तौर पर देश में आये दिन कभी भूकंप की समस्या, बाढ़, ज्वालामुखी विस्फोट, बढ़ता तापमान सुखा जैसी समस्या का सामना करना पड़ता है। ग्लोबल वार्मिंग के परिणामस्वरूप जलवायु में उत्तार चढ़ाव तथा अनियमितता का प्रभाव देखा जा सकता है। आज हमारा भारत देश और चीन दुनिया में सबसे अधिक कार्बन तथा ग्रीनहाउस से निकलने वाली गैसों में योगदान देने वाले देश हैं। इसके निवारण के लिए हमें जन जागरूकता के साथ-साथ पर्यावरण संरक्षण पर योजना बनाकर सक्रिय रूप से काम करना होगा अन्यथा यही समस्या एक दिन रौद्र रूप धारण कर लेगी।

बीज शब्द- पर्यावरण, जनसंख्या, पारिस्थितिकी, प्रदूषण, संरक्षण, शहरीकरण

मानव जाति का अस्तित्व ही पर्यावरण से है। यू कहे कि मानव और पर्यावरण एक दूसरे के पर्याय है।पर्यावरण का शाब्दिक अर्थ है- 'परि'+'आवरण' अथार्थ जिससे सम्पूर्ण जगत घिरा हुआ है। प्रकृति में वायु, जल, पेड़ पौधे, मृदा तथा जीव जन्तु सभी सम्मिलित रूप में पर्यावरण की रचना करते हैं। पर्यावरण और प्राणी एक दुसरे पर आश्रित हैं इसलिए स्वच्छ पर्यावरण एक शांतिपूर्ण और स्वस्थ जीवन जीने के लिए बहुत आवश्यक है।स्वस्थ पर्यावरण प्रकृति के संतुलन को बनाये रखता है और साथ ही साथ पृथ्वी पर सभी जीवित चीजों को बढ़ने, पोषित और विकसित करने में मदद करता है। आज मानव जाति अपनी उन्नति और विकास का पैमाना ही विभिन्न प्रकार की सुख सुविधाओं से परिपूर्ण होना मानता है।

रास्ट्रपिता महात्मा गाँधी कहते है- "पृथ्वी में आज भी मानव की आवश्यकताओं के लिए यथेष्ट है उसकी तृष्णा के लिए नहीं। इस प्रकार प्रकृति के शोषण और प्रदुषण के संकट का मूल कारण मानव की तृष्णा और अज्ञान है।"

पुरे विश्व की चिंता बढ़ रही है की यदि प्राकृतिक संसाधनों की कमी और जैव विविधता के विलुप्त होने की वर्तमान गति इसी तरह चलती रही तो भविष्य में हमारी आने वाली पीढ़ी को इसकी कीमत चुकानी पड़ेगी।

शहरीकरण के विकास के कारण शहरों की जनसंख्या में काफी वृद्धि हो गई है जिसके कुछ सकारात्मक पहलू होते हैं और कुछ नकारात्मक।शहरी क्षेत्रों में सामान्य तौर पर परिवहन, बिजली, स्वास्थ्य देखभाल आदि जैसे बेहतर सुविधाएँ होती है परन्तु बढ़ते शहरीकरण ने पर्यावरण को खतरे में डाल दिया है इसलिए केंद्र सरकार तथा राज्य सरकारों द्वारा पर्यावरण को स्वस्थ सुरक्षित रखने के लिए विभिन प्रयास किये जा रहे है। बढ़ता शहरीकरण हमारे साथ कई समस्यायें और चुनौतियाँ लेकर आता है जिसके कारण पर्यावरण को संतुलित और स्वच्छ रखना एक बड़ी चुनौती बन गई है। इसमें सबसे बड़ी समस्या पर्यावरण और शहरी विकास के बीच संतुलन बनाकर रखना। पारिस्थितिकी प्रत्येक समाज का आधार होता है जिसका एक महत्वपूर्ण अंग मनुष्य भी है किन्तु समय के साथ-साथ मनुष्य की बढती आवश्यकता के कारण पारिस्थितिकी में काफी परिवर्तन आया है जैसे कि पर्यावरण की प्राकृतिक कारक जंगलो की अंधाधुंध कटाई, बाढ़, आकाल, तापमान में वृद्धि, जलवायु में परिवर्तन इत्यादि जैसी समस्या मानव हस्तक्षेप के कारण ही हो रहे है। दिन पर दिन मनुष्यों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग बढ़ता जा रहा है परन्तु जिस हिसाब से उपयोग किया जा रहा है उस हिसाब से न तो संसाधन बढे हैं और न ही उसका नवीकरण किया जा सकता है। बढ़ते शहरीकरण के कारण वायु प्रदुषण मुख्य समस्या बनी हुई है इनका मुख्य स्रोत वाहनों तथा कल-कारखानों से निकलने वाली जहरीली गैसें मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण को काफी नुकशान पहुंचा रहे है। आधुनिकीकरण के कारण कई हरे-भरे क्षेत्र नष्ट होते जा रहे है जिसके कारण शहरी क्षेत्रों में घनत्व अधिक होने से हरित स्थानों की कमी पानी की कमी होने के कारण वायु प्रदुषण की स्थिति गंभीर होने जैसी समस्या को स्पस्ट रूप से देखा जा सकता है।

पर्यावरण एक व्यापक विषय है जिसके प्रबंधन के लिए हितधारकों के समन्वय की आवश्यकता है। पर्यावरण संबधी समस्याएं हमें शहर, गाँव, गली मोहल्लों में मिल जाता है। शहरीकरण तथा विभिन्न क्षेत्रों में विकास की विसंगतियां हमारे सामान्य वैश्विक पर्यावरण के लिए कई गंभीर समस्या बन गयी है। प्राकृतिक आपदा एक प्रकृतिक जोखिम का ही परिणाम है जैसे कि ज्वालामुखी विस्फोट भूकंप या भूस्खलन जो सीधे तौर पर मानव को प्रभावित करते है। तापमान में वृद्धि के कारण ग्लेशियर पिघलने लगते है जिससे सागर का जलस्तर ऊपर उठेगा तो तटीय क्षेत्रों व द्वीप जलमग्न हो जायेगे जिससे बाढ़ का खतरा बढ़ जायेगा। पर्यावरण प्रदूषण में मानव की विकास प्रक्रिया, औद्योगिकीकरण तथा नगरीकरण आदि का महत्वपूर्ण योगदान है। पर्यावरणीय घटको के आधार पर पर्यावरण प्रदूषण को वायु प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण मृदा प्रदूषण, जल प्रदूषण में बाँटा गया है। वर्तमान में वायु प्रदूषण एवं तकनीकी सभ्यता की एक ऐसी समस्या है जो पुरे पारिस्थितिकी तंत्र को हानि पहुंचा रहे है मनुष्य के साथ- साथ पेड़-पौधे तथा अन्य जीव भी प्रभावित हो रहे है। बढ़ते कार्बन डाइ ऑक्साइड की मात्रा, कार्बन मोनो ऑक्साइड, हाइड्रोजन साइनायड, नाइट्रोजन ऑक्साइड आदि तत्वों के कारण हमारा श्वसन तंत्र तेजी से प्रभावित हो रहा है जिसके कारण अनेक बिमारियाँ उत्पन्न हो रही है। कार्बन डाई ऑक्साईड गैस ग्लोबल वार्मिंग के लिए सबसे ज्यादा जिम्मेदार है क्यूंकि वायुमंडल में इसकी सांद्रता अन्य ग्रीन हॉउस गैसों की तुलना में बहुत अधिक है जो तापमान वृद्धि का सबसे बड़ा कारक है। वनों की अत्यधिक कटाई के कारण प्रत्येक वर्ष औसत से कहीं कम बारिश होता है जिससे जलस्तर दिन पर दिन घटता जा रहा है।हमारे देश की जनसंख्या का 77.73 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण इलाको में रहती है जो पूर्ण रूप से आज भी कृषि पर आधारित है, जिसके लिए जल एक महत्वपूर्ण साधन है।

प्रदूषण की समस्या ऐसी समस्या है जो न एक दिन में उत्पन्न हुई है और न ही एक दिन में खत्म होने वाली है इसके लिए हम सभी को सकारात्मक सोच के साथ-साथ निःस्वार्थ होकर पर्यावरण को प्रदूषण से बचाने के लिए कार्य करना होगा जैसे की अधिक से अधिक मात्रा में पेड़ लगायें जाये, प्राकृतिक संसाधनों का सीमित मात्रा में उपयोग करना, कल कारखानों से निकालने वाले अपशिष्ट पदार्थो गन्दा पानी को सीधे नदियों में न बहाकर उसका उचित प्रबंध करना, नहीं तो इसके भयंकर दुष्परिणाम भविष्य में देखने को मिलेंगे।

भारत में पर्यावरण अधिनियम 1986 को पर्यावरण संरक्षण की दिशा में एक छतरी कानून (umbrella law) के रूप में जाना जाता है इस अधिनियम का मुख्य उदेश्य पर्यावरण के संरक्षण और पर्यावरणीय सुधार हेतु लिए गये निर्णयों के क्रम में कोई अच्छी योजना तैयार करना है। पर्यावरण के प्रति जागरूकता और उसके संरक्षण के लिए हम सभी को प्रयास करना चाहिए। संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट हम देखे तो 2050 तक भारत की लगभग आधी आबादी शहरों में निवास करेगी।शहरों में तेजी से बढ़ते औद्योगिक विकास, बढ़ता रोजगार एक महत्वपूर्ण कारण है तथा कृषि में होने वाले नुकसान की वजह से लोग कृषि छोड़कर रोजगार की तलाश में शहर आते है। साथ ही साथ बढ़ते शहरीकरण के कारण सुख-सुविधाओं में वृद्धि, शिक्षा, स्वास्थ्य की व्यवस्था लोगों को आकर्षित करने का एक महत्वपूर्ण कारण भी है।

शहरों में लागातार बढ़ती जनसंख्या एवं औ।ोगीकरण के फलस्वरूप पर्यावरण प्रदूषण तथा अवनयन की कई समस्याएं उत्पन्न हो रही है। शहरीकरण से नृजातीय विविधता और सामुदायिक एकीकरण की समस्या भी पैदा होती है। बढती आबादी के कारण जल आपूर्ति की कमी तथा स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान की दिशा में बड़ी चुनौतियों के रूप में उभरी है उदाहरण के तौर पर कोविड जैसी महामारी जब फैली थी तो दिल्ली तथा अन्य महानगरों में कितनी गंभीर स्थिति उत्पन्न हो गयी थी हालाकि शहरीकरण के कुछ फायदे भी है जैसे की आर्थिक गतिविधियों को बढ़ावा मिलना, रोजगार के उचित अवसर, बेहतर शिक्षा, बेहतर स्वास्थ्य जैसी सुविधाएँ मिलना।

नगरीकरण के परिणामस्वरूप पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी की समस्या पुरे विश्व के समक्ष एक कड़ी चुनौती के रूप में उभरी है। इसके लिए भारत को विश्व के साथ मिलकर कोई ठोस कदम उठाये साथ ही साथ जनभागीदारी भी अतिआवश्यक है।

निष्कर्ष:- बढ़ते शहरीकरण के कारण पर्यावरण में कई समस्याएँ उत्पन्न हो रही है जिसके निवारण एवं संरक्षण के लिए निम्न विन्दुओं के माध्यम से उल्लेखित कर रही हूँ-

1. केंद्र तथा राज्य सरकार को वन क्षेत्र का विकास व इसके संरक्षण के लिए कठोर नीति लागू करना चाहिए।

2. जनसंचार माध्यमो द्वारा जनता में पर्यावरणीय सुरक्षा एवं प्रदूषण के प्रति जागरूकता लाने का प्रयास करना चाहिए ताकि हमारी आने वाली पीढ़ी को एक स्वच्छ वातावरण दे सके।
3. ग्रामीण इलाकों को विकसित कर रोजगार के अवसर प्रदान किये जाये।
4. वायु प्रदूषण के नियंत्रण के लिए विभिन्न प्रकार के संसाधनों के विवेकपूर्ण तथा सीमित उपयोग करना।
5. जल प्रदूषण के नियंत्रण के लिए कचरे का प्रबंधन, मृदा अपरदन को नियंत्रित करना जिसके लिए वनों की कटाई कम से कम हो।

सन्दर्भ सूचीः-

1. पर्यावरण संरक्षण एवं पर्यावरण जागरूकता- कुमारी नैना शुक्ला, 2016
2. Ncert Books
3. Impacts of urbanization on environment -N bhubandas,N uttaraAnd VAggrawal,ISSN:2249-3905

बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन

हरेन्द्र कुमार यादव

शोध छात्र-(शिक्षा संकाय), वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय जौनपुर, उ. प्र.

प्रोफेसर अफजाल अहमद

अध्यक्ष (शिक्षा संकाय), शिब्ली नेशनल पी0 जी0 कालेज, आजमगढ. उ. प्र.

सारांश:

प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना था जिसके लिए प्रस्तुत शोध-पत्र में विवरणात्मक विधि के अन्तर्गत सर्वेक्षण विधि, जनसंख्या के रूप में आजमगढ़ जनपद स्थित महाविद्यालयों में बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का चयन किया गया था। इसके लिए 17 महाविद्यालयों से चयन साधारण यादृच्छ प्रतिचयन विधि (Simpal Random Sempling Technique) द्वारा 511 प्रशिक्षुओं का चयन किया गया था। शोध उपकरण के रूप में अनुराग मिश्र एवं डॉ0 सरला पाण्डेय द्वारा निर्मित'' पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति मापनी'' (EAS) का प्रयोग किया गया था।

चरों पर पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति मापनी के क्रियान्वयन से प्राप्त प्राप्ताकों के विश्लेषण हेतु SPSS साफ्टवेयर द्वारा क्रान्तिक अनुपात C.R. मूल्य की गणना की गयी थी। निष्कर्ष में पाया गया कि प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं में लिंग, विषय-वर्ग व अधिवास के आधार पर पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं था।

अध्ययन की आवश्यकता:

पर्यावरण संकट से बचने के लिए पर्यावरण शिक्षा अति आवश्यक है। आज पर्यावरणीय संकट के कारण जन्तु एवं वनस्पति जगत विभिन्न प्रकार की बीमारियों, प्राकृतिक आपदाओं आदि का शिकार होता जा रहा है। इन सभी समस्याओं का समाधान पर्यावरणीय शिक्षा है, जिसके द्वारा प्रशिक्षुओं में पर्यावरण के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित किया जा सकता है। पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति से सम्बन्धित विदेशी एवं भारतीय साहित्य सर्वेक्षणों यथा-एरगिन यासर डेमीराली (2019), ओनल तनिक, नगीहन (2020), ओनल टैंक नगीहन (2020), अबलाक सेलमान, ऐसिलतास, इरकान (2020), कोवैक निवेस, आर्वानिक डोलेन नतासा (2021), मुतलू फात्मा, नाकारोग्लू ओगुजहान, दोमन मुस्तफा (2021), अजलौनी अल मोहम्मद (2021), ओजोनुर, मेसुत (2021)एस0 कविथा, आर0 वेंकटेश्वरन (2014), सिंह, मलिक एवं अमित (2015), एमिल ओकुर वेर्श्बेरोग्लू (2015), नेगर सुल्ताना, मो० शहादत हुसैन, रेहाना खातून (2015), श्रीवास्तव, निशा एवं शाहू, मन्जू (2015), अस्टलीन कुमार प्रशान्त (2016), वैश्य, धमेन्द्र कुमार, तिवारी, मालती एवं सिंह, रंजना (2015), चतुर्वेदी, जया, पाण्डे, श्वेता (2016), बून, एच0 जे0 (2016), कुमार राकेश, झाझडिया मनोज (2016), आंजगुल, केलेस (2017), यादव, शैलेन्द्र कुमार (2018), शर्मा मीनाक्षी, बंसल सुरक्षा (2018), उपाध्याय, मधु (2018), दानिलराजा, आर (2019), देवी, कुसुम (2021) आदि के अध्ययनोंपरान्त यह महसूस हुआ कि पर्यावरण शिक्षा के प्रति प्रशिक्षुओं की अभिवृत्ति पर अच्छे अध्ययन (अनुसंधान) बहुत कम हुए हैं। जो हैं वे ज्यादातर प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर के ही के सन्दर्भ में हैं। अतः प्रशिक्षुओं की सोच में पर्यावरण के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित करना आज की विशेष आवश्यकता हो गयी है।

समस्या कथन- बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन।

शोध का उद्देश्य (Objectives of Research):

1. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का लिंग (महिला/पुरूष) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
2. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का विषय-वर्ग (कला/विज्ञान) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।
3. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का अधिवास (शहरी/ग्रामीण) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन करना।

शोध की शून्य परिकल्पना (Null Hypothesis of Research):

$H0_1$. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का लिंग (महिला/पुरूष) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$H0_2$. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का विषय-वर्ग (कला/विज्ञान) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

$H0_3$. बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का अधिवास (शहरी/ग्रामीण) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

अध्ययन में प्रयुक्त पदों का संक्रियात्मक परिभाषीकरण:

बी0एड्0 प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षु-

बी0एड्0 प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है जो बी0एड्0 पाठ्यक्रम का प्रशिक्षण प्राप्त कर रहे हैं।

पर्यावरणीय शिक्षा-

पर्यावरणीय शिक्षा से अभिप्राय यह है कि मनुष्य में पर्यावरण के प्रति ऐसी चेतना जागृत करना जिससे प्रकृति और मानव के बीच सकारात्मक सम्बन्ध बन सके।

अभिवृत्ति-

व्यक्ति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का एक महत्वपूर्ण पक्ष उसकी अभिवृत्तियाँ हैं। अभिवृत्ति वास्तव में एक मनो-सामाजिक प्रत्यय है जो विभिन्न परिस्थितियों में व्यक्ति के द्वारा किये जाने वाले व्यवहार की प्रवृत्ति को बताता है। इस शोध में अभिवृत्ति का निहितार्थ ''पर्यावरणीय शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति'' से है।

शोध की परिसीमाएं (Limitation of Research):

शोध समस्या की व्यापकता एवं सीमित संसाधनों की दृष्टि से अध्ययन को निम्नांकित बिन्दुओं पर परिसीमित किया गया है-

- प्रस्तुत शोध-पत्र हेतु जनपद आजमगढ़ स्थित बी0एड्0 पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं को ही सम्मिलित किया गया था।
- प्रस्तुत शोध-पत्र हेतु प्रयुक्त चर पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति से सम्बन्धित तथ्यों का ही एकत्रीकरण किया गया था।
- प्रस्तुत शोध-पत्र हेतु में न्यादर्श के लिए 511 बी0एड्0 प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का ही चयन किया गया था।

शोध-अभिकल्प (Research Design):

प्रस्तुत शोध-कार्य की समस्या के समाधान हेतु अर्थात् तथ्यों के अन्तर्सम्बन्ध एवं तुलनात्मक अध्ययन के लिये खोज प्रक्रिया में वर्णनात्मक अनुसंधान के अन्तर्गत सर्वे विधि का प्रयोग किया गया था। शोध-पत्र में न्यादर्शन विधि के रुप में साधारण

यादृच्छिक प्रतिदर्शन तकनीक का प्रयोग किया गया था। शोध कार्य हेतु न्यादर्श के रूप में जनपद आजमगढ़ स्थित महाविद्यालयों के अर्न्तगत बी0एड्0 पाठ्यक्रमों में प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं के विभिन्न समूहों (लिंग, विषय-वर्ग, अधिवास, विद्यालय-प्रशासन) से आंकडों के नमूने प्राप्त करने के लिये किया गया था। जिसके लिए आजमगढ़ जनपद स्थित कुल 52 महाविद्यालयों में जहाँ अध्ययन के लिए सम्पूर्ण जीवसंख्या मौजूद थी, से साधारण यादृच्छिक प्रविधि से कुल 17 महाविद्यालयों से 511 प्रशिक्षुओं का चयन किया गया था। शोध उपकरण के रूप में अनुराग मिश्र एवं डॉ0 सरला पाण्डेय द्वारा निर्मित "पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति मापनी'' (EAS) का प्रयोग किया गया था। प्रस्तुत अध्ययन में प्रतिदर्श के बड़ा होने के कारण "t" परीक्षण की जगह क्रान्तिक अनुपात (C.R.) का प्रयोग किया गया था। वास्तव में "t" Test भी एक क्रान्तिक अनुपात ही है। इस प्रकार प्राप्त मूल्य की "t" (टी) अनुपात के क्रान्तिक मान तालिका में सम्बन्धित स्वतन्त्रता के अंशों (df) पर ण्05 सार्थकता स्तर की जॉच की गयी थी।

परिकल्पनाओं का सत्यापनः

परिकल्पनाः (H_{01})

बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का लिंग (महिला/पुरूष) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या- 1

लिंग (महिला/पुरूष) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति मापनी (EAS) पर अनुक्रिया

लिंग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	मध्यमान में अन्तर (D)	मानक त्रुटि अन्तर (SE_D)	क्रान्तिक अनुपात (C.R.)	सार्थकता स्तर
महिला	399	187.69	16.93	3.65	1.82	2.01	.05 पर H_0 अस्वीकृत .01 पर स्वीकृत
पुरूष	112	191.34	17.21				

df 509 सार्थकता स्तर .05 = 1.96
.01 = 2.58

उपर्युक्त तालिका में प्रदर्शित बी0एड्0 प्रशिक्षुओं के अन्तर्गत महिला प्रशिक्षुओं डमंद अंसनम 187.69 तथा पुरूष प्रशिक्षुओं का डमंद अंसनम 191.34 है तथा परिगणित क्रान्तिक अनुपात (CR) मूल्य 2.01 है, जो कि df 509 के लिए .05 सार्थकता स्तर पर निश्चित मान 1.96 से अधिक तथा .01 सार्थकता स्तर मान 2.58 से कम है। अतः शून्य परिकल्पना संख्या- H_{01} कि, 'बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का लिंग (महिला/पुरूष) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' .01 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत तथा .05 स्तर पर अस्वीकृत की जाती है।

परिकल्पनाः (H02)

बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का विषय-वर्ग (कला/विज्ञान) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या- 2

विषय-वर्ग (कला/विज्ञान) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति का (EAS) पर अनुक्रिया

विषय–वर्ग	संख्या (N)	मध्यमान (M)	मानक विचलन (S.D.)	मध्यमान में अन्तर (D)	मानक त्रुटि अन्तर (SE_D)	क्रान्तिक अनुपात (C.R.)	सार्थकता स्तर
कला वर्ग	350	188.09	17.78	.76	1.64	0.46	.05 स्तर पर H_0 स्वीकृत
विज्ञान वर्ग	161	188.85	16.05				

df 509 सार्थकता स्तर .05 = 1.96

उपर्युक्त तालिका में प्रदर्शित कला वर्ग के प्रशिक्षुओं का मध्यमान (M) 188.09 एवं विज्ञान वर्ग के प्रशिक्षुओं का मध्यमान (M) 188.85 है तथा परिगणित क्रान्तिक अनुपात (C.R.) मूल्य .46 है जो कि .05 सार्थकता स्तर के लिए df 509 पर "t" तालिका मान 1.96 से काफी कम है। अत: शून्य परिकल्पना–H_{02} कि, 'बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का विषय-वर्ग (कला/विज्ञान) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' .05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

परिकल्पना: (H_{03})

बी0एड्0 पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का अधिवास (शहरी/ग्रामीण) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है।

तालिका संख्या- 3

प्रशिक्षुओं का अधिवास (शहरी/ग्रामीण) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा मापनी (EAS) पर अनुक्रिया

अधिवास	संख्या (N)	मध्यमान (M)	प्रमाणिक विचलन (S.D.)	मध्यमान में अन्तर (D)	मानक त्रुटि अन्तर (SE_D)	क्रान्तिक अनुपात (C.R.)	सार्थकता स्तर
शहरी	73	188.12	14.39	0.45	2.22	0.20	.05 स्तर पर H_0 स्वीकृत
ग्रामीण	438	188.57	18.05				

df 509 सार्थकता स्तर .05 = 1.96

उपर्युक्त तालिका में सांख्यकीय विश्लेषणोपरांत परिगणित क्रान्तिक अनुपात (CR) मान 0.20 है, जो कि स्वतन्त्रता के अंश (df) 509 के लिए .05 सार्थकता स्तर पर सारणी मान 1.96 से काफी कम है। अत: अत: शून्य परिकल्पना–H_{03} कि, 'बी0एड्0

पाठ्यक्रम के प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं का अधिवास (शहरी/ग्रामीण) के आधार पर पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति में कोई सार्थक अन्तर नहीं है' .05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत की जाती है।

शैक्षिक निहितार्थः

प्रस्तुत अध्ययन में पर्यावरण शिक्षा के प्रति अभिवृत्ति सकारात्मक पायी गयी। प्राप्त तथ्यों के आधार पर बी0एड्0 प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा सम्बन्धी भविष्य की योजनायें बनाकर उनका क्रियान्वयन किया जा सकता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि प्रस्तुत शोध-पत्र बी0एड्0 प्रशिक्षणरत् प्रशिक्षुओं की पर्यावरण शिक्षा अभिवृत्ति के प्रति शैक्षिक प्रशासकों के लिए नीति निर्धारण एवं क्रियान्वयन में महत्त्वपूर्ण रूप से सहायक सिद्ध होगा।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः

1. गुप्ता, एस0पी0- आधुनिक मापन एवं मूल्यांकन, शारदा पुस्तक भवन इलाहाबाद, संस्करण-2009।
2. सिंह, ए0के0- मनोविज्ञान, समाजशास्त्र तथा शिक्षा में शोध विधियाँ, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, संस्करण-2006।
3. पाण्डेय, के0पी0- शैक्षिक अनुसंधान, विश्वविद्यालय प्रकाशन, वाराणसी, तृतीय संस्करण, 2008।
4. कपिल, एच0के0- अनुसंधान विधियाँ, एच0पी0 भार्गव बुक हाउस, आगरा, ग्यारहवाँ संस्करण 2001।
5. भाटिया तारेश- आधुनिक मनोवैज्ञानिक सांख्यिकी, लावण्य प्रकाशन, प्रथम संस्करण- 2003।
6. बाजपेई एल0बी0, श्रीमाली- शिक्षा में नवाचार एवं नवीन प्रवृत्तियाँ, आलोक प्रकाशन लखनऊ, नवीनतम संस्करण।
7. वर्मा एस0 एल0: राजनीति विज्ञान में अनुसंधान, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, संस्करण-षष्टम, 2005।
8. सिंह सविन्द्रः पर्यावरण भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन गोरखपुर, संस्करण 1988।
9. सिंह जगदीशः वातावरण नियोजन एवं संविकास, ज्ञानोदय प्रकाशन गोरखपुर, द्वितीय संस्करण 1991।
10. शर्मा बी0 एल0: पर्यावरण नियोजन एवं पारिस्थिकी विकास साहित्य भवन प्रकाशन, आगरा, संस्करण 1991।
11. शर्मा आर0 ए0: शिक्षा अनुसंधान, सूर्या पब्लिकेशन, मेरठ, संस्करण 2006।
12. त्रिपाठी दयाशंकरः पर्यावरण अध्ययन, मोतीलाल, बनारसी दास, दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2005।

जैव-विविधता संरक्षण व पर्यावरणः वैदिक वांग्मय के सन्दर्भ में

डॉ० अशोक कुमार

असिस्टेंट प्रोफेसर, संस्कृत विभाग, के0बी0पी0जी0 कालेज, मीरजापुर

भारतीय सभ्यता व सस्कृति के प्राचीनतम धरोहरों में से एक हमारे सस्कृत वांग्मय में वेद है। भारतीय विद्वानों के आज तक उपलब्ध प्रमाणों में वेदों का स्थान सर्वोपरि है। आधनुनिक विषयों का परावर्तन भले ही नया दिखाई देता है परंतु उसके मलूय स्वरूप बीज रूप में हमें वेदों में प्राप्त है।

''परस्परोपग्रहोरू जीवानाम्" अर्थात सृष्टि का हर प्राणी एक दूसरे के लिए बना है। वन्य जीवों की उपयोगिता के लिए इनका सरंक्षण भारतीय सस्कृति का विशिष्ट और अभिन्न अंग रहा है इस उपग्रह पर सभी पौधों एवं पशुपक्षियों जो कि मानव द्वारा पाले नहीं जाते वन्य जीवो में आते हैं। अथर्ववेद में ऋषियों ने शुद्ध तथा समृद्ध पर्यावरण को मानव जीवन के विकास के लिए महत्वपूर्ण और अनिवार्य माना है। हमारे जीवन का कोई भी पक्ष ऐसा नहीं है जिसका दर्शन हमें वेद में ना होता हो। तीनों लोक, चारों वर्ण, चारो आश्रम यहॉ तक की भूत, वर्तमान और भविष्य का ज्ञान वेद के द्वारा सम्भव है।

''चातुर्वर्ण्य त्रयोलोका"चत्वार"चाश्रमाः पृथक्।
भूतम् भव्यं भवश्चं सर्व वेदात् प्रसिध्यति।।[1]

पर्यावरणीय शिक्षा भी हमारे प्राचीनतम साहित्य में वेदों से ही आरम्भ होती है। जहॉ वेदों में पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश इन पॉच तत्वों को प्रदषूण से मकुत बनाने के लिए अनेक विधि अपनाई गई और उसकी उपासना की गई।

पर्यावरण का अर्थ, पर्यावरण शब्द में ''परि" का अर्थ चारों ओर तथा ''आवरण' का अर्थ ढका हुआ, घिरा हुआ। विश्व का प्रत्येक प्राणी अपने चारों ओर के वातावरण पर आश्रित रहता है। पर्यावरण की इस परिधि में वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी, समस्त दिशाएं, पर्वत, वनस्पति, पशु-पक्षि आदि समाहित है। वेदों में मानव जीवन के कल्याणार्थ पर्यावरण के स्वच्छ एवं सुदंर बनाने की बात कही गई है। वेद में विविध सूक्त पृथ्वी सूक्त, अग्नि सूक्त, वरुण सूक्त, आप सूक्त के माध्यम से शुद्ध हवा, शुद्ध भोजन, पवित्र भूमि एवं शुद्ध वातावरण में जीवन जीने की बात पर्याप्त मात्रा में मिलती है। वैदिक पर्यावरण का अर्थ वेद में पर्यावरण सम्बन्धित बातों से है, वैदिक पर्यावरण के अर्थ को हम इस आधार पर समझ सकते हैं कि निरोगी काया, दीर्घ अवस्था हेतु नित्य प्राणायाम, योग शुद्ध हवा का सेवन करना, सात्विक भोजन ग्रहण करना, सात्विक विचारों को अपने भीतर लाना अन्य-अन्य बातें कही गई है। वृक्षारोपण समय-समय पर करते रहना, जड़ी बूटी एवं धृत से आहुति देना पर्यावरण के प्रति प्रत्येक मानव को सचेत किया गया है। पर्यावरण के मूल्य घटक पॉच तत्वों मे।देवत्व का भी दर्शन दिखाई पड़ता है पॉच तत्वों में पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश को प्रदूषण से बचाने के लिए अनेक उपचार करना चाहिए यह बातें कही गई हैं जो मानव को प्रेरित करती हैं।

प्रथम तत्व पृथ्वी-अथर्ववेद सहिता में पृथ्वी को माता कहकर पुकारा गया है, मानव को उसका पुत्र कहा गया है, पुत्र अपने माता-पिता की रक्षा जिस तरह से यत्न पूर्वक करता है उसी प्रकार से धरती रूपी माता की भी रक्षा मानव को अपने पुरुषार्थ अनुसार करना चाहिए, इसके अतिरिक्त दोहन न करने के लिए सकेंत भी दिया गया है, परन्तु आज का मानव हर परिस्थिति में लाभ पाना चाहता है वह चाहता है कि धरती का अधिक से अधिक दोहन कर लिया जाए, इसके भीतर या बाहर जो कुछ भी अमूल वस्तुएं हैं, उन सब को धरती से छीन लिया जाए परंतु अथर्ववेद के ऋचाएँ पृथ्वी के दोहन के लिए निषेध करती है। शिला, भूमि, धूल और पत्थर इनके रूपों को पृथ्वी धारण करती है और भलि प्रकार से स्वर्ण की खान को अपने वक्षः स्थल में धारण करने वाली पृथ्वी को मैं प्रणाम करता हूँ। ऐसी बाते कही गई है। जो दृष्टव्य है।

''यन्तमेध्य पृथिवी यच्य नमस्ते, यास्त ऊसर्जन्वः संबभृवुः।
तसु नो धेहयभिनः पवस्व, माता भूमिः पुत्रों अहं पृथिव्याः।।"[2]
शिला भूमि रश्मा पांसु सा भूमि संधृता धृता।

तस्यै हिरण्य वक्षसे पृथिव्या आकरं नमः।।"[3]
त्रीणीच्छन्दांसि कवयो वियेतिरे पुरुरूपं दर्शतं विश्वचक्षणम्।
आपो वाता ओषयस्तान्येकस्मिना भुवन आर्पितानि।।"[4]

प्रकृति के प्रत्येक कण में विद्यमान आतंरिक शक्ति जो की गति एवं ऊर्जा तथा परिधि ब्रह्मशक्ति जो की रक्षा प्रदान करती है बात चाहे पर्यावरण की हो अथवा वन्य जीव सरंक्षण की वैदिक साहित्य में इसके पर्याप्त साक्ष्य मौजदू हैं। ऋग्वेद जब पृथ्वी को माता आकाश को पिता कहता है तो वह संपूर्ण पारिस्थितिकी को सरंक्षण की अप्रत्यक्ष प्रेरणा देता है इसके बाद यजुर्वेद जब पथ्वी, जल, औषधि की हिसां करने का निषधे करता है तब यह स्पष्ट रूप से घोषित किया जाता है कि हम ना तो पृथ्वी के प्रति हिसां करें ना ही औषधीय के प्रति हिसा करे, इन वाक्यों से यह स्पष्ट है कि न केवल पृथ्वी अपितु वन औषधीय, वन्यप्राणियों की भी रक्षा किया जाना अत्यतं आवश्यक है वे सम्पूर्ण तंत्र अर्थात पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश को सुरक्षित करने का न केवल उपदेश देते हैं बल्कि प्रयत्न भी करते हैं।

''तन्माता पृथिवी तत्पिताः"।[5]
''अन्तर्धिदेवाना।परिधिर्ममनुष्याणाम्"।[6]

दूसरा तत्व जल ही जीवन का मुख्य आधार है इस धारणा को ध्यान में रखते हुए वैदिक ऋषियों ने भी स्वच्छ जल के प्रयोग की बात कही है क्योंकि जल के अशुद्ध होने से शरीर में वात, पित्त, कफ की स्थिति बिगड़ती है जिससे स्वास्थ्य बिगड़ता है, स्वच्छ जल में अमृत एवं औषधि निवास करता है, जल की सुरक्षा एवं जल के संरक्षण से ही हमें स्वच्छ जल मिल सकता है ऋग्वेद में जल के द्वारा समस्त रोगों के निवारण का बात बताया गया है जल ही सम्पूर्णजगत व संसार की प्रतिष्ठा है, वैदिक ऋषियों का मानना है कि जल से उर्जा उत्पन्न होती है। वर्षा का जल, कुएं का जल, समुद्र का जल और धरती से स्वयं प्रस्तुत जल हम सभी के लिए कल्याणकारी है, पर्यावरण के घटक जल को प्रदूषण से रोकने के लिए वैदिक ऋषियों ने जल को भी देवत्व की संज्ञा दी है। ''जल ही ईश्वर है'' ऐसा कहकर मानव के अतंःकरण में भी जल के लिए आदर सम्मान और सुरक्षा उत्पन्न करने का अथक प्रयास किया है। गीता में भी जल को भगवान ने स्वयं अपना स्वरूप बताया है।

''आपोहिश्ठा मयोभुवस्था न ऊर्जेदधातन।"[7]
''आपो हि सर्वस्व जगतः प्रतिष्ठा"।[8]
''सरसामस्मि सागरः, स्त्रोतसामस्मि जाहनवी"।[9]

तीसरा तत्व तेज वैदिक परम्परा के अनुसार पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए पर्यावरण के घटक अग्नि तत्व की भी भूमिका महत्वपूर्ण है। जिस प्रकार से हमारा शरीर तेज तत्व के बिना निराधार हो जाता है, उसी प्रकार जगत भी अग्नि तत्वों के बिना उदासीन है, निराधार है अग्नि तत्व का पर्यावरण के शोधन में विशेष योगदान है, वैदिक ऋषियों ने अग्नि को माध्यम बनाकर यज्ञ की विधाओं द्वारा पर्यावरण सरंक्षण को शुद्ध करने के लिए मानव को वेद के माध्यम से सचेत किया, अग्नि में दी हुई आहुति वायुमडण्ल में व्याप्त रोगाणु विषाणुओं को दुर करती है। यह कोरोना काल में पूर्णतः स्पष्ट हो चुका है। अग्नि सूक्त में अग्नि के लिए प्रार्थना की गई है अग्नि को देवता मानकर शुद्ध स्वच्छ अग्नि की प्रार्थना किया गया है। गीता में यज्ञ से ही प्राणियों की रक्षा, पर्यावरण सरंक्षण के संकेत मिलते हैं, यज्ञ से ही पर्यावरण सतुंलन के लिए वर्षा होती है, वर्षा से अन्य उत्पन्न होता है, अन्य से प्राणियों की रक्षा होती है। अतः यज्ञ कर्म परम आवश्यक है, यज्ञ अग्नि के बिना सभंव नहीं है, इसलिए पर्यावरण को सरंक्षित करने के लिए अग्नि तत्व की प्रधानता प्रबल स्पष्ट हैं।

''स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनों भवन सचस्वा नः स्वस्तये।"
''अग्नि देवता वातो देवता सूर्योदेवता चन्द्रमा देवता"।[10]
''यज्ञात्भवति पाराथन्यः पर्जन्यादन सम्भवः, अन्नादभवति भूतानि यज्ञ कर्म समद्रुभवः।[11]

वायुतत्व- वायु का पर्यावरण तथा हमारे जीवन में घनिष्ठ सम्बन्ध है क्योंकि वायु द्वारा ही श्वास प्रश्वास की क्रिया सम्भव होती है। ऋग्वेद में वायु के लिए विश्वभेषज शब्द का प्रयोग किया गया है।

''आवात वाहिद भेशजं विधायक वाहिद यद्पः।
त्वं हिंदी विश्व भेजो दिवानां दूत ईयसे।।"[12]

उपरोक्त कथन यह है कि विश्वभेषज कहकर उसे दूषित वायु को दुर कर शुद्ध वायु प्रवाहित करने की कामना की गई है। वैदिक ऋषियों को यह भली भांति ज्ञात था कि शुद्ध वायु हृदय के लिए शांतिदायक, सुख कारक व आयुवर्धक है।

"वातावरण आ वायु भेशज शम्भु मयोभु नो हृदे प्रण आयूशि तारिशत"

मनुष्य और पशुओ।के मल-मूत्र, फैक्ट्री से निकलने वाले धुए से वातावरण दूषित होता है, इससे वायमुडण्ल में ऑक्सीजन की कमी होकर वह कार्बनडाइऑक्साइड से यकुत गैस कार्बनडाईऑक्साइड से युक्त होकर ढक जाता है। इसके लिए वेद में प्रत्येक गृहस्थ को वायु को शुद्ध स्वच्छ बनाने के लिए प्रेरित किया गया है कि प्रत्येक गृहस्थ को यज्ञ करना चाहिए, यज्ञ क्रिया के द्वारा प्रयुक्त जड़ी बुटियाँ, औषधीय इत्यादि से प्रचुर मात्रा में ऐसी गैस निकलती है जो वायमुडण्ल मे।फैली प्रदषूण वायु को दुर कर शुद्धभेषज वायु का प्रसार करती है। वायु में अनेक प्रकार की गैस हैं वेद में गैसों के पारिभाषिक नाम इस प्रकार से हैं- हाइड्रोजन-नारद वायु, कार्बनर्बडाइऑक्साइड-रूद्ध नीलकंठ वायु, नाइट्रोजन-रूप ज्योति, ऑक्सीजन-सोमवायु, इसमें सबसे महत्वपूर्ण ऑक्सीजन गैस है। वायमुडण्ल में जब ऑक्सीजन की कमी होती है, तभी वायमुडंल प्रदूषित होता है इसलिए वेद में शुद्ध वायु को देवता कहकर प्रणाम किया गया है कि आप शुद्ध रूप से प्रवाहित होकर हमारा कल्याण करें।

आकाश पर्यावरण सरंक्षण में आकाश तत्व की भूमिका अत्यधिक महत्वपूर्ण हैं, इसमें ओजोन परत की रक्षा परम आवश्यक और चितंन का विषय हैं। आधुनिक काल में भूमण्ल पर वाहनों व उद्योग से निकलने वाली ध्वनि आकाश में असन्तुलन उत्पन्न करती हैं। जिसे ध्वनि प्रदूषण कहाँ जाता है। प्राचीन काल में ऋषि ध्वनि प्रदषूण के प्रति सजग थे। "भद्रं कर्णेभि श्रणुयाम देवास भद्रं पष्येमाक्षभिज्त्रत्रा:। स्थिरे रंगैस्तूश्टुवाऽस्तूप भिर्व्यसेमहि देवहितं यदाय;।।"[13]

वन्य प्राकृतिक सपंदा है और इस पांचों तत्वों को शुद्ध समृद्धि पर्यावरण से मिलती है। किसी भी राष्ट्र के अच्छी अर्थ व्यवस्था के लिए कुल भूभाग का 35 प्रतिशत धरा जंगल से ढका होना चाहिए, जबकि हमारे भारत वर्ष का लगभग 18 प्रतिशत भूभाग वन से अच्छादित है।

अथर्ववेद में कहा गया है कि जिस धरा पर वनस्पति है, वहा समस्त सुख प्रदान होती है। जिस धरा पर वृक्ष, वनस्पतियां हमेशा खड़े रहती हैं, वह भूमि समस्त प्राणियों का भरण पोषण करने में सक्षम होती है। वह देश की आय का ससांधन होते हैं जैसे विकासशील देश अपनी पृथ्वी पर जंगलों में इको पर्यटन स्थल स्थापित कर विदेशी मुद्रा अर्जित करने का साधन बना सकता है, मनोरंजन का माध्यम भी होते हैं। हमारे वेद में दर्शाया गया मार्ग पर चलकर सतुंलित और सुखद पर्यावरण को बनाए रखते हुए, सुख वा समृद्धि से जीवन यापन किया जा सकता है।

समस्त तथ्य को जानने के बाद हम यहां कह सकते हैं कि पर्यावरण को प्रदूषण से मुक्त करने के लिए हमें पुन: वेद की शरण में जाना होगा। वेद तक पुन: लौटना होगा। आधुनिकीकरण के इस युग में मानव अपने अस्तित्व को भी भुल चुका है, मानव का अस्तित्व आदि ग्रथं वेद में छिपा है तथा पर्यावरण सरंक्षण की बात सर्वप्रथम वेद ने ही हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. मनुस्मृति
2. अथर्ववेद
3. अथर्ववेद
4. अथर्ववेद
5. अथर्ववेद
6. अथर्ववेद
7. ऋग्वेद,
8. अथर्ववेद
9. भगवदगीता
10. यजुर्वेद
11. भगवदगीता
12. ऋग्वेद
13. यजुर्वेद

पर्यावरणीय मुद्दे और उसका सतत् विकास

(Environmental IssuesAnd Sustainable Development)

शशिकला यादव

(असि0 प्रोफेसर) शिक्षा विभाग, आर0आई0ई0टी0 कालेज, लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत

शोध सार (Abstract): वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों में ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत, अपक्षय, अम्ल वर्षा तथा हरित भवन, प्रभाव आदि शामिल हैं। देशीय पर्यावरणीय मुद्दों में प्राकृतिक व मानव निर्मित पर्यावरणीय मुद्दे वायु गुणवत्ता, जैव विविधता, संरक्षण, वनों की कटाई, मरूस्थलीकरण, पर्यावरण पर्यटन, लुप्तप्राय प्रजातियाँ, ऊर्जा, आनुवांशिकी रूप से संशोधित जीव, पर्यावास हानि, अन्तरपीढ़ीगत समानता, सघन खेती, आक्रामक प्रजातियाँ, भूमि अवक्रमण, प्राकृतिक आपदायें, प्रदूषण, परमाणु ऊर्जा, जनसंख्या वृद्धि, मृदा अपक्षरण विषाक्त रसायन, अपशिष्ट, पानी की कमी आदि शामिल हैं। सतत् विकास से तात्पर्य विकास के उस अनुकूलतम स्तर से है जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाये बिना संसाधनों के सर्वोत्तम उपयोग से प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान में सतत् विकास एक वैश्विक दृष्टिकोण बन गया है। 1992 ई0 के पृथ्वी सम्मेलन में घोषित एजेंडा 21 में रियो घोषणा पत्र में इसके प्रति पूर्ण समर्थन प्राप्त किया गया। 2002 ई0 के जोहांसबर्ग सम्मेलन का मुख्य मुद्दा सतत् विकास ही था। इसके माध्यम से प्राकृतिक संसाधनों का कम से कम उपयोग करके आर्थिक विकास की दर को बढ़ाया जा सकता है।

मुख्य शब्द (Keywords): वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दे, देशीय पर्यावरणीय मुद्दे, ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत अपक्षय, अम्ल वर्षा, हरित भवन प्रभाव, प्रदूषण, जैव विविधता व जनसंख्या वृद्धि।

प्रस्तावना (Introduction): वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दों में ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत अपक्षय, अम्ल वर्षा व हरित भवन प्रभाव आदि प्रमुख हैं। देशीय पर्यावरणीय मुद्दों में प्रदूषण, जैव विविधता, वनों की कटाई, जनसंख्या वृद्धि, ऊर्जा, मृदा अपक्षरण, विषाक्त रसायन, लुप्तप्राय प्रजातियाँ आदि शामिल हैं। विश्व का ध्यान सर्वप्रथम जून 1972 में स्वीडन की राजधानी स्टाकहोम में हुए अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण सम्मेलन ने खींचा, जिसमें भारत सहित 58 राष्ट्रों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया तथा विश्व के 119 देशों ने पहली बार एक ही पृथ्वी का सिद्धान्त स्वीकार किया। इसी सम्मेलन से संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम का शुभारम्भ हुआ। यहाँ पारित स्टाकहोम घोषणा पत्र पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित गतिविधियों का ऐतिहासिक दस्तावेज है, जिसमें पर्यावरण संरक्षण एवं प्रदूषण नियंत्रण के 26 सिद्धान्त वर्णित किये गये हैं। इस सम्मेलन से सम्पूर्ण विश्व में पर्यावरण का महत्व प्रतिपादित हुआ व पर्यावरण के संरक्षण की नई चेतना जागी।

"पृथ्वी सम्मेलन 1992" स्टाकहोम सम्मेलन के 20 वर्ष बाद, 3 जून से 15 जून तक ब्राजील के शहर 'रियो डी जेनेरियो' में पर्यावरण सम्मलेन आयोजित किया गया, जिसको "पृथ्वी सम्मेलन 1992" की संज्ञा दी गई। इस सम्मेलन में एक बार फिर 165 से अधिक राष्ट्राध्यक्ष, प्रधानमन्त्रियों, पर्यावरण विशेषज्ञों व पत्रकारों आदि ने भाग लिया। इस सम्मेलन में सभी ने अपने-अपने देशों के पर्यावरण प्रतिवेदन प्रस्तुत किये साथ ही विगत 20 वर्षों में हुए पर्यावरण प्रयत्नों की समीक्षा की गई और विश्व के समक्ष उपस्थित पर्यावरण चुनौतियों पर जैसे- ग्लोबल वार्मिंग वृद्धि, ओजोन परत अपक्षय, संसाधन संरक्षण, विकास बनाम पर्यावरण, जैविक संसाधनों की विविधता एवं संरक्षण आदि पर विचार प्रस्तुत किये गये एवं एजेंडा-21 के अन्तर्गत 21वीं सदी में पर्यावरण संरक्षण की नई दिशा हेतु निर्देश तैयार किये गये।

वैश्विक पर्यावरणीय मुद्दे (Global Environmental Issues):

'ग्लोबल वार्मिंग (Global Warming): ग्लोबल वार्मिंग से तात्पर्य पृथ्वी का अपने औसत तापमान से अधिक गर्म हो जाने से है। पृथ्वी का तापमान बढ़ते रहना, आक्सीजन की मात्रा कम हो जाना, कार्बन डाइ ऑक्साइड, मीथेन गैस व नाइट्रोजन आक्साइड की मात्रा बढ़ जाना, पृथ्वी पर प्रदूषण बढ़ना, पेड़ पौधों की संख्या में कमी हो जाना ग्लोबल वार्मिंग कहलाता है। जलवायु परिवर्तन का मुख्य कारण ग्लोबल वार्मिंग है।

'जलवायु परिवर्तन (Climate Change): विश्व भर में जलवायु परिवर्तन का विषय सर्वविदित है। इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि वर्तमान समय में जलवायु परिवर्तन वैश्विक समाज के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती है जो पर्यावरणीय मुद्दों में सबसे बड़ा कारण है, इससे निपटना वर्तमान समय की बड़ी आवश्यकता बन गयी है। आँकड़े दर्शाते हैं कि 19वीं सदी के

अन्त से अब एक पृथ्वी की सतह का औसत तापमान लगभग 0.9 डिग्री सेल्सियस बढ़ गया है। समुद्र के जल स्तर में भी लगभग 8 इंच की बढ़ोत्तरी दर्ज की गई है। जलवायु परिवर्तन का जीता-जागता उदाहरण हिमनद का पिघलना व महासागरों का जल स्तर का बढ़ना है।

'ओजोन परत अपक्षय (Ozone Layer Depletion): ओजोन रक्षा कवच के रूप में कार्य करती है। 1970 के दशक में वैज्ञानिकों को ज्ञात हुआ कि वायुमण्डल में उपस्थित ओजोन गैस का धीरे-धीरे क्षरण हो रहा है, जिससे पृथ्वी के पर्यावरण के लिए गम्भीर संकट उत्पन्न हो रहा है। ओजोन की यह परत पृथ्वी के चारों ओर विद्यमान है, जो सूर्य के प्रकाश के लिए फिल्टर का कार्य करती है। सूर्य के अदृश्य प्रकाश में उपस्थित पराबैंगनी किरणों का ओजोन परत अवशोषण कर पृथ्वी सतह पर वनस्पति व प्राणी जगत की रक्षा करती है। ओजोन परत क्षरण के कारणों में ज्वालामुखी विस्फोट से निकली, क्लोरीन गैस, ए0सी0, फ्रिज से निकली CFC गैस, परमाणु केन्द्रों के रेडियोधर्मी विकिरण, वायुमण्डल में नाइट्रोजन की अधिकता व सुपरसोनिक विमानों से निकली CFC आदि शामिल हैं। इनके दुष्प्रभाव को रोकने के लिए जागरूकता की आवश्यकता है।

'अम्ल वर्षा (Acid Rain): जब वायुमण्डल में नाइट्रोजन व सल्फर डाइ आक्साइड की अधिकता होने के कारण वर्षा जल अम्लीय हो जाता है तब अम्ल वर्षा (Acid Rain) होती है। मानवीय उपयोग भी अम्लीय वर्षा के कारण हैं। जैसे जीवाश्म ईंधन का जलना, कचरा, कागज का उत्पाद आदि। प्राकृतिक कारणों में ज्वालामुखी का विस्फोट के दौरान सल्फर का निकलना व आकाशीय बिजली गिरने के कारण नाइट्रोजन आयन का निकलना आदि। अम्लीय वर्षा को कम करने के लिए इन गैसों का कम से कम उत्सर्जन हो, यही बचाव है।

'हरित भवन प्रभाव (Green House effect): वायुमण्डल में कार्बन डाइ आक्साइड गैस द्वारा परावर्तित उष्मीय विकिरण के रोके जाने के कारण वायुमण्डल के तापमान में वृद्धि होती है। परिणामस्वरूप पृथ्वी का तापमान बढ़ता है। इसे हरित भवन प्रभाव (Green House effect) कहते हैं। पृथ्वी के वातावरण में उपस्थित CO_2 गैस कम्बल का कार्य करती है, जो हरित भवन की दीवारों की तरह पृथ्वी सतह से परावर्तित दीर्घ तरंग लम्बाई के अवरक्त विकिरणों को वायुमण्डल में ही रोक लेती है। हरित भवन प्रभाव के कारण तापमान में पृथ्वी, खाद्यान्नों के उत्पादन पर प्रभाव, मौसम चक्र में परिवर्तन तथा क्षेत्रीय पारिस्थितिक तन्त्र में भी परिवर्तन होता है। हरित भवन प्रभाव से बचने के लिए CO_2 की मात्रा को कम करने के लिए जागरूक होना पड़ेगा।

देशीय पर्यावरणीय मुद्दे (Local Environmental Issues):

प्रदूषण (Pollution)% प्रदूषण के तत्व मनुष्यों द्वारा उत्पन्न वे 'अवांछित वाह्य पदार्थ' होते हैं जो कि प्राकृतिक संसाधनों जैसे वायु, जल, वातावरण एवं भूमि आदि को सम्मिलित या एकल रूप से प्रदूषित करते हैं जो निम्नवत् हैं-

'वायु प्रदूषण (Air Pollution): जब वायुमण्डल के वाह्य से विविध प्रदूषक तथा धूल, गैस तथा वाह्य अधिक मात्रा में एकत्रित होकर वायुमण्डल में आरक्षित वायु को प्रदूषित करते हैं तो उसे वायु प्रदूषण कहा जाता है, जो मानव स्वरूप व सम्पत्ति को हानि पहुँचाते हैं, वायु प्रदूषण कहलाते हैं। वायु प्रदूषण के कारण अस्थमा, गले का दर्द, श्वसन सम्बन्धी समस्या विशेषकर फेफड़े का कैंसर आदि रोग जन्म लेते हैं। वायु प्रदूषण से बचने के लिए आक्सीजन को प्रदूषित करने वाले कारकों के प्रति जागरूकता की आवश्यकता है और ईंधनों के प्रति सावधानी की आवश्यकता है।

'जल प्रदूषण (Water Pollution): जल आर्थिक, सांस्कृतिक और जैविक दृष्टि से पृथ्वी का उपयोगी संसाधन है। यह एक मात्र ऐसा प्राकृतिक संसाधन है जिस पर मानव सभ्यता पूरी तरह आश्रित है। जल प्रदूषण का जीता जागता उदाहरण नदियों का प्रदूषित होना है। जल प्रदूषण का मुख्य कारण फैक्ट्री एवं उद्योगों से निकलने वाले अपशिष्ट पदार्थ रासायनिक विषाक्त तत्व, उर्वरक एक कीटनाशक पदार्थों का जल स्रोतों में मिश्रण, आण्विक ऊर्जा एवं पावर हाउस से निकला उष्ण जल, मानव व पशु मल, सड़े-गले आहार तथा अन्य कार्बनिक पदार्थों का जल स्रोतों में मिलना आदि है। इन मुख्य कारणों से बचाव करके जल प्रदूषण को कम किया जा सकता है। जल प्रदूषण से बचाव के लिए जागरूकता की आवश्यकता है।

'मृदा प्रदूषण (Soil Pollution): मनुष्य की विविध गतिविधियों अथवा भूमि के दुरूपयोग द्वारा मिट्टी के भौतिक रासायनिक व जैविक गतिविधियों में बदलाव, जिसके कारण मिट्टी की गुणवत्ता व उर्वरता में क्षरण हो जाय, भू प्रदूषण या मृदा प्रदूषण कहलाता है। मृदा-प्रदूषण के मुख्य कारणों में कृषि में उर्वरकों, रसायनों तथा कीटनाशकों का अधिक प्रयोग, औद्योगिक इकाइयों, खानों तथा खाद्यानों द्वारा निकले ठोस कचरों का विसर्जन प्लास्टिक की थैलियों का अधिक उपयोग तथा घरों, होटलों तथा औद्योगिक इकाइयों द्वारा निकलने वाले अपशिष्ट आदि सम्मिलित है। इन कारणों को कम करके मृदा प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

'ध्वनि प्रदूषण (Noise Pollution): शोर एक अवांछित ध्वनि है। सीमा से अधिक ध्वनि प्रदूषित ध्वनि है। सामान्यत: 90 डेसीबल से अधिक ध्वनि प्रदूषित ध्वनि है। ध्वनि प्रदूषण के मुख्य दो स्रोत हैं–

1. प्राकृतिक स्रोत (Natural Source): प्राकृतिक स्रोत द्वारा उत्पन्न शोर घातक नहीं होता क्योंकि इसकी प्रकृति अस्थाई एवं प्रभाव क्षेत्र व्यापक होता है। बिजली की कड़क, बादलों का गर्जन, तीव्र हवाएं, आँधी–तूफान इसमें सम्मिलित है।
2. मानवीय स्रोत (Man Made Source): मानवीय स्रोत के अन्तर्गत उद्योग, वायुयान, मोटर, वाहन, रेलगाड़ी, लाउड स्पीकर, रेडियो, टेलिवीजन, चुनाव प्रचार आदि सम्मिलित हैं।

प्राकृतिक स्रोतों को तो नियंत्रण में नहीं किया जा सकता लेकिन मानवीय स्रोतों पर नियंत्रण करके वायु प्रदूषण को कम किया जा सकता है।

'जनसंख्या (Population): बढ़ती जनसंख्या पर्यावरण के मुख्य कारणों में है। जनसंख्या वृद्धि पर्यावरण सुरक्षा को कम करता है। जितनी आबादी में बढ़ोत्तरी होगी पर्यावरण सुरक्षा उतना ही कम होगा। जनसंख्या वृद्धि से कार्बन डाइ आक्साइड गैस में वृद्धि होगी जबकि पर्यावरण असुरक्षा से आक्सीजन में कमी आयेगी जिसके कारण पर्यावरण क्षति होना निश्चित है। जनसंख्या वृद्धि के कारण वनों की कटाई व औद्योगिक कारखानों में वृद्धि देखने को मिलती है जो पर्यावरण के लिए घातक है।

'सतत् विकास (Sustainable Development): सतत् विकास से तात्पर्य विकास के उस अनुकूलतम स्तर से है जो पर्यावरण को क्षति पहुंचाये बगैर संसाधनों के इष्टतम उपयोग से प्राप्त किया जाता है अर्थात् सतत् विकास वह विकास है जो लम्बे समय तक विकास की गति को दिशा देता रहे। सतत् विकास वैश्विक दृष्टिकोण है। सतत् विकास के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण को गति दिया जा सकता है। सतत् विकास के अभाव में पर्यावरण संरक्षण सम्भव नहीं, क्योंकि मानव गति के साथ पर्यावरण संरक्षण की गति भी आवश्यक है जो सतत् विकास के माध्यम से पूर्ण किया जा सकता है। सतत् विकास के लिए जन–जन को पर्यावरण संरक्षण के लिए जागरूक होने की आवश्यकता है। मानवीय स्रोतों पर नियंत्रण करके सतत् विकास को गति दिया जा सकता है।

निष्कर्ष (Conclusion): निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि पर्यावरणीय मुद्दों में वैश्विक व देशीय मुद्दों की चर्चा की गयी है। वैश्विक मुद्दों में ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन, ओजोन परत अपक्षय तथा हरित भवन प्रभाव एवं देशीय मुद्दों में प्राकृतिक व मानव निर्मित पर्यावरणीय मुद्दे गुणवत्ता, जैव विविधता, संरक्षण, वनों की कटाई, मरूस्थलीकरण, पर्यावरण पर्यटन, ऊर्जा, अन्तरपीढ़िगत समानता, सघन खेती, आक्रामक प्रजातियाँ भूमि अवक्रमण, प्राकृतिक आपदायें, प्रदूषण, परमाणु ऊर्जा, जनसंख्या वृद्धि, मृदा अपक्षण, विषाक्त रसायन, अपशिष्ट, पानी की कमी आदि शामिल है। वैश्विक स्तर पर पर्यावरीणय मुद्दों में ओजोन परत अपक्षय सबसे महत्वपूर्ण मुद्दा है। ओजोन परत अपक्षय के जिम्मेदार वैश्विक स्तर पर हम सभी लोग हैं। जब तक हम और आप मिलकर सी0एफ0सी0 के प्रयोग पर नियंत्रण नहीं करेंगे तब तक ओजोन परत अपक्षय पर थोड़ी सी भी कमी नहीं आयेगी। देशीय पर्यावरणीय मुद्दों में जनसंख्या वृद्धि व प्रदूषण मुख्य मुद्दे हैं जो पर्यावरण को क्षति पहुँचाने में विशेष योगदान रखते हैं। जनसंख्या वृद्धि के कारण CO_2 की मात्रा में औसत से ज्यादा वृद्धि होती है जो हरित गृह प्रभाव को प्रभावित करता है और O_2 की मात्रा में हरियाली कम होने के कारण कमी होती जायेगी जिससे पर्यावरणीय क्षति में वृद्धि होती जायेगी। प्रदूषण भी पर्यावरण क्षति का मुख्य कारण है गंगा, यमुना, गोमती आदि नदियाँ जीता–जागता प्रदूषण के उदाहरण हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ-सूची

- शुक्ला, डॉ0 संजीव कुमार, सिंह, डॉ0 दीपशिखा (2022), पर्यावरणीय शिक्षा, साहित्य प्रकाशन, आगरा।
- गोयल, एम0 के0 (2019), पर्यावरणीय शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा।
- बिष्ट, डॉ0 सुजाता (2005), पर्यावरण शिक्षा, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली।
- तिवारी, डॉ0 प्रेमसागर नाथ (2023), पर्यावरणीय मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसीदास, दिल्ली।
- पाण्डेय, डॉ0 विमलेश कुमार (2006), पर्यावरण एक अध्ययन, पब्लिकेशन्स, संजय बुक सेंटर, वाराणसी।
- बघेल, डॉ0 गुलाब सिंह (2012), पर्यावरणीय अध्ययन, विश्वभारती प्रकाशन, नई दिल्ली।
- मिश्रा, डॉ0 अवंतिका (2023), पर्यावरण शिक्षा, जे0टी0एस0 पब्लिकेशन्स।

अग्नि पुराण में वनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन के उपाय

डॉ० अल्पना शर्मा

एसो. प्रोफेसर, संस्कृत. दर्शन एवं वैदिक अध्यन विभाग, बनस्थली विद्यापीठ. राजस्थान

पर्यावरण सन्तुलन के लिए वनस्पतियों को संरक्षित एवं संवर्द्धित करने के उपायों को अनादिकाल से ही अनिवार्य माना गया है। वैदिक ऋषियों ने वनस्पतियों को आवश्यक मानकर इन पर देवत्व को आरोपित करते हुए, इन्हें मातृवत् पूजनीय कहा है। इसी भाव का निर्वहण करते हुए पुराणों में वृक्षों का संरक्षण पुत्रवत् गति प्रदान करने वाला स्वीकार किया गया है-

दशकूप समावापी दशवापी समोह्रदः।

दशह्रदः समः पुत्रो दशपुत्र समो द्रुमः।।

अर्थात् दस कुएँ एक वापी के समान, दस वापी एक सरोवर के समान, दस सरोबर एक पुत्र के समान और दस पुत्र एक वृक्ष के समान हैं।

पुत्र से अधिक वृक्ष की महत्ता इस मत की।ोतक है कि तत्कालीन मनुष्य के लिए वृक्ष का संरक्षण पुत्र से बढ़कर था। इसीलिए पुराणों में वृक्ष वि॥ पर विशेष महत्त्व दिया गया। अग्निपुराण, मत्स्यपुराण एवं विष्णुधर्मोत्तर महापुराण में वृक्षायुर्वेदाध्याय लिखा गया है। ब्रह्मवैवर्त पुराण, पद्मपुराण, हरिवंश पुराण, ब्रह्माण्ड पुराण और वायु पुराण में वृक्ष समारोपण विधि का उल्लेख किया गया है।

Keywords; अग्नि पुराण, वृक्षारोपण, सिंचन, संवर्धन, संरक्षण

अग्नि पुराण में वृक्ष प्रतिष्ठा विधि को शुक्ति तथा मुक्ति प्रदान करने वाली कहा गया है। विशिष्ट विधि से वृक्ष के अंकुर को आरोपित करने का वर्णन किया गया है।

अंकुरारोपण विधि-

वृक्ष के आरोपण के लिए उचित भूमि के चयन एवं परीक्षण के साथ-साथ उनके अंकुर के आरोपण हेतु शराव, घटिका, पाली इत्यादि विशिष्ट पात्रों का निर्धारण उपयुक्त माना गया है। अंकुर को आरोपित करने हेतु यव, धान, तिल, गेहूँ, पीली सरसों, कुल्थी, उड़द एवं निष्पाव को शुद्ध कर धो लें. तत्पश्चात् उपर्युक्त पात्रों में गीली मिट्टी के साथ इन समस्त पदार्थों को मिलाकर भर दें। ऐसी मिट्टी में वृक्ष के अंकुर को आरोपित करना चाहिए-

शराव पाली स्वाङकुरारोहणेहिता,

यवांशालीस्तिलान्मुद्ग्यान्गोधूमान्सित सर्षपान्

कुलत्थमाषनिष्पावान्सालयित्वा तु वापयेत्।।'

इतना ही नहीं वृक्षों का रोपण करने में विशिष्ट तिथियों के सम्बन्ध में भी अग्निपुराण में निर्देश दिया गया है-

सप्तम्यां वा त्रयोदश्यां दमनं संहिताणुभिः

संपूज्य बोधयेद् वृक्ष भववाक्येन मन्त्रवित।

अर्थात् सप्तमी अथवा त्रयोदशी के दिन संहिता मन्त्रों द्वारा दमन की पूजा करके मंत्रज्ञ व्यक्ति द्वारा शिव की आज्ञा से वृक्ष को लगाना उचित है।

पौधों में अन्तराल के द्वारा-

पोधों का रोपण कितनी दूरी पर किया जाये इस विषय में अग्नि पुराण की मान्यता है कि वृक्षों का एक दूसरे से बीस हाथ का अन्तर उत्तम माना जाता है, सोलह हाथ का अन्तर मध्यम तथा बारह हाथ का अन्तर अधम है। वृक्षों का आरोपण यदि अति निकट होगा तो उनके संवर्द्धन में कमी आयेगी। उनमें फल भी नहीं आयेंगे।

इसके साथ ही यदि दो पेड़ की शाखाएँ एक दूसरे का स्पर्श करें, तो उन्हें शस्त्र से काटना चाहिए-

उत्तमा विंशतिर्हस्ता मध्यमाः षोडशान्तराः।
स्थानात्स्थानान्तरं कार्य वृक्षाणां द्वादशावरं।।
विफलाः स्युर्घना वृक्षाःशस्त्रेणादौहिशोधनम्।।[3]

ऋतु के अनुसार वृक्षारोपण-

ऋतुएँ वनस्पतियों के संवर्द्धन एवं संरक्षण को प्रभावित करती हैं अतः ऋतु विशेष के अनुसार वृक्षारोपण का भिन्न-भिन्न काल अग्नि पुराण में वृक्षायुर्वेद कथन नामक अध्याय में बताया गया है-

सायं प्रातस्तु धर्मान्ते शीतकाले दिनान्तरे।
वर्षारात्रौ भुवःशोर्षे सेक्तव्या रोपिता दुमाः।।[4]

वर्षा ऋतु के प्रारम्भ में सांयकाल और प्रातःकाल वृक्षों का आरोपण करना चाहिए, शीतकाल में दिन के अन्त में वृक्षारोपण उत्तम माना गया है। वर्षा ऋतु में रात्रि में भी वृक्ष लगाना श्रेष्ठ है। पृथ्वी के सूख जाने पर रोपित वृक्षों को सींचने का विधान है।

भूमि शोधन के माध्यम से वनस्पति संवर्द्धन एवं संरक्षण

वृक्षों को आरोपित करने से पूर्व भूमि का परीक्षण आवश्यक माना गया है। पुराणों के अनुसार वृक्षों के लगाने से पूर्व शस्त्र इत्यादि से भूमि पर गड्ढा खोदकर भूमि की शुद्धि की जाती है। जिस गड्ढे में वृक्ष लगाना है उसे जल से पूर्णः भर देना चाहिए, उसके बाद वायविडंग का चूर्ण घृत में लपेटकर उस गर्त में डालने से भूमि का शोधन हो जाता है।

विदंङ्गघृतपङ्काक्तान्सेंचयेच्छीतवारिणा।

नक्षत्रों के अनुसार वनस्पतियों का रोपण-

अग्निपुराण का मत है कि ग्रह, नक्षत्र इत्यादि केवल मानव को ही प्रभावित नहीं करते हैं बल्कि वनस्पतियाँ भी उनके प्रभाव से अछूती नहीं रहती हैं। इस पुराण के वृक्षायुर्वेद कथनश् नामक 282वें अध्याय में वृक्षारोपण के लिए कतिपय विशिष्ट नक्षत्रों की उपस्थिति को अनिवार्य माना है।

ध्रुवाणि पंचवाव्यं हस्तं प्राजेशवैष्णवम्।
नक्षत्राणि तथामूलं शस्यन्ते द्रुमरोपणे।।

अर्थात पूकों का आरोपण ध्रुव (तीनों उत्तरा रोहिणी, रेवती) अभिजित् (मुहूर्त विशेष), हस्त, पूर्वाषाढा, शतभिषा और मूल नक्षत्रों में करना चाहिए।

बगीचे में भी वृक्ष लगाये जाते हैं अतएव बगीचे की प्रतिष्ठा सूर्य के उत्तरायण होने पर किये जाने का निर्देश है।

वास्तु के आधार पर वनस्पतियों का रोपण-

वनस्पतियों के समुचित संवर्द्धन एवं संरक्षण के लिए वास्तु के महत्व को भी अग्नि पुराण ने अंगीकार किया है। इसके लिए दिशा विशेष में विशिष्ट वृक्ष लगाये जाने को उपयुक्त माना है-

उत्तरेण शुभः प्लक्षो वटः प्राक्स्यादगृहादितः।
उदुम्बरश्च याम्येन पश्चिमेऽश्वत्थ उत्तमः।।

अर्थात् घर के उत्तर में पाकड़, पूर्व में बरगद, दक्षिण में गूलर एवं पश्चिम में पीपल का वृक्ष लगाना अति उत्तम है।

दक्षिण दिशा में कांटे वाले वृक्ष (बबूल, बेर आदि) घर के समीप शुभ बताये गये हैं। घर के निकट उद्यान में तिल या फल वाले वृक्षों का रोपण श्रेष्ठ माना है।

विशिष्ट सिंचन विधि द्वारा वनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन-

भूमि के समुचित परीक्षण एवं शोध के बाद नक्षत्र वास्तु आदि के आधार पर समुचित दूरी बनाये रखते हुए बनस्पतियों को रोपित कर देना चाहिए। लेकिन ये वनस्पतियाँ समृद्ध एवं संरक्षित रहें इसके लिए अग्नि पुराण में इनके सिंचन के लिए विशिष्ट विधियों बताई है-

औषधियों द्वारा वनस्पति सिंचन-

औषधि वनस्पतियों जहाँ एक ओर मनुष्य को निरोगी बनाती हैं वहीं दूसरी ओर स्वयं वनस्पतियों के संवर्द्धन में भी लाभकारी सिद्ध होती है- अग्निपुराण में लिखा हुआ है कि

फलनाशे कुलत्थैश्च गाषैर्मुग्दैर्यवैस्तिलैः।
घृतशीतपयः सेकः फलपुष्पाय सर्वदा।।

जिस वृक्ष पर फल लगकर शीघ्र ही नष्ट हो जाता है उसकी जड़ में यदि कुल्थी, उड़द, मूंग, तिल और यव के चूर्ण से मिश्रित शीतल जल से सिंचन किया जाये तो वह वृक्ष पुष्प और फल से हमेशा युक्त रहेगा।

गोबर से वृक्ष सिंचन

यहाँ सामान्य रूप से गोबर का वृक्षों के सिंचन में प्रयोग नहीं दर्शाया है। बल्कि अग्नि पुराण में इसके लिए विधि विशेष बताई गई है-

आविकाजशकृच्चूर्ण यवचूर्ण तिलानि च।
उत्सेकः सर्ववृक्षाणां फलपुष्पादिवृद्धिदः।।

इस विधि में भेड़ एवं बकरी के गोबर के चूर्ण में जौं (यव) का चूर्ण और तिल का चूर्ण घृत के साथ मिश्रित कर लें। यदि इस मिश्रण से वृक्ष का सिंचन किया जायेगा तो वृक्ष हमेशा पुष्पों एवं फलों से समृद्ध रहेंगे।

मछली के जल के माध्यम से सिंचन-

वनस्पतियों के संवर्द्धन में मछली की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका मानी गई हैं इस सम्बन्ध में अग्नि पुराण में वर्णित है-

मत्स्याम्भसा तु सेकेन वृद्धिर्भवति शाखिनः।
विडंग तण्डुलोपेतं मात्स्यं मासंहि दोहदम्।।
सर्वेषांम विशेषेण वृक्षाणां रोगमर्दनम्।।

मछली के धोवन (जल) से सींचने पर वृक्षों की वृद्धि होती है और वायविडंग के चावल तथा मछली का मांस वृक्षों का दोहद है और सामान्य रूप से सभी वृक्षों के रोगों को नष्ट करने वाला है।

इस विशिष्ट सिंचन विधि का वैज्ञानिक पक्ष यह है कि मछली का जल, भेड़ एवं बकरी की मैंगनी, उड़द और जौ में नाइट्रोजन की प्रचुरता होती है। जल के अन्तर्गत ये पोषक तत्त्व विलीन हो जाते हैं। इस जल से वनस्पतियों का सिंचन उनकी वृद्धि में सहायक सिद्ध होता है।

वृक्ष प्रतिष्ठा विधि से वनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन-

वृक्ष अथवा वनस्पतियाँ संवर्द्धित एवं संरक्षित रहे इसी कारण अग्नि पुराण में पादप प्रतिष्ठा विधि नामक 70वाँ अध्याय वर्णित किया गया है।

प्रतिष्ठा पायपापं च वहयेऽहं भुक्तिमुक्तिदाम्।
सर्वोषाध्योदकैर्सि पत्विष्टातकविभूषितान्।।

वृक्ष प्रतिष्ठा विधि को भुक्ति और मुक्ति प्रदान करने वाली कहा गया है। इस विधि के अन्तर्गत सर्वप्रथम औषधियों के जल से वृक्ष को सींधकर सुगन्धित पूर्ण वृक्षों पर डाल देना चाहिए। तत्पश्चात् उन्हें इस प्रकार संस्कारित करना उचित है।

वृक्षानमाल्यैरलङ्कृत्य वासोभिरमिवेष्टयेत।
सूच्या सौवर्णया, कार्य सर्वेषां कर्णवेधनम।।2।।
हेमशलाकयाऽञ्जनं वै।ां तु फलसप्तकम।
अधिवासयेच्च प्रत्येक घटान्बति निवेदयेत्।।3।।

माला से वृक्षों को सुसज्जित करके वस्त्रों से आवेष्टित कर दें। सोने की सूई से सबका कर्ण भेदन करें, सुवर्ण की शलाका से वृक्षों को अञ्जन लगाये, वेदी पर सात प्रकार के फल रखें। प्रत्येक वृक्ष की विधिवत् पूजा करके घट और बलि प्रदान करें।

इन्द्रादेरधिवासेऽथ होमः कायों वनस्पतेः।
ऋग्यजुः साममन्त्रैश्च वारुणैर्मत्तभैरवैः।।4।।

वृक्षवेदिककुम्भैश्च स्नपनं द्विजपुंगवाः।
तरूणां यजमानस्य कुर्युश्च यजमानकः।1511

इन्द्र आदि का पूजन हो जाने पर वनस्पतियों का हवन करना चाहिए। ऋक, यजुः साम अथवा वरूण मन्त्रों से या मत्त भैरव मन्त्रों से वृक्ष के समीप बनी हुई बेदी के कलशों से ब्राह्मणों, वृक्षों और यजमानों को नहलायें।

भूषितो दक्षिणां द।।द्गोभूभूषणवस्त्रकम्।
क्षीरेण भोजनं द।।।।वद्दिनचतुष्टयम्।।6।।
होमस्तिलाज्यैः कार्यस्तु पलाशसमिधैस्तथा
आचार्य द्विगुणं दधात्पूर्ववन्मण्डपादिकम्।।7।।
पापनाशः परासिद्धिवृक्षारामप्रतिष्ठया।।8।।

यजमान स्नान के अनन्तर सब प्रकार आभूषणों से आभूषित होकर गुरू को गाय, वस्त्र, आभूषण आदि दक्षिणा में दें। चार दिन तक ब्राह्मणों को दुग्ध-पान करायें। तिल, भी और पलाश की समिधा से हवन करें। आचार्य को दुगुनी दक्षिणा दें। मण्डप आदि का निर्माण पूर्ववत करें। इस प्रकार वृक्ष और आराम (उद्यान) की प्रतिष्ठा करने से पापों का नाश होता है और उत्कृष्ट सिद्धि प्राप्त होती है।

यज्ञ द्वारा बनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन

इस सन्दर्भ में अग्नि पुराण में उल्लेख है-

भूमिं मित्वौषधीरिश्छत्वा हत्वाकीटपिपीलिकान।
पुनन्ति खलु यज्ञेन कर्षकादेवपूजनात।[13]

भूमि को तोड़ने से, वनस्पतियों को काटने से. कीटों और चीटियों की हत्या होने से जो अपवित्रता वातावरण में होती है। उसको दूर करने के लिए कृषक के द्वारा यज्ञ किया जाना आवश्यक माना गया है। ऐसा इसलिए कहा गया है क्योंकि यज्ञ में प्रयुक्त समिधाओं के प्रभाव से कीटाणु नष्ट होते हैं और वातारण स्वतः ही शुद्ध हो जाता है। यज्ञ से मेघों की उत्पत्ति होती है जिससे भूमि की उर्वरा शक्ति में वृद्धि होकर भूमि श्रेष्ठ वनस्पतियाँ प्रदान करती है।

ऋषियों की भूमिका-

पौराणिक कालीन ऋषि भी वनस्पतियों के संरक्षण एवं संवर्द्धन में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। अग्नि पुराण में वर्णन है कि-

एको मुनिः कुम्भकुशाग्रहस्त आम्रस्य मूले सलिलं ददाति।
आम्राश्वसिक्ताः पितरश्च तृप्ता एका क्रिया द्वयर्थकरी प्रसिद्धा।[14]

मुनि अपने हाथ में जल से भरा हुआ घड़ा और कुश लेकर आम्र वृक्ष की जड़ में पानी डाल रहा है। इससे आम्रवृक्ष भी सींचे जा रहे हैं और पितर भी तृप्त हो रहे हैं।

राजाओं का कर्तव्य-

सम्पूर्ण राज्य की रक्षा के अन्तर्गत ही वनस्पतियों को संरक्षित एवं संवर्द्धित करना राजा का प्रधान कर्तव्य था। अग्नि पुराण में 223वें अध्याय के अन्तर्गत राजधर्म का निरूपण करते हुए लिखा गया है कि राजा को वन्य सम्पत्ति पर देशकाल के अनुरूप कर लगाना चाहिए। शुक धान्य का षष्ठांश एवं शिम्ब धान्य का अष्टमांश लेना चाहिए। सुगन्धित पदार्थों, ओषधि, रस, पुष्प, मूल, फल, पत्र, शाक, तृण इत्यादि का षष्ठांश कर लेना चाहिए।[15]

दण्ड के द्वारा-

दण्ड भी ऐसा उत्कृष्ट साधन है, जिसके माध्यम से वनस्पतियों का संरक्षण किया जाना आसान हो जाता है। अग्नि पुराण में भी वनस्पतियों को हानि पहुँचाने वालों के लिए अनेकानेक दण्डों का विधान है।

तृण काष्ठ दुमाणां तु शुष्कान्नस्य गुडस्य च।
चेलधर्मामिषाणां तु त्रिरात्रं स्याद्भोजनम।[16]

तृण, काष्ठ, वृक्ष, शुष्कान्न, अन्न, चर्म और मांस चुराने वालों के लिए तीन रात्रियों तक भोजन न कर प्रायश्चित करने का आदेश है। वृक्षों को काटने वालों को भी दण्ड का भागी माना है। वृक्ष काटने वाला वजशस्त्रक नामक नरक में जाता है–

क्षारहृदेप्राणिहन्ता सुरधारे च भूमिहत।

अम्बरीषे गोस्वर्णहृद्रुमच्छिद्वजशस्त्र के।।[17]

इसके अतिरिक्त वृक्षों का छेदन करने वाला मनुष्य सम्पूर्ण पापों को भोगता है और उसके बाद असिपत्र नामक घोर वन में जाता है।[18]

वृक्षं तु विफलं कृत्वा सुवर्ण दण्डमर्हति।

द्विगुणं दापयेच्छित्रे पथिसीम्नि जलाशये।।[19]

सामान्य वृक्ष को काटने वाला एक सुवर्ण दण्ड का भागी होता है। मार्ग, सीमा तथा जलाशय के निकट विद्यमान वृक्ष को काटने वाले को इसका दुगना दण्ड देना चाहिए।

प्ररोहिशाखिनां शाखास्कन्धसर्वविदारणे।

उपजीव्यदुमाणां तु विंशतेर्द्विगुणा दमा:।।[20]

वनस्पतियों एवं जंगल के पत्रों को तोड़ना भी अनुचित था। जिन वृक्षों की शाखाओं से अंकुर निकलते हैं। उनकी शाखाओं, स्कन्धों अथवा उनको पूर्णत: विदीर्ण करने पर बीस पण और उससे दुगना दण्ड दिया जाता था।

क्षेत्र वेश्मवन ग्राम विवीत खल दाहका:।

राजपत्न्यभिगामी च दग्धव्यास्तु कटाग्निना।[21]

जो व्यक्ति खेत, घर, वन, गाँव, चारागाह अथवा खलिहान में आग लगाते हैं, ऐसे मनुष्यों को चटाई में लपेटकर जला देने जैसी कठोर सजा का विधान है।

वृक्षों के ऊपर आरोहण का भी निषेध किया गया है। साथ ही यह भी माना गया है कि लोष्ठ को तोड़ने वाला, तिनके को काटने वाला शीघ्र ही नष्ट हो जाता है। कुछ अन्य नियम भी वृक्षों के संरक्षण के सम्बन्ध में बताये गये हैं। जैसे कि वृक्ष जो जीविका चलाने का साधन हैं, ऐसे आम आदि वृक्षों की शाखा, स्कन्ध तथा मूल सहित सम्पूर्ण वृक्ष का छेदन यदि कोई करता है तो वह क्रमश: 20 पण, 40 पण तथा 80 पण दण्ड का भागी होगा।

धार्मिक दृष्टि से-

अग्नि पुराण में देवताओं की आराधना के पश्चात् वनस्पतियों का रोपण किया जाना उनकी उत्कृष्टता के लिए श्रेयस्कर माना है।

यथा– संपूज्य वरूणं विष्णु पर्जन्यं तत् समाचरेत्।

अरिष्टाशोक पुन्नागशिरीषा: सप्रियंगव:।।

अशोक: कदली जम्बुस्तथा वकुलदाडिमा:।

सायं प्रातस्तु धर्मार्ती शीतकाले दिनान्तरे।।[23]

वरूण, विष्णु और मेघों का सम्यक रूप से अर्थात विधि–विधान से पूजन करके निम्ब, अशोक, नागकेशर, शिरीष, प्रियंगु इत्यादि वृक्षों का आरोपण करें। ब्राह्मण एवं चन्द्रमा की पूजा करने के पश्चात् वृक्षों का आरोपण किया जाना उनकी धार्मिक दृष्टि से रक्षा एवं वृद्धि की भावना का सूचक है–

गृहणीयाद्रोपयेद् वृक्षान द्विजं चन्द्र प्रपूज्य च।।[24]

वृक्ष प्रतिष्ठा विधि के अन्तर्गत की जाने वाली सम्पूर्ण धार्मिक क्रियाएँ वृक्षों की वृद्धि एवं संरक्षण के लिए ही सम्पन्न की जाती थीं।

निष्कर्षत: अग्नि पुराण में वनस्पतियों के सरक्षण एवं संवर्द्धन के लिए किये जाने वाले प्रयास सराहनीय एवं उपयोगी हैं। भूमि शोधन, विशिष्ट अंकुर रोपण विधि, पादप प्रतिष्ठा एवं ओषधियों इत्यादि के द्वारा वनस्पतियों का सिंचन, नक्षत्र, वास्तु की दृष्टि से वनस्पतियों को लगाया जाना उनके संवर्द्धन की दृष्टि से ग्राह्य है। साथ ही ऋषियों, राजाओं की भूमिका, दण्ड एवं

धार्मिक दृष्टि वनस्पतियों के संवर्द्धन के साथ-साथ संरक्षण के प्रति अग्नि पुराण की सजगता को।तित करती है। वनस्पतियों के प्रति आत्मिक भाव एवं उन्हें सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक एवं न्यायिक तरीके से संरक्षण प्रदान करना अग्नि पुराण का श्रेष्ठ मन्तव्य है। इसके द्वारा प्रदत्त वनस्पति संरक्षण एवं संवर्द्धन के उपायों से सम्बन्धित ज्ञान का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग किया जाना इसकी वर्तमान में उपयोगिता का सूचक है।

संदर्भ

1 अग्निपुराण 68/4, 5
2 अग्निपुराण 80/3,4
3 अग्निपुराण 282/8
4 अग्निपुराण 282/7-8
5 अग्निपुराण 282/10
6 अग्निपुराण 282/3-4
7 अग्निपुराण /121/54
8 अग्निपुराण /247/24
9 अग्निपुराण /282/2
10 अग्निपुराण /282/10, 11
11 अग्निपुराण /282/11
12 अग्निपुराण /282/13, 14
13 अग्निपुराण /152/3
14 अग्निपुराण /115/40
15 अग्निपुराण /223/26-28
16 अग्निपुराण /169/31
17 अग्निपुराण /203/16
18 अग्निपुराण /203/10
19 अग्निपुराण /227/32, 33
20 अग्निपुराण /258/25
21 अग्निपुराण /258/67
22 अग्निपुराण /155/17, 18
23 अग्निपुराण /282/6, 7
24 अग्निपुराण /282/3

बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) और सामान्य संपत्ति अधिकार (सीपीआर): एक अवलोकन

डॉ० ममता रानी

(एसोसिएट प्रोफेसर) महालक्ष्मी कॉलेज फॉर गर्ल्स, गाजियाबाद

शोध आलेख**:** बौद्धिक संपदा (आईपी) मानव बुद्धि के किसी भी बुनियादी निर्माण जैसे कलात्मक, साहित्यिक, तकनीकी या वैज्ञानिक निर्माण से संबंधित है। बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) आविष्कारक या निर्माता को उनके आविष्कार या निर्माण उत्पाद की सुरक्षा के लिए दिए गए कानूनी अधिकारों को संदर्भित करता है। ये कानूनी अधिकार आविष्कारक/निर्माता या उसके संचालक को एक विशेष अधिकार प्रदान करते हैं जो सीमित समय के लिए अपने आविष्कार/उत्पाद का पूर्ण उपयोग करता है। दूसरे शब्दों में, हम कह सकते हैं कि कानूनी अधिकार अन्य सभी को आईपी अधिकार धारक की पूर्व सहमति के बिना व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए बौद्धिक संपदा का उपयोग करने से रोकते हैं। आईपी अधिकारों में व्यापार रहस्य, उपयोगिता मॉडल, पेटेंट, ट्रेडमार्क, भौगोलिक संकेत, औद्योगिक डिजाइन, एकीकृत सर्किट के लेआउट डिजाइन, कॉपीराइट और संबंधित अधिकार और पौधों की नई किस्में शामिल हैं। यह बहुत अच्छी तरह से स्थापित है कि आईपी आधुनिक अर्थव्यवस्था में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। बौद्धिक संपदा संरक्षण के कई प्रकार हैं। पेटेंट एक ऐसे आविष्कार के लिए एक मान्यता है जो वैश्विक नवाचार और औद्योगिक अनुप्रयोग के मानदंडों को पूरा करता है। बेहतर पहचान, योजना, व्यावसायीकरण, प्रतिपादन और इस प्रकार आविष्कारों या रचनात्मकता के संरक्षण के लिए आईपीआर आवश्यक है। प्रत्येक उद्योग को अपनी आईपीआर नीतियों, प्रबंधन शैली, रणनीतियों आदि के आधार पर अपनी विशिष्टता विकसित करनी चाहिए। वर्तमान में, फार्मास्युटिकल उद्योग के पास एक उभरती हुई आईपीआर रणनीति है, जिस पर आने वाले युग में बेहतर फोकस और दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

संकेत शब्द: बौद्धिक संपदा अधिकार, प्रबंधन शैली, संरक्षण, वैश्विक नवाचार

परिचय: बौद्धिक संपदा को दिमाग के आविष्कारों, नवाचारों, साहित्यिक और कलात्मक कार्यों, प्रतीकों, नामों और वाणिज्य में उपयोग की जाने वाली छवियों के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। बौद्धिक संपदा संरक्षण का उद्देश्य सभी के लाभ के लिए मानव मन की रचनात्मकता को प्रोत्साहित करना है और यह सुनिश्चित करना है कि किसी रचना के दोहन से उत्पन्न होने वाले लाभ निर्माता को लाभान्वित करें। इससे रचनात्मक गतिविधि को बढ़ावा मिलेगा और निवेशकों को अनुसंधान एवं विकास में उनके निवेश पर उचित रिटर्न मिलेगा।

आईपी व्यक्तियों, उ।मों या अन्य संस्थाओं को उनकी रचनाओं के उपयोग से दूसरों को बाहर करने का अधिकार देता है। बौद्धिक संपदा व्यक्तियों, उ।मों या अन्य संस्थाओं को उनकी सहमति के बिना उनकी रचनाओं के उपयोग से दूसरों को बाहर करने का अधिकार देती है।

डब्ल्यूआईपीओ (विश्व बौद्धिक संपदा संगठन) के अनुच्छेद 2 के अनुसार- बौद्धिक संपदा कानूनों की सुरक्षा के लिए केंद्रीय संगठन और संयुक्त राष्ट्र के विशेषज्ञ संगठन, "बौद्धिक संपदा में साहित्यिक, कलात्मक और वैज्ञानिक कार्यों, आविष्कारों से संबंधित अधिकार शामिल होंगे।" मानव प्रयास के सभी क्षेत्र, वैज्ञानिक खोजें, औद्योगिक डिजाइन, ट्रेडमार्क, सेवा चिह्न और वाणिज्यिक नाम और पदनाम, अनुचित प्रतिस्पर्धा के खिलाफ सुरक्षा, और औद्योगिक, वैज्ञानिक, साहित्यिक या वैज्ञानिक क्षेत्रों में बौद्धिक गतिविधि से उत्पन्न अन्य सभी अधिकार।

आईपीआर, आईपी के आविष्कारक/निर्माता द्वारा किए गए निवेश, समय, धन और प्रयास की सुरक्षा के लिए एक मजबूत उपकरण है, क्योंकि यह आविष्कारक/निर्माता को अपने आविष्कार के उपयोग के लिए एक निश्चित अवधि के लिए विशेष अधिकार देता है। निर्माण। इस प्रकार, आईपीआर स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को बढ़ावा देकर और औद्योगिक विकास और आर्थिक

विकास को प्रोत्साहित करके किसी देश के आर्थिक विकास को प्रभावित करता है। वर्तमान समीक्षा फार्मास्यूटिकल्स पर विशेष जोर देने के साथ आईपीआर का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत करती है।

बौद्धिक संपदा अधिकार का अर्थ

बौद्धिक संपदा अधिकार एक प्रकार का कानूनी अधिकार है जो किसी व्यक्ति के कलात्मक कार्यों, साहित्यिक कार्यों, आविष्कारों या खोजों या किसी प्रतीक या डिजाइन को एक विशिष्ट अवधि के लिए सुरक्षित रखता है। बौद्धिक संपदा मालिकों को कुछ अधिकार दिए जाते हैं जिनके द्वारा वे बिना किसी गड़बड़ी के अपनी संपत्ति का आनंद ले सकते हैं और दूसरों को इसका उपयोग करने से रोक सकते हैं, हालांकि इन अधिकारों को शोषण के एकाधिकार अधिकार भी कहा जाता है, लेकिन ये भौगोलिक सीमा, समय और दायरे में सीमित हैं।

परिणामस्वरूप, बौद्धिक संपदा अधिकारों का उद्योग और व्यापार पर सीधा और पर्याप्त प्रभाव पड़ सकता है, क्योंकि आईपीआर के मालिक ऐसे अधिकारों को लागू कर सकते हैं और जनता के लिए किसी उत्पाद के निर्माण, उपयोग या बिक्री को रोक सकते हैं। आईपी सुरक्षा रचना को गुप्त रखने के बजाय प्रकाशन, वितरण और जनता के सामने प्रकटीकरण को प्रोत्साहित करती है और वाणिज्यिक उ.मों को शोषण के लिए रचनात्मक कार्यों का चयन करने के लिए प्रोत्साहित करती है।

उस उत्पाद का पुनर्विक्रय। पहली सहमति से अधिकार समाप्त हो जाता है। यह सिद्धांत माल की मुक्त आवाजाही की अवधारणा पर आधारित है जो अधिकार धारक की सहमति या अधिकार से लागू होता है। सामान बेचने के विशेष अधिकार का प्रयोग एक ही सामान के संबंध में दो बार नहीं किया जा सकता है। आगे की गतिविधियों को प्रतिबंधित करने का अधिकार समाप्त हो गया है क्योंकि अधिकार धारक ने बाजार में पहली बिक्री के लिए सामान रखकर अपना हिस्सा पहले ही अर्जित कर लिया है।

गतिशीलता: आईपीआर निरंतर विकास की प्रक्रिया में है। जैसे-जैसे मानव गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में प्रौद्योगिकी तेजी से विकसित हो रही है, आईपी का क्षेत्र भी बढ़ रहा है। वैज्ञानिक और तकनीकी प्रगति की आवश्यकता के अनुसार, आईपीआर के दायरे में नई चीजें जोड़ी जा रही हैं और इसके संरक्षण का दायरा बढ़ाया जा रहा है। बायो पेटेंट, सॉफ्टवेयर कॉपीराइट, प्लांट डायवर्सिटी प्रोटेक्शन, ये कुछ नाम हैं जो आईपीआर के क्षेत्र में समकालीन विकास को दर्शाते हैं। बौद्धिक संपदा और इसकी गतिशीलता का महत्व वैधानिक, प्रशासनिक और न्यायिक सहित सभी स्तरों पर अच्छी तरह से स्थापित और प्रतिबिंबित होता है।

बौद्धिक संपदा का दायरा

आईपी अधिकारों का दायरा व्यापक है; यह निर्धारित करने के लिए दो वर्गीकरण मोड का उपयोग किया जाता है कि आईपी कॉपीराइट है या औद्योगिक संपत्ति है। औद्योगिक संपत्तियों में पेटेंट या आविष्कार, ट्रेडमार्क, व्यापार नाम, जैव विविधता, पौधों के प्रजनन अधिकार और अन्य व्यावसायिक हित शामिल हैं। एक पेटेंट अपने धारक को आविष्कार से पैसा कमाने के प्रयोजनों के लिए बौद्धिक संपदा का उपयोग करने का विशेष अधिकार देता है। एक आविष्कार अपने आप में एक नई रचना, प्रक्रिया, मशीन या निर्माण है। कॉपीराइट होने से आपको किसी विचार पर विशेष अधिकार नहीं मिलता है, लेकिन यह उन विचारों की अभिव्यक्ति की रक्षा करता है जो पेटेंट से भिन्न होते हैं। कॉपीराइट कला और साहित्य से लेकर वैज्ञानिक कार्यों और सॉफ्टवेयर तक कई क्षेत्रों को कवर करता है।

यहां तक कि संगीत और दृश्य-श्रव्य कार्य भी कॉपीराइट कानूनों के अंतर्गत आते हैं। कॉपीराइट सुरक्षा की अवधि निर्माता की मृत्यु के 60 वर्ष बाद तक मौजूद रहती है। दूसरे शब्दों में, किसी लेखक की किताब पर उसके पूरे जीवन भर और फिर उसकी मृत्यु के 60 साल बाद तक कॉपीराइट होता है। पेटेंट कानूनों के विपरीत, कॉपीराइट कानूनों में प्रशासनिक प्रक्रिया की कोई आवश्यकता नहीं है।

बौद्धिक संपदा को बढ़ावा और सुरक्षा क्यों दें?

बौद्धिक संपदा को बढ़ावा देने और उसकी सुरक्षा करने के कई कारण हैं। उनमें से कुछ हैं:

1- प्रौद्योगिकी और संस्कृति के क्षेत्र में नए कार्य बनाने और आविष्कार करने की क्षमता में ही प्रगति और मानवता की भलाई बनी रहती है।

2- आईपी सुरक्षा किसी रचना को गुप्त रखने के बजाय उसके प्रकाशन, वितरण और जनता के सामने प्रकटीकरण को प्रोत्साहित करती है।

3- बौद्धिक संपदा का प्रचार और संरक्षण आर्थिक विकास को बढ़ावा देता है, नई नौकरियां और उद्योग पैदा करता है और जीवन की गुणवत्ता में सुधार करता है।

4- बौद्धिक संपदा अन्वेषक के हितों और सार्वजनिक हित के बीच संतुलन बनाने में मदद करती है, एक ऐसा वातावरण प्रदान करती है जहां नवाचार, रचनात्मकता और आविष्कार पनप सकें और सभी को लाभ हो सके।

5- पेटेंट संरक्षण के लिए अर्हता प्राप्त करने के लिए, एक आविष्कार को पेटेंट योग्य विषय के दायरे में आना चाहिए और नवाचार, आविष्कारशील कदम और औद्योगिक अनुप्रयोग की तीन वैधानिक आवश्यकताओं को पूरा करना चाहिए। जब तक पेटेंट आवेदक दावा किए गए आविष्कार का आविष्कार करने वाला पहला व्यक्ति होता है, तब तक नवीनता और आवश्यकता काफी हद तक संतुष्ट होती है। पूर्व प्रकाशन या पूर्व उपयोग से नवीनता का अनुमान लगाया जा सकता है। मात्र खोज को आविष्कार नहीं माना जा सकता। किसी भी विचार या सिद्धांत के लिए पेटेंट की अनुमति नहीं है।

पेटेंट कानून का उद्देश्य वैज्ञानिक अनुसंधान, नई तकनीक और औद्योगिक प्रगति को प्रोत्साहित करना है। पेटेंट जानकारी का आर्थिक मूल्य यह है कि यह उद्योग को तकनीकी जानकारी प्रदान करती है जिसका उपयोग व्यावसायिक उद्देश्यों के लिए किया जा सकता है। यदि कोई सुरक्षा नहीं है, तो किसी अन्य व्यक्ति के निवेश पर मुफ्त यात्रा करने के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन हो सकता है। फ्री-राइडिंग की यह क्षमता कुछ नया आविष्कार करने के प्रोत्साहन को कम कर देती है क्योंकि आविष्कारक प्रोत्साहन की कमी के कारण आविष्कार करने के लिए प्रेरित महसूस नहीं कर सकता है।

ट्रेडमार्क: ट्रेडमार्क मूल का एक बैज है। यह एक विशिष्ट संकेत है जिसका उपयोग वस्तुओं और सेवाओं के स्रोत को वस्तुओं और सेवाओं के संबंध में सार्वजनिक करने और वस्तुओं और सेवाओं को अन्य संस्थाओं से अलग करने के लिए किया जाता है। यह मालिक और उत्पाद के बीच एक संबंध स्थापित करता है। यह किसी उत्पाद की प्रकृति और गुणवत्ता को चित्रित करता है। ट्रेडमार्क का आवश्यक कार्य उस सामान की उत्पत्ति को इंगित करना है जिससे यह जुड़ा हुआ है या जिसके संबंध में इसका उपयोग किया जाता है। यह उत्पाद की पहचान करता है, गुणवत्ता की गारंटी देता है और उत्पाद का विज्ञापन करने में मदद करता है। ट्रेडमार्क किसी व्यवसाय द्वारा बनाई गई सद्भावना का वस्तुनिष्ठ प्रतीक भी है।

कोई भी चिह्न या उसका कोई संयोजन, जो किसी अन्य उपक्रम की वस्तुओं या सेवाओं को अलग करने में सक्षम हो, ट्रेडमार्क बनाने में सक्षम है। यह किसी नाम, शब्द, वाक्यांश, लोगो, प्रतीक, डिजाइन, छवि, आकार, रंग, व्यक्तिगत नाम, अक्षर, संख्या, आलंकारिक तत्व और रंग का संयोजन हो सकता है, साथ ही ग्राफ का प्रतिनिधित्व करने वाला कोई भी संयोजन हो सकता है। ट्रेडमार्क पंजीकरण अनिश्चित काल तक नवीकरणीय हो सकता है।

भौगोलिक संकेत: अनुच्छेद 51ए (एफ) भी है जो भारत की संस्कृति की समृद्ध विरासत को महत्व देना और संरक्षित करना प्रत्येक नागरिक का मौलिक कर्तव्य बनाता है, लेकिन कोई विधायी या संहिताबद्ध कानून नहीं है, जिसका अर्थ है कि यह केवल कागज पर लिखा गया है। संविधान आदिवासी आबादी की सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण का प्रावधान करता है, हालांकि अनुच्छेद 371 की अनुसूची 6 ऐसे समूहों को उनके रीति-रिवाजों और परंपराओं के अनुसार स्वशासन के लिए एक स्वायत्त परिषद रखने का अधिकार देती है।

राज्य के उस विशिष्ट एकाधिकार द्वारा दी गई सुरक्षा से पारंपरिक श्मालिकों के ज्ञान को आर्थिक विकास में उनके योगदान के पर्याप्त मुआवजे के लिए सक्षम होना चाहिए। सामान्य तौर पर, यह सुरक्षा के एक विशेष रूप को संदर्भित करता है, एक ऐसा रूप जो विशेष रूप से किसी विशिष्ट विषय या विशिष्ट परिस्थितियों के लिए अनुकूलित होता है, जो विशेष रूप से विशिष्ट आवश्यकताओं, प्राथमिकताओं और वास्तविकता के लिए बनाया जाता है।

ऐसी परिषदों के पास परंपराओं और रीति-रिवाजों की रक्षा के लिए कानून बनाने की शक्ति होती है। लोक संस्कृतियों के व्यावसायिक शोषण को रोकने और मौलिकता बनाए रखने के लिए आज लोकसाहित्य के लिए बौद्धिक संपदा कानून स्थापित करना आवश्यक हो गया है।

निष्कर्ष: बौद्धिक संपदा अधिकार एकाधिकार अधिकार हैं जो सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों और आविष्कारों से आय अधिकारों के विशेष शोषण के लिए अपने धारकों को अस्थायी विशेषाधिकार प्रदान करते हैं। किसी समाज के पास अपने कुछ व्यक्तियों को ऐसे विशेषाधिकार देने के अच्छे कारण होने चाहिए, और इसलिए इन अधिकारों के समर्थक हमें आज के अंतर-वैश्विक बौद्धिक संपदा अधिकारों की रक्षा के लिए तीन व्यापक रूप से स्वीकृत औचित्य प्रदान करते हैं। यह स्पष्ट है कि आईपी और आईपीआर का प्रबंधन एक बहु-विषयक कार्य है और इसके लिए कई अलग-अलग कार्यों और रणनीतियों की आवश्यकता होती है जिन्हें राष्ट्रीय कानूनों और अंतर्राष्ट्रीय संधियों और प्रथाओं के साथ संरेखित करने की आवश्यकता होती है। यह अब राष्ट्रीय दृष्टिकोण से पूरी तरह संचालित नहीं है।

आईपीआर के विभिन्न रूप अलग-अलग उपचार, प्रबंधन, योजना और रणनीतियों और विज्ञान, इंजीनियरिंग, चिकित्सा, कानून, वित्त, विपणन और अर्थशास्त्र जैसे विभिन्न डोमेन ज्ञान के साथ व्यक्तियों की भागीदारी की मांग करते हैं। बौद्धिक संपदा अधिकार (आईपीआर) के सामाजिक, आर्थिक, तकनीकी और राजनीतिक निहितार्थ हैं। पेटेंट, ट्रेडमार्क, सेवा चिह्न, औद्योगिक डिजाइन पंजीकरण, कॉपीराइट और व्यापार रहस्य जैसे आईपीआर की मदद से नवाचारों के उल्लंघन से बचाने के लिए तीव्र प्रौद्योगिकी, वैश्वीकरण और भयंकर प्रतिस्पर्धा का नेतृत्व करना। लेकिन अभी भी बौद्धिक संपदा अधिकारों का उल्लंघन हो रहा है. सरकार भी इन्हें रोकने के लिए कदम उठा रही है. बौद्धिक संपदा अधिकारों के उल्लंघन की रोकथाम के संबंध में कानून हैं।

संदर्भ सूची:

1. बौद्धिक संपदा क्या हैlrchived 2009-11-08At the oscSd मशीन?, विश्व बौद्धिक संपदा संगठन
2. Levine, David: Michele Boldrin (7 सितंबर 2008).lgainst intellectual monopoly (PDF)- Cambridge University Press- आई०एँस०बी०एँन० 978-0521879286. मूल (PDF) से 28 मई 2008 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 नवंबर 2009.
3. अमेरिका में बौद्धिक संपदा-सघन विनिर्माण के आर्थिक प्रभावlrchived 2008-02-16At the oscSd मशीन रॉबर्ट शापिरो और नैम फाम जुलाई 2007
4. IP प्रणाली के आर्थिक प्रभाव का मापनlrchived 2011-11-28At the oscSd मशीन, WIPO, 2007
5. स्व, S-T- (2004). "Stregthening (sic) Intellectual Property Rights: Eñperience from the 1986 Taiwanese Patent Reforms"- UCLA, Dept- of Economics- मूल से 22 जुलाई 2009 को पुरालेखित. अभिगमन तिथि 8 नवंबर 2009.
6. पड्रेग डिक्सन और क्रिस्टीन ग्रीनहाग: द इकोनॉमिक्स ऑफ इंटलेक्चुअल प्रापर्टी: ए रिव्यू टू आइडेन्टीफाइ थीम्स फॉर रिसर्चlrchived 2009-03-25lt the oscSd मशीन, ऑक्सफोर्ड बौद्धिक संपदा अनुसंधान केन्द्र, ऑक्सफोर्ड, यूनाइटेड किंगडम, नवंबर 200

"उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन"

मिस लवलीन शर्मा

Education] B-C--G- Shiksha Mahavidyalaya, Dewas, Madhya Pradesh] India

Abstract (शोध सार)

शिक्षा एक ऐसा माध्यम है जिसके माध्यम से समाज अपने बच्चों को पर्यावरण के साथ संबंधित अवधारणाओं को सिखाता है, जिसमें उन्हें कहाँ रहना है और किस प्रकार वे शीघ्र अतिशीघ्र अनुकूलन कर सकते हैं। शिक्षा पर्यावरण को समझने और उसके अनुसार अनुकूल करने का सर्वोत्तम और सशक्त साधन है, जिससे पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरूकता, और उसके साथ तादात्म्य स्थापित किया जा सकता है। इस अध्ययन का मुख्य उद्देश्य है उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकायों के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना। तथा उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकायों के बालक–बालिकाओं की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना था। इस अध्ययन में वर्णनात्मक सर्वे विधि का प्रयोग किया गया और प्रतिदर्श का चयन पूर्ण प्रासंगिक प्रदर्शन (purposive-cum-convenience method) विधि से किया गया। परिणामों के सूक्ष्म अवलोकन से स्पष्ट होता है कि विभिन्न विद्यालयों के विभिन्न संकायों के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों में सार्थक अन्तर पाया गया।

Keywords: पर्यावरण निर्णय क्षमता, उच्चतर माध्यमिक स्तर, पूर्ण प्रासंगिक प्रदर्शन, वर्णनात्मक

प्रस्तावना

शिक्षा वह साधन है, जिसके द्वारा समाज अपने बालकों को चुने हुए पर्यावरण से जिसमें कि उनको रहना है, शीघ्र अतिशीघ्र अनुकूलन करने की क्रिया में प्रशिक्षित करता है। शिक्षा एक कला है, जो न केवल ज्ञान एवं कौशल उपलब्ध कराती है अपितु मनुष्य की मानवीय प्रकृति को विकसित करते हुए उसकी अभिवृत्ति तथा प्रवृत्तियों को सही निर्देशन प्रदान कर उसका सर्वांगीण विकास करती है। शिक्षा आजीवन चलने वाली निरंतर प्रक्रिया है। जिसमें व्यक्ति विभिन्न प्रकार से अपने भौतिक, सामाजिक, आदि वातावरण से सामन्जस्य स्थापित कर पाने में सक्षम होता है।

बॉसिंग महोदय के अनुसार "शिक्षा का कार्य व्यक्ति को वातावरण में उस सीमा तक व्यवस्थापित करना है, जिस तक व्यक्ति और समाज दोनों को महान, संतोषजनक लाभ प्राप्त हो सके।" उनके वातावरण की शिक्षा ऐसी होनी चाहिये जिसके द्वारा व्यक्ति का उपयुक्त अनुकूलन समाज के अंदर हो सके। वातावरण का नव निर्माण तथा व्यक्ति तथा समाज की उन्नति के लिये शिक्षा द्वारा किया जाता है।

मानव अपने अस्तित्व तथा समृद्धि के लिये प्रतिदिन पर्यावरण के संपर्क में कार्य करता है। पर्यावरण मानव के आसपास प्राकृतिक तथा स्वयं मानव निर्मित वातावरण है। वह परिवार में जन्म लेता है, पालन पोषण होता है। परिवार उसके लिये प्राथमिक समूह है। जब वह शैशवावस्था को पार करके बाल्यावस्था में प्रवेश करता है, तब वह अपने पास पड़ोस, समुदाय आदि के सम्पर्क में आता है। वह इसके क्रिया कलापों में भाग लेता है। वह अपने प्राकृतिक वातावरण/पर्यावरण से सूचनाएँ प्राप्त करता है, समुदाय में सामाजिक संस्थाओं के बारे में जानता है तथा इनके ज्ञान के अभाव में वह अपना जीवन सफलतापूर्वक व्यतीत नहीं कर सकता। इस प्रकार शिक्षा पर्यावरण वातावरण को समझने तथा उनके अनुसार अनुकूलित करने का, पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरूकता एवं उसके साथ तादात्म्य स्थापित करने का एक सर्वोत्तम एवं सशक्त साधन है।

अध्ययन उद्देश्य

इस शोध अध्ययन के उद्देश्य थे

(1) उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

(2) उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के बालक-बालिकाओं की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं:-

(1) उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों में सार्थक अंतर नहीं है।

(2) उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के बालक-बालिकाओं के पर्यावरण निर्णय क्षमता मध्यमानो में सार्थक अन्तर नहीं है।

शोध अध्ययन विधि

यह शोध, शोध की वर्णनात्मक विधि पर आधारित हैं इसमें वर्णनात्मक सर्वे विधि का प्रयोग किया गया था।

प्रतिदर्श

प्रतिदर्श का चयन उद्देश्य पूर्ण प्रासंगिक प्रदर्शन (purposive come convenience method) विधि का प्रयोग किया।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

शोध हेतु प्रदत्तों के संकलन हेतु भवालकर एस (2001) द्वारा निर्मित पर्यावरण निर्णय क्षमता मापनी का प्रशासन विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों पर किया गया। फलांकन कुंजी की सहायता से प्रदत्तों का फलांकन किया गया।

आंकड़ों का विश्लेषण, व्याख्या और विवेचना

अध्ययन का प्रथम उद्देश्य- "उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना" था। इस हेतु भवालकर एस (2001) द्वारा निर्मित पर्यावरण निर्णय क्षमता मापनी का प्रशासन विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों पर किया गया। प्रदत्त विश्लेषण एक मार्गी प्रसरण का विश्लेषण (One wayANOVA) से किया गया एवं परिणाम तालिका क्रमांक 4.1 में दिये जा रहे हैं।

तालिका क्रमांक 4.1: विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों के पर्यावरण निर्णय क्षमता की तुलना के लिये एक मार्गीय प्रसरण का विश्लेषण (One WayANOVA) का सारांश

S.No.	Source of variation	d.f.	S.S	M.S.S	F.Value
1	Group Among	2	25.014	127.007	5.06*
2	Within Group	149	3741.32	25.1095	
3	TotL	151			

*0.01 स्तर पर सार्थक

व्याख्या:- तालिका क्र. 4.1 के अनुसार f का मान 5.06 पाया गया जो कि 0.01 स्तर पर 2/149 d-f- पर सार्थक पाया गया। यह प्रदर्शित करता है कि विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता के माध्यमानों में सार्थक अन्तर पाया

गया। इस संदर्भ में शोध कार्य की शून्य परिकल्पना "उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा।" स्वीकृत नहीं की जाती है। इस संदर्भ में किस समूह के विद्यार्थियों में पर्यावरण निर्णय क्षमता उच्च स्तर की पाई गई, आगामी विश्लेषण तालिका क्र. 4.2 में दिया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 4.2: विज्ञान, वाणिज्य एवं कला संकाय के वि॥र्थियो में श्जश मध्यमान एवं प्रमाणिक विचलन का वितरण

S.No.	Subject	Mean.	Standard deviation	N	t.Value
1	Science	23.52	5.45	50	7.14*
	Commerce	20.34	4.46	50	
2	Science	23.52	5.45	50	3.73*
	Art	21.74	5.94	50	
3	Art	21.74	5.94	50	3.07*
	Commerce	20.34	4.46	50	

*0.01 स्तर पर सार्थक

व्याख्या:- तालिका क्रमांक 4.2 के अनुसार विज्ञान एवं वाणिज्य के लिये ज का मान 7.14 पाया गया जो कि 0.01 स्तर पर 148 d-f- पर सार्थक पाया गया, यह प्रदर्शित करता है कि विज्ञान एवं वाणिज्य के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अन्तर पाया गया। इस संदर्भ में शून्य परिकल्पना "विज्ञान एवं वाणिज्य के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा" स्वीकृत नहीं की जाती।

विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान (M= 23.52) वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमानों (M=20.34) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय स्तर पर पाए गए।

तालिका 4.2 के अनुसार विज्ञान एवं कला के लिये 'ज' का मान 0.01 स्तर पर 148 d-f- पर सार्थक पाया गया। यह प्रदर्शित करता है कि विज्ञान एवं कला के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अन्तर पाया गया। इस सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना "विज्ञान एवं कला के विद्यार्थियों की पर्यावरणीय निर्णय क्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जायेगा।ष स्वीकृत नहीं की जाती।

विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान (M= 23.52) कला संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमानों (21.74) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाए गए।

तालिका क्रमांक 4.2 के अनुसार कला एवं वाणिज्य के लिये 't' का मान 0.01 स्तर पर 148df पर सार्थक पाया गया। यह प्रदर्शित करता है कि वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अंतर पाया गया। इस सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना "वाणिज्य एवं कला के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अंतर नहीं पाया जायेगा।" स्वीकृत नहीं की जाती।

कला संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमान (21.74) वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमानों (20.34) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाये गये।

अध्ययन का द्वितीय उद्देश्य- "उच्चतर माध्यमिक स्तर के विभिन्न संकाय विज्ञान, वाणिज्य एवं कला के बालक-बालिकाओं के पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना इस उद्देश्य हेतु भवालकर एस (2001) द्वारा निर्मित्त पर्यावरण निर्णय क्षमता मापनी का प्रशासन विभिन्न संकाय के विद्यार्थियों पर किया गया।

तालिका क्र- 4.3: विभिन्न संकाय के बालक-बालिका की पर्यावरण निर्णय क्षमता के लिये मध्यमान एवं प्रामाणिक विचलन के मान तथा 't' के मान का विवरण

S.No.	Gander	Mean	Standard deviation	N	t. Value
1	Boys	21.106	5.187	75	4.026*
2	Girls	149	3741.32	75	

*0.01 स्तर पर सार्थक

व्याख्या:- तालिका 4.3 के अनुसार विभिन्न संकाय के बालक एवं बालिकाओं के लिये श्ज का मान 0.01 स्तर पर 148 d-f- पर सार्थक पाया गया। यह प्रदर्शित करता है कि विभिन्न संकाय के बालक एवं बालिकाओं की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अंतर पाया गया। इस सन्दर्भ में शून्य परिकल्पना "विभिन्न संकाय के बालक एवं बालिकाओं की पर्यावरण निर्णय क्षमता में सार्थक अन्तर नहीं पाया जाएगा।" स्वीकृत नहीं की जाती है। इस संदर्भ में बालिकाओं के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमान (22.62) बालको के मध्यमानों (21.106) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाए गए।

निष्कर्ष

- विभिन्न विद्यालयों के विभिन्न संकायों के विद्यार्थियों की पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों में सार्थक अन्तर पाया गया।
- विज्ञान विषय के विद्यार्थियों के प्राप्तांक वाणिज्य एवं कला विषय के विद्यार्थियों की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाये गये।
- विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमान (23.52) वाणिज्य संकाय के विद्यार्थियोंके पर्यावरण निर्णय के मध्यमानों के अन्तर (20.34) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाये गये।
- विज्ञान संकाय के विद्यार्थियों के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमान (23.52) कला संकाय के विद्यार्थियों के मध्यमानों (21.94) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाए गये।
- कला संकाय के विद्यार्थियों के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमान (21.34) वाणिज्य संकाय के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों (20.34) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाए गए।

शैक्षिक निहितार्थ

- पाठ्यक्रम विकास: इस अध्ययन के परिणाम शिक्षा पाठ्यक्रम के विकास में महत्वपूर्ण योगदान करते हैं। पाठ्यक्रम विकल्पों में पर्यावरण शिक्षा और संचालन को सम्मिलित करके विद्यार्थियों की पर्यावरण संवेदनशीलता को बढ़ावा मिलता है।
- शिक्षक प्रशिक्षण: इस अध्ययन से आये डेटा के आधार पर शिक्षकों को पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से छात्रों की प्रेरणा और समझ को बेहतर तरीके से समर्थित करने के लिए प्रशिक्षण प्रदान किया जा सकता है।
- संस्थानिक नीतियाँ: यह अध्ययन स्कूलों और कॉलेजों में पर्यावरण संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए नीतियों को बनाने और संशोधित करने के लिए मार्गदर्शन प्रदान कर सकता है।
- छात्र संघ और कार्यक्रम: इस अध्ययन के परिणामों के आधार पर छात्र संघ और कार्यक्रम विकसित किए जा सकते हैं जो पर्यावरण संरक्षण और सचेतता को बढ़ावा देने में सहायक हों।

इस प्रकार, उच्चतर माध्यमिक स्तर के छात्रों की पर्यावरण निर्णय क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन शिक्षा के कई पहलुओं में सुधार कर सकता है और एक जागरूक और सचेत समाज के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

संदर्भ

बरौलिया; ए. एवं पराशर: आर. (2007) पर्यावरण शिक्षा के नये आयाम, आगरा राधा प्रकाशन मंदिर।

कपिल, डॉ. एच. के (2008) सांख्यिकी के मूल तत्व, आगरा, विनोद पुस्तक मंदिर।

सिंह उमा (2009) पर्यावरण शिक्षा, अग्रवाल पब्लिकेशन्स।

Buch M.B Fifth survey of Research in Education (1988- 92) Vol. I Trend Reprots New Delhi National Concil of Educational reserchAnd training.

SharmaA.K. - Fifth Survey of Educational research (1988-92)Abstracts Vol.II.

“माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण संकल्पनाके आधार पर पर्यावरण जागरूकता का अध्ययन”

डॉ० राखी शर्मा

शिक्षा, बी.सी.जी शिक्षा महाविद्यालय, देवास, मध्य प्रदेश, भारत

Abstract (शोध सार)

इस अध्ययन में प्रस्तुत किया गया है कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरण जागरूकता में सुधार की आवश्यकता है। इसके लिए, पर्यावरण संबंधित विषयों को पाठ्यक्रमों में शामिल किया जा रहा है माध्यमिक स्तर पर विभिन्न विज्ञान पाठ्यपुस्तकों में पर्यावरण संबंधी अवधारणाओं में विपरीतताएँ मिलीं। एक सर्वेक्षण विधि का उपयोग करके, अध्ययन में विभिन्न स्कूलों के छात्रों के बीच पर्यावरण निर्णय क्षमता का मापन किया गया। अनुसंधान प्रायोगिक तकनीकों और वैज्ञानिक विधियों पर आधारित था। नतीजे दिखाते हैं कि छात्रों ने पर्यावरण निर्णय क्षमता में महत्वपूर्ण स्तर पर उत्कृष्टता दिखाई, जो कला और वाणिज्य दोनों में सामान्य स्तर को पार करता है। अध्ययन में कचरे का निपटान, जल और पर्यावरण, जल चक्र, जल के प्रकार, वाष्पीकरण और संघनन, ऊर्जा, जल का उपयोग, जल प्रदूषण और इसके प्रभाव जैसे विषयों को शामिल किया गया। इसने छात्रों की पर्यावरणीय शिक्षा के महत्व को प्रकट किया, जो छात्रों के पर्यावरणीय मुद्दों के संज्ञान और समझ को आकार देने में महत्वपूर्ण है। विश्लेषण के माध्यम से स्पष्ट होता है कि माध्यमिक स्तर पर पर्यावरणीय शिक्षा विभिन्न कक्षाओं में विभिन्न पहलुओं पर ध्यान केंद्रित करती है।

Keywords: माध्यमिक शिक्षा, पर्यावरण जागरूकता, पाठ्यक्रम, मीडिया, और निर्णय क्षमता।

प्रस्तावना

भारतीय चिन्तन में कहा गया है- “हमारी एक पृथ्वी एक पर्यावरण और एक मानवता होश ईश्वर प्रदत्त यह सम्पूर्ण संसार और इसमें निहित आश्चर्य जनक रहस्य मनुष्य के लिए खोज का विषय बने हुये है। संसार को देखने के उपरांत भी पृथ्वी के रहस्यों एवं आश्चर्यो को व्यक्ति द्वारा समझने की जिज्ञासा शांत नहीं होती। संसार की उत्पत्ति के उपरान्त सार के सभी जीवधारी परस्पर एक दूसरे पर आश्रित होते हुए एक सूत्र में बँधते चले गए। किन्तु समय बीतने के साथ सभी जीवधारियों में मनुष्य की अंतत भौतिक आवश्यकताएँ असीमित संख्या में दिखाई देने लगी। मनुष्य का चिंतन ‘अपने लिए अपार साधन हो’ के नकारात्मक विधान रुप में स्थापित हो गया और लोक कल्याण का भाव समाप्त हो गया। वह भौतिक साधनों को जुटाने के लिए बड़ा से बड़ा खतरा लेने लगा। प्रकृति और पर्यावरण परस्पर संतुलित रुप से पूरक है। मानव ने अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्यावरण का दोहन करना प्रारम्भ कर दिया। वर्षा ऋतु का छटा अद्‌भुत दिखाई देती है। इस पृथ्वी ग्रह पर प्रकृति ने मनुष्य के लिए असंख्य और अमूल्य उपहार निशुल्क प्रदान किए। पेड़-पौधे जीव जन्तु खनिज मुद्रा सम्पदा दी है। जीवन विकास के लिए बुद्धि दी। बुद्धि के कारण मानव सर्वसर्वा प्राणी बन गया और क्रियाकलापों द्वारा प्रकृति को अपना गुलाम बना लिया और शोषण करने लगा।

महात्मा गाँधी ने शायद बहुत पहले ही समझ लिया था कि ‘पृथ्वी मनुष्यों के लिए सभी प्रकार की आवश्ययक वस्तुओं को प्रदान कर सकती है। किन्तु मनुष्य के लालच को नहीं’ मानव द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का जब अति शोषण किया जाता है। तो पर्यावरणीय क्षति होने लगती है जिसे प्रकृति माँ पूरा नहीं कर पाती है। यह सत्य है कि पर्यावरणीय क्षति एवं समस्या के कारण विकास की प्रक्रिया को रोका तो नहीं जा सकता पर इस क्षति के कारण जीव जगत की अनदेखी भी नहीं की जा सकती है। इसका तात्पर्य है कि अपने विकास के साथ-साथ पर्यावरण को भी बचाया जाये।

अतः इसके लिए आवश्यक है कि आगे आने वाली पीढ़ियों को समय से आगाह किया जाए और उनको आने वाली समस्याओं का हल ढूँढने के लिए सही मान्यताएँ बनाने तथा पर्यावरण का जेष्ठ उपयोग करने हेतु सक्षम बनाया जाए। उन्हेंछोटी उम्र अर्थात प्राथमिक स्तर से ही उनको पाठ्य पुस्तकों में विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण की जानकारी व शिक्षा दी जानी चाहिये। जिससे पर्यावरण के प्रति उनका दृष्टिकोण जाग्रत हो सके। उनको यह जानने अनुभव प्राप्त करने में मदद करे कि प्राकृतिक स्त्रोतों का संरक्षण करके किस तरह से उनका उचित तरीके से उपयोग किया जा सके। बच्चों का पर्यावरण बोध प्राथमिक स्तर से ही आवश्यक है जिससे वे दृष्टिकोण अपना सके और जिम्मेदारियों को भली-भाँति समझ सके।

बालक अपने परिवेश में जन्म लेता है, बड़ा होता है और सामाजिक परिवेश द्वारा वह अपने जीवन के प्रति नव दृष्टिकोण निर्मित करता है। पर्यावरणीय शिक्षा का उद्देश्य बालक में उन तत्वों के प्रति चेतना उत्पन्न करना है, जो पर्यावरण में व्याप्त होते है। जो उसके विकास व्यक्तित्व, स्वास्थ्य के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है।

पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य ऐसे नागरिक तैयार करना है जो पर्यावरण के प्रति अपनी जिम्मेदारियों को समझ सके, और अपने आसपास के परिवेश घर, समाज, प्रकृति, गाँव शहर को स्वच्छ बनाये रखने में सहयोग दे सके।

इस प्रकार पर्यावरण शिक्षा से वातावरण को समझने तथा उनके अनुसार अनुकूलित करने का पर्यावरण के प्रति सजगता, जागरुकता एवं उसके साथ तादाम्य स्थापित करने का एक सर्वोत्तम एवं सशक्त साधन है।

औचित्य

पृथ्वी पर समस्त वस्तुओं को दो भागों में विभाजित किया गया है। (1) जैविक और (2) अजैविक इन सभी वस्तुओं का प्राणीमात्र पर एक जुट प्रभाव ही 'पर्यावरण' कहलाता है। निःसन्देह इसमें पेड़-पौधो वनस्पति भूमि वायु जल प्रकाश ताप आदि सभी सम्मिलित है।

अच्छे पर्यावरण की कल्पना उन स्थितियों से है जिसमें प्राणियों को समस्त मूलभूत आवश्यकताओ की पूर्ति हो सके और वह सुखमय जीवन बिता सके वही विकृत पर्यावरण अनेक समस्याओं से ग्रसित होता है और जीवन को कष्टमय बना देता है। जब-जब विश्व स्तर पर किसी समस्या के समाधान की बात सोची गई है तब-तब एक मत होकर उसे शिक्षा के माध्यम से पूरी करने का सुझाव दिया। इसी संदर्भ में आज पर्यावरण के असन्तुलन की समस्या है जिसका हल पर्यावरण शिक्षा द्वारा जागरुकता पैदा किये जाने हेतु सभी प्रयत्नशील है। सभी विद्यायलों महाविद्यालयों में पर्यावरण शिक्षा द्वारा जागरुकता पैदा करने हेतु विशेष प्रश्न पत्र के रुप में मान्यता दी है।

सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए प्रयासरत है। प्रकृति को समझने और पर्यावरण प्रदूषण एवं समस्याओं हेतु कड़े कानून तथा प्रबंध किये जा रहे है। पर्यावरण संरक्षण हेतु पर्यावरण शिक्षा द्वारा जागरुकता पैदा करने के प्रयास किये जा रहे है।

स्कूली तथा महाविद्यालयीन शिक्षा में पर्यावरण के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए पर्यावरण शिक्षा द्वारा पर्यावरण के प्रति जागरुकता पैदा करने के लिए पाठ्यक्रम पढ़ाये जाते है।

सभी पत्र पत्रिकाओं समाचार-पत्रों में नागरिकों पाठकों और दर्शकों को पर्यावरण के असन्तुलन के प्रति की समस्या से अवगत कराया जाता है। ताकि भविष्य के प्रति सचेत हो जाए और वातावरण पर्यावरण के अनुकूल बनाने में सहायक बने ताकि भविष्य् में सुखी जीवन जिया जा सके।

अध्ययन उद्देश्य

इस शोध अध्ययन के उद्देश्य थे

1. माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय के पाठ्य पुस्तक में से पर्यावरण की संकल्पनाओं का अध्ययन करना।
2. माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण संकल्पनाओं के आधार पर विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरुकता का अध्ययन करना।

परिकल्पनाएं

1. माध्यमिकस्तर के विज्ञान विषय की पाठ्यपुस्तक में पर्यावरण सम्बन्धी संकल्पनाओं में भिन्नता पायी गयी हैं।
2. माध्यमिक स्तर की विज्ञान विषय की पाठ्यपुस्तक में निहित पर्यावरण संकल्पना के आधार पर बालक एवं बालिकाओं के पर्यावरण जागरुकता में भिन्नता गयी हैं।

शोध अध्ययन विधि

प्रस्तुत अध्ययन विद्यालय सर्वेक्षण पर आधारित है। जिसके अन्तर्गत विभिन्न विद्यालयों के विद्यार्थियों पर पर्यावरण निर्णय क्षमता मापनी प्रशासित की गई। प्रस्तुत अध्ययन सर्वेक्षण विधि पर आधारित था। सर्वेक्षण पद्धति एक वैज्ञानिक पद्धति था।

प्रतिदर्श

प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श हेतु माध्यमिक स्तर के कक्षा 8वीं के 20 विद्यार्थियों को लिया गया है जिसमें बालक-बालिकाएँ दोनों को समान रुप से सम्मिलित किया गया है।

अध्ययन में प्रयुक्त उपकरण

प्रस्तुत अध्ययन में उपकरण हेतु स्वनिर्मित पर्यावरण के प्रति जगरुकता सम्बन्धी प्रश्नावली का प्रयोग किया गया है। जिसके अंतर्गत पर्यावरण संबंधी 25 बहुविकल्पीय प्रश्नों को रखा गया था। प्रत्येक प्रश्न के सही उत्तर के लिए एक अंक निर्धारित किया गया था प्रत्येक गलत उत्तर के लिए शून्य अंक रखा गया था।

आंकड़ों का विश्लेषण,व्याख्या और विवेचना

प्रस्तुत अध्ययन माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण संकल्पनाओं के आधार पर पर्यावरण जागरूकता का अध्ययन से सम्बन्धित है। इस संदर्भ में सर्वप्रथम माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय के पाठ्य पुस्तक में से पर्यावरण संकल्पनाओं को संकलित किया गया था। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरूकता के स्तर का विवरण निम्न प्रकार से हैं-

प्रथम उद्देश्य “माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय की पाठ्यपुस्तक में से पर्यावरण की संकल्पनाओं का अध्ययन करना था।”

इस उद्देश्य हेतु कक्षा 7,8 की विज्ञान विषय की पाठ्यपुस्तक में से पर्यावरण संबंधित विषय वस्तु का अध्ययन किया गया था। इस हेतु कक्षा सातवीं की विज्ञान विषय की पाठ्य पुस्तक में निहित पर्यावरण का अर्थ, प्रकृति में संतुलन, पारिस्थितिकी तंत्र, खाद्य श्रृंखला, खाद्य जाल, पर्यावरण प्रदूषण, कारक एवं प्रभाव, वायु प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, तथा पर्यावरण संरक्षण का प्रभाव शामिल किया गया था। कक्षा 8वीं की विज्ञान विषय की पाठ्यपुस्तक में पर्यावरण का अर्थ,मानव एवं पर्यावरण मानवीय क्रियाओं द्वारा पर्यावरण का रूपांतरण,पर्यावरणीय परिवर्तनीय समस्याएं, जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरण दुष्परिणाम, अपशिष्ट एवं उनका निस्तारण,जल चक्र, जल के प्रकार, जल प्रदूषण को सम्मिलित किया गया था। इस प्रकार प्रथम उद्देश्य “माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय की सातवीं को आठवीं पुस्तकों में पर्यावरण संबंधित संकल्पनाओं में भिन्नता पाई गई थी।”

“प्रस्तुत अध्ययन का द्वितीय उद्देश्य ष्माध्यमिक स्तर के विज्ञान विषय में निहित पर्यावरण संकल्पनाओं के आधार पर विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरूकता का अध्ययन करना था।”

इस हेतु कक्षा 8वीं के विद्यार्थियों को शोधकर्ता द्वारा निर्मित पर्यावरण जागरूकता मापनी का प्रशासन किया गया। फलांकन कुंजी की सहायता से फलांकन करने के उपरांत प्राप्त प्रदत्तों का प्रतिशत के आधार पर विश्लेषण किया गया एवं परिणाम तालिका क्र. 1 में दिये जा रहे है।

तालिका क्रमांक 5.1: माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरूकता के स्तर का प्रतिशत का विवरण

क्र.	प्राप्तांक	प्रतिशत
1.	20	80
2.	23	92
3.	22	88
4.	22	84
5.	23	84
6.	24	88
7.	24	96
8.	22	96
9.	21	88
10.	24	96
11.	20	80
12.	24	96
13.	23	92
14.	24	96
15.	21	84
16.	23	92
17.	23	92
18.	21	84
19.	23	92
20.	20	80

तालिका क्र. 5.1 माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरूकता के स्तर का प्रतिशत प्रस्तुत तालिका के अध्ययन से स्पष्ट है कि कक्षा 8 के 20 विद्यार्थियों में से 96 प्रतिशत प्राप्तांक 5 विद्यार्थियों ने प्राप्त किये तथा 92 प्रतिशत प्राप्तांक विद्यार्थियों ने तथा 3 विद्यार्थियों ने 88 प्रतिशत प्राप्तांक प्राप्त किये तथा 4 विद्यार्थियों ने 84 प्रतिशत प्राप्तांक प्राप्त किये तथा 2 विद्यार्थियों ने 80 प्रतिशत अंक प्राप्त किये हैं।

अत: अध्ययन की शून्य परिकल्पना "माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरण जागरूकता में अन्तर नहीं पाया जायेगा" निरस्त नहीं की जाती है। तालिका क्र. 5.1 में दिये गये माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के प्राप्तांकों को ग्राफ क्र. 5.1 में दण्ड आरेख के रूप में दिया जा रहा है।

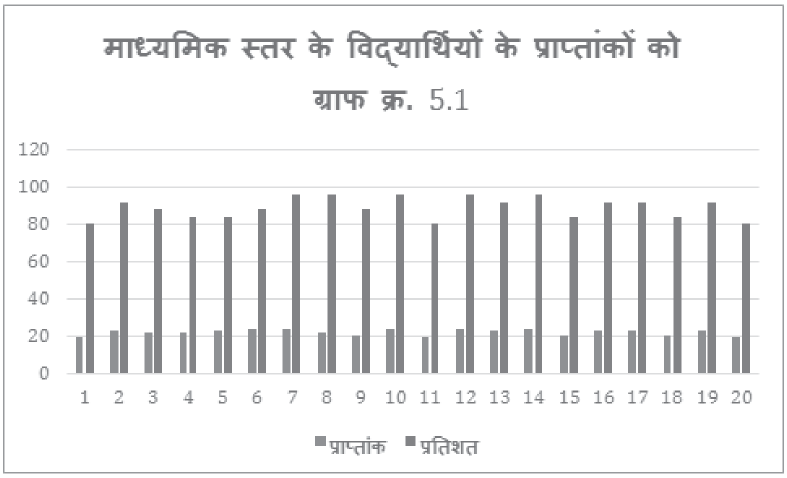

निष्कर्ष

- कला संकाय के विद्यार्थियों के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमान (21.34)वाणिज्य संकाय के पर्यावरण निर्णय क्षमता के मध्यमानों (20.34) की तुलना में सार्थक उच्चस्तरीय पाए गए।
- उनका निस्तारण, ठोस अपशिष्ट पदार्थों का निस्तारण, जल और पर्यावरण, जल चक्र, जल के प्रकार, वाष्पन एवं सघनन, उष्मा, जल की उपयोगिता, जल प्रदूषण एवं दुष्परिणाम आदि को सम्मिलित किया गया।
- इसी प्रकार कक्षा 8वीं की विज्ञान विषय की पाठ्य पुस्तक में निहित पर्यावरण विषय वस्तु का अध्ययन किया गया। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कक्षा 8वीं की पाठ्य पुस्तक में पर्यावरण का अर्थ है प्रकृति में संतुलन पारिस्थितिक तंत्र, खाद्य श्रृंखला, खाद्य जाल, पर्यावरणीय प्रदूषण कारक एवं प्रभाव, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण तथा पर्यावरण क्षरण का प्रभाव शामिल किया गया।
- माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के पर्यावरण जागरुकता के स्तर में भिन्नताप्रस्तुत अध्ययन के निष्कर्ष निम्नानुसार है।अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कक्षा 6 की विज्ञान विषय की पाठ्य पुस्तक में पर्यावरण का अर्थ, प्रकार, सामाजिक पर्यावरण, प्राकृतिक पर्यावरण, प्राकृतिक पर्यावरण के घटक, जैविक, अजैविक, वायु का संगठन, सूर्य का प्रकाश, भूमि, पर्यावरण शिक्षा, वन एवं वनों के उपयोग, वनों के दोहन के दुष्परिणाम, वन संरक्षण एवं अन्य प्राकृतिक संसाधन को सम्मिलित किया गया है।
- इसी प्रकार कक्षा 7 की पाठ्य पुस्तक में निहित पर्यावरण विषय वस्तु का अध्ययन किया गया। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि कक्षा 7 की विज्ञान विषय की पाठ्य पुस्तक में पर्यावरण का अर्थ इस प्रकार मानव एवं पर्यावरण, मानवीय क्रियाओं द्वारा पर्यावरण का रूपांतरण, पर्यावरणीय परिवर्तनों के प्रति पौधों एवं जंतुओं में अनुकूलन, समुद्री जीवन पर बढ़ता दबाव और पर्यावरणीय समस्याएँ, जनसंख्या वृद्धि और पर्यावरणीय दुष्परिणाम, अपशिष्ट एवं पाई।

शैक्षिक निहितार्थ

माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की पर्यावरण विज्ञान विषय में निहित पर्यारण संकल्पना के आधार पर जागरुकता का अध्ययन किया गया जिसमें विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति जागरुकता सामान्य पाई गई। माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रम में पर्यावरणीय शिक्षा का आवश्यक विषय सम्मिलित किया जाना चाहिये ताकि विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति जागरुकता अधिक हो।

संदर्भ ग्रंथ सूची

- बारौलिया ए. (2002) पर्यावरण शिक्षा के नये आयाम, राधा प्रकाशन मंदिरआगरा।
- गोयल, एम.के, (2005), पयावरण का अध्ययन, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
- पी.डी.पाठक (2005) शिक्षा के सिद्धान्त, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
- एस. के. मंगी (2007), भौतिक विज्ञान शिक्षण, लाल बुक डिपो, मेरठ।
- शर्मा एच.एस. (2007), पर्यावरण शिक्षा शिक्षण, राधा प्रकाशन मंदिर, आगरा।
- सिंह विमेश के (2005), पर्यावरण अध्ययन, जगदम्बा पब्लिशिंग।
- उपाध्याय राधावल्लया (2005) पर्यावरण शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।
- वर्मा प्रीति (2009) मनोविज्ञान और शिक्षा में सांख्यिकी, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा।

भारतीय संविधान एवं पर्यावरण

डॉ० श्रद्धा सिंह

सहायक प्राध्यापक, विधि विभाग, अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांश

भारतीय संविधान राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों और मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्त्तव्य के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण के लिए एक आधार प्रदान करता है, जिसमें स्वच्छ पर्यावरण का अधिकारऔरकर्त्तव्यभी शामिल है। संविधान के तहत अधिनियमित पर्यावरण कानून, संरक्षण और वन्यजीव संरक्षण को संबोधित करते हैं, नियामक निकाय अनुपालन सुनिश्चित करते हैं। न्यायिक सक्रियता व्याख्याओं और प्रवर्तन के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण को और मजबूत करती है।

कीवर्ड

संविधान, प्रस्तावना, मौलिक अधिकार, राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांत, मौलिक कर्तव्य, संघवाद, शक्तियों का पृथक्करण, न्यायिक समीक्षा, संशोधन प्रक्रिया, समानता, न्याय, स्वतंत्रता, बंधुत्व, लोकतंत्र, संप्रभुता, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद, गणतंत्र, नागरिकतापर्यावरण कानूनः पर्यावरण, संरक्षण, सुरक्षा, प्रदूषण नियंत्रण, सतत विकास, जैव विविधता, वन्यजीव संरक्षण, वन संरक्षण, वायु गुणवत्ता, जल प्रबंधन, अपशिष्ट प्रबंधन, पर्यावरणीय प्रभाव मूल्यांकन, जलवायु परिवर्तन, नवीकरणीय ऊर्जा, पर्यावरण न्याय, पर्यावरण अधिकार, पर्यावरण नीति, पर्यावरण शासन, पर्यावरण कानून,

परिचय

भारत में पर्यावरण संरक्षण के लिए कानूनी और नीतिगत ढांचे को आकार देने में भारतीय संविधान और पर्यावरण के बीच संबंध महत्वपूर्ण है। हालाँकि संविधान में कोई समर्पित अनुभाग नहीं है जो पूरी तरह से पर्यावरणीय मुद्दों पर केंद्रित है, इसमें ऐसे सिद्धांत और प्रावधान शामिल हैं जो पर्यावरणीय शासन की नींव रखते हैं। इनमें राज्य के नीति निदेशक सिद्धांत, मौलिक अधिकार, मौलिक कर्तव्य, संघीय संरचना, न्यायिक समीक्षा और संशोधन प्रक्रिया शामिल हैं। संविधान, इन प्रावधानों के माध्यम से, पर्यावरण संरक्षण के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है, वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक पर्यावरण को संरक्षित और बेहतर बनाने के उद्देश्य से विधायी और कार्यकारी कार्यों का मार्गदर्शन करता है। संवैधानिक सिद्धांतों और पर्यावरणीय चिंताओं के बीच यह परस्पर क्रिया पर्यावरणीय स्थिरता और संरक्षण के लिए भारत के दृष्टिकोण को आकार देने में संवैधानिक कानून के महत्व को रेखाद्यकित करती है।

शोध का तरीका

- उपयोग की जाने वाली विधि जिसमें कानूनी विश्लेषण, तुलनात्मक अध्ययन, केस अध्ययन और गुणात्मक या मात्रात्मक दृष्टिकोण शामिल हैं।
- तुलनात्मक विश्लेषण में शामिल किए जाने वाले देशों या क्षेत्रों के चयन के मानदंड स्पष्ट करें।
- डेटा संग्रह और विश्लेषण प्रक्रियाओं की रूपरेखा तैयार करें।
- केस स्टडीजः केस स्टडीज विशिष्ट पर्यावरणीय मुद्दों, अदालती मामलों या नीतिगत पहलों पर ध्यान केंद्रित करके उनके कानूनी, राजनीतिक और सामाजिक निहितार्थों का विश्लेषण करती हैं

अनुसंधान अध्ययन की आवश्यकता है

पर्यावरणीय शासन को आकार देने में संवैधानिक प्रावधानों के महत्व पर पृष्ठभूमि की जानकारी प्रदान करें। पर्यावरण संरक्षण के लिए संवैधानिक दृष्टिकोण में भिन्नता को समझने के लिए तुलनात्मक अनुसंधान करने के महत्व पर प्रकाश डालें है

(i) पर्यावरणीय विधि के संवैधानिक आधार

भारत का संविधान देश की सर्वोच्च विधि है। यह विधिक व्यवस्था का मूल मानक (Grundnorm) है। भारतीय संविधान का उद्देश्य भारत को सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न, समाजवादी, पंथनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणतंत्र स्थापित करना है। इसके साथ ही समस्त

नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना की स्वतंत्रता; प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सब में व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता और अखण्डता सुनिश्चित करने वाली बन्धुता बढ़ाना भी संविधान की प्रतिबद्धता का अंग है। सांविधानिक प्रतिबद्धताएं स्वस्थ पर्यावरण-प्राकृतिक एवं मानवीय में ही पुष्पित हो सकती हैं।

भारत का संविधान विश्व के कतिपय संविधानों में से एक है जिसमें पर्यावरणीय संरक्षण सम्बन्धी प्रावधानों का विशिष्टत: उल्लेख किया गया है। संविधान में मूल अधिकारों और राज्य के नीति-निदेशक तत्वों, जिन्हें संविधान की अन्तर्रात्मा (conscience) कहा गया है, के साथ-साथ मूल कर्तव्यों का समावेश किया गया है। पर्यावरण के प्रति नवीन एवं क्रान्तिकारी रुझान मानव पर्यावरण संरक्षण की वैश्विक (Global) चिंता के स्टाकहोम घोषणा, 1972 के उद्‌गार के साथ भारत में पर्यावरणीय सोच में चतुर्दिक् विकास हुआ है। संविधान का बयालीसवाँ संशोधन अधिनियम, 1976 इस विकसित सोच का स्पष्ट उदाहरण है। इसके द्वारा राज्य के नीति-निदेशक तत्वों तथा विधायी प्रविष्टियों में संशोधन के साथ-साथ मूल कर्तव्य का निर्माण किया गया है। न्यायालयों ने सृजनात्मक व्याख्या के माध्यम से मूल अधिकारों में स्वस्थ पर्यावरण के अधिकार को अन्तर्निहित माना है।

पर्यावरणीय विधि के साम्विधानिक आधारों का वर्णन सांविधानिक मूल उपबन्धों एवं विधायी शक्तियों के वितरण के आधार पर दिया गया। प्रथम तरह के प्रावधान स्वत: अधिकार एवं दायित्व अधिरोपित करते हैं और द्वितीय तरह के प्रावधान विधायिका को सम्बन्धित विषय पर विधि अधिनिर्मित कर अधिकार एवं दायित्वों के निर्धारण हेतु अधिकृत करते हैं। प्रथम तरह के प्रावधानों की पर्यावरणीयमहत्चा अन्तर्राष्ट्रीय परिवेश एवं न्यायिक सृजनात्मक निर्वचन के कारण है जबकि द्वितीय तरह के प्रावधान पूर्व से वर्णित होने के कारण पर्यावरणीय समस्याओं से सम्बन्धित हैं। पर्यावरणीय विधि विकास के आधार के रूप में साम्विधानिक पहलू के दृष्टिकोण से निम्न शीर्षकों के अन्तर्गत इसका वर्णन करना ज्यादा समीचीन है

- पर्यावरण सम्बन्धी विषयों का केन्द्र एवं राज्यों के बीच विधायी वितरण
- संघ सूची में वर्णित विषय- प्रथम सूची/संघ सूची के निम्न विषयों पर संसद अनन्य रूप से विधि-निर्माण कर सकेगी-
- आयुष, अग्न्यायुध, गोला-बारूद एवं विस्फोटक
- परमाणु ऊर्जा एवं उसके उत्पादन हेतु आवश्यक खनिज सम्पदा
- अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संगमों (Associations) और अन्य निकायों में भाग लेना तथा उनमें लिये गये विनिश्चयों का कार्यान्वयन
- विदेशों से संधि और करार करना और विदेशों से की गयी संधियों, करारों और अभिसमयों का क्रियान्वयन
- यन्त्र नोदित जलयानों के सम्बन्ध में ऐसे अन्तर्देशीय जलमार्ग पर पोत परिवहन और नौ-परिवहन जो संसदीय विधि द्वारा राष्ट्रीय जलमार्ग पोषित किये गये हैं; ऐसे जलमार्गों पर मार्ग का नियम
- समुद्रीय पोत परिवहन और नौपरिवहन
- प्रमुख पत्तन जिन्हें संसदीय विधि द्वारा महापत्तन घोषित किया गया है।
- पत्तन करन्तीन, जिसके अन्तर्गत उससे सम्बद्ध अस्पताल, नाविक अथवा सामुद्रिक सम्मिलित हैं
- वायु मार्ग, वायुयान और विमान बालन
- रेल, समुद्र तथा वायु मार्ग द्वारा अथवा यन्त्रनोदित (Mechauanically Propelled) जलयानों में राष्ट्रीय जलमार्ग द्वारा यात्रियों और माल का परिवहन
- उद्योग जिन पर संसदीय विधि द्वारा संघ नियंत्रण लोकहित में माना गया है
- तेल क्षेत्रों और खनिज तेल सम्पदा का विनियमन और विकास, पेट्रोलियम और पेट्रोलियम उत्पाद तथा अन्य द्रव्य तथा पदार्थ जो संसदीय विधि द्वारा खतरनाक रूप से ज्वलनशील घोषित हैं
- खानों एवं तेल क्षेत्रों में श्रम एवं सुरक्षा का विनियमन
- अन्तर्राज्यिक नदियों और नदी घाटियों का विनियमन एवं विकास
- राज्य क्षेत्रीय सागर खण्ड से परे मछली पकड़ना तथा मौन क्षेत्र

- राष्ट्रीय महत्व प्राचीन और ऐतिहासिक स्मारक एवं अभिलेख
- भारतीय सर्वेक्षण, भारतीय भूवैज्ञानिक, वनस्पति विज्ञान, प्राणि विज्ञान और मानव शास्त्र सर्वेक्षण, मौसम विज्ञान संगठन
- किसी अन्य पर्यावरणीय विषय पर विधान जिसका उल्लेख राज्य सूची अथवा समवर्ती
- सूची में नहीं किया गया है (प्रविष्टि 97 और अनुच्छेद 248)। (2) समवर्ती सूची में पर्यावरण से सम्वन्धित वर्णित विषय इस सूची में वर्णित विषयों पर संसद
- और राज्य विधान मण्डलों को विधि बनाने का समवर्ती अधिकार प्रदान किया गया है। यदि दोनों विधियाँ लागू की जा सकती हैं तो उन्हें लागू किया जायेगा परन्तु यदि संसद और राज्य विधायिका द्वारा निर्मित विधि में असंगतता है तो संसदीय विधि लागू होगी और राज्य विधान मण्डल द्वारा निर्मित विधि असंगतता को सीमा तक शून्य होगी। इसका अपवाद होगा कि राज्य विधान मण्डल द्वारा पारित असंगत विधि राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए रोक ली जाय और यदि राष्ट्रपति अनुमोदन कर दे तो उस राज्य में राज्य विधायिका द्वारा पारित विधि लागू होगी। परन्तु संसद को पुनः विधि में संशोधन, परिवर्द्धन, परिवर्तन एवं निरसन की शक्ति दी गयी है। इस तरह केन्द्रीय संसद द्वारा निर्मित विधि असंगत राज्य विधि पर हावी होगा। समवर्ती सूची में निम्नलिखित विषय दिये गये हैं-
- पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण (प्रविष्टि 17),
- वन (प्रविष्टि 17-क, संविधान के बयालीसवें संशोधन द्वारा जोड़ो गयी),
- वन्य जीव-जन्तुओं और पक्षियों का संरक्षण (प्रविष्टि 17-, 42वें संशोधन द्वारा बोड़ी गयी),
- खाद्य पदार्थों तथा अन्य माल का अपमिश्रण (प्रविष्टि 18),
- मादक द्रव्य एवं विष (प्रविष्टि 19),
- आर्थिक और सामाजिक योजना (प्रविष्टि 20), जनसंख्या नियंत्रण और परिकार नियोजन (प्रविष्टि 20 क),
- श्रमिक कल्याण (प्रविष्टि 24),
- मानवों, जीव-जन्तुओं या पौधों पर प्रभाव डालने वाले संक्रामक या सांसर्गिक रोगों अथवा नाशक बोबों के एक राज्य से दूसरे राज्य में फैलने का निवारण (प्रविष्टि 29).
- कारखाने (प्रविष्टि 36),
- बायलर (प्रविष्टि 37), और
- वि॥त् (प्रविष्टि 38)
- मण्डल (3) राज्य सूची में वर्णित विषय इस सूची में वर्णित पर्यावरण सम्बन्धी विषयों पर राज्य विधान को विधि निर्माण का अनन्य अधिकार होगा। ये विषय निम्नलिखित है।-
- लोकस्वास्थ्य और स्वच्छता, अस्पताल और औषधालय (प्रविष्टि 6),
- भारत के बाहर को यात्रा ओं से भिन्न यात्राएं (प्रविष्टि 7),
- मादक का उत्पादन, विनिर्माण, कब्जा, परिवहन, क्रय एवं विक्रय (प्रविष्टि 8),
- शवगाड़नाऔरकबस्थान, शवदाहऔरश्मशान (प्रविष्टि 10),
- कृषिका ना शकजी वों से संरक्षण और पादप रोगों कानिवारण (प्रविष्टि 14),
- पशुधन परिरक्षण, संरक्षण और सुधार तथा जीव-जन्तुओं के रोगो ंका निवारण
- अन्तर्राज्यिक नदियों को छोड़ कर जलप्रदाय सिचाई और नहरें, जल निकास और तट बन्ध, जल भण्डारण और जल शक्ति (प्रविष्टि 17).
- मीनक्षेत्र (प्रविष्टि 21),
- खानों का विनियमन और विकास (प्रविष्टि 23),
- गैस और गैस संकर्म (प्रविष्टि 25),
- बाजार और मेले (प्रविष्टि 28)।
- 4) अनुबछेद 253 और पर्यावरणीय विधान अनुच्छेद 253

भारत में संसद को अधिकृत किया गया है अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संगमों औरअन्य के अन्तर्राष्ट्रीय दायित्वों तथा निकायों के निर्णयों के प्रवर्तन हेतु विधि निर्माण कर सकती है। अनुच्छेद 253 का प्रावधान है कि "इस अध्याय के पूर्वगामी उपबन्धों में सी बात केहो ते हु ए भी संसद को किसी अन्य देश या देशों के साथ की गई किसी संधि, करार या अभिसमय अथवा किसी अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, संगम याअन्य निकाय में किये गए किसी विनिश्वय के कार्यान्वयन के लिए भारत के सम्पूर्ण राज्यक्षेत्रया उसके किसी भाग के लिए कोई विधि बनाने की शक्ति है।" संघ सूची की प्रविष्टि (Entry) 13 में उपबन्धित किया गया है कि संसद अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलनों, संगमों और निकायों में भाग लेने और उनमें किये गये विनिश्चय के क्रियान्वय नहेतु अनन्यरू पसे विधि निर्मित कर सकती है। इसी तरह प्रविष्टि 14 के अन्तर्गत विदेशों से संधि और करार करने और विदेशों से की गई संधियों, करारों और अभिसमयों के क्रियान्वयन हेतु संसद को विधि निर्माण की अनन्य शक्तिप्रदान की गई है।

पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी नागरिकों के मूल कर्तव्य

- सन् 1976 में स्टाकहोम घोषणा 1972 की प्रेरणा से प्रेरित होकर संविधान के बयालीसवें संशोधन अधिनियम द्वारा मूल कर्तव्यों में 51.क (छ) के रूप में पर्यावरण सम्बन्धी नागरिकों का मूल कर्तव्य जोड़ा गया है। संविधान का अनुच्छेद 51-क (छ) उपबन्धित करता है कि "भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अन्तर्गत वन, झोल, नदी और वन्य जीव है, रक्षा करे और उनका संवर्द्धन करे तथा प्राणिमात्र के विरुद्ध ट्याभाव रखे"।
- यद्यपि कि पर्यावरण संरक्षण का मूल कर्तव्य विधिक शब्दावली में प्रवर्तनीय नहीं है जिस तरह भाग तीन में वर्णित मूल अधिकार हैं। इसकी प्रकृति राज्य के नीति निर्देशक तत्वों के समान है। परन्तु न्यायालयों ने सृजनात्मक व्याख्या के माध्यम से मूल कर्तव्यों की सार्थकता को प्रतिस्थापित किया है।
- Case
- नेचर लवर्स मूवमेण्ट बनाम केरल राज्य में सरकार के पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के शोषण पर नियन्त्रक शर्तें लगायीं। परन्तु पर्यावरण के उपभोग पर पूर्ण निषेध नहीं जारी किया। पर्यावरण अनुरक्षण एवं आर्थिक विकास में सामंजस्य बनाये रखा गया। केरल उच्च न्यायालय ने इसे पोषणीय विकास एवं पर्यावरण संरक्षण से संगत माना, और सरकारी आदेश की अनुच्छेद 48-। और 51-। से संगत घोषित किया।
- गोआ फाउण्डेशन बनाम गोवा राज्य के मामले में प्रश्न यह था कि अनुच्छेद 51-।(ह) के अन्तर्गत वन, झील, नदी, वन्य जीव सहित प्राकृतिक पर्यावरण संरक्षण एवं सुधार का मूल कर्तव्य सोसायटी पर लागू होगा। बम्बई उच्च न्यायालय ने सकारात्मक उत्तर दिया और कहा कि प्रत्येक नागरिक की तरह सोसायटी का भी मूल कर्तव्य है कि वनों, झीलों, नदियों, वन्य जीवों का संरक्षण करे।
- पर्यावरण सम्बन्धी राज्य के नीति निदेशक तत्व

(स) राज्य के नीति निदेशक तत्व सामान्यतः जन कल्याण सम्बन्धी क्रिया-कलापों का निर्देश प्रदान करते हैं। पर्यावरण के सम्बन्ध में अनुच्छेद 47 में राज्य पर पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को ऊंबा उठाने तथा लोक स्वास्थ्य सुधार करने का कर्तव्य अधिरोपित किया गया है। अनु० 47 का उपवन्ध है कि, "राज्य अपने लोगों को पोषाहार स्तर पर जीवन स्तर को ऊँचा करने तथा लोक स्वास्थ्य के सुधार को अपने प्राथमिक कर्तव्यों में मानेगा और राज्य, विशिष्टतया, मादक पेयों और स्वास्थ्य के लिए हानिकर औषधियों के, औषधीय प्रयोजनों से भिन्न, उपभोग का प्रतिषेध करने का प्रयास करेगा।"

सन् 1976 में संविधान बयालीसवें संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 48-क जोड़ा गया। अनुच्छेद 48. क का प्रावधान है कि, "राज्य देश के पर्यावरण की संरक्षा तथा उसमें सुधार करने का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा। य।पि कि अन्य राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों की तरह पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी नौति निदेशक तत्व प्रवर्तनीय नहीं है फिर भी देश की शासन व्यवरचा में मूल है और राज्य का यह कर्तव्य होगा कि विधि निर्माण कर वह इन्हें अपनाये। उच्चतम न्यायालय ने सृजनात्मक निर्वचन के माध्यम से सेण्ट्रल इनलैण्ड वाटर ट्रान्सपोर्ट कारपोरेशन बनाम ब्रिजो नार्क के मामले में स्पष्ट किया कि राज्य के नीति निदेशक तत्व की अप्रवर्तनीय प्रकृति इसके उत्तंपन के आधार पर विधि को अवैधानिक घोषित करने से बहिष्कृत नहीं करती है। सामान्यतः न्यायालय का मत राज्य के नीति निदेशक तत्वों को मूलाधिकारों की प्रवर्तनीयता के समान मानने के पक्ष में हैं और विशिष्टतः पर्यावरणीय दायित्व को लागू करने को प्रतिवद्धता से प्रभावित है। सच्चिदानन्द पाण्डेय बनाम

पश्चिमी बंगाल राज्य' के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि जब कभी न्यायालय के समक्षपारिस्थैतिकी से सम्बन्धित कोई समस्या प्रस्तुत की जायेगी, न्यायालय अनुच्छेद 48.क और अनुच्छेद 51.क (0) को ध्यान में रखने के लिये बाध्य है। न्यायालय अन्य विभागों जैसे विधायिका एवं कार्यपालिका को पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु आदेश जारी कर सकता है। परन्तु न्यायालय उन विभागों द्वारा उठाए गए सक्रिय समन्वयकारी कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करेगा

दामोदर राव बनाम एस० ओ० म्यूनिसिपल कारपोरेशन हैदरावाद के मामले में आन्ध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने अभिमत व्यक्त किया कि अनु० 48-क और 51-क (छ) के आलोक में यह स्पष्ट है कि पर्यावरण संरक्षण का कर्तव्य केवल नागरिकों पर ही नहीं है बल्कि न्यायालय सहित राज्य के सभी अंगों का दायित्व है। किंकरी देवी बनाम राज्य के मामले में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय ने पुन: दुहराया कि अनु० 48-क और अनु० 51-क (छ) का दायित्व राज्य के प्रति सांविधानिक निर्देश और नागरिकों का सांविधानिक कर्तव्य है। इसमें पर्यावरण संरक्षण हो सम्मिलित नहीं है बल्कि पर्यावरण सुधार तथा वन, वन्य प्राणियों एवं वनस्पतियों, नदियों और झोलों तथा देश के अन्य जल संसाधनों की सुरक्षा भी सम्मिलित है। इसी तरह का विचार पुन: जनरल पब्लिक संपून वैली बनाम हिमाचल प्रदेश में हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा तथा डी० डी० व्यास बनाम गाजियाबाद डेवलपमेण्ट एचाटर्टी के मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा दुहराया गया। न्यायालयों ने स्पष्ट किया है कि सांविधानिक इशारे का उल्लंघन मूल विधि का उत्तपंन है जो राज्य और नागरिक दोनों पर बाध्यकारी है

मूलाधिकार एवं पर्यावरण संरक्षण

1970 के दशक से मानव पर्यावरण संरक्षण की हवा बह रही है। पर्यावरण संरक्षण का केन्द्र बिन्दु मानव है। न्यायालयों के दृष्टिकोण में पर्यावरण संरक्षण का बिन्दु मुख्यत: उभर कर आया है। अनुच्छेद 14, 19 और 21 में प्रदत्त मूलाधिकारों का निर्वचन पर्यावरण के आलोक में कर न्यायालयों ने इसे विस्तार

समता का अधिकार एवं पर्यावरण संरक्षण संविधान के अनुच्छेद 14

में उपबन्धित किया गया है कि "राज्य भारत राज्यक्षेत्रान्तर्गत किसी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता और विधियों के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा। अनु० 14 में अन्तर्निहित समता के अधिकार के अन्तर्गत मनमाने और निरंकुश कार्यवाहियों का निषेध है। के मामले में बिना लोक हित का मूल्यांकन किए

बंगलौर मेडिकल ट्रस्ट बनाम बी० एस० मुडप्पा लोक उद्यान को नर्सिग होम में परिवर्तित करने करने के निर्णय को मनमाना एवं विवेकीय शक्ति के दुरुपयोग के आधार पर समता के अधिकार का उल्लंघन माना गया। उच्चतम न्यायालय ने लोक उद्यान और खुले स्थान की नगरी विकास में भूमिका को स्पष्ट करते हुए कहा कि "पर्यावरण, मनोरंजन हेतु खुले स्थान और शुद्ध वायु, बच्चों के लिए खेल मैदान, आवासियों हेतु चलने का विस्तृत रास्ता (Promenade) और अन्य सुविधाएँ अथवा सहूलियतें लोक अभिप्राय एवं प्रमुख हितों की विषय वस्तु है, जिनका ध्यान विकास योजनाओं में रखा जाना चाहिए। उद्यानों एवं खेल के मैदानों हेतु स्थानों के आरक्षण एवं संरक्षण में निहित लोक हित की प्राइवेट लोगों द्वारा किसी अन्य प्रयोग हेतु परिवर्तित करने के लिए पट्टा देने या विक्रय करने के नाम में बलि नहीं चढ़ायी जा सकती है। ऐसा करना सांविधानिक आदेश के सीधे विपरीत होगा"। न्यायाधिपति आर० एम० सहाय ने अपने सहमत निर्णय में स्पष्ट किया कि "सौन्दर्य एवं मनोरंजन हेतु आरक्षित स्थान के रूप में लोक उद्यान समता की संकल्पना एवं सामान्य जन की महत्ता की मान्यता के विकास से सम्बद्ध है। यह लोगों द्वारा स्वयं से प्रदान उपहार है।

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और पर्यावरण

भाषण और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर्यावरणीय समस्याओं को उजागर करने तथा उनके समाधान में सहायक हुई है। प्रेस के माध्यम से पर्यावरण प्रदूषण एवं तज्जनित खतरों के बारे में जानकारी दी जा रही है। केरल शाल साहित्य परिषद (KSSP) नामक एक गैर सरकारी संगठन ने "साइलेन्ट वैली प्रोजेक्ट को बन्द करने के लिए मजबूर कर दिया। जनमत एवं समाचार माध्यमों ने सरकार को मजबूर कर दिया कि वह टेहरी बाँध योजना के सम्बन्ध में उचित पर्यावरण प्रभाव आकलन कर सुरक्षा का उपाय करे। वाम्बे इनवायरन्मेण्टल ऐक्शन ग्रुप बनाम पुपो कैण्टोनमेण्ट में बाम्बे इनवायरन्मेण्टल ऐक्शन ग्रुप नामक गैर सरकारी संगठन को कैण्टोनमेण्ट द्वारा बड़े पैमाने पर कराये जा रहे निर्माण कार्य से पर्यावरण को खतरा महसूस हुआ। ऐक्शन ग्रुप ने जानकारी प्राप्त करने के अधिकार का दावा किया। उसने प्रत्यर्थियों से निवेदन किया कि या तो वे याची संस्था को

निर्माण कार्य से सम्बन्धित दस्तावेजों का निरीक्षण करने के लिए अनुमति प्रदान करें या निर्माण कार्य से सम्बन्धित दस्तावेजों की प्रतियाँ उपलब्ध करावें। यह तर्क दिया गया कि चूंकि याची एक संस्था है इसलिए इसे कैण्टोनमेण्ट बोर्ड से यह जानने का अधिकार है कि प्रत्यर्थी बोर्ड के निर्माण कार्य से पर्यावरण का सन्तुलन तो नहीं बिगड़ेगा। उच्चतम न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि प्रत्यर्थी बोर्ड याची संस्था को दस्तावेजों की प्रतियाँ देने को बाध्य था क्योंकि पर्यावरण संरक्षण के क्षेत्र में जनता की भागीदारी को नजरअन्दाज नहीं किया जा सकता है। कहना न होगा वायु अधिनियम में सन् 1987 और जल अधिनियम में सन् 1988 में किये गये संशोधनों द्वारा प्रदूषण नियंत्रण बोडों पर यह दायित्व अधिरोपित किया गया है कि ने प्रदूषक को अभियोजित करने की इच्छा रखने वाले नागरिकों की मांग पर उचित आन्तरिक रिपोर्ट उपलब्ध करायेंगे

व्यापार की स्वतंत्रता और पर्यावरण संविधान के अनुच्छेद 19

(1) (ह) में सभी नागरिकों को वृत्ति, उपजीविका, व्यापार और कारोबार की स्वतंत्रता प्रदान की गयी है। इस स्वतंत्रता पर अनु० 19(6) के अन्तर्गत सामान्य लोक हित में युक्तिसंगत निर्बन्धन लगाये जा सकते हैं। न्यायालयों ने पर्यावरण संरक्षण के आधार पर सामान्य जन हित में लगाये गये निर्बन्धनों को युक्तियुक्त निर्बन्धन माना है। कुछ मामलों में कारोवार को बन्द करने का आदेश भी दिया गया है। अस्तु, रूरल लिटिगेशन एण्ड इन्टाइटिलपेष्ट केन्द्र देहरादून बनाम ३० प्र० राज्य के मामले में देहरादून के आस-पास पत्थर की खानों के कारण आस-पास के पर्यावरण को प्रदूषित होने का खतरा उत्पन्न हो गया। उच्चतम न्यायालय ने एक समिति नियुक्त की जिसने इसको पुष्टि की। परिणामत: उच्चतम न्यायालय ने पत्थर की खानों में खुदाई का काम बन्द कर देने का आदेश दिया। एम० सी० मेहता बनाम यूनियन ऑफ इण्डिया के मामले में श्री राम एण्ड फर्टीलाइजर कम्पनी से ओलियम नामक घातक गैस के रिसाव के फलस्वरूप कम्पनी के आस-पास के निवासियों एवं कर्मकारों को भारी क्षति हुई थी। लोक हित वाद में उच्चतम न्यायालय ने आदेश दिया कि कम्पनी को ओलियम गैस बनाने से तब तक रोक दिया जाय जब तक वह गैस रिसाव रोकने का आवश्यक उपाय नहीं कर लेती

स्वस्थ एवं स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार दैहिक स्वतंत्रता की सृजनात्मक व्याख्या के माध्यम से स्वरण एवं स्वच्छ पर्यावरण का अधिकार अनु० 21

इस दिशा में प्रथम संकेत आर० एल० एण्ड ई० केन्द्र देहरादून बनाम उत्तर प्रदेश राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिया गया। जुलाई 1983 में उच्चतम न्यायालय को देहरादून के रूरल सिटीगेशन और इनटाइटिलमेण्ट केन्द्र के प्रतिनिधियों ने लिखा कि मंसूरी-देहरादून क्षेत्र में अवैधानिक चूना पत्थर खान का व्यापार चल रहा है जिसका उस क्षेत्र के पारिस्थितिकी तंत्र पर विध्वंसक प्रभाव पड़ रहा है। इसे रिट पिटीशन मानकर उत्तर प्रदेश सरकार और देहरादून के जिलाधिकारी को नोटिस जारी की गयी। अगस्त 1988 में अंतिम आदेश के पूर्व न्यायालय केन्द्र एवं राज्य सरकार की तरफ से, सरकारी एजेंसियों तथा खान पट्टाधारकों की तरफ से, नियुक्त अनेक विशेषज्ञ समितियों आदि के माध्यम से विस्तृत सुनवायी को। उच्चतम न्यायालय ने गंगा प्रदूषण (चर्म शोधनशाला) मामले में दिये गये निर्णय पर विशेष ध्यान दिया जिसमें न्या० सिंह ने जीवन, स्वास्थ्य एवं पारिस्थैतिकी के अत्यधिक महत्व को उजागर किया था। उच्चतम न्यायालय ने आन्ध्र प्रदेश राजस्थान केरल और हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालयों द्वारा अनुच्छेद 21 के विकसित पर्यावरणीय आयाम को भी ध्यान में रखाद्य प्रथम मामले की सुनवायी के समय न्यायालय ने अभिमत जाहिर किया कि "पर्यावरण और पारिस्थैतिकी संतुलन सम्बन्धी मुद्दों को उत्पन्न करने वाला इस देश में अपने तरह का यह प्रथम मामला है और विचारार्थ उत्पन्न प्रश्न केवल मंसूरी क्षेत्र में निवास करने वाले लोगों के लिए ही गंभीर महत्व एवं सार्थकता वाले नहीं हैं बल्कि देश में रहने वाले सामान्य लोगों के कल्याण पर प्रभाव डालने के लिए भी महत्वपूर्ण हैं।" उच्चतम न्यायालय को ने देहरादून में चल रही कतिपय चूना पत्थर खदानों को बन्द करने का आदेश दे दिया। एम० सी० मेहता बनाम भारत संघ (ओलियम गैस लीक मामला) में उच्चतम न्यायालय प्रदूषण मुक्त पर्यावरण के अधिकार अनु० 21 में मूल अधिकार के रूप में विवक्षित रूप से स्वीकार किया। न्यायालय ने गैस से प्रभावित लोगों के लिए प्रतिकर देने का आदेश दिया।

जीविकोपार्जन का अधिकार एवं पर्यावरण जीवन के अधिकार की उदार व्याख्या कर जीविकोपार्जन के अधिकार को भी इसमें सम्मिलित किया गया है। जीविकोपार्जन का अधिकार पर्यावरण पर प्रभाव डालने वाले सरकारी कृत्यों के ऊपर निर्बन्धन प्रस्तुत्त कर सकता है। जीविकोपार्जन के अधिकार को उच्चतम न्यायालय ने सर्वप्रथम ओल्गा तेलिस बनाम वाम्बे म्यूनिसिपल कारपोरेशन के मामले में मान्यता प्रदान किया। इस मामले में सरकार ने सड़क की पटरियों पर दुकान किए लोगों एवं रहने

वालें को उनके मूल स्थान पर हटाने का अभियान चलाया। एक पत्रकार और दो सड़क पटरी निवासियों द्वारा याचिका दायर की गयी और दलील दी गयी कि जीवन के अधिकार के अन्तर्गत जीविकोपार्जन का अधिकार भी सम्मिलित है। चूंकि मन्दवस्तियों और सड़क पटरी आवासियों को हटा दिये जाने से उनकी जीविका के साधन से वे वंचित हो जायेंगे। उनका हटाया जाना जीविकोपार्जन के साधन का उल्लंघन करेगा और इसलिए अवैधानिक है। पिटीशनकर्ताओं की अपील को स्वीकार करते हुए उच्चतम यायालय ने निर्णय दिया कि, "एक व्यक्ति को जीविकोपार्जन से वंचित कर दो और तुम उसे उसके जीन से बंचित कर दोगे राज्य सकारात्मक कार्यवाहियों द्वारा नागरिकों को जीविकोपार्जन का साधन अयवा कार्य देने के लिए मजबूर नहीं किया जा सकेगा। परन्तु कोई व्यक्ति जो न्यायपूर्ण और उचित विधि विहित प्रक्रिया द्वारा जीविकोपार्जन से वंचित किया जाता है, वंचित किए जाने की विधिमान्यता की चुनौतो अनुच्छेद 21 द्वारा प्रदत्त जीवन के अधिकार के उल्लंघन के आधार पर कर सकता है। उच्चतम न्यायालय ने म्युनिसिपल कारपोरेशन को निर्देशित किया कि (i) मलिन बस्तियों और सड़क पटरी पर रहने वाले लोगों को मूल स्थान से युक्तियुक्त दूरी के अन्तर्गत वैकल्पिक स्थान अथवा डेरा सुविधा प्रदान करे: (1) गरीबों हेतु प्रस्तावित मकान योजना को ईमानदारीपूर्वक लागू करे और (iii) मलिन बस्तियों में रहने वालों को मूल सुविधाएँ उपलब्ध करावे। वनवासी सेवा आश्रम बनाम उ० प्र० राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने रिहन्द सुपर थर्मल पावर प्रोजेक्ट हेतु नेशनल थर्मल पावर कारपोरेशन लिमिटेड (NTPC) द्वारा वन के जनजातीय आवासियों को उनकी वनभूमि से बहिष्कृत करने की योजना से संरक्षण हेतु विस्तृत बचाव प्रस्तुत किया।

निष्कर्ष

पर्यावरण शासन और नीति निर्माण को आकार देने में संविधान और पर्यावरण के बीच संबंध महत्वपूर्ण है। इस शोध से पता चला है कि संवैधानिक प्रावधान पर्यावरण संरक्षण और स्थिरता के लिए कानूनी ढांचे को परिभाषित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। विभिन्न न्यायालयों में संवैधानिक सिद्धांतों और प्रावधानों के तुलनात्मक विश्लेषण के माध्यम से, हमने संवैधानिक ढांचे में पर्यावरणीय मुद्दों को संबोधित करने के तरीके में प्रमुख समानताएं और अंतर की पहचान की है। हालाँकि, यह अध्ययन सुधार के लिए कई चुनौतियों और क्षेत्रों पर भी प्रकाश डालता है। संवैधानिक सुरक्षा उपायों की मौजूदगी के बावजूद, पर्यावरणीय गिरावट और स्थिरता वैश्विक स्तर पर चिंता का विषय बनी हुई है। कई मामलों में संवैधानिक सिद्धांतों और जमीन पर उनके प्रभावी कार्यान्वयन के बीच अंतर है। कमजोर प्रवर्तन तंत्र, राजनीतिक इच्छाशक्ति की कमी और प्रतिस्पर्धी हित अक्सर पर्यावरणीय अधिकारों और उद्देश्यों की प्राप्ति में बाधा डालते हैं। इसके अतिरिक्त, अंतर्राष्ट्रीय सहयोग को बढ़ावा देने और सर्वोत्तम प्रथाओं को साझा करने से पर्यावरणीय मुद्दों पर सीमा पार सहयोग की सुविधा मिल सकती है और वैश्विक पर्यावरण प्रबंधन को बढ़ावा मिल सकता है।

संदर्भग्रंथ सूची

1. पांडे जीएफ: भारत का संविधान
2. बासु डी.डी: भारत का संविधान
3. पांडे जय नारायण: भारत का संविधान
4. राय कैलाश; भारत का संविधान
5. प्रसाद अनिरुद्ध;; पर्यावरण एवं संविधान
6. मिश्रा एस एन; पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्धन
7. https://pib.gov.in/newsite/printrelease.aspx?relid=105411
8. https://www.drishtiias.com/hindi/to-the-points/paper3/environment-protection-act-1986/print/manual
9. https://dailychhattisgarh.com/article-details.php?article=44412&path_article=2

‘कामायनी’ में पर्यावरण अनुशीलन

डॉ० हनी दर्शन

हिन्दी-विभाग, रामकृष्ण महाविद्यालय, मधुबनी बिहार, भारत

शोध-सार: प्रस्तुत शोधपत्र में सुप्रसिद्ध हिन्दी-कवि जयशंकर प्रसाद के महाकाव्य ‘कामायनी’ में पर्यावरण की उपस्थिति की जाँच-पड़ताल की गयी है। आज पर्यावरण के बिगड़ते स्वरुप पर जिस तरह पूरे विश्व में गम्भीर बहस हो रही है उसमें आवश्यक है कि साहित्य की सहभागिता और अतीत में इसके योगदान को भी याद किया जाय। यह देखना आवश्यक है कि छायावाद के प्रमुख कवि प्रसाद जी और उनकी सबसे महत्त्वपूर्ण कृति ‘कामायनी’ में पर्यावरण किस रूप में उपस्थित है। चूँकि छायावाद का पूरा ताना-बाना ही प्रकृति-प्रेम और प्रकृतिपरक कविताओं के आसपास अवस्थित है, इसलिए यह देखना और भी आवश्यक हो जाता है कि क्या आज के बिगड़ते हालात में प्रकृति को सुरक्षित रखने में प।-साहित्य का कोई योगदान हो सकता है? यह भी आवश्यक है कि जिसे हम साहित्य के अन्तर्गत महाकाव्य की संज्ञा देकर अति महत्त्वपूर्ण मानते हैं वह मानव-जीवन के व्यावहारिक पक्ष के लिए कितना उपयोगी और उपादेय है।

बीज शब्द: पर्यावरण, साहित्य, प्रकृति, कामायनी, विमर्श

भूमिका: आज पर्यावरण वैश्विक चिंता के केंद्र में है। प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के लगातार बेरहमी से दोहन ने विश्व को खतरे की दहलीज पर ला खड़ा कर दिया है। ग्लोबल वार्मिंग, ओजोन परत का क्षरण, भूमि, जल, हवा सबका लगातार दूषित होते जाना और मनुष्य का सचेत न होना, पर्यावरण के समक्ष ऐसी चुनौतियाँ हैं, जिनसे अगर यथाशीघ्र नहीं निपटा गया तो आगामी वर्षों में मानव-जीवन पर भीषण खतरे मंडराने लगेंगे तथा हमारी आनेवाली पीढ़ी को श्वास, श्रवण और त्वचा सम्बन्धी घातक रोगों का सामना करना होगा। प्रकृति सहनशील अवश्य है, किन्तु इसका यह अर्थ कदापि नहीं कि वह हमें दंडित नहीं कर सकती। अतिवृष्टि, अनावृष्टि और अल्पवृष्टि के कारण त्राहि-त्राहि करती सृष्टि प्रकृति के विनाशकारी स्वरूप की जीवन्त कहानी कहती है। साहित्य को समाज का दर्पण कहा गया है और प्रकृति की मनोमुग्धकारी और विनाशकारी दोनों ही छवियाँ इसमें प्रतिबिम्बित होती हैं। मनुष्य की मनोवृत्ति है कि वह अपने भावों को प्रकृति पर आरोपित किए बगैर नहीं रह सकता। प्रकृति का आँचल थामकर वह कभी वसन्त की हरीतिमा भीतर तक महसूस करता है तो कभी ग्रीष्म के ताप में व्यथित हो जाता है।

साहित्य में विमर्श: यह साहित्य में विमर्शों का दौर है। जो सामाजिक जीवन में हाशिये पर हैं उन्हें केंद्र में लाने का दौर है। स्त्री विमर्श, दलित विमर्श, वृद्ध विमर्श, अल्पसंख्यक विमर्श, आदिवासी विमर्श आदि इसी श्रृंखला की कड़ियाँ हैं। आदिवासी प्रकृति के पुत्र हैं और उनका जीवन पर्यावरण के अनुकूल है। इसलिए आदिवासी विमर्श की बात करना प्रकृति और पर्यावरण के विमर्श की ही बात करना है; लेकिन जब पूर्ण रूप से पर्यावरण के विमर्श में बात आयेगी तो ‘प्रकृति-पुत्र’ आदिवासी उसका केवल एक भाग होंगे। नदियाँ, पहाड़, जल-जंगल-जमीन, हवा, पशु आदि उसका विस्तृत रूप होंगे। साहित्य में हरित विमर्श की तलाश आज की आवश्यकता भी है और अनिवार्यता भी, क्योंकि यही हमारा ध्यान प्रकृति और पर्यावरण की ओर ले जा सकता है। वह ध्यान जो भौतिकतावादी चकाचौंध में कहीं भी केन्द्रित नहीं रह पाता। पर्यावरण से हम न केवल जीवन-शक्ति, प्राण-वायु लेते हैं वरन मानसिक ऊर्जा भी ग्रहण करते हैं।

काव्य में प्रकृति: कविता अनुभूतियों की अभिव्यक्ति है। अनुभव जीवन-जगत से ही प्राप्त होते हैं। मानव-जीवन और पर्यावरण एक ही सिक्के के दो पहलू हैं। एक के बिना दूसरे की कल्पना सम्भव नहीं; लेकिन विडम्बना यह है कि एक पहलू ने दूसरे पहलू पर अपनी निर्भरता इस हद तक बढ़ा दी है कि उसका अस्तित्व ही खतरे में है। यह स्थिति आत्मघाती है। कविता इस स्थिति को भी रेखाद्यकित करती है। आदिकाल से लेकर आज तक का साहित्य प्रकृति के नाना रूपों को उभरता रहा है। पर्यावरण हमारे जीवन का आधार है तो प्रकृति की विराट सुरम्य भूमि पर ही साहित्य जीवन और शक्ति पाता है। सम्पूर्ण छायावाद प्राकृतिक सुषमा में आकंठ डूबा है। छायावाद के आधार-स्तम्भ जयशंकर प्रसाद के काव्य में प्रकृति अपने बहुमुखी और बहुआयामी रूप में अंकित है। प्रसाद का वर्ण्य विषय प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण भले ही न रहा हो, लेकिन उनके काव्य में प्रकारान्तर से पर्यावरण और जीव-जन्तुओं के प्रति करुणा का भाव स्वत: ही स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है।

औ॥ेगीकरण, नगरीकरण, भौतिक संसाधनों की प्रतिस्पर्धा विश्व को विनाश के व्यूह में लिए जा रही है। गौरतलब है कि छायावाद का समय 1918 से 1936 तक है। यह समय दो महायुद्धों के बीच का समय है। युद्धों से न केवल जनधन की हानि होती है, वरन प्रकृति को भी अपार क्षति पहुँचती है। सारा वातावरण विषाक्त हो उठता है।

कामायनी में पर्यावरण की चिन्ता: जयशंकर प्रसाद ने अपनी कालजयी कृति 'कामायनी' में देव-सृष्टि के विनाश का कारण भोगवादी प्रवृत्ति के अतिरेक को ही माना है। प्रकृति का दोहन प्राकृतिक आपदा के रूप में ही प्रत्यक्ष होता है। इसकी चेतावनी 'कामायनी' के 'चिन्ता सर्ग' की आरम्भिक पंक्तियाँ देती हैं-

"हिम-गिरि के उक्तंग शिखर पर, बैठ शिला की शीतल छाँह।
एक पुरुष भीगे नयनों से, देख रहा था प्रलय-प्रवाह!"[1]

प्रलय का यह प्रवाह वही जल-प्लावन है जिसमें सृष्टि का अन्त हो गया था। जल-प्लावन को सच मानें या कपोल कल्पना, लेकिन मनुष्यता के नवयुग के प्रवर्तक के रूप में हृदय-बुद्धि के द्वंद्व में उलझे मनु आधुनिक पुरुष के प्रतीक हैं। इसलिए आधुनिक भौतिकतावादी युग के लिए यह प्रलय-प्रवाह चेतावनी है-

"प्रकृति रही दुर्जेय, पराजित, हम सब थे भूले मद में।
भोले थे, हाँ तिरते केवल सब विलासिता के मद में।"[2]

आगे वे लिखते हैं-

"विकल 'वासना' के प्रतिनिधि वे, सब मुरझाये चले गये।
आह! जले अपनी ज्वाला से, फिर वे जल में गले गये।"[3]

कुछ वर्ष पहले सुनामी आयी थी। सुनामी जैसे समुद्री तूफान की लहरें जब सब कुछ लील लेने पर आमादा थीं, तब एक बार फिर मानव सभ्यता बौनी साबित हुई थी। प्रसाद बहुत पहले अपने काव्य में प्रकृति की उस भयंकरता को उकेरकर मनुष्यता को प्रकारान्तर से पर्यावरण के प्रति सचेत करते नजर आते हैं-

"लहरें व्योम चूमती उठतीं, चपलाएँ असंख्य नचतीं।
गरल जलद की खड़ी झड़ी में, बूँदें निज संसृति रचतीं।
चपलाएँ उस, जलधि विश्व में, स्वयं चमत्कृत होती थीं।
ज्यों विराट बाड़व ज्वालाएँ, खण्ड-खण्ड हो रोती थीं।"[4]

कामायनी में मानवतावाद, समन्वयवाद, आनन्दवाद आदि केन्द्र में हैं, लेकिन जीव और पर्यावरण संरक्षण-सम्बन्धी संदेश भी इसमें निहित हैं, जो इसकी महत्ता को और भी बढ़ाते हैं। आज के अस्त-व्यस्त जीवन में जब कुंठा, हताशा, आत्महत्या की प्रवृत्ति अपने चरम पर है, मानवीय मूल्यों का विध्वंश हो चुका है, नैतिकता महज ऐसा खोखला शब्द रह गयी है, जिसे सब अपनी सुविधानुसार प्रयोग करते हैं, परिभाषित करते हैं और सम्पूर्ण सभ्यता पर संकट मंडरा रहा है। 'कामायनी' का 'आशा सर्ग' प्रकृति के सुरम्य रूप को दर्शाकर हृदय में आशा का संचार करता है। ध्यातव्य हो कि प्रलय के बाद एकाकी बचे निराश मनु के हृदय में इसी सर्ग में प्रकृति के माध्यम से आशा का संचार प्राकृतिक रूप से हुआ है-

"उषा सुनहरे तीर बरसती, जयलक्ष्मी-सी उदित हुई।
उधर पराजित कालरात्रि भी, जल में अंतर्निहित हुई।
वह विवर्ण मुख त्रस्त प्रकृति का, लगा आज हँसने फिर से।
वर्षा बीती, हुआ सृष्टि में, शरद विकास नये सिर से।"[5]

जिस प्राकृतिक सुषमा का वर्णन जयशंकर प्रसाद ने मनुष्य मात्र को आशान्वित करने के लिए किया है, उसके दर्शन भी अब दुर्लभ हैं। वनों की निरन्तर बेरहमी से कटाई, कल-कारखानों और कंक्रीटों के जंगल की बेतहाशा वृद्धि तथा जनसंख्या का विस्फोट और कचड़ों के बनते पहाड़ के इस समय में कोई व्यक्ति प्रकृति की ताजगी भरी छवि देख नहीं सकता। पहाड़ी इलाकों तक को मनुष्यों ने अपने कचरों और अवैध निर्माण से नैसर्गिक नहीं रहने दिया है। ऐसे में 'आशा सर्ग' प्रकृति के उस सुरम्य रूप को संरक्षित करने की भी प्रेरणा देता है, जो मनुष्य मात्र को विषमताओं, विफलताओं, विडम्बनाओं से घिरे जीवन में सँभाल सके।

'वासना सर्ग' में श्रद्धा द्वारा पशुपालन का वर्णन मिलता है। 'स्वप्न सर्ग' में कृषि का भी वर्णन मिलता है तथा 'आनंद सर्ग' में धर्म के प्रतीक के रूप में बैल को रखा गया है। इस तरह प्रसाद मनु के माध्यम से जिस नवीन सृष्टि के निर्माण की परिकल्पना कर रहे हैं, उसमें जीव-जन्तुओं और पेड़-पौधों के प्रति उनका सहज प्रेम न केवल अभिव्यक्त होता है, वरन इससे उनकी पर्यावरणीय चेतना का भी सहज ही पता चलता है। 'ईर्ष्या सर्ग' में श्रद्धा मनु को पशुपालन के लिए प्रेरित कर शिकार से मना करती है। उसे निरीह पशुओं के चमड़े के वस्त्र नहीं चाहिए। पशुपालन और निरीह पशुओं की रक्षा के लिए श्रद्धा के माध्यम से कही गई जयशंकर प्रसाद की पक्तियाँ उल्लेखनीय हैं-

"चमड़े उनके आवरण रहे, ऊनों से मेरा चले काम।
वे जीवित हो मांसल बनकर, हम अमृत दुहें, वे दुग्ध-धाम।
वे द्रोह न करने के स्थल हैं, जो पाले जा सकते सहेतु।
पशु से यदि हम कुछ ऊँचे हैं, तो भव जलनिधि के बने सेतु।"[6]

आज 'इको फ्रेंडली' की बातें होती हैं। पर्यावरण-संरक्षण और पशुओं के संरक्षण की बातें होती हैं, लेकिन जयशंकर प्रसाद बहुत पहले ही 'कामायनी' के माध्यम से इन सब पर अपनी चिन्ता जाहिर कर चुके हैं, अपने विचार व्यक्त कर चुके हैं। हमें उनके काव्य का नये विमर्शों के आलोक में पुनर्पाठ करना चाहिए।

निष्कर्ष: निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि आज का युग कुण्ठा और ईर्ष्या से दग्ध है। प्रकृति के पास ही इन ज्वालाओं से शान्ति के समस्त उपाय हैं। प्रसाद के काव्य में प्रकृति के विविध रूपों को दर्शाकर मानव-जीवन में पर्यावरण के महत्त्व को स्थापित किया गया है। प्रकृति का दोहन न करते हुए, भौतिकतावादी मानसिकता से दूर रहकर कर्मशील बनकर एक बेहतर पर्यावरण विकसित किया जा सकता है। 'श्रद्धा सर्ग' में आयी ये पंक्तियाँ मनुष्य के वास्तविक आनन्द को दर्शाकर अक्षय प्राकृतिक वैभव को भोगने का सन्देश देती हैं, न कि विकास के मद में अन्धे होकर प्रकृति को रौंदने का-

"एक तुम यह विस्तृत भूखंड, प्रकृति वैभव से भरा अमन्द।
कर्म का भोग, भोग का कर्म, यही जड़ का चेतन आनन्द।"[7]

सन्दर्भ:

1. प्रसाद का सम्पूर्ण काव्य, संपा. डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, पृ. सं. 413, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, चौथा संस्करण 2013
2. वही, पृ. सं. 417
3. वही, पृ. सं. 421
4. वही, पृ. सं. 426
5. वही, पृ. सं. 433
6. वही, पृ. सं. 557
7. वही, पृ. सं. 466

पर्यावरण प्रदूषण एवं सार्वजनिक स्वास्थ

अनामिका यादव

पी-एच. डी. (शोधार्थी) महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा, महाराष्ट्र

सारांश

आज के बढ़ते इस आधुनिकता और नई-नई खोजों के कारण मनुष्य वायुमंडल, जल, भूमि, पर्यावरण के विभिन्न तत्वों और पारिस्थितिकी तंत्र को चौतरफा नुकसान पहुंचा रहा है। मानव द्वारा निर्मित प्रदूषण और पर्यावरणीय क्षरण इतना अधिक हो गया है कि आने वाले भविष्य का दु:स्वप्न हम सभी को झकझोर देने वाला है। सामान्य परिदृश्य पर संक्षिप्त नजर डालें तो ज्ञात होता है कि पर्यावरण जो कि मनुष्य के स्वास्थ के लिए सभी अधिक आवश्यक है मनुष्य उसे ही सबसे अधिक क्षति पहुंचा रहा है। वैश्विक से लेकर क्षेत्रीय स्तर तक विलसतापूर्ण जीवन को बढ़ावा देने से हमारा वातावरण अत्यधिक प्रदूषित है। उत्तरी गोलार्ध के घनी आबादी वाले अक्षांशों में सुरक्षात्मक ओजोन परत दोगुनी तेजी से पतली हो रही है। ग्रीन हाउस गैसों के निर्माण से निकट भविष्य में मौसम के पैटर्न में महत्वपूर्ण बदलाव होंगे, जिससे ग्लोबल वार्मिंग और बढ़ेगी। ओजोन परत के क्षरण अथवा विनाश और पृथ्वी की सतह के और अधिक गर्म होने से कैंसर और उष्णकटिबंधीय रोगों का विस्फोट, महासागरों की खाद्य श्रृंखला में व्यवधान, समुद्र के स्तर में वृद्धि, कई द्वीपों का जलमग्न होना, छोटे भूमि-आधारित ग्लेशियरों का पिघलना, बाढ़ जैसे विनाशकारी परिणामों का खतरा पर्यावरण प्रदूषण के कारण लगातार बढ़ रहा है। वैश्विक स्तर पर पर्यावरण प्रदूषण की स्थिति और मानवस्वास्थ पर इसके प्रभाव का आकलन करने के लिए, प्रासंगिक विद्वानों के लेखों की व्यापक समीक्षा की गई। प्रस्तुत शोध लेख द्वितीयक आंकड़ों पर आधारित है।

मुख्य बिन्दु: पर्यावरण, प्रदूषण, स्वास्थ, पर्यावरण क्षरण।

प्रस्तावना

पर्यावरण की अवधारणा उतनी ही पुरानी है जितनी प्रकृति की अवधारणा है। यह उन स्थितियों को संदर्भित करने वाला एक ऐसा मिश्रित शब्द है जिसमें वायु, पानी, भोजन, सूरज की रोशनी आदि से युक्त जीव पनपते और रहते हैं और पौधों के साथ-साथ सभी जीवित प्राणियों के लिए जीवनयापन के लिए जीवित स्रोत बन जाते हैं। इस शब्द में वायुमंडलीय तापमान से लेकर वायु और उसका वेग भी शामिल है (अप्पननगरी,2017)। आज पर्यावरण प्रदूषण एक वैश्विक समस्या बन गई है जिसने समय-समय पर अपने गंभीर दीर्घकालिक दुष्परिणामों के लिए मानव जाति का ध्यान आकर्षित किया है और इसके मानवस्वास्थ पर अत्यधिक प्रभाव पड़ने की संभावना को भी प्रकृति अपने तरीके से चेतावनी दे रही है। सीधे शब्दों में, पर्यावरण प्रदूषण किसी भी पदार्थ (ठोस, तरल, या गैस) या किसी भी प्रकार की ऊर्जा (जैसे गर्मी, ध्वनि, या रेडियोधर्मिता) को पर्यावरण में तेजी से फैलाने, पतला करने, विघटित करने, पुनर्नवीनीकरण करने की दर को व्यक्त करता है (नाथमसन, 2022)। विश्वस्वास्थ संगठन (डब्ल्यूएचओ) प्रदूषण को "पर्यावरण में पदार्थों या सूक्ष्मजीवों की उपस्थिति के रूप में परिभाषित करता है, जो मानवस्वास्थ के साथ-साथ जीवित पर्यावरण को नुकसान पहुंचा सकता है" (डब्ल्यूएचओ, 2016)। दूसरे शब्दों में, यह किसी भी प्रणाली में संतुलन की स्थिति से असमानता अथवा असंतुलन की स्थिति की ओर प्रस्थान है। पिछले कुछ दशकों की यदि मूल्यांकन किया जाए तो, प्रदूषण के विभिन्न स्रोत पर्यावरण के जल, वायु और मिट्टी की संरचना को बदल रहे हैं अर्थात उन्हें नुकसान पहुंचा रहे हैं। विभिन्न रासायनिक पदार्थ जैसे जहरीली धातु, ऑर्गेनोफॉस्फोरस यौगिक, गैसें; भू-रासायनिक पदार्थ जैसे धूल, तलछट; जैविक जीव या उत्पाद, और अन्य भौतिक पदार्थ जैसे गर्मी, विकिरण, ध्वनि तरंग आदि सामान्य प्रदूषक हैं जो मनुष्य द्वारा अपने विलसतापूर्ण जीवनयापन हेतु जानबूझकर या अनजाने में पर्यावरण में छोड़े जाते हैं। प्रदूषकों की प्रकृति के आधार पर प्रदूषण को वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण और मिट्टी/भूमि प्रदूषण मुख्यत: विभाजित किया गया है जो पर्यावरण, मनुष्यों, पौधों, जानवरों और सभी जीवित जीवों के लिए खतरा पैदा करने वाले मुख्य प्रकार हैं।

प्रदूषण

यह समझने से पहले कि "पर्यावरण प्रदूषण" क्या है, यह जानना भी उतना ही आवश्यक है कि "प्रदूषण" क्या है। प्रदूषण को निम्नलिखित परिभाषाओं के माध्यम से समझा जा सकता है।

प्रदूषण की परिभाषा

ब्रिटेन में पर्यावरण प्रदूषण पर रॉयल कमीशन ने अपनी तीसरी रिपोर्ट में "प्रदूषण" शब्द की निम्नलिखित रूप से परिभाषित किया है:

मनुष्य द्वारा पर्यावरण में ऐसे पदार्थों या ऊर्जा का उत्पत्ति, जो मानवस्वास्थ के लिए खतरा पैदा कर सकते हैं, जीवित संसाधनों और पारिस्थितिक प्रणालियों को नुकसान पहुंचा सकते हैं, संरचना या सुविधा को नुकसान पहुंचा सकते हैं या पर्यावरण के वैध उपयोग में हस्तक्षेप कर सकते हैं। प्रदूषण कहलाते हैं।

यू.के. पर्यावरण संरक्षण अधिनियम, 1990 की धारा 1(3) के अनुसार, "प्रदूषण" शब्द का अर्थ है:

पदार्थों का किसी भी प्रक्रिया से उत्सर्जन (किसी भी पर्यावरणीय माध्यम में) जो मनुष्य या पर्यावरण द्वारा समर्थित किसी अन्य जीवित जीव को नुकसान पहुंचाने में सक्षम है। प्रदूषण के अंतर्गत आते है।

उपर्युक्त परिभाषाओं से यह ज्ञात होता है कि प्रदूषण तब होता है जब हानि या क्षति की संभावना होती है। अर्थात मनुष्य की क्षति केवल शारीरिक चोट तक ही सीमित नहीं है, अपितु उसकी किसी भी इंद्रिय पर की गई क्षति या उसकी भौतिक संपत्ति को नुकसान पहुंचाना शामिल है, इसलिए गंध और शोर, जैसे कारक भी प्रदूषण बन सकते हैं। जीवित जीवों को होने वाले हानि में उनकेस्वास्थ को नुकसान या पारिस्थितिक तंत्र में हस्तक्षेप शामिल हो सकता है जिसका वे हिस्सा बनते हैं।

पर्यावरण प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण दुनिया भर के मनुष्यों के लिए महत्वपूर्ण प्रभाव के साथ एक व्यापक मुद्दा बन गया है। जीवाश्म ईंधन का उपयोग, अनुचित सीवेज प्रथाएं और कृषि कीटनाशकों का अंधाधुंध उपयोग दुनिया भर में पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ाने में योगदान देता है। प्रदूषण के हानिकारक प्रभाव कैंसर, हृदय रोग, श्वसन संबंधी बीमारियों, मानसिक विकारों और दस्त के रूप में प्रकट होते हैं। प्रत्येक वर्ष, लगभग 7 मिलियन लोग वायु प्रदूषण-संबंधी कारणों एवं अतिरिक्त 16 लाख लोग जल प्रदूषण से उत्पन्न बीमारियों के कारण मर जाते हैं। पर्यावरण प्रदूषण दुनिया भर में मानव रुग्णता और मृत्यु दर के प्रमुख निर्धारक के रूप में उभर रहा है। आधुनिक युग में प्रदूषण के बढ़ते बोझ को देखते हुए, वैश्विक पर्यावरण और मानवस्वास्थ पर प्रदूषण की सीमा और परिणामों को कम करने के लिए सभी संबंधित संस्थाओं और राष्ट्रों द्वारा ठोस और सहयोगात्मक प्रयास आवश्यक हैं (ज्ञवाली, आचार्या एवं पौडेल, 2023)। क्योंकि प्रदूषण कोई नई घटना नहीं है, फिर भी यह मानव के सामने आने वाली दुनिया की सबसे बड़ी समस्या है और मानव रुग्णता और मृत्यु दर का एक प्रमुख कारण है और हर साल लगभग 9 मिलियन लोग प्रदूषण से मरते हैं (फुलर एट अल., 2022)। इसके अतिरिक्त, कम आय वाले देश पर्यावरण प्रदूषण के प्रति अधिक संवेदनशील पाए गए हैं। GBD (ग्लोबल बर्डन ऑफ डिजीज) 2019 एवं रिस्क फैक्टर्स कोलैबोरेटर्स ¹GBDRFC°, (2020) के अनुसार, प्रदूषण से संबंधित लगभग 92% मौतें और सबसे बड़ी अर्थव्यवस्था का नुकसान कम आय और मध्यम आय वाले देशों में होता है और दक्षिण पूर्व एशिया की स्थिति बदतर है और प्रदूषण के कारण मृत्यु दर सबसे अधिक है। नेपाल में, लगभग 54000 वार्षिक मौतें केवल वायु प्रदूषण के कारण दर्ज की गई हैं (डब्ल्यूएचओ, 2017 ए)। दूसरी ओर, कृषि आधी आबादी की आजीविका है, कृषि रसायनों (कीटनाशक, उर्वरक, शाकनाशी) का उपयोग काफी बढ़ रहा है और साथ ही ऐसे रासायनिक उपयोगों के बढ़ने से पर्यावरण पर बोझ भी बढ़ा है और मानवस्वास्थ को हानि पहुंचा रहा है (जीसी और न्यूपेन, 2019; ज्ञवाली, 2018)।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण

पर्यावरण प्रदूषण की समस्या विभिन्न परस्पर संबंधित कारकों से जुड़ी शक्तियों का एक जटिल परिणाम है। पर्यावरणीय संकट या प्रदूषण के मूल कारक क्या हो सकते हैं, इस बारे में स्पष्ट रूप से कई भिन्न और विरोधाभासी विचार हैं। क्योंकि किसी एक कारण को पर्यावरणीय हानि का मूल कारण नहीं माना जा सकता। निम्नलिखित कारणों को अंतर्निहित कारकों के रूप में इंगित किया जा सकता है, हालांकि इनमें से प्रत्येक भी एक साथ संचालित हो सकता है और उनका संतुलन स्थान-दर-स्थान और समय के अनुसार भिन्न हो सकता है।

वायु प्रदूषण और मानव स्वास्थ पर इसका प्रभाव

वायु प्रदूषण पर्यावरणीय और सार्वजनिक स्वास्थ हेतु चिंता का विषय है, जो आर्थिक विकास, शहरीकरण, ऊर्जा खपत, परिवहन और जनसंख्या वृद्धि जैसे कारकों से प्रभावित है। विकसित देशों की तुलना में विकासशील देशों में वायु प्रदूषण से

जुड़ी मृत्यु दर उल्लेखनीय रूप से अधिक है। क्षेत्रीय रूप से, पूर्वी एशिया में वार्षिक वायु प्रदूषण से संबंधित मौतों का 35 प्रतिशत हिस्सा होता है, इसके बाद दक्षिण एशिया (32 प्रतिशत), अफ्रीका (11 प्रतिशत), यूरोप (9 प्रतिशत), उत्तर और दक्षिण अमेरिका (6 प्रतिशत), और ऑस्ट्रेलिया (1.5 प्रतिशत) का स्थान आता है (जीएएचपी, 2019)। फुलर एट ऑल के अनुसार (2022), परिवेशी वायु प्रदूषण 2019 में 4.5 मिलियन मौतों के लिए जिम्मेदार था, जो 2000 में दर्ज की गई 2.9 मिलियन मौतों से एक महत्वपूर्ण वृद्धि है, जो परिवेशी वायु प्रदूषण के बढ़ते स्तर और वायु प्रदूषण से जुड़े गैर-संचारी रोगों की घटनाओं को दर्शाता है। इसके विपरीत, विकासशील देशों में, घरेलू वायु प्रदूषण मुख्य रूप से ठोस बायोमास ईंधन के उपयोग के लिए जिम्मेदार है और यह एक महत्वपूर्ण समस्या का प्रतिनिधित्व करता है, खासकर कम आय वाले देशों में (डब्ल्यूएचओ, 2019ए)। इस प्रकार हम देखते हैं कि वायु प्रदूषण मानव स्वास्थ हेतु हानिकारक है।

जल प्रदूषण और मानव स्वास्थ पर इसका प्रभाव

जल प्रदूषण एक महत्वपूर्ण वैश्विक चुनौती है जो विकसित और विकासशील दोनों देशों को प्रभावित करता है। विभिन्न स्रोतों से कार्बनिक और अकार्बनिक जल प्रदूषकों का उत्सर्जन लगातार बढ़ रहा है, लगभग 80 प्रतिशत नगरपालिका अपशिष्ट जल को बिना उपचारित किए पर्यावरण में छोड़ दिया जा रहा है, और उद्योग भारी मात्रा में भारी धातुओं, सॉल्वैंट्स, विषाक्त कीचड़ और अन्य कचरे को सालाना जल निकायों में डंप कर रहे हैं। (डब्ल्यूडब्ल्यूएपी, 2017)। पारंपरिक जल प्रदूषकों में लोहा, नाइट्रेट और सीसा, कैडमियम, क्रोमियम, निकल, जस्ता, आर्सेनिक और पारा जैसी भारी धातुएँ शामिल हैं। हालाँकि, तकनीकी प्रगति और शहरीकरण के साथ, स्टेरॉयड, हार्मोन, अंतः स्रावी-विघटनकारी यौगिक (ईडीसी), फार्मास्यूटिकल्स और व्यक्तिगत देखभाल उत्पाद, और सर्फेक्टेंट जैसे उभरते जल प्रदूषक अधिक प्रमुख होते जा रहे हैं। जल प्रदूषण एक प्रमुख वैश्विक समस्या है, जिसके परिणामस्वरूप प्रतिवर्ष 1.8 मिलियन मौतें होती हैं और डायरिया, हैजा, पेचिश, टाइफाइड और पोलियो जैसी बीमारियाँ होती हैं, डायरिया हर साल जल प्रदूषण से जुड़ी प्रमुख बीमारी है। इसके अतिरिक्त, पानी में नाइट्रेट का उच्च स्तर प्रसिद्ध ब्लू बेबी सिंड्रोम का कारण बन सकता है, जो शिशुओं को प्रभावित करने वाली संभावित घातक स्थिति है (डब्ल्यूएचओ, 2019बी)। वैश्विक स्तर पर, कम से कम 2 अरब लोग मल से दूषित पेयजल स्रोतों पर निर्भर हैं, मल संदूषण से माइक्रोबियल संदूषण पेयजल सुरक्षा के लिए सबसे बड़ा खतरा पैदा करता है (डब्ल्यूएचओ, 2022)।

कीटनाशकों का उपयोग और मानव स्वास्थ पर प्रभाव

बढ़ती जनसंख्या हर साल अधिक भोजन की मांग कर रहा है और दूसरी ओर खेती की भूमि बढ़ती जनसंख्या के कारण सिकुड़ रही है इसलिए आधुनिक कृषि को खाद्य उत्पादन और खपत के बीच अंतर को पाटने के लिए ज्यादातर विभिन्न कृषि रसायनों के उपयोग पर निर्भर रहना पड़ता है। इस प्रयोजन के लिए, दुनिया भर में विभिन्न कृषि रसायनों (उर्वरक, पौध संरक्षण रसायन या कीटनाशक, और पौध विकास हार्मोन) का उपयोग बढ़ रहा है। विभिन्न कृषि रसायनों में, कीटनाशक एक प्रमुख इनपुट है जिसका उपयोग कीटों और बीमारियों से होने वाले फसल उत्पादन नुकसान को कम करने और स्वस्थ फसलों को बनाए रखने के लिए किया जाता है। एफएओ (2024) के अनुसार दुनिया भर में 1000 से अधिक कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि फसल कीटों द्वारा क्षतिग्रस्त या नष्ट न हो और कीटनाशकों का वैश्विक उपयोग सालाना 4.1% की दर से बढ़ रहा है। कृषि प्रयोजन के साथ-साथ निजी उद्यानों, गोल्फ मैदान और अन्य सार्वजनिक क्षेत्रों में भी कीटनाशकों का उपयोग किया जाता है। कीटनाशकों के उपयोग से कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई है, लेकिन दूसरी ओर, इसका पर्यावरण और मानव स्वास्थ पर जबरदस्त नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। खाद्य श्रृंखला के माध्यम से जैवसंचय अंततः स्तनधारियों के लिए जोखिम बन सकता है क्योंकि कीटनाशक पीढ़ी-दर-पीढ़ी लंबे समय तक कुछ नकारात्मक प्रभाव उत्पन्न करते हैं (गेरबर, एट अल. 2016; एफएओ, 2017)। कीटनाशकों का प्रभाव केवल खेतों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि वे विभिन्न क्षेत्रों को प्रभावित कर रहे हैं क्योंकि वे हवा के माध्यम से फैलते हैं, मिट्टी और भूजल में घुल जाते हैं, और सतह के पानी में भी बह जाते हैं (गिल और सिनफोर्ट, 2005; चोपड़ा, शर्मा और चमोली 2011)।

निष्कर्ष

पर्यावरणीय समस्याओं अथवा प्रदूषण के कारण अनेक हैं। कारण और प्रभाव प्रायः सामाजिक, तकनीकी, पर्यावरणीय और राजनीतिक कारकों के जटिल जाल में गुंथे हुए होते हैं। हालाँकि, पर्यावरणीय गिरावट के कुछ बहुत ही सामान्य कारण जिन्हें स्पष्ट रूप से बताया जा सकता है, वे हैं जनसंख्या वृद्धि, समृद्धि कारक से जुड़ी आर्थिक वृद्धि (विलसतापूर्ण वस्तुएं) और प्रौद्योगिकी में बदलाव आदि। प्रतिकूल जनसांख्यिकीय दबाव का अत्यधिक प्रभाव अंततः हमारे संसाधनों और पारिस्थितिकी तंत्र

पर पड़ता है। इसके साथ मिलकर गरीबी और अविकसितता की स्थितियाँ स्वयं एक ऐसी स्थिति पैदा करती हैं जहाँ लोग गंदगी में रहने के लिए मजबूर होते हैं और अपने पर्यावरण को और अधिक खराब करते हैं। यदि ठीक से प्रबंधन न किया जाए तो विकास की प्रक्रिया भी पर्यावरण को नुकसान पहुंचाती है। तीव्र आर्थिक विकास के साथ संबद्ध, असाधारण समृद्धि कहीं अधिक संसाधनों का उपभोग करती है और प्राकृतिक संसाधनों पर कहीं अधिक दबाव डालती है। प्रौद्योगिकी के परिवर्तन से योजनाबद्ध अप्रचलन होता है जिससे अधिक से अधिक अपशिष्ट उत्पन्न होते हैं जो बदले में पारिस्थितिक रूप से हानिकारक साबित होते हैं। निजी लाभ अधिकतमीकरण के अल्पकालिक हित, पारिस्थितिक रूप से सौम्य प्रौ।ोगिकियों द्वारा अप्रचलित प्रौ।ोगिकियों के प्रतिस्थापन की प्रक्रिया में बाधा डालते हैं। ये सभी कारण पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ाने में जिम्मेदार हैं जिसके कारण सार्वजनिक स्वास्थ को हानि होती है।

संदर्भ

अप्पननगरी, आर. आर. (2017). एंवयरमेंटल पॉल्यूशन कॉजेज एण्ड कॉनसीकुएनसेस: अ स्टडी, नॉर्थ एशियन इंटरनेशनल रिसर्च जर्नल ऑफ सोशल साइंस एण्ड ह्यूमैनिटीज, 3(8), 151-161.

एफएओ, (2017). पेस्टिसाइड रेसीड्यूस इन फूड,जॉइन्ट एफएओ/डबल्यूएचओ मीटिंग ऑन पेस्टिसाइड रेसीड्यूस. एफएओ प्लांट प्रोडक्शन एण्ड प्रोटेक्शन पेपर 232, फूड एण्ड ऐग्रिकल्चर ऑर्गनाइजेशन ऑफ यूनाइटेड नेशन्स वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन, रोम.

एफएओ, (2024). पेस्टिसाइड रेसीड्यूस इन फूड. पुनः प्राप्त किया- https://www.who/

गिल, वाई, एवं सिनफोर्ट, सी. (2005). इमिशन ऑफ पेस्टिसाइड्स टू द एयर ड्यूरिंग स्पराएर ऐप्लकैशन: अ बीबलिओग्राफीक रिव्यू. ऐट्मस्फेरिक एंवयरमेंट, 39,

गेरबर, आर., एट अल. (2016). बायोएक्युमुलेशन ऑफ ह्यूमन हेल्थ रिस्क असेस्मन्ट ऑफ डीडीटी एण्ड अदर ऑर्गनक्लोरीन पेस्टिसाइड्स इन एन ऐपेक्स अक्वैटिक प्रेडेटर फ्रॉम अ प्रिमियर कान्सर्वैशन एरिया, साइंस ऑफ द टोटल एनवायरनमेंट, 50: 522-533. https://doi.org/10.1016/

चोपड़ा, ए. के., शर्मा एम. के. एवं चमोली एस. (2011). बायोएक्युमुलेशन ऑफ ऑर्गनक्लोरीन पेस्टिसाइड्स इन अक्वैटिक सिस्टम- एन ओवरव्यू. एंवयरमेंटल मॉनिटरिंग एण्ड असेसमेन्ट 173(1-4), 905-916.

जीएएचपी, (2019). ग्लोबल, रीजनल, एण्ड कन्ट्री एनलिसिस, पुनः प्राप्त किया-PollutionAnd Health Metrics: Global, RegionalAnd CountryAnalysisA GAHPA GAHP, 31 मार्च, 2024. 03:53 pm.

जीबीडी, (20219). रिस्क फैक्टर्स कोलैबोरेटर्स (2020). ग्लोबल बर्डन ऑफ 87 रिस्क फैक्टर्स इन 204 कंट्रीस एण्ड टेरिटेरिज, 1990-2019: अ सिस्टमैटिक एनलिसिस फॉर द ग्लोबल बर्डन ऑफ डीजीज स्टडी 2019. लैन्सिट, लंदन, इंग्लैंड), 396(10258), 1223-1249, https://doi.org/

जीसी, एस. एवं न्यूपेन, जे. (2019). पेस्टिसाइड्स यूज इन नेपाल एण्ड इट्स इफेक्ट्स ऑन ह्यूमन हेल्थ- अ रिव्यू, आकटा साइअन्टिफिक ऐग्रिकल्चर, 3(11), 114-117.

ज्ञवाली, के. (2018). पेस्टिसाइड यूजेस एण्ड इट्स इफेक्ट्स ऑन पब्लिक हेल्थ एण्ड एंवयरमेंट. जर्नल ऑफ हेल्थ प्रमोशन, 6. 28.

ज्ञवाली, के., आचार्या, पी. एवं पौडेल, डी. (2023). एंवयरमेंटल पॉल्यूशन एण्ड इट्स इफेक्ट्स ऑन ह्यूमन हेल्थ, इन्टरडिसप्लनेरी रिसर्च इन एजुकेशन, 8(1), 84-94. https://doi.org/10.3126/ire.v8i1.56729

डब्ल्यूएचओ, (2016). एंवयरमेंटल हेल्थ, अभिगमन तिथि 28 मार्च, 2024, 08:20 pm. https://www.who/

डब्ल्यूएचओ, (2017 ए). एयर पॉल्यूशन http://www.who.int/topics/air

डब्ल्यूएचओ, (2019ए). हेल्थ कॉन्सेक्वेनसेस ऑफ एयर पॉल्यूशन, पुनः प्राप्त किया- News (who-int), 31 मार्च 2024, 03:46 pm.

डब्ल्यूएचओ, (2019बी). ड्रिंकिंग वॉटर, https://www.who.int/news-room/fact-/detail/drinking-water#:~:text=Contaminated%20

डब्ल्यूएचओ, (2022). ड्रिंकिंग वॉटर Newsroom (who-int)

डब्ल्यूडब्ल्यूएपी, (2017). द यूनाइटेड नेशन्स वर्ल्ड वॉटर डेवलपमेंट रिपोर्ट 2017: वेस्टवॉटर, द अनटैपप्ड रिसोर्स. पेरिस, यूनेस्को.

नाथमसन, जे. ए. (2022). पॉल्यूशन. इन्साइक्लोपीडीया ब्रिटानिक. http;//www-britannica-com/science/

फुलर आर. एवं एट अल., (2022). पॉल्यूशन एण्ड हेल्थ: अ प्रोग्रेस अपडेट, लैन्सिट प्लानेट हेल्थ, https;//doi/

हरिद्वार में गंगा की स्थिति और प्रमुख पर्यटन स्थल एक सर्वेक्षण

डॉ० मोहित कुमार

Department of Environmental Sciences, Raja Mahendra Pratap Singh, State University,Aligarh

डॉ० फरहा अकरम

Department of Environmental Sciences, Raja Mahendra Pratap Singh, State University,Aligarh

भारत की पहचान है गंगा, संस्कृति की शान है गंगा

प्रस्तावना- गंगा महज एक नदी ही नहीं, इसको हम माँ ऐसे ही नहीं मानते यह भारत की पहचान है एवं करोड़ों लोगों की आस्था केंद्र भी है। गंगा भारत के उत्तराखंड राज्य में हिमालय से होते हुए बांग्लादेश की खाड़ी के सुंदरवन तक कुल मिलाकर 2525 किलोमीटर का सफर तय करती है। गंगाजल पवित्रता का प्रतीक है हमारे पवित्र ग्रन्थ और महापुरुषों ने भी गंगा की गुणवत्ता का बखान किया है। भारत ही नहीं, केवल हिन्दू धर्म ही नहीं, अपितु अनेक धर्म और देशों के धर्मात्मा विद्वानों ने भी गंगाजल के अध्यात्मिक गुण और प्रभावों की गाथा गाई है। जिस स्थान से गंगा उद्गम हुआ है, वह उन ऋषि-महात्माओं के तपोभूमि है, जो भारत ही नहीं वरन विश्व की आध्यात्मिक चेतना के सूत्रधार हैं। निस्संदेह उस स्थान की आध्यात्मिक चेतना गंगाजल के साथ प्रवाहित होती है।

महर्षि भगीरथ ने अपने प्रचंड तप से जिस भागीरथी को स्वर्ग से उतरकर धरती पर प्रवाहित होने के लिए राजी किया था, वह तब से लेकर अब तक अनगिनत लोगों का उद्धार करती आ रही है। गंगा एक धारा ही नहीं अपितु सम्पूर्ण भारत की जीवनधारा है, जो लगभग आधे देश को पोषण प्रदान करती है।

हरिद्वार के प्रमुख पर्यटक स्थल-

1. हर की पौड़ी- हर की पौड़ी या हरि की पौड़ी एक प्रमुख और लोकप्रिय घाट है ऐसी धार्मिक मान्यता है, इस घाट पर स्नान करने से व्यक्ति विशेष के पाप धुल जाते है एवं मोक्ष की प्राप्ति होती है। प्रत्येक दिन सूर्यास्त के समय गंगा आरती के भव्य आयोजन के समय लघु भारत के दर्शन यहाँ पर किये जा सकते है। हर की पौड़ी को ब्रह्म्म कुंड के नाम से भी जानते है। इस स्थान से समवंधित अनेक मिथकों में से एक यह भी है कि वैदिक समय के दौरान भगवान विष्णु और शिव यहाँ प्रकट हुए थे एवं उन्होंने यहाँ यज्ञ किया था।

2. मनसा देवी मंदिर- यह मंदिर शहर से लगभग 3 किमी दूर शिवालिक की पहाडियों पर बिल्वा नामक पहाड़ पर स्थिति है। यह मंदिर सिद्धपीठ के रूप में पूज्यनीय है। सम्पूर्ण देश से श्रद्धालु इस मंदिर में रोपवे से कार से मोटरसाइकिल से एवं पैदल डेढ़ से दो किमी की खड़ी चढ़ाई करके मंदिर तक पंहुच सकते है। मनसा देवी मंदिर सुबह 8 बजे खुलता

है और शाम 5 बजे मंदिर के दरवाजे आधिकारिक रूप से बंद हो जाते है। दोपहर में 12 से 2 बजे के बीच में सफाई के लिए मंदिर को बंद किया जाता है। किसी भी प्रकार का शुल्क मंदिर में नहीं लिया जाता है।

मनसा देवी मंदिर हरिद्वार

3. चंडी देवी मंदिर– यह मंदिर हरिद्वार से लगभग 6 किमी की दूरी पर शिवालिक पहाड़ियों के पूर्वी शिखर पर नील पर्वत के ऊपर स्थिति है। यह मंदिर भी मनसा देवी के मंदिर के तरह ही सिद्धपीठ के रूप में पूज्यनीय है। यह मंदिर सुबह पांच बजे के बाद खुलता है और रत के 8 बजे कपाट बंद हो जाते है यहाँ भी रोपवे से या ट्रेकिंग करके मंदिर तक पंहुचा जा सकता है।

4. शांतिकुंज आश्रम– शांतिकुंज आश्रम देहरादून ऋषिकेश हाइवे की किनारे रेलवे स्टेशन से लगभग 6 किमी की दूरी पर स्थिति है जिसके स्थापना वेदमूर्ति तपोनिष्ठ पंडित श्रीराम शर्मा आचार्य जी ने सन 1971 में की थी। यह अखिल विश्व गायत्री परिवार का मुख्यालय भी है। शांतिकुंज आध्यात्मिक रूप से तीर्थस्थल केंद्र है जिसमे आचार्य श्रीराम शर्मा जी एवं उनकी धर्म पत्नी माता भगवती देवी शर्मा का समाधि स्थल है इसके अलावा सन 1926 से निरंतर प्रज्वलित अखण्ड दीप दर्शन भी है।

शांतिकुंज आश्रम हरिद्वार

5. दक्ष प्रजापति मंदिर– हरिद्वार में स्थिति बहुत ही पुराना मंदिर है जो भगवन शंकर को समर्पित है। यह मंदिर स्टेशन से ४ किमी की दुरी पर कनखल में स्थिति है। कनखल को भगवन शिव की ससुरल माना जाता है। भगवन शिव का यह

मंदिर देवी सती के पिता राजा दक्ष के पिता के नाम पर है। प्रत्येक वर्ष सावन के महीने में इस मदिर में श्रद्धालु शिवरात्रि के दिन इस मंदिर में लाखो की संख्या में भगवान शिव के दर्शन के लिए आते है।

6. भारत माता मंदिर- भारत माता का मंदिर हरिद्वार के प्रमुख पर्यटन स्थलों में से एक है जो मदर इंडिया के नाम से प्रसिद्ध है। जिसका निर्माण स्वामी सत्यमित्रानंद गिरी ने कराया था। तत्काल्नीन प्रधानमंत्री स्व० इंदिरा गाँधी ने सन 1983 में इस मंदिर का उद्घाटन किया था। यह मंदिर अपने आप में अनूठा इसलिए भी है कि इसमें आठ मंजिले है और 180 फिट की ऊँचाई पर सतही है। यह पवित्र स्थल विभिन्न देवी देवताओं एवं भारत के स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों को समर्पित है जिसमे प्रथम तल पर ही भारत माता की मूर्ति है।

एक नजर हरिद्वार में लगने वाले प्रमुख मेलों पर-

मेले का नाम	समय	मेले में आने वाले श्रद्धालुओं की संख्या
कुम्भ मेला	प्रत्येक 12 वर्ष बाद	लगभग 8-10 करोड़ लगभग
अर्ध कुम्भ मेला	प्रत्येक 6 साल बाद	लगभग 3-5 करोड़
कांवड़ यात्रा	प्रत्येक वर्ष श्रावण मास का पूरा महीना	लगभग 3 करोड़ से अधिक
महाशिवरात्रि	माघ मास में	लगभग एक करोड़
गुरु पूर्णिमा	प्रत्येक वर्ष आषाढ़ माह में	लगभग एक करोड़
मकरसंक्रांति	प्रत्येक वर्ष 14-15 फरवरी	लगभग एक से डेढ़ करोड़

निष्कर्ष- कुम्भ मेल प्रत्येक 12 वर्ष बाद हरिद्वार में लगता है जिसमे 10 से 12 शाही स्नान होते है जिसमे देश विदेश से अनगिनत श्रद्धालुगण आते हैं एवं पतित पावनी माँ गंगा में स्नान करते है। सन 2010 में कुम्भ मेले का आयोजन किया गया था और अब 2021 में किया जायेगा। इसी प्रकार प्रत्येक 3 वर्ष बाद अर्ध कुम्भ मेले का आयोजन किया जाता है। काँवड़ यात्रा हर साल श्रावण मास में शुरू होती है करोड़ों की संख्या में काँवडिये कावंड लेके आते है एवं हर की पौडी एवं अन्य घाटों से गंगाजल भरकर ले जाते है एवं शिवालयों में चढाते हैं। यह हिन्दुओं की एक प्रमुख आस्था से जुडी हुई यात्रा है। महाशिवरात्रि

का पर्व भगवन शंकर को समर्पित है जो प्रयेक वर्ष के माघ महीने में मनाया जाता है एक करोड़ से अधिक श्रद्धालुगण हरिद्वार आते है एवं माँ गंगा में आस्था की डुबकी लगाते हैं और भगवान शंकर का गंगाजल से जलाअभिषेक करते है। गुरुपूर्णिमा के अवसर पर लाखो श्रद्धालु हरिद्वार गंगास्नान के लिए आते है और इसके बाद अपने अपने गुरुओं के आश्रमों में जाकर आशीर्वाद प्राप्त करते है। मकरसंक्रांति पर्व पर सुबह से ही धर्मनगरी में देश विदेश के श्रद्धालुओं की भीड़ हर की पैडी एवं अन्य घाटों पर दिखाई देने लगती है।

इन्ही सब कारणों को ध्यान में रखते हुए कुछ ऐसे उपाय है जिनको अपनाने से माँ गंगा को प्रदूषित होने से बचाया जा सकता है–

करने योग्य कार्य–

- घर की पूजन सामग्री, बासी फूल एवं अन्य सामग्री की खाद बनाएं।
- पालीथीन के स्तन पर कागज एवं कपडे के थैलों का प्रयोग करें।
- मल–मूत्र त्याग हेतु शौचालयों का प्रयोग करें।
- पर्यावरण अनुकूल मूर्तियों की ही स्थापना करें।
- रसायानिक खाद, कीटनाशक के स्थान पर गोबर, केचुआ खाद एवं गौ मूत्र से बने कीटनाशकों का ही प्रयोग करें।
- गंदे पानी के सोकपिट (शोख्ता गढ्ढा) बनायें।
- अच्छा होगा यदि मिट्टी के स्थान पर आटे के दीपक बनाकर ही दीपदान करें।

न करने योग्य कार्य–

- घर पर कचरा युक्त पूजन सामग्री, बासी फूल गंगा में ण डाले।
- गंगा तट पर पालीथीन का प्रयोग ण करें।
- घाट पर नहाने एवं कपडे धोने के साबुन का प्रयोग न करें।
- गुटखा एवं शेम्पू के पाउच तटों के किनारे ण फेंकें।
- तटों एवं घाटों पर मॉल मूत्र का त्याग ण करें।
- प्लास्टर ऑफ पेरिस की बनी एवं जहरीले रंगों से रंगी मूर्तियों का विसर्जन गंगा में न करें।
- मल मूत्र युक्त पानी गंगा में प्रवाहित करें और न ही किसी को करने दें।
- शहर के गंदे नालों एवं उद्योगों का गन्दा–जहरीला पानी गंगा में प्रवाहित होने से रोकें।
- प्लास्टिक के दोनों में दीपदान न करें।
- मृत पशु, शव, अधजले शव गंगा में प्रवाहित न करें।

सन्दर्भ–

- निर्मल गंगा जन अभियान (हरिद्वार उत्तराखंड)
- पर्यावरण एवं वन मंत्रालय भारत
- प्राचीन भारत में जलविज्ञान (राष्ट्रीय जल विज्ञान संस्थान रूड़की हरिद्वार उत्तराखंड)
- Rig Veda Sanhita (3000 B.C), (i) Bhasya by Maharshi Dayananda Sarswati (Hindi), Published by Dayananda Sansthan, New Delhi-5.
- Samveda (3000 B.C), Bhasya by Swami Dayanand Sarswati, Published by
- The Valmiki Ramayana (800 B.C.), Gita Pess Gorakhpur, in two volumes with hindi translation.
- The Mahabharata (400 B.C. toA.D), translated by Pt. Ramanayaran Datta shastri, Pandeya “Ram” Gita Press, Gorakhpur in six volumes.

संस्कृत साहित्य में पर्यावरणशिक्षा एवं महत्व

Environmental Education and its Importance in Sanskrit Literature

डॉ० जी. उमानरसिम्हा मुर्ति

Assistant Professor, Department of Education, National Sanskrit University, Tirupati

हम सब भारतीय जानते हैं कि हमारा संस्कृतसाहित्य वेदों का, षडदर्शनो का, उपनिषदों का, पुराणों का, सार हे। यह निर्विवाद सत्य है कि समग्र भारतीय शिक्षा और चिन्तन पर्यावरण जागरूकता का संवाहक रहा है। पर्यावरण शब्द परि तथा आङ् उपसर्गद्वय से समन्वित वृज वरणे धातु से ल्युट् प्रत्यय के योग पूर्वक निष्पन्न हुआ है। परितः असमन्तात् अर्थात् चारों ओर परिव्यातप्त आवरण। यत् परितः आवृणोति आच्छादयति तत् पर्यावरणम् आच्छादनम् इत्यर्थः। इस प्रकार मानव को चारों ओर से घेरने वाले तत्त्व, जो उसे प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष अनेक प्रकार से प्रभावित करता है, वह पर्यावरण कहलाता है।

पर्यावरण के अन्तर्गत वायु, जल, भूमि, तथा इन आधारभूत तत्त्वों के बीच होने वाली परिस्थितिक क्रियायें तथा मानव, जीव–जन्तु, वृक्ष–पादप, पशु–पक्षी, सूक्ष्मजीव, आदि तत्त्व आते हैं। ईश्वर ने प्रकृति की रचना की और उसका उद्देश्य प्रकृति के लिए मानव की जरूरतों को जरूरतों को पूरा करना रहा होगा और ईश्वर ने सोचा होगा कि मनुष्य अपने उपकारक की देखभाल और प्रेम करेगा। प्रकृति ने ईश्वर की इच्छा का पालन किया लेकिन मनुष्य, उसकी सबसे बुद्धिमान रचना से उसकी पूरी तरह से इस हद तक अवज्ञा की कि आज पूरा ब्रह्माण्ड विलुप्त होने के कगार पर है।

प्राकृतिक संतुलन का बिगडना ही प्रदूषण कहलाता है। पर्यावरण में शुद्ध वायु, शुद्ध जल, शुद्ध खाद्य पदार्थ और शुद्ध वातावरण का न मिलना प्रदूषण का ही एक कारण। वर्तमान समय में प्रदूषण काफी तेजी से फैल रहा है। मनुष्य जितना उन्नति के ओर बढ रहा है, उतना ही प्रदूषण हो रहा है। सबसे ज्यादा प्रदूषण कारखानों से होता है। मुख्यरूप से चार प्रदूषण होते हैं। जैसे की– वायु, शब्द, जल, मृदा प्रदूषण। प्रदूषण के वजह से आस्थमा, पागलपन, कलेरा, चर्मरोग, आदि व्याधियाँ होते हैं। प्रदूषण को रोकने के लिए प्रतिवर्ष 2 दिसम्बर को प्रदूषण नियंत्रण दिवस के रूप में पालन किया जाता है। आज मनुष्य अपना जीवन भौतिक सुखों से सुसम्पन्न करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों पूरी तरह उपयोग करते हुए उन को प्रदूषिकत एवं नष्ट करने में लगा है। जैसे–

भूमि और अन्न प्रदूषण

आज पूरे विश्व भर मे जन्मदिन आदि उत्सवों पर केक आदि काट कर खाते कम मुख पर लगातें है और फेंकते ज्यादा है। वैसे तो हमारे संस्कृत मे अन्न को परब्रह्मस्वरूप कहा गया है। आज अन्न की निन्दा, बर्बादी, फेकना आदि बहुत होती है। और खचरा आदि जहाँ तहाँ फेंक कर भूमि को दूषित करतें हैं। ये भी हमारे पर्यवरण को दूषित करने में एक प्रकार से कारक है। इस पर हमें विचार करना चाहिए।

शब्द प्रदूषण

आज पूरे विश्व में उत्सव, एवं किसी की भी मृत्यु होने पर क्रेकरस् धमाके फोडते हुए मनाते है। इस प्रकार भी प्रकृति की शान्ति भग्न होती है। पक्षि उन शब्दों से डर कर कहिं दूर भाग जाते हैं। इस पर भी हमे विचार करना चाहिए।

जल प्रदूषण

आज पूरे विश्व में ऐसे बहुत सारे त्यौहार हैं जिस में जल को एक दूसरे पर फेंकते हैं। इस प्रकार भी जल की निन्दा, जलप्रदूषण भी हो रही है। ऐसे हि किसी भी कार्यक्रम, उत्सवादि में पानी कि बोटल को रखते हे वहाँ कुछ लोग पानी पूरा पीते हैं कुछ लोग आधा पीकर वहीं डाल देते हैं इस प्रकार पानी की बर्बादि और प्लास्टिक प्रदूषण भी होती है। इसके बदले में वाटरकेन और पेपर ग्लास का इस्तेमाल करके हम प्रकृति को प्रदूषित एवं नष्ट होने से बचा सकते हैं। इस पर हमें विचारकरना चाहिए।

पञ्चतन्त्रम्

हजारों वर्ष पहले संस्कृत साहित्य में रचनाकारों ने पञ्चमहाभूतों के प्रति दैवीयभावना प्रकट किया है, पर्यावरण की रक्षा पर भी अत्यधिक बल दिया है। जैसा कि विष्णुशर्मा जी ने पञ्चतन्त्र ग्रन्थ की मङ्गलाचरण श्लोक में लिखा है-

ब्रह्मा रुद्रः कुमारो हरिवरुणयमा वह्निरिन्द्रः
कुबेरश्चन्द्रादित्यौ सरस्वत्युदधियुग-नगा वायुरुर्वी भुजङ्गाः।
सिद्धा नद्योऽश्विनौ श्रीर्दितिरदितिसुता मातारश्चण्डिकाद्या,
वेदास्तीर्थानि यज्ञा गण-वसु मुनयः पान्तु नित्यं, ग्रहाश्च।।
मनवे वाचस्पतये शुक्राय, पराशराय ससुताय।
चाणक्याय च विदुषे नमोऽस्तु नयशास्त्रकर्तृभ्यः।।
"विषवक्षोऽपि संवर्द्धय स्वं न च्छेद्यः"

पञ्चतन्त्र में विष्णुशर्मा ने अनेक कथाओं में कहा कि पशु-पक्षि, वृक्ष, नदियाँ, भूमि ये सब हमे फल, छाया, लकडियां, पुष्प, अन्न, वायु आदि देते है। इसलिए इन सब की रक्षा की बात किया है। और सामान्य वृक्ष की दूर बात मनुष्य को विष वृक्ष को भी काटना नहीं चाहिए। पशु-पक्षि आदियों के द्वारा मनुष्य को उत्तम जीवन जीने के लिए नैतिक-आध्यात्मिक मूल्यों को एवं सामाजिक तत्त्वों कों सिखाया है।

जैसे-

यथा गौर्दुह्यते काले, पाल्यते च, तथा प्रजाः।
सिच्यते, चीयते चौव लता पुष्प-फलप्रदा।
यथा बीजाङ्कुरः सूक्ष्मः प्रयत्नेनाऽभिरक्षितः।
फलप्रदो भवेत्काले, तद्वल्लोकः सुरक्षितः।।
छायासुप्तमृगः,शकुन्तनिवहैर्विष्वग्विलुप्तच्छदः,
कीटैरावृतकोटरः, कपिकुलैः,स्कन्धे कृतप्रश्रयः।
विश्रब्धं मधुपैर्निपीतकुसुमः, श्लाघ्यः स एव द्रुमः,
सर्वाऽङ्गैर्बहुसत्त्वसङ्गसुखदो, भूभारभूतोऽपरः।।

मित्रसम्प्राप्तिः तन्त्रे नीति कथा कथन सन्दर्भ में वृक्षों का महत्त्व को उपर्युक्त श्लोक के द्वारा कहते है। प्राचीन काल में महिलारोप्य नाम एक नगर था। उस नगर के पास हीं एक विशाल, ऊञ्चा बड का वृक्ष था। जिस वृक्ष के फलों कों खा कर नाना प्रकार के पक्षी उस पर निवास करते थे। उस वृक्ष के खोडरों में नाना प्रकार के कीट रहते थे। उस वटवृक्ष की छाया का नाना देश देशान्तरों से आने वाले पथिक-गण उपभोग किया करते थे। और उस वृक्ष की छाया में हरिण आदि वन्य पशु सुख की नीन्द सोते है। इस दृष्टान्त से प्राचीन काल में लोग वृक्षों का कितना महत्त्व देते थे, हमे पता चलता है। जिस प्रकार वृक्ष अपना पूरा जीवन दूसरों के लिए कैसे उपयोग में आते हैं, वैसे ही मनुष्य को भी पूरा जीवन परोपकार में लगाना चाहिए।

गवार्थे, ब्राह्मणार्थे च, स्त्री-वित्तहरणे तथा।
प्राणांस्त्यजति यो युद्धे तस्य लोकाःसनाताना:।।

जैसा कहा भी है- गौ की रक्षा के लिए, मनुष्य की रक्षा के लिए, स्त्री की रक्षा के लिए, धन सम्पत्ति की रक्षा के लिए जो मनुष्य अपना प्राण त्याग देता है, उसको परलोक में परमपद को प्राप्त होगा। प्राचीन काल में लोग प्राणियों (पशु-पक्षि, मनुष्य, आदि)की रक्ष से मोक्ष प्राप्ति मानते थे। प्राचीन लोगों की भावना इस श्लोक से पता चलता हैं। आधुनिक काल में भी प्रकृति की, जीवों की रक्षा करना चाहिए। पञ्च महाभूतो (भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश)के प्रति दैवीय भावाना, भक्ति भावाना रखना चाहिए। क्यों कि इन (भूमि, जल, अग्नि, वायु, आकाश) के विना जीवन असंभव है।

अभिज्ञानशाकुन्तलम्

संस्कृत साहित्य में रचनाकारों ने पर्यावरण की वृक्ष आदि के महत्त्व को वर्णन किया है। जैसा कि कालिदास जी ने लिखा है-

स्वसुख निरभिलाषः खेद्यसे लोकहेतोः
प्रतिदिनमथवा ते वृत्तिरेवंविवधैव।
अनुभवति हि मूर्ध्ना पादस्तीवृमुष्णं,
शमयति परितापं छायया संश्रितानाम्।

इस श्लोक में राजा दुष्यन्त के माध्यम से कालिदास प्रकृति के विषय में कहना चाहते हैं कि पेड-पौधे हमारे लिए लाभकारी ही होते हैं वह कभी हमें हानि नहीं पहुँचाते उनमें त्याग व करूणा की भावना होती है किन्तु आज मानव समझ ही नहीं पा रहा है कि वन या पेड-पौधे हमारे लिए कितने लाभकारी सिद्ध हो सकते हैं। आज वनों को नष्ट करने से पर्यावरण-सन्तुलन बिगड रहा है।

सुभाषितरत्नभाण्डागार
परोपकाराय फलन्ति वृक्षाः
परोपकाराय वहन्ति नद्यः।
परोपकाराय दुहन्ति गावः
परोपकारार्थमिदं शरीरम्
छायामन्यस्य कुर्वन्ति तिष्ठन्ति स्वयमातपे।
फलान्यपि परार्थाय वृक्षाः सत्पुरुषा इव।

वृक्ष दूसरों के लिए लकडियां,फूल-फल, छाया, शुद्ध वायु आदि देते है। वैसे हि नदियाँ दूसरों के लिए जल दे रहीं है। गाँय दूसरों के लिए दूध दे रही है। परन्तु मनुष्य प्रकृति से अन्न, जल, वायु, मिट्टि, कपडा आदि शुद्ध लेते हैं और अशुद्ध करके छोडते हैं। कवि कहते हैं कि मनुष्य को भी अपना शरीर दूसरों के उपकार लिए होना चाहिए। मनुष्य को भी प्रकृति की पूर्ण रूप से रक्षा करनी चाहिए। क्योंकि प्रकृति के विना मानव जीवन असंभव है।

निष्कर्ष

वैदिक संस्कृत से संस्कृत साहित्य तक कवियों नें अपनी रचनाओं में प्राकृतिक वर्णन करने का उद्देश्य यही रहा है, कि वर्तमान में मानव उनसे प्रेरित होकर अपने जीवन की सुरक्षा कर सके। संस्कृत साहित्य में उल्लिखित प्रकृति के महत्व को सबसे पहले घर परिवार जन आज हमारे बच्चों कों पर्यावरण के महत्त्व एवं स्वच्छपर्यावरण की आवश्यकता कों प्रत्येक दिन बताएंगे तो प्रत्येक बच्चे मे प्रकृति माता के प्रति भक्ति उत्पन्ना होगी। अवश्य ही स्वच्छपर्यावरण विश्व का निर्माण कर पाएंगे। पाठ्यक्रम में कथा, घटना, पाठ आदि के माध्यम से पढायेंगे तो अवश्य ही बच्चा बच्चा स्वच्छपर्यावरण को बनाए रखनें में साथ देगा।

1. पर्यवरण बचाने पर प्राथमिकता देनी चाहिए- प्राथमिकशक्षा से ही यदि बच्चों को पर्यावरण की महत्त्व को कथा, घटना आदि के रूप में पढाने से अवश्य स्वच्छपर्यावरण से सम्पन्न विश्व को निर्माण कर सकते है।
2. प्लास्टिक के उपयोग को त्याग कर उसके स्थान पर जूट, कागज या कपडे का उपयोग करने से स्वच्छपर्यावरण को हम बचासकते।
3. हमे पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा जैसे ऊर्जा के नवीकरणीय स्त्रोतों के उपयोग को बढावा देने की आवश्यकता है।
4. पर्यावरण संरक्षण के लिए जैविक कीटनाशक और उर्वरक बहुत सहायक है।
5. हमे अपनी मातृ प्रकृति को प्रदूषण विषाक्तता और प्रदूषण से बचाना चाहिए। जहरीले वातावरण में रहना हमारे स्वास्थ्य को नुकसान पहुँचा सकता है।
6. "हमारी पृथ्वी की रक्षा करे, हमारे भविष्य की रक्षा करे" यह नारा हमें बताता है कि आज अपने ग्रह की देखभाल करके हम अपने और अपने बच्चों के लिए बेहतर भविष्य सुनिश्चित कर रहे हैं।
7. पर्यावरण का व्यक्ति के शारीरिक मानसिक और सामाजिक कल्याण पर सीधा प्रभाव पडता है। पर्यावरणीय कारकों में सामाजिक और आर्थिक, आवास, जल अपूर्ति आदि पर्यावरण की सुरक्षा पर ध्यान देना चाहिए।
8. ग्लोबल वार्मिंग के समस्या को रोकने के लिए वनो और झीलों की सुरक्षा करना चाहिए

शिक्षण-अधिगम कों प्रभावित करने वाले वातावरण से सम्बन्धित कारकों का अध्ययन

विनीत कुमार आर्य

शोधार्थी- बी.एड./एम.एड. विभाग, शिक्षा एवं सहबद्ध विज्ञान संकाय, एम.जे.पी.आर.यू., बरेली

डॉ० रामबाबू सिंह

सहायक आचार्य- बी.एड./एम.एड. विभाग, शिक्षा एवं सहबद्ध विज्ञान संकाय, एम.जे.पी.आर.यू., बरेली

सारांश-

बालक जब प्रथम बार विद्यालय में प्रवेश करता है तो उस पर घर का वातावरण छाया रहता है। विद्यालय प्रांगण में आने पर उसके मन में अनेक जिज्ञासाएं उठती हैं जिनको वह शान्त करना चाहता है। उसे नवीन वातावरण में समायोजन करना होता है। ऐसी स्थिति में अधिगम क्रिया अनेक कारकों से प्रभावित होती है। बालक किसी भी क्रिया को सीखने का केन्द्र बिन्दु होता है। शिक्षा का उद्देश्य बालक का सर्वांगीण विकास करना है। इस दृष्टि से बालकों की रुचि, योग्यता, क्षमता, व्यक्तिगत भेद, बुद्धि आदि के आधार पर सम्पन्न की गई क्रिया प्रभावशाली सिद्ध हो सकती है बालक शिक्षण-अधिगम प्रक्रिया का आधार है इसलिए उसके अभाव में अधिगम की कल्पना भी नहीं की जा सकती है। बालकों को नया ज्ञान देने से पूर्व यह नितान्त आवश्यक है कि उनमें सीखने के प्रति जिज्ञासा उत्पन्न की जाये क्योंकि ऐसा होने पर विद्यार्थी प्रतिकूल परिस्थितियों में भी किसी बात को सीखने में सफल हो जाता है।

मुख्य शब्द- शिक्षण-अधिगम, प्रभाव, वातावरण, सम्बन्धित, कारक।

प्रस्तावना-

सीखने से पहले बालक का शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ रहना भी नितान्त आवश्यक है, क्योंकि बालक के ध्यान, रुचि व एकाग्रता पर इसका प्रभाव पड़ता है। किसी भी प्रकार की मानसिक विकृति, शारीरिक रुग्णता तथा मानसिक तनाव का प्रत्यक्ष प्रभाव बालकों के अधिगम पर प्रतिकूल पड़ता है। शारीरिक एवं मानसिक रूप से अस्वस्थ बालक शीघ्र ही थक जाते हैं। अधिगम की प्रक्रिया को बालक की शारीरिक एवं मानसिक परिपक्वता अधिक प्रभावी बनाती है। छोटी कक्षाओं में बालक की माँस-पेशियों को मजबूत बनाने की ओर ध्यान दिया जाता है ताकि वे कलम, किताब आदि को पकड़ना सीख जायें। उन्हें व्याकरण एवं पहाड़े आदि का ज्ञान भी इसी दृष्टि से बाद में कराया जाता है। बहुत-सी चीजें बालक तभी सीख पाता है जब उसमें परिपक्वता आ जाती है चाहे हम उसे कितना भी प्रशिक्षण क्यों न दें। सीखने की प्रक्रिया में अभिप्रेरणा का महत्त्वपूर्ण योगदान है। यदि बालक को किसी नवीनतम ज्ञान अथवा कार्य को सीखने के लिए प्रेरित नहीं किया जाता है तो वह उस क्रिया में रुचि नहीं लेगा। अभिप्रेरणा से सीखने की इच्छा प्रबल हो जाती है। अभिप्रेरणा उत्पन्न करने के लिए यह आवश्यक है कि बालक को उसका लक्ष्य स्पष्ट कर दिया जाये। यदि किसी विषय के प्रति छात्र की नकारात्मक अभिवृत्ति है तो शिक्षक चाहे जितना परिश्रम करे छात्र के अधिगम में उन्नति होने की सम्भावना नहीं होती

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व-

बालक के प्रभावी अधिगम की दृष्टि से यह अत्यन्त आवश्यक है कि उसे एक ऐसी समुचित सम्पूर्ण परिस्थिति प्रदान की जाये जिसमें सीखने के सभी तत्त्व तथा दशायें विद्यमान हों। इसलिए विद्यालय का सम्पूर्ण व्यवहार परिवेश इस प्रकार से निर्मित किया जाता है जो विद्यार्थी को पूर्ण सन्तुष्टि प्रदान करे तथा उसकी शैक्षिक उपलब्धि स्तर को ऊंचा उठाने के साथ-साथ उसके मनोबल को भी बनाये रखे। विद्यालय की सम्पूर्ण परिस्थिति कृत्रिम न लगकर स्वाभाविक होनी चाहिये तथा उसका बालक के सामान्य जीवन से भी घनिष्ठ सम्बन्ध होना चाहिये। सम्पूर्ण परिस्थिति का संतोषप्रद होना अधिगम की अनिवार्य शर्त है। तीव्र

बुद्धि वाला छात्र किसी भी ज्ञान को शीघ्रता एवं सरलता से सीख लेता है तथा मन्द बुद्धि वाले छात्र को सामान्य बुद्धि वाले छात्र के साथ भी सीखने में बाधा रहती है।

अध्ययन के उद्देश्य-

- बदलते पर्यावरणीय परिवेश में शिक्षण-अधिगम का अध्ययन करना।
- माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण-अधिगम का अध्ययन करना।
- बदलते पर्यावरणीय परिवेश में शिक्षक की शिक्षण पद्धतियों का अध्ययन करना।
- पर्यावरणीय बदलाव का शिक्षा के विकास के संदर्भ में अध्ययन करना।

शोध विधि व प्रक्रिया-

शोधार्थी द्वारा शि शिक्षण-अधिगम से सम्बन्धित विभिन्न आयोगों, शिक्षा नीतियों, रिपोर्टो का अध्ययन किया गया। साथ ही शिक्षण-अधिगम के विषय में विभिन्न विशेषज्ञों से विचार-विमर्श तथा सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किया गया। शोधार्थी ने इस अध्ययन की आवश्यकता महसूस की कि क्या शिक्षण-अधिगम कों प्रभावित करने वाले कारक वातावरण से सम्बंधित है।

अधिगम को प्रभावित करने वाले वातावरण से सम्बन्धित कुछ मुख्य कारक इस प्रकार है-

(1) वंशानुक्रम।
(2) सामाजिक वंशक्रम का ज्ञान।
(3) वातावरण का प्रभाव।
(4) शिक्षा के अनौपचारिक साधन।
(5) व्यक्तित्व का विकास।
(6) परिवार का वातावरण।
(7) कक्षा का भौतिक वातावरण।
(8) मनोवैज्ञानिक वातावरण।
(9) सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण।

(1) वंशानुक्रम- वंशानुक्रम का बालक के सीखने पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है। यदि वंशक्रम दोष रहित है तो उन बालकों अथवा व्यक्तियों में भी उत्तम गुणों का विकास होता है। वस्तुतः बालक की अस्सी प्रतिशत योग्यताएं एवं क्षमतायें उसके वंशानुक्रम की ही देन है। इसलिए रॉस कहते हैं कि बालक जो कुछ भी है और जिस रूप में विकसित होता है, वह वंशक्रम की ही देन है। व्यक्ति का जीवन सुखमय या दुःखमय होना भी उसके वंशक्रम से प्राप्त गुणों पर निर्भर करता है।

(2) सामाजिक वंशक्रम का ज्ञान- वंशानुक्रम का महत्त्व इस दृष्टि से और भी अधिक बढ़ जाता है कि बालक को अपने पूर्वजों से जहाँ एक और जैविक वंशक्रम की जानकारी प्राप्त होती है वहीं दूसरी ओर अपने पूर्वजों के सामाजिक वंशक्रम का भी ज्ञान होता है। इस प्रकार बालक को अपने पूर्वजों के आदर्शों पर चलने की प्रेरणा मिलती है। वह उनके जीवन से बहुत कुछ सीखना चाहता है तथा उनके चरित्र को अपना आदर्श मानकर तदनुसार कार्य करके महान बनने का प्रयास करता है।

(3) वातावरण का प्रभाव- वंशानुक्रम से बालक केवल अपने पूर्वजों के गुणों को ही प्राप्त करता है लेकिन उन गुणों का समुचित विकास वातावरण द्वारा ही होता है। यदि वातावरण उचित नहीं है तो उसके गुणों का विकास भी ठीक दिशा में नहीं हो पायेगा। वातावरण का उचित होना वंशानुक्रम के विकास के लिये एक अनिवार्य शर्त है। अतः व्यक्ति वंशानुक्रम की आधारभूत मान्यताओं को विकसित करने के लिये वातावरण को उपयोगी बनाने में विश्वास करता है। कहा भी गया है कि व्यक्तित्व वंशानुक्रम तथा वातावरण का गुणनफल होता है।

(4) शिक्षा के अनौपचारिक साधन– बालक शिक्षा दो प्रकार के साधनों द्वारा प्राप्त करता है, औपचारिक तथा अनौपचारिक। इन दोनों ही प्रकार के साधनों का बालकों के अधिगम पर गहन प्रभाव पड़ता है। शिक्षा के औपचारिक साधनों के अन्तर्गत नियमित रूप से शिक्षा प्रदान करने वाली संस्थायें आती हैं जैसे–विद्यालय। इन संस्थाओं के निर्धारित व निश्चित नियम होते हैं तथा प्रदान की जाने वाली शिक्षा की पद्धति भी पूर्वनिश्चित होती है। अनौपचारिक साधनों के अन्तर्गत रेडियो, समाचार पत्र, चलचित्र, पुस्तकालय, वाचनालय तथा अन्य कार्यक्रम आते हैं जिनका शिक्षा प्राप्ति में अपना अलग ही प्रभाव होता है।

(5) व्यक्तित्व का विकास– वंशानुक्रम तथा वातावरण के ज्ञान से व्यक्ति मानवीय मूल्यों के विकास में रुचि लेने लगता है। वंशानुक्रम के प्रति आस्था व्यक्ति के सांवेगिक तथा सामाजिक विकास में विशेष योग देती है तथा सामाजिक व्यक्तित्व समाज के लिये उपयोगी सिद्ध होता है। ऐसी स्थिति में यदि अभिभावकों में अपने वंशक्रम के प्रति आस्था एवं मोह है तो वे अपने शिशुओं के व्यक्तित्व को भी उसी के अनुरूप ढालने का प्रयास करेंगे। इस प्रकार वंशानुक्रम तथा वातावरण व्यक्तित्व के विकास के लिये मनोवैज्ञानिक आधार प्रस्तुत करते हैं।

(6) परिवार का वातावरण– बालक की अधिगम प्रक्रिया पर उसके परिवार के वातावरण का काफी प्रभाव पड़ता है। यदि परिवार में लड़ाई–झगड़े होते रहते हैं तो ऐसे वातावरण का बालकों के मस्तिष्क पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। वे उदास तथा खिन्न रहने लगते हैं, घर का माहौल उन्हें बोझिल लगता है, काटने को दौड़ता है तथा वे अपने अध्ययन के लिये घर से दूर किसी नदी या बाग की शरण लेते हैं। घर का अच्छा वातावरण उन्हें निरन्तर आगे बढ़ने के लिये प्रोत्साहन देता रहता है।

(7) कक्षा का भौतिक वातावरण– कक्षा का भौतिक वातावरण छात्रों के अधिगम को प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है। भौतिक वातावरण के अन्तर्गत प्रकाश, वायु, कोलाहल आदि आते हैं। इस प्रकार यदि कक्षा में छात्रों के बैठने की समुचित व्यवस्था नहीं है, कमरों में अंधेरा है, रोशनी तथा हवा का कोई प्रबन्ध नहीं है, फर्नीचर टूटा–फूटा है तथा कक्षा के बाहर कोलाहल मचा रहता है तो ऐसी स्थिति में छात्रों का मन अधिगम के ऊचाट हो जाता है, वे थोड़ी देर में थकान का अनुभव करने लगते हैं तथा इन सब बातों से उसके सीखने में बाधा उत्पन्न होती है।

(8) मनोवैज्ञानिक वातावरण– कक्षा का मनोवैज्ञानिक वातावरण भी छात्रों के सीखने की प्रक्रिया को काफी हद तक प्रभावित करता है। यदि छात्रों में एक–दूसरे के प्रति सहयोग और सहानुभूति की भावना है, उनमें आपस में मधुर सम्बन्ध हैं तो सीखने की प्रक्रिया सुचारु रूप से आगे बढ़ती रहती है। इसके विपरीत यदि कक्षा का वातावरण बोझिल, तनावयुक्त व आतंकित बना रहता है तो ऐसे माहौल में छात्र घुटन महसूस करता है और शीघ्र ही उसमें कक्षा छोड़ने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है जो आगे चलकर उसे भगोड़ा छात्र बना देती है।

(9) सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण– छात्रों के अधिगम पर उसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है। सामान्यत: सांस्कृतिक वातावरण का आशय व्यक्ति द्वारा निर्मित या प्रभावित उन समस्त नियमों, विचारों, विश्वासों एवं भौतिक वस्तुओं की पूर्णता से है जो जीवन को चारों ओर से घेरे रहते हैं। सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत समाज में प्रचलित रीति–रिवाज, मान्यतायें, आदर्श, मूल्य एवं स्वयं व्यक्ति की समाज में स्थिति आती है जो उसके अधिगम को निश्चित तौर पर प्रभावित करती है। इसलिए व्यक्ति हर सामाजिक परिस्थिति में अनुकूलन बनाये रखता है।

निष्कर्ष–

पर्यावरण और शिक्षा दोनों में विकास को महत्त्व दिया जाता है। पर्यावरण में जहाँ वातावरण की गुणवत्ता को प्राथमिकता दी जाती है वहीं शिक्षा में व्यक्ति की गुणवत्ता को प्राथमिकता दी जाती है। एक तरफ शिक्षा को विकास की प्रक्रिया कहते हैं तो दूसरी तरफ पर्यावरण अनुष्य तथा अन्य प्राणियों की अभिवृत्ति तथा विकास को प्रभावित करता है। क्योंकि इसमें आन्तरिक और बाह्य दोनों परिस्थितियाँ सम्मिलित होती हैं। प्रत्येक प्राणो किसी–न–किसी पर्यावरण से सम्बन्धित होता है। इसमें मनुष्य का पर्यावरण सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक तथा भौतिक होता है। इसलिए शिक्षा द्वारा इनमें गुणवत्ता लाने के लिए सुधार एवं परिवर्तन किया जाता है। इससे मनुष्य तथा बालक में वांछित परितर्वन लाया जा सकता है। इसलिए कहा जा सकता है कि मनुष्य तथा बालकों के व्यवहार परिवर्तन में पर्यावरण का विशेष महत्त्व होता है। मनोवैज्ञानिकों ने भी इस बात का

समर्थन किया है। मनोवैज्ञानिक वाटसन ने कहा भी है कि पर्यावरण द्वारा बालक को जैसा चाहे वैसा बना सकते हैं, वंशानुक्रम में इसका कोई महत्त्व नहीं है।

संदर्भग्रंथ सूची-

https://graphy.com/blog/all-the-important-factors-affecting-teaching/
https://testbook.com/question-answer/hn/the-most-powerful-factor-affecting
https://www.google.com/search?newwindow
https://www.mpboardonline.com
https://bedhindiarticles.blogspot.com
https://www.krmangalamgurgaon.com/blogs/8-essential-factors-affecting-learning-process/

हिन्दी साहित्य में पर्यावरण चिन्तन के विविध रूप

डॉ० निशा वालिया

एसोसिएट प्रोफेसर हिंदी, डी.ए.वी (पी.जी) कॉलेज देहरादून उत्तराखंड

सारांश:

भारतीय प्रकृति अनन्तरूपा हैं वह समन्वयवादिनी है, क्योंकि प्रकृति स्वीकृति देती है। भावना और एक धारणा की सीमा उसके लिए बन्धन है, क्योंकि वह असख्य नदियों स्रोतों को अपने में मुक्ति देने वाला समुद्र है। किसी भूमिखण्ड पर किस मानव-समूह का सहजात अधिकार है, इसे जानने का पूर्णतम प्रमाण उसका साहित्य ही है। विशेषत: घरती से संस्कारगत आत्मीयता हुए बिना कवि उसके वन, नदी, पर्वत आदि के सम्बन्ध में गाता नहीं। यह संसार भर की प्रकृति के सौन्दर्य पर मुग्ध हो सकता है, उसे छन्द का परिधान दे सकता है, किन्तु संस्कार गत साहचर्य के अभाव में उसे अपने व्यक्तित्व का अंग नहीं बना पाता। समस्त भारतीय भाषाओं का साहित्य इस बात का साक्षी है कि उसमें आदिकाल से प्रकृति की अर्चना, आराधना और पूजा के भाव रहे हैं। भारतीय भाषाओं की सभी विधाऐं प्राकृतिक पर्यावरण के मध्य एक अमिट छाप छोडती है। हमारी सभी भाषाओं की जड़ों को जिन सूत्रों ने सुधासिंचन किया है वे प्रकृति से ही प्राप्त होते हैं। सभी भारतीय भाषायें हमारे पर्यावरण को शुद्ध रखने की प्रेरणा देती हैं। पर्यावरण की सुरक्षा की पहल करने में भारतीय भाषाओं के साहित्यकार अपनी लेखनी से पर्यावरण उत्प्रेरणा प्रदान करने में सफल हुए हैं।

कुंजी शब्द: साहित्य, प्रकृति, पर्यावरण, चिन्तन

प्रकृति ने जो जीव उत्पन्न किये हैं, वह सृष्टि की एक महत्वपूर्ण कड़ी है, यदि चेन से एक कड़ी को निकाल दिया जाए, तो सम्पूर्ण चेन ही व्यर्थ है उसी प्रकार पर्यावरण की चेन का प्रत्येक प्राणी, वनस्पति इत्यादि अपना एक विशेष स्थान रखते हुए, इसका अभिन्न अंग हैं। प्रकृति हमारी मां के समान पोषक एवं रक्षक है। वह हमारा लालन पालन संतान के समान करती है। फलयुक्त पेड़ हमें नम्रता का संदेश देते हुए सदैव ही विन्रम रहने का उपदेश देते हैं- "भवति नम्रस्तैरव: फलगमय"। वैदिक संस्कृति में प्रकृति को अपने रक्षक के रूप में पूजा जाता था किन्तु वर्तमान में हम अपने रक्षक के ही भक्षक बन चुके हैं। यज्ञ एक वैदिक विधि सिद्ध हो चुकी है। प्राचीन काल में रोगों के उपचार के लिए यज्ञ किया जाता था जिसमें औषधीय समीधाओं का प्रयोग किया जाता था तथा उससे उठने वाला धुंआ वायु का शुद्धीकरण कर वातावरण को स्वच्छ व स्वस्थ बनाता था। किन्तु वर्तमान से अपने सुख हेतु मनुष्य प्रकृति के साथ अन्याय कर रहा है अत: संस्कृति विरूद्ध कार्यो में अधिक संलिप्तता के कारण पर्यावरण एवं संस्कृति में दूरी उत्पन्न हो गयी है। अत: हमारा यह कर्तव्य हो जाता है कि हम अपनी संस्कृति की दिव्य वाणी को समझें तभी हमारे राज्य, हमारे देश तथा हमारी पृथ्वी का पर्यावरण भी दिव्य बन सकता है। वेद कहते हैं- हम सब मिलकर रहें, एक समान सोचें एक दूसरे का सुख-दुख बांटे व वही काम करें जो "सर्वजन हिताय" हो, यह सब तभी सम्भव है जब हम सभी ईश्वरीय वाणी अर्थात् हमारी संस्कृति के अनुसार आचरण करें।

सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय मानव मनीषा की सर्वोत्कृष्ट उपलब्धियों का अमूल्य अंश है। प्रकृति के साथ सह अस्तित्व की भावना से युक्त जीवन व्यतीत करने वाले वैदिक ऋषियों ने वसुन्धरा, ऊषा, सूर्य, वायु, जल एवं अन्य प्राकृतिक शक्तियों की भावपूर्ण अभ्यर्थना की है।

अस्त्युत्तर ग्यां दिशि देवतात्मा
हिमालयो नाम नगाधिराज:
पूर्वापरी तोयनिधी वगाह्य स्थित:
पृथिव्या इव मानदण्ड:।।

हमारे राष्ट्र के उन्नत शुभ मस्तक हिमालय पर जब संघर्ष की नील लोहित आग्नेय घटाएँ छा गई, तब देश के चेतना केन्द्र ने आसन्न संकट की तीव्रानुभूति देश के कोने-कोने में पहुँचा दी। धरती की आत्मा के शिल्पी होने के कारण साहित्यकारों और चिन्तकों पर विशेष दायित्व आ जाना स्वाभाविक ही था। इतिहास साक्षी है कि मानव समूह अपनी धरती से जिस सीमा

तक तादात्म्य कर सका है, वह उसी सीमा तक अपनी धरती पर अपराजेय रहा है। मानव ने चिरकाल से ही प्राकृतिक संसाधनों की अर्चना की है। वेदों में भी कहा गया है–

यो देवोद्रग्नौ योदुप्सु यो विश्व भवनमाविवेश:
यो ओषधिश्च यो वनस्पति तस्मै देवाय नमोनम:।।

अर्थात् जो अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी एवं वायु से आच्छादित है तथा जो औषधियों एवं वनस्पति में विद्यमान है, उस (पर्यावरण) देव को नमस्कार करते हैं। काल–समुद्र की असंख्य तरंग–भंगिमाओं को पार करता और सहस्रों झंझाओं के आधात को झेलता हुआ, जो साहित्य हम तक पहुँच सका है, वह हमारे अपराजेय पूर्वजों की संघर्ष–कथा ही नहीं, उनकी उग्र–प्रशान्त, कठिन–कोमल प्रकृति का उद्गीथ भी है। मेघ, आकाश, समुद्र नदी, उषा आदि के जो छन्दमय चित्र उनकी तूलिका ने ऑके हैं, उनके इन्द्रधनुषी रंग अम्लान और उज्ज्वल रेखाएँ अमिट है। इतना ही नहीं हर रेखा, हर रंग में भारत में धरती की छवि उसी प्रकार पहचानी जाती है। जिस प्रकार अनेक दर्पण खण्डों में प्राकृतिक परिवेश की विभिन्न रंग–रूप रसमय सजीवता ने एक ओर वैदिक वाडमय को स्थूल से सूक्ष्मतर होने वाला अक्षय सौन्दर्य–बोध दिया और दूसरी ओर मानव जिज्ञासा को प्रत्यक्ष समाधान से गुढतम सरणियों तक अनन्त विस्तार दे डाला।

प्रारम्भ से ही हिन्दी साहित्य हमेशा पवित्रता का संवाहक रहा है जिससे हमेशा प्रकृति की शुद्धि का ही पक्ष उजागर हआ है। प्रकृति में भव्यता है, रम्यता है, आकर्षण है और एक आदिम पवित्रता है। हिन्दी साहित्य का कलेवर बहुत विस्तृत है। पर्यावरण पर इतना अधिक साहित्य समाहित है कि प्रत्येक का जिक्र करना संभव नहीं है लेकिन हम सबका उद्देश्य केवल इतना होना चाहिए कि हमें प्रकृति के साथ तादात्म्य स्थापित करना चाहिए, जिससे मानव जीवन सफल एवं सुरक्षित हो सके। और प्रकृति का यह निसर्ग सौन्दवं सर्वोच्च कल्पना का सहज आधार बन सके। जिसे प्रकृति के इस वैभव से प्यार नहीं वह सबसे अकिंचन प्राणी होगा।

रत्न प्रसविनी है वसुधा, अब समझ सका हूँ।
इसमें सच्ची समता के दाने बोने हैं.
इसमें मानव–ममता के दाने बोने हैं,
जिससे उगल सके फिर धूल सुनहली फसलें
मानवता की जीवन श्रम से हंसे दिशाएँ। (पंत)

हिन्दी साहित्य के कवियों ने प्रकृतिपरक कविताओं की रचना कर धरती के प्रति अपने अनुराग को व्यक्त किया है। जिससे प्राकृतिक दृश्य सर्वथा नवीन एर्व आकर्षक जान पड़े हैं। इन्ही प्रकृति के बहुरंगी चित्रों के सहारे कवियों ने पर्यावरण के विविध दृश्यों को चित्रित किया है।

लदे आम के बागों में जीवन का संबल। (निराला)

शस्य श्यामला भूमि पर फैली मखमल सी कोमल हरियाली जब सूर्य चन्द्रमा की ज्योत्सना से सराबोर होती है तो चहुँ और का वातावरण सुगन्धित हो जाता है–

फैली खेतों में दूर तलक
मखमल की कोमल हरियाली
लिपटी जिससे रवि की किरणें
चाँदी की सी उजली जाली। (पंत)

हिन्दी साहित्य के कवियों ने अपने काव्य में पर्यावरणीय दृश्यों का चित्रण कर शस्यश्यामला भूमि के परिवेश को भव्यता प्रदान की है।

'जीवन का आनन्द ही अच्छे साहित्य के पठन में है।

छायावाद को यदि आधुनिक हिन्दी कविता का तरुमूल मान लें तो पीछे की सम्पूर्ण हिन्दी काव्य में इसी के स्वर विभिन्न विस्तारों के साथ मुखरित होते हैं। सम्भव है कि इस विचार से आप या कई लोग सहमत न हों परन्तु आधुनिक हिन्दी कविता

की पृष्ठभूमि के रूप में छायावाद के महत्व को तो स्वीकार करना ही होगा तथा यह तथ्य निर्विवाद सत्य है कि आज की हिन्दी कविता में पर्यावरण के स्वर भी इसी पृष्ठभूमि की झलक है। यह अवश्य कहा जा सकता है कि आधुनिक हिन्दी कविता में पर्यावरण मनुष्य के सहचर के रूप में चित्रित हुआ है। कभी वह अपनी प्राकृतिक छटाओं से मोहित कर कवि को किसी स्वप्न लोक में ले जाता है तो कभी अपनी व्यथाओं से अवगत करा कर उसके दूरगामी परिणामों के लिए चेतावनी देता है–

हैलो ! मनुष्य, / मैं आकाश हूँ, कल सृजन था, निर्माण था, आज प्रलय हूँ, विनाश हूँ, मेरी छाती में जो छेद हो गए हैं काले काले, / ये तुम्हारे भालों के घाव हैं।

प्रकृति मानव जीवन का अटूट अंग है। प्रकृति से वह सब कुछ प्राप्त होता है जो आरामदायक हैं. अतः कवयित्री कविता वाचनवी कहती है–

प्रकृति सर्वस्व सौंपती, / लुटाती–रूप रंग, पूरती है चौक, मानो फैलाती भुजाएँ स्वागती।

हजारी प्रसाद द्विवेदी की यह उक्ति हमें आनन्द के लोक में ले जाती है। पर आनन्द का शाश्वत लोक है कहाँ? वह प्रकृति में ही तो है–ईश्वरीय सृष्टि की प्रकृति में हो या मानव मन की सात्विक प्रकृति में। जहाँ प्रकृति है, वहाँ निश्छलता है, वहीं ताजगी है वहीं सुन्दरता है और इसलिए वहीं पर आनन्द भी है। यह संसार एक विशाल रंगशाला है। भौतिकवादी व्यवस्था ने हमारे और पर्यावरण के मध्य एक आवरण खाँच दिया है इस आवरण के हटते ही कुदरती करिश्मा हम सबको रोमांचित करने के लिए तैयार है। इस कुदरती करिश्में में शांति, शीतलता, वृक्षों की सघनता, पवन की शुद्धि, वृक्षों का संगीत, भूमि की हरियाली, आकाश और मेघों का मधुरम संवाद जिसके दृश्यमात्र से मानव के नेत्र तृप्त हो जाते हैं।

निर्मल तेरा नीर अमृत के सम उत्तम हैं।
शीतल मंद, सुगंध पवन हर लेता श्रम है।
हरियाली का फर्श, नहीं मखमल से कम है।
शुचि सुधा खींचता रात में, तुझ पर चंद प्रकाश है। (मैथिलीशरण गुप्त)

कविता के माध्यम से प्रकृति की शुद्धता का आह्वान सूर, तुलसी, मीरा, केशव, कबीर, रसखान, जायसी आदि कवियों ने भी किया है।

विमल सलिल सरसिज बहुरंगा
र्ग–सोपान–सरिस सबके मन भावत।
दरसन–मज्जन–पान, त्रिविध भय–दूर मिटावत।।

गद्य में क्षेत्र में उपन्यास, निबंध, कहानी, संस्मरण, आलोचना, जीवनी, यात्रावृत्तान्त, नाटक, एकांकी, रेखाचित्र आदि अनेक विधाएँ सम्मिलित हैं। प्रताप नारायण मिश्र, हजारी प्रसाद द्विवेदी, बालकृष्ण भट्ट, रामनरेश त्रिपाठी, चन्द्रधरशर्मा गुलेरी, गणेशशंकर विद्यार्थी, बाबू गुलाबराय, जयशंकर प्रसाद, सुमित्रानन्दन पंत, निराला, महादेवी वर्मा, प्रेमचन्द, अज्ञेय, जैनेन्द्र, फणीश्वरनाथ रेणू आदि अनेक ऐसे श्रेष्ठ साहित्यकार हुए हैं जिन्होंने गद्य के क्षेत्र में पर्यावरण चेतना को विकसित करने का पूर्ण प्रयास किया। महादेवी वर्मा का प्रकृति से विशेष लगाव उनकी कृति 'गौरा' में स्पष्ट परिलक्षित होता है। भगवत शरण उपाध्याय की कृति 'दूँठा आम वृक्षों के प्रति मानवीय संवेदना को प्रकट करता है। वह ठूँठा आम, जो चौराहे पर खड़ा है, सदा से ठूँठा नहीं है...... पत्रहीन शाखाहीन, पृथ्वी रूपी आकाश से सहसा निकलकर अधर में टँग गया हो। आज विकास के नाम पर जिस तरह से प्राकृतिक संसाधनों का दोहन किया जा रहा है। उससे अभूतपूर्व पर्यावरण असंतुलन पैदा हो गया है। विकास और विध्वंस की बेसुरी जुगलबन्दी पर हिन्दी साहित्य के लेखकों ने अपनी लेखनी का खुलकर प्रयोग किया है।

निष्ठुर परिवर्तन!
तुम्हारा ही ताण्डव नर्तन,
विश्व का करुण विवर्तन
तुम्हारा ही नयनोन्मीलन,
निखिल उत्थान, पतन!
लक्ष अलक्षित चरण तुम्हारे चिहन निरंतर
छोड़ रहे हैं जग के विक्षत वक्षः स्थल पर! (परिवर्तन, पंत)

पर्यावरण का प्रश्न आज समूचे संसार की चिन्ता के केन्द्र में है। लेकिन चिंता करने से चिंता नहीं मिटती इसके लिए चेतना की आवश्यकता है। चेतना होगी तो चिन्तन की जड़ता स्वत: ही समाप्त होगी, सोच के नये सस्कार जागेंगे।

तुम हमारी चोटियों की बर्फ को यों मत कुरेदों
दहकता लावा हृदय में है कि हम ज्वालामुखी हैं।
क्या हुआ जो सिसकियों के भार से बोझिल पवन है?
गल रहा चट्टान का तन आज क्यों बनकर हिमानी
आज भी मेरा अटल विश्वास, आएगा सवेरा,
जगमगाएगा नये आलोक से आकाश तेरा।।

कुछ सीमा तक यदि प्रकृति को पर्यावरण और पर्यावरण को प्रकृति समझकर आत्मसात् करें तो कोई अन्तर नहीं होगा। हमारी प्रकृति या फिर हमारा पर्यावरण के उच्चारण से मूल अर्थ या भाव में कोई विरोधाभास नहीं झलकता। क्योंकि, दोनों के सृजन-कारक, तत्त्व एक ही 'पंचभूत' से संबंद्ध हैं। दोनों के अनुशय पर विचार करें, तो हम पायेंगे कि हमारा परिवेश और पर्यावरण प्राकृतिक है। मनुष्य की प्रकृति पर निर्भरता आदि काल से चली आ रही है। इसलिए विश्व की प्रत्येक सभ्यता में प्रकृति का प्रावधान है। प्राचीन भारतीय समाज भी प्रकृति के प्रति बहुत जागरूक था। वैदिक काल में प्रकृति के प्रति मनुष्य की इस असीम श्रद्धा के कारण पर्यावरण स्वत: सुरक्षित था। स्वच्छ पर्यावरण का मुख्य उपभोक्ता हमारा मानव समाज है और यही समाज प्रकृति और पर्यावरण के बीच विकार उत्पन्न करने में पीछे नहीं रहता है। प्रकृति का नियंत्रण नियमित और निर्बाध है। इसमें बाह्य व्यवधान ही असंतुलन उत्पन्न करता है, जिसका वीभत्स रूप प्रकृति-प्रकोप, भूकम्प, बाढ़, सूखा तथा महामारी है। बाह्य व्यवधान का सर्जक केवल मानव समाज है, जो आधुनिकतम उपभोक्ता संस्कृति का महत्त्वपूर्ण घटक है। विकास की अंधी दौड़ में मनुष्य ने प्रकृति को अत्यधिक नुकसान पहुँचाना शुरू कर दिया। मनुष्य की अति उपभोक्ता प्रवृत्ति के कारण प्रकृति को इतना नुकसान पहुँचा चुका है कि प्रकृति की मूल संरचना ही विकृत हो गई है।

मानव स्वार्थ के वशीभूत होकर जो कार्य कर रहा है उसके भयंकर परिणाम सामने आये हैं। "रक्षायै प्रकृति पातु लोक:" की तर्ज पर जीव समुदाय को स्वयं के संरक्षण हेतु प्रकृति को भी संरक्षित करना होगा। वैदिक युग में मानव स्वयं को प्रकृति के अनुकूल बनाकर अपना विकास करता रहा जबकि वर्तमान में मानव पर्यावरण को अपने अनुकूल ढालने का प्रयास करता है जो प्रकृति एवं मानव सभ्यता दोनों ही के लिये हानिकारक है। वर्तमान में प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाये रखने के लिए पर्यावरण संरक्षण अत्यन्त आवश्यक है। भारतीय संस्कृति में वैदिक काल से ही पर्यावरण संरक्षण की परम्परा विद्यमान है। आवश्यकता है उसे सहेजने एवं वर्तमान संदर्भ में पुनर्जीवित करने की।

सन्दर्भ सूची

1. डॉ. सियाराम, नई सदी में भारत चुनौतियाँ एवं समाधान के उपाय
2. व्यास, हरिश्चन्द्र. पर्यावरण कल, आज और कल
3. वर्मा, महादेवी. हिमालय
4. पर्यावरण चेतना- मार्च 2013
5. देवेन्द्र, शैलजा. हिन्दी प्रगतिवादी काव्य में ग्राम्य जीवन का चित्रण
6. प्रसाद, कालिका वृहत् हिन्दी शब्द कोश
7. विभिन्न पत्र-पत्रिकाएँ

हिंदी साहित्य के काव्य चेतना में पर्यावरणीय अध्ययन

प्रो. डॉ. सतीश दत्तात्रय पाटील

सहयोगी प्राध्यापक, स्नातकोत्तर हिंदी विभाग, धनाजी नाना महाविद्यालय, फैजपूर तह- यावल जि. जलगांव (महाराष्ट्र)

शोध सारांश-

कवि एवं लेखक अपनी रचनाओं द्वारा हमें जागरूक कर रहे हैं, हमें बता रहे हैं कि पर्यावरण को असंतुलित कर हम विकास की ओर उन्मुख नहीं हो सकते। औद्योगिक विकास से प्रकृति असंतुलित हो गई है। मानव जीवन अपने चारों ओर पंचभूत तत्वों पर आश्रित है। मिट्टी, जल, अग्नि, आकाश और वायु इन पाँच तत्वों का अस्तित्व में रहना नितांत आवश्यक है पर आज के समय में मानव अपने भौतिक और विलासी की चकाचौंध में लिप्त होकर प्रकृति का नुकसान कर रहा है। इन सभी के बढ़ते संकट पर साहित्यकारों ने अपनी-अपनी दृष्टि से अपने साहित्य में वर्णन किया है। वर्तमानकालीन दौर की कविता में प्रकृति का चित्रण हुआ है।

बीज शब्द- पर्यावरण विमर्श, पर्यावरण असंतुलन, गंगास्नान, सांस्कृतिक, जागरूकता, स्वच्छता एवं पवित्रता, नदियां, चिंता, औद्योगीकरण।

विषय प्रवेश-

मानव जीवन एवं पर्यावरण एक दूसरे के पर्याय हैं। जहां मानव का अस्तित्व पर्यावरण से है वहीं मानव द्वारा निरंतर किए जा रहे पर्यावरण के विनाश से हमें भविष्य की चिंता सताने लगी है। हमारे प्राचीन वेदों ऋग्वेद सामवेद यजुर्वेद एवं अथर्ववेद में पर्यावरण के महत्व को दर्शाया गया है।

हिंदी साहित्य में आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक प्रकृति को हमेशा विशिष्ट स्थान मिला है। पर्यावरण चेतना की समृद्ध परंपरा हमारे साहित्य में रही है, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है। हमारा शरीर पंचतत्व- पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि, और आकाश से बना है। यह पंचतत्व पर्यावरण के अभिन्न अंग है। हमारी भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से पर्यावरण की शुद्धता का बहुत विचार किया जा रहा है। वेद और उपनिषद भी पर्यावरण की बात करते है। प्रकृति में वायु, जल, मिट्टी, पेड़-पौधों, जीव जंतुओं का जो संतुलन विद्यमान है, उसे ही हम पर्यावरण कहते है। पर्यावरण दो शब्दों के मेल से बना है- परि+आवरण। जिसमें परि का अर्थ है- चारों तरफ तथा आवरण का अर्थ है- ढ़के हुए। अर्थात हमारे आस-पास जो भी कुछ हमें दिखाई देता है वह सब कुछ हमारा पर्यावरण है और इस पर्यावरण के बारें में जानना, समझना इसके लिए क्या उचित है क्या अनुचित इसका ज्ञान रखना ये सभी बातें पर्यावरणीय जागरूकता का विषय है।

वैदिककालीन अध्ययन से पता चलता है कि तत्कालीन सभ्यता में प्रकृति की पूजा की जाती थी। भारतीय संस्कृति में वन और वनस्पति का अत्यधिक महत्व है। परिणामतः भारतीय संस्कृति को अरण्य संस्कृति कहा जाता था। प्राचीन काल में मानव प्रकृति को स्वामी और स्वयं को सेवक मानता था किन्तु कालांतर में मानव की स्वार्थपरकता और महत्वाकांक्षी दृश्टीकोण ने उसकी सोच को परिवर्तित कर दिया, वह जहा-जहा से गुजरा उसने उसको रेगिस्तान बना दिया। 21 वीं सदी की ओर बढ़ते मानवीय कदमों ने जहाँ एक ओर प्रकृति को उपेक्षित कर दिया है, वहीं दूसरी ओर अपनी लोलुपता को उन्नत किया है। आज प्रकृति की भयावह स्थिति इन पंक्तियों में व्यक्त की जा सकती है-

"विश्व जन भयभीत, दूषित सृष्टी से।
जल, थल, नभ बदरंग मानव वृष्टी से"।

प्रसिद्ध कवि रूपेश कन्नौजीया की पंक्तियां हैं-

प्रकृति तो हमेशा ही मेरी सुंदर मां जैसी है,
गुलाबी सुबह से माथा चूम कर हँसते हुए उठाती है,

गर्म दोपहर में ऊर्जा भर के दिन खुशहाल बनाती है,
रात की चादर में सितारे जड़कर मीठी नींद सुलाती है,
प्रकृति तो हमेशा ही मेरी सुंदर मां जैसी है,

आदिकालीन कवि विद्यापति की रचित पदावली प्रकृति वर्णन की दृष्टी से अद्वितीय है-

मौली रसाल मुकुल भेल ताब समुखही कोकिल पंचम गाय।

भक्तिकालीन कवियों में कबीर सूर तुलसी जायसी की रचनाओं में प्रकृति का कई स्थलों पर रहस्यात्मक वर्णन हुआ है। तुलसी ने रामचरितमानस में सीता और लक्ष्मण को वृक्षारोपन करते हुए दिखाया है-

तुलसी तरुवर विविध सुहाए
कहुं कहुं सिया कहुं लखन लगाएं।

आधुनिक काल में प्रकृति के सौंदर्य का उपदान क्रूर दृष्टि का शिकार होना प्रारंभ हो जाता है मैथिलीशरण गुप्त के साकेत में चंद्र ज्योत्सना में रात्रि लालीन बेला की प्राकृतिक छटा का मुग्ध वर्णन है-

चारु चंद्र की चंचल किरणें
खेल रही है जल थल में
स्वच्छ चाँदनी बिछी हुई है
अवनि और अंबर ताल में

छायावादी कवि में प्रकृति का सूक्ष्म और उत्कट रूप दिखाई देता है। प्रसाद पंत निराला महादेवी वर्मा में पर्यावरण चेतना यत्र तत्र पाई जाती है।

निष्कर्ष-

पर्यावरण के प्रति हमारा यह कर्तव्य बनाता है कि हम विकास के हर कदम पर पर्यावरण की सुरक्षा का दायित्व भी उठाएं। प्रदूषण को रोकने का हमें एक अटूट संकल्प करना होगा। पर्यावरण पर विमर्श ने यह विचार दिया है कि हमारी वर्तमान पीढ़ी और हमारी आने वाली पीढ़ी को यह पता चले कि नदी के सौंदर्य को किस प्रकार देखना है, पेड़ो के बीच चलती मंद हवाओं की आहटों को हम उसके संगीत को किस प्रकार सुने, पक्षियों की कलरव को किस प्रकार से सुने आदि।

संदर्भ ग्रंथ-

1. समकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण विमर्श, संपादक- डॉ. ए. ऐस. सुमेश
2. पत्रिका- प्रगतिशील वसुधा, अप्रैल-जून- 2008
3. रामचरितमानस- गोस्वामी तुलसीदास, प्रकाशक- गीता प्रेस, गोरखपुर
4. चारु चन्द्र की चंचल किरणें- मैथिलीशरण गुप्त, भारत कोश

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र सतत् विकासः एक समीक्षा

डॉ० ज्योत्सना पाण्डेय

असिस्टेंट प्रोफेसर, डॉ0 आशा स्मृति महाविद्यालय, लखनऊ

शोधसार-

पर्यावरण की हो सुरक्षा
इससे बढ़कर नहीं कोई तपस्या।

पर्यावरण मानवीय जीवन का अभिन्न अंग है जिसमें मनुष्य का जन्म होता है और पालन पोषण में पर्यावरण की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। वर्तमान परिस्थितियों में पर्यावरण खतरे में है जिसमें शक्ति प्रदान करने के लिए पर्यावरण बचेगा तभी यह धरा रहेगी, तभी मनुष्य का जीवन फलीभूत होगा। जन जागरण ही एक माध्यम है। सरकार तथा अन्तर्राष्ट्रीय संगठन चाहे कितना भी प्रयास करे। जन-जाग्रति के अभाव में पर्यावरण का संरक्षण एवं विकास असम्भव सा प्रतीत होता है। पर्यावरण संरक्षण के लिए कई आन्दोलन भी किए गए जिनमें खेजडली में आत्मोत्सर्ग, चिपको आन्दोलन, अपिप्को आन्दोलन अधिक प्रभावी रहें।

विकास की इस अंधी दौड़ में समाज का जो रूप दिखाई दे रहा है उसके कारण धनी राष्ट्रों और गरीब राष्ट्रों के मध्य अन्तर में निरन्तर वृद्धि होती जा रही है। धनवान अथवा विकसित राष्ट्र गरीब देशों के संसाधनों का शोषण कर भावी पीढ़ी को और अधिक कंगाल बना रहे है। समृद्धि की इस चकाचौंध के कारण प्रकृति ने भी अपने हाथ खड़े कर दिए हैं। संसाधनों का अभाव अब दृष्टिगोचर होने लगा है। विकास के आधुनिक नाम से जा नहीं सहज प्रक्रियाओं को अस्त.व्यस्त कर दिया है। यदि हम अभी भी गहरीए शरण देने वह दिन दूर नहीं कि मानव पुनः आदिम अवस्था में पहुंच जाए और पर्यावरण भी मैं असमर्थता प्रकट करें। यदि मानव समाज वर्तमान में भी सचेत हो जाए तो परस्पर सहय हम सुरक्षित भविष्य ला सकते है। इसके लिए पर्यावरण पर पड़ने वाले बोझ को कम करना पड़ेगा तथा प्राकृतिक संसाधनों का उचित प्रबन्ध करके नवीन आर्थिक व्यवस्था का विकास करना होगा। पर्यावरण के प्रति सहयोगात्मक दृष्टिकोण विकसित कर विकास की सतत् गति प्रदान करनी होगी।

शब्द कुंजी- पर्यावरण प्रदूषण, संरक्षण, सरकारी नीति सतत विकास, क्रियान्वयन।

प्रस्तावना- पर्यावरण और मानव का सम्बन्ध अति प्राचीन है। मानव भी सभी जीवों की भाँति प्रकृति की ही देन है। लेकिन मानव और जीवों में अन्तर यह है कि मानव में अपने पर्यावरण साथ अनुकूलन तथा प्रतिकूलन पर्यावरण साथ निरन्तर संघर्ष करने की क्षमता है। जो जीवों में नहीं पायी जाती है अपने पर्यावरण के साथ समायोजन का प्रतिफल मानव का क्रमिक विकास है। मानव सभ्यता के विकास को यदि मानव पर्यावरण के सम्बन्धों का इतिहास कहना कुछ गलत नहीं होगा।

मानव का विकास इसके दैहिक, दैनिक एवं भौतिक कर्म एवं धर्म सभी पूर्णतया प्राकृतिक, पर्यावरण के ताने-बाने से बुने गए है। मानव पर्यावरण के उपयोग से न केवल अपनी मूलभूत आवश्यकताओं अर्थात भोजन, कपड़ा, मकान की पूर्ति करता है बल्कि उसके उपयोग से आर्थिक विकास भी किया जाता है। यहाँ तक कि मानव के सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनीतिक विकास में भी पर्यावरण अपना योगदान करता है। इन शब्दों का समर्थन करते हुए पीटर हेगेट ने कहा है कि "पृथ्वीतल पर मानव के व्यवहार प्रारूप के निर्धारण में प्राकृतिक पर्यावरण की उल्लेखनीय भूमिका भी रहती है।

मानव पहले पर्यावरण का ध्यान रखते हुए प्राकृतिक क्रियाओं में संलिप्त रहता था लेकिन जब मनुष्य विकास की भोर अग्रसर हुआ है वह ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों की ओर पलायन, कृषि को छोड़कर औद्योगीकरण की ओर भाग रहा है।

इन परिवर्तनों के कारण ही मनुष्य का पर्यावरण के साथ अन्तर्सबन्ध बदलने लगा। औद्योगीकरण के कारण वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, मृदा प्रदूषण और वन एवं वन्य जीवों के विनाश में तीव्र गति से वृद्धि प्रारम्भ हुई। आधुनिक समाज में उत्पादन और उपभोग दोनों में वृद्धि हुई है। ऊर्जा के स्त्रोतों का बड़े स्तर पर उपयोग हो रहा है। इनका परिणाम संसाधनों की कमी, भूमण्डलीय ताप में वृद्धि, अति जनसंख्या, परमाणु सम्बन्धी खतरों में वृद्धि होने लगी है। इन सब क्रियाकलापों से मनुष्य को लगता है कि उसका आर्थिक विकास सतत् रूप से हो रहा है। लेकिन आने वाले भविष्य के लिए यह एक विचारणीय प्रश्न है जो कि वर्तमान की उभरती समस्याओं में से एक है। यदि इस समस्या के समाधान के विषय में मनुष्य ने अब भी कोई

दृढ़ कदम नहीं उठाया तो प्रकृति भयंकर तबाही ला सकती है। पर्यावरण को संरक्षित करके इस समस्या से निजात पा सकते हैं।

उद्देश्य-

1. पर्यावरण संरक्षण के प्रति मानवीय जागरूकता लाना।
2. मानव स्वास्थ्य के प्रति पर्यावरण के लाभों से अवगत कराना।
3. मानसिक शांति के लिए पर्यावरण के महत्व को बताना।
4. पर्यावरण के द्वारा आर्थिक विकास में प्रगति जानना।

पर्यावरणी अर्थशास्त्र एवं सतत् विकास-

पर्यावरण संरक्षण हमारा मूल कर्तव्य है जिसको हमे अपने जीवन में प्राथमिकता देनी चाहिए। लेकिन सभी प्रकार की अर्थव्यवस्थाओं में लोगों के द्वारा पर्यावरण के संसाधनों का उपयोग करते हैं। संसाधनों के दोहन से जल, वायु और मृदा में प्रदूषण बढ़ता है। जिसके कारण जीवन के अस्तित्व को खतरा उत्पन्न हो जाता है। इसको समझने के लिए एक बड़ा ही प्रसिद्ध उदाहरण है जब कुवैत को इराक के शिंकजे से छुड़ाने के लिए खाड़ी में युद्ध के समय समुद्र में तेल का रिसाव हुआ जिससे अनेक पक्षियों और मछलियों को जीवन का अन्त हो गया। इसका परिणाम यह हुआ कि संसाधनों के दोहन और उपयोग में वृद्धि हुई जिससे प्रदूषण में वृद्धि स्वाभाविक है। मानव की गतिविधियाँ भी पर्यावरण की गुणवत्ता को प्रभावित करने में अहम् भूमिका निभाती है। मानव ने अपने प्रसार क्षेत्र में वृद्धि के लिए पेड़ो की कटाई, कोयला खनन अधिक करते है। संसाधनों के अंधाधुन्ध दोहन की समाज को बड़ी कीमत चुकानी पड़ती है। इसीलिए विकास क्रियाओं में समाज को इन समस्याओं के प्रति जागरूक होकर इन्हें कम करने का प्रयास करना चाहिए। विकास को सतत बनाये रखने के लिए ऐसी तकनीकी का प्रयोग किया जाए जिससे दोहन कम हो और प्रदूषण भी कम हो। नवीकरणीय ऊर्जा स्त्रोतों के प्रयोग पर जोर दिया जाये। यह प्रौद्योगिकी स्थानीय संस्कृति और पर्यावरण के अनुकूल होती है। सतत विकास के लिए जनसंख्या परिमाण और पारिस्थितिक तंत्र को उत्पादक क्षमता में सामंजस्य रखना आवश्यक है। सतत् विकास के लिए संसाधनो का संरक्षण आवश्यक है। नवीकरणीय संसाधनों के अधिक उपयोग से प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण हो सकता है। पुनश्चक्रण करके और दुबारा प्रयोग में प्राकृतिक संसाधनों की काफी बचत सम्भव है। यह सम्भव तभी हो सकता है जब जनभागित बढे; लोगो के मन मे पर्यावरण विकास के प्रति मानवीय दृष्टिकोण का विकास हो। इन दोनों के सहभागिता से ही वर्तमान और भविष्य दोनों सुखद बन सकते है।

निष्कर्ष-

मनुष्य अपने जीवन में सुख-समृद्धि की प्राप्ति हेतु जिन संसाधनों का प्रयोग करता है वो पर्यावरण के लिए अति महत्वपूर्ण व प्रमुख घटक है। वन्यजीव वनस्पतियां, भूमि, जल, वायु, खनिज एवं जैविक व अजैविक तत्व मिलकर ही पर्यावरण का निर्माण करते हैं। विकसित देशों या कहे साधन सम्पन्न देशों ने इन संसाधनों का उपयोग असीमित रूप से किया है।

इनकी तुलना में अल्पविकसित या विकासशील देशों ने इनका दोहन अंशमात्र किया है। उनसे यह भी पता चलता है कि प्रत्येक क्षेत्र में प्राकृतिक संसाधनों का वितरण समान नहीं है। कहीं पर अनन्य भण्डार पाए जाते हैं तो कहीं अधिक वन क्षेत्र। कहीं जल संसाधनों की अधिकता है तो कहीं प्रचुरता। इन्हीं संसाधनों के आधार पर कई देशों ने प्रगति प्राप्त की है। किसी भी देश या वहाँ के रहने वाले व्यक्तियों को समृद्ध बनाने के लिए नदियाँ, झीले, वन, खनिज पदार्थ ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जितने भी अरब देश है वहाँ की आर्थिक स्थिति के सुधार का सबसे बड़ा माध्यम खनिज तेल है। जो भी देश, राज्य व जिले नदियों के किनारे बसे हैं नदियाँ उन्हें समृद्धशाली बनाए हुए है।

सुझाव-

पर्यावरण का संरक्षण मानव जीवन के लिए आवश्यक है। पर्यावरण के माध्यम से स्वास्थ्य, सामाजिक, आर्थिक विकास के लिए जागरूक करता है। अत: पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एवं सतत् विकास हेतु सुझाव इस प्रकार है-

1. पर्यावरण संरक्षण हेतु जन जागरण किया जाए।
2. पौधरोपण अभियान चलायें जाए।
3. नवीकरणीय ऊर्जा पद्धति का मार्ग अनुसरित किया जाए।
4. पर्यावरणीय संसाधनों के दोहन पर रोक लगाया जाए।
5. पर्यावरण के नियमों का कठोरता से पालन कराया जाए।

संदर्भ ग्रंथ सूची-

1. विकास और पर्यावरण का अर्थशास्ख डॉ. माया राठी एवं डॉ. जमा म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2016
2. पर्यावरण अध्ययन प्रोफेसर त्रिभुवन नाथ शुक्ल म.प्र. हिंदी ग्रंथ अकादमी भोपाल।
3. विकास और पर्यावरण का अर्थशाख डॉ. जे. पी. मिश्रा साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा।
4. सामान्य ज्ञान आनन्द कुमार पाण्डेय एवं अर्चना पाण्डेय म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल 2016
5. समाचार पत्र दैनिक जागरण 6 फरवरी 2016
6. राष्ट्रीय शोध सेमीनार बड़वानी 9, 10 सितम्बर 201

समकालीन हिंदी गजलों में पर्यावरणीय चिंतन

प्रीति सुमन

शोधार्थी, पाटलिपुत्र विश्वविद्यालय, पटना, बिहार

सारांश

विकास के दौर में हम जितना आगे बढ़ रहे हैं उतने ही असंवेदनशील होते जा रहे हैं। हमने विकास का अर्थ कारखानों और मशीनों से दोस्ती को समझ लिया है। हम अपने परिवार, समाज और खुशी से दूर होते जा रहे हैं। अपने स्वार्थ के वश हमने अपने सबसे करीबी मित्र प्रकृति को भी आहत कर दिया है। हमें यह समझना होगा कि पर्यावरण के साथ हमारा संतुलन बनाये रखना बहुत आवश्यक है। हिंदी के प्रसिद्ध और प्रतिष्ठित अनेक समकालीन गजलकारों ने इस विषय को गंभीरता से अपने शेरों एवं गजलों में उठाया है और समाज का मार्गदर्शन किया है। प्रस्तुत आलेख में पर्यावरण के प्रमुख अवयवों यथा. जल, मिट्टी, पेड़-पौधें, पहाड़, समंदर आदि से सम्बंधित शेरों को उद्धृत कर समकालीन गजलों में निहित पर्यावरणीय चिंतन की विस्तृत व्याख्या प्रस्तुत की गयी है।

बीज-शब्दः प्रकृति, परिवेश, हिंदी गजल, प्रदूषण, ग्लोबल वार्मिंग, जागरूकता, समकालीन गजल

प्रस्तावना

आज पर्यावरण समाज में चर्चा का मुख्य विषय बन गया है क्योंकि अनेक प्रकार के प्रदूषणों के कारण हमने पूरी प्रकृति को ही खतरे में डाल दिया है। समाज की अपने पर्यावरण के प्रति उदासीनता इसका मूल कारण है। यदि हमने समय रहते इस दिशा में कड़े कदम नहीं उठाये, हम अपना अस्तित्व भी खो सकते हैं। क्योंकि साहित्य समाज का आईना होता है इसलिए साहित्य की प्रत्येक विधा में इस विषय पर महत्वपूर्ण कार्य हो रहे हैं। हिंदी गजल भी इस दिशा में अपना योगदान दे रही है जिसका आकलन आवश्यक है। जो साहित्य समाज के दुःख-दर्द से नहीं जुड़ता वह समाप्त हो जाता है। अतः पर्यावरण का गजल में समावेश सिर्फ समाज के लिये ही नहीं बल्कि स्वयं गजल के विकास के लिये भी महत्वपूर्ण है।

शोध-विस्तार

पर्यावरण की बात यदि साहित्य के अंतर्गत की जाये तो इसका तात्पर्य है अपने परिवेश के प्रति जागरूक होना और उसको विभिन्न परिस्थितियों के माध्यम से मूल्यांकन कर शब्दांकित करना। हम सभी पर्यावरण के विभिन्न अंगों यथा- वायु, जल, पहाड़, पेड़-पौधें एवं जीव-जंतु आदि से घिरे हुए हैं। हमारी सम्पूर्ण चेष्टाएँ पर्यावरण से गहरे जुड़ी हुई हैं। बगैर पर्यावरण के हमारा जीवन अकल्पनीय है। मानव का प्रकृति और पर्यावरण से सभ्यता के आरंभ से ही अन्योन्याश्रय संबंध रहा है। दोनों एक दूसरे के पूरक हैं इसी कारण वे एक दूसरे का संरक्षण और संवर्द्धन करते रहे हैं। हमने इनके आश्रय में ही अपनी संस्कृति का विकास किया है। इन्हीं पेड़-पौधों, पर्वतों, नदियों, जंगलों और गुफाओं में हमारी सभ्यताओं ने अपना अस्तित्व विकसित किया।

आधुनिक काल में औद्योगिक विकास के नाम पर स्वार्थी मनुष्यों ने प्रकृति का अनियंत्रित दोहन शुरू कर दिया। मनुष्य समुद्र, नदी, पहाड़, वन, पशु-पक्षी, जीव-जंतु आदि प्रकृति के मूल तत्वों को ही लगातार नष्ट करने में लगा हुआ है। इसका असर यह हुआ है कि पर्यावरण और समाज के मध्य की मित्रता शत्रुता में तब्दील हो गई है। इन कल-कारखानों के दूषित धुँओं ने ओजोन परत को आंतरिक रूप से प्रभावित करना शुरू कर दिया है जिसका भयावह परिणाम ग्लोबल वार्मिंग के रूप में सामने आ रहा है। इन गाड़ियों से निकलते असीमित धुँओं ने अनेक बिमारियों को जन्म दिया है।

हिंदी गजल में भी हिंदी कविता की ही तरह पर्याप्त विविधता है इसी कारण वह इस पर्यावरणीय बदलाव से चिंतित है। इसने अपनी लंबी यात्रा में समाज की लगभग समस्त समस्याओं के साथ-साथ जंगल, पहाड़, नदी, सागर, वायु आदि अनेक महत्वपूर्ण विषयों को अपनी विधा में आत्मसात किया है। हिंदी गजल ने अपने शुरुआती दौर से ही पर्यावरण को अपना लिया था। इसी क्रम में हिंदी गजल के प्रणेता दुष्यंत कुमार के दो शेर देखिए-

"पेड़-पौधें हैं बहुत बौने तुम्हारे,

रास्तों में एक भी बरगद नहीं है।
इस चमन को देखकर किसने कहा था,
एक पंक्षी भी यहाँ शायद नहीं है।"

पर्यावरण और प्रकृति से प्रेम रचनाकार के स्वभाव में स्थित है क्योंकि कवि या रचनाकार प्रकृति के अधिक निकट होते हैं। इन दो शेरों में जो प्राकृतिक दृश्य यहाँ उपस्थित किये गये हैं ये बस एक प्रतीक मात्र हैं जो राजनीतिक समस्याओं को समाज के समक्ष अधिक प्रभाव के साथ स्थापित करने के लिये लिये गये हैं। लेकिन इस महत्वपूर्ण बात से भी हम मुकर नहीं सकते कि राजनीति जैसे महत्वपूर्ण समस्याओं को दर्शाने के लिये प्रकृति और पर्यावरण का सहारा लिया गया है जो काफी प्रभावोत्पादक है। आज के परिप्रेक्ष्य में यह प्रकृति से पूरी तरह सम्बद्ध हैं। आज जगह-जगह पेड़ों को लगाने के अभियान इसी कमी के मद्देनजर चलाये जा रहे हैं कि रास्तों में चलने वालों को छायादार पेड़ प्रदान किये जाएँ। जिस चमन में पेड़-पौधों की अच्छी नस्ल नहीं होगी वहाँ कौन से पंक्षी रहना पसंद करेंगे। यह बहुत ही बेहतरीन प्रयोग है जो एक समय राजनीति के लिये समकालीन थे तो आज वही प्रकृति और पर्यावरण के लिये हो गये हैं।

समकालीन गजलकारों की गजलों में भूमंडलीकरण और बाजारवाद के बदलाव का बहुत प्रभाव दृष्टिगत होता है और वे बार-बार अभिव्यक्ति देकर समाज को जागृत करने का प्रयास कर रहे हैं। इन पशु-पक्षियो, पहाड़ों, नदियों का हमारे साहित्य पर गहरा प्रभाव है। इनके बिना हमारे गीत,गजल, कथा सब बेमानी हैं। इसी तथ्य का महत्त्व स्थापित करते हुए वरिष्ठ गजलकार अनिरुद्ध सिन्हा लिखते हैं-

"जमीन सख्त है झोकें हजार सहने दो,
मेरे मकान के आगे ये पेड़ रहने दो।"

कवि ने पेड़-पौधों की अहमियत बनाये रखने एवं उनके संरक्षण में यह शेर लिखा है। पेड़ों को बनाये रखने के लिये जमीन की भी बड़ी भूमिका होती है। जहाँ उसे लगाया जाता है यदि मिट्टी कमजोर हुई तो आँधी-तूफान को सहन कर पाना मुश्किल होगा। इस ग्लोबल वार्मिग के आपातकाल में पेड़ ही एक बचाव का उपाय है। कवि इस बात पर जोर डालते हैं कि जितनी रहने के लिये घर की आवश्यकता है उतनी ही साँस लेने के लिये पेड़ की। इसलिए हर घर के आगे पेड़ होने चाहिए। पेड़ों की आवश्यकता सिर्फ शुद्ध वायु और लकड़ी के लिये ही नहीं है ये मिट्टी को कसकर पकड़े रहते हैं जिस कारण बाढ़ जैसी स्थिति नहीं बनती। इसके मद्देनजर डॉ. भावना का एक शेर देखिए-

पेड़-पौधे काटकर और तोड़कर चट्टान को,
पूछते हैं वो ही यूँ बौराये पानी की तरह।"

कवयित्री कहती हैं कि पेड़ों को काटने वाले खुद अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मार रहे हैं। जिस जमीन पर हम खड़े हैं हम उसका ही बुरा कर रहे हैं। पेड़ों को काटकर, चट्टानों को तोड़कर बारिश के समय हम नदियों के पानी को नहीं रोक सकते। जनसंख्या के बढ़ते दौड़ में जंगलों का विनाश और पेड़ों का कटना एक बहुत बड़ा प्रश्न बन चुका है, इसी पर आधारित डॉ. वशिष्ठ अनूप का एक शेर द्रष्टव्य है-

"कट जायेंगे जब सारे शजर कैसा लगेगा,
पत्थर के जंगलों का शहर कैसा लगेगा।"

यदि इसी तेजी से आबादी बढ़ती रहे और इन्सान अपने पर्यावरण के प्रति असंवेदनशीलता का प्रदर्शन करता रहे तो शीघ्र ही पृथ्वी अपना संतुलन खो देगी और हम किसी भयावह आपदा का शिकार होने से खुद को नहीं रोक पाएंगे। कवि इसी तरफ हमारा ध्यान खींचते हुए इस शेर में कहते हैं कि सारे पेड़ यदि इसी प्रकार कटते रहें और जंगल पेड़ विहीन हो जाएँ इससे पूर्व हमें इस पर विचार करने की जरूरत है। ऐसी स्थिति को देखकर झूठा रोना रोने से अच्छा है हम जागरूक बनें और ऐसी स्थिति आने ही न दें। अपने शेर में दुनिया को कुछ इसी प्रकार की चेतावनी देते नजर आते हैं कवि घनश्याम-

"समय रहते हुए अगर खुद को बदलती नहीं है दुनिया,
तो फिर आकाश से जल की जगह तेजाब बरसेगा।"

कवि मानव की असंवेदनशील होती मनोवृति पर तंज कसते हुए समाज को उसकी बदख्याली के लिये चेताते हुए कहते हैं कि समय रहते यदि लोग पर्यावरण के बचाव के प्रति जागरूक नहीं हुए तो प्रकृति की दिशा उल्टी हो जायेगी और एक दिन ऐसा भी आ सकता है कि आकाश से पानी की जगह तेजाब की बारिश होगी। यहाँ तेजाब अनिष्ट के लिये प्रतीक मात्र

है। ये कल.कारखानों से उठते हुए धुओं का प्रदूषण और नदी.नालों को दूषित करने वाले अपशिष्ट पदार्थ, ये धीरे-धीरे नगरों का सौंदर्य नष्ट कर देंगे। इससे सम्बंधित अशोक मिजाज का एक शेर देखिए-

"ये नगर भी कारखानों का नगर हो जाएगा,
इन दरख्तों की जगह कुछ चिमनियाँ रह जाएँगी।"

शहर में उन्नति और विकास के नाम पर कारखानों की बढ़ती संख्या विचारणीय प्रश्न हो गया है। कवि के अनुसार पेड़-पौधों का कटाव यदि इसी तेजी से होता रहा तो ये नगर सिर्फ कारखानों का नगर होकर रह जाएगा और पेड़ों की जगह सिर्फ कारखानों की चिमनियाँ रह जाएँगीं। आधुनिकीकरण के नाम पर स्वार्थ में अँधे मनुष्यों को अपने सिवा और कुछ नहीं दिख रहा। इस समाज को मार्गदर्शन देती हुई हिंदी गजल पर्यावरण प्रदूषण की तरफ हमारा ध्यान खींचती है। हमारे भीतर सोये हुए सामाजिक मनुष्य को जगाने की कोशिश में जुटी हिंदी गजल पर्यावरण के लिये बहुत सतर्क और सजग हो चुकी हैं।

निष्कर्ष

समकालीन हिंदी गजल ने मानव मन के अनेक महत्वपूर्ण भावों की अभिव्यक्ति की है जो समाज के लिये मार्गदर्शक हो सके। हिंदी गजल का भाव ही समकालीन तथ्यों के आस-पास घूमता है और आज के परिप्रेक्ष्य में ग्लोबल-वार्मिंग, प्रदूषण और पर्यावरण का असंतुलन ये समाज के मुख्य मुद्दे हैं। हमारा सम्पूर्ण जीवन प्रकृति के इर्द-गिर्द बुना हुआ है और हम उसके साथ ही जीवन की कल्पना कर सकते हैं। प्रकृति के दोहन और पर्यावरण के साथ खिलवाड़ करके कोई भी समाज अपना भला नहीं कर सकता। इन तथ्यों को गंभीरता से समझने की आवश्यकता है और अपनी भलाई, अपने लोभ से ऊपर उठकर हमें सम्पूर्ण प्रकृति को बचाने की कोशिश करनी चाहिए। आए दिन बदलते मौसम के कारण असमय बाढ़, सुखाड़, भूकंप और अकाल जैसी प्राकृतिक आपदाओं से लड़ने से बेहतर है कि हम अपने जीवन में बदलाव करें। हम अपने आस-पास के लोगों को जागरूक करें ताकि प्राकृतिक दोहन कम किया जा सके। पर्यावरण को इसी प्रकार संतुलित किया जा सकता है। इसी कार्य को हिंदी गजलकार शिद्दत से अंजाम दे रहे हैं और अपनी पूरी उर्जा से एक जागरूक परिवेश के निर्माण में जुटे हुए हैं समकालीन हिंदी गजलकार।

सन्दर्भ-सूचीः

1. वर्मा, राजेंद्र, (2022), हिंदी गजल का शिल्प और सौंदर्य, दिल्लीः श्वेतवर्णा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 18-25
2. सिन्हा, अनिरुद्ध, (2020), हिंदी गजल प्रकृति और पर्यावरण, गाजियाबादः समन्वय प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 104
3. जाफरी, जियाउर रहमान, (2019), गजल लेखन परंपरा और हिंदी गजल का विकास, बरेलीः अनुकृति प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 7
4. कुमारी, डॉ. आरती (2021), बिहार की महिला गजलकार, लखनऊ, उत्तर प्रदेशः लोकोदय प्रकाशन
5. नकवी, रजा, (1957), उर्दू -शायरी और बिहार, पटनाः बिहार हिंदी साहित्य सम्मेलन
6. कुमार, दुष्यंत, (1975) साये में धूप, नयी दिल्लीः राधाकृष्ण प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 5
7. बेचैन, डॉ. कुँअर, (1996), गजल का व्याकरण, दिल्लीः अयन प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 10
8. कँवल, रमेश, (2020), 2020 की नुमाइंदा गजलें, दिल्लीः एनीबुक पब्लिकेशन
9. विकास, (2020), उछालो यूँ नहीं पत्थर, दिल्लीः किताबगंज प्रकाशन
10. आनंद, कुंदन, (2022), कुछ ऐसा है रूप तुम्हारा, दिल्लीः अयन प्रकाशन
11. डॉ. भावना, (2022), हिंदी गजल के बढ़ते आयाम, नयी दिल्लीः श्वेतवर्णा प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 40

समकालीन कहानियों में पर्यावरण

डॉ० सजिना० पी० एस

असिस्टेंट प्रोफेसर ऑफ हिन्दी, यूनिवर्सिटी कॉलेज, तिरुवनंतपुरम, केरल

शोध-सार: आज हमारे लिए पर्यावरण विमर्श अति आवश्यक विषय बन चुका है। प्रकृति और मानव के बीच जो अटूट संबंध था आज वह बदल गए हैं स हमारे उपभोग संस्कृति इतनी बढ़ गई है कि इसका प्रभाव प्रकृति पर पड़ रहा है। अपने उपभोग के लिए हम प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग कर रहे हैं। जल, जंगल, वायु, जमीन, आकाश जैसे प्रकृति प्रदत्त चीजों का हमने इतना दुरूपयोग किया है कि ये सारे आज संकट में आ गए हैं। इस आलेख में समकालीन कहानी में व्यक्त पर्यावरणीय चिंता एवं चेतना की पड़ताल की गई है।

बीज शब्द: पर्यावरण विमर्श, बहुराष्ट्रीय कम्पनी, विस्थापन।

प्रस्तावना: पर्यावरणीय विध्वंस का परिणाम मानव के लिए और घातक सिद्ध होता जा रहा है। मनुष्य प्रकृति में हस्तक्षेप करता है। औद्योगिकीकरण, उदारीकरण, उपभोक्तावाद, बाजारीकरण, भूमण्डलीकरण, पर्यावरण विध्वंस, वैयक्तिकरण, पृथक्करण, प्रदूषण आदि सत्तात्मक एवं धन की शक्तियों के अमानवीय पक्ष को समकालीन कहानी खोलकर सामने रखता है।

मूल आलेख: प्रकृति और मानव का संबंध उतना ही पुराना है जितना सृष्टि के उद्भव और विकास का इतिहास सप्रकृति का संकट में आना हमारे अस्तित्व के लिए खतरनाक है। यही कारण है कि आज पूरे विश्व में पर्यावरण से जुड़े मुद्दों पर विमर्श की आवश्यकता महसूस की जा रही है। इसके संबंध में फ्रेडरिक एंगेल्स कहते हैं- प्रकृति पर मनुष्य की विजय को लेकर ज्यादा खुश होने की जरूरत नहीं, क्योंकि ऐसी हर जीत हमसे अपना बदला लेती है। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने अपने निबंध 'कुटज' में लिखा है- "यह धरती मेरी माता है और मैं इसका पुत्र हूँ। इसीलिए मैं सदैव इसका सम्मान करता हूँ और मेरी धरती माता के प्रति नतमस्तक हूँ।"[1] भारतीय संस्कृति और जीवन दर्शन में प्रकृति और पर्यावरण के विभिन्न घटकों को आदरणीय मानकर इसकी पूजा या अर्चना करने की परंपरा चली। वैज्ञानिक उन्नति, विश्व युद्ध, वैश्वीकरण आदि ने प्रकृति के साथ हमारे रिश्तों को नष्ट कर दिया है। मानव जाति की एकपक्षीय विकास ने प्रकृति को बहुत नुकसान पहुँचाया है। आज हमारे चारों तरफ महामारी फैली हुई है। हमारे लिए पर्यावरण को बचाने की बड़ी जिम्मेदारी आ पड़ी है। यही पर्यावरण विमर्श की आधारभूमि है।

पर्यावरण संरक्षण में साहित्य की भूमिका अहम रही है। जो भी समाज देते में घटता है, उसका प्रभाव स्वाभाविक रूप से साहित्य पर भी पड़ता है। आज पर्यावरण और प्रदूषण ज्वलन्त समस्या है, लिहाजा साहित्य भी उससे अछूता नहीं है। हिन्दी साहित्य का पर्यावरण से बहुत गहरा नाता है। प्रकृति के सौन्दर्य के वर्णन से लेकर पर्यावरण चिन्ताओं तक को वैदिक काल से ही साहित्य में शामिल किया जाता रहा है। आज के रचनाकारों द्वारा हिन्दी साहित्य के माध्यम से प्रकृति से तादात्मय स्थापित कर प्राकृतिक विध्वंस को रोकने और प्राकृतिक संसाधनों का सदुपयोग करने की प्रेरणा देते आ रहे हैं। समकालीन कहानीकारों ने भी अपनी कहानियों के माध्यम से पर्यावरणीय चिंता के साथख्रसाथ चेतना भी जगाने का काम कर रहे हैं।

एस. हारनोट की कहानी 'एक नदी तड़पती है' में विकास के नाम पर बाँधों के निर्माण एवं उससे लोगों के विस्थापन के साथ ही साथ एक नदी के तड़प कर मरने की व्यथा दिखाई गई है। किस प्रकार कम्पनी के बड़े बाबुओं और नेताओं ने आधुनिक यंत्रों के साथ नदी पर बेरहम आक्रमण शुरू कर दिया और नदी तड़प- तड़प कर मरने लगी। कहानी में लेखक लिखते हैं- नदी धीरे- धीरे कई मीलो तक घाटियों में जैसे स्थिर व जड़ हो गई थी। उसका स्वरुप किसी भयंकर कोबरे जैसा दिखाई देता था मानो किसी ने उसकी हत्या करके मीलों लम्बी घाटी में फेंक दिया हो। अब न पहले जैसा बहते पानी का नदी- शोर था न ही कोई हलचल।[3]

काशीनाथ सिंह की कहानी 'जंगलजातकम' वर्तमान समाज के यथार्थ को प्रस्तुत करती है तथा परिवेश और प्रकृति से विलगाव की कहानी को भी। कहानीकार जंगल और मनुष्य के बीच के रिश्ते के ताने बाने को बुनते हैं पर्यावरण पर किस प्रकार शो मनुष्य अपनी कुदृष्टि लगाए हुए हैं इसका पर्दाफाश लेखक इस कहानी के माध्यम से करता है। इस कहानी के माध्यम से पता चला है कि लेखक का उद्देश्य ऐसी विकृत सोच वाले मनुष्य को बाहर रखना है जो अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए दूसरों का नुकसान करने से किसी भी प्रकार से बाज नहीं आते और ये सत्तातंत्र के लालची फूट डाला और राज करो

की नीती को अपनाते हैं।" हे भद्र, हमारे पूर्वजों और मनुष्यों का बड़ा ही अंतरंग संबंध रहा है। उनके लिए हम अपने पुष्प, अपने बीच छिपी सारी संपदा, कंद-मूल पशु पक्षी सब कुछ निछावर कर चुकें हैं और आज भी करने के लिए प्रस्तुत है विश्वास करें शुरू से ही कुछ ऐसा नाता रहा था कि हमें भी उनके बिना खास अच्छा नहीं लगता। जवाब में उन्होंने भी हमें भरपूर प्यार दिया है लेकिन आप हमें संदेह है कि आप मनुष्य हैं।"[4]

प्रदीप जिलवाने की कहानी 'भ्रम के बाहर' में भी लेखक ने जलपरी के माध्यम से पर्यावरणीय संकट एवं नदियों के विनाश की पीड़ा को व्यक्त किया है। जिस नदी में साल भर पानी रहता था, बाँध की वजह से अब वह बरसाती नदी बन चुकी है। नदियों पर कारखानों के रासायनिक गंदगी मिलने से नदी दुषित हो गई है। कहानी में जलपरी अपनी व्यथा सुनाते हुए कहती है- कल घूमते- घूमते नदी से आगे तक निकल गई थी, तो वहाँ पानी इतना विषैला था कि मेरी सांसे लगभग बंद हो गई थी। मैं तत्काल पलट कर भाग आई। थोड़ी दूर वापस आई तो कुछ मछलियों ने बताया कि उधर आगे जाकर बहुत सी फैक्टरियो का विषैला रसायन और अपशिष्ट नदी में सीधे जाकर मिलता है, जिससे उस तरह की सारी मछलियाँ पानी में हर साल मर जाती है।[5]

राजेश जोशी की 'कपिल का पेड़श नामक कहानी प्रेम और प्रकृति का संबंध और उसकी तनावों को व्यक्त करती प्रेम कथा है। जब प्रकृति के प्रति लापरवाह होते हैं, प्रकृति को नष्ट करने की कोशिश करते हैं, वृक्षों नदियों को पहाड़ों को नुकसान पहुंचाते हैं तो मनुष्य समाज की संवेदनाओं को भी नुकसान पहुंचा रहे हैं। हम जान नहीं पाते कि प्रकृति के प्रति हमारा व्यवहार हमारे पूरे व्यवहार को बनाता बिगाड़ता है। कपिल सिर्फ अपने लिए प्रेम को पाने की ही कोशिश नहीं करता उसकी चिंदा अपने आसपास की प्रगति से जुड़ी है सारे वर्षो से जुड़ी है। कपिल जब नहीं दिखता तो उसके दोस्त कहते हैं वह पेड़ की तलाश में गया होगा। कपिल एक ऐसा समाज चाहता है जिसमें प्रेम हो और प्रकृति का विस्तार हो जिससे कोई नष्ट ना करें जिससे कोई नुकसान न पहुँचाए। प्रकृति मनुष्य की रक्षा भी करती इसलिए शायद आदिवासी समाज में पेड़ों और पशु पक्षियों को लेकर अनेक कहानियाँ बनाई गई होंगी। पेड़ को टोटम मारने की प्रथा भी प्रगति के प्रति मनुष्य के प्रेम से ही पैदा हुई होगी। यह कहानी प्रेम और प्रकृति के इस नैसर्गिक संबंध को ही कहने की कोशिश की कहानी है।[6]

बटरोही की रचना 'कहीं दूर जब दिन ढल जाये' नामक कहानी में लेखक अपनी बुआ से मिलने पहाड़ स्थित गाँव में जाता है। यहाँ का वातावरण लेखक के शहरी वातावरण से एकदम अलग है। नैसर्गिक अ और संवेदनशील। जो उनकी प्रकृति का अंग है। कुत्ते, बिल्ली, पक्षी, साँप आदि उनके जीवन का हिस्सा हैं।लोग प्रकृति के सब उपादानों के साथ पूरी संवेदना के साथ जीते हैं। बुआ का यह कहना ष्भगवान का वरदान होता है सौंप-कीड़ों मेंश बताता है कि वहाँ के मनुष्य ने अन्य जीवों को स्वीकार कर लिया है। सहअस्तित्व का आदिम नियम बिना कहे यहाँ लागू हो रहा है। सम्भवतः इसी कारण जो लोग जीव मात्र के प्रति करुणाशील हैं मनुष्य के लिए तो बेहद संवेदनशील हैं। इसीलिए बुआ भतीजे से से मिलकर रो पड़ती है। आँसुओं का सम्बन्ध स्पर्श से होता है। कहानी मुनष्य, जीव तथा ग्रामीण भावबोध को प्रस्तुत करती है।असल में यह कहानी मानवीय स्पर्श और उसे आत्मा में उतार लेने की कहानी है।

जयश्री राय की कहानी 'खारा पानी' गोवा के समुद्री जीवन पर आधारित उन मछुआरों की कहानी है जिसके समुद्र पर अब कम्पनी वालों का अधिकार हो गया है। समुद्री मछली पर जीवन यापन करने वाले मछुआरों को विस्थापित होना पड़ रहा है। साथ ही बड़े- बड़े जहाजों के कचरे और उससे रीतते तेल की वजह से समुद्र का जल दुषित हो रहा है। समुद्री इको सिस्टम नष्ट हो रहा है। लेखिका यह दिखाती है कि समुद्र किनारे पाँच सितारा होटल बन रहा है। कंक्रीट के जंगल उभर रहे हैं, इसके लिए तटों पर बसे सैकड़ों वर्ष पुराने गाँवों को उजाड़ा जा रहा है। उन लोगों से उनकी सभ्यता, संस्कृति, आजीविका सभी छीना जा रहा है। सैलानियों के द्वारा फैलाये गए प्रदूषण से समुद्री जीव मर रहे हैं। कहानी में रामा कहता है- कुदरत ने हमें जो दिया था, हम उसी में संतुष्ट थे। सर पर आकाश था, नीचे धरती का बिछौना..... अपने जल, जंगल, जमीन से हमें सब कुछ मिल जाता था, दो वक्त की रोटी, नींद और सुकून.... मगर अब तो सब छीन गया। न गरीबों के सर पर आकाश रहा, न पाँव के नीचे जमीन...... आजादी, उन्नति, आधुनिकता के नाम पर सब झपट ले गए।

चित्रा मुद्गल ने जीना वर नमक कहानी मेंमानव और जानवर के बीच के संबंध को संवेदनात्मक ढंग से प्रस्तुत किया है। प्रकृति और जानवर मानव जीवन की मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति करते हैं। इसके उपयोग किए बिना मनुष्य रह नहीं सकता लेकिन शोषण करने के लिए नहीं। वास्तविकता के प्रति पाठको के दिल दिमाग को सजगता प्रदान करना लेखक का उद्देश्य

है। घोड़ी सरवरी और मालिक असलम के बीच के रिश्ते इस का अनोखा दस्तावेज है। रोजी रोटी के लिए असलम तांगा चलाता था।इसी बीच सरवरी रोग से पीड़ित हो जाती है लेकिन इलाज समय पर न मिलने पर सरवरी की स्थिति जटिल हो चुकी है।। असलम का परिवार एक ही कमाई पर चलता था।। असलम की विवशता थी की 1 दिन सरवरी को उसी स्थित में उसे ताँगे में लगा देना पड़ता है। उसकी टांग कांपती थी।आंखो मे नदी की धारा बहती है। मौन ने छाया सरवरी की आंखो में छिपी रही थी।असलम सवारी को लिए निकल पड़ता है। इसी बीच तांगा कार से टकरा जाता है जिससे सरवरी चोटिल हो गई। वह सड़क पर गिर जाती है।असलम मौकापरस्त है। असलम सरवरी को उसी स्थिति में छोड़ तांगे लेकर घर चला जाता है। यहाँ मनुष्य अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति और जानवरों का शोषण करते हैं।मानव अपनी कमजोरियों में पड़कर इस प्रकार का अमानवीय कृत्य करते हैं।

निष्कर्ष: इस बढ़ते हुए पर्यावरण प्रदूषण को देखते हुए इन्हें रोकने का प्रयास भी बड़े पैमाने पर किया जा रहा है।अगर आज भी हम नहीं सुधरे तो हमें भविष्य में अपना सब कुछ खोने के लिए तैयार रहना होगा। आज के कुछ रचनाकार अपने इस दायित्व को समझ रहे हैं और अपनी कहानियों के माध्यम से पर्यावरण चिंता को अभिव्यक्ति दे रहे हैं, किन्तु सच तो यह है कि अभी भी पर्यावरणीय समस्या केवल समस्या बनी हुई है, विमर्श का रूप नहीं ले पाया है। अतः जरूरत है कि पर्यावरणीय विमर्श पर अधिक से अधिक रचनाएँ आए ताकि सामाजिक क्रांति लाई जा सके।

संदर्भ:

1. द्विवेदी, हजारी प्रसाद. कुटज. राजकमल प्रकाशन, अंक-9
2. शर्मा, मुरारी. 'प्रेतछाया', पहाड़ पर धूप. अंतिका प्रकाशन, 2015.
3. हारनोट. एस. आर. 'भागादेवी का चाय घर'. किलें. वाणी प्रकाशन, 2019
4. काशीनाथ सिंह.जंगलजातकम.वाणी प्रकाशन,2018
5. जिलवाने, प्रदीप. 'भ्रम के बाहर'. पहल. अंक-122, जून-जुलाई, 2020.
6. राजेश जोशी, कपिल का पेड़ .वाणी प्रकाशन, 2018
7. राय, जयश्री. 'खारा पानी'
8. बटरोही', कहीं दूर जब दिन ढल जाये', वाणी प्रकाशन, 2018
9. चित्रा मृद्गल, जिनावर, प्रथम अंक, वाणी प्रकाशन. 2018

पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्यः एक ज्वलंत मुद्दा

अंकित तिवारी

शोधार्थी, हिंदी विभाग, हिमालयीय विश्वविद्यालय, डोईवाला, देहरादून

प्रकृति और व्यक्ति में बहुत निकट का अंतर्संबंध है, बिना प्रकृति के व्यक्ति के जीवन की परिकल्पना असंभव है, प्रकृति के घटक भूमि, जल, वायु, आकाश, इसी से मानव जीवन का अस्तित्व बना है, इस संदर्भ में ''गोस्वामी तुलसीदास जी कृत रामचरित मानस" में लिखा है कि-

"क्षिति जल पावक गगन समीरा।
पंच रचित अति अधम सरीरा''।।

अर्थात प्रकृति के घटकों से ही हमारा जीवन बना है, इसलिए आवश्यक है कि हम प्रकृति के संरक्षण के प्रति सदैव सजग और समर्पित बने रहे, प्रकृति और पर्यावरण के संरक्षण से ही मानव जीवन सुरक्षित रह सकता है, पर्यावरण का आशय हमारे आस-पास के वातावरण से है, जो कि हमारी जीवन शैली पर निर्भर करता है। हम आदर्श अनुशासित जीवन शैली को जितना महत्व अपने जीवन में देगे, हमारा पर्यावरण उतना ही बेहतर होगा।

पर्यावरण, संरक्षण और विकास में सतुलन अत्यंत आवश्यक है। जल संरक्षण, वन सरक्षण और वृक्षारोपण के प्रति सजग होकर हम पर्यावरण को संरक्षित रख सकते हैं। वर्तमान में वैश्विक स्तर पर वनों का घटता क्षेत्रफल, नदियों और प्राकृतिक जल स्त्रोतों में घटता जल स्तर, इनसे हमारे पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है, यह हमारे लिए चुनौती है। मैं ऐसा मानता हूँ कि इस चुनौती का सामना आधुनिक संसाधनों के साथ-साथ सामाजिक जागरूकता के माध्यम से किया जा सकता है। प्रकृति के पांच तत्वों से ही हमारा शरीर बना है। इसलिए प्रकृति का संरक्षण करना हमारा नैतिक दायित्व है।

पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिलकर हुआ है। ''परि" जो हमारे चारों ओर है और ''आवरण"- जो हमे चारों ओर से घेरे हुए है। दूसरे शब्दों में यदि कहा जाए तो पर्यावरण मनुष्य के आसपास का वह भौतिक परिवेश है जिसका मनुष्य एक भाग है और वह अपने जैविक कार्यकलापों, भरण-पोषण और विकास के लिए उस पर निर्भर है। भौतिक पर्यावरण के अंतर्गत वायु जल और भूमि जैसे प्राकृतिक संसाधनों से लेकर ऊर्जा वाहक, मृदा और पेड़-पौधे, पशु और पारिस्थितिकी तंत्र आदि जैसे तत्व शामिल है। भौतिक पर्यावरण मनुष्य और समाज के कल्याण के बीच बहुआयामी संबंध है।

भारतीय संस्कृति प्रकृति के साथ सहयोग व सह-अस्तित्व में विश्वास रखती है। उनके साथ संघर्ष में नहीं बल्कि प्रकृति के कण-कण के साथ एकात्मकता का अनुभव करना और उसे यथासंभव कम से कम हानि पहुंचाना चिरकाल से भारतीय जीवन दर्शन का आदर्श रहा है।

प्रकृति में पुर्ननवीकरण की अद्‌भुत क्षमता है परन्तु अगर उसका दोहन यथोचित सीमा में हो। आज वैश्वीकरण और पूरे विश्व में उपभोगवादी संस्कृति की ओर झुकाव से भारत भी अछूता नहीं है। आज विश्व में प्रकृति का तीव्र गति से दोहन हो रहा है जिससे प्राकृतिक संतुलन खराब हो रहा है और उसका परिणाम मानव को दिख रहा है। जलवायु परिवर्तन हो या बढ़ती हुई प्राकृतिक आपदायें ये सब मनुष्य की उपभोगवादी संस्कृति के कारण प्रकृति के साथ हो रहे खिलवाड़ का फल है।

पर्यावरण संरक्षण में विधायिका की भूमिका

संयुक्त राष्ट्र के अनुसार पर्यावरणीय अवक्रमण को आस-पास प्रदूषक तत्वों और अन्य कार्यकलापों की सघनता तथा भूमि के अनुचित उपयोग और प्राकृतिक आपदाओं जैसी प्रक्रियाओं के माध्यम से पर्यावरण की गुणवत्ता के ह्रास के रूप में परिभाषित किया गया है सामाजिक-आर्थिक, संस्थागत और प्रौद्योगिकीय कार्यकलापों के कारण पर्यावरण का अवक्रमण होता है। आर्थिक विकास, जनसख्या वृद्धि, शहरीकरण, सघन कृषि, ऊर्जा के बढ़ते उपयोग और परिवहन सहित अनेक कारणों से पर्यावरण की स्थिति में परिवर्तन होता है।

पृथ्वी और प्राकृतिक संसाधनों का सतत प्रबंधन हमारे देश में आर्थिक विकास और मानवीय समृद्धि के लिए एक महती आवश्यकता है। पर्यावरण की सुरक्षा और उसके संरक्षण तथा प्राकृतिक संसाधनों के सतत उपयोग की आवश्यकता भारत के संवैधानिक ढांचे में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होती है। हमारा संविधान देश के सभी नागरिकों के लिए न्याय, स्वतंत्रता और समानता का अधिकार सुनिश्चित करता है। अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन का अधिकार' केवल जीवित रहने तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसके अंतर्गत प्रदूषण मुक्त जल और वायु को समाहित करते हुए सम्मान के साथ जीवन जीने का अधिकार भी सम्मिलित है। संविधान के भाग 4क के अंतर्गत अनुच्छेद 51–क के अनुसार भारत के प्रत्येक नागरिक का यह दायित्व है कि वह वनों, झीलों, नदियों और वन्य जीयो सहित प्राकृतिक पर्यावरण की सुरक्षा करके और उसमें सुधार करे तथा प्राणीमात्र के प्रति दया का भाव रखे। इसके अतिरिक्त, राज्य की नीति के निदेशक तत्वों के अंतर्गत अनुच्छेद 48क में यह विहित किया गया है कि राज्य देश के पर्यावरण के संरक्षण तथा संवर्धन का और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा। हमारे देश में समय–समय पर पर्यावरण की रक्षा और प्रदूषण को कम करने के कानून बने है। पर्यावरण सुरक्षा के लिए हर स्तर पर भागीदारी का महत्व है।

सार्वजनिक स्वास्थ्य और पर्यावरण:

आज के समय में, पर्यावरण प्रदूषण एक गंभीर समस्या बन गया है। वायु, जल, ध्वनि, और भूमि प्रदूषण से मानव स्वास्थ्य और जीवन पर गहरा प्रभाव पड़ रहा है। प्रदूषित वातावरण में रहने से श्वसन संबंधी बीमारियां, कैंसर, हृदय रोग, और अन्य स्वास्थ्य समस्याएं बढ़ रही हैं। पर्यावरण प्रदूषण के कई कारण हैं, जिनमें औद्योगिकीकरण, वाहनों का बढ़ता उपयोग, प्लास्टिक का अत्यधिक उपयोग, और वन–विनाश शामिल हैं। इन समस्याओं का समाधान करने के लिए हमें तत्काल कदम उठाने होंगे।

पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के कुछ उपाय:

पर्यावरण के प्रति जागरूकता: लोगों को पर्यावरण प्रदूषण के खतरों के बारे में जागरूक करना।

पौधरोपण: अधिक से अधिक पेड़ लगाना।

वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का उपयोग: सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, और जल ऊर्जा जैसे वैकल्पिक ऊर्जा स्रोतों का उपयोग करना।

सार्वजनिक परिवहन का उपयोग: वाहनों के उपयोग को कम करने के लिए सार्वजनिक परिवहन का उपयोग करना।

प्लास्टिक का उपयोग कम करना: प्लास्टिक का उपयोग कम करना और पुन: उपयोग करना।

पर्यावरण प्रदूषण को कम करने के लिए सरकार, उद्योगों, और नागरिकों को मिलकर प्रयास करना होगा। सरकार को सख्त कानून बनाने होंगे और उद्योगों को इन कानूनों का पालन करना होगा। नागरिकों को भी पर्यावरण के प्रति अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी और प्रदूषण कम करने के लिए अपने स्तर पर प्रयास करने होंगे।

आज हम जो बीज बोते हैं, वही भविष्य का फल होगा। यदि हम आज पर्यावरण प्रदूषण को नहीं रोकेंगे, तो यह हमारे जीवन और आने वाली पीढ़ियों के लिए खतरा बन जाएगा।

कोई भी देश पर्यावरण संतुलन के बिना सतत विकास लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकता। भारत में वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, कचरा तथा प्राकृतिक पर्यावरण का प्रदूषण जैसी अनेक पर्यावरणीय समस्याएं विद्यमान है। भारत में रोगों, स्वास्थ्य संबंधी समस्याओं और आजीविका पर दीर्घकालिक प्रभाव डालने वाले प्राथमिक कारणों में पर्यावरणीय मुद्दे भी शामिल हैं। पर्यावरण और अर्थव्यवस्था के बीच सीधा संबंध है। पर्यावरण पर ध्यान दिए बिना आर्थिक विकास, पर्यावरण को गंभीर नुकसान पहुंचा सकता है जिसके परिणामस्वरूप वर्तमान और भावी पीढियों के जीवन की गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ सकता है। इसलिए, विश्व की समग्र प्रगति और समृद्धि के लिए सतत विकास पर ध्यान देने की आवश्यकता है। विश्व बैंक के विशेषज्ञों के अनुसार, भारत ने अपनी प्राकृतिक समस्याओं का समाधान करने और अपनी पारिस्थितिक गुणवत्ता में सुधार करने के लिए विश्व में सबसे तीव्र गति से कार्य किया है।

हमारी पर्यावरण संवर्धन और संरक्षण रणनीतियों में स्वच्छ और कुशल ऊर्जा प्रणाली, बेहतर ऊर्जा दक्षता, लवीला बुनियादी ढांचा, सुरक्षित स्मार्ट और टिकाऊ हरित परिवहन नेटवर्क, नियोजित वनीकरण, सतत जलवायु, कृषि आदि पर जोर दिया गया है। परंतु इष्टतम स्तर की पर्यावरणीय गुणवत्ता प्राप्त करने हेतु हमें अभी भी एक लंबा रास्ता तय करना है जिसमे हर स्तर पर भागीदारी महत्वपूर्ण है।

निष्कर्ष:

पर्यावरण प्रदूषण एक ज्वलंत मुद्दा है। हमें इस समस्या का समाधान करने के लिए मिलकर प्रयास करना होगा। सरकार, उद्योगों, और नागरिकों को मिलकर काम करना होगा और पर्यावरण को स्वच्छ और सुरक्षित रखने के लिए अपनी जिम्मेदारी निभानी होगी।

यह भी ध्यान रखना होगा कि पर्यावरण संरक्षण और विकास में सतुलन अत्यंत आवश्यक है। हमें विकास के साथ-साथ पर्यावरण का भी ध्यान रखना होगा। जल संरक्षण, वन सरक्षण और वृक्षारोपण के प्रति सजग होकर हम पर्यावरण को संरक्षित रख सकते हैं।

मानव और पर्यावरणीय सतत विकास

डॉ० आशा बाला

असिस्टेंट प्रोफेसर, डिपार्टमेंट ऑफ मास कम्युनिकेशन, श्री गुरु राम राय यूनिवर्सिटी, देहरादून

प्रकृति और मानव के बीच अंतर्संबंध का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि मानव की प्रकृति पर निर्भरता इतनी अधिक है कि हम भविष्य के लिए पर्यावरणीय संसाधनों की रक्षा किए बिना जीवित नहीं रह सकते। संस्कृत भाषा में पर्यावरण को माँ और प्रकृति के रूप में समझा जाता है। यही कारण है कि अधिकांश पारंपरिक समाज जानते हैं कि अपनी आजीविका की रक्षा के लिए प्रकृति का सम्मान करना कितना महत्वपूर्ण है। भारत में प्रकृति और सभी जीव-जंतुओं का ख्याल रखना कोई नई बात नहीं है। हमारी सारी परंपराएँ इन्हीं मूल्यों पर आधारित हैं। इतिहास भी गवाह है कि सम्राट अशोक के शिलालेख में भी कहा गया है कि जीवन के सभी रूप हमारे कल्याण के लिए महत्वपूर्ण हैं। संसाधन और मानव निर्भरताप्रकृति ने मनुष्य को अनगिनत नवीकरणीय और गैर-नवीकरणीय संसाधन दिए हैं। जिसे वह अंधाधुंध प्रयोग से नष्ट कर रहा है। कृत्रिम उर्वरकों, कीटनाशकों का उपयोग करके खाद्य उत्पादन बढ़ाना, पालतू जानवरों में फसलों की बेहतर किस्में विकसित करना, बड़े बांधों से खेतों की सिंचाई करना और उद्योगों का विकास करना। इन सबका परिणाम तीव्र आर्थिक समृद्धि है। हमारे अधिकांश उपयोग औद्योगिक विकास और मुख्य समाज के लिए वस्तुओं की आपूर्ति करने वाली गहन कृषि से जुड़े हैं। आज हम बड़ी मात्रा में प्राकृतिक संसाधनों जैसे खनिज, पेट्रोलियम उत्पाद, लकड़ी आदि का उपयोग कर रहे हैं और तेल जैसे नवीकरणीय संसाधन ऐसे हैं कि अगर हम आने वाली पीढ़ियों की परवाह किए बिना इसका दोहन करते रहेंगे तो यह भविष्य में समाप्त हो जाएंगे। लकड़ी और पानी जैसे नवीकरणीय संसाधन हैं जिनका उपयोग किया जाता है और उन्हें बारिश जैसी प्राकृतिक प्रक्रिया द्वारा पुनर्जीवित किया जा सकता है। यदि हम इसी प्रकार इनका प्रयोग करते रहे तो एक दिन ऐसा आएगा जब ये सब स्वतः ही समाप्त हो जायेंगे। हमारे प्राकृतिक संसाधनहमारे प्राकृतिक संसाधनों की तुलना बैंक में जमा किये गये धन से की जा सकती है। यदि हम इसका तेजी से उपयोग करेंगे तो पूंजी कम हो जायेगी; दूसरी बात यह कि यदि हम रुचि लेकर ही काम करेंगे तो वह लंबे समय तक हमारे काम आएगा। इसे ही सतत विकास कहते हैं। सतत विकास के आधार पर प्रकृति ने हमें जो अमूल्य संसाधन दिए हैं, उनमें खनिज संसाधन, जल, वायु, सौर ऊर्जा, वन संसाधन, भूमि आदि शामिल हैं। जिनका मानव जीवन से लेकर मृत्यु तक अमूल्य योगदान है। पर्यावरण और मानवीय जिम्मेदारी, हमारी पर्यावरणीय स्थितियों और समस्याओं को समझना और उनके प्रति हमारी जागरूकता बढ़ाना ही पर्याप्त नहीं है, हममें से प्रत्येक को अपने पर्यावरण के प्रति अधिक जागरूक होना होगा। संसाधनों के उपयोग का तरीका बदलना होगा। संसाधनों का निर्वहन एवं उपयोग कई प्रकार से किया जा सकता है, संसाधनों का उपयोग जनसंख्या वृद्धि के आधार पर भी किया जा सकता है। हम अपनी उचित आवश्यकता से अधिक संसाधनों का उपयोग करते हैं। हमें यह समझना होगा कि हम एक ऐसी दुनिया में रहते हैं जिसमें प्राकृतिक संसाधन सीमित हैं। जलवायु, खनिज तेल, जंगल, घास के मैदान, महासागर, कृषि और पशु उत्पाद सभी हमारी अस्तित्व प्रणालियों का हिस्सा हैं। जैसे-जैसे हमारी जनसंख्या बढ़ेगी, वैसे-वैसे हममें से प्रत्येक द्वारा संसाधनों का उपयोग भी बढ़ेगा। जिससे पृथ्वी के संसाधनों का भंडार अनिवार्य रूप से कम हो जायेगा। यह आशा नहीं की जा सकती कि पृथ्वी संसाधनों के बढ़ते स्तर को सहन कर सकेगी। इसके अलावा संसाधनों का दुरुपयोग भी हो रहा है; हम बड़ी मात्रा में प्रकृति के स्वच्छ जल को बर्बाद या प्रदूषित कर रहे हैं। सड़कों पर नालियों में प्लास्टिक और ठोस कचरा ऐसे ही बहाया जा रहा है. जिससे पानी भी प्रदूषित हो रहा है और हवा भी प्रदूषित हो रही है। इसे बचाना हर इंसान का कर्तव्य है। तभी पर्यावरण की इस अमूल्य धरोहर को आने वाली पीढ़ियों के लिए बचाया जा सकेगा। पर्यावरण संरक्षण संगठन हमारे देश में पर्यावरण को बचाने के लिए कई सरकारी और गैर-सरकारी संगठन उत्कृष्ट कार्य कर रहे हैं। बॉम्बे नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी, वर्ल्ड वाइड फंड फॉर नेचर, इंडिया साइंस सेंटर फॉर साइंस एंड एनवायरनमेंट, सीपीआर इन मेंटल एजुकेशन सेंटर, सेंटर फॉर एनवायरमेंट एजुकेशन, भारती विद्यापीठ, इंस्टीट्यूट ऑफ एनवायरनमेंट, पर्यावरण संरक्षण संगठन, इंस्टीट्यूट ऑफ एनवायरनमेंट एजुकेशन एंड रिसर्च, उत्तराखंड सेवा निधि, कल्पवृक्ष, सलीम अली सेंटर फॉर ऑर्निथोलॉजी एंड नेचुरल हिस्ट्री, वाइल्डलाइफ इंस्टीट्यूट ऑफ इंडिया, बॉटनिकल सर्वे ऑफ इंडिया, जूलॉजिकल सर्वे ऑफ इंडिया, मद्रास क्रोकोडाइल बैंक ट्रस्ट प्रमुख हैं। पर्यावरण के क्षेत्र में कई अंतरराष्ट्रीय ख्याति प्राप्त विचारक हुए हैं। इस क्षेत्र में उल्लेखनीय योगदान देने वालों में चार्ल्स डार्विन, पोल इमर्सन,

हेनरी थोरो, जॉन ऑल टू, लियोपोल्ड, रसेल कार्सन और ई.ओ. विल्सन शामिल हैं। चार्ल्स डार्विन ने ओरिजिन ऑफ स्पीशीज लिखी, जिसमें आवास प्रजातियों के संबंध पर प्रकाश डाला गया, हेनरी थोरो ने आवास के संरक्षण की बात की। वहीं रसेल कार्सन ने मशहूर किताब साइलेंट स्प्रिंग में सरकारी नीतियों में बदलाव की बात कही है.

सतत विकास और पर्यावरण आपस में घनिष्ठ रूप से जुड़ी हुई अवधारणाएँ हैं जो वर्तमान और भावी पीढ़ियों दोनों के लाभ के लिए ग्रह के प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण के महत्व पर जोर देती हैं। प्रत्येक के बारे में ध्यान रखने योग्य कुछ मुख्य बिंदु हैं: पर्यावरण: पर्यावरण ग्रह के सभी प्राकृतिक संसाधनों से बना है। इसमें हवा, पानी, भूमि, जैव विविधता और प्राकृतिक दुनिया बनाने वाले पारिस्थितिक तंत्र शामिल हैं। ईओ विल्सन, जो एक कीटविज्ञानी थे, ने जैविक विविधता के संदर्भ में पृथ्वी पर मनुष्य के अस्तित्व के बारे में बात की। हमारे देश में कई ऐसे व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने पर्यावरण का इतिहास रचा है, जिनमें पर्यावरण वैज्ञानिक, प्रशासक, कानून के विशेषज्ञ, शिक्षाविद् और पत्रकार शामिल हैं। सलीम अली पक्षी विज्ञानी और मुंबई नेचुरल हिस्ट्री सोसाइटी के विशेषज्ञ रहे हैं, एसपी गोदरेज वन्यजीव संरक्षण और प्रकृति संबंधी जागरूकता कार्यक्रमों के समर्थक रहे हैं। एमएस स्वामीनाथन एक कृषि वैज्ञानिक रहे हैं जिन्होंने कृषि वनों की जैविक विविधता के पक्ष में अपने विचार दिये। गाडगिल एक पर्यावरणविद् रहे हैं जिन्होंने जैव विविधता के विकास और पर्यावरण की विविधता के संरक्षण पर काम किया है। एमसी मेहता एक प्रसिद्ध पर्यावरण वकील हैं जिनकी जनहित याचिका ने सरकार को स्कूलों और कॉलेजों में पर्यावरण शिक्षा शुरू करने के लिए प्रेरित किया, जिसमें ताज महल का संरक्षण, गंगा नदी की सफाई, समुद्र तटों पर झींगा पालन पर प्रतिबंध आदि शामिल हैं। कई पर्यावरणीय मुद्दे शामिल। अनिल अग्रवाल जो एक पत्रकार थे, स्टेट्समैन ऑफ इंडिया ने पहली रिपोर्ट लिखी थी जिसमें पर्यावरण संरक्षण के लिए एनजीओ चलाने की बात कही गई थी। मेधा पाटकर आदिवासी समाज का प्रतिनिधित्व करते हुए उन्होंने नर्मदा बांधों को नष्ट होने से बचाने के उपाय के तहत आंदोलन किया। चिपको आंदोलन के लिए सुंदरलाल बहुगुणा को पूरी दुनिया में अंतरराष्ट्रीय ख्याति मिली, वह शख्स जिन्होंने पहाड़ों की संवेदनशीलता को बताकर चिपको आंदोलन के महत्व को सार्थक किया। दरअसल वैज्ञानिक भी मानते हैं कि यदि संसाधनों का अत्यधिक उपयोग या दुरुपयोग होता रहा तो जैविक सिस्टम उनकी भरपाई नहीं कर पाएगा. अत्यधिक उपयोग का बढ़ता दबाव एक महत्वपूर्ण बिंदु पर उनके प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ देता है। पूर्व में जिन जैविक संसाधनों को नवीकरणीय की श्रेणी में रखा जाता था। अत्यधिक दोहन के कारण आज ये संसाधन समाप्ति की कगार पर हैं। अत्यधिक उपयोग के कारण जैविक संसाधनों का दुरुपयोग हो रहा है। वैज्ञानिकों का मानना है कि ऐसा भी हो सकता है कि मानवीय भूल के कारण यह संसाधन हमेशा के लिए खत्म हो जाए। कोई भी प्राकृतिक संसाधन अनंत नहीं है और यदि हम नवीकरणीय संसाधनों का आज की तरह गहनता से उपयोग करना जारी रखेंगे तो वे तेजी से समाप्त हो जायेंगे। संसाधनों के निर्वहन एवं असमान उपयोग को कम करना तथा जनसंख्या वृद्धि को रोकना न केवल हमारे राष्ट्र बल्कि प्रत्येक मानव जाति की सुरक्षा के लिए आवश्यक है, हमारा पर्यावरण हमारे दैनिक जीवन में आवश्यक कई प्रकार की वस्तुएँ एवं सेवाएँ प्रदान करता है, लेकिन प्रकृति से हम इसका आधार बनते हैं। जो पाया गया है वह यह है कि दुनिया भर के देशों के विभिन्न हिस्सों में मिट्टी की जलवायु और सौर ऊर्जा जैसे घटकों का वितरण एक समान नहीं है और यह विभिन्न देशों के बीच और विभिन्न समुदायों के बीच राष्ट्रीय स्तर पर एक नई आर्थिक व्यवस्था का आधार भी है। देशों को अधिक समान वितरण होना चाहिए। असमानता स्थानीय स्तर पर सबसे अधिक है, जहां लोग उपलब्ध संसाधनों पर रहते हैं। असमानता स्थानीय स्तर पर सबसे अधिक है, जहां लोग स्थानीय रूप से उपलब्ध संसाधनों की मदद से रहते हैं, हममें से प्रत्येक को पर्यावरण के सिद्धांतों का पालन करना चाहिए जिंदगी आसान बनाओ। इसका मुख्य आधार पृथ्वी की हर प्रकार से देखभाल करना है, हमने प्राकृतिक संसाधनों का असंवेदनशीलतापूर्वक उपयोग किया है। सबसे बड़ी भावना जो इसकी भावना पैदा करती है वह है प्रकृति के प्रति प्रेम की भावना, किसी भी राष्ट्र के विकास के लिए विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों जैसे जंगल, जल, भूमि, भोजन, खनिज और ऊर्जा संसाधनों का महत्वपूर्ण योगदान होता है, लेकिन उन संसाधनों का उपयोग और दोहन महत्वपूर्ण है। आधुनिक समाज में हो रहा है. यह कई अन्य समस्याओं को भी जन्म दे रहा है, यदि हम मानव वर्ग की समृद्धि देखना चाहते हैं तो इन संपत्तियों की रक्षा करने की आवश्यकता है, सुरक्षा का अर्थ और संपत्तियों का योजनाबद्ध प्रबंधन करना होगा ताकि उनका आसानी से शोषण न किया जा सके। संरक्षण प्रयासों का एक लक्ष्य प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करना है ताकि उनका उपयोग किया जा सके और उस समय पर्यावरणीय क्षति कम हो। यह तर्कसंगत उपयोग से ही संभव है, इसमें टिकाऊ उत्पादन, विघटित संसाधनों का सुधार, सुरक्षा, पुनः उपयोग, दुर्लभ संसाधनों

के स्थान पर वैकल्पिक संसाधनों का उपयोग शामिल है। हालाँकि संरक्षण के प्रयास किए जा रहे हैं, प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में व्यक्तिगत प्रयास बहुत फायदेमंद साबित हो सकते हैं। संसाधन प्रकृति की अमूल्य धरोहर हैं, इसलिए हम सभी का व्यक्तिगत दायित्व है कि हम भावी पीढ़ी को समझाएं कि बूंद-बूंद से घड़ा भरता है।

दिए गए अध्याय के अवलोकनात्मक विवरण के आधार पर यह कहा जा सकता है कि प्रत्येक नागरिक को पर्यावरण शिक्षा का ज्ञान होना चाहिए। इससे प्राकृतिक विरासत के प्रति स्नेह और सम्मान की भावना बढ़ेगी। जो आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वच्छ और सुरक्षित वातावरण बनाए रखने में बहुत बड़ी भूमिका निभाएगा।

पर्यावरणीय मुद्दों से संबंधित शिक्षा के मुख्य पहलुओं में मानवीय मूल्यों, सामाजिक मूल्यों, सांस्कृतिक और धार्मिक मूल्यों, नैतिक मूल्यों, वैश्विक मूल्यों और आध्यात्मिक मूल्यों को बढ़ावा देना आवश्यक है। पर्यावरण और समाज एक दूसरे से निकटता से जुड़े हुए हैं। वस्तुतः पर्यावरण और समाज परस्पर एक-दूसरे पर निर्भर हैं। मानव सभ्यता के विकास के विभिन्न चरणों के दौरान विभिन्न प्रकार के सामाजिक वर्ग और संरचनाएँ उभरीं और विकसित हुई। मुख्य रूप से प्राकृतिक पर्यावरण पर आधारित यह सामाजिक संरचना एवं संगठन मनुष्य द्वारा संग्रहित संसाधनों को प्रतिबिंबित करता है, एक ओर प्राकृतिक पर्यावरण ने उन संगठनों के विकास एवं संवर्धन में मानव समाज की विभिन्न संरचनाएं प्रदान की हैं, तो दूसरी ओर पर्यावरण की गुणवत्ता और इसका अस्तित्व मानव समाज की विशेषताएँ हैं। पर्यावरण की संरचना, गुणवत्ता, पृथ्वी की प्राकृतिक व्यवस्था के विघटन तथा पर्यावरण प्रदूषण आदि के आधार पर प्राकृतिक संसाधनों के वर्णन आदि के आधार पर बिना किसी हिचकिचाहट के कहा जा सकता है कि आज समाज संवेदनशील एवं जागरूक हो गया है। पर्यावरणीय मुद्दों की ओर. समुदाय का हित भावनात्मक स्तर पर पहुंच गया है। जनता को अपनी समस्याओं के प्रति जागरूक करने की जरूरत है। पर्यावरण सुधार के उपाय महंगे हैं और उनके कार्यान्वयन के लिए समय, धन और संसाधनों के दीर्घकालिक निवेश की आवश्यकता होती है। इन कारकों के अभाव में पर्यावरण जागरूकता पर जोर ढीला हो सकता है, पर्यावरण सुधार योजनाओं का कार्यान्वयन रुक सकता है और जनता तथा पर्यावरण के प्रति संकट की स्थिति पैदा हो सकती है। पर्यावरण और समाज के बीच अंत:क्रिया सामाजिक और राजनीतिक पर निर्भर करती है ऐसी प्रणालियाँ जिनमें पर्यावरणीय और पारिस्थितिक समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। पारिस्थितिक देशों में एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र में क्षेत्रीय असमानताओं के कारण प्राकृतिक संसाधनों का समान वितरण, असमान आर्थिक और सामाजिक विकास, जनसांख्यिकीय कारकों में असमानता और पर्यावरण के प्रति सरकारों और व्यक्तियों के दृष्टिकोण में विभिन्न प्राकृतिक संसाधनों के विकास की दर के कारण। आधुनिक प्रौद्योगिकी के संसाधनों का उपयोग। पश्चिमी देशों की पूंजीवादी शासन व्यवस्था का संरक्षण विरोधाभासी है। जिसके कारण पर्यावरण एवं प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण का लक्ष्य आसानी से प्राप्त करना कठिन है।

संदर्भ

- पर्यावरण एवं पारिस्थतिकी, नीरज नचिकेता
- पर्यावरण एवं पारिस्थतिकी दृष्टि आईएएस
- The Great Derangement: Climate ChangeAnd the Unthinkable byAmitav Ghosh
- Green Wars: Dispatches fromA Dying Planet by Bahar Dutt
- The Vanishing: India’s Wildlife Crisis by Prerna Singh Bindra
- Islands in Flux: TheAndamanAnd Nicobar Story by Pankaj Sekhsaria
- And Less ResourcesAllocated to Their Conservation: From Soup to Superstar by Kartik Shanker
- The Great Smog of India by Siddharth Singh
- Environment, DevelopmentAnd Sustainability: https://link.springer.com/journal/10668

संत कबीर के काव्य में पर्यावरणीय चेतना

सिद्धार्थ कुमार

सहायक आचार्य, हिन्दी विभाग, शिवहर्ष किसान पी जी कॉलेज, बस्ती उत्तर प्रदेश

शोध सार-

मध्यकालीन संत काव्य धारा में प्रखर विद्वान, गहन समझ रखने वाले संत, समाज को तार्किक बनाने की क्षमता रखने वाले कवि, समाज में फैली कुरीतियों एवं वाह्य आडंबरों का डटकर विरोध करने वाले संत, आध्यात्मिकता के शिखर महापुरुष, प्रकृति की गोद में बैठकर हस्तशिल्प कार्य में अव्वल, श्रमिक समाज के कर्णधार, चरखे से सूत करते कर्मयोगी संत कबीर हमारे सामने दिखाई देते हैं। साथ ही साथ पर्यावरण प्रेमी का रूप भी हम संत कबीर को देख सकते हैं। संत कबीर साहित्य में एक तरफ जहां वेदांत के तत्व ज्ञान, माया, प्रेम और वैराग्य की गूढ़ता दिखाई पड़ती है, वहीं दूसरी ओर आपके साहित्य में प्रकृति संरक्षण और समाज सुधार की उज्ज्वल छटा दिखाई देती है। क्यों न आपके काव्य में आध्यात्म का तत्व ज्ञान मुख्य विषय रहा हो लेकिन प्रकृति एवं पर्यावरण का संरक्षण बृहद रूप में सन्त कबीर के काव्य में दिखाई देता है।

संत कबीर का जन्म ही प्रकृति की गोद में बीता भले ही वह किंवदंती के रूप में ही हमारे सामने दिखाई देती है लेकिन बहुतायत आलोचकों का मानना है कि वह प्रकृति की गोद में पले बढ़े। संत कबीर का जन्म सं.1455 वि. को जेष्ठ पूर्णिमा के दिन काशी के लहरतारा नामक स्थान पर रहस्यपूर्ण परिस्थितियों में अवतरित होकर इस महापुरुष ने प्रकृति व पर्यावरण के महत्व को आज से लगभग सवा छः सौ साल पहले समझ लिया था, तब जबकि पर्यावरण संकट की आज जैसी कोई समस्या न थी इसके बावजूद संत कबीर के काव्य में प्रकृति की सुंदर छटा जगह-जगह दिखाई पड़ती है और जीवन की कठिनतम परिस्थितियों से उबरने में हमें सहायता करती नजर आती है। कहा जाता है कि वृक्ष, नदी, पहाड़, वन, पर्वतों के संरक्षण की बात करने वाले संत कबीर के साहित्य में तमाम उद्धरण उन्हें पर्यावरण का प्रहरी सिद्ध करती हैं वे लिखते हैं-

> कबीर मानुष जनम दुर्लभ है, देह न बारंबार।
> तरवर थै फल झाड़ि पड्या, बहुरि न लागै डार।।[1]

अर्थात जिस प्रकार संसार में मनुष्य का जन्म कठिनता से मिलता है, उसी प्रकार लाख प्रयत्न करने पर भी एक बार डाल से तोड़ा गया पत्ता वापस जोड़ा नहीं जा सकता। अतः मनुष्य को यह ध्यान देना चाहिए कि जिस कर्मकांड के लिए हरे-भरे पेड़ों को नष्ट कर रहे हैं वह सब व्यर्थ है कबीर की दृष्टि में यह निरर्थक है-

> पाती तोरै मालिनी, पाती-पाती जीउ।[2]

कबीर कहते हैं कि प्रत्येक पत्ती में जीवों का निवास स्थान है उसे अनावश्यक हानि कभी नहीं पहुंचानी चाहिए। वह कहते हैं कि पेड़-पौधे, धरती, आकाश यह सदैव बने रहने चाहिए। वे पृथ्वी माता के प्रति कृतज्ञता जताते हुए कहते हैं कि हमारी उत्पत्ति जिस पृथ्वी माता से हुई है वह हमें अपने जीवन को चलाने के लिए अन्न, फल, हवा, पानी सभी प्रदान करती है किसी से भेद नहीं करती न ही इसे अपना गुण मानती है-

> सबकी उतपति धरती, सब जीवन प्रतिपाल।
> धरती न जाने आप गुन, ऐसा गुरु विचार।।[3]

ऐसी अप्रतिम सहनशीलता और महान कर्तव्य भाव के कारण कई बार वह गुरु से भी बड़ी प्रतीत होती है। इसी प्रकार पृथ्वी, पुत्र और वृक्ष भी परोपकार से काम नहीं हैं। वह किसी का पक्षपात न करते हुए सभी को एक समान रूप से फल और छाया प्रदान करते हैं। निरीह पशु पक्षियों को आश्रय देता है। प्राणवायु ऑक्सीजन का संचार करता है। उसके फल-फूल, पत्ते और लकड़ी पृथ्वी के हर एक जीव के काम आता है। कबीर अपने शब्दों में कहते हैं वृक्ष का वृक्षत्व उसके इसी परोपकार भाव में निहित है-

> वृक्ष कबहु नहीं फल भखै, नदी न संचय नीर।
> परमारथ के कारने, साधुन धरा शरीर।।[4]

कहने का अर्थ यह है कि दूसरे के उपकार के लिए ही जीवन धारण करते हैं। इनका यह व्यवहार सज्जनों के स्वभाव के समान है किंतु स्वार्थी मनुष्य को इसकी परवाह नहीं। वह अपने सुख भोग के लिए अपने स्वाद के लिए घास और पत्ती खाने वाले पशु पक्षियों को भी मारकर खा जाते हैं, जबकि पशु-पक्षी हमारे पर्यावरण के लिए अति महत्वपूर्ण अंग है। कबीर इसे बड़ी गंभीरता से विचार करते हैं और लोगों को शाकाहार होने की प्रेरणा देते हुए कहते हैं-

बकरी पाती खात है, ताको काढ़ी खाल।
जो नर बकरी खात है, तिनकों कौन हवाल।।[5]

संत कबीर पेड़-पौधों व जीव-जगत के संरक्षण और पर्यावरण के संरक्षण को धार्मिकता से जोड़कर मनुष्य को प्रकृति की गोद में सहजता और सादगी से जीवन जीने के लिए प्रेरित करते हैं। यहां तक की रोजमर्रा के जीवन में आने वाली व्यावहारिक कठिनाइयों का समाधान भी वे प्रकृति के आश्रय में खोजते दिखाई पड़ते हैं-

कबीर तन पंछी भया, जहां मन तहां उड़ि जाइ।
जो जैसी संगत करै, सो तैसे फल खाइ।।[6]

उपर्युक्त पंक्तियों के माध्यम से कबीर ने मनुष्य के सामाजिक जीवन में सत्संगति का महत्व बताने के लिए पक्षी के रूप में प्राकृतिक प्रतीक का सहारा लिया है। इसी तरह में बगुले और कौवे के प्रतीक के माध्यम से संसार में सफेद पोश लोगों की पोल खोलते हैं। ऐसे उद्धरण उनके लोक जीवन विषयक सूक्ष्म ज्ञान के परिचायक हैं। कबीर कहते हैं कि अनियंत्रित सांसारिक कामनाएं और चिंताएं ही कष्टों की जड़ हैं। जिसने इन कामनाओं से मुक्ति पा लिया वही इस संसार का श्रेष्ठ प्राणी है। सही मायने में कबीर अप्रतिम समाज सुधारक थे वे समाज में फैले बाह्यआडम्बर के साथ जनजीवन और प्रकृति के उत्थान की परवाह करते थे। दर्शन के इस महापुरुष की वाणी में विलक्षण नीतिमत्ता भी है और सहज प्रेरणा भी। उनकी वाणी में हमारे जीवन में वृक्षों के महत्व व पर्यावरण संरक्षण का पुनीत संदेश भी छिपा है। उनके इन जीवन सूत्रों को अपने जीवन में उतार कर कोई भी मनुष्य आज भी आनंदपूर्ण जीवन जी सकता है।

महान बीती सदी में वैज्ञानिक आइंस्टीन ने कहा था कि आधुनिक दुनिया में दो चीजें असीमित हैं- एक विश्व ब्रह्माण्ड तथा दूसरी मानव की मूर्खता। सौ फीसदी सच है उनका यह कथन। मनुष्य की खुद के पैर पर कुल्हाड़ी मारने वाली कारगुजारियों के चलते धरती का पर्यावरण आज बुरी तरह प्रदूषित हो गया है। देश दुनिया के जाने माने पर्यावरणविद् लगातार चेतावनी दे रहे हैं कि यदि हालात जल्द न सुधरे गहराती वायुमंडलीय विषाक्तता के कारण धरती पर मानव का अस्तित्व अगले कुछ दशकों में ही समाप्त हो जाएगा। तेजी से गरमाती धरती, अनियमित ऋतुचक्र, सूखा व बाढ़ की मार के साथ सुनामी जैसे तूफानों और भूकंप जैसी आपदाओं में अप्रत्याशित वृद्धि भयावह भविष्य का संकेत है। चिंता की बात है कि अतिशय सुविधाभोगी व विलासितापूर्ण जीवनशैली के अभ्यस्त होकर हम लोग अपने जीवन को खुद संकट में डालते जा रहे हैं।

आर्थिक विकास की सीढ़ियां चढ़ते समय हम लोगों ने यदि इसी तरह पर्यावरण की उपेक्षा करना जारी रखा तो तय मान लेना चाहिए कि हमारा सर्वनाश निकट है। इस आत्मघात से बचने का एकमात्र उपाय है आत्मवादी जीवन। प्रकृति से भावनात्मक साहचर्य ही इन्सान को नयी जिंदगी दे सकता है। वर्तमान की विषम परिस्थितियों में हम सब भारतवासी यदि उनके काव्य में अभिव्यक्त पर्यावरणीय चेतना के मर्म को अपने अंतस में उतार कर अमलीजामा पहना सकें तथा अपने स्तर पर आसपास के पर्यावरण को संवारने की छोटी-छोटी पहल कर सकें तो यही इस कालजयी संत को सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

निष्कर्षत: यह कह सकते हैं कि कबीर दर्शन के साथ-साथ समाज और प्रकृति के भी अच्छे ज्ञाता थे समाज को एक आईना दिखाते हैं, समाज को तार्किकता और बौद्धिकता के साथ-साथ पर्यावरण के संरक्षण और संवर्धन की बात अपने पंक्तियों के माध्यम से कहते हैं, इसलिए संत कबीर के काव्य में पर्यावरण चेतना आज भी प्रासंगिक है। वे सभी जीवो एवं प्राकृतिक संपदा के संरक्षित करने की बात कह गए जो समकालीन समय में प्रासंगिक है इस पर लोगों को संत कबीर की बातों पर जरूर विचार करना चाहिए तभी इस धरा पर मानव जीवन संभव हो पाएगा।

सन्दर्भ:

1. श्यामसुंदर दास (संपादक), कबीर ग्रंथावली, लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ 67
2. डॉ रामकुमार वर्मा, संत कबीर, साहित्य भवन प्राइवेट लिमिटेड इलाहाबाद, पृष्ठ 56
3. सदगुरु कबीर साहब कृत बीजक, विवेक प्रकाशिनी, टीकाकर, साध्वी ज्ञाननंद जी, श्री कबीर ज्ञान प्रकाशन केंद्र झारखंड, पृष्ठ 478
4. कविता कोश, कबीर दोहावली, दोहा संख्या 912, पृष्ठ 10
5. आचार्य रामचंद्र शुक्ल, हिंदी साहित्य का इतिहास, प्रयाग पुस्तक सदन, प्रयागराज, पृष्ठ 46
6. श्यामसुंदर दास (संपादक), कबीर ग्रंथावली, लोक भारती प्रकाशन, प्रयागराज, द्वितीय संस्करण 2011, पृष्ठ 86

पर्यावरण संरक्षण में वैदिक कालीन पर्यावरणीय शिक्षा की प्रासंगिकता

डॉ० अजीत शुक्ल

सहायक आचार्य, शिक्षाशास्त्र विभाग, साईनाथ विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड

पर्यावरण की अवधारणा बहुत प्राचीन है। भारतीय मनीषियों ने इस अवधारणा का मूल्यांकन हजारों वर्ष पूर्व किया था। प्रकृति और जीव के अन्तर्सबंधों को जन-जन को बोध कराने के लिए विविध प्रतीकों के रूप में उन्हें धर्म, सामाजिक नियम और आचरण में समाहित कर दिया था। यही कारण है कि हजारों वर्ष तक यह सम्बन्ध मित्रवत् चलता रहा लेकिन आधुनिकता के प्रभावा में पुरानी परम्परा और आचरण को नकार दिया गया इससे प्रकृति और जीव के सम्बन्ध बिगड़ने लगे। आज पूरा विश्व यदि किसी समस्या को लेकर चिन्तित है तो वह पर्यावरण की समस्या है। विकास की अन्धी दौड़ में मनुष्य को यह एहसास तक नहीं हुआ कि वह विनाश की ओर तेजी से भाग रहा है। ऊर्जा की अंधाधुंध खपत, वनों की बेशुमार कटाई, अनायास प्रकृति का निर्भय शोषण आदि ने प्रकृति और मनुष्य के बीच का सारा संतुलन गड़बड़ा दिया है। प्रकृति पर विजय की लालसा ने मनुष्य को इतना निष्ठुर बना दिया कि वह उसके विनाश पर ही तुल गया- कालीदास की तरह, जिस टहनी पर बैठा था, उसे ही काटने लगा।

मानव जीवन की कुछ आधारभूत वस्तुओं यथा वायु, जल, मृदा आदि की गुणवत्ता में ह्रास ने यह सोचने के लिए बाध्य किया है कि पर्यावरण का अतिक्रमण परिस्थितियों को बिगाड़ रहा है। यदि परिस्थितिकी इस तरह नष्ट होती गयी तो सम्पूर्ण जैव जगत् का जीवन संकटमय हो सकता है और अंततः महाविनाश भी हो सकता है। स्पष्टतः पारिस्थितिकी गुत्थियों को समझना और उनके समाधान के लिए उपाय ढूँढना आज की सामाजिक आवश्यकता है। आधुनिकता के नाम पर मनुष्य ने अपने भौतिक स्वार्थ की पूर्ति के लिए पर्यावरण पर लगातार चोट पहुँचाई, पर्यावरण की अवमानना उसकी आदत सी बन गयी। प्रकृति विजय का स्वप्न देखते-देखते वह भूल गया कि मनुष्य भी प्रकृति पुत्र है, उसकी जिन्दगी का आधार नैसर्गिक वस्तुएँ है जिनकी गुणवत्ता बनाए रखना मानव मात्र का परम कर्त्तव्य है। हमारी भूल का प्रतिफल प्रदूषण, दैवीय प्रकोप और सांस्कृतिक समस्याओं के रूप में प्रकट होने लगा है। कुछ संकट तो मानव अस्तित्व के लिए प्रश्नचिन्ह बनते जा रहे है। ग्रीन हाउस और ओजोन क्षरण ऐसे ही कुछ संकट विकट है जो सम्पूर्ण जीव जगत् को निवाला बनाने पर अमादा है।

आज जब पर्यावरण संतुलन लगभग बिगड़ चुका है तब नादान मनुष्य संताप करने बैठा है। उसे क्या पता था कि वनों की लकड़ी काटते-काटते वह अपनी किस्तम पर भी कुल्हाड़ी चला रहा है। उसे क्या पता था कि कारखानों का दूषित जल नदियों और समुद्र में डालकर वह न केवल मछलियों और जलीय-जन्तुओं का ही जीवन समाप्त कर रहा है अपितु अपनी जीवन रेखा को भी छोटी करता जा रहा है। वायुमण्डल को कार्बन-डाई-आक्साइड से भरकर हवा की ताजगी को ही नष्ट कर रहा है। पर्यावरण की महत्ता अब मनुष्य की समझ में आई है और इसी महत्ता का दूसरा नाम है 'पर्यावरण-शिक्षा'। मनुष्य और प्रकृति के सह-सम्बन्धों को सही दिशा में विकसित करना ही पर्यावरण शिक्षा का अभिमत है।

पर्यावरण शिक्षा प्राचीन भारतीय शिक्षा संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। भारतवर्ष में प्रकृति और मनुष्य के बीच संतुलन सदियों-सहस्राब्दियों पुराना है। यहाँ मनुष्य और प्रकृति के बीच एक मीठा सा सह-सम्बन्ध रहा है। न तो मनुष्य ने प्रकृति के सौन्दर्य के साथ छेड़छाड़ की और न ही उसे लूटने की तहजीब ही बिठाई, दूसरी तरफ प्रकृति ने भी दिल खोलकर उसे अपना प्यार, दुलार, ममता सब कुछ दिया।

भारत में पर्यावरण संरक्षण की परम्परा प्रारम्भ से ही रही है। हमारी संस्कृति में प्रकृति को देवी और देवता के रूप में स्वीकार किया गया है। आज भी भारत में बरगद, पीपल, आंवला, तुलसी और नीम के वृक्षों की पूजा की जाती है। केले और आम के पत्तों को महत्त्व दिए बिना विवाह संस्कार तक शुभ नहीं समझे जाते है। यहाँ जलीय जीवों को चारा चुगाया जाता है तथा जीव-जन्तु हमारे उपासना के पात्र हैं। जहाँ शेर माँ दुर्गा का वाहन है तो वहीं हंस माँ सरस्वती और उल्लू माँ लक्ष्मी के वाहन के रूप में सुशोभित है। वेद, जिन्हें अरण्यक कहते है, इनकी रचना वनों में ही हुई थी। ये वनों में गाए गए गीत है।

ऋषि-मुनियों ने वनों में ही तपस्या की थी। यज्ञ-हवन द्वारा वायु तथा वातावरण की शुद्धि करना भारतीय मनीषियों की दैनिक दिनचर्या में शामिल था। नदियाँ और पहाड़ हमारे आध्यात्मिक आस्था के केन्द्र बिन्दु है।

प्राचीनकाल सदा से प्रकृति के साथ आत्मीय संवाद का पक्षधर रहा है। विकास के नाम पर पर्यावरण असंतुलन का पक्षधर वह कभी नही रहा। आत्मीय संवाद से सृजनात्मकता आती है। सृजनात्मकता चरित्र को उज्जवल बनाती है और सच्चरित्र मनुष्य किसी का भी संहार या विनाश नही कर सकता। हमारे वेद इस तथ्य की पुष्टि करते है। भारतीय-मनीषी परम्परा से जनमानस में इस चेतना का संचार करता है कि उन्हें प्रकृति के साहचर्य में ही सुख मिल सकता है, अन्यत्र नही। मौन घाटी की शांति को बचाने के लिए केरल वासियों ने जो संघर्ष किया वह इसी प्राचीन परम्परा की विचारधारा का परिणाम था। उत्तराखण्ड के सुसंस्कृत लेकिन गरीब लोगों ने जिस प्रकार 'चिपको आन्दोलन चलाया' वह भी प्रकृति के साथ तादात्म्य की एक आधुनिक कला है, जिसका पालन हर प्रकृति प्रेमी करना चाहता है।

प्रकृति की गोद में जन्मी पली-बढ़ी भारतीय प्राचीन परम्परा हमें जीवन के उस परमानन्द की ओर ले जाती है जो ''सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामया'' की पावन भावना से सराबोर है।

प्राचीनकाल में पर्यावरण शिक्षा की पृष्ठभूमि-

पर्यावरण का विकास तो सृष्टि के आरम्भ से पहले हो गया था, लेकिन जब से मानव ने चिन्तन प्रारम्भ किया एवं उसने अपने भाव प्रदर्शित करते हुए स्वयं के परिवेश को समझने-समझाने का प्रयास किया तभी से पर्यावरण शिक्षा का श्रीगणेश माना जा सकता है। प्राकृतिक घटनाओं से पूर्णतः प्रभावित होते हुए भी मानव ने अपनी सहज बुद्धि से प्रकृति की प्रतिकूल घटनाओं से सुरक्षा पाने हेतु तत्काल चिन्तन प्रारम्भ कर स्वयं के लिए अनुकूल परिवेश का निर्माण शुरू किया होगा। यही सारी प्रक्रियाएँ प्राकृतिक भूतल पर शनैः शनैः प्रारम्भ हुई। अतः मानव ने भूतल के भौतिक परिवेश एवं नव विकसित सांस्कृतिक परिवेश में डुबकी लेकर भविष्य के निर्माण का मार्ग तभी से प्रशस्त किया होगा।

भारत में अनादिकाल से ज्ञान गंगा बहती रही है। वर्तमान में प्राचीन भारतीय ग्रन्थों, उनके योगदान, उनकी प्रकृति, लक्षणों एवं अनेक वास्तविक मंतव्य पर विचार किया गया है। वेद चार है ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद वेदों को प्राचीन मनीषियों ने ब्रह्मवाक्य माना। इसका एक-एक मंत्र और एक-एक शब्द सत्य, शाश्वत और अक्षुण्य माना गया। यदि वेदों का गहराई से अध्ययन किया जाय तो स्पष्ट ज्ञात होगा कि वेद ज्ञान और विज्ञान का अलौकिक भण्डार है। इनकी रचना किसी एक ऋषि या सामान्य विद्वान की देन नही हो सकती। क्योंकि उनके प्रत्येक मंत्र का गूढ़ अर्थ है, प्रत्येक मंत्र का भाव दृष्टा है और किसी अन्य को सम्बोधित है। ऐसा प्रतीत होता है कि मानो प्राचीनकाल में ऐसा कोई माध्यम, केन्द्र या संख्या रही होगी जहाँ सर्वोत्कृष्ट रचनाओं की मंत्र के समान मूल्यवान मानकर उन्हें इन ग्रन्थों में बहुत महत्वपूर्ण या विशिष्ट स्थान दिया गया। वेदों में सृष्टि रचयिता परमेश्वर या ब्रह्म, उसकी प्राथमिकता रचना ब्रह्म सूर्य त्रिदेव अन्य शक्तियाँ एवं गणेश जैसी आदि शक्तियों का भी वर्णन मिलता है। इसके अतिरिक्त पर्वत, नदियाँ, सागर एवं सुमेरू पर्वत का महत्त्व जलवायु वनस्पति (वृक्ष, विरूद्ध, ऋण) आदि का वितरण तथा सभ्य एवं जनजातियाँ पशु, कृषि का वर्णन किया गया है। देश व विदेशों में इतना अधिक अध्ययन एवं शोध किया गया है एवं लिखा गया है तथा ऐसे विशेष शोध ग्रन्थ व लेख प्रस्तुत किये गये है जिनके आधार पर प्राचीन ग्रन्थों के तथ्यात्मक स्वरूप की अब मात्र कल्पना नहीं माना जा सकता।

वैदिक काल में पशु-पक्षियों तथा पौधों के महत्त्व का उल्लेख मिलता है। उपनिषदों में भी मानव एवं पर्यावरण की पारस्परिक निर्भरता का उल्लेख है। जिसमें पर्यावरण की शुद्धता के लिए यज्ञ और हवन को महत्त्व दिया गया है और वनों की रक्षा की बात कही गयी है। वेद, पृथ्वी को सुख-समृद्धि तथा विकास का स्रोत मानते थे। वेदों में सूर्य की आराधना में सूर्य को ''सूर्य देवो भव'' कहा गया है। इसी प्रकार वायु और जल को भी महत्त्व दिया गया है। जहाँ दस तालाब के बराबर एक पुत्र तथा दस पुत्रों के बराबर एक वृक्ष होता था। वृक्षों को काटना पाप समझा जाता था। गौ हत्या पर मनुष्य को समाज से वहिस्कृत कर दिया जाता था। इस तरह से वेदों तथा पुराणों तथा धर्म ग्रन्थों में पर्यावरण को सुरक्षित रखने के विशेष प्रावधान बनाये गये थे।

वैदिक कालीन पर्यावरण शिक्षा का वर्तमान समय में प्रासांगिकता-

यदि देखा जाय तो हमारी संस्कृति का एक मूलमंत्र अहिंसा परमोधर्माः भी मानव की स्वार्थ सिद्ध की बलि चढ़ गया है। यह मात्र केवल हमारे लिए ही नही था अपितु सम्पूर्ण विश्व एवं चर-अचर जगत सभी के जीवन की खुशहाली काोतक है।

वन और प्राकृतिक जीवन मानव जीवन की एक निश्चित दिशा प्रदान करते है। मानव प्राकृतिक जीवन की वृद्धि के साथ-साथ निरन्तर सम्पर्क में था वह अपनी चेतना का विकास आस-पास की भूमि से करता था। मानव और प्रकृति के बीच इस तारतम्य ने पर्यावरण को आत्मार्पित करने के शांतिपूर्ण एवं बेहतर तरीकों को जन्म दिया मानो सामाजिक आत्मीकरण की अधिक उपयोगिता थी न कि जैविक आत्मीयकरण की।

परन्तु वर्तमान समय में पशुओं की उपयोगिता को कोई महत्त्व प्रदान नहीं किया जा रहा है। सभी प्रकार से मनुष्य भौतिकता में लिपटता जा रहा है। पाश्चात्य संस्कृति हावी है। पशुओं को काटकर उनके मांस को विदेशों में भेजा जा रहा है, वर्तमान समय मे पशुओं की संख्या मे काफी कमी आयी हैं। जो गाय अधन्या थी (प्राचीनकाल में) वर्तमान समय में इसका कोई महत्व नही है जो प्राचीन काल में गाय के गोबर, मूत्र, दूध, घी की विशेषता बतलायी गयी थी वर्तमान समय में ये सब भूल गया है। इसीलिए अनेक प्रकार की बीमारी से मनुष्य परेशान रहने लगा है। इसीलिए वर्तमान समय में भी पशुओं के महत्ता को प्राचीन ग्रन्थों से सीख लेना चाहिए और उनके प्रति आदर भाव रखना चाहिए।

यो देवो दगनो यो दुत्सुयोविश्व भवनमां विवेश,
यो औषधित्क्षिक यो वनस्पतिषु तस्मै देवाम् नमोनमः।। यजुर्वेद

अर्थात् जो अग्नि, जल, आकाश, पृथ्वी एवं वायु से आच्छादित है तथा जो वनस्पति एवं औषधियों में भी विधमान है उस पर्यावरण देव को हम नमन करते है। पर्यावरण शिक्षा का प्रसार समाज में पर्यावरण संरक्षण की सोच विकसित करने में सहायक है। पर्यावरण शिक्षा एक ऐसी शिक्षा है जो इंसान को प्रकृति के साथ जीने का सलीका सिखाती है। यह एक रास्ता बताती है जो मनुष्य की विकास यात्रा और प्रकृति के पारिस्थितिकी तंत्र के बीच में समन्वय और संतुलन का मार्ग है। यह प्रकृति के भूगोल तथा मनुष्य के इतिहास को साथ-साथ रहना सिखाती है।

विनाश के नाम पर प्रकृति के साथ मानव की छेड़छाड़ और अतिचारिता के चलते आज धरती, समुद्र, हवा, पानी, जीव-जन्तु, वन और वनस्पतियों के साथ-साथ मानव और पृथ्वी के अस्तित्व को भी गम्भीर खतरा पैदा हो गया है, राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर यह अनुभव किया जा रहा है कि पर्यावरण अपघटन के विरूद्ध एक व्यापक जन आन्दोलन खड़ा करने से पहले पर्यावरण साक्षरता का लक्ष्य प्राप्त करना नितान्त आवश्यक है। भारत जैसे विशाल किन्तु विकासशील देश के लिए यह कार्य और भी दुःखद और चुनौतीपूर्ण हो जाता है। पर्यावरण शिक्षा के बिना यह कार्य अधूरा ही रहेगा हमें इन ग्रन्थों के माध्यम से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि हम प्रकृति के साथ कैसे व्यवहार करें। जो पहले मनुष्य और प्रकृति के सम्बन्ध इतने मधुर और मैत्रीपूर्ण थे जो कि वर्तमान समय में कटुता की भावना पैदा हो गयी है। इसमें सुधार की आवश्यकता है जो कि प्राचीन ग्रन्थों से भी हमें सीख लेना चाहिए जिससे प्रकृति का संतुलन बना रहे नहीं तो गम्भीर परिणाम भुगतने के लिए तैयार रहे।

निष्कर्ष-

वैदिक कालीन पर्यावरणीय शिक्षा वर्तमान पर्यावरण संरक्षण में निम्नलिखित भूमिका अदा कर रही है जो निम्नवत् हैं-

1. भौतिक तथा जैविक पर्यावरण का संतुलन तथा शुद्धता लोगों की सामाजिक तथा सांस्कृतिक पर्यावरण की पवित्रता और नैतिकता पर आश्रित थी।
2. मनुष्य के सम्पूर्ण जीवन को आश्रम व्यवस्था के अन्तर्गत विशेष अनुशासन, संयम और नियम के अधीन रखा गया था जो कल्याणकारी सामाजिक पर्यावरण की संरचना करता था।
3. मानव जीवन को पवित्र तथा व्यवस्थित बनाने के लिए 16 प्रकार के विभिन्न संस्कारों प्रमुखतः गर्भधान संस्कार, पुंसवन संस्कार, सीमान्तोनयन संस्कार, नामकरण संस्कार, निष्क्रमण संस्कार, अन्नप्राशन तथा उपनयन संस्कार आदि का विधान था।
4. नदियों, जलाशयों तथा पर्वतों को माता व देवी, देवताओं के रूप में पूजा जाता था। जल में वरुण देवता का वास माना गया तथा जल में मल-मूल का त्याग व थूकना पापकर्म समझा जाता था।
5. वृक्षों, (पीपल, आंवला, बरगद, तुलसी, केला, नीम, अशोक आदि) को देवी-देवताओं के रूप में तथा पशुओं (गाय, वृषभ, चूहा, शेर, हंस, नाग, मोर) को देवी-देवताओं के वाहन के रूप में वंदनीय स्वीकारा गया।
6. अथर्ववेद के पृथ्वी सूक्त में कहा गया- ''हे! धरती माँ जो कुछ मैं तुमसे लूँगा, वह उतना ही होगा जिसे तू पुनः पैदा कर सके। तेरे मर्मस्थल पर या तेरी जीवन-शक्ति पर कभी आघात नहीं करूँगा।

7. वैदिक मंत्रों में सम्पूर्ण जगत् के लिए कल्याण एवं शान्ति की कामना की गयी हैं
8. ऋग्वेद तथा यजुर्वेद में नैतिक आचरण की शुद्धता एवं पवित्रता पर अत्यधिक बल दिया गया हैं
9. गीता में ज्ञान की प्राप्ति जिन तत्वों से होती है वे पुण्य है। इसके विपरीत जो ज्ञान की प्राप्ति में बाधा है वे पाप है।
10. गीता में सत्य, अहिंसा, दया, परोपकार, पुण्यकर्म है तथा असत्व, हिंसा, वर्बरता आदि पाप है।
11. रामायण में नैतिक, शारीरिक और आंशिक क्रियाएँ सम्मिलित है जिनमें मनुष्य की शक्ति और महत्ता बढ़ती है तथा एक संतुलित व्यक्तिगत व सामाजिक पर्यावरण का निर्माण सम्भव हो पाता है।
12. बौद्ध धर्म मं चार आर्य सत्य है- दु:खम, दु:ख समुदाय, दु:ख निरोध: तथा दु:ख निर्वाण मार्ग।
13. मानव जीवन के दु:खों के अंत हेतु अष्टांग मार्ग बताए गये है।
14. इस्लाम धर्म में भी कहा गया है- ''अल्लाह ने जो कुछ भी हमारे लिए बनाया है उसके अपव्यय की सख्त मनाही है और इस्लाम में यह निषेध है।''
15. जैन धर्म में अहिंसा तथा सभी प्रकार की इच्छाओं से मुक्ति पर बल दिया गया है।

अन्ततः यह अवधारित किया जा सकता है कि भारत के प्राचीन काल में निहित पर्यावरणीय शिक्षा उच्च नैतिक मूल्यों, आचरण की शुद्धता, अनुशासित व संयमित जीवन संतोष, सत्य, अहिंसा तथा प्रकृति के साथ सह-सामंजस्य से परिपूर्ण थी जिनका अनुपालन वर्तमान परिवेश में पर्यावरण संरक्षण हेतु अपरिहार्य है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. बुच, एम0वी0, फिफ्थ सर्वे ऑफ एजूकेशनल रिसर्च (वाल्यूम-5) प्रकाशन एन.सी.डी.आर., नई दिल्ली।
2. एम0के0 गोयल- पर्यावरण शिक्षा, आठवां संस्करण-2012, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
3. चन्द्रभूषण पाठक, पर्यावरणीय शिक्षा एवं प्रबन्धन, प्रथम संस्करण-2008, अनुभव पब्लिशिंग हाउस, इलाहाबाद
4. सिंह, डा0 रामपाल, शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, अग्रवाल पब्लिकेशन, आगरा।
5. डॉ0 एस0एम0 जैन, भौगोलिक चिन्तन का इतिहास, 1999 संस्करण, साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा।
6. माजिद हुसैन, प्रो0 जे.एन.यू. भौगोलिक चिन्तन का इतिहास, संस्करण-1998
7. आचार्य डॉ0 मुंशीराम शर्मा, ऋग्वेद अष्टक, 'सोम' प्रथम संस्करण, 1992
8. जयदयाल गोयन्दका, श्रीमद्भागवता, तिरयनवां संस्करण, सवंत-2056, प्रकाशक-गीता प्रेस, गोरखपुर
9. जयदयाल गोयन्दका, गीता-तत्वविचनीटीका- गीता प्रेस, गोरखपुर
10. पद्म भूषण आचार्य बलदेव उपाध्याय, संस्कृत साहित्य का इतिहास, दशम संस्करण-1978, पुनर्मुद्रण 1994
11. मेघदूतम्, प्रलेता श्री तारिसीश झा, नवीन संस्करण 1996 प्रकाशक- रामनारायण लाल विजय कुमार, 2 कटरा रोड, इलाहाबाद
12. अभिज्ञान शाकुन्तलम प्रणेता पदम्श्री डॉ0 कपिल देव द्विवेदी, 1997 संस्करण, प्रथम अंक

आधुनिक कविता में पर्यावरण चेतना की कुछ झलकियाँ

डॉ० शंकर कुमार

सहायक प्राध्यापक, हिंदी विभाग, सी.एम.जे कॉलेज, दोनवारीहाट, खुटौना, मधुबनी (बिहार)

साहित्य के सौंदर्य पक्ष में जहाँ कला-मूल्यों की प्रतिष्ठा होती है, वहीं उसका जीवनधर्मी रूप सामाजिक यथार्थ की बारीकियों में प्रवेश दिलाता है। हमारे जीवन और उसके सरोकारों की भाषा बोलते हुए साहित्य न केवल वैचारिक हस्तक्षेप करता है, बल्कि उसमें उस मूलभूत चेतना का समावेश भी मिलता है, जो हमारे जीवन की जरूरत है। इसलिए साहित्य की मानवीय प्रतिबद्धता में जन सरोकारों के प्रश्न विशेष मायने रखते हैं। इन्हीं प्रश्नों में प्रकृति और पर्यावरण संबंधी चेतना के कई पहलू हैं, जिन्हें आधुनिक हिंदी कविता व्यक्त करती रही हैं।

आधुनिक हिंदी कविता का विस्तार बड़ा है। भारतेंदु युग से लेकर समकालीन समय तक की इसकी यात्रा में प्रकृति और पर्यावरण के प्रसंग में कई रचनात्मक बदलाव देखे जा सकते हैं। इसके प्रारंभिक स्वरों में प्रकृति की मनोरम झाँकी को छायावादी दौर की रचनाएँ जीवंतता से प्रकट करती हैं। छायावादी कवियों में पंत की प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा का आधार प्रकृति के सुकुमार कवि के रूप में ही है। उनकी कविताओं में 'प्रथम रश्मि का आना रंगिणी' 'मौन निमंत्रण', 'छाया', 'बादल', 'एक तारा', 'नौका-विहार' आदि न सिर्फ प्रकृति की सुन्दर और स्निग्ध झाँकी प्रस्तुत करती है, बल्कि उसके भीतर मानवीय आकर्षण के राग-तत्त्व भी मिलते हैं। इसी तरह जयशंकर प्रसाद न सिर्फ प्रकृति के सुन्दर स्वरूप को सामने लाते हैं, बल्कि उसके वैभव के साथ मानवीय जीवन-दर्शन के गंभीर प्रश्नों को जोड़ कर उसकी परिधि का विस्तार कर देते हैं। कामायनी के 'श्रद्धा सर्ग' की पंक्तियाँ इस प्रसंग में देखी जा सकती हैं-

"प्रकृति के यौवन का श्रृंगार
बनेंगे कभी न बासी फूल
मिलेंगे वे जाकर अतिशीघ्र,
आह उत्सुक है उसकी धूल।
पुरातनता का यह निर्मोक
सहन करती न प्रकृति पल एक
नित्य नूतनता का आनंद
किये हैं परिवर्तन में टेक।"[1]

निराला में प्रकृति की संवेदना के आयाम और ज्यादा व्यापक हैं। उनका जीवन-संघर्ष और जन-सरोकार के प्रति रचनात्मक प्रतिबद्धता से 'बादल राग', 'जागो फिर एक बार', 'पतनोन्मुख' जैसी कविताएँ सामने आती हैं, जिनमें न सिर्फ प्रकृति का संदर्भ मानवीय चेतना को संघर्षधर्मी बनाता है, बल्कि युगानुरूप भी। 'बादल राग-6' की कुछ पंक्तियाँ यहाँ उद्धृत हैं:-

"हँसते हैं छोटे पौधे लघुभार-
शस्य अपार
हिल-हिल
खिल-खिल
हाथ हिलाते
तुझे बुलाते
विप्लव रव से छोटे ही हैं शोभा पाते।"[2]

हिंदी कविता का प्रगतिवादी दौर प्रकृति और जीवन को और भी करीब ला देने वाला दौर है। यहाँ जीवन का साधारण स्वरूप और उसकी गतिविधि के बीच प्रकृति की क्रियात्मक ऊर्जा चेतना का विस्तार करती है। इस विस्तार में हमारे अस्तित्व के जरूरी सवाल हैं, जिन्हे लगातार दुहराने की आवश्यकता है। जनकवि नागार्जुन 'धरती' शीर्षक कविता में लिखते हैं:--

"पौधों या पेड़ों में कभी नहीं फली हैं छुरियाँ
कंद की जड़ से कभी नहीं निकला है विस्फोटक बम
चरकर घास गाय ने दूध के बदले दिया नहीं हलाहल
सोखकर धरती का रस जहर नहीं बरसाता कभी भी बादल
निछावर हम इस पर
तुम्हारी नहीं हमारी है धरती
सुनो हे वज्रपाणि युद्धव्यसनी दानव!"[3]

नागार्जुन जिसे युद्धव्यसनी दानव कह रहे हैं, वे वही लोग हैं जो पर्यावरण या प्रकृति का दोहन करके अपना स्वार्थ सिद्ध करते हैं। धरती उसके लिए मात्र कारोबार है और वे उसे तरह-तरह से बेचते हैं। प्रगतिवादी कवि साधारण जनता, जो किसान है, मजदूर है, दलित है, सर्वहारा है, उसके पक्ष से धरती और पर्यावरण की संवेदना को जोड़ते हैं। यही कारण है कि इसी 'धरती' शीर्षक से केदारनाथ अग्रवाल भी कविता लिखते हैं और स्पष्ट कहते हैं कि

"यह धरती है उस किसान की
जो बैलों के कंधों पर
बरसात धाम में,
जुआ भाग्य का रख देता है,
खून चाटती हुई वायु में...
जोत डालता है मिट्टी को
पाँस डालकर
और बीज फिर बो देता है
नये वर्ष में नयी फसल के।"[4]

किसान, मजदूर और सामान्य जन का पर्यावरण और प्रकृति के साथ रिश्ता विशेष है, जो बदलाव और विकास के इस दौर में लगातार हाशिए पर जाता रहा है। हाशिए पर गया यह रिश्ता पर्यावरण को जिस तरह बदल रहा है, वह अब एक बड़ा डर बनाकर प्रकट हो रहा है। 'मौसम' शीर्षक कविता में सुदामा पांडेय धूमिल लिखते हैं कि

"जिया जा सकता है किंतु
हाशियेदार एक दुख
और संदर्भ हीन एक जीवन
धैर्य के लिए इतना ही काफी है
की धूप में भिगोने से
किसको नहीं छोड़ा
(पेड़, आदमी और चिड़िया)
अलग-अलग हाथों में बँटा हुआ।"[5]

ग्लोबल वार्मिंग की समस्या के साथ निरंतर बढ़ता हुआ तापमान आज की हकीकत है। धूमिल धूप से भिगाने वाले इस दौर के दुःख और चिंता को अपनी कविता में दर्ज करते हैं।

पर्यावरण की चेतना का एक पक्ष यह भी है कि जंगलों को लगातार काटा जा रहा है, पहाड़ों को तोड़ा जा रहा है और वनस्पतियों को खत्म किया जा रहा है। यह केवल पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से ही चिंता का विषय नहीं है। इसका जरूरी पक्ष मानवीय भी है। पहाड़ों में रहने वाले छोटे-छोटे समुदाय के लोग और आदिवासी, जिसका जीवन प्रकृति के साथ जुड़ा

होता है। जंगल ही जिसकाआश्रय है, उद्योग है और जीवन है, उसके लिए न सिर्फ यह एक चुनौती है, बल्कि उसके अस्तित्व पर ही कुठाराघात है। मंगलेश डबराल 'पहाड़ पर लालटेन' शीर्षक कविता में इस सच को व्यक्त करते हैं:-

"जंगल में औरतें हैं
लकड़ियों के गट्ठर के नीचे बेहोश
जंगल में बच्चे हैं
असमय दफनाये जाते हुए
जंगल में नंगे पैर चलते बूढ़े हैं
डरते खाँसते अंत में गायब हो जाते हुए
जंगल में लगातार कुल्हाड़ियाँ चल रही हैं
जंगल में सोया है रक्त।"[6]

जंगल को काटना और वहाँ के जीवन को नष्ट करना, विकास की विडंबना को दर्शाता है, क्योंकि लोग जिस आबोहवा की चिंता में यहाँ-वहाँ जाते हैं, पर्यटन करते हैं, उसका सीधा जुड़ाव इसी से है। श्घटती हुई ऑक्सीजनश शीर्षक कविता की ये पंक्तियाँ दृष्टतव्य हैं:-

"आबोहवा की फिक्र में आलीशान जहाज में बैठे हुए लोग
जा रहे हैं एक देश से दूसरे देश
ऐसे में मुझे थोड़ी ऑक्सीजन चाहिए
वह कहां मिलेगी
पहाड़ तो मैं बहुत पहले ही छोड़ आया हूँ।"[7]

पर्यावरण को निरंतर क्षतिग्रस्त करने वाले मानव-समुदाय के बरक्स एक ऐसा वर्ग भी है, जो वृक्षों के लिए लड़ाइयाँ लड़ता है, जो जंगलों को बचाने, नदियों की रक्षा करने के लिए, पहाड़ों के संरक्षण के लिए अभियान चला कर सत्ता और व्यवस्था को मजबूर करता है कि वह भी उसकी चिंता करें। इसलिए कानून की शक्ल में, वायदों के रूप में, घोषणाओं के द्वारा पर्यावरण-संरक्षण की बातें की जाती हैं, लेकिन पर्यावरण को बचाने वाली ये सभी बातें धरती पर सही रूप में कारगर साबित नहीं हुई है। इसलिए पर्यावरण काफी बदल रहा है। भगवत रावत की 'इन दोनों' शीर्षक कविता इस प्रसंग में उल्लेखनीय है:-

"काटे जा चुके जंगलों के बीच
एक अदृश्य उम्मीद के वृक्ष की भटकती आत्मा की तरह
पूछ रहा हूँ कि जब
छिप गये हैं सब अपनी-अपने खोह में
तब यह कौन किसको बचाने की गुहार लगा रहा है।"[8]

निश्चित रूप से अपनी-अपनी जिम्मेदारियों से छिपकर केवल बातों के हिसाब से पर्यावरण-संरक्षण जैसी बातें नहीं हो सकती। यह सामुदायिक जागरूकता का मामला है, जो हमारे समाज में बेहद कम है।

जलवायु परिवर्तन के लिए जिस तरह वनों का विनाश जिम्मेदार है, उसी का एक पहलू है औद्योगीकरण। उद्योग विकास के जिस पैटर्न से आगे बढ़ा है, उसमें जल, वायु, जंगल, जमीन, ध्वनि सब दूषित हुए हैं, हो रहे हैं। आवश्यक कृषि योग्य भूमि हो या जंगल का संरक्षित क्षेत्र कॉर्पोरेट सबको निगल रहा है, सबको प्रदूषित कर रहा है। ऐसे में राजेश जोशी की 'विकल्प' शीर्षक कविता देखने योग्य है:-

"संकट बढ़ रहा है
छोटे-छोटे खेत अब नहीं दिखेंगे इस धरती पर
कॉर्पोरेट आ रहे हैं
कॉर्पोरेट आ रहे हैं
सौंप दो उन्हें अपनी छोटी-छोटी जमीनें

मर्जी से नहीं तो जबर्दस्ती छीन लेंगे वे
कॉर्पोरेट आ रहे हैं
जमीनें सौंप देने के सिवा कोई और विकल्प नहीं तुम्हारे पास!"[9]

मानवीय लोभ के इस भीषण दौर में विकल्पहीनता का शिकार नदियाँ और सभी जलस्रोत हो रहे हैं। नदियाँ लगातार सिकुड़ती जा रही है, प्रदूषित होती जा रही है और लुप्त हो रही हैं। शहरीकरण और औद्योगीकरण के इस यथार्थ को ज्ञानेंद्रपति 'नदी और नगर' शीर्षक कविता में सामने लाते हैं:--

"नदी के किनारे नगर बसते हैं
नगर के बसने के बाद
नगर के किनारे से
नदी बहती है।"[10]

ऐसा केवल नदियों के साथ ही नहीं है, बल्कि पानी या जल, जिसे जीवन कहा जाता है, उसकी स्थिति विकट से विकटतर होती जा रही है। जल का संकट आज घर-घर दस्तक दे चुका है। पानी की कमी से पूरा जैवतंत्र प्रभावित हो रहा है। केदारनाथ सिंह की कविता श्पानी की प्रार्थनाश में पानी अपनी स्थिति और नियति का बयान कुछ इन शब्दों में करती हुई कहती है कि --

"अंत में प्रभु,
अंतिम लेकिन सबसे जरूरी बात
वहाँ होंगे मेरे भाई-बंधु
मंगल ग्रह या चाँद पर
पर यहाँ पृथ्वी पर मैं
यानी आपका मुँहलगा यह पानी
अब दुर्लभ होने के कगार तक
पहुँच चुका हूँ।"[11]

पर्यावरण के जीवनदायी तत्त्वों को जिस तरह मानवीय लोभ और उच्चाकांक्षा के कारण नष्ट किया जा रहा है, इसकी विस्तृत झाँकी, सुंदर और विभत्स दोनों रूपों में आधुनिक हिंदी कविता में दर्ज है। यह हिंदी कवियों की जागरूक चेतना का प्रमाण भी है, जो निरंतर बदलते पर्यावरण के साथ मानवीय जीवन के संबंधों और आयामों पर कभी पर्यावरण या प्रकृति की दृष्टि से तो कभी मानवता की दृष्टि से विचार कर सामने लाते हैं। अच्युतानंद मिश्र की कविता 'इस बेहद सँकरे समय में' वर्तमान स्थिति को व्यक्त करने में सक्षम है:--

"हम घरों में थे
हम सड़कों पर थे
हम स्कूलों और दफ्तरों मैं थे
हम हर जगह थे
और जमीन धँस रही थी
और नदियाँ सूख रही थी
और मौसम बेतरह सर्द हो रहा था
और हम रास्तों के पास
जमीन के उस ओर चले जाना चाहते थे
और मुक्ति की कोई युक्ति नहीं थी।"[12]

मुक्ति की राहों को तलाशने वाली आधुनिक हिंदी कविता की प्रतिबद्धता तो खास है, पर समस्या काफी विकट है।

सन्दर्भ सूची:

01. प्रसाद का संपूर्ण काव्य, कामायनी, संपादक- डॉ. सत्यप्रकाश मिश्र, 'श्रद्धा सर्ग', पृ.सं.- 465, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद, संस्करण-2008 ई.
02. 'राग विराग', निराला, संपादक- रामविलास शर्मा, पृष्ठ संख्या- 55-56, लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद संस्करण-2005 ई.
03. नागार्जुन रचनावली, खंड-01, संपादक- शोभाकांत, पृष्ठ संख्या- 196, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण- 2011 ई.
04. प्रतिनिधि कविताएँ: केदारनाथ अग्रवाल, संपादक- अशोक त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या- 29, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण- 2010 ई.
05. धूमिल सामग्र, संपादक डॉ रत्नशंकर पांडेय, पृष्ठ संख्या-317-18, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण 2021 ई.
06. प्रतिनिधि कविताएँ: मंगलेश डबराल, संपादक- पंकज चतुर्वेदी, पृष्ठ संख्या- 33, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण- 2021 ई.
07. वही, पृष्ठ संख्या- 108
08. भगवत रावत : निर्वाचित कविताएँ, संपादक- विकास, पृष्ठ संख्या- 123, साहित्य उपक्रम, संस्करण- 2012 ई.
09. राजेश जोशी संचयिता, संपादक- डॉ छबील कुमार मेहेर, पृष्ठ संख्या- 59, आधार प्रकाशन, पंचकूला, हरियाणा संस्करण- 2018 ई.
10. hindisamay.com
11. प्रतिनिधि कविताएँ: केदारनाथ सिंह, संपादक- परमानंद श्रीवास्तव, अनिल त्रिपाठी, पृष्ठ संख्या- 17, राजकमल प्रकाशन, नयी दिल्ली, संस्करण- 2015 ई.
12. hindisamay-com

मध्यकालीन हिन्दी काव्य में पर्यावरणीय चेतना का स्वरूप एवं उसकी प्रासंगिकता

डॉ० बुद्धदेव प्रसाद सिंह

सहायक प्राध्यापक, हिन्दी विभाग, डी०बी० कॉलेज, जयनगर

शोध-सार: जीव-मण्डल में चारों ओर जो कुछ परिव्याप्त है वह पर्यावरण के अन्तर्गत आता है तथा उससे मानव अस्तित्व भी प्रत्यक्षतः सम्बद्ध है, परन्तु इस पर्यावरण के संरक्षण के प्रति जैसी सचेष्टता वैदिक साहित्य के साथ पौराणिक साहित्य में मिलती है, वैसी हिन्दी साहित्य के मध्यकाल में नहीं मिल पाती है। एक तो बहुआयामी पर्यावरण के केवल एक अंग प्राकृतिक तत्त्व का उल्लेख इस साहित्य में मिलता है, वह भी मात्र प्रकृति-चित्रण के रूप में और वहाँ भी प्रकृति प्रायः आलम्बन के रूप में न होकर उद्दीपक की भूमिका निभाती है। विद्यापति, कबीर, जायसी तथा सूरदास जैसे विशिष्ट कवियों से लेकर रीतिकालीन आचार्य कवियों के साथ महाकवि बिहारी तक की यही स्थिति है तथा इनकी रचनाओं में प्रकृति का उपयोग मुख्य प्रतिपाद्य की पुष्टि मात्र के लिए हुआ है और इससे प्राकृतिक सौन्दर्य-प्रियता के रूप में ही प्रकृति-संरक्षण के संकेत उपलब्ध हो पाते हैं। तुलसी तथा केशव के साहित्य में आंशिक रूप से तथा सेनापति में मुख्य रूप से प्रकृति आलम्बन रूप में है भी तो उससे पर्यावरण अथवा प्रकृति के संरक्षण का भाव अत्यल्प सांकेतिक रूप में ही ग्रहण किया जा सकता है; प्रेरणा का भाव प्रधान नहीं हो पाया है।

प्रस्तावना: प्रस्तुत शोध-पत्र में पर्यावरण की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए पृष्ठभूमि के रूप में हिन्दी साहित्य पर समर्थन अथवा विरोध दोनों रूपों में व्यापक प्रभाव डालने वाले पौराणिक साहित्य की एक झलक मात्र प्रस्तुत करते हुए मध्यकालीन हिन्दी साहित्य में पर्यावरण-चेतना की पड़ताल का प्रयत्न किया जाएगा। इस क्रम में विद्यापति से लेकर भक्तिकाल तथा रीतिकाल तक के प्रकृति-चित्रण की दृष्टि से विशिष्ट कवियों की रचनाओं में पर्यावरण अथवा प्रकृति के स्वरूप को स्पष्ट करते हुए प्रासंगिकता की दृष्टि से उसे निरूपित करने का प्रयत्न किया जाएगा।

बीज शब्द: पर्यावरण, प्रकृति-चित्रण, आलम्बन, उद्दीपन।

सामान्यतः पर्यावरण शब्द से प्रकृति, खासकर पेड़-पौधे का सन्दर्भ ग्रहण कर लिया जाता है, परन्तु वास्तव में पर्यावरण, जीव-जगत् में चारों ओर जो कुछ व्याप्त हैं उन सबका सामूहिक नाम है, जो जीव-जगत् को प्रभावित करते हैं और एक-दूसरे से स्वयं भी प्रभावित होते हैं। वस्तुतः पर्यावरण भौतिक, रासायनिक एवं जैविक तत्त्वों का समूह है तथा ये सभी तत्त्व अथवा घटक निरन्तर अन्तःक्रिया-प्रतिक्रिया द्वारा सन्तुलित रूप में जीवमण्डल को परिचालित करते रहते हैं।[1] स्वाभाविक है कि इनमें असन्तुलन उत्पन्न होने पर विभिन्न समस्याएँ उत्पन्न होती हैं तथा वह अनिवार्यतः जीव के अस्तित्व को प्रभावित करती हैं। इस प्रकार पर्यावरण के तत्त्व बहुआयामी हैं, परन्तु इसका सबसे मुख्य स्वरूप प्राकृतिक है और इसके अन्तर्गत उच्चावच अर्थात् भू-आकार, जलवायु, प्राकृतिक वनस्पति, मृदा एवं जलराशियों को मूल तत्त्व स्वीकार किया गया है।[2] यद्यपि साहित्य में भी इन सभी तत्त्वों का उल्लेख ही नहीं बल्कि विभिन्न प्रसंगों में वर्णन भी उपलब्ध होते हैं, परन्तु पर्यावरण के अन्तर्गत मुख्यतः प्रकृति और उसके भी अन्तर्गत मुख्यतः प्राकृतिक वनस्पति अर्थात् पेड़-पौधों को और यदा-कदा जलराशि अर्थात् नदी या समुद्र को भी अंगीकार किया जाता है।

वस्तुतः मानव हो या अन्य जीव-जन्तु सभी पर्यावरण की उपज हैं; उनकी उत्पत्ति, विकास एवं वर्तमान स्वरूप ही नहीं अपितु भावी अस्तित्व भी पर्यावरण की परिस्थिति पर ही निर्भर है। अतः प्रकृति अथवा वातावरण के प्रति जागरुकता कलाकार का एक अनिवार्य युग-धर्म है। इस जागरुकता के आधार पर कलाकार के प्रकृति-पर्यवेक्षण का मूल्यांकन किया जाता है। प्रकृति के वर्णन में लेखक की रुचि और संस्कार का अत्यधिक प्रभाव होता है।[3] वैदिक साहित्य से लेकर आधुनिक साहित्य तक में किसी न किसी रूप में प्रकृति का चित्रण होते रहा है, परन्तु जब हम पर्यावरणीय चेतना की दृष्टि से साहित्य का पर्यालोचन करते हैं तो बहुत समृद्धि के दर्शन नहीं होते हैं। वैदिक साहित्य के बाद पर्यावरण के प्रति जो स्पष्ट चेतना पौराणिक-साहित्य में दिखायी देती है वह अन्यत्र दुर्लभ है। यद्यपि पुराणों की गणना विशिष्ट काव्य-रूप में प्रायः नहीं होती है, परन्तु इतना तो अवश्य है कि उसमें भी समृद्ध काव्यात्मकता की छटा यत्र-तत्र मिलती रहती है और उसमें जीवन और जगत् के विविध आयामों

के प्रभावकारी अंकन में विविध पर्यावरणीय तत्त्वों का भी सार्थक समावेश उपलब्ध होता है। जो स्रष्टा यह कह सकता है कि 'दस पुत्रों के समान एक वृक्ष होता है' उसकी पर्यावरणीय चेतना कितनी समृद्ध है और जगत्-कल्याण के प्रति वह कितने व्यावहारिक रूप में सचेष्ट है यह सहज अनुमान्य है। यों तो कल्याणकारी वृक्षों की प्रशंसा में पुराणों में श्लोकों की कांतार-राशि उपलब्ध है, परन्तु दो प्रसिद्ध श्लोकों में तो पर्यावरण-संरक्षण के स्पष्ट संकेत का अत्युत्तम निदर्शन उपलब्ध होता है:-

एवं निरुदके देशे यः कूपं कारयेद् बुधः।
बिन्दौ बिन्दौ च तोयस्य वसेत् संवत्सरं दिवि।।
दशकूपसमा वापी दशवापी समो ह्रदः।
दशह्रदसमः पुत्रो दशपुत्रसमो द्रुमः।
एषैव मम मर्यादा नियता लोकभाविनी।।[4]

यहाँ देवी पार्वती के द्वारा कहलवाया गया है कि जलरहित प्रदेश में जो बुद्धिमान् पुरुष कुआँ बनवाता है वह कुएँ के जल की एक-एक बूँद के बराबर वर्षों तक स्वर्ग में निवास करता है। दस कुएँ के समान एक बावली, दस बावली के समान एक सरोवर, दस सरोवर के समान एक पुत्र और दस पुत्रों के समान एक वृक्ष होता है। यही लोकों का कल्याण करने वाली मेरे द्वारा निर्धारित मर्यादा है। (पद्मपुराण (सृष्टि खण्ड-43-442) में तो इसी प्रसंग में पुत्र के स्थान पर पुत्री का उल्लेख है[5] जो भिन्न सन्दर्भ में आधुनिक स्त्री-विमर्श के लिए भी प्रेरक बिन्दु है।) इसे पर्यावरण के प्रति पक्षपात कहें या काव्यात्मकता को संकुचित करती सूक्ति का निदर्शन, परन्तु यह कवि-चेतना का उदात्त स्वरूप है, इसमें सन्देह की गुंजाइश नहीं रह जाती है। वाल्मीकि, कालिदास और भवभूति आदि प्रकृति-प्रेमी कवियों ने भी प्रकृति की सुषमा में मग्न होकर प्रकृति-सौन्दर्य के यथातथ्य चित्र प्रस्तुत किये हैं, परन्तु बाद के साहित्य में प्रकृति के शुद्ध स्वरूप के सहज और स्वाभाविक तथा संश्लिष्ट चित्र उपलब्ध नहीं होते हैं। प्रकृति अथवा पर्यावरण के प्रति यह स्पष्ट आग्रह हिन्दी साहित्य में दुर्लभ है। मुक्तक काव्य रूपों में ही नहीं महाकाव्यों में भी प्रायः प्रकृति-चित्रण की परम्परा के निर्वाह का प्रयत्न ही अधिकतर दिखायी पड़ता है। उन चित्रणों में कवि-सामर्थ्य का जैसा प्रदर्शन हुआ हो पर अभिधा से व्यंजना तक किसी रूप में वह मानव को प्रकृति-संरक्षण के लिए अधिक तत्पर अथवा पर्यावरण के प्रति अधिक सचेष्ट बनाने में योगदान दे सके, ऐसा दुर्लभ ही है।

इस परिप्रेक्ष्य में हिन्दी साहित्य के मध्यकाल की कुछ झलकियाँ मैं महाकवि विद्यापति से आरम्भ करना चाहूँगा। भले ही विद्यापति रचनात्मक प्रवृत्ति के आधार पर आदिकाल के कवि-रूप में प्रसिद्ध रहे हैं, परन्तु उनका जन्म ही सन् 1350 ई० के आसपास हुआ था और स्पष्ट रूप से यह मध्यकाल का समय है, आदिकाल का नहीं। विद्यापति ने जहाँ भी प्रकृति का वर्णन या चित्रण किया है वहाँ प्रकृति की स्वतन्त्र सत्ता को अवश्य स्वीकार किया गया है, परन्तु वर्णन का आलम्बन पूरी तरह प्रकृति नहीं है, बल्कि प्रायः उन पर मानवीय भावों का आरोप किया गया है और उनकी सुन्दरता को भी मानव-हृदय को आह्लादित करने की शक्ति के रूप में ही व्यंजित किया गया है।[6] प्रकृति के प्रति अदम्य अनुराग तथा मानव-जीवन के प्रकृति के साथ रागपूर्ण साहचर्य का अत्युत्तम निदर्शन कवि ने वसन्त के जन्म का प्रसंग रचकर उपस्थित किया है (पद-174), जहाँ यह वर्णन है कि नौ महीने पाँच दिन में प्रकृति के पूर्णगर्भा होने के बाद वसन्त का जन्म होता है और विभिन्न फूल-फल जहाँ उत्सव का समाँ बाँधते हैं, वहीं चंपा-केला द्वारा जन्मपत्र प्रस्तुत करने तथा कोयल अर्थात् वसन्त के स्वरात्मक प्रतीक द्वारा नामकरण करने की बात भी कही गयी है।[7] वसंत के स्वागत में जब कवि तन्मय होकर गाते हैं (पद-175)[8] उस समय भी वर्णनात्मकता में वे गीतगोविन्दम् के प्रथम सर्ग में उपलब्ध वर्णन[9] की सरणि में ही अग्रसर रहते हैं। यह अवश्य है कि इन वर्णनों में विद्यापति की आत्मीयता का भाव स्पष्टतया अभिव्यक्त होता है। तात्पर्य यह कि प्रकृति का स्वतन्त्र वर्णन विद्यापति के काव्य में गौण है, मुख्य है उसका उद्दीपन के रूप में चित्रण।

पर्यावरणीय चेतना की दृष्टि से संत कवि कबीर की स्थिति भी बहुत भिन्न नहीं है। कबीर का काव्य आज महत्ता के सर्वोच्च शिखर पर आसीन है और प्रायः सर्वमान्य भी, इसमें कोई सन्देह नहीं, परन्तु प्रायः उनके द्वारा दृष्टान्त रूप में प्राकृतिक उपादानों की चर्चा नहीं, बल्कि उपयोग मात्र को उनकी पर्यावरणीय चेतना के सबल उदाहरण के रूप में उपस्थापित कर दिया जाता है और इस क्रम में 'दुर्लभ मानुष जनम है...' तथा 'वृच्छ कबहुँ नहिं फल भखै' जैसी साखियों का उदाहरण देते हुए अध्येता यह भी नहीं विचार करते या ध्यान में रख पाते हैं कि इन साखियों को कबीर ग्रन्थावली के विभिन्न संस्करणों में विभिन्न सम्पादकों द्वारा कबीर की रचना के रूप में स्वीकृत तक नहीं किया गया है; हालाँकि इन साखियों में कितना संसार की असारता के साथ परमार्थ की प्रेरणा का भाव है और कितनी पर्यावरणीय चेतना या सचेष्टता, यह समझना चाहें तो कोई समझ सकता है।

महाकवि जायसी ने भी विभिन्न भावनाओं के प्रभावकारी उपस्थापन हेतु प्रकृति-चित्रण का भी सहारा लिया है, परन्तु अधिकतर वह पात्रों के मनोगत भावों के उद्दीपन के निमित्त रूप में ही है। प्रकृति-चित्रण के क्रम में अनेक जगह तो वस्तुगणना ही की गयी है जिसमें स्वाभाविक है कि काव्य-सौन्दर्य की भी कमी हो जाती है, परन्तु जहाँ अलंकार विशेष के प्रदर्शन अथवा अदृश्य रूप की ओर संकेत करने के लिए भी प्रकृति का उपयोग हुआ है वहाँ भी प्रायः चित्रात्मकता प्रधान नहीं हो पायी है; हाँ, बीच-बीच में मनोरम दृश्य अवश्य उपलब्ध हो जाते हैं।[10] जायसी वस्तु-चित्रण में निपुण थे। इसका एक सबल उदाहरण मानसरोदक खण्ड है। इसमें चित्रित कुमारिका कन्याओं की स्वच्छन्द क्रीड़ा[11] उत्कृष्ट चित्रण का उत्तम निदर्शन है, परन्तु उसकी चित्रात्मकता क्रीड़ा की समग्रता में है, प्रकृति का उपयोग उपादान रूप में ही है, आलम्बन रूप में नहीं। काफी हद तक यही बात नागमती के विरह वर्णन अथवा बारहमासे के लिए भी कही जा सकती है। इसका तात्पर्य यह कदापि नहीं है कि जायसी कहीं चित्रात्मकता में कमजोर सिद्ध होते हैं। वस्तुतः महाकवि जायसी ने प्रायः सर्वत्र अपने पात्रों की मनोदशा के अनुरूप ही प्रकृति के व्यापारों की योजना की है और काव्यात्मकता का उत्तमोत्तम उदाहरण उपस्थापित किया है। संयोग और वियोग दोनों का हृदयग्राही वर्णन करने के लिए उन्होंने सुन्दर उपमानों की योजना की है, परन्तु उनका लक्ष्य ही मानवीय भाव व्यापार है, न कि प्रकृति या पर्यावरण। वस्तुतः महाकाव्य में यह अवसर भरपूर रहता है कि विविध प्रसंगों में ऐसे चित्रण समाविष्ट किये जा सकें जो भावनात्मक पुष्टि के साथ ही स्वतन्त्र रूप से प्रकृति या पर्यावरण के संरक्षण के प्रति भी सचेष्ट कर डालें, परन्तु यह काफी हद तक निराशाजनक है कि प्रायः वर्णन की धारा में बह जाने के बावजूद कवियों ने वैसा प्रयत्न नहीं किया है।

महाकवि सूरदास के सौन्दर्य-लोक में प्राकृतिक सुषमा की भी अनुपम छटा विद्यमान है। प्रायः भावों के उद्दीपन के लिए कवि ने यथावसर सुन्दर प्राकृतिक वातावरण उपस्थित करके काफी हद तक मानवेतर सौन्दर्य-निरीक्षण का परिचय दिया है। सूरदास द्वारा गोचारण के प्रसंग में वन, द्रुम, लता आदि का उल्लेख तो हुआ है, परन्तु संक्षेप में ही, सम्यक् वर्णन कहीं नहीं है।[12] हाँ, इन वर्णनों से प्रकृति-संरक्षण के संकेत अवश्य मिलते हैं। उदाहरण के लिए वृक्ष की छाया में बैठकर नन्दलाल के सुख महसूस करने की बात कही गयी है।[13] बंसीवट को भी अति सुखद,[14] शीतल तथा उससे युक्त यमुना तट को परम सुखद बताया गया है।[15] रमणीय कदँब की छाँह को भी सुखद कहा गया है।[16] घने कुंज और हरी-हरी घासों से युक्त समस्त वन को अतिशीतल और सुखद कहा गया है।[17] काव्य के भावानुकूल प्राकृतिक वातावरण में प्रभात, वन, पेड़-पौधे, लता, पुष्प, यमुना, चन्द्रमा, मेघ, वसन्त, वर्षा, शरद् आदि का उत्कृष्ट वर्णन हुआ है, परन्तु कुल जमा निष्कर्ष यही निकलता है कि कवि ने प्राकृतिक दृश्य का उपयोग केवल अपनी भावना और कल्पना को सजग और मूर्त करने में किया है।[18] परिणामतः प्रकृति-चित्रण का वैविध्य उनके काव्य में भी उपलब्ध नहीं हो पाता है। यह अवश्य है कि उनके भावात्मक चित्रण में भी प्राकृतिक सौन्दर्य-प्रियता के प्रचुर प्रमाण उपलब्ध होते हैं।

महाकवि तुलसीदास ने अपनी विराट और अत्युत्कृष्ट कवि-प्रतिभा के अनुरूप प्राकृतिक उपादानों का उपयोग करके भी अद्भुत चित्र उपस्थित किये हैं। कवितावली (2-27) का एक चित्र द्रष्टव्य है:

> अवलोकि अलौकिक रूप मृगी मृग चौंकि चकैं चितवैं चितु दै।
> न डगैं न भगैं जिय जानि सिलीमुख पंच धरे रतिनायकु है।।[19]

यहाँ मृग-मृगी का स्वाभाविक वर्णन अत्युत्कृष्ट चित्र की सर्जना कर रहा है, पर उसमें भी मानवीय विशेषता का आरोप हो ही गया है- कामदेव के रूप में राम की कल्पना तो मानव ही कर सकता है। वस्तुतः जब कवि प्रकृति के प्रति मुग्ध होता है और उससे प्रेरणा ग्रहण करते हुए उसके प्रभाव को, प्रेरणाप्रद दृश्यों को वाणीबद्ध करता है और इस प्रकार प्रकृति को ही अपना प्रतिपाद्य बनाता है; उसकी योजना किसी अन्य वस्तु के निरूपण का पोषण करने के लिए नहीं करता है, तो ऐसे चित्रण को आलम्बन रूप में प्रकृति-चित्रण कहते हैं।[20] महाकवि तुलसी ने कहीं-कहीं प्रकृति को प्रतिपाद्य बनाया है। गीतावली (2-50) और रामचरितमानस (2-236,237) में चित्रकूट का वर्णन[21] तथा मानस में पम्पा सरोवर का वर्णन (3-40)[22] काफी हद तक आलम्बन रूप में है, परन्तु उन स्थलों पर भी आध्यात्मिकता और उद्दीपन तत्त्व का कुछ न कुछ समावेश हो ही गया है। अधिकांशतः प्राकृतिक उपादानों की योजना किसी अन्य प्रतिपाद्य वस्तु, भाव अथवा विचार के निरुपण को उत्कर्ष प्रदान करने के लिए की गयी है।[23] मिथिला में राजा जनक के बाग का सुप्रसिद्ध वर्णन, जहाँ बाग के परिपूर्ण सौन्दर्य के कारण स्वयं वसन्त ऋतु भी लुब्ध होकर वहीं निवास करना चाहता है, (1-227)[24] स्पष्ट रूप से राम-सीता के मिलन के लिए तुलसी द्वारा तैयार उद्दीपक पृष्ठभूमि है। इस परिप्रेक्ष्य में डॉ० रघुवंश की बात सही प्रतीत होती है- "...धार्मिक काव्य के साधक-कवि को प्रकृति के प्रति जिज्ञासा नहीं हुई। तर्क और विशुद्ध ज्ञान के क्षेत्र में ब्रह्म था; तो व्यवहार की सीमा में भगवान् की स्थापना

थी। सब कुछ करनेवाला, रखने वाला और मिटानेवाला है ही; फिर प्रश्न उठता ही नहीं कि यह सब क्या है, कैसे हुआ और क्यों है। ...इस शासक रूप ईश्वर के समक्ष प्रकृति-सर्जना का प्रश्न आता ही नहीं और प्रकृति के रूप के प्रति आकर्षण की समस्या उठती ही नहीं।"[25]

रीतिकाल के भी प्रायः सभी आचार्य कवियों देव, भिखारीदास आदि ने रस-निरूपण के क्रम में प्रकृति को शृंगार के उद्दीपन विभाव के रूप में ही अपनाया है। महाकवि बिहारी भी इस कोटि में हैं; हाँ, उनमें शृंगार के अतिरिक्त नीति भी समाविष्ट है। इस क्षेत्र में केशवदास काफी हद तक अपवाद स्वरूप है जिन्होंने प्रकृति रूपों को आलम्बन के अन्तर्गत रखकर भी अनेकत्र वर्णन किया है; हालाँकि उनका यह वर्णन प्रायः वर्णन ही रहा है, चित्रण नहीं हो पाया है। नाम गिनाने के चक्कर में उन्होंने दक्षिण भारत में पाये जाने वाले एला, लवंग और पुंगीफल को अयोध्या और मिथिला के मध्य स्थित वन में भी दिखला दिया है।[26] केशव का प्रकृति-वर्णन विस्तृत है, परन्तु उसका संश्लिष्ट चित्र पाठक के सम्मुख उपस्थित नहीं हो पाता है।[27] केशव की अपेक्षा रीतिकालीन कवियों में सेनापति का प्रकृति-चित्रण विशिष्ट है। सेनापति ने प्रकृति के स्वतन्त्र रूप का भी मार्मिक चित्रण किया है। वहाँ प्रकृति स्वयं आलम्बन है। इस दृष्टि से ग्रीष्म, वसन्त एवं वर्षा ऋतु का वर्णन द्रष्टव्य है।[28] शरद् ऋतु के वर्णन में यद्यपि एक पंक्ति में विरहिणी की पीड़ा का संकेत है, परन्तु वहाँ भी कवि ने अपनी सूक्ष्म निरीक्षण-शक्ति और अनुभव के बल पर पशु, पक्षी, पुष्प, धान के खेत, चाँदनी, निर्मल आकाश आदि का यथार्थ चित्र अंकित कर प्रकृति के प्रति अपने सहज अनुराग का परिचय दिया है:-

पाउस निकास तातैं पायौ अवकास, भयौ
जोन्ह कौं प्रकास, सोभा ससि रमनीय कौं।
बिमल अकास, होत बारिज विकास, सेना-
पति फूले कास, हित हंसन के हीय कौं।।
छिति न गरद, मानौं रंगे हैं हरद सालि
सोहत जरद, को मिलावै हरि पीय कौं।
मत्त है दुरद, मिट्यौ खंजन-दरद, रितु
आई है सरद सुखदायी सब जीय कौं।।[29]

इसके अतिरिक्त विभिन्न ऋतुओं का लोगों पर क्या प्रभाव पड़ता है इसका भी प्रभावकारी वर्णन उन्होंने किया है।

निष्कर्ष: मध्यकालीन हिन्दी साहित्य के पर्यालोचन से स्पष्ट परिलक्षित होता है कि वहाँ समग्र रूप से पर्यावरण की अवधारणा ही विकसित नहीं हो पायी है, परन्तु अपने मुख्य प्रतिपाद्य, अपनी भावना या कल्पना को मूर्त, सजग या पुष्ट करने के लिए जहाँ तक वर्णन या चित्रण के रूप में प्रकृति का उपयोग किया गया है उन चित्रणों को प्रकृति-चित्रण से आगे बढ़कर पर्यावरणीय चेतना से जोड़ना सांकेतिक से आगे नहीं बढ़ पाता है। जान पड़ता है कि जैसे भारतीय दर्शन में प्रकृति को स्वतन्त्र महत्त्व प्राप्त नहीं है, उसे ब्रह्म की अनुचरी ही माना गया है, हिन्दी कविता में भी कुछ अपवादों को छोड़कर प्रायः प्रकृति या पर्यावरण की यही स्थिति रही है और इसलिए इन कविताओं की भावात्मक एवं कलात्मक प्रासंगिकता अक्षुण्ण है, परन्तु जहाँ तक पर्यावरणीय चेतना का प्रश्न है, यह जमीन तोड़ना मध्यकालीन हिन्दी काव्य में शेष ही रहा है।

सन्दर्भ-सूची:-

1. सक्सेना, हरि मोहन, पर्यावरण एवं प्रदूषण, जयपुर, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, चतुर्थ संस्करण (2002), पृष्ठ-19.
2. सक्सेना, हरि मोहन, पर्यावरण एवं प्रदूषण, पूर्ववत्, पृष्ठ-6.
3. सिंह, शिवप्रसाद, विद्यापति, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, उन्नीसवाँ संस्करण (2008), पृष्ठ-165.
4. मत्स्यमहापुराण, गोरखपुर, गीताप्रेस, प्रथम संस्करण, (संवत् 2061), पृष्ठ-631.
5. द्विवेदी, आचार्य शिवप्रसाद (अनुवादक), श्रीपद्ममहापुराणम्, प्रथम भाग, वाराणसी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण (2016), पृष्ठ-586.
6. सिंह, शिवप्रसाद, विद्यापति, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, उन्नीसवाँ संस्करण (2008), पृष्ठ-172.
7. बेनीपुरी, रामवृक्ष एवं आनंद दिनेश्वर लाल, विद्यापति की पदावली, पटना, पुस्तक भंडार, संस्करण उल्लिखित नहीं, पृष्ठ-100.
8. बेनीपुरी, रामवृक्ष एवं आनंद दिनेश्वर लाल, विद्यापति की पदावली, पूर्ववत्, पृष्ठ-101.

9. द्विवेदी, आचार्य शिवप्रसाद (अनु०), गीतगोविन्दकाव्यम्, वाराणसी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, संस्करण-2015, पृष्ठ-40-41.
10. नारंग, इन्द्रचन्द्र, पद्मावत का अनुशीलन, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-1999, पृष्ठ-160.
11. अग्रवाल, वासुदेवशरण, पद्मावत (मूल और संजीवनी व्याख्या), प्रयागराज, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-2021, पृष्ठ-62-64.
12. वर्मा, ब्रजेश्वर, सूरदास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, छठा संस्करण (2001), पृष्ठ-363.
13. वाजपेयी, नंददुलारे (सं०), सूरसागर, पहला खंड, वाराणसी, नागरी प्रचारिणी सभा, तृतीय संस्करण (2015 वि०), पृष्ठ-409.
14. वाजपेयी, नंददुलारे (सं०), सूरसागर, पहला खंड, पूर्ववत्, पृष्ठ-409.
15. वाजपेयी, नंददुलारे (सं०), सूरसागर, पहला खंड, पूर्ववत्, पृष्ठ-434.
16. वाजपेयी, नंददुलारे (सं०), सूरसागर, पहला खंड, पूर्ववत्, पृष्ठ-429.
17. वाजपेयी, नंददुलारे (सं०), सूरसागर, पहला खंड, पूर्ववत्, पृष्ठ-435.
18. वर्मा, ब्रजेश्वर, सूरदास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, छठा संस्करण (2001), पृष्ठ-366.
19. नारायण, इन्द्रदेव (टीकाकार), कवितावली, गोरखपुर, गीताप्रेस, अड़तीसवाँ संस्करण, (संवत् 2054), पृष्ठ-23.
20. सिंह, उदयभानु, तुलसी-काव्य-मीमांसा, दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, द्वितीय संस्करण (2002), पृष्ठ-265-266.
21. मुनिलाल (अनु०), गीतावली, गोरखपुर, गीताप्रेस, चौबीसवाँ संस्करण, (संवत् 2056), पृष्ठ-200. तथा पोद्दार, हनुमान प्रसाद (अनु०), श्रीरामचरितमानस (सटीक, कोड-81), गोरखपुर, गीताप्रेस, 297वाँ संस्करण, (संवत् 2074), पृष्ठ-540-541.
22. पोद्दार, हनुमान प्रसाद (अनु०), श्रीरामचरितमानस, पूर्ववत्, पृष्ठ-672-673.
23. सिंह, उदयभानु, तुलसी-काव्य-मीमांसा, दिल्ली, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा०लि०, द्वितीय संस्करण (2002), पृष्ठ-266.
24. पोद्दार, हनुमान प्रसाद (अनु०), श्रीरामचरितमानस, पूर्ववत्, पृष्ठ-223.
25. रघुवंश, प्रकृति और काव्य (मध्य युग), प्रयाग, साहित्य भवन लिमिटेड, प्रथम संस्करण (2005 वि०), पृष्ठ-202.
26. लाला भगवानदीन (टीकाकार), केशव-कौमुदी (रामचन्द्रिका), प्रथम भाग, इलाहाबाद, रामनारायणलाल अरुणकुमार, तेरहवाँ संस्करण (1989), पृष्ठ-33.
27. सिंह, विजयपाल (सं०), केशवदास, इलाहाबाद, लोकभारती प्रकाशन, संस्करण-1989), पृष्ठ-157.
28. शुक्ल, पं० उमाशंकर (सं०), कवित्त-रत्नाकर, प्रयाग, हिन्दी परिषद् प्रकाशन, छठा संस्करण (1971), पृष्ठ-54-63.
29. शुक्ल, पं० उमाशंकर (सं०), कवित्त-रत्नाकर, पूर्ववत्, पृष्ठ-64.

पर्यावरणीय अर्थशास्त्र एवं सतत विकास

डॉ० विनय कुमार बैठा

सहायक प्राध्यापक, अर्थशास्त्र विभाग, मार्खम कॉलेज ऑफ कॉमर्स, हजारीबाग, विनोबा भावे विश्वविद्यालय, हजारीबाग

शोध सारः- आधुनिक वैज्ञानिक युग में मनुष्य आर्थिक विकास की लालसा एवं सुख-साधनों में वृद्धि के प्रयास में पर्यावरण के समस्त अवयवों- भूमि, जलवायु, वनस्पतियों एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों एवं ऊर्जा के स्रोतों का अनियन्त्रित उपयोग एवं विदोहन कर रहा है। पर्यावरणीय तत्वों के अत्यधिक विदोहन से पर्यावरणीय अवनयन की समस्या उत्पन्न हो गई है पर्यावरण के तेजी से हो रहे उपयोग वा शोषण से आज विश्व को पर्यावरण असंतुलन की भीषण समस्या का सामना करना पड़ रहा है सतत विकास कि देन है कि पर्यावरण को बिना शोषण हुए आर्थिक विकास कैसे किया जाय।

संकेत शब्दः- सतत विकास, वायु प्रदुषण, जल प्रदुषण तथा ध्वनि प्रदुषण, पर्यावरण कि विशेषता, पर्यावरण के तत्व, सतत विकास के संकेतक।

प्रस्तावनाः-

पर्यावरण दो शब्दों 'परी' तथा आवरण से मिलकर बना है जिसमें परि शब्द का अर्थ 'चारो ओर से' तथा आवरण शब्द का अर्थ घेरे या ढ़के हूए से होता है। पर्यावरण मानव या किसी जीवधारी के चारो ओर पाये जाने वाले उस आवरण से है जिसमें रहकर जीव विशेष रूप से अपना जीवनयापन करता है। दूसरे शब्दों में पर्यावरण उस भौतिक व जैविक व्यवस्था से है, जिवधारी निवास करते है तथा अपनी स्वभाविक प्रवृति का विकास करते है।

पर्यावरणविद् पर्यावरण शब्द के स्थान पर Millieu या Habitat शब्द का प्रयोग भी करते है, जिसका अर्थ समस्त पारिस्थितिकी से है। इस संदर्भ में फिटिंग का कहना है कि जीवों के पारिस्थितिकी कारकों का योग पर्यावरण है।

पर्यावरण की प्रमुख विषेषताएं

1. अजैविक या भौतिक व जैविक घटक पर्यावरण के महत्वपूर्ण भाग हैं तथा पर्यावरण के अजैव व जैव तत्व अपनी विशेषता के अनुसार पर्यावरण का निर्माण करतें है।
2. जीवों के चारों ओर की वस्तुएं पर्यावरण का निर्माण करती है।
3. पर्यावरण में जीवों का परस्पर सहवास अनिवार्य लक्षण है।
4. पर्यावरण स्व-नियत्रण एवं स्व-पोषण पर आधारित है।
5. पर्यावरण में विशिष्ट भौतिक क्रियाएं कार्यरत रहती हैं।
6. पर्यावरण परिवर्तनों के प्रति (पर्यावरण में निवास करने वाले) जीव अनुकूलता उत्पन्न करते रहते है।
7. पर्यावरण में पार्थिव एकता विद्यमान रहने के साथ-साथ क्षेत्रीय विविधता भी मिलती है।
8. पर्यावरण जैव जगत का निवास क्षेत्र होता है।
9. पर्यावरण में संसाधनों का अपार भण्डार है।

पर्यावरण के तत्व

पर्यावरण में प्रमुख चार घटक सम्मिलित होते है:

1. स्थलमण्डल, 2. जलमण्डल, 3. वायुमण्डल 4. जैवमण्डल

उपयुक्त चारों घटकों में वायुमण्डल पर्यावरण का सर्वाधिक महत्वपूर्ण एवं गतिशील घटक है, क्योंकि यह वायुमण्डल ही है जिसमें निरन्तर मौसमीय परिवर्तन होते रहते हैं। वायुमण्डल पृथ्वी सतह से लगभग 32 किमी की ऊंचाई तक मिलता है तथा इसमें अनेक गैसों का मिश्रण मिलता है। शुद्ध व शुष्क वायु में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन तथा 21 प्रतिशत ऑक्सीजन होती है। कार्बन डाई-ऑक्साइड, हाइड्रोजन, हीलियम तथा ओजोन, आदि वायुमण्डल में अल्प मात्रा में मिलने वाली अन्य गैसें है। क्षोभमण्डल, समतापमण्डल, मध्यमण्डल तथा बाह्ममण्डल वायुमडल की चार प्रमुख परतें है।

पर्यावरण और अर्थषास्त्र के संबंध

अथव्यवस्था के अन्तर्गत कृषि, उधोग एवं सेवा से सम्बन्धित क्षेत्रों, खानों, दुकानों, बैंकों, स्कूलों, कॉलेजों, विश्वविद्यालयों आदि को सम्मिलित किया जात है जो वस्तुओं एवं सेवाओं का उत्पादन करते हैं तथा लोगों को रोजगार प्रदान करते है। उन वस्तुओं एवं सेवाओं का उपयोग एक देश के लोग करते हैं अथवा विश्व बाजार में निर्यात कर देते है। पर्यावरण तथा किसी देश की अर्थव्यवस्था के बीच प्रत्यक्ष, सहजीवी एवं गहन सम्बन्ध होता है। पर्यावरण अनेक जैविक एवं अजैविक घटकों से मिलकर बना है। जब ये समस्त घटक निश्चित अनुपात में होते है तो एक सुन्दर एवं स्वच्छ प्र्यावरण का निर्माण करते हैं। मनुष्य की भोगकारी प्रवृति से प्रेरित तीव्र आर्थिक विकास की लालसा ने इन घटकों के अनुपात को विगाड़ दिया है। इसके फलस्वरूप पर्यावरण एवं परिस्थितिकी को अपूरणीय क्षति पहुंच रही है। पर्यावरण की गुणवत्ता में होने वाले ह्रास ने वायु, जल, ध्वनि एवं मृदा-प्रदुषण के रूप में अपना विकराल रूप दिखाना प्रारम्भ कर दिया है। मानव विकास रिपोर्ट के अनुसार भारत में अर्थिक विकास के फलस्वरूप भारी पर्यावरणीय ह्रास हुआ है। भारत में वर्तमान समय में लगभग 10 से 12 मिलियन अमेरकी डॉलर के बराबर पर्यावरणीय क्षति का आकलन किया गया है जो इसके सकल घरेलू उत्पाद का 4.5 से 6 प्रतिशत तक होता है। आज विश्व के किसी भी देश के लिए आर्थिक विकास की प्रक्रिया एवं संसाधनों के विदोहन को बंद कर देना संभव नहीं है क्योंकि आर्थिक विकास से ही देश की प्रगति संभव है। फिर भी इस बात की आवश्यकता है कि ह्रासमान परिस्थितिक तन्त्र को सुधारने एवं भविष्य में विकासात्मक नीतियों के निर्धारण एवं उनके सुचारू रूप से क्रियान्वयन के लिए परिस्थिति विकास की अवधारणा को आधार बनाया जाए।

आज किसी देश के आर्थिक संवृद्धि की अवधारणा को पर्यावरण की गुणवत्ता से जोड़कर देखा जाने लगा है। वर्तमान में आर्थिक विकास की माप सकल राष्ट्रीय उत्पाद/प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि जैसे मात्रात्मक तत्वों से नहीं की जाती है बल्कि सामाजिक कल्याण, जीवन स्तर में बृद्धि एवं मानव विकास सूचक के स्तर में वृद्धि को आर्थिक विकास का मापदण्ड माना जाता है। विगत कुछ वर्षो से यह धारणा बदलते जा रही है कि उच्च गुणवत्ता वाले जीवन के लिए पर्यावरण सुरक्षा/सरंक्षण अति आवश्यक है। अत: किसी देश के आर्थिक विकास को पर्यावरण से सम्बद्ध किऐ जाने की आवश्यकता है। आज यह अनुभव किया जाने लगा है कि आर्थिक विकास एवं पर्यावरण एक-दूसरे पर निर्भर हीं नही करते बल्कि एक-दुसरे के पूरक भी हैं। पर्यावरण अपघटन से किसी देश की राष्ट्रीय आय में गिरावट आती है। अनुमान है कि पर्यावरण अपघटन से विश्व अर्थव्यवस्था की आय में 5% से 10% तक की कमी आती है। पर्यावरण संरक्षण के आभाव में विवेकपूर्ण एवं न्यापूर्ण विकास की कल्पना करना व्यर्थ होगा।

पर्यावरण पर आर्थिक विकास का प्रभाव

मानव अपने जीवन की दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए प्रकृति पर निर्भर रहता है। दिनों-दिन बढ़ती जा रही मानवीय आवश्यकता एवं उनकी पूर्ति के लिए हो रहे निरनतर विकास के फलस्वरूप प्राकृति संसाधनों का दोहन भी तेजी से बढ़ता जा रहा है जिसके फलस्वरूप प्रकृति अपना सन्तुलन बनाए रखने में स्वयं को असमर्थ अनुभव कर रही है। प्रकृति में असन्तुलन का प्रत्यक्ष प्रभाव पर्यावरण पर पड़ता है। प्रकृति में असन्तुलन का तात्पर्य है पर्यावरण में असन्तुलन अर्थात पर्यावरणीय गुणों में ह्रास।

आर्थिक विकास के फलस्वरूप निम्नलिखित पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं:

1. वन विनाष का पर्यावरण पर प्रभाव- आर्थिक विकास के लिए मानव को विस्तृत भूमि की आवश्यकता होती है। भूमि प्राप्त करने के लिए वनों को काटना आवश्यक हो जाता है। भारत में वनों के विनाश का क्रम मानवीय क्रियाकलापों के विस्तार से प्रारम्भ हुआ है। बढ़ती जनसंख्या की कृषि भूमि, आवास, उद्योग, परिवहन, आदि आवश्यकताओं की पूर्ति करने के लिए वनों को साफ किया जाने लगा है।
2. उत्खनन का पर्यावरण पर प्रभाव - आर्थिक विकास को गति प्रदान करने के लिए औद्योगीकरण आवश्यक है। और उद्योगों की स्थापना के लिए खनिज पदार्थो का उत्खनन अत्यावश्यक है। विश्व के विभिन्न देशों में खनन संसाधनों को प्राप्त करने के लिए उत्खनन होता है। जब उत्खनन सघन वन क्षेत्रों में संचालित होता है तो अमूल्य वन सम्पदा नष्ट हो जाती है। उत्खनन के दौरान वायु प्रदुषण एवं ध्वनि प्रदुषण अत्यधिक होता है। उत्खनन के बाद बेकार छोड़े गए गर्त अन्य किसी उपयोग में नहीं आते हैं खानों की जड़ाई से निकले मलबे के ढेर जहां डालते हैं, उसके नीचे की भूमि बेकार

हो जती है। शिवालिक क्षेत्र में चूना पथरों की खदानों से पर्यावरण की अपार क्षति हुई है। धनबाद, हजारीबाग कोयला क्षेत्रों में अवशिष्ट खनिज के जल स्रोतों में प्रवाह से विस्तृत भूमि बेकार हो गई है इससे इन क्षेत्रों के पर्यावरण का भारी ह्रास हुआ है।

3. औद्योगीकरण का पर्यावरण पर प्रभाव- विश्व के विकसित देश औद्योगिक देश हैं अर्थात आर्थिक विकास का आधार औद्योगकरण है। आर्थिक प्रगति के लिए औद्योगिक विस्तार एंव औद्योगीकरण आवश्यक हैं, किन्तु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए विस्तृत भूखण्ड की प्राप्ति के लिए पहले वन विनाश करना पड़ता है। उत्पादन इकाईयों से वांछित उत्पादन के अतिरिक्कत हानिकारक अवशिष्ट पदार्थ, प्रदूषित जल, जहरीली गैस, रासायनिक अवशेष, धूल, राख, धुआं, आदि भी निकलते हैं औद्योगिक ईकाइयों से निकलने वाले प्रदूषक जल, वायु मिट्टी में मिलकर मिट्टी को प्रदुषित करते है। और पर्यावरण को भी बिगाड देते हैं।
4. तीव्र तकनीकी विकास- पर्यावरण संकट का एक महत्वपूर्ण कारण यह भी है कि बीसवीं शताब्दी में औद्यागिक विकास के कारण विज्ञान और तकनीकी विकास भी तेजी से हुआ है मानव ने तकनीकी के क्षेत्र में जो प्रगति की उसे तकनीकी क्रान्ति कहा जाता है। इसका लाभ उद्योग, कृषि, परिवहन, चिकित्सा, आदि विभिन्न क्षेत्रों को प्राप्त हुआ है, किन्तु नई तकनीक से निर्मित विभिन्न उपभेक्ता सामग्री मानव स्वास्थ्य तथा पर्यावरण पर बुरा प्रभाव डाल रही है। तकनीकी विकास के परिणामस्वरूप प्लास्टिक, कृत्रिम रेशा, कृत्रिम रबर, कृत्रिम उर्वरक, कृत्रिम घास, इत्यादि अनेक संश्लिष्ट पदार्थ दैनिक जीवन में प्रयुक्त किए जा रहें है।
5. अनियोजित विकास- अनियोजित विकास पर्यावरणीय स्थिति को खतरनाक बना देता है और समाज को परिस्थितिकीय संकट के कगार पर खड़ा कर देता है। विकसित देश अपने विकास की दिशा का निर्धारण करते समय विभिन्न प्रकार की सामजिक-आर्थिक प्रणालियों का अध्ययन करते हैं। भारत जैसे विकासशील देश में जहां औद्योगीकरण को योजना का प्रमुख अंग बनाया गया है।, किन्तु उसका नियन्त्रण कैसे और कौन करे, वह किस कीमत पर उपलब्ध होता है और निकट भविष्य में उसके क्या परिणाम हो सकते है।

सतत विकास की अवधारणा एवं सूचक

मानव की प्रगति एवं विकास का आधार उसके द्वारा प्रकृति अथवा पर्यावरण का उपयोग है। मानव विकास की प्रारम्भिक अवस्था में सीमित जनसंख्या तथा सीमित आवश्यकताओं के कारण प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के उपरान्त भी उसका पर्यावरण से सामंजस्य बना रहा, किन्तु बढती जनसंख्या तथा तकनीकी प्रगति का साथ-साथ प्रकृति के शोषण की दर में वृद्धि होती गई आर्थिक विकास की दौड में पर्यावरण पर दबाव बढ़ता गया। पर्यावरण पर शत्रुतापूर्ण व्यवहार करके किया गया विकास स्वयं मानव के लिए ही आत्मघाती सिद्ध हुआ। पर्यावरण प्रदूषण, संसाधनों का संकट आदि इसके दुष्परिणाम हैं। निरन्तर विकास मानव की स्वाभाविक प्रकृति है तथा पर्यावरण हमारे जीवन का आधार है। पर्यावरणीय समस्याओं के कारण विकास को रोका नहीं जा सकता है, तो पर्यावरण ह्रास के कारण समस्त जीव जगत पर बढ़ते संकट की उपेक्षा भी नहीं की जा सकती है। अत: पर्यावरण को बचाते हुए सतत विकास की अवधारणा विकसित हुई। इसे प्रतिपालनीय विकास की अवधारणा भी कहते हैं।

पर्यावरण और विकास पर संयुक्त राष्ट्र द्वारा विश्व आयोग के ब्रंटलैण्ड प्रतिवेदन में दी गई स्थिर अथवा टिकाऊ अथवा धारणीय विकास की परिभाषा इस प्रकार है- ''धारणीय अथवा टिकाऊ विकास वह है, जो भावी पीढ़ियों की अपनी आवश्यकताओं को पूरी करने की क्षमता को क्षति पहुंचाए बिना वर्तमान पीढ़ी की आवश्यकताओं को पूरा करे।'' इस तरह टिकाऊ विकास एक सर्वग्राह्य अवधारणा है जिसमें सामाजिक, आर्थिक एवं पर्यावरणीय लक्ष्यों का समावेश है।

विकास में पारिस्थितिकी दृष्टिकोण को सम्मिलित करके प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग भी किया जा सकता है तथा पारिस्थितिकी संकट से बचा भी जा सकता है। सन्तुलित विकास, समन्वित विकास तथा सतत विकास इसके विभिन्न पक्ष हैं। सतत विकास से अभिप्राय ऐसे विकास से है, जो पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना जीवन की गुणवत्ता जारी रख सके। विकास को मात्र आर्थिक उत्पादन से न जोड़कर उसके सामाजिक, आर्थिक एवं पारिस्थितिकीय पक्षों पर भी ध्यान देना चाहिए। पारिस्थितिक तन्त्र के अनुरूप विकास हेतु पर्यावरण को कम-से-कम हानि पहुंचाने वाली प्रौद्योगिकी का विकास, जनसंख्या वृद्धि पर नियन्त्रण, भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए संसाधनों का नियोजित व नियमित उपभोग, संसाधन संरक्षण आदि उपायों पर अमल करना होगा। चूंकि हमारा अस्तित्व पर्यावरण के साथ जुड़ा है अत: पर्यावरण को बचाते हुए सतत विकास की अवधारणा को विकसित करना समयानुकूल होगा।

सतत विकास के संकेतक

सतत विकास की धारणा बहुआयामी पर्यावरण प्रबन्धन को इंगित करती है। विकास की इस अवधारणा में स्थानीय पर्यावरण एवं उससे सम्बन्धित प्राकृतिक संसाधनों का मानवीय हित में प्रयोग इस तरह किया जाए कि प्रकृति की गुणवत्ता का हास न हो साथ ही विकास के कार्यों में किसी तरह की रुकावट भी न पड़े। इस तरह धारणीय अथवा टिकाऊ या सतत विकास के अन्तर्गत पर्यावरण एवं समाज के हितों के अनुकूल विकास के कार्यक्रमों को योजनाबद्ध रूप में निर्मित कर क्रियान्वित किया जाता है। सतत विकास के मुख्य सूचक निम्न प्रकार हैं:

सतत कृषि विकास में रासायनिक उर्वरकों एवं खतरनाक कीटनाशकों के स्थान पर जैव उर्वरकों एवं जैव-कीटनाशकों का प्रयोग कर कृषि उत्पादन को बढ़ावा दिया जाता है। इससे भूमि की उर्वरा शक्ति को भविष्य में भी बनाए रखना सम्भव होगा और मृदा में जो खतरनाक रसायन प्रवेश कर उसे प्रदूषित करते हैं उससे मुक्ति मिलेगी।

सतत औद्योगिक विकास के अन्तर्गत उद्योगों को प्रदूषण फैलाने से मुक्त रखने का प्रयास किया जाता है। विकासशील देशों में औद्योगीकरण की प्रक्रिया में बृहत् उद्योग, मध्यमस्तरीय उद्योग एवं लघु उद्योग स्थापित किए जाते हैं। ऐसे उद्योगों की स्थापना प्राय: व नगरों में व बस्तियों के आस-पास की जाती है जिससे नगरों एवं बस्तियों के लोग इन उद्योगों द्वारा फैलाए जाने वाले प्रदूषणों का शिकार बनते हैं। इन उद्योगों में प्रदूषण के शमन से सम्बन्धित संयन्त्र नहीं लगाए जाते। सतत विकास के अन्तर्गत ऐसे उद्योगों की स्थापना की जाती' जो उपभोक्ता एवं पूंजी वस्तुओं का निर्माण तो करें, परन्तु वस्तु की कीमत पर समाज को प्रदूषण को तोफा न दे।

प्रदूषण मुक्त परिवहन सतत विकास का एक अन्य संकेतक है। अल्पविकसित देशों में परिवहन के साधन के रूप में स्कूटर, मोटर साइकिलों, कारों, बसों, ट्रकों एवं रेलों, वायुयान एवं जलपोतों का उपयोग होता है, जो हानिकारक धुएं का उत्सर्जन कर वायु एवं ध्वनि प्रदूषण को फैलाते हैं। अत: सतत विकास के अन्तर्गत परिवहन के ऐसे साधनों का विकास किया जाना चाहिए जो साइलेन्सर युक्त हों तथा विषैली गैसों का उत्सर्जन न करें। विकसित देशों में किए जा रहे ऐसे प्रयास को विकासशील देशों में भी अपनाया जाना चाहिए।

प्रदूषण मुक्त ऊर्जा उत्पादन को बढ़ावा देना भी सततीय विकास का एक सूचक है। ऊर्जा के परम्परागत स्रोत कोयला एवं पेट्रोलियम पदार्थ हैं। इन दोनों साधनों से विद्युत उत्पादन करने पर पर्यावरण के प्रदूषित होने का खतरा बना रहता है। अत: ऊर्जा उत्पादन हेतु प्रदूषण मुक्त पेट्रोलियम पदार्थों का उपयोग किया जाना चाहिए, साथ ही गैर-परम्परागत ऊजी स्रोतों (सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि) के विकास को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

निष्कर्ष:-

वर्तमान समय में पर्यावरण को ह्रास किये बिना आर्थिक विकास की कल्पना करणा औचित्य नहीं होगा पर्यावरणीय अर्थवयवस्था तथा सतत विकास के बीच गहरा संबंध है। फिर भी बिना पर्यावरण का क्षति पहुँचाये हम कैसे अर्थिक विकास करे सतत विकास के द्वारा यह संभव हो सकता है। सतत विकास का उदेश्य भावी पीढ़ियों को बदतर बनाए बिनां पर्यावरणीय, मानवीय एवं प्राकृतिक पूँजी भंडार को सुरक्षित रखते हुए आर्थिक विकास को आगे बढ़ाता है। आज के समय में वायु, ध्वनि तथा जल प्रदुषण बढने का मुख्य कारण मानव की आर्थिक विकास की लालच ने उत्पन्न किया है। जिस देश में पर्यावरण सुरक्षित है तथा प्राकृतिक संसाधनों का विदोहन पर्यावरण को हानि पहुंचाए बिना किया जाता है उसे देश की अर्थव्यवस्था समृद्ध एवं सम्पन्नता का प्रतीक समझी जाती है।

संदर्भ:-

- पर्यावरणीय अर्थशास्त्र, डॉ0 जे0 पी0 मिश्रा
- पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी: नीरज नचिकेता
- Environment, DevelopmentAnd sustainabality, spriger.com
- पारिस्थितकी एवं पर्यावरण: शिव कुमार ओझा
- पर्यावरण शिक्षा एवं भारतीय, डॉ0 के0 पाण्डेय
- पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, दृष्टि आई ए एस

भूमंडलीकरण के दौर में प्रकृति और मनुष्य की अंतर्संबंधता: 'हरा आकाश' उपन्यास

कमलेश

शोधार्थी, पीएच.डी हिंदी, हिंदी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

भूमंडलीकरण के दौर में जहां सब कुछ बाजार द्वारा निर्धारित और संचालित हो रहा है, वहां यांत्रिकता, प्रौद्योगिकी से परे प्रकृति और मनुष्य की अंतर्संबंधता को उपन्यास में अभिव्यक्त करते हुए रमेश दवे ने हरे आकाश के तले हरितिमा के आवरण से घिरी पृथ्वी को कल्पित किया है। मानवी ने प्रकृति और प्राणियों के बीच जो अंतर्संबंध रचे हैं वे सर्वे भवन्तु सुखिन: अथवा समस्ता सुखिनोभवन्तु को सार्थक करते हैं। नर्सरी देखभाल, वात्सल्य, प्यार और बच्चों की स्वाभाविक क्रीड़ा के स्थल होते हैं। यह देखभाल बच्चों की ही नहीं पेड़-पौधों की भी होती है। जिस स्थान पर छोटे-छोटे अथवा नवविकसित पौधों की देखभाल की जाती है और जहां उनका स्वाभाविक विकास होता है। अंतत: मानवी दस एकड़ की भूमि में नर्सरी का निर्माण करती है और उसकी देखभाल का निर्णय लेती है और पृथ्वी की हरियाली को बढ़ाते हुए हरे आकाश के वितान की वृद्धि में लीन रहती है ताकि 'फिर कोई हिरोशिमा-नागासाकी का ध्वंस न दोहराया जाए, इसलिए यह हरी पृथ्वी का उपन्यास, हरा आकाश तक फैलकर यही कह रहा है- प्रकृति और वनस्पति धरती की, मनुष्य की, सबकी खुशहाली है।'[1]

प्रकृति ने जंगल और जीव, पृथ्वी और पानी, मनुष्य और जीवन के बीच जो संतुलन किया है वह अद्वितीय है। जंगल की विशेषता है कि उनका न कोई माली है न उन्हें पालने -पोसने वाला ही। पेड़ ही पौधों के माता पिता होते हैं और वे ही उनका पोषण करते हैं। शेखर पाठक के शब्दों में कहें तो, "जंगल मिट्टी बनाते हैं और उसे बहने से रोकते हैं। पानी और हवा (ऑक्सीजन) का भंडार बढ़ाते हैं। वर्षा के धरती पर प्रहार का असर कम करते हैं। अन्य अनेक वनस्पतियों, जीव जंतुओं, पक्षियों का घर भी जंगल हैं। जंगल उद्योगों के लिए संतुलित कच्चा माल दे सकते हैं और... धरती का ताप बढ़ने तथा जलवायु परिवर्तन के दौर में कार्बन उत्सर्जन को नियंत्रित करने वाला जंगलों से बड़ा कोई उपकरण नहीं है। स्थानीय जलवायु को बनाने में जंगल योगदान देते हैं।... जंगल नदियों को अनुशासित करते हैं और धरती को बांधते हैं।"[2] ये जंगल ही हैं जो पृथ्वी को जीवनदान प्रदान करते हैं। मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के विरोधी नहीं सदा पूरक भूमिका में होते हैं। इसलिए पौधों से बात करने, उनके मौन को सुनने, उनका दुख-दर्द पहचानने, उनकी तीमारदारी करने की आवश्यकता है लेखक का मत है कि "हरितिमा से हिंसा को हरा सकते हैं और संवेदन से समय को नई दिशा दे सकते हैं और अपनी इस पृथ्वी की रक्षा कर सकते हैं जो हमारे भी प्राणों की रक्षक है।"[3]

पृथ्वी पर मनुष्यता स्त्री के स्पंदन, संवेदन और उदात्त चिंतन से ही बची हुई है। टामस ब्राउन की किताब का उद्धहरण कि 'दुनिया में हर चीज कृत्रिम या बनावटी है, प्रकृति ईश्वर की सर्वोत्तम कला है।'[4] उपन्यास का मूल मंत्र बनकर उभरता है, जिसे मानवी ने अपनी कला के रूप में ग्रहण किया और उसी को आगे बढ़ाने का संकल्प लिया क्योंकि वह मदर टेरेसा के नर्सपन से भीतरी प्रभावित थी और इसी की अभिव्यक्ति उसके प्रकृति सेवा में होती है। वह अपना नर्सपन वनस्पति को समर्पित करती है, जिससे मनुष्य, जीवजंतु और प्रकृति के लिए प्राणवायु उत्पन्न करे इसलिए जब 'वह किसी पौधे को मुरझाता देखती तो उसे लगता कि वह उस पौधे को उसी तरह जिंदा रखे, जैसे एक नर्स अपने मरीजों को रखती है- सेवा से, समर्पण से और चिकित्सक के निर्देशों से।'[5]

'हरा आकाश' उपन्यास ऐसी वन गाथा या नर्सरी गाथा है जिसमें तन और मन सब वनमय हो जाएं और उसी में से जीवन की ऐसी राहें निकलें जिनपर चलकर मनुष्य और ज्यादा मनुष्य बन पाए। इसीलिए अपने-अपने अस्तित्व की खोज की अभिव्यक्ति इस उपन्यास में होती है, मनुष्य अपने अस्तित्व के लिए कई तरीके अपनाता है। जैसे मानवी नर्सरी के माध्यम से पृथ्वी को हरा-भरा बनाने का संकल्प लेती है। गौरवी उस हरे भरे आवरण को अपनी पेंटिंग्स द्वारा केनवस पर उतार देने के लिए संकल्पित है उसने पृथ्वी को केनवस बनाकर हरे भरे रंग बिरंगे पौधों से जो पेंटिंग की वह अद्भुत है। गौरवी अपनी बनाई पेंटिंग को नाम देती है 'एक वृक्षमित्रा', जिसमें मानवी और उसकी नर्सरी को एक कोलाज में बदल दिया गया। इसके साथ

ही गौरवी नर्सरी इंजिनियर है जो पेंटिंग्स के जरिए नर्सरी का नक्शा बनाती है। शांभवी जलपरी जो पाइप्स, स्प्रिंकलर्स, छोटे छोटे हजारे और पानी के साथ अन्य साधनों के द्वारा नर्सरी के लिए जल आपूर्ति का प्रबंधन संभालती है। शांभवी जलकर्मी या वाटर एक्टिविस्ट है जो 'प्यास' नमक एनजीओ से जुड़ी है और ऐसी जलयात्रा करती है, जहां पानी को लेकर न केवल जल आंदोलन हुए हों बल्कि पानी को पैदा करने के अभियान भी हुए हों। जिससे ज्ञात हो सके कि पानी को किस तरह पारंपरिक ढंग से बचाया, सुरक्षित और प्रयोग किया जा सकता है तथा इन सब अनुभवों को लेकर वह अपने गांव और आसपास की बस्तियों की समस्या का समाधान कर सके। इस यात्रा में उसने कई-कई अनुभव प्राप्त किए साथ ही सीखा कि 'जल बचाइए, जीवन बचाइए।' क्योंकि जल स्रोत बचेंगे तो पृथ्वी अंदर से नरम और गीली रहेगी जिससे वह बंजरता और सूखे से बची रह सकती है और कोई प्यासा नहीं मरेगा। इसलिए जमीन के खाली टुकड़ों पर वर्षा जल संरक्षण के प्रबंध किए जाएं। शांभवी कहती है, "पानी उजाड़ोगे, खुद उजड़ जाओगे। पानी बचाओगे, खुद भी बचोगे, पृथ्वी बचेगी, जीवन बचेगा, पूरी प्रकृति बचेगी। पानी प्रकृति भी, संस्कृति भी, कृति भी। पानी को मारोगे, मर जाओगे बिन मौत।"[6]

उपन्यास में तीन बहनें तीन जीवन हैं जिनकी तीन निष्ठाएं हैं जो तीन अलग अलग श्रम अर्थात तीन कलाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं। तीनों बहनें 'हरियाली का जीवन, कलाओं का जीवन, पूरे संसार से प्यार का जीवन, इंसानियत का जीवन'[7] जीने की इच्छा रखती हैं। मनुष्य का जीवन केवल खाना, पीना, सोना, कमाना और दैहिक सुख लेना भर ही नहीं होना चाहिए वरन इससे ऊपर उठकर साहस करके कुछ जोखिम भी उठाने का नाम है और मानवी अपना ड्रीम प्रोजेक्ट एक हरे-भरे कुनबे का निर्माण करती है, जिसके नागरिक पेड़-पौधे हैं और इस प्रोजेक्ट में मानवी की दोनों बहन गौरवी, शांभवी और फोरेस्ट डिपार्टमेंट के रिटायर अफसर अरशद कुरेशी सहायता के लिए आगे आते हैं। इस तरह अथक परिश्रम के बाद मानवी प्रकृति के आंगन का निर्माण करती है। यह प्रकृति का आंगन पर्यावरण है, जो हमारे चारों ओर फैला हुआ है। गोविंद चातक के शब्दों में, "पर्यावरण हमारे लिए प्रकृति की ऐसी व्यवस्था है, जो हमें घेरे हुए है, जिसमें हम रहते हैं और जीतें हैं अर्थात जिस पर हम जीवन के लिए निर्भर रहते हैं।"[8]

वृक्ष ही नहीं उसके प्रत्येक हिस्से में स्पंदन होता है। वृक्ष हैं तो पृथ्वी आवश्यक है और वृक्ष को जीवित रखने के लिए जल महत्त्वपूर्ण है। वृक्ष वायुदायक हैं और जल ही वृक्षों को जीवन देता है। पेड़ पौधे मनुष्य को बेहतर मनुष्य बनाते हैं। पेड़ जब बड़े होकर गगन चूमने लगते हैं तो लगता है पृथ्वी पर चलते हुए हरितिमा अनंत आकाश तक फैली हुई हो, और वह स्वयं से आत्मसंवाद करती है कि, 'क्यों करते हैं लोग वृक्ष हत्या। उनके प्राण लेना तो प्राणवायु की हत्या है। प्राणवायु ही नहीं रहेगी तो लोग जिएंगे कैसे?'[9]

मानवी के हरे आकाश की कल्पना अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। हरा आकाश तब तक संभव नहीं होता, जब तक पेड़ स्वयं अपनी आकांक्षाओं की आकाश की ऊंचाई छूने को बेकरार न हों। मानवी की नर्सरी और उस पर छाया हुआ हरा आकाश मनुष्य और प्रकृति का मायालोक बनकर प्रस्तुत होता है, लेखक के शब्दों में, "जमीन है ही क्या बिना पेड़-पौधों, नदी-ताल के? जमीन पर ये सब न हों तो वह एक बंजर रेगिस्तान नहीं लगेगी? धरती के बंजरीकरण के विरुद्ध ही तो पेड़, पौधे, जंगल, पानी सब खड़े हैं एक साथ और उन सबके बीच मानवी की यह नर्सरी 'मानवी-प्रकृति' है जो मानव भी है और प्रकृति भी।"[10] पर्यावरण दिवस पर मानवी-प्रकृति नर्सरी का उद्घाटन विशिष्ट अतिथियों की उपस्थिति में धूमधाम से संपन्न हो जाता है। इसके साथ ही कुरेशी साहब का संक्षिप्त भाषण प्रकृति के महत्त्व को रेखाद्यकिंत कर देता है, "कुदरत ने यह धरती हमें तोहफे में बक्शी है। ये पेड़, पौधे, फूल, फल, पानी सब मिलकर, इस धरती को सजाते हैं और साथ ही इसकी हिफाजत भी करते हैं। जो लोग बम-बंदूक शस्त्र आदि पैदा करते हैं, उनको आज मानवी-प्रकृति नर्सरी का संदेश है कि पृथ्वी बचाओ, वन बचाओ, हरियाली बचाओ। ये सब बचेंगे तो हम सब बचेंगे।"[11]

नर्सरी कांसेप्ट एक व्यवसाय के रूप में उभर कर आ रहा है, पर यहां नर्सरी को एक प्रकार का कल्याणकारी उद्योग बताया गया है, जिससे पृथ्वी, आकाश, मनुष्य, जीव-जन्तु किसी को कोई हानि नहीं होती है। नेचर सेंसेटिविटी की यह हरियाली इतना उत्पन्न कर सकती है कि इसमें अन्य लोगों का ही हित सम्मिलित होता है। रास्किन के अनुसार, "ईश्वर ने हमें यह धरती उधार दी है। यह धरती जितनी हमारी है, उतनी ही उनकी भी है जो हमारे बाद इस पर आनेवाले हैं। यह हमारा कर्तव्य है कि हम अपने कार्यों द्वारा आनेवाली पीढ़ियों को इसके उपकारों से वंचित न होने दें।"[12] इसके साथ ही मनुष्य के हित की बात भी उपन्यास में की गई है। हमारे संस्कार और लोकाचार, लोक विश्वास और लोक आदर्श को ध्यान में रखकर विवाह केवल दो लोगों का मिलन ही नहीं बल्कि नैतिक मूल्य भी है इसलिए लिव इन रिलेशनशिप विवाह का विकल्प नहीं है। तीनों

बहनों की विवाह न करने की प्रतिज्ञाएं उन्हें तोड़नी पड़ती हैं और प्रकृति जिस प्रकार सृजन करती है उसी के नियमों के अनुसार विवाह करके दो लोग भी सृष्टि का निर्माण करें। यही लेखक की अभिव्यक्ति है। किंतु उपन्यास में अंतिम नहीं अनंतिम कहकर प्रतिज्ञाएं, संकल्प कहकर उपन्यास जबाव देता है कि, "सृष्टि जारी है तो ऐसी नर्सरियां बनती रहेंगी। मनुष्य का प्रकृति संवेदन जब तक कायम है, प्रकृति नष्ट नहीं होगी। प्रकृति को जो भी नष्ट करेगा, प्रकृति उसे नष्ट कर देगी।"[13]

अतः निष्कर्षतः कह सकते हैं कि हरा आकाश उपन्यास रमेश दवे की ऐसी अभिव्यक्ति है जिसमें प्रकृति की हरितिमा को केंद्र में रखकर उसके संरक्षण और प्रबंधन को जीवन का परमलक्ष्य बनाया गया है। यह एक हरा आनंद है जो मन को ही नहीं मोहता जीवन को संचालित करता है। प्रकृति की अद्भुत दुनिया का चित्रण लेखक ने मानवी की नर्सरी के माध्यम से किया है। सुंदर नर्सरी के केनवस पर हरी धरती और हरे आकाश का दृश्य 'मानवी-प्रकृति' के माध्यम से सार्थक और मनमोहक रूप में उपस्थित होता है और संदेश देता है कि अगर वृक्ष, वनस्पति और हरियाली नहीं होती तो क्या जीवन संभव होता? इसलिए वृक्ष बचाना पृथ्वी को बचाने जैसा है।

संदर्भ सूची

1. दवे, रमेश, हरा आकाश, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 9
2. पाठक, शेखर, हरी भरी उम्मीद, वाणी प्रकाशन, दिल्ली, 2019, पृष्ठ 31
3. दवे, रमेश, हरा आकाश, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 8
4. वही, पृष्ठ 45
5. वही, पृष्ठ 47
6. वही, पृष्ठ 13
7. वही, पृष्ठ 44
8. चातक, गोविंद, पर्यावरण और संस्कृति का संकट, तक्षशिला प्रकाशन, दिल्ली, संस्करण 1992, पृष्ठ 32
9. दवे, रमेश, हरा आकाश, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 59
10. वही, पृष्ठ 196
11. वही, पृष्ठ 203-204
12. सिंह,सुधा, पर्यावरण शिक्षा, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, संस्करण 2011, पृष्ठ 7, भूमिका से उधृत
13. दवे, रमेश, हरा आकाश, सामयिक बुक्स, नई दिल्ली, 2016, पृष्ठ 222

किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर स्वच्छता के प्रभाव का अध्ययन

डॉ० रिनी गुप्ता

सहायक आचार्य (गृह विज्ञान) महाकौशल विश्वविद्यालय, जबलपुर (म०प्र०)

सारांश

वर्तमान में बढ़ता पर्यावरण प्रदूषण व्यक्ति के जीवन को प्रभावित तो कर रही है एवं उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डाल रहा है। जहाँ तक हम किशोरों की बात करें तो प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में होता है जिसमें शारीरिक एवं मानसिक रूप से वृद्धि होती है। यही पर्यावरण प्रदूषण उनके शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि में रूकावट पैदा करता है। अतः जो व्यक्ति अथवा समाज स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह आधुनिक दौड़ में पीछे रहने को बाध्य है क्योंकि अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति और व्यक्तियों से निर्मित समाज अपने गुणों के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। आई.सी.एम.आर. (2012) ने अध्ययन में बताया कि- स्वास्थ्य पर पर्यावरण का एक प्रमुख प्रभाव पड़ता है और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में निवेश करना एक उत्तम निवेश है। त्वरित शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, भूमण्डलीकरण और आबादी में वृद्धि जैसी स्थितियाँ पर्यावरण पर और दबाव डालती हैं। यदि सभी क्षेत्रों द्वारा तत्काल कार्यवाही नही की गई तो समस्या और गम्भीर हो सकती है जिसका मानव स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ सकता है।

मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति के संतुलनपूर्ण व्यवहार का सीधा प्रभाव सर्वप्रथम स्वयं उसी व्यक्ति पर पड़ता है। वह व्यक्ति जो मानसिक रूप से संतुलित है, सदैव प्रसन्नचित्त रहता है, वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपना धैर्य नहीं खोता। निष्कर्षतः कह सकते हैं कि किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर स्वच्छता का सीधा प्रभाव पड़ता है जो उनके शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक के साथ-साथ सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

मुख्य शब्द- किशोर, मानसिक स्वास्थ्य, स्वच्छता, प्रभाव

प्रस्तावना-

अगर किसी देश को स्वच्छ और शिक्षित बनाना हो तो यह कार्य मुख्य रूप से समाज के तीन लोग कर सकते हैं- माता, पिता और गुरु। व्यक्ति के विकास में वातावरण की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों से यह प्रमाणित हो चुका है कि शिक्षकों पर भौतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आर्थिक वातावरण का व्यापक प्रभाव पड़ता है। उचित वातावरण के अभाव में शिक्षकों का शिक्षण कार्य भी प्रभावित होता है। सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण का प्रभाव व्यक्ति के मानसिक विकास पर स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। उत्तम वातावरण का, छात्र एवं शिक्षक दोनों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। उचित वातावरण में ही बालक की समस्त आन्तरिक अभिवृत्तियाँ अपने वास्तविक रूप में प्रस्फुटित होती है। उचित वातावरण के फलस्वरूप ही बालक में स्वस्थ संरचनात्मक मस्तिष्क का विकास होता है और उसका मानसिक स्वास्थ्य संतुलित और सुरक्षित रहता है। अपनी समस्त अभिक्षमताओं का विदोहन भी बालक स्वस्थ वातावरण में ही कर सकता है।

शिक्षा का कार्य स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का निर्माण करना है। प्रत्येक मनुष्य के लिए उत्तम स्वास्थ्य अमूल्य निधि है, लम्बी आयु एवं उत्तम स्वास्थ्य का अटूट बंधन है। इस संदर्भ में वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन द्वारा दी गई परिभाषा सर्वमान्य है- स्वास्थ्य सम्पूर्ण शारीरिक, मानसिक व सामाजिक निरोगता की अवस्था हैं तथा मात्र बीमारी या दुर्बलता की अनुपस्थिति को स्वास्थ्य नहीं माना जा सकता। जैसा कि कहा जाता है कि मानसिक अस्त-व्यस्त ही गन्दगी की जननी है अर्थात् स्वास्थ्य एक सामान्य व्यक्ति के लिए स्वस्थ्य वातावरण में, स्वस्थ्य परिवार में, स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ्य दिमाग में वास है।

अरस्तू के अनुसार, स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मस्तिष्क का निर्माण करना ही शिक्षा है।

स्वास्थ्य एवं स्वच्छता शिक्षा का वह सोपान है जो व्यक्ति, समुदाय के अच्छे स्वास्थ्य सम्बन्धी आदतों तथा स्वस्थ्य दृष्टिकोण विकसित करने में सहायक होता है। बालक एक अपरिपक्व मानव शरीर है जो दिन प्रतिदिन विकसित होता है।

इसी सन्दर्भ में कहा गया है कि जो भी व्यक्ति अथवा समाज स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह आधुनिक दौड़ में पीछे रहने को बाध्य है क्योंकि अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति और व्यक्तियों से निर्मित समाज अपने गुणों के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं।

प्रकृति एवं मनुष्य का सम्बन्ध आदिकाल से रहा है। दोनों का अस्तित्व एक-दूसरे पर आश्रित है। प्रकृति मनुष्य के जीवन को आधार प्रदान करने के साथ ही उसकी समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यही कारण है कि मनुष्य ने सदैव प्रकृति के साथ आत्मीयता का अनुभव करते हुए उसके साथ तादात्म्य स्थापित करने का प्रयत्न किया है। विश्व की समस्त सभ्यताएँ प्रकृति के सुरम्य वातावरण में ही पुष्पित एवं पल्लवित हुई हैं। वैदिक ऋषि प्रकृति को देवतुल्य मानते हुए उसे प्रसन्न करने के लिए मंत्रों से युक्त यज्ञों का अनुष्ठान किया करते थे तथा अरण्य में आश्रम बनाकर रहने वाले इन मनीषियों ने आत्मतत्त्व की खोज करते हुए सभी के लिए अनुकरणीय आदर्श संस्कृति का निर्माण किया।

जिस प्रकार एक पौधा प्रकृति के अनुसार विकास करता है परन्तु उसकी वृद्धि हेतु ही सभी आवश्यक तत्व प्रदान किये जाते है। इसी प्रकार बालक को शिक्षा देना पौधों के बढ़ने के समान है, जिससे उसको आध्यात्मिक, सामाजिक तथा नैतिक मूल्यों के आधार पर प्रदान की जाने वाली शिक्षा के द्वारा ही सर्वांगीण विकास सम्भव है। यही बालक कालान्तर में सम्पूर्ण मानव के रूप में विकसित होता है जो कि समाज का आवश्यक अंग बनता है तथा समाज को उचित मूल्यों के आधार पर विकसित करने में सहायक होता है। बालक अर्थात् भावी मनुष्य में सम्पूर्ण ज्ञान अवस्थित है, केवल उसकी जाग्रति के लिए प्रबोधन की आवश्यकता है, यह कार्य शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। बालक के सम्मुख सकारात्मक विचार ही रखने चाहिए अर्थात् शिक्षा के द्वारा ही उसके विचार सकारात्मक रूप में जाग्रत होगे। यह मूल्य परक शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है।

आज विज्ञान की प्रगति से मनुष्य प्रकृति पर विजय प्राप्त करने का प्रयास कर रहा है और हमें अनेक सुख, आशय और विलास की चीजें प्रदान की है, पर पर्यावरण तो हमें प्रकृति से विरासत में मिला है जो भगवान् की आश्चर्यजनक देन है जिसे हमें प्राकृतिक से अप्राकृतिक बनाते चले आ रहे हैं। इसके लिए मनुष्य ही जिम्मेदार है, वही उसका रक्षक है और वही उसका भक्षक भी। हमारे पर्यावरण से हमारा सम्बन्ध बहुत पुराना है लेकिन हमसे भी पुराना पौधों और प्राणियों का है, इसलिए सारे जानवर और पेड़-पौधे हमारे लिए बहुत आवश्यक है। आज जहाँ एक ओर विज्ञान की प्रगति ने हमें अनेक लाभ पहुँचाये है वहीं दूसरी ओर कई हानियाँ भी की है। बीसवीं सदी में तो पर्यावरण के विरूद्ध मानव ने बहुत अधिक छेड़-छाड़ की है। अब मानव को अपनी यह छेड़-छाड़ बहुत महँगी पड़ रही है क्योंकि प्रकृति का संतुलन डगमगाने लगा है, उसकी सरलता और पवित्रता नष्ट हो रही है। आज अनेक भयंकर परिणाम मानव के सामने मुँह बाये खड़े हैं।

साफ-सफाई और स्वच्छता स्कूल के मामलों में महत्त्वपूर्ण है क्योंकि बच्चे स्वच्छता सम्बन्धी बीमारियों के प्रति विशेष तौर पर संवेदनशील होते हैं। स्वच्छता सम्बन्धी बीमारियों के अलावा, व्यक्तिगत साफ-सफाई के गलत तरीके, त्वचा और फंगल संक्रमण, आँखों और कानों के संक्रमण और बालों में जुएँ आदि पैदा कर सकते है। साथ ही इन बातों के प्रति जागरूक बच्चे अपने माता-पिता, भाई-बहनों और दोस्तों के आचरण को प्रभावित कर सकते है।

गिजूभाई के स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी विचार न केवल मनोविज्ञान के सिद्धान्तों पर खरे उतरते हैं, वरन् बच्चों में स्वच्छता एवं स्वास्थ्य सम्बन्धी अच्छी आदतों का समावेश भी करते हैं। आज भारत में शिक्षा के विभिन्न स्तरों पर स्वास्थ्य शिक्षा, शारीरिक शिक्षा और योग को पाठ्यक्रम में शामिल करके बच्चों की स्वच्छता एवं स्वास्थ्य रक्षण का महत्वपूर्ण कार्य किया जा रहा है जो कि गिजूभाई के विचारों की प्रासंगिकता को सिद्ध करता है। यदि इन विचारों का अनुशीलन करते हुए शिक्षा की व्यवस्था की जाए तो निश्चित रूप से स्वच्छ विद्यालय और स्वस्थ बच्चों की संकल्पना को साकार करने में सफलता मिलेगी जिससे न केवल शिक्षा का वर्तमान सुधरेगा, वरन् भविष्य भी सुधरेगा। ऐसे शारीरिक तथा मानसिक रूप से स्वस्थ एवं स्वच्छताप्रिय बच्चों के द्वारा ही स्वस्थ, शिक्षित एवं सुदृढ़ भारत का निर्माण सम्भव हो सकेगा।

Driessnack (2006) किशोरावस्था को "बचपन से युवा वयस्कता के लिए मनोसामाजिक, भावनात्मक, संज्ञानात्मक और नैतिक प्रगति" के रूप में दर्शाता है। जीवन की यह अवधि भविष्य के स्वास्थ्य और व्यवहार की स्थापना के एक अविश्वसनीय प्रस्ताव का प्रतिनिधित्व करती है

पैटर्न, दोनों शारीरिक, मानसिक और व्यवहारिक रूप से (स्टाइनबर्ग, 2008)। यह प्रदर्शित किया गया है कि युवाओं में स्वास्थ्य व्यवहार अक्सर व्यक्ति के वयस्क होने के बाद होता है (पेंट्ज, 2009)।

डॉ0 सुरेन्द्र कुमार तिवारी1 के अनुसार, जल, स्वच्छता, स्वास्थ्य की सुविधा, स्कूल में एक सफल विद्यालय वातावरण और प्रतिरोध बनाता हैं। साफ-सफाई से तथा स्वच्छ जल से रोगों पर नियंत्रण पाया गया। यह स्वस्थ शारीरिक ज्ञान के वातावरण की ओर पहला कदम है। जो ज्ञान और स्वास्थ्य दोनों में लाभ पहुँचाता है।

रूद्रेश एस0के02 के अनुसार, स्वच्छता की बुनियादी धारणा मानवीय कार्यों को ऐसे तरीके से व्यवस्थित करना है। जिससे जल और भोजन, दूषित न हो। जिससे स्वच्छता और सम्मानीय जीवन प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

मने अभय बी03 के अनुसार, स्वास्थ्य और स्वच्छता मानव जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व है। पूरे देश में स्वच्छता को विकसित करना और स्वच्छता की व्यवस्था करना जन स्वास्थ्य में सर्वाधिक प्रभावी व्यावधानों के बीच है।

स्वच्छता, यह हम मनुष्य के जीवन में बहुत मायने रखता है। स्वच्छ रहना व अपने आस-पड़ोस को स्वच्छ रखना यह केवल हमारी सामाजिक जिम्मेदारी हीं नहीं, बल्कि हमारी जरूरत भी है।

पुष्पम्, सद्गुरु (2016)4 ने सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन से संभव है स्वच्छ भारत नामक विषय पर अध्ययन किया। अध्ययन के परिणामस्वरूप बताया कि आखिर क्यों हमारे जनमानस को सफाई जैसी चीज के लिए प्रोत्साहित करना पड़ रहा है। जबकि यह स्वत: करने वाली चीज है। इसके पीछे व्यक्तिगत सोच तथा प्रेरणा काम करती है। प्राय: अक्सर यह देखा गया है कि कुछ आलस्य की वजह से सफाई पर ध्यान नहीं दे पाते। कुछ लोग जागरूकता की कमी के कारण ऐसा करते है और कुछ झूठी शान के लिये भी करते है। वर्तमान समय में न केवल देश वरन् वैश्विक स्तर पर भी यह बात मान ली गयी है कि सफाई हमारे स्वयं के लिये, समाज के लिये तथा सम्पूर्ण विश्व के लिये महत्त्वपूर्ण है। इसके लिए सम्पूर्ण जनमानस को गम्भीर होना ही पड़ेगा। साथ ही जहाँ भी यदि जारूकता के स्तर में कमी आये तो फौरन सरकार तथा सिविल सोसाइटी को इसके लिये सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये। हम सच्चे अर्थों में भारत को तभी स्वच्छ एवं विकसित बना सकते हैं जब हम सभी इस बात का प्रण करें कि स्वच्छता की जिम्मेदारी स्वयं उनकी है।

स्वस्थ जीवन जीने के लिए स्वच्छता का विशेष महत्त्व है। स्वच्छता अपनाने से व्यक्ति रोग मुक्त रहता है और एक स्वस्थ राष्ट्र निर्माण में अपना महत्त्वपूर्ण योगदान देता है। अत: हर व्यक्ति को जीवन में स्वच्छता अपनानी चाहिए और अन्य लोगों को भी इसके लिए प्रेरित करना चाहिए। लोगों व बच्चों को खुले में शौच नहीं जाना चाहिए क्योंकि इससे अनेक बीमारियाँ जैसे हैजा, पेचित, पीलिया, टाइफाइड जैसी घातक बीमारियाँ फैलती हैं। खाने से पहले हाथों को साबुन से धोने जैसी छोटी-छोटी बातों को ध्यान में रखकर व्यक्ति स्वस्थ रह सकता है। व्यक्तिगत व सामुदायिक स्तरों पर रोग मुक्त रहने के लिए उचित स्वच्छता बहुत जरूरी है। भारत में, विशेषकर गरीबों व ग्रामीणों में, स्वच्छता की उचित सुविधाएँ न होने के कारण बहुत से रोग होते हैं। लोगों को उचित स्वच्छता सुविधाएँ उपलब्ध कराकर, इन रोगों की रोकथाम की जा सकती है, तथा कइयों को मरने से बचाया जा सकता है।

स्वच्छता एक अच्छी आदत है जो हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को स्वच्छ एवं स्वस्थ रखता है एवं जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी प्रभावित करता है।

निष्कर्ष-

वर्तमान में बढ़ती पर्यावरण प्रदूषण की समस्या व्यक्ति के जीवन को प्रभावित तो कर रही है एवं उनके स्वास्थ्य पर भी बुरा प्रभाव डाल रहा है। जहाँ तक हम किशोरों की बात करें तो प्राथमिक एवं माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थी बाल्यावस्था एवं किशोरावस्था में होता है जिसमें शारीरिक एवं मानसिक रूप से वृद्धि होती है यदि यही पर्यावरण प्रदूषण उनके शारीरिक एवं मानसिक वृद्धि में रूकावट पैदा करती है। अत: जो व्यक्ति अथवा समाज स्वास्थ्य की दृष्टि से पिछड़ा हुआ है वह आधुनिक दौड़ में पीछे रहने को बाध्य है क्योंकि अच्छे स्वास्थ्य के अभाव में व्यक्ति और व्यक्तियों से निर्मित समाज अपने गुणों के अनुरूप सर्वश्रेष्ठ प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पाते हैं। आई.सी.एम.आर. (2012)5 ने अध्यन में बताया कि - स्वास्थ्य पर पर्यावरण का एक प्रमुख प्रभाव पड़ता है और पर्यावरणीय स्वास्थ्य में निवेश करना एक उत्तम निवेश है। त्वरित शहरीकरण, औद्योगिकीकरण, भूमण्डलीकरण और आबादी में वृद्धि जैसी स्थितियाँ पर्यावरण पर और दबाव डालती हैं। यदि सभी क्षेत्रों द्वारा तत्काल कार्यवाही नहीं की गई तो समस्या और गम्भीर हो सकती है जिसका मानव स्वास्थ्य पर सीधा प्रभाव पड़ सकता है।

मानसिक रूप से स्वस्थ्य व्यक्ति के संतुलनपूर्ण व्यवहार का सीधा प्रभाव सर्वप्रथम स्वयं उसी व्यक्ति पर पड़ता है। वह व्यक्ति जो मानसिक रूप से संतुलित है, सदैव प्रसन्नचित्त रहता है, वह विपरीत परिस्थितियों में भी अपना धैर्य नहीं खोता।

निष्कर्षतः कह सकते हैं कि किशोरों के मानसिक स्वास्थ्य पर स्वच्छता का सीधा प्रभाव पड़ता है जो उनके शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक के साथ-साथ सम्पूर्ण व्यक्तित्व को प्रभावित करता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. तिवारी, सुरेन्द्र कुमार (2014). द स्टडी ऑफ अवरनेस ऑफ ए नेशनल मिशनः स्वच्छ भारतः स्वच्छ विद्यालय इन द मीडिल स्कूल स्टडीज ऑफ प्राइवेट एण्ड पब्लिक स्कूल्स, पैरीफेक्स - इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च, 3(12), 23-24
2. सुगम, रूद्रेश कुमार, मित्तल, सोनाली एवं घोस, अरूनभा (2014). कचरा मुक्त, शौचालय युक्त भारत, काउन्सिल ऑफ एनर्जी, इन्वॉयरमेण्ट एण्ड वाटर, 584, http:/ceew.in
3. मने, अभय बी. (2014). स्वच्छ भारत मिशन फॉर इण्डियास सैनिटेशन प्रॉब्लम्सः नीड ऑफ द आवर, यूनिक जर्नल ऑफ मेडिकल एण्ड डेन्टल साइंसेस, 02(04), 58-60
4. सद्गुरु पुष्पम् (2016). सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन से संभव है स्वच्छ भारत, इण्टननेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन एण्ड साइंस रिसर्च रिव्यू, 3(3), 4-7
5. ''स्वास्थ्य और पर्यावरण की चुनौतियाँ'', आई.सी.एम.आर., प्रकाशन एवं सूचना प्रभाग, भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली, वर्ष-26, अंक-11, नवम्बर 2012
6. श्याम, उमा एवं वन्दना (2015). ''स्वच्छ भारत- भविष्य के लिए परिदृश्य'', अखिल भारतीय राजभाषा संगोष्ठी, भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन, नौ सेना भौतिक तथा समुद्रविज्ञान प्रयोगशाला, तृक्काक्करा डाक घर, कोच्चि, 30 अक्टूबर 2015.
7. सेनगुप्ता, गीताली (2015). ''मानव स्वास्थ्य एवं प्रदूषण'', सोशल इश्शूस एण्ड एन्वायरमेण्टल प्रॉब्लम्स, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च, ग्रन्थालय, 3(9).
8. स्वच्छ भारत, एक कदम स्वच्छता की ओर, इ. गां. राष्ट्रीय जनजातीय विश्वविद्यालय, अमरकंटक, अनूपपुर, मध्यप्रदेश, 2016, पृ0 46

पर्यावरण संरक्षण एवं स्वच्छता

डॉ० विजय कुमार गुप्ता

एसोसिएट प्रोफेसर, शिक्षाशास्त्र विभाग, साई नाथ विश्वविद्यालय, राँची, झारखण्ड

पर्यावरण–

पर्यावरण मानव जीवन का अभिन्न अंग है। वर्तमान युग में पर्यावरण का ह्रास एक जीवन्त समस्या है। पर्यावरण से आशय प्रकृति की व्यवस्था से है। वैज्ञानिक प्रगति ने मानव को इतना विमूढ़ बना दिया है कि उसने प्रकृति की व्यवस्था तथा प्राकृतिक नियमों में हस्ताक्षेप करना प्रारम्भ कर दिया है। आज हम अपने इन्हीं कृत्यों का दुष्परिणाम भुगत रहे है। ओजोन मण्डल का विघटन हरित गृह प्रभाव, अम्लीय वर्षा का प्रभाव समुद्र तल का ऊँचा उठते तापमान में वृद्धि आदि ऐसी गम्भीर समस्याऐं है जिनके कारण वन्य जीव, मृदा कृषि उपजे तथा मानव स्वयं संकट ग्रस्त हो गया है।

परिस्थितिक असंतुलन जैव मण्डल के अस्तित्व के लिए खतरा बनता जा रहा है। जिसे आज हम विकास कहते है। वहीं संस्कृति एवं सभ्यता के लिए घातक सिद्ध हो रहा है। अभी भी समय है कि हम इन दुष्परिणामों से सचेत होकर पर्यावरण गुणवत्ता के सुधार के लिए प्रयत्नशील हो जाये। जिसमें पर्यावरण शिक्षा सर्वाधिक उपयोगी है। जिसमें शिक्षक एक ऐसा सहारा है जिस पर पर्यावरण सुधार के लिए विश्वास किया जा सकता है। इसी उद्देश्य से शिक्षक प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में पर्यावरणीय शिक्षा को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। आज भी शिक्षण केन्द्र शिक्षार्थियों को बाल्यकाल से सामाजिक तथा नैतिक शिक्षा प्रदान करते है। शिक्षा के प्रमुख उद्देश्यों में एक प्रकृति की शिक्षा भी है जो प्राथमिक एवं माध्यमिक विद्यार्थियों के लिए अति आवश्यक है।

पर्यावरण प्रदूषण एक सामाजिक समस्या है। अतः विद्यालय का यह परम कर्त्तव्य है कि बालक–बालिकाओं के पाठ्यक्रम में प्रारम्भिक स्तर से पर्यावरण संरक्षण तथा प्रदूषण सम्बन्धी शीर्षकों को सम्मिलित किया जाय जिससे पर्यावरण संरक्षण में सहायता प्राप्त हो सके। अतः आज के नन्हें- मुन्हें बच्चे आगे चलकर देश के कर्णधार होगे अतः विद्यालय का यह परम कर्त्तव्य है कि वे बालकों को इस दिशा में जागरूक करें जिससे प्राथमिक स्तर से ही बच्चे पर्यावरण संरक्षण के विषय में समझ विकसित कर सके।

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता और इसका महत्त्व आज सभी देशों के लिए समान रूप से है क्योंकि विश्व के सभी देश आज किसी न किसी प्रकार के पर्यावरणीय संकट से ग्रस्त है विकासशील देश और विकसित देश अपनी भिन्न–भिन्न समस्याओं के बावजूद इस बात पर एकमत है कि जितनी तेजी से आज पर्यावरण की समस्याएँ उठी है, चाहे वह जनसंख्या वृद्धि के दुष्प्रभावों के कारण हो अथवा औद्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप हो या कोई अन्य कारण हो उसको सरकार अथवा जनता अथवा दोनों ही सुधार कर पिछले रूप में नही ला सकती। प्राकृतिक संसाधनों का जिस दुर्दान्त रूप में शोषण हुआ है उससे जो प्रकृति के संचित कोष रिक्त हो रहे हैं उसे वापस पूरा नही किया जा सकता और यहाँ तक कि लोगों के अदूर दर्शिता पूर्ण कार्य व्यवहार से जो जल, वायु, भूमि या अन्य प्रदूषण हुआ है उसे निरापदता में नहीं बदला जा सकता।

हाँ यह संभव है कि यदि पृथ्वी पर रहने वाले निवासी यह समझने लगे कि उनके कृत्यों से स्वर्ग रूपी पृथ्वी नरक बनी रही है, विशाल प्राकृतिक निधियों (जल, वायु, भूमि, पेड़-पौधे, वनस्पति) के प्रचुर भण्डार वाली धरती रिती हो चली है, भविष्य की बात छोड़े, वर्तमान पीढ़ी का जीवन जीना भी दुर्भर हो गया है जो सम्भव है कि एक तरफ नष्ट हो रही स्थिति पर कुछ काबू पाया जा सके। आगे उसे और विनाश से बचाया जा सकता है तथा इस बात की भी कोई बहुत असम्भावना नहीं कि पृथ्वी के स्वरूप में कुछ सुधार लाया जा सके। यहाँ के लोगों को समझना होगा कि पर्यावरण को संतुलित रखना आज की महती आवश्यकता है और उसे उन्हें ही पूरा करना है। पर्यावरण शिक्षा के सन्दर्भ में संभवत यही सोच का प्रारम्भ माना जा सकता है।

पर्यावरण का अर्थ एवं परिभाषा

पर्यावरण का अभिप्राय उस समष्टि से हैं जो मनुष्य एवं उसकी क्रियाओं को घेरे हुए है। पर्यावरण दो शब्दों से निर्मित है- 'परि- + 'आवरण'। परि का अर्थ है चारों ओर से आवृत्त या ढका हुआ। मानव सहित अन्य जीवाणुओं को जो परिस्थितियाँ, दशाएँ और शक्तियाँ घेरे हुए हैं उन्हें एक शब्द में पर्यावरण कहते हैं। मानव पर्यावरणीय समष्टि का एक अंग है।

ए0जी0 टान्सले ने पर्यावरण को ''उन सम्पूर्ण प्रभावी दशाओं का योग कहा है, जिनमें जीव रहते हैं।''

वुडवर्थ के अनुसार, ''पर्यावरण में वे सभी सम्मिलित होते है जो व्यक्ति को जीवन प्रारम्भ करने के समय से प्रभावित करते है।''

पर्यावरण में वायुमण्डल, स्थलमंडल तथा जलमंडल के सभी भौतिक तथा रासायनिक तत्त्वों को शामिल किया गया है। इस तरह पर्यावरण भौतिक तथा जैविक दोनों तत्त्वों से मिलकर बना है। इन्साइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका में प्रस्तुत की गई पर्यावरण की परिभाषा इस प्रकार है- ''पर्यावरण भौतिक, रासायनिक तथा जैविक कारकों का जटिल समूह है जो किसी जीव या पारिस्थितिकीय समुदाय पर किया जाता है, जिससे उसका स्वरूप तथा जीवितता निर्धारित होती है।''

स्वच्छता का अर्थ-

स्वच्छता जीवन का वह गुण है, जो व्यक्ति को अधिक समय तक जीवित रहने, सुखी रहने तथा सर्वोत्तम प्रकार से सेवा करने योग्य बनाता है।

स्वच्छता एक अच्छी आदत है जो हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को स्वच्छ एवं स्वस्थ रखता है एवं जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी प्रभावित करता है।

इस सन्दर्भ में डॉ0 विनय रावत ने लिखा है- प्राथमिक स्तर की शिक्षा के आदतों का विशिष्ट स्थान होता है। अच्छी आदत में स्वच्छता सर्वोच्च है। इससे ही शिक्षा की सार्थकता सिद्ध होती है।

रस्किन ने शिक्षा की व्याख्या करते हुए लिखा है कि, हवा, पानी और मिट्टी का ठीक ढंग से उपयोग करना ही शिक्षा है।

स्वच्छता को परिभाषित करते हुए विश्व स्वास्थ्य संगठन (WHO) ने कहा है कि-

1. लोगों को स्वच्छता के लिए शौचालयों व दूषित पानी को स्वयं स्वच्छ रखने के साधनों व उपायों को करने की आवश्यकता ही स्वच्छता है।
2. स्वच्छता का सामान्य आशय उन प्रावधानों, सुविधाओं सेवाओं से है, जो मानव से मल-मूत्र और कचरे आदि का सुरक्षित निस्तारण करते हैं।
3. बहुत से व्यवसायी लोगों ने स्वच्छता को एक बहुत बड़ा विचार बताते हुए इसमें मानव के मल-मूत्र, कचरे आदि को सुरक्षित संग्रहण, भण्डारण, उपचार निस्तारण तथा पुनः प्रयोग करने पर बल दिया है।
4. ठोस कचरे का पुनः प्रयोग चक्रण का प्रबन्धन करना ही स्वच्छता है।
5. पारिवारिक दूषित जल की निकासी और निस्तारण एवं पुनः प्रयोग के उपाय करना ही स्वच्छता है।
6. तूफान के पानी की निकासी व्यवस्था, औद्योगिक कचरा, खतरनाक कचरा जैसे रासायनिक कचरा जैसे रासायनिक कचरा, रेडियोएक्टिव कचरा और अस्पतालों का कचरा आदि का संग्रहण व निस्तारण करना ही स्वच्छता है।

डॉ0 सुरेन्द्र कुमार तिवारी के अनुसार, जल, स्वच्छता, स्वास्थ्य की सुविधा, स्कूल में एक सफल विद्यालय वातावरण और प्रतिरोध बनाता हैं। साफ-सफाई से तथा स्वच्छ जल से रोगों पर नियंत्रण पाया गया। यह स्वस्थ शारीरिक ज्ञान के वातावरण की ओर पहला कदम है। जो ज्ञान और स्वास्थ्य दोनों में लाभ पहुँचाता है।

रूद्रेश एस0के0 के अनुसार, स्वच्छता की बुनियादी धारणा मानवीय कार्यों को ऐसे तरीके से व्यवस्थित करना है। जिससे जल और भोजन, दूषित न हो। जिससे स्वच्छता और सम्मानीय जीवन प्राप्त करने में सहायता मिलेगी।

मने अभय बी0 के अनुसार, स्वास्थ्य और स्वच्छता मानव जीवन के सबसे महत्त्वपूर्ण तत्व है। पूरे देश में स्वच्छता को विकसित करना और स्वच्छता की व्यवस्था करना जन स्वास्थ्य में सर्वाधिक प्रभावी व्यावधानों के बीच है।

स्वच्छता, यह हम मनुष्य के जीवन में बहुत मायने रखता है। स्वच्छ रहना व अपने आस-पड़ोस को स्वच्छ रखना यह केवल हमारी सामाजिक जिम्मेदारी हीं नहीं, बल्कि हमारी जरूरत भी है।

आज स्वच्छता एक जरूरी एवं आवश्यक ज्वलन्त मुद्दा बना हुआ है लेकिन आज लोगों में इसको लेकर कोई जागरूकता नहीं है। स्वच्छता महज एक सरकारी एजेण्डा ही बनकर रह गया है, जबकि यह पूरे समाज से बहुत ही घनिष्ठ सम्बन्ध रखने वाला सवाल है जबकि लोग इसके प्रति जागरूक नहीं होगें तब तक यह सपना बन कर ही रह जायेगा।

पर्यावरण संरक्षण एवं स्वच्छता का सम्बन्ध

- अग्रवाल, बी0एस0 (1994) ने निष्कर्ष में इंगित किया कि- पर्यावरण का क्षेत्र सामयिक होने के कारण अथवा प्रदूषण से इसकी निकटता से उत्पन्न स्थिति में भयावह हो जाने के कारण समाचार माध्यम इसकी बिल्कुल अवहेलना तो नहीं कर पा रहे हैं परन्तु प्रस्तुत सामग्री समुद्र में एक बूंद मात्र है। समाचार पत्रों तथा अन्य सभी संचार माध्यमों को और अधिक सक्रिय भाग लेना होगा और वैज्ञानिकों तथा विषय विशेषज्ञों, पर्यावरणविदों को इससे जोड़ना होगा ताकि पर्यावरण के प्रति जागरूकता जनमानस में जगाई जा सकें।
- प्रदेशी, गीता (2009) ने महिलाओं में स्वच्छता अभियान: महाराष्ट्र के यवतमल जिले के विशेष सन्दर्भ में अध्ययन किया। शोधार्थी ने यह पाया कि महिलाओं ने इस अभियान के लिए अपनी सक्रिय भूमिका निभाई है तथा इस अभियान को अपने गाँव में सफल बनाने के लिए सफल प्रयास किये हैं। इस शोध में यह भी पाया गया कि महिलाओं के स्वच्छता के प्रति रवैया उनके परिवार को प्रभावित करता है तथा बच्चों और बड़ों को स्वच्छता के प्रति जागरूक करता है।
- पाण्डेय, प्रज्ञा एवं यादव, गरिमा (2015) ने स्वच्छता: भारत की चुनौती नामक विषय पर अध्ययन किया। निष्कर्ष के रूप में पाया कि- भारत विश्व में जनसंख्या की दृष्टि से दूसरे स्थान पर है, जहाँ लगभग 31.2 प्रतिशत जनसंख्या शहरों व कस्बों में निवास कर रही है। औद्योगीकरण व निजीकरण के फलस्वरूप ग्रामीण जनता आजीविका हेतु शहरों की ओर पलायन कर रही है। यह अनियंत्रित पलायन स्वच्छता, स्वास्थ्य, सरकारी योजनाओं के लिए एक चुनौती के रूप में सामने खड़ी है। सरकार द्वारा भी इन क्षेत्रों में स्वच्छता व स्वास्थ्य को बढ़ावा देने के लिए विभिन्न योजनायें चलायी जा रही है, जिसके माध्यम से बीमारियों को नियंत्रित करने का प्रयास किया जा रहा है परन्तु इसके बाद भी विभिन्न चुनौतियाँ आज हमारे सामने एक समस्या बन कर खड़ी है, जो इनके सफल होने में रूकावट डाल रही है। आज विकासशील देशों में स्वच्छता व स्वास्थ्य की समस्या अति ज्वलंत है। ये समस्यायें हमारे पर्यावरण पर अपना सीधा प्रभाव डाल रही है। जिसके कारण संक्रमित रोगों की संख्या बढ़ी है। इस स्थिति से निपटने हेतु गैर सरकारी संगठन, अन्तर्राष्ट्रीय संगठन, सरकारी योजनायें व नीतियाँ अपना प्रभावी कार्य करने का प्रयास कर रही है। इसी के तहत विश्व स्वास्थ्य संगठन, वॉटर एड, युनीसेफ जैसी संस्थायें भारत में स्वच्छता के स्तर को प्रबल बनाने में अपना सहयोग दे रही है, ताकि हमारी स्थिति पहले से बेहतर हो सकें और एक स्वच्छ व स्वस्थ भारत का निर्माण संभव हो सकें।
- श्याम, उमा एवं वन्दना (2015) ने अखिल भारतीय राजभाषा संगोष्ठी में अपने लेख स्वच्छ भारत- भविष्य के लिए परिदृश्य नामक विषय में शक्ति, कमजोरी, मौका एवं आशंका को विश्लेषित करते हुए कहा कि कोई भी सरकार चाहे जितनी भी योजनायें शुरू करें, उसको सफल बनाने के लिए जनता की सहभागिता बहुत जरूरी है, जैसा आप जानते हैं- स्वच्छता भगवान की ओर अगला कदम है। यह कदम हर एक व्यक्ति को उठाना चाहिए ताकि पूरे देश की आर्थिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक दृष्टि से विकास हो सकें, दृढ़ इच्छा- शक्ति के साथ विविधता में एकता की विशेषता रखने वाले भारत देश को स्वच्छ भारत की ओर ले जाना हम सबका कर्त्तव्य है, हम इसके लिए जरूर कोशिश करेंगे।
- जायसवाल, प्रिया (2016) ने प्रदेश में सही राह पर स्वच्छता की मुहिम नामक लेख में बताया कि- स्वच्छ भारत अभियान सही मायनों में तभी सफल हो पाएगा जब भारत में कोई भी व्यक्ति खुले में शौच नहीं जाएगा, पूरे देश में आदर्श शौचालय होंगे, मल ढोने की वर्षो पुरानी कुप्रथा समाप्त होगी। जब अपना तन-मन स्वच्छ रखेंगे तब बनेगा गाँधी जी के सपनों का स्वच्छ भारत, तब हम उनकी नजरों में नजरें डालकर जवाब दे पाएंगे। तो आइए हम सब प्रण लेते

हैं कि हम अपने घरों को और आसपास स्वच्छता रखने का पुनः प्रयास करेंगे और अपने राज्य एवं देश को स्वच्छ राष्ट्र बनाएगें।

- जैन, चन्द्र कुमार (2016) ने स्वच्छता के प्रति लोगों को जागरूक करते रहे गाँधी जी नामक लेख में अपने कहा कि साफ-सफाई के मुद्दे को अब वास्तव में गम्भीरता से लेने का वक्त आ गया है। वैसे, छोटे-बड़े शहरों में इस अभियान का असर तो दिखने लगा है। लोग अब कचरे को लेकर अपनी सोच का कचरा साफ करते दीख रहे हैं। कभी अपने घर के सामने या पड़ोसी के द्वार पर घर का कचरा फेंक आने से गुरेज न करने वाले भी आहिस्ता- आहिस्ता ही सही, अपने आदत बलने के मूड में पेश आ रहे हैं। ऐसा पहले देखने में नहीं आता था। इससे भला कौन इंकार कर सकता है कि हम प्रयास तो कर रहे हैं। लेकिन, साझा जिम्मेदारी के गहरे अहसास के बगैर बात नहीं बनेगी।

अध्ययन के परिणामस्वरूप बताया कि आखिर क्यों हमारे जनमानस को सफाई जैसी चीज के लिए प्रोत्साहित करना पड़ रहा है। जबकि यह स्वतः करने वाली चीज है। इसके पीछे व्यक्तिगत सोच तथा प्रेरणा काम करती है। प्रायः अक्सर यह देखा गया है कि कुछ आलस्य की वजह से सफाई पर ध्यान नहीं दे पाते। कुछ लोग जागरूकता की कमी के कारण ऐसा करते है और कुछ झूठी शान के लिये भी करते है। वर्तमान समय में न केवल देश वरन् वैश्विक स्तर पर भी यह बात मान ली गयी है कि सफाई हमारे स्वयं के लिये, समाज के लिये तथा सम्पूर्ण विश्व के लिये महत्त्वपूर्ण है। इसके लिए सम्पूर्ण जनमानस को गम्भीर होना ही पड़ेगा। साथ ही जहाँ भी यदि जारूकता के स्तर में कमी आये तो फौरन सरकार तथा सिविल सोसाइटी को इसके लिये सक्रिय भूमिका निभानी चाहिये। हम सच्चे अर्थों में भारत को तभी स्वच्छ एवं विकसित बना सकते हैं जब हम सभी इस बात का प्रण करें कि स्वच्छता की जिम्मेदारी स्वयं उनकी है।

सुझाव-

- गाड़ियों से होने वाले वायु प्रदूषण पर रोक लगाने के लिए वैज्ञानिक उपाय की जो खोज हो रही है उसे तत्पश्चात् जमीन पर लाने की आवश्यकता है तथा पेयजल एवं भूमि को गन्दगी से बचाने हेतु स्वच्छता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।
- पर्यावरण संरक्षण के लिए पेड़-पौधों का रोपण सभी मनुष्यों को करना चाहिए जिससे पर्यावरण में कार्बन मोनो आक्साइड को कम किया जा सका।
- उद्योग को शहरों से बाहर लगाने तथा उससे निकलने वाले प्रदूषित जल एवं वायु के निस्तारण हेतु उपचारात्मक व्यवस्था करना चाहिए।
- शहरों के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्र में भी स्वच्छता पर विशेष ध्यान देना चाहिए जिससे लोगों में फैलने वाली बीमारियों पर लगाम लगाया जा सके।
- बड़े-बड़े शहरों में कूड़े के निस्तारण के लिए सरकार द्वारा किये जाने वाले प्रयासों में सभी व्यक्तियों को सहयोग देना चाहिए जिससे स्वच्छता के लिए किये जा सरकारी प्रयासों को पूर्ण किये जा सके।
- पर्यावरण संरक्षण में सबसे पहले पालिथीन से छुटकारा दिलाना आवश्यक है क्योंकि ये पॉलीथीन ही हमारे पर्यावरण को सबसे अधिक गन्दा एवं प्रदूषित कर रही है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में पर्यावरण संरक्षण के स्वच्छता पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है क्योंकि आज बढ़ती भौतिकता के कारण शहर के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में प्रदूषण की मात्रा बढ़ती जा रही हैं।
- पर्यावरण संरक्षण के लिए विद्यालय, महाविद्यालय के साथ-साथ समाज एवं परिवार में पर्यावरण शिक्षा के प्रति जागरूक करने की आवश्यकता है जिससे लोग स्वच्छता पर विशेष ध्यान दे और पर्यावरण संरक्षण में अपनी अहम भूमिका निभा सके।

निष्कर्ष-

स्वच्छता एक अच्छी आदत है जो हमारे शारीरिक एवं मानसिक स्थिति को स्वच्छ एवं स्वस्थ रखता है एवं जो व्यक्ति के व्यक्तित्व को भी प्रभावित करता है।

स्वच्छता की अवधारणा कोई नवीन नही है अपितु इसकी नींव हमें हमारे प्राचीन सैंधव सभ्यता में दिखायी देती हैं जहाँ सुन्दर नगर नियोजन, जल निकासी व्यवस्था, हवादार कमरें, बृहद् स्नानागार आदि मिलते हैं साथ ही कई पेड़-पौधों व पशु-पक्षियों को धार्मिक मान्यता प्रदान कर जैविक विविधता संरक्षित व सुरक्षित करने का प्रयास किया गया। उत्तरोत्तर वैदिक काल, उपनिषद् काल, महाकाव्य काल व मध्यकालीन व आधुनिक भारत में भी स्वच्छता को समाज व धर्म से जोड़कर जीवन्त बनाये रखने का प्रयास किया गया। इसी कड़ी में 'स्वच्छ भारत अभियान' भी है जिसमें हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी ने 2 अक्टूबर 2014 को दिल्ली के बाल्मीकि सदन से शुरूआत की। इस अवसर पर श्री मोदी ने देश की जनता को शपथ दिलायी 'न गंदगी करेंगे और न करने देंगे।' इस अभियान को देश का जनमानस कितना सहयोग कर पायेगा इसका जवाब समय के साथ मिल पायेगा। फिलहाल राष्ट्र के स्वर्णिम विकास के लिए यह एक सार्थक कदम है।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि स्वच्छता देश, समाज व व्यक्ति के लिए अनिवार्य है। यदि हमारा परिवेश स्वच्छ है जो तन-मन भी सुगंधित रहेगा। परिवेश को स्वच्छ बनाने में जन जागरूकता अपेक्षित है। जन जागरूकता समाज के सबसे अधिक जागरूक माने जाने वाले शिक्षक ही ला सकते है। शिक्षक ही वह माध्यम है जो एक पीढ़ी को तैयार करते हैं। यदि देश के सभी शिक्षक इस पवित्र कार्य का बीड़ा अपने कंधों पर उठाने को सहर्ष तैयार हो जाय तो भारत स्वच्छता में भी विश्व गुरु बन सकता है।

स्वच्छ भारत अभियान जो कि सफाई के प्रति देश में जागरूकता फैलाने के लिए चलाया गया है वह युवाओं में जागरूकता लाने में सक्रिय रहा है। अभियान के प्रचार-प्रसार में टेलीविजन की भूमिका सबसे अहम पायी गई अभियान से जुड़े विज्ञापनों ने टेलीविजन के माध्यम से युवाओं में सफाई के प्रति जागरूकता फैलाने में अहम् भूमिका निभाई है। मीडिया व इंटरनेट का भी इसमें योगदान रहा है।

अतः कहा जा सकता है कि पर्यावरण संरक्षण में स्वच्छता अपना अहम भूमिका अदा कर रही है। आज पर्यावरण संरक्षण में स्वच्छता पर उठाये गये कदम ने पर्यावरण में होने वाले प्रदूषण को काफी हद तक रोकने में अपनी भूमिका अदा किया है। अतः आज सभी की नैतिकता है कि हम स्वच्छता पर विशेष ध्यान दे तथा पर्यावरण संरक्षण में अपना-अपना योगदान दे जिससे ग्लोबल वार्मिंग पर पड़ने वाले प्रभाव का कम किया जा सके तथा आने वाले समय में पर्यावरण में आने वाली समस्याओं से निजात पा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1 रावत, विनय (2004). प्राथमिक विद्यालय का वातावरण, जयपुरः संस्तुति प्रकाशन, पृ0 431

2 रिपोर्ट ऑफ वर्ल्ड हेल्थ ऑर्गनाइजेशन साइटेड इन पपलीराम एवं नरेन्द्र, सीमतवाल (2017). स्वच्छ भारत में अलवर जिले की भूमिका, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस रिसर्च एण्ड डेवेलपमेण्ट, 2(6), पृ0 803-808

3 तिवारी, सुरेन्द्र कुमार (2014). द स्टडी ऑफ अवरनेस ऑफ ए नेशनल मिशनः स्वच्छ भारतः स्वच्छ विद्यालय इन द मीडिल स्कूल स्टडीज ऑफ प्राइवेट एण्ड पब्लिक स्कूल्स, पैरीफेक्स - इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च, 3(12), 23-24

4 सुगम, रूद्रेश कुमार, मित्तल, सोनाली एवं घोस, अरूनभा (2014). कचरा मुक्त, शौचालय युक्त भारत, काउन्सिल ऑफ एनर्जी, इन्वॉयरमेण्ट एण्ड वाटर, 584, http://ceew.in

5 मने, अभय बी. (2014). स्वच्छ भारत मिशन फॉर इण्डियास सैनिटेशन प्रॉब्लम्सः नीड ऑफ द आवर, यूनिक जर्नल ऑफ मेडिकल एण्ड डेन्टल साइंसेस, 02(04), 58-60

6 बी0एस0 अग्रवाल (1994). पर्यावरण ओैर समाचार माध्यम-एक अध्ययन, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका, वर्ष 2, अंक 2, पृ0 154-159

7 गीता प्रदेशी (2009). वुमैन इन टोटल सैनिटेशन कम्पैनः ए केस स्टडी फॉम यवतमल डिस्ट्रिक, महाराष्ट्र, इण्डिया, जर्नल ऑफ इकोलॉजिकल, 25(2), 79-85

8 प्रज्ञा पाण्डेय एवं गरिमा यादव (2015). स्वच्छताः भारत की चुनौती, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ रिसर्च ग्रन्थालय, ए नॉलेज रिस्प्रोटरी, सोशल इश्शूस एण्ड एन्वायरमेण्टल प्रॉब्लम्स, 3(9), सितम्बर 2015, 1-3

9 श्याम, उमा एवं वन्दना (2015). ''स्वच्छ भारत- भविष्य के लिए परिदृश्य'', अखिल भारतीय राजभाषा संगोष्ठी, भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय, रक्षा अनुसंधान तथा विकास संगठन, नौ सेना भौतिक तथा समुद्रविज्ञान प्रयोगशाला, तृक्काक्करा डाक घर, कोच्चि, 30 अक्टूबर 2015

10 प्रिया जायसवाल (2016). प्रदेश में सही राह पर स्वच्छता की मुहिम, आवरण कथा, मध्यप्रदेश संदेश, अक्टूबर, 2016, पृ0 49-51

11 चन्द्र कुमार जैन (2016). ''स्वच्छता के प्रति लोगों को जागरूक करते रहे गाँधी जी'', लेख, http://hindimedia.in/hygiene-awarness-were-gandhi/ Jan 25, 2016

पर्यावरणीय शिक्षा की आवश्यकता

डॉ० विद्या प्रकाश सिंह

विभागाध्यक्ष, ट्राईडेंट बी.एड. कॉलेज, गीधा, आरा, भोजपुर (बिहार)

पर्यावरण से तात्पर्य है- वह वातावरण जिससे सम्पूर्ण जगत् या ब्रह्माण्ड अथवा जीव जगत् घिरा हुआ है दूसरे शब्दों में सम्पूर्ण पृथ्वी का जीवन एक आवरण से आवृत्त है जो इसे परिचालित भी करता है और स्वयं भी प्रभावित होता है। सम्पूर्ण जीवमण्डल बृहत रूप से स्थलमण्डल, जलमण्डल और वायुमण्डल से सम्बन्धित है और यही भौगोलिक पर्यावरण का मूल है।

टांसले के अनुसार- ''प्रभावकारी दशाओं का वह सम्पूर्ण योग जिसमें जीव रहते हैं पर्यावरण कहलाता है।''

हार्कोविट्स के अनुसार, ''पर्यावरण उन बाहरी दशाओं और प्रभावों का योग है जो पृथ्वी तल पर जीवों के विकास चक्र को प्रभावित करते हैं।''

द यूनिवर्सल इनसाइक्लोपीडिया के अनुसार, ''पर्यावरण के अन्तर्गत उन सभी दशाओं संगठनों एवं प्रभावों को सम्मिलित किया जाता है जो किसी जीव अथवा प्रजाति के उद्‌भव, विकास एवं मृत्यु को प्रभावित करते हैं।''

पर्यावरण की संरचना मुख्यत: दो संघटकों से हुई हैं-

(1) भौतिक या अजैविक संघटक (2) जैविक संघटक।

जैविक घटक के अन्तर्गत पुन: सामाजिक, आर्थिक और सांस्कृतिक पर्यावरण का सृजन होता है।

(1) सामाजिक पर्यावरण-

सभी जीवधारी अपने-अपने स्तर पर सामाजिक समूह संगठित करते हैं जिससे उनके जीवन यापन की प्रक्रिया सुचारू रूप से चल सके। मनुष्य तो सभी जीवों में श्रेष्ठतम प्राणी है, यहाँ तक कि छूद्र जीव जैसे-दीमक और मधुमक्खी इनका भी अपना सामाजिक संघठन होता है।

(2) आर्थिक पर्यावरण-

सभी जीवधारियों द्वारा अपने निर्वाह तथा संवर्धन व विकास के लिए भौतिक पर्यावरण से कुछ न कुछ प्राप्त करने की प्रक्रिया के माध्यम से आर्थिक पर्यावरण का निर्माण होता है।

(3) सांस्कृतिक पर्यावरण-

वैसे तो सभी जीवधारियों में कुछ न कुछ सूझ-बूझ अवश्य होती है किन्तु मनुष्य श्रेष्ठतम सूझ-बूझ वाला और विवेकशील प्राणी है अत: सबसे अधिक सांस्कृतिक विकास मनुष्यों में ही हुआ है।

मानव-पर्यावरण सम्बन्ध:-

मानव एवं पर्यावरण सम्बन्ध एक आत्मनिर्भर तथ्य है। पर्यावरण एवं मानव के बीच सम्बन्ध निम्नलिखित रूपों में दिखाई देता है-

1. समायोजन- प्राकृतिक संसाधनों के आधार पर जो मानव को उपलब्ध है, उससे अपने व्यवसाय का चयन करता है अथवा प्राकृतिक दशाओं के अनुरूप कार्य करता है इसे प्रकृति से समायोजित कहा जाता है।
2. अनुकूलन- पर्यावरण के अनुरूप जब जीव क्रिया-कलापों में परिवर्तन कर लेते हें अथवा पर्यावरण का सामना करने के लिए जीव के अपने शरीर में ही जो संशोधन हो जाते है उसे अनुकूलन कहते हैं।
3. रूपान्तरण- प्राकृतिक पर्यावरण में रूपान्तरण मनुष्य अपनी शक्तियों, आवश्यकताओं एवं रूचियों के अनुसार करता है जैसे- मनुष्य स्वयं द्वारा बाँध, नहर, सड़क, मकान आदि बनाकर पर्यावरण में रूपान्तरण करता है।
4. पारिस्थितिकीय अनुक्रम- पर्यावरण और मनुष्य के परस्पर सम्बन्धों का समय के साथ स्वरूप परिवर्तित व संचित रहता है। इसे पारिस्थितिकीय अनुक्रम कहते है।

मानव पर्यावरण की उपज है और पर्यावरण की प्राकृतिक शक्तियों के द्वारा ही उसका जीवन संचालित होता है। मनुष्य पर पर्यावरण के निम्न तत्त्वों का प्रभाव पड़ता है-

1. तापमान का प्रभाव
2. शीत या ठण्ड का प्रभाव
3. आर्द्रता का प्रभाव
4. वायुमण्डलीय दाब का प्रभाव
5. ऋतुओं का प्रभाव

पर्यावरणीय कारकों के विभिन्न संयोगों द्वार मानव व्यवहार एवं आचरण भी प्रभावित होते हैं। भारत की चम्बल नदी घाटी क्षेत्रों में विकसित दुर्गम बीहड़ क्षेत्र ने न केवल उस क्षेत्र के स्थानीय लोगों को वरन् उसके समीपस्थ क्षेत्र के लोगों के सामाजिक व्यवहार तथा आचार-विचार को प्रभावित किया है। इन बीहड़ों की दुर्गमता ने इस क्षेत्र के निवासियों में आपराधिक प्रवृत्ति को प्रोत्साहित किया है।

दूसरी ओर मानव क्रियाकलाप भी पर्यावरण को प्रभावित करता है। मानव पर्यावरण को निम्न दो प्रकार से प्रभावित करता है-

(1) प्रत्यक्ष प्रभाव- आधुनिक औद्योगिक काल का मनुष्य अपनी आवश्यकताओं, आरामदायक व विलासी आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु पर्यावरण का दोहन इस प्रकार करता है कि इसका प्रभाव शीघ्र ही दिखाई पड़ने लगता है। आर्थिक विकास हेतु मनुष्य भूमि का उपयोग कर, कृषि क्षेत्र में विस्तार कर, खनिज उत्खनन, जल और तेल निष्कासन बाँधों तथा जल भण्डारों का निर्माण कर, कृत्रिम रूप से कुँहरों को विसरण कर आदि कार्यों से पर्यावरण को विपरीत रूप से प्रभावित करता है।

(2) अप्रत्यक्ष प्रभाव- इस औद्योगिक युग में हर मानव की निगाहें तात्कालिक लाभ की तरफ होती है और उसके लिए लोग कुछ ऐसे उपाय करते है जिससे उन्हें लाभ शीघ्र ही मिल जाता है परन्तु वे अपनी इन उपायों के दूरगामी प्रभाव या परिणाम के बारें में नहीं सोचते। जैसे- डी.डी.टी. कीटनाशक का प्रयोग कीटों से फसलों की रक्षा करने के उद्देश्य से किया जाता है परन्तु यह कीटनाशक फसलों के माध्यम से मानव को अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित करता है।

आदिमानव तथा पर्यावरण के मध्य मधुर व मित्रवत् सम्बन्ध थे क्योंकि आदिमानव प्रकृति पर पूर्णरूपेण निर्भर था। जब उसने पशु-पालन और पशु चारण प्रारम्भ किया तो उसके अन्दर सामाजिकता की भावना उत्पन्न हुयी और वह पर्यावरण के रूपान्तरणकर्ता के रूप में उपस्थित हुआ। कालान्तर में जब कृषि संस्कृति का उदय हुआ और स्थायी जीवन आरम्भ हुआ तब मानव ने आर्थिक क्रियाकलाप प्रारम्भ किये और वह पर्यावरण का परिवर्तनकर्ता बन गया। आधुनिक युग में विज्ञान, प्रौद्योगिकी और आधुनिकीकरण के फलस्वरूप अपने निहित स्वार्थों की पूर्ति के कारण मानव पर्यावरण का विध्वंसकर्ता बन गया। परिणाम स्वरूप अनेक विध्वंसकारी समस्याएँ यथा- जल, वायु, मृदा, ध्वनि प्रदूषण आदि और इस प्रदूषण से उत्पन्न ग्लोबल वार्मिंग, ऊर्जा संकट, ओजोन क्षरण, अम्ल वर्षा आदि को जन्म दिया। ऐसे ही बहुत से मानव क्रियाकलाप हैं जो पर्यावरण पर प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विपरीत प्रभाव डालते हैं। इन समस्याओं के समाधान एवं पर्यावरण जागरूकता के लिए पर्यावरण शिक्षा का अध्ययन आवश्यक हो जाता है।

पर्यावरण शिक्षा का अर्थ एवं संकल्पना:-

पर्यावरण शिक्षा सिखाने के सुनियोजित प्रयास की ओर संकेत करती है कि किस प्रकार मनुष्य चिरस्थायी अस्तित्व के लिए स्वाभाविक वातावरण की क्रियाओं और विशेषत: अपने व्यवहार और परिस्थितिकीय तंत्र में सामंजस्य स्थापित कर सकता है। इस शब्द का प्रयोग प्राय: विद्यालय प्रणाली के अन्तर्गत प्राथमिक से माध्यमिक शिक्षा के बाद तक दी जाने वाली शिक्षा की ओर संकेत करने के लिए किया जाता है। कभी-कभी अधिक व्यापक रूप में इसका प्रयोग आम जनता और अन्य दर्शकों को शिक्षित करने के समस्त प्रयासों के लिए किया जाता है, जिसमें मुद्रित सामग्री, वेबसाइट्स, मीडिया अभियान आदि शामिल होते हैं। इससे सम्बन्धित क्षेत्रों में बाह्य शिक्षा और अनुभावात्मक शिक्षा शामिल है।

पर्यावरण शिक्षा अधिगम की एक प्रक्रिया है जो पर्यावरण व इससे जुड़ी चुनौतियों के सम्बन्ध में लोगों की जानकारी और जागरूकता को बढ़ाती है। चुनौतियों का सामना करने के लिए आवश्यक कुशलताओं व प्रवीणता को विकसित करती है और सुविज्ञ निर्णय तथा जिम्मेदारी पूर्ण कदम बढ़ाने के इस ओर प्रवृत्ति, प्रेरणा व प्रतिबद्धता का प्रोत्साहन करती है।

पर्यावरण शिक्षा की गुणवत्ता बनाये रखने के विषय में जो चिन्तन पर्यावरणविदों ने प्रारम्भ किया था उसमें अब पूरा समाज सम्मिलित हो चला है ''पर्यावरण भविष्य के अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन'' में 29 जून 1971 को निल्सन ने पर्यावरण की गुणवत्ता बनाये रखने के लिए दो बातें अनिवार्य बताई है-

1. तथ्यों की जानकारी
2. अभिवृत्तियों में परिवर्तन

यही दो विचार पर्यावरण शिक्षा के आधार प्रस्तुत करते हैं। पर्यावरण की समस्या के पीछे निहित वास्तविक तथ्यों को खोजना, समस्या के समाधान में चिन्तन की दिशा निर्धारित करना और पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से इन समस्याओं का सही समाधान प्राप्त करना यही पर्यावरण शिक्षा की मूल संकल्पना है। पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्द्धन हेतु वैश्विक स्तर पर विभिन्न गोष्ठियों, कार्यशालाओं तथा परिचर्चा का आयोजन होता रहा है और इनमें पर्यावरणविदों द्वारा पर्यावरण शिक्षा को भिन्न-भिन्न आधार मानकर व्यक्त किया गया है-

नेवादा कान्फ्रेंस 1970 के अनुसार, ''पर्यावरण शिक्षा से हमारा अभिप्राय उन प्रबुद्ध नागरिकों में संचेतना पैदा करने से है जो आवश्यक ज्ञान, कौशल, क्षमता स्वयं में संजोकर सामूहिक रूप से कार्य करें तथा गुणवत्ता पूर्ण जीवन तथा उपयुक्त पर्यावरण के मध्य गत्यात्मक संतुलन स्थापित करने में सहायता कर सकें।''

1970 में तथ्यों एवं अभिवृत्ति को आधार मानकर आई.यू.सी.एन. ने पर्यावरण शिक्षा को इस प्रकार परिभाषित किया है- ''पर्यावरण शिक्षा दायित्वों को जानने तथा विचारों को स्पष्ट करने की वह प्रक्रिया है जिससे मनुष्य अपनी संस्कृति और जैव भौतिक परिवेश के मध्य अपने आपकी सम्बद्धता को पहचानने और समझने के लिए आवश्यक कौशल तथा अभिवृत्ति का विकास कर सकें।''

यूनेस्कों के लिए 'फिनिश राष्ट्रीय कमीशन' (1974) ने अपनी रिपोर्ट में पर्यावरण शिक्षा की निम्न परिभाषा दी- ''पर्यावरण शिक्षा पर्यावरण सुरक्षा के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए साधन है पर्यावरण शिक्षा किसी विज्ञान अथवा किसी विशेष विषय के अध्ययन की अलग शाखा नहीं है। इसे जीवनपर्यन्त सम्पूर्ण शिक्षा के अन्तर्गत सम्मिलित किया जाना चाहिए।''

राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) के अनुसार, ''पर्यावरण सजगता के सृजन की आज अत्यन्त आवश्यकता है। भारत जैसे देश में जहाँ गरीबी की व्यापकता है, पर्यावरण संरक्षण की आवश्यकता और बढ़ जाती है क्योंकि विध्वंस के प्रभाव का सर्वाधिक भुक्तभोगी गरीबी ही है। पर्यावरण के संरक्षण एवं सुरक्षा की सजगता के पक्ष में विद्यालयों तथा महाविद्यालयों के शिक्षण में प्रमुख स्थान दिया जाय तथा इस पक्ष को शिक्षा नीति में उपयुक्त प्रकार से समन्वित किया जाए।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर स्पष्ट है कि 'पर्यावरण शिक्षा' एक प्रक्रिया है जिसमें छात्रों को ऐसे अधिगम प्रदान किये जाते हैं जिससे वे पर्यावरण का ज्ञान, समझ, कौशल तथा जागरूकता प्राप्त करके अपेक्षित अभिवृत्तियों को विकसित कर सकें व प्राकृतिक तथा मानवकृत परिस्थितियों में सम्बन्ध स्थापित कर सकें। दूसरे शब्दों में, 'पर्यावरण शिक्षा' सकारात्मक चेतना उत्पन्न करने में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है जिससे वह पर्यावरण के विस्तृत क्षेत्र-भौतिक तत्त्व, सांस्कृतिक तत्त्व, राजनैतिक तत्त्व, धार्मिक तत्त्व, नैतिक तत्त्व तथा जैविक तत्त्व के प्रति सचेत रहता है तथा अपने कर्त्तव्यों को भली-भाँति निर्वहन की ओर प्रेरित होता है।

इस प्रकार व्यक्ति को पर्यावरण से सम्बद्ध समस्त प्रकार की मूल अवधारणाओं तथा समस्याओं से परिचित कराना, परिस्थितियों के साथ सही समायोजन स्थापित करना तथा सम्बन्धित दृष्टिकोणों तथा कौशलों का विकास ही पर्यावरण शिक्षा है।

पर्यावरण शिक्षा का विकास-

यद्यपि 'पर्यावरण शिक्षा' एक नवीन अवधारणा है तथापि हमारे वैदिक साहित्य में पर्यावरण के घटकों पृथ्वी, सूर्य, जल, वायु, पशु, पक्षी, वनस्पति आदि के प्रति सम्मान की भावना यह प्रदर्शित करता है कि पर्यावरण के प्रति बोध मानव में प्राचीन काल से ही रहा है। वर्तमान परिस्थिति में मनुष्य और पर्यावरण सम्बन्ध अधिक घनिष्ठ हुए हैं तथा एक दूसरे को प्रभावित भी कर रहे हैं।

आधुनिक समय में पर्यावरण शिक्षा का प्रारम्भ सन् 1899ई0 में स्काटलैण्ड के वनस्पति शास्त्री प्रो0 पैट्रिक जेडिस द्वारा एडिनबरा (इंग्लैण्ड) में 'दि आउटलुक टावर' नामक संस्था के स्थापना के बाद माना जा सकता है जिसका उद्देश्य पर्यावरण

तथा शिक्षण का उन्नयन करना था। उनका विचार, पर्यावरण शिक्षा की गुणवत्ता पर आधारित है। दोनों में सकारात्मक रूप से उच्च सहसम्बन्ध होता है। पर्यावरण की गुणवत्ता में वृद्धि अवश्यम्भावी है। यदि बालक अपने पर्यावरण को नही समझता तो वह अच्छी शिक्षा नहीं ग्रहण कर सकता है। पर्यावरण की वास्तविकता को समझने पर ही उसमें पर्यावरण के प्रति रचनात्मक दृष्टिकोण विकसित हो सकता है। सन् 1908 में अमेरिका के राष्ट्रपति थियोडोर रूजवेल्ट ने पर्यावरण शिक्षा के विभिन्न पक्षों पर बल दिया।

सन् 1965 में कोल विश्वविद्यालय में सभी के लिए पर्यावरण शिक्षा को पाठ्यक्रम के अंग के रूप में अनिवार्य कर दिया गया।

संयुक्त राष्ट्र संघ सन् 1972 में स्टॉकहोम में आयोजित संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन के फलस्वरूप यू.एन.ई.पी. (यूनाइटेड नेशन इनवॉयरमेण्ट प्रोग्राम) की स्थापना की गई जिसका मुख्यालय केन्या की राजधानी नैरोबी में बनाया गया। यूनेस्को ने यू.एन.ई.पी. के सहयोग से सन् 1975 में अन्तर्राष्ट्रीय 'पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम' प्रारम्भ किया। इसके निम्नांकित उद्देश्य निर्धारित किये गये-

1. योजना का समन्वय करना।
2. विचारों तथा सूचनाओं के आदान-प्रदान को क्रियान्वित करना।
3. सलाहकारी सेवाएँ प्रदान करना
4. शोध का संचालन, उत्थान तथा समन्वय करना
5. कार्यकर्त्ताओं को शिक्षित करना।
6. अनुदेशनात्मक कार्यक्रमों को पोषित करना।

सन् 1972 में सम्पन्न हुए पहले पर्यावरण सम्मेलन के उद्घाटन दिवस की स्मृति में प्रत्येक वर्ष 5 जून को पूरे विश्व में पर्यावरण दिवस के रूप में मनाया जाता है।

'अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा कार्यक्रम' के अन्तर्गत ही बेलग्रेड (यूगोस्लाविया) में 1972 में अक्टूबर के मध्य 'अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण शिक्षा गोष्ठी' का आयोजन किया गया। पर्यावरण शिक्षा के इतिहास में यह प्रथम गोष्ठी थी जिसमें विश्व के 60 देशों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। इस गोष्ठी की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि ''बेलग्रेड घोषणा पत्र'' था। यह घोषणा पत्र चार भागों में विभाजित था-

1. पर्यावरण पारिस्थिति
2. पर्यावरणीय लक्ष्य
3. पर्यावरणीय शिक्षा के उद्देश्य
4. पर्यावरण शिक्षा के लक्ष्य

पर्यावरण शिक्षा के निम्नलिखित लक्ष्य निर्धारित किये गये-

1. बढ़ती हुई जनसंख्या के प्रति सचेत रहना।
2. पर्यावरण सम्बन्ध समस्याओं से परिचित होना तथा उससे सम्बन्धित ज्ञान, कौशल, अभिवृत्ति और प्रेरणाओं को विकसित करना।
3. व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से पर्यावरणीय समस्याओं की जानकारी प्राप्त करना तथा इन्हें रोकने के लिए निश्चित उपायों का प्रयोग करना।

पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य व्यक्तियों तथा समाज के लोगों में संचेतना, ज्ञान, अभिवृत्ति, कौशल, मूल्यांकन, योग्यता तथा सहभागिता विकसित करना बताया गया।

यूनेस्को, अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन, विश्व स्वास्थ्य संगठन, खाद्य तथा कृषि संगठन, अर्थ स्केन, संयुक्त राष्ट्र औद्योगिक विकास संगठन, यूनिसेफ, अर्थवाच प्रोग्राम आदि के द्वारा भी पर्यावरण शिक्षा का शोध संचालन, औपचारिक एवं अनौपचारिक कार्यक्रम एवं प्रशिक्षण कार्य किया जाता रहा है।

भारत में पर्यावरण शिक्षा के सन्दर्भ में विभिन्न नीतियाँ और कार्यक्रम की योजनाएँ दस्तावेजों के अन्तर्गत 1960 से ही उल्लिखित हैं किन्तु उस समय ये प्रयास असंगठित तथा बिखरे हुए थे। इसीलिए औपचारिक तथा अनौपचारिक दोनों ही स्तरों पर पर्यावरण शिक्षा के लिए एक राष्ट्र स्तरीय कार्यक्रम और ढाँचे की आवश्यकता अनुभव की गई।

औपचारिक शिक्षा के सन्दर्भ में एन.सी.ई.आर.टी. ने प्राथमिक और माध्यमिक स्तरों पर विद्यालयों को एनवॉयरमेण्टल थ्रस्ट देने का प्रयास किया है। प्राथमिक स्तर पर 'पर्यावरण अध्ययन' नामक एक समन्वित उपागम के विचार का अनुसरण किया गया। माध्यमिक स्तर पर एन.सी.ई.आर.टी. ने पर्यावरणीय चिन्ताओं को प्रत्येक विषय से जोड़ने के पक्ष में विचार व्यक्त किये। उच्चतर माध्यमिक स्तर पर सामाजिक विज्ञान और कला के विषयों में इसके सम्बर्द्धन का अभाव है किन्तु 'विद्यालयी शिक्षा योजना' में पर्यावरण आधारशीलता जो कि विद्यालयी शिक्षा में स्थानीय पर्यावरणीय मुद्दों को सम्मिलित करने के उद्देश्य से निर्देशित है, ने इस अभाव पर विजय प्राप्त की है।

1980 में 'स्कूल साइंस क्लब प्रोग्राम' को पर्यावरणीय दिशा प्रदान की गयी। 1988 में 'प्रोग्राम फॉर मास ओरिएण्टेशन' को स्कूली शिक्षकों के लिए एन.सी.ई.आर.टी. ने चलाया।

पर्यावरणीय शिक्षा के प्रसार में सबसे बड़ा प्रयास 'राष्ट्रीय पर्यावरणीय जागरूकता अभियान' के रूप में वन एवं पर्यावरण मन्त्रालय ने शुरू किया। पर्यावरणीय शिक्षा को संचालित करने वाले दो औपचारिक केन्द्र है-

1. पर्यावरण शिक्षा केन्द्र, अहमदाबाद (सी.ई.ई.) जो स्रोत संसाधनों का उत्पाद प्रशिक्षण कार्यक्रम का संचालन और पाठ्यक्रम का निर्माण करता है।
2. सी.पी.आई.ई.ई. केन्द्र चेन्नई, जो स्थानीय स्कूलों के लिए पर्यावरण शिक्षा सामग्री उत्पादित करता है।

दि नेशनल म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, नई दिल्ली भी बड़ी संख्या में स्रोत सामग्री का निर्माण, प्रदर्शनी और जागरूकता कार्यक्रम चलाता है जिससे लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक बनाया जा सके। 'राष्ट्रीय साक्षरता कार्यक्रम' में भी पर्यावरण शिक्षा और पर्यावरण जागरूकता के प्रयास किये जा रहे हैं।

देश के विभिन्न भागों में स्वायत्तशासी संगठन भी नागरिकों को पर्यावरण शिक्षा देने एवं पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने में संलग्न है। लोकप्रिय 'साइंस मूवमेण्ट' में पर्यावरण एक महत्त्वपूर्ण अवयव है। अनेक महत्त्वपूर्ण आन्दोलनों जैसे चिपको आन्दोलन, नर्मदा घाटी बचाओ आन्दोलन, शान्ति घाटी बचाओ आन्दोलन आदि में परिस्थितिकी एवं मानव अस्तित्व के सम्बन्ध में मूलभूत प्रश्नों को उठाया गया है। डब्ल्यू.डब्ल्यू.एफ. इण्डिया जिसका प्रत्येक राज्य के स्कूल और कॉलेजों में 'नेचर क्लब' का नेटवर्क है ने भी पर्यावरणीय शिक्षा को विकसित करने का प्रयास किया है। इन्टैक त्रिवेन्द्रम, 1990 से ही ओरिएण्टेशन प्रोग्राम और विचार-विमर्श का आयोजन कर रहा है। नई दिल्ली में एक पर्यावरण समूह ने मिलकर अण्डमान निकोबार एवं लक्षद्वीप के शिक्षकों के लिए 'पर्यावरणीय शिक्षा निर्देशिका' का प्रकाशन किया है। देश के विभिन्न क्षेत्रों में कार्य कर रहे 16 पर्यावरणीय समूहों ने स्थानीय पर्यावरण आधारित एक पाठ्यक्रम का निर्माण भी किया है। इसके अतिरिक्त संविधान में भी नीति निर्देशक तत्त्व के अनु0 48, 49 एवं मौलिक कर्त्तव्यों में भी पर्यावरण के प्रति जागरूकता के लिए प्रावधान किया गया है।

पर्यावरण शिक्षा की आवश्यकता:-

पर्यावरण के प्रति चेतना उत्पन्न करने के लिए पर्यावरण शिक्षा एक सशक्त माध्यम है। पर्यावरण शिक्षा के कार्यक्रम में बच्चों से लेकर वृद्धों तक शिक्षित से लेकर अशिक्षित तक को औपचारिक तथा अनौपचारिक शिक्षा द्वारा जागरूक बनाना है। वर्तमान में विश्व की जो ज्वलंत समस्या है, जिसके कारण सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों का विनाश सम्भव है। उसके प्रति समस्त मानव समुदाय को विशेष रूप से जागृत करना आवश्यक है, जो उचित पर्यावरणीय शिक्षा ही सम्भव है।

हमारे देश में यद्यपि पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी अनेकों सावधानियाँ बरती जा रही हैं जैसे- सार्वजनिक कूड़ादान एवं शौचालय, वाहनों से निकलने वाले धुएँ को साफ करने के लिए विशेष फिल्टरों का प्रयोग, पर्यावरण जागरूकता हेतु संचार माध्यमों का प्रयोग, स्वैच्छिक संस्थाओं तथा सरकार का पर्यावरण संरक्षण हेतु प्रयास, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चर्चाएँ इत्यादि लेकिन जब तक शैक्षिक माध्यम से यह जागरूकता तथा चेतना विकसित नहीं की जायेगी तब तक देश का हर नागरिक न तो पर्यावरण संरक्षण में प्रतिभागी हो पायेगा और न ही अपना पूर्ण योगदान दे पायेगा। अन्ततः अपने पर्यावरण का संरक्षण हम विकास की गति के सापेक्ष नहीं कर पायेगें।

जनसंख्या नियंत्रण प्राकृतिक संसाधनों का बुद्धिमत्तापूर्ण एवं संयमित उपयोग, प्राण वायु (O_2) की उपलब्धता बनाये रखना, आधुनिक उपकरणों का पर्यावरण मित्र के रूप में उपयोग तथा विभिन्न प्रदूषणों पर नियंत्रण आदि ऐसे तथ्य है, जिन्हें पर्यावरण शिक्षा द्वारा ही जागरूकता उत्पन्न कर नियन्त्रित किया जा सकता है।

20वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में विश्व के सभी भागों में विकसित, विकासशील यहाँ तक कि अल्पविकसित देशों में भी पर्यावरण असंतुलन का गम्भीर संकट उत्पन्न हुआ है। 'पर्यावरण शिक्षा' की महत्ता इसी बात से चरितार्थ है कि पृथ्वी तल पर जैविक विकास संवर्धन और रक्षा के लिए ऐसी दशा का निर्माण करता है जिसके बिना जीवन की कल्पना ही असम्भव है।

पर्यावरण समस्या परोक्ष या अपरोक्ष रूप से अशिक्षा से ही सम्बन्धित है इससे छुटकारा पाने के लिए उचित पर्यावरण शिक्षा आवश्यक है। अतः आज आवश्यकता है कि प्रत्येक वर्ग को पर्यावरण चेतना से जागृत किया जाय तथा पर्यावरण के विभिन्न अवयवों एवं संसाधनों से परिचित कराया जाय। इस तरह के पर्यावरणीय ज्ञान से युवा वर्ग भविष्य में स्वयं अपने लिए एक स्वावलम्बी योजना बना सकते हैं जिससे उनके और उनके संसाधनों के बीच सन्तुलन स्थापित हो सके।

निष्कर्ष एवं सुझाव-

विद्यार्थियों में पर्यावरण बोध के विकास के लिए शिक्षकों को चाहिए कि उन्हें पर्यावरणीय ज्ञान मात्र सूचनाओं के आधार पर न दिया जाए बल्कि पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं से परिचित कराने के लिए विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभूति कराएं। इसके लिए शिक्षक कुछ अपेक्षित क्रियाएं कर सकते हैं-

(1) बस स्टैण्ड, रेलवे स्टेशन, अस्पतालों आदि स्थानों पर भीड़ का अवलोकन कराकर बढ़ती जनसंख्या और घटते संसाधनों की अवधारणा को समझाएँ।

(2) विद्यार्थियों को सड़कों, अस्पतालों, हैण्डपम्पों आदि के किनारे फैले कूड़े-कचड़े दिखाएं और यह अनुभव कराये कि यह स्थिति हमारे ही कारण है।

(3) बाढ़, तूफान, भूकम्प आदि दृश्यों की वीडियो फिल्म के माध्यम से प्रदर्शित कर उस पर चर्चा करें।

(4) जीव-जन्तुओं एवं वनस्पतियों की आपसी निर्भरता की अनुभूति

(5) भ्रमण आदि के माध्यम से पेड़-पौधों, नदियों, पहाड़ों आदि का प्रत्यक्ष अवलोकन कराया जाए आदि। इसी प्रकार पाठ्यक्रम में कुछ ऐसे तथ्यों को सम्मिलित किया जाना चाहिए कि उच्च बुद्धि वाले विद्यार्थियों के अतिरिक्त निम्न बुद्धि वाले विद्यार्थी भी पर्यावरण के प्रति अभिप्रेरित हों।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- ओझा, ए.के. (2007). पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण. इलाहाबाद: बौद्धिक प्रकाशन.
- अग्रवाल, अनिल (2010). पर्यावरण समग्र. इलाहाबाद: मंथन प्रकाशन, 69-92.
- पाण्डेय, के.पी., भरद्वाज, ए. व पाण्डेय, ए. (2005). पर्यावरण शिक्षा एवं भारतीय सन्दर्भ. वाराणसी: विश्वविद्यालय प्रकाशन.
- कान्त, एस. व शर्मा, वाई (2013). द एनवॉयरमेण्टल अवेयरनेस ऑफ सेकेण्ड्री स्कूल स्टूडेण्ट विथ रिफरेन्श टू दियर इण्टेलीजेन्स. ए जर्नल ऑफ साइन्स, टेक्नोलॉजी एण्ड मैनेजमेण्ट. 2(1)
- शर्मा, आर.ए. (2007). पर्यावरण शिक्षा, मेरठ: आर. लाल बुक डिपो.
- ठाकुर, कल्पना (2012). ए स्टडी ऑफ एनवॉयरमेण्टल अवेयरनेस एमंग सीनियर सेकेण्ड्री स्कूल स्टूडेण्ट ऑफ चण्डीगढ़. इण्टरनेशनल इण्डेक्स्ड एण्ड रेफर्ड रिसर्च जर्नल. 4(38).
- गायत्री, ए., रेड्डी, बी. वाई व रेड्डी, एस. (2014). ए स्टडी ऑफ एनवॉयरमेण्डल अवेयरनेस एमंग सेकेण्ड्री स्कूल स्टूडेण्ट्स इन रिलेक्शन टू कास्ट. फादर ऑक्यूपेशन, क्लास ऑफ स्टडी इन चित्तूर डिस्ट्रिक्ट. इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च. 3(2).
- गोयल, एम.के. (2006). पर्यावरण शिक्षा. आगरा: विनोद पुस्तक मन्दिर.
- राजपूत, जे.एस., सक्सेना, ए.बी. व जादव, वी.जी. (1981). ए रिसर्च स्टडी एण्ड एनवॉयरमेण्टल एप्रोच आफ टीचिंग एट प्राइमरी लेवल, नई दिल्ली: एन.सी.ई.आर.टी.
- जाटव, बी.एल. (2004). पर्यावरण और शिक्षा. दिल्ली: राधा पब्लिकेशन।
- दुबे, रुचि (2007). ए स्टडी ऑफ द रिलेशनशिप बिटवीन एचिवमेण्ट इन एनवॉयरमेण्टल स्टडीज एण्ड फार्मल रीजनिंग एमंग IX क्लास स्टूडेण्ट्स. जर्नल ऑफ एजूकेशनल स्टडीज. 5(1). 14-16
- पाठक, चन्द्रभूषण (2008). पर्यावरण शिक्षा एवं प्रबन्धन. इलाहाबाद: अनुभव पब्लिशिंग हाउस.

भारतीय ज्ञान परंपरा में पर्यावरण संरक्षण का महत्व

डॉ० अपर्णा चतुर्वेदी

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग, शासकीय महिला महाविद्यालय स्वायत, नलगोंडा, तेलंगाना

भारतीय संस्कृति मूलतः अरण्य संस्कृति है। पर्यावरण के प्रति अगाध प्रेम व समर्पण की भावना भारतीय जनमानस में सदियों से बसी हुई है। सनातन संस्कृति में प्रकृति के अंगों में देवत्व दर्शन की बात कही गई है। भारतीय परंपरा में पर्यावरण की ऐसे जीव के रूप में कल्पना की गई है जो सांस लेता है,अनुभव करता है एवं हमारी सुरक्षा करता है। भारत में प्राचीन काल से ही प्रकृति के साथ संतुलन करके चलने की प्रेरणा दी गई है। हिंदू परंपराओं में सदा से प्रकृति पूजन का विधान रहा है। प्राकृतिक अनुराग एवं प्रकृति संरक्षण की चिंतन धारा भारतीय संस्कृति की सर्वोपरि विशेषता रही है। हिंदू जीवन के चार महत्वपूर्ण आश्रमों में से तीन ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ एवं संन्यास का संबंध भी वनों से रहा है। भारतीय दर्शन में एक वृक्ष की मनुष्य के 10 पुत्रों से तुलना की गई है। शास्त्रों में लिखा है की एक वृक्षारोपण का पुण्य 10 पुत्रों के जन्म के पुण्य के समान होता है। दशकूप समावापीः दशवापी समोह्रदः। दशह्रदः समः पुत्रो दश पुत्र समोदुमः।।[1] मानव के स्वार्थ ने आज संपूर्ण विश्व को संकट में डाल दिया है। आज विश्व भर में प्राकृतिक तत्वों का दोहन इस हद तक हुआ है कि जल, जंगल, जीव जमीन सब का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। पर्यावरण के असंतुलन के कारण बाढ़ भूख भूस्खलन भूकंप सुनामी ग्लोबल वार्मिंग एवं जलवायु परिवर्तन की स्थिति उत्पन्न हो गई है। इन सब के चलते मानव सभ्यता का अंत भी परिलक्षित होने लगा है ऐसी स्थिति से निपटने के लिए श्री गणेश कुमार पाठक अपने लेख- "भारतीय चिंतन परंपरा में जल एवं पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा" में कहते हैं कि- "हमें सम विकास पारिस्थितिकीय विकास, संपोषित विकास, संबंधित विकास एवं सतत विकास की अवधारणा को दृष्टिगत रखते हुए विकास करना होगा, जिससे कि हमारा विकास भी हो और हमारी प्रकृति का विनाश भी ना हो। इन प्राकृतिक तत्वों को विनाश से बचाने हेतु हमें भारतीय संस्कृति की अवधारणा के सहारे चलना होगा जो मानती है भगवान में -भू -भूमि, ग-गगन व-वायु, अ-अग्नि एवं न -नीर की अवधारणा में प्रकृति के मूल पांच तत्व क्षितिज, जल, पावक, गगन एवं समीर को हीभगवान रूप में पूजा जाना ही सर्वोत्कृष्ट है।"[2] भारतीय मनीषा सृष्टि के प्रारंभ से ही प्राणी मात्र के कल्याण के प्रति सटक चिंतनशील रही है भारतीय संस्कृति का आदर्श वाक्य है- सर्वे भवंतु सुखिनः सर्वे संतु निरामया सर्वे भद्राणि पश्यंतु मां कश्चित दुखभागभवेत।।[3] वैदिक कालीन ऋषि मुनियों का विचार इस वैदिक मंत्र में व्यक्त होता है- "ओम पूर्ण मदः, पूर्ण मिदं, पूर्णात पूर्ण मुच्यते। पूर्णस्य पूर्ण मादाय पूर्ण मेवाव शिष्यते।।[4]" अर्थात मनुष्य अपनी इच्छाओं को वश में रखकर प्रकृति से उतना ही ग्रहण करें कि उसकी पूर्णता को क्षति न पहुंचे। परिवर्तन प्रकृति का नियम है बढ़ते हुए विकास के क्रम में मानव आज अपनी जड़ों से दूर होकर अपने संस्कारों को भूल बैठा है। आधुनिकीकरण के नाम पर भारतीय सांस्कृतिक मूल्यों का ह्रास हो रहा है। पिछले 50 वर्षों में विश्व स्तर पर तीव्र औद्योगीकरण के कारण पर्यावरणीय संकट या पर्यावरण संतुलन की जो भीषण स्थिति पैदा हुई है उसका पूर्वाभास 1970 के दशक में मानवाधिकार वादी संगठनों द्वारा किया जाने लगा था 1972 में पहली बार संयुक्त राष्ट्र मानव पर्यावरण सम्मेलन आयोजित हुआ। इससे इस सम्मेलन में दो निर्णय लिए गए एक मानव को स्वस्थ जीवन जीने के लिए उपयुक्त वातावरण का अधिकार एवं भावी पीढ़ी को उपयुक्त वातावरण प्रदान करने के लिए पर्यावरण संरक्षण। 1992 मैं ब्राजील में भी एक पृथ्वी सम्मेलन का आयोजन हुआ जहां पर्यावरण असंतुलन से पृथ्वी को बचाने के लिए उपाय खोजे गए। वैदिक साहित्य में प्राकृतिक उपादान के संरक्षण की बात कही गई है। वेदों में जहां वृक्षों के पूजन का विधान बताया गया है वही इस बात पर भी बोल दिया गया है कि मनुष्य को प्रकृति की कॉप को शांत कर सुख में जीवन व्यतीत करना चाहिए। मानव को अपनी आवश्यकता से अधिक प्रकृति से नहीं लेना चाहिए। सनातन संस्कृति में यज्ञ करने की विधि भी वायुमंडलीय प्रदूषण को कम करने की एक विधि के रूप में अपनाई गई। भारतीय चिंतन पद्धति का अनुसरण करते हुए यदि हम अपना जीवन व्यतीत करते हैं, तो पर्यावरण संरक्षण संभव हो सकता है। सनातन संस्कृति में वृक्षों के पूजन के साथ-साथ वृक्षारोपण एवं वन संरक्षण का विधान भी रहा है। भारतीय संस्कृति वनों में पली बढ़ी है। भारतीय चिंतन पद्धति के अनुसार यदि हम वृक्षों की रक्षा करते हैं तो वही वृक्ष आगे चलकर हमारी रक्षा करते हैं अतः भारतीय जीवन विधान प्राकृतिक सानिध्य में पला बढ़ा है। इसको अपना कर ही हम पर्यावरण संरक्षण का मार्ग प्रशांत कर सकते हैं।

संदर्भ सूची-

1. iChowk-in भारतीय परंपरा का पर्यावरण संरक्षण से नाता पुराना है- लोकेंद्र सिंह।
2. shod-net प्राचीन भारत में पर्यावरण संरक्षण की अवधारणा- डॉ राकेश कुमार।
3. भारतीय संस्कृति और पर्यावरण संरक्षण- डॉ वीरेंद्र यादव।
4. iChowk पद-भारतीय परंपरा का पर्यावरण संरक्षण से नाता पुराना है-लोकेंद्र सिंह

अक्षय ऊर्जा

श्रीमती आराधना कुमारी

एसोसिएट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, महिला सेवा सदन डिग्री कालेज प्रयागराज

शोध सारांश

''मेरे दिल दिमाग के अन्दर भारत का एक सामान्य व्यक्ति बैठा हुआ है वह अंधेरे में डूबे हुए गाँव मेरे दिमाग में सवार है और उसके रास्ते मैं खोज रहा हूँ ताकि हमारे पास जो भी सामर्थ्य है, शक्ति है उसका उपयोग करके हम इन आवश्यकताओं की पूर्ति कैसे करें।''- माननीय प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी

ऊर्जा की खपत किसी देश के विकास का एक महत्त्वपूर्ण पैमाना है। अधिक ऊर्जा का उपयोग करने वाले विकासशील माने जाते हैं क्योंकि देश के विकास को रफ्तार देने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। मानव के इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए ऊर्जा के पारम्परिक स्रोतों का अंधाधुन उपयोग किया जिसके फलस्वरूप आज विश्व के लगभग सभी ऊर्जा संकट और पर्यावरण प्रदूषण की समस्या का सामना कर रहे हैं।

शब्द कुँजी- सामर्थ्य, विकासशील, रफ्तार, अंधाधुन, प्रदूषण।

प्रस्तावना

'क्यू नहं हो रोशनी पर सख्त पहरा आज भी,
तख्त पर बैठा हुआ है जब अंधेरा आज भी।'

आज भी हजारों गाँव ऐसे हैं जिन्हें बिजली नसीब नही क्योंकि मनुष्य ने पारम्परिक ऊर्जा स्रातों के सीमित भंडारो का अंधाधुन उपयोग कर पारम्परिक संसाधनों पर संकट खड़ा कर दिया। जिससे ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत अक्षय ऊर्जा मो विकल्प के रूप में चुना जा रहा। जिससे वर्तमान की आवश्यकतायें पूरा होने के साथ-साथ भविष्य भी सुरक्षित रहे एवं पर्यावरण भी संतुलित रहे। अक्षय ऊर्जा सस्ती है।

अक्षय का अर्थ- 'अक्षय' का अर्थ होता है असीमित अर्थात् जिसका उत्पादन हमेशा किया जा सके।

ऊर्जा के प्रकार- ऊर्जा स्रोतों को दो भागों में विभाजित किया गया है-

- पारस्परिक ऊर्जा- जीवाश्म ईधन है जिसमें पेट्रोलियम, कोयला, प्राकृतिक गैस, परमाणु ऊर्जा आदि आते हैं जिसके भण्डार सीमित हैं।
- गैर पारम्परिक ऊर्जा- अक्षय ऊर्जा जिसमें सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा, जल ऊर्जा, बायोगैस आदि के पृथ्वी पर असीमित भण्डार हैं। अक्षय ऊर्जा का सबसे अधिक उत्पादन सौर एवं पवन ऊर्जा से होता है।

सौर ऊर्जा- सूर्य में प्रचूर मात्रा में प्रकाश और ताप प्राप्त होता है जिसे सौर ऊर्जा सौर पैनलों द्वारा सौर ऊर्जा को विद्युत में बदल दिया जाता है और सौर शक्ति प्रदूषण उत्पन्न किए बिना विद्युत उत्पादन की अपरिमित क्षमता रखता है।

पवन ऊर्जा-

1. आज पवन ऊर्जा पूरे वेग से बढ़ रहा है। पवन ऊर्जा का उपयोग पानी की पम्पिंग, बैटरी चार्जिग और बड़े विद्युत उत्पादन में किया जाता है।
2. बहती हुई हवा एक टरबाइन के पंखों को घुमाती है जो एक जनरेटर में बिजली को उत्पन्न करते हैं।

बायोगैस- कृषि अपशिष्ट एवं गोबर से बायोगैस का उत्पादन किया जाता इसलिए इसे गोबर गैस कहा जाता है। बायोगैस कार्बनिक उत्पादों, प्राथमिक रूप से पशुओं के गोबर, कृषि रसोई के अपशिष्ट तथा कृषि वानिकी उत्पादों से तैयार की जाती है। बायोगैस का उपयोग मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में किया जाता है। बायोगैस का उपयोग भोजन पकाने, तापन, रोशनी पैदा करने कुछ विशिष्ट गैस इंजनों में मोटिव पॉवर पैदा करने तथा आल्टरनेटर के जरिए विद्युत उत्पादन में किया जाता है।

पनबिजली ऊर्जा- सभी क्षेत्रों में अनेक जलधाराएं मौजूद हैं जिनमें लगभग वर्षभर जलप्रवाह बना रहता है। इस गतिज ऊर्जा से स्थानीय स्तर पर स्थानीय उपयोग के लिए बिजली उत्पादन किया जाता है।

अक्षय ऊर्जा के विकास- अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में अनेक विकल्प है। किन्तु विशेष रूप से सौर और पवन ऊर्जा पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है।

ऊर्जा नीति- किसी कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए एक योजना का होना आवश्यक है। एक सकारात्मक नीति के तहत की लक्ष्य को प्राप्त किया जा सकता है। देश में ऊर्जा की मांग को किस तरह पूरा किया जाये इसके लिए नीति आयोग कार्य कर रहा।

अक्षय ऊर्जा के विकास का लक्ष्य- अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में अनेक विकल्प हैं किन्तु भारत पवन ऊर्जा और सौर ऊर्जा पर विशेष रूप से ध्यान दे रहा। भारत ने सौर और पवन ऊर्जा में 6 गुना बढ़ोत्तरी करने का लक्ष्य रखा है।

- भारत में अक्षय ऊर्जा- भारत विश्व का पहला देश है जहाँ अक्षय ऊर्जा के विकास के लिए अलग मंत्रालय है। भारत ने अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र को व्यापक और प्रभावी बनाने के लिए एक स्वतंत्र मंत्रालय 6 नवीन एवं नवीकरणीय ऊर्जा बनाया है।
- बजट में अक्षय ऊर्जा- भारत सरकार ने अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र को विकसित करने के लिए बजट में अक्षय ऊर्जा के उत्पाद को आर्थिक मदद कर में छूट, सब्सिडी आदि में बढोत्तरी आदि से अक्षय ऊर्जा उद्यमी प्रोत्साहित होगें।

भारत में अक्षय ऊर्जा के कारोबार- भारत में सौर ऊर्जा विशेष रूप से रेगिस्तान में है तथा भारत में सौर ऊर्जा के उत्पादन कार्यक्रम को 'एनर्जी ग्लोबल वर्ल्ड' पुरस्कार प्राप्त हो चुका है। जबकि गुजरात, कर्नाटक, केरल, आंध्र प्रदेश आदि है। पवन ऊर्जा पार्कों में-तमिलनाडु का युपेडम, राजस्थान का जैसलमेर, महाराष्ट्र का ब्रह्मनवेल, ढालगांव, चकाला, वासपेट आदि है।

ऊर्जा संरक्षण की बेहतर संभावना- ऊर्जा के सीमित संसाधन व आयात की ऊँची लागत के मद्दे नजर सौर व पवन ऊर्जा के क्षेत्रों में नवोन्मेषण व शोध पर बल देने की आवश्यकता है। ऐसा करने से बिजली उत्पादन की लागत को कम किया जा सकेगा। अक्षय ऊर्जा के क्षेत्र में बेहतर एवं तेजी से काम करने होंगे तभी विकास के उच्चतम स्तर पर पहुँचा जा सकता है। हमारे पास प्रकृति प्रदत्त बहुत सारी चीजें हैं जिसमें हम अक्षय ऊर्जा का प्रयोग भली प्रकार कर सकते हैं जैसे-तालाब में सौर पैनल, नदी के पानी से ऊर्जा उत्पादित की जा सकती है, हवा का प्रयोग भी ऊर्जा उत्पादन में किया जा सकता है।

सौर व पवन ऊर्जा के द्वारा हाइब्रिड बिजली उत्पादित की जा सकती है जिससे बिजली के ढांचागत लागत मे कमी आएगी। अक्षय ऊर्जा उपकरणों का घरेलू स्तर पर विनिर्माण करने से रोजगार का सृजन होगा।

ग्रीन एनर्जी, क्लीन एनर्जी- भविष्य में सौर ऊर्जा विश्व की कुल ऊर्जा खपत का 5 प्रतिशत भाग अकेले पूरा करेगी। चूँकि भविष्य में विद्युत की खपत दुगुनी हो जायेगी ऐसे में सौर ऊर्जा सबसे बेहतर विकल्प होगा साथ ही तकनीकी के ऐसे नए युग का आरम्भ होगा जिसमें पर्यावरण का हित भी निहित होगा। सौर ऊर्जा का उपयोग कर लाखो टन कार्बन-डाई-ऑक्साइड को वायुमण्डल में बनने से रोका जा सकता है। सौर ऊर्जा पृथ्वी की बदलती जलवायु को ठीक करने में सहायक होगी।

अक्षय ऊर्जा के लाभ-

- पर्यावरण की दृष्टि से स्वच्छ ऊर्जा का उत्पादन।
- प्रदूषण रहित ऊर्जा का उत्पादन।
- उपभोक्ता अपनी आवश्यकतानुसार बिजली का उत्पादन कर सकेगे।
- ग्रिड से बिजली की खपत में कमी आती है।
- डीजल की खपत में कमी।
- अतिरिक्त बिजली को ग्रिड में भेजा जा सके।
- रोजगार का सृजन होगा।

सरकारी नीतियाँ- अक्षय ऊर्जा में अपार क्षमता है। यह ऊर्जा के क्षेत्र में क्रान्तिकारी परिवर्तन है। इसके लिए सरकार ने कई नीतियों का क्रियान्वयन किया है एवं कई नीतियों की रूपरेखा तैयार है-

- उत्पादन आधारित प्रोत्साहन- इस नीति में प्रति यूनिट तैयार बिजली के एवज में उत्पादक को 50 पैसे प्रोत्साहन देना आरम्भ किया गया।
- अक्षय ऊर्जा प्रमाण-पत्र योजना- अक्षय ऊर्जा बनाने वाले उत्पादन के साथ इन सर्टिफिकेट को तैयार करते हैं जिन्हें दूसरी कम्पनियाँ बाजार से खरीद लेती है। उन्होंने जितनी कीमत की प्रमाण पत्र खरीदे माना जाता है कि उन्होंने उतनी ही कीमत की अक्षय ऊर्जा खरीदी है।
- राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा कोष- देश के कई भागों में प्रदूषण का स्तर खतरनाक है प्रदूषण फैलाने वालों से जुर्माना वसूलने के साथ-साथ स्वच्छ ऊर्जा के विकास को प्रोत्साहन देने के लिए सरकार ने राष्ट्रीय स्वच्छ ऊर्जा कोष की स्थापना की है।
- हरित ऊर्जा गलियारा- सरकार ने अक्षय ऊर्जा को ग्रिड की बिजली तक बिना रूकावट ले जाने के लिए हरित ऊर्जा गलियारा बनाने का प्रावधान किया है जिसे जर्मनी की सहायता से पूरा किया जायेगा।
- स्वच्छ भारत अभियान- अपशिष्टो का वैज्ञानिक रूप से प्रबन्धन करते हुए आजीविका का साधन मिलेगा। साथ ही अपशिष्ट के प्रबन्धन क्रम में ऊर्जा का भी उत्पादन होगा।

उपसंहार- 'भारत में आज भी लाखों परिवार ऐसे हैं जो ऊर्जा से वंचित हैं। गरीब से गरीब परिवार को भी यह अपेक्षा है कि उसका बच्चा पढ़े, पढ़-लिख कर आगे जाए।'- माननीय श्री नरेन्द्र मोदी

अक्षय ऊर्जा मानव जाति की दैनिक आवश्यकताओं, कृषि, कुटीर, लघु एवं बड़े उद्योगों के लिए आवश्यक ऊर्जा को सरलता से पूरा कर सकती है। अक्षय ऊर्जा को मजबूत करने के लिए कौशल की आवश्यकता है, **'स्टार्ट अप इण्डिया'** के तहत पवन ऊर्जा, सौर ऊर्जा, जल ऊर्जा, अपशिष्ट ऊर्जा के उत्पादन के लिए व्यापारियों को आर्थिक सहायता, सब्सिडी, अन्य सुविधायें और कर में छूट दी जा सकती है।

संदर्भ सूची

1. सक्सेना, ऋषभ कृष्ण, मई, 2016 'संभावनाओं से भरपूर है पवन ऊर्जा क्षेत्र', कुरुक्षेत्र।
2. द्विवेदी, धिप्रज्ञा, मई, 2016 'बायोगैसः गाँवों की ऊर्जा सुरक्षा', कुरुक्षेत्र।
3. सिंह, सतीश, मई, 2016 'स्टार्टअप्स, कौशल और मेक इन इण्डिया को बढ़ावा देती अक्षय ऊर्जा', कुरुक्षेत्र।
4. सिन्हा, शिशिर, मई, 2016 'सौर ऊर्जा से खेतों में हरियाली'।
5. श्रीवास्तव, संजय, मई, 2016 'सौर ऊर्जा में हो रहे चुपचाप बड़े काम' कुरुक्षेत्र।
6. कपूर, निमिष, मई, 2016 'बेहतर भविष्य के लिए नवीकरणीय ऊर्जा', कुरुक्षेत्र।
7. मेहरोत्रा, सौरभ, 2021 'भारत के लिए सौर ऊर्जा की उपादेयता' घटना चक्र।
8. कुमरा, सुविधा, जुलाई, 2014 'गैर परम्परागत ऊर्जा स्रोतों से जगमग होंगे गाँव', कुरुक्षेत्र।
9. सक्सेना, जगदीप, जनवरी, 2022 'अक्षय ऊर्जा से ग्रामीण क्षेत्रों में बदलाव की लहर', कुरुक्षेत्र।
10. सक्सेना, जगदीप, जनवरी 2021, 'अक्षय ऊर्जा से संवरता ग्रामीण भारत', कुरुक्षेत्र।

पर्यावरण का हमारे मानसिक और सामाजिक स्तर पर प्रभाव

सुश्री ऐश्वर्या सक्सेना

अतिथि प्रवक्ता, मनोविज्ञान मनोविज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज

सुश्री नैन्सी

अतिथि प्रवक्ता, समाजशास्त्र, कला एवं सामाजिक विज्ञान विभाग, शुआट्स, प्रयागराज

शोध सारांश

पर्यावरण पृथ्वी पर हमारे तथा अन्य घटकों के जीवन के लिए एक अनिवार्य तत्व है। बिना पर्यावरण के जीवन की कल्पना कर पान संभव नहीं है। यही धरती पर जीवनका सृजन व पालन करता है। हमारे जीवन का सृजन व पालन जितना महत्वपूर्ण है उतना ही महत्वपूर्ण है हमारा समाज में रहते हुए अपने सभी कार्यों को संपादित करना। यह तभी संभव होगा जब मनुष्य मानसिक रूप से स्वस्थ होगा। एक स्वच्छ पर्यावरण ही सामाजिक विकास तथा मानसिक विकास को बढ़ावा देता है। जब पर्यावरण ही प्रदूषित तथा हमारे अनुकूल नहीं होगा तब हमारा सामाजिक जीवन अस्त- व्यस्त हो जाएगा, जो हमारे मानसिक स्वास्थ को भी हानी पहुचाएगा। यदि हम समाजिक वातावरण का प्रभाव मानसिक स्तर पर न भी देखें तो भी सिर्फ पर्यावरण भी हमारे मानसिक स्वास्थ्य पर पर्याप्त प्रभाव डालता है। प्रतिकूल तथा प्रदूषित पर्यावरण चाहे वह प्राकृतिक पर्यावरण हो या मानव निर्मित पर्यावरण हो, हमारे मानसिक स्वास्थ्य स्तर को गिरता है तथा विभिन्न प्रकार के मानसिक विकारों के प्रति संवेदनशील भी बनाता है। प्रतिकूल पर्यावरण में एक व्यक्ति गुस्से, चिढ़चिढ़ेपन, तनाव आदि का शिकार हो सकता है जो आगे चलकर मानसिक विकार का रूप धरण कर सकता है। वही अगर पर्यावरण प्रतिकूल रहा तो सामाजिक दृष्टि से जनसंख्या का पलायन होगा, उद्योग काम होने लगएगे तथा क्षेत्र का भौगोलिक विकास विकास रुक जाएगा। इन तीनों ही कारकों के पारस्परिक संबंध का विश्लेषण प्रस्तुत शोधपत्र में किया गया है।

प्रस्तावना:

अल्बर्ट आइंस्टीन, "पर्यावरण बहुत सब कुछ है जो मैं नहीं हूं"

सौरमंडल के सभी ग्रहों में पृथ्वी ही एक ऐसा ग्रह है जहाँ प्रकृति ने जीवन का वरदान दिया है। यह जीवन यहाँ के पर्यावरण के कारण ही संभव हो पाया है। जीवन और पर्यावरण का एक दूसरे से संबंध है। अनादिकाल से मानव का अस्तित्व वनस्पति और जीव-जन्तुओं के ऊपर निर्भर रहा है। समस्त जीवधारियों का जीवन पर्यावरण की ही उपज होता है। अतः हमारे तन मन कि रचना, शक्ति, सामर्थ्य एवं विशेषता सम्पूर्ण पर्यावरण से नियंत्रित होती है, पनपती हैं और विकास पाती हैं। वस्तुतः जीवन और पर्यावरण एक दूसरे से इतने जुड़े हुए हैं कि दोनों का सहअस्तित्व बहुत आवश्यक है। पर्यावरण मूलतः प्रकृति की देन है। पर्यावरण भूमि, वन, पर्वतों, झरनों, मरुस्थल, मैदानों, घास, रंग-बिरंगे पशु पक्षी, स्वच्छ जल से भरी लहलहाती झीलों और सरोवरों से बना है।

धरती के पालन पोषण के लिए प्रकृति ने इन्हे पर्यावरण के रूप में दिया है। पर्यावरण से हर वह संसाधन उपलब्ध हो जाते हैं जो किसी सजीव प्राणी के जीने के लिए आवश्यक हैं। पर्यावरण ने हमें वायु, जल, खाद्य पदार्थ, अनुकूल वातावरण आदि उपहार स्वरूप भेंट दिया है। हम सभी ने हमेशा से पर्यावरण के संसाधनों का भरपूर दोहन किया है और आज हमारे इतना विकास कर पाने के पीछे भी पर्यावरण का प्रमुख योगदान रहा है। पर्यावरण एक ऐसा शब्द है जो मानव जीवन में प्रतिदिन उपयोग किया जाता है। यह एक ऐसी इकाई है जो संसार के प्रारंभ से ही है किन्तु आज भी लोग इस शब्द से भली भांति परिचित नहीं हैं। आज से कई हजार साल पहले हमारी पृथ्वी का वातावरण आज के जैसा अप्रत्याशित नहीं था, ना ही जमीन इतनी तपती थी। आज का पर्यावरण भगवान का प्रकोप सरीखा प्रतीत होता है जबकि यह सब मानव कृत्य है। पृथ्वी की

जलवायु स्थिर थी, समुद्र-महासमुद्र साफ तथा स्वच्छ थे, वन तथा वनस्पतियों की भरमार थी, प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता थी, पृथ्वी के गर्भ में खनिज लवण उपस्थित थे, परंतु जबसे मानव जीवन का अभ्युदय हुआ है मानव ने इन खनिजों तथा प्राकृतिक संसाधनों का अंधाधुंध दोहन करके धरती को खोखला कर दिया है। यदि मनुष्य इसी गति से संसाधनों का दोहन करता रहा, तो एक दिन ऐसा ही आएगा जब उसे अपना जीवन यापन करने के लिए भी अत्यधिक मुश्किलों का सामना करना पड़ेगा। पर्यावरण का हमारी मानसिक और सामाजिक स्तर पर समान रूप से प्रभाव पड़ता है जिसे हम अक्सर नजरअंदाज कर देते हैं। पर्यावरण चाहे जैसा भी हो मानव के मानसिक तथा सामाजिक स्तर पर अपना प्रभाव बनाता ही है। जब यह प्रभाव अच्छा हो तो अवसाद तथा चिंता की भावनाएं हमारे ऊपर काम हावी होती हैं। अंततः एंटीडिप्रेसेंट दवाइयों पर निर्भरता कम होती है। साथ ही दिन प्रतिदिन के तनाव को बेहतर संभालने की क्षमता का विकास होता है। पर्यावरण प्रदूषित होने पर मानसिक स्वास्थ्य पर कई तरह के नकारात्मक प्रभाव देखने को मिलते हैं। प्रदूषण पर्यावरण कई तरह के मानसिक विकारों जैसे तनाव, गुस्सा, चिड़चिड़ापन आदि को बढ़ावा देता है, इसके अतिरिक्त अन्य मानसिक समस्याओं के प्रति संवेदनशील बनाता है, जिससे स्वस्थ होने की गति धीमी हो जाती है जो अंततः मनुष्य को कुंठा की ओर धकेल देती है। हम पर्यावरण का सामाजिक स्तर पर भी सीधा-सीधा प्रभाव देखते हैं कि जब पर्यावरण अनुकूल होता है तथा विविध प्रकार की फसलों की उपज को बढ़ोतरी देता है जिससे उसे क्षेत्र में कृषि संबंधित अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु लोग उद्योग बसाते हैं। लोग उद्योग खुलेंगे तो वहां लोगों की सामान्य अवश्यकताएँ पूरी होगी तो जनसंख्या वहां बसेगी तथा बढ़ेगी। ऐसा होने से स्कूल, व्यापार इत्यादि विकसित होगा जिससे अर्थव्यवस्था का ढांचा तैयार होगा जो फलस्वरुप क्षेत्र का संरचनात्मक विकास करेगा। वहीं पर्यावरण प्रतिकूल होने से जनसंख्या दूसरे क्षेत्रों में प्रवास कर जाएगी। जिससे उसे क्षेत्र में उद्योग, स्कूल, अर्थव्यवस्था संबंधित विकास रुक जाएगा तथा इन्हें चला पाना भी मुश्किल हो जाएगा।

पर्यावरण से आशय:

पर्यावरण' शब्द 'परि' और 'आवरण' शब्दों के सहयोग से बना है। 'परि' का अर्थ चारों ओर और 'आवरण' का अर्थ घिरा होना, होता है। पर्यावरण सभी जीवों के लिए आवश्यक है। पर्यावरण को अंग्रेजी में एनवायरनमेंट कहते हैं। एनवायरनमेंट शब्द फ्रेंच भाषा के "एनविरोनेर" शब्द से लिया गया है। जिसका अर्थ है घिरा हुआ या घेरा होना। यह एक तरह से हमारा सुरक्षा कवच है, जो हमें प्रकृति से विरासत में मिला है। दूसरे शब्दों में पर्यावरण का अर्थ जैविक और अजैविक घटकों एवं उनके आसपास के वातावरण के सम्मिलित रूप से है, जो जीवन के आधार को संभव बनाते है।

पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 के अनुसार पर्यावरण, किसी किसी जीव के चारों ओर घिरी भौतिक एवं जैविक दशा व उनके साथ अंतक्रिया को सम्मिलित करता है।

पर्यावरण के प्रकार:

पर्यावरण में पाए जाने वाले कारकों के आधार पर हम इसे दो भागों में बांट सकते हैं:

- प्राकृतिक पर्यावरण
- मानव निर्मित पर्यावरण

1. प्राकृतिक पर्यावरण

प्राकृतिक पर्यावरण वह पर्यावरण होता है जो हमें प्रकृति से प्राप्त हुआ है, इसमें वह सभी संसाधन व तत्व आते हैं जो हमारी धरती और प्रकृति ने हमें दिए हैं। इन सभी संसाधनों का सृजन प्रकृति की ओर से हुआ है, जो सजीव प्राणियों के जीवन के सुगम संचालन के लिए उपलब्ध होते हैं। प्राकृतिक पर्यावरण के अंतर्गत नदी, पर्वत, जंगल, गुफा, मरुस्थल, समुद्र आदि आते हैं। प्रकृति से भरपूर मात्रा में खनिज, पेट्रोलियम, लकड़ियां, फल, फूल, औषधियां प्राप्त होती है, जिनका उपयोग अपने दैनिक जीवन की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए किया जाता है। इनमें सबसे महत्वपूर्ण है प्राणदायी ऑक्सीजन, जो हमें पेड़ों से प्राप्त होती है। इन सब के बिना जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती।

2. मानव निर्मित पर्यावरण

मानव निर्मित पर्यावरण में वह सब आता है जो मानव निर्मित है जैसे: तालाब, कुंए, खेत, बगीचे, घर-आवास, इमारतें, उद्योग आदि। यह सब मिलकर सुगम मनुष्य जीवन का आधार विकसित करते हैं। एक तरह से यह मानव जीवन की प्रगति का सूचक

है कि किस तरह अपनी दैनिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी बड़ी कठिनाई से करने वाला मानव, आज विज्ञान तथा तकनीक की गगनचुंबी इमारतों का निर्माण कर रहा है।

जैसे जैसे सभ्यताओं का विकास हुआ, मनुष्य ने नए-नए आविष्कार किए और अपने जीवन को सुविधाजनक बनाने हेतु, वह प्राकृतिक संसाधनों का अत्यधिक उपयोग करने लगा, और आज मानव निर्मित पर्यावरण, धरती के कोने-कोने पर विस्तृत होता जा रहा है।

मानसिक स्वास्थ से आशयः

मानसिक स्वास्थ्य में हमारा भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कल्याण शामिल है। यह हमारे सोचने, महसूस करने और कार्य करने के तरीके को प्रभावित करता है और यह निर्धारित करने में मदद करता है कि हम तनाव को कैसे संभालते हैं, दूसरों से कैसे जुड़ते हैं और विकल्प चुनते हैं। मानसिक स्वास्थ्य जीवन के हर चरण में महत्वपूर्ण है, बचपन और किशोरावस्था से लेकर वयस्कता तक। अपने जीवन के दौरान, यदि आप मानसिक स्वास्थ्य समस्याओं का अनुभव करते हैं, तो आपकी सोच, मनोदशा और व्यवहार प्रभावित हो सकता है। मानसिक स्वास्थ्य, स्वास्थ्य का एक अभिन्न अंग है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन अपनी स्वास्थ्य की परिभाषा में शारीरिक स्वास्थ्य के साथ-साथ मानसिक स्वास्थ्य को भी शामिल करता है।

"मानसिक स्वास्थ्य एक शब्द है जिसका उपयोग भावनात्मक, मनोवैज्ञानिक और सामाजिक कल्याण का वर्णन करने के लिए किया जाता है।1 किसी व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य की गुणवत्ता अक्सर इस बात से मापी जाती है कि वे रोजमर्रा के तनावों से कितनी अनुकूलता से निपट सकते हैं।"

मानसिक स्वास्थ्य लोगों को अपनी क्षमताओं का उपयोग करने, उत्पादक बनने, निर्णय लेने और अपने समुदायों में सक्रिय भूमिका निभाने की अनुमति देता है।

पर्यावरण और मानसिक स्वास्थ

पर्यावरण और मानसिक स्वास्थ्य और आंतरिक रूप से जुड़े हुए हैं। वे स्थान जहां आप बहुत अधिक समय बिताते हैं- घर, काम, स्कूल और यहां तक कि सामाजिक रूप से- आपके मानसिक स्वास्थ्य पर महत्वपूर्ण प्रभाव डाल सकते हैं। मनोविज्ञान में, इन्हें मानसिक स्वास्थ्य के पर्यावरणीय कारकों के रूप में जाना जाता है और ये पर्यावरण मनोवैज्ञानिकों के अध्ययन का मुख्य केंद्र बिंदु हैं।

- उन पर्यावरणीय कारकों की पहचान करना जो आपको मनोवैज्ञानिक रूप से प्रभावित कर सकते हैं, इस बात पर प्रकाश डाल सकते हैं कि जिन स्थानों पर आप अक्सर जाते हैं वे आपके मानसिक स्वास्थ्य में योगदान दे रहे हैं या उसमें कमी ला रहे हैं। यह आपको यह पहचानने में भी मदद कर सकता है कि मानसिक और भावनात्मक रूप से बेहतर महसूस करने के लिए परिवर्तनों की आवश्यकता है या नहीं।
- पर्यावरण किसी व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य पर सकारात्मक या नकारात्मक प्रभाव डाल सकता है। एक हालिया अध्ययन से पता चला है कि जलवायु संकट के बीच रहने का विचार ग्रीनलैंडवासियों की चिंता और अवसाद के स्तर को कैसे प्रभावित कर रहा है। हमारी बदलती जलवायु के प्रभाव- आर्थिक अनिश्चितता, नौकरी की असुरक्षा, चरम और अस्थिर मौसम पैटर्न और विस्थापन- भी मानसिक स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं।
- वायु प्रदूषण, अन्य पर्यावरणीय खतरों के बीच, विशेष रूप से हानिकारक है, शारीरिक रूप से- हमारे फेफड़ों, हृदय, आदि को नुकसान पहुंचाकर- और मानसिक रूप से। अब कुछ वायु प्रदूषकों और अवसाद, मनोभ्रंश, चिंता और आत्महत्या जैसी मानसिक बीमारियों के बीच संबंध के प्रमाण बढ़ रहे हैं। शहरी क्षेत्रों में रहने वाले युवाओं में जोखिम विशेष रूप से अधिक हैः मनोचिकित्सा अनुसंधान में प्रकाशित एक हालिया अध्ययन के अनुसार, अगर बच्चे 12 साल की उम्र में गंदी हवा के संपर्क में आए तो उन्हें 18 साल की उम्र में अवसाद होने की संभावना तीन से चार गुना अधिक हो जाती है।
- सीसा, एक भारी धातु, हमारे तंत्रिका तंत्र के लिए भी विषाक्त है जैसा कि नवीनतम ग्लोबल केमिकल्स आउटलुक में पुष्टि की गई है। रक्त में सीसे की सांद्रता का बहुत कम स्तर भी बच्चों में बुद्धि में कमी, व्यवहार संबंधी कठिनाइयों और सीखने की समस्याओं से जुड़ा हो सकता है।

- आज की तारीख में 18 वर्ष से अधिक आयु की अमेरिका की 26 फीसदी आबादी एंटी डिप्रेसेंट दवाइयों पर निर्भर है. भारत में यह प्रतिशत 12 है, जो कि कोविड महामारी के दौरान पिछले दो सालों में 19 फीसदी बढ़ गया है. डब्लू एच ओ की रिपोर्ट के मुताबिक 2029 तक डिप्रेशन, एंग्जायटी और खराब मेंटल हेल्थ दुनिया की 10 सबसे खतरनाक और लाइफ थ्रेटनिंग बीमारियों में शामिल होगी।
- यह तो हुई रूपरेखा कि मेंटल हेल्थ आखिर कितनी बड़ी समस्या है और यह दुनिया के लिए कितना खतरनाक रूप ले सकती है. यही कारण है कि आज दुनिया के सभी बड़े देश इस शोध में जुटे हुए हैं कि मानसिक स्वास्थ्य के लगातार बिगड़ते जाने के प्रमुख कारक क्या हैं और इसे कैसे ठीक किया जा सकता है।
- इस संबंध में एक नया अध्ययन इंटरनेशनल जरनल ऑफ एनवायर्नमेंटल रिसर्च एंड पब्लिक हेल्थ में प्रकाशित हुआ है. इस अध्ययन के मुताबिक क्लाइमेट चेंज या पर्यावरण में हो रहा बदलाव खराब मेंटल हेल्थ के प्रमुख कारकों में से एक है. इस स्टडी के शोधर्ताओं का मानना है कि जलवायु परिवर्तन सामाजिक, आर्थिक के साथ-साथ स्वास्थ्य संबंधी खतरा भी उत्पन्न कर रहा है. आने वाले समय में मानसिक स्वास्थ्य पर पड़ने वाला इसका प्रभाव और नकारात्मक ढंग से सामने आएगा।
- यह इस तरह की पहली स्टडी है, जिसमें क्लाइमेट चेंज को मानसिक स्वास्थ्य के नजरिए से देखने की कोशिश की गई है. यह स्टडी कहती है कि क्लाइमेट चेंज का सीधा असर किसी भी देश की अर्थव्यवस्था, उसके सामाजिक ताने-बाने और राजनीतिक स्थिति पर पड़ता है।

क्लाइमेट चेंज सिर्फ इतनी सी बात नहीं है कि बारिश, सर्दी, गर्मी हर चीज का अनुपात बदल रहा है और कहीं तो बिलकुल उलट हो रहा है. इन सारी चीजों का प्रभाव खेती और उत्पादन पर पड़ रहा है, जिसका सीधा संबंध मनुष्य के अस्तित्व से है. यदि अस्तित्व पर खतरा मंडराएगा तो उसका असर इंसान के मानसिक स्वास्थ्य पर भी पड़ेगा।

समाज से आशय

समाजशास्त्रीय शब्दों में, समाज उन लोगों के समूह को संदर्भित करता है जो एक निश्चित समुदाय में रहते हैं और समान सांस्कृतिक घटकों को साझा करते हैं। व्यापक पैमाने पर, समाज में हमारे आस-पास के लोग और संस्थाएँ, हमारी साझा मान्यताएँ और हमारे सांस्कृतिक विचार शामिल हैं। आमतौर पर, कई समाज राजनीतिक प्राधिकार भी साझा करते हैं। समाज व्यक्तियों और सामाजिक संस्थाओं के बीच साझा सामाजिक संबंधों के साथ निरंतर सामाजिक संपर्क के तत्वों का प्रतीक है। इस प्रक्रिया में आइए विभिन्न समाजशास्त्रियों की संभावनाओं का हवाला देकर समाज के अर्थ और परिभाषा को समझें।

सोसाइटी शब्द लैटिन शब्द 'सोसाइटास' से लिया गया है जिसका उपयोग मित्रतापूर्ण पार्टियों के बीच बंधन या बातचीत का वर्णन करने के लिए किया जाता है।

जी.डी. मिशेल के अनुसार, समाज की अवधारणा समाजशास्त्रियों की शब्दावली में सबसे अस्पष्ट और सबसे सामान्य में से एक है। यह अवधारणा एक सामान्य ज्ञान श्रेणी है जिसमें 'समाज' राष्ट्र-राज्यों की सीमाओं के बराबर है। जबकि व्यवहार में समाजशास्त्री अक्सर इस रोजमर्रा की शब्दावली के साथ काम करते हैं, यह पर्याप्त नहीं है क्योंकि समाज हमेशा राजनीतिक सीमाओं के अनुरूप नहीं होते हैं। जब वे समाज के बारे में बात करते हैं, तो आमतौर पर उनके दिमाग में पड़ोसी समाज की जनजाति जैसी एक सामाजिक इकाई होती है। समाजशास्त्रीय जांच की वस्तु को नामित करने के लिए समाज का उपयोग अधिक सामान्य अर्थ में भी किया जाता है, इस अर्थ में, यह कमोबेश सामाजिक संरचना का पर्याय है।

हम जिस प्रकार के समाज में रहते हैं वह हमारे जीवन के कई पहलुओं को निर्धारित करता है, जैसे कि हम कहाँ बड़े होते हैं, हम कैसे प्रभावित होते हैं, हम किससे मिलते हैं, हम क्या करते हैं और हम जीवन का अनुभव कैसे करते हैं। प्रत्येक समाज अलग है, और दुनिया भर में लाखों लोग हैं।

समाज की परिभाषा

समाज की अवधारणा को विभिन्न लेखकों ने अलग-अलग अर्थ दिये हैं। ऐसी परिभाषा खोजना कठिन है जो सभी समाजशास्त्रियों द्वारा सार्वभौमिक रूप से स्वीकृत हो। निस्संदेह, इसका मतलब यह नहीं है कि समाज अलग-अलग व्यक्तियों

के लिए अलग-अलग मायने रखता है। यह कहना अधिक उचित होगा कि विभिन्न समाजशास्त्री समाज को विभिन्न कोणों से देखते हैं और दूसरों की तुलना में एक या दो पहलुओं पर अधिक जोर देते हैं, जैसा कि निम्नलिखित परिभाषाओं से समझा जा सकता है।

मैकलेवर के अनुसार, "समाज उपयोगों और प्रक्रियाओं की, प्राधिकार और पारस्परिक सहायता की, कई समूहों और विभाजनों की, मानव व्यवहार और स्वतंत्रता के नियंत्रण की एक प्रणाली है। यह लगातार बदलती जटिल प्रणाली, जिसे हम समाज कहते हैं, एक जाल है सामाजिक रिश्तों का"।

पर्यावरण समाज पारस्परिकता

पर्यावरण समाज पारस्परिकता को समझने के लिए व कॉटन और आर दुनलक में पर्यावरण के तीन प्रतिस्पर्धी कार्यों को स्पष्ट किया जो मानव समाज के लिए उपयोगी है

1. पर्यावरण मानव समाज के लिए जीविका के आधार अथवा आपूर्ति करता के तौर पर काम करता है। मनुष्य को हवा पानी भोजन जंगल ईंधन और अपने दैनिक उपभोग उपयोग की वस्तुओं के उत्पादन को कच्चा माल पर्यावरण से मिलता है। पर्यावरण इन सभी नवीकरणीय (वन) है और गैरनवीकरणीय (जीवाश्म, ईंधन) प्राकृतिक संसाधनों का स्रोत है। हालांकि जब हम इन संसाधनों का पर्यावरण के प्रदान करने की गति से अधिक रफ्तार से दोहन करने लगते हैं तब यह स्थिति संसाधनों के अभाव को बढ़ाती है।
2. पर्यावरण मानव समजों के अस्तित्व के लिए निवास स्थान उपलब्ध कराता है। यह हमें घर, कार्य क्षेत्र, खेल मैदान, यात्रा एवं परिवहन व्यवस्था या दूसरे शब्दों में कहें कि हमारे दैनिक जीवन के लिए आवश्यक सभी चीजें उपलब्ध कराता है। हालांकि इसका बहुतायत में प्रयोग भीड़ को बढ़ाता है जो हमारे अस्तित्व के लिए आवश्यक पर्यावरण की क्षमताओं को प्रभावित करती है।
3. पर्यावरण अपशिष्ट भंडार के तौर पर भी काम करता है। जीवन और पर्यावरण प्रदत्त संसाधनों के उपभोग की प्रक्रिया में मनुष्य अपशिष्ट उत्पादों की भारी मात्रा उत्पन्न करते हैं। पर्यावरण इन अवशिष्टों को अवशोषित अथवा पुनर्चक्रण (उदाहरण के लिए पेड़ों का कार्बन डाइऑक्साइड लेकर ऑक्सीजन देना) करता है। परंतु, सघन आबादी वाले आधुनिक समाज में पर्यावरण की अवशोषण पुनर्चक्रण क्षमता से कहीं अधिक अपशिष्ट उत्पादित होता है, जिसके परिणाम भूमि जलवायु और अन्य प्रदूषण के तौर पर सामने आते हैं।

सामाजिक समस्याओ में पर्यावरण की समस्याएँ भी हैं क्योंकि पर्यावरण प्रत्यक्ष रूप से समाज को प्रभावित करता है। मनुष्य अपने निजी स्वार्थ हेतु पर्यावरण को लम्बे समय से प्रदूषित करता आ रहा है तथा प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता आ रहा है। मनुष्यों के इन कृत्यों के कारण ही प्रकृति विनाश की तरफ बढ़ रही है तथा मनुष्य को प्रकार की पर्यावरण संबंधी समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है।

समाजशास्त्रीय समीक्षा के अंतर्गत सार्वजनिक प्राथमिकताएँ तय की जाती हैं तथा किस प्रकार इन्हें आगे बढ़ाया जाता है यह भी। सार्वभौमिक रूप से वे लाभदायक नहीं भी हो सकते हैं। जनहित के कार्यों की रक्षक नीतियाँ वास्तव में राजनीतिक तथा आर्थिक रूप से शक्तिशाली वगों के लाभ की रक्षा करती हैं अथवा गरीब तथा राजनीतिक रूप से कमजोर वर्गों को नुकसान पहुँचाती हैं। पर्यावरण का हमारे समाज से बहुत घनिष्ठ संबंध है। पर्यावरण हमारे सामाजिक स्तर को बहुत अधिक प्रभावित करता है। पर्यावरण के प्रतिकूल का अनुकूल होने से किसी स्थान पर जनसंख्या का घनत्व अधिक होगा। जनसंख्या का घनत्व उस जगह पर अधिक होता है जहां पर लोगों के दिन प्रतिदिन की आवश्यकताओं की पूर्ति सरलता से हो सके तथा जहां पर ऐसा नहीं हो सकेगा वहां पर जनसंख्या दूसरे क्षेत्रों में पलायन कर जाएगी। जिन क्षेत्रों का मौसम ठंडा होता है वहां पर लोगों की वेशभूषा खान-पान अलग होता है तथा जहां पर पर्यावरण गरम होता है वहां पर लोगों का पहनावा वेशभूषा खान-पान व संरचनात्मक ढांचा अलग होता है। पर्यावरण के कारण ही समाज का सामूहिक ढांचा निर्धारित होता है। जहां का पर्यावरण हमें इस बात पर बाध्य करता है कि हमें मिलजुल कर प्रकृति पर विजय पानी है, वहां का सामूहिक ढांचा अलग होगा। ऐसे क्षेत्रों में संयुक्त परिवारों का चलन होगा तथा जहां पर हमें समूह की जरूरत नहीं पड़ेगी अर्थात जहां का पर्यावरण

अनुकूल होगा, वहां का सामूहिक ढांचा एकाकी परिवार वाला होगा। इसी प्रकार पर्यावरण के अनुकूल तथा प्रतिकूल होने से समाज के औद्योगिक, अर्थव्यवस्था तथा संपत्ति के संचय इत्यादि क्षेत्र पर भी सीधा–सीधा प्रभाव पड़ता है।

उपसंहार

पर्यावरण का हमारे मानसिक तथा सामाजिक स्तर पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसी प्रकार हम देख सकते हैं कि यूक्रेन में इजरायल के युद्ध का भी पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। भौगोलिक दृष्टि के अनुसार भारत से बहुत निकट ना होते हुए भी पृथ्वी के तथा भारत के औसत तापमान की बढ़ोतरी में इस युद्ध का पूरा योगदान रहा है। वहां की जनसंख्या के मानसिक स्तर पर पड़ रहे नकारात्मक प्रभाव को भी हम देख सकते हैं। जैसे अभीघात जन्य तनाव विकार, घबराहट संबंधी विकार, चिंता विकार, मनोविदलता, मनोदशा विकृति, व्यक्तित्व विकृति इत्यादि। इस युद्ध की वजह से सामाजिक दृष्टि से भी बहुत अधिक प्रभाव पड़ रहा है। जैसे वहां की अर्थव्यवस्था, उद्योग, संरचनात्मक ढांचा, धन संचय करने की क्षमता, इसके अतिरिक्त अन्य शारीरिक रोगों से ग्रसित होने की संवेदनशीलता बढ़ गई है। वैज्ञानिक संगोष्ठियां तथा तकनीकी जागरूकता के साथ–साथ आज समाज को आवश्यकता है कि मानव के मन मस्तिष्क तथा सामाजिक स्तर को भी बचाया जाए। जहां से अविष्कार तथा खोजों के नवीनतम विचार आते हैं तथा उन विचारों को साकार रूप दिया जाता है। यदि मानव मन तथा समाजिक स्तर ही प्रदूषित हो जाएगा तो नवीनतम सृजनात्मक विचारों व उनके क्रियान्वयन का क्षय होने लगेगा और ऐसा होने पर हम मनुष्यों का अस्तित्व समय बढ़ाने के साथ पुनः सदियों पुरानी तकनीक पर ही निर्भर होकर रह जाएगा। जिससे मानव जीवन खतरे में पड़ जाएगा। हाल तक, मानव स्वास्थ्य तथा समाजिक स्तर की सुरक्षा में एक स्वस्थ वातावरण की भूमिका को काफी हद तक नजरअंदाज किया गया था, लेकिन यह बदल रहा है। धीरे–धीरे, नागरिकों और सरकार दोनों को यह एहसास हो रहा है कि प्रकृति की मदद करके हम अपनी भलाई में भी सुधार कर सकते हैं।

संदर्भ सूचीः

1. Meghrajani, V. R., Marathe, M., Sharma, R., Potdukhe,A., Wanjari, M. B., & Taksande,A. B. (2023).A ComprehensiveAnalysis of Mental Health Problems in IndiaAnd the Role of MentalAsylums. Cureus, 15(7), e42559. doi.orgèk10.7759èkcureus.42559
2. Upadhyay, Sparsh (19April 2021). "On What Basis Insurance Policies Which Exclude Mental Illnesses From Full CoverageApproved?: Delhi High CourtAsks IRDA". Livelaw. Retrieved 14 May 2021.
3. *"Mental health in India". World Health Organization India.* Archived *from the original on 21 October 2020*. Retrieved 4 December 2020.
4. *"About Indian Psychiatric Society". Indian Psychiatric Society*. Retrieved 7 December 2020.
5. India State-Level Disease Burden Initiative Mental Disorders Collaborators (2020). The burden of mental disordersAcross the states of India: the Global Burden of Disease Study 1990-2017. The lancet. Psychiatry, 7(2), 148–161. doi.orgèk10.1016èkS2215-0366(19)30475-4
6. samhsa.govèkmental-health
7. tv9hindi.com/lifestyle/climate-change-and-our-mental-health-a-study-to-point-out-the-potential-risk-factor-984007.html
8. hindi.webdunia.com/hindi-essay/essay-on-environment-in-hindi-122050500065_1.html
9. successcds.net/hindi/essay/environment-essay-in-hindi#google_vignette
10. knowledgebubbles.in/2022/02/blog-post_10.html?m=1
11. egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/79832/1/Unit-1.pdf
12. who.int/india/health-topics/mental-health
13. unep.org/news-and-stories/story/caring-environment-helps-care-your-mental-health

बायोमेडिकल कचरा-पर्यावरण के लिए खतरा

डॉ० अदिति गोस्वामी

गेस्ट फैकल्टी, आर्टस एण्ड सोशल साइंस विभाग, सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज

डॉ० अवन्ती गोस्वामी

गेस्ट फैकल्टी, आर्टस एण्ड सोशल साइंस विभाग, सैम हिगिनबॉटम कृषि, प्रौद्योगिकी एवं विज्ञान विश्वविद्यालय, प्रयागराज

शोध सारांश

''खतरनाक कचरे को यथासम्भव उसके उत्पादन के स्थान के करीब संसाधित किया जाना चाहिए। खतरनाक कचरे के परिवहन में शामिल जोखिम बड़े हैं और कुछ सामग्रियों (उदाहरण के लिए जो संक्रामक है) में पाए जाने वाले जोखिम कारक प्रतिदिन बढ़ते हैं। उपयुक्त रूप से स्थित और सुसज्जित अपशिष्ट निपटान सुविधाएं खतरनाक सामग्रियों के परिवहन की आवश्यकता को कम कर सकती है।'' - डब्ल्यू0एच0ओ0 में प्रकाशन 2004

वर्तमान समय में पर्यावरणीय अवनयन का यह एक प्रमुख कारक है कि प्रकृति द्वारा निर्मित वस्तुओं के अवशेष को जब निर्मित वस्तुओं के अवशेषों के साथ मिला दिया जाता है तब दूषक पदार्थों का पुनर्चक्रण नहीं किया जा सकता है। बायोमेडिकल कचरे का निस्तारण न करके इन्हें खुले में फेंक दिया जाता है जिससे मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों के लिए ही खतरा उत्पन्न कर रहा है। विभिन्न प्रकार की बिमारियों को फैला रहा।

शब्द कुँजी- बायोमेडिकल, संक्रामक, अवशेषों, पुनर्चक्रण, निस्तारण।

प्रस्तावना

उत्तम स्वास्थ्य और स्वच्छ पर्यावरण का दायित्त्व प्रत्येक व्यक्ति की सामाजिक और कानूनी जिम्मेदारी है। यदि इस जिम्मेदारी का निर्वाहन उचित प्रकार से नहीं किया जा रहा, तो मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण दोनों का ही अस्तित्व खतरे में होने लगता है।

आज जिस प्रकार से प्रदूषण बढ़ रहा है उससे साफ जाहिर है कि आने वाले समय में मनुष्य के जीवन की राह सरल नहीं। निरन्तर बढ़ते प्रदूषण और उससे फैलती बीमारियों से क्वालिटी इन्डेक्स लगातार खतरे से ऊपर जा रहा है। इसके लिए कहीं न कहीं प्रदूषण के लिए किसी ठोस रणनीति का न बनना है जिससे कई शहरों में सांस लेना दुश्कर है साथ ही कई नयी-नयी बीमारियों का घर भी है।

बायोमेडिकल कचरा- ऐसा कोई भी कचरा जिससे संक्रामक या संभावित संक्रामक सामग्री होती है। जो मनुष्यों और जानवरों के निदान, उपचार और टीकाकरण के दौरान उत्पन्न होते हैं। बायोमेडिकल कचरा स्वास्थ्य देखभाल गतिविधियों से उत्पन्न होते हैं और उनमें बीमारियाँ फैलाने की क्षमता होती है।

परिभाषाए- ''अच्छे बायोमेडिकल कचरा अभ्यास का मूल सिद्धान्त 3R की अवधारणा पर आधारित है अर्थात Reduce, Recycle और Reuse करना सर्वोत्तम बायोमेडिकल कचरों के विभिन्न उत्पादन से बचना है या निपटान के बजाय जितना संभव हो उतना कचरा पुनप्राप्ति करना है।

बायोमेडिकल कचरा के घटक- इसमें निम्नलिखित घटकों को सम्मिलित किया गया है-

- मानव के शरीर रचना सम्बन्धी कचरे (ऊतक, अंग, शरीर के भाग आदि)।
- जन्तुओं से सम्बद्ध कचरे जो प्रयोगशालाओं (ऊतक, अंग, शरीर के भाग आदि) और पशु चिकित्सालयों से शोध/प्रयोगों के दौरान निकलते हैं।

- सूक्ष्म जीव विज्ञान और जैव प्रौद्योगिकी से जुड़े कचरे जैसे कि प्रयोगशाला के कल्चर्स (संवर्धन में प्रयुक्त सामग्री), सूक्ष्मजीव, मानव और जन्तु कोशिका के कल्चर्स जीव विष आदि।
- हाइपोडर्मिक सुईयां (नीडिल्स), सिरिंजें, स्कैल्पल्स (शल्यक्रिया में प्रयुक्त चाकू) टूटे हुए काँच आदि।
- अप्रयुक्त दवाईयां और कोशिका विषाक्त औषधियां।
- ड्रेसिंग पट्टियां, प्लास्टर के टुकड़े, खून से भीगी संदूषित सामग्री आदि।
- ठोस कचरा (डिस्पोजेबल सामग्रियां जैसे सिरिंजे, ट्यूब्स, कैथेटर्स, आदि)।
- किसी भी संक्रमित भाग से उत्पन्न तरलरूपी कचरा।
- इंसीनिरेशन (भस्मीकरण संयंत्र) से निकली राख।
- रासायनिक कचरा।

बायोमेडिकल कचरे का वर्गीकरण

मेडिकल कचरे का वर्गीकरण उसके भार घनत्व और घटकों के अनुसार इस प्रकार किया गया है–

- संक्रामक– इसके अन्तर्गत संक्रामक रोग ग्रस्त रोगियों की शल्य क्रिया और जीव से उत्पन्न संक्रामक रोग परीक्षा से उत्पन्न कचरा, डिस्पोजेबल सिरिंजें, सुइयां, कैंची, ब्लेड, टूट काँच के टुकड़े, कीलें, चाकू आदि अन्य वस्तुयें जिससे चीरा लग सके।
- विकृति विज्ञान– इसके अन्तर्गत ऊतक, अंग, शरीर के भाग, मानव के माँस, भ्रुण, रक्त और रक्त तरल, औषधियां, रसायन आदि।
- विकिरणशील– ठोस, तरल एवं गैसीय कचरा जो रोग के निदान और इलाज में प्रयुक्त रेडियो सक्रिय अथवा विकिरणशील पदार्थ।

बायोमेडिकल कचरे के प्रमुख स्रोत

- सरकारी/निजी अस्पताल, नर्सिंग होम, चिकित्सालय।
- प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र।
- मेडिकल कॉलेज।
- शोध केन्द्र।
- पैरामेडिकल सेवाएं।
- जन्तु अनुसंधान केन्द्र।
- वेटेरिनेरी कॉलेज।
- रक्त बैंक।
- शवगृह एवं शव परीक्षा केन्द्र।
- जैव प्रौद्योगिकी संस्थान।
- प्रोडक्शन यूनिट्स।

अन्य स्रोत

- चिकित्सक/दन्त चिकित्सक के क्लीनिक्स।
- जन्तु गृह/बुचड़खाना।
- रक्तदान कैम्प।
- टीकाकरण केन्द्र।
- एक्यूपंक्चर।

- मनश्चिकित्सीय केन्द्र।
- कॉस्मेटिक छेदन।
- अन्तिम संस्कार सम्बन्धी सेवाएं।
- अशक्त/अपंग लोगों के संस्थान।

बायोमेडिकल कचरों से खतरा

पर्यावरणीय खतरा

- पर्यावरणीय प्रदूषण, दुर्गन्ध, कीट, मक्खियों, कृन्तकों और कीड़ों जैसे रोगवाहकों की वृद्धि के परिणामस्वरूप टाइफॉयड, हैजा, यकृत शोध जैसे रोगों और सिरिंजों एवं सुईयों के माध्यम से एड्स की स्थिति उत्पन्न होती है।
- पानी, पसीना, रक्त, शरीर द्रव, संदूषित अंगों के माध्यम से प्लेग और रेबीज जैसे विभिन्न संचारी रोग फैलते हैं तथा मक्खियों, कृन्तकों, बिल्लियाँ और श्वानों जैसे रोग वाहकों को रोग फैलाने का अवसर प्रदान करते हैं।
- संक्रमण पर उपयुक्त नियंत्रण नहीं किया गया तो अवांछित व्यक्तियों को डिस्पोजेबल वस्तुओं को रिसाइकिल करने और निपटान की गई औषधियों को पुनः पैकिंग करने और पुनः विक्रय करने को प्रोत्साहन मिलता है।
- सूक्ष्म जीवों के प्रतिरोधी उपभेदों का विकास।
- नगर के कचरादानों, खुले स्थानों, जलाशयों आदि में बायोमेडिकल कचरे को डालने के परिणामस्वरूप रोग फैलते हैं।
- इंसीनिरेटर्स (भस्मीकरण) संयंत्रों और खुले स्थानों में वस्तुएं जलाने से हानिकारक गैसे स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
- रेडियोधर्मी कचरे से प्रभावित होने पर स्वास्थ्य के प्रति गम्भीर खतरे भी उत्पन्न हो सकते हैं।

बायोमेडिकल अपशिष्ट नियम की विशेषताएँ

- विभिन्न स्वास्थ्य शिविरों जैसे टीकाकरण शिविर, रक्त शिविर और सर्जिकल शिविरों को शामिल करने के लिए विस्तारित किया गया है।
- एच0सी0एफ0 के अधिभोगी के कर्त्तव्यों को संशोधित किया गया है। अधिभोगी बहुव्यक्ति है जिसके पास एच0सी0एफ0 पर प्रशासनिक नियंत्रण होता है जो बायोमेडिकल कचरा का उत्पादन कर रहा है।
- सामान्य बोयामेडिकल अपशिष्ट उपचार और निपटान सुविधा के संचालन के कर्त्तव्यों में वृद्धि की गई है।
- बायोमेडिकल कचा के पृथक्करण, पैकेजिंग परिवहन और भंडारण में सुधार किया गया है। बायोमेडिकल कचरे को रंग कोड कचरे के प्रकार और उपचार विकल्पों के आधार पर चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है। इसके अलावा, अनुपचारित मानव, शारीरिक अपशिष्ट, गंदा अपशिष्ट और जैव प्रौद्योगिकी अपशिष्ट को 48 घंटे की अवधि से अधिक समय तक भंडारण करने की आवश्यकता है तो कब्जाधारी को यह सुनिश्चित करने के लिए सभी उचित उपाय करने चाहिए कि अपशिष्ट मानव स्वास्थ्य और पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव न डाले।
- नॉनबेडड एच0सी0एफ0 के लिए बायोमेडिकल कचरा निपटान के लिए प्राधिकरण केवल एक समय में ही अधिभोगी को दिया जाता है। प्राधिकरण की वैधता को बेडेड एच0सी0एफ0 के लिए सहमति आदेशों की वैधता के साथ सिंक्रनाइज किया जाएगा।
- पर्यावरण, वन और जलवायु परिवर्तन मंत्रालय वार्षिक रूप से नियमों के कार्यान्वयन की निगरानी करेगा, अनुपालन की जाँच करने की जिम्मेदारी प्रत्येक राज्य की जिला कलेक्टर या जिला मजिस्ट्रेट की अध्यक्षता में जिला स्तरीय समिति का गठन करके ही जाएगी। इसके अलावा यह कमेटी हर 6 महीने में अपनी रिपोर्ट राज्य प्रदूषण नियंत्रण बोर्ड को सौपेगी।

पर्यावरण पर प्रभाव

बायोमेडिकल कचरे के अनुचित पृथक्करण और निपटान से भूजल स्रोतों के दूषित होने की संभावना है जो मनुष्य और जीवों पर सामान्य रूप से प्रभावित करता है। अनुचित तरीके से बायोमेडिकल कचरे के सम्पर्क में योगदान है–

- फेफड़ों में संक्रमण
- परजीवी संक्रमण
- त्वचा संक्रमण
- हैजा
- यक्ष्मा
- एच0आई0वी0
- हेपेटाइटिस–बी और सी जैसी वायरल।

उपसंहार– वर्तमान में जितने बायोमेडिकल कचरे का निस्तारण हो रहा है उससे पांच गुना अधिक के निस्तारण की आवश्यकता है। कचरे के उचित निपटान के लिए परिष्कृत रासायनिक प्रसंस्करण संयंत्रों, भस्मक और डिसएसेम्बली केन्द्रों की आवश्यकता होती है।

संदर्भ सूची

1. दीपिका कन्याल, लता कन्याल बुटोला, रंजीत अम्बाद अप्रैल–जून, 2021, 'बायोमेडिकल डब्ल्यू भारत में एस्टे प्रबन्धन–समीक्षा' इंडियन जर्नल ऑफ फारेसिंक मेडिसिन एंड टी ऑक्सीकोलॉजी।
2. साभार, जून–2016, 'बायोमेडिकल कचरा', विज्ञान।
3. https://www.livehindustan.com>st.
4. National Institutes of Health (NIH) (.gov)
5. https://www.amarujala.com
6. Indian Council of Medical Research.
7. https://www.drishtiias.com.hindi
8. Bio Medical Waste Manageemnt : नियम एवं सुझाव
9. https://www.danielsheath.com
10. https://klink.springer.com>chapter.
11. घरेलू बायोमेडिकल अपशिष्ट प्रबन्धन की उपेक्षा से प्रतिकूल।

शहरीकरण और पर्यावरण

सुश्री अंजलि सिन्हा

गेस्ट फैकल्टी, मनोविज्ञान विभाग

शोध सारांश

शहरी क्षेत्र या शहर केवल मानव एकत्रण के लिए भौगोलिक क्षेत्र ही नहीं है बल्कि आर्थिक उत्पादन, सांस्कृतिक और सामाजिक संपर्क और पारिस्थितिक विकास का केंद्र है।

शहरीकरण एक वैश्विक परिवर्तन है जिसका तात्पर्य शहरी क्षेत्रों के भौतिक विस्तार से है। संयुक्त राष्ट्र संघ की परिभाषा के अनुसार "ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का शहरों में जाकर रहना और काम करना भी शहरीकरण है"। किसी भी राष्ट्र की जनसंख्या का बढ़ता हुआ आकार जब शहर की तरफ निवास के लिए जमा होता है तो उसे नगरीकरण या शहरीकरण कहते हैं।

पर्यावरण शब्द परि+आवरण के संयोग से बना है, जिसमें परि का अर्थ है चारों ओर तथा आवरण का अर्थ है परिवेश अर्थात वनस्पतियों, प्राणियों और मानव जाति सहित सभी सजीवों और उनके साथ सम्बंधित भौतिक परिसर को पर्यावरण कहते हैं। वास्तव में पर्यावरण में वायु, जल, भूमि, पेड़-पौधे, जीव-जंतु, मानव और उसकी विविध गतिविधियों के परिणाम आदि सभी का समावेश होता है।

जनसँख्या की निरंतर वृद्धि से हुए औद्योगीकरण एवं शहरीकरण की तीव्र गति से जहाँ प्रकृति के हरे-भरे क्षेत्रों को समाप्त किया जा रहा वहीँ दूसरी ओर प्रकृति का अत्यधिक दोहन करने के कारण न केवल मानव जाति को बल्कि पृथ्वी पर निवास करने वाले सभी प्राणियों को ऐसे प्रदूषित वातावरण में धकेल दिया गया है जहाँ स्वस्थ जीवन की मात्र कल्पना कर सकते हैं।

शहरीकरण के प्रभावों में जल तनाव, मृदा प्रदूषण, वनों की कटाई, उच्च ऊर्जा खपत, जलवायु परिवर्तन, यातायात भीड़, ठोस और हानिकारक अपशिष्ट, खेती योग्य भूमि की कमी, आदि सम्मिलित हैं।

शब्दकुंजी- वैश्विक, जनसँख्या, आवरण, मृदा, वनों, ऊर्जा, शहरीकरण।

प्रस्तावना

शहरीकरण आर्थिक विकास का एक अनिवार्य पहलू जैसे-जैसे अर्थव्यवस्था बढती है, प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि होती है और अर्थव्यवस्था में गैर-कृषि वस्तुओं की मांग में भी वृद्धि होती है।

शहरों की चकाचौंध ग्रामीण क्षेत्रों के निवासियों को सदा से ही आकर्षित करती रही है, अन्य कारकों के अलावा नौकरियों और समृद्धि का वादा लोगों को शहरों की ओर खींचता है। बड़ी-बड़ी अट्टालिकाएं, सड़कों पर दौड़ती बड़ी-बड़ी गाड़ियाँ भी लोगों को मृगमरीचिका सी आकर्षित करती हैं, तथा आश्वस्त करती हैं कि गावों में प्रगति के अवसर नहीं हैं, शहर उनके धनवान बनने के स्वप्न को पूरा कर सकता है, यही आशा लिए हुए ग्रामीण क्षेत्रों से लोग शहरों की तरफ पलायन करते हैं।

शहरीकरण क्या है

संयुक्त राष्ट्र संघ की परिभाषा के अनुसार ग्रामीण क्षेत्रों के लोगों का शहरों में जाकर रहना और काम करना शहरीकरण कहलाता है।

शहरीकरण या नगरीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें किसी राष्ट्र की जनसंख्या का बढ़ता हुआ आकार जब शहर की तरफ निवास के लिए जमा होता है या पलायन करता है तो उसे शहरीकरण कहते हैं। शहरीकरण वास्तव में एक सतत परिवर्तनशील प्रक्रिया है जो ग्रामीण और शहरी जीवन के बीच एक प्रकार का अंतर पैदा करती है।

शहरीकरण यद्यपि कि प्राचीन मेसोपोटामिया में उरुक काल ४३००-३१०० ईसा पूर्व में शुरू हुआ किन्तु औ।द्योगिक क्रान्ति के फलस्वरूप मशीन का उपयोग बढ़ने लगा और कृषि का महत्व कम होने लगा। १८०० में विश्व की केवल २ प्रतिशत जनसँख्या शहरी क्षेत्रों में रहती थी, मात्र २०० वर्षों में दुनिया की शहरी आबादी २ प्रतिशत से बढ़कर लगभग ५० प्रतिशत

हो गयी, २०१५ तक २२ मेगासिटी हो गए थे।२०२० के आंकडे के अनुसार शहरी आबादी ४८,३०,९९,००० थी जो २०३५ तक ५४,२७,४३००० तक पहुचने की संभावना है।

शहरीकरण के कारण

जनसंख्या में प्राकृतिक वृद्धि शहरीकरण का एक प्रमुख कारण है बढ़ते चिकित्सकीय अनुसंधान तथा प्रगति ने जीवन प्रत्याशा को बढ़ाया है फलस्वरूप जीवन दर से मृत्यु दर कम हुई है।१९७१ से २०२० में भारत की मृत्यु दर में गिरावट आयी है, जहाँ १९७१ में प्रति १००० बच्चों पर १६.७ थी वो घटकर २०२० में प्रति १००० लोगों पर ७.२ हो गयी है।

शहरों में रोजगार के बढते अवसर ने भी शहरीकरण में वृद्धि की है बडे- बडे कारखानों के स्थापन नित नए रोजगार के अवसर ने ग्रामीण क्षेत्र के निवासियों को शहरों तथा शहरी जीवन की ओर आकर्षित किया है।

ग्रामीण क्षेत्रों में क्षीण स्वास्थ देखभाल सुविधाएं, उचित निवास, शैक्षणिक एवं आर्थिक अवसरों का न होना भी कुछ प्रमुख कारक हैं जो जो ग्रामीणों को शहरों की ओर पलायन के लिए प्रेरित करते हैं।

संयुक्त राष्ट्र के आर्थिक और सामाजिक मामलों के विभाग द्वारा तैयार की गयी विश्व शहरीकरण संभावनाएं,२०१८ रिपोर्ट के अनुसार वर्ष २०१८ से २०५० के मध्य दुनिया की शहरी आबादी की वृद्धि में भारत, चीन और नाइजीरिया का योगदान ३५% रहने का अनुमान है तथा वर्ष २०५० तक भारत के शहरी निवासियों की संख्या में ४१६ मिलियन की बढ़ोतरी होने का अनुमान है।

शहरी विकास संबंद्धित सरकारी योजनाओं/कार्यक्रमों ने भी इस शहरीकरण की गति को तीव्र कर दिया है।

शहरीकरण के लिए सरकार द्वारा संचालित योजनाएं निम्नलिखित हैं-

१). स्मार्ट सिटीज

२). अमृत मिशन

३). स्वच्छ भारत मिशन-शहरी

४). हृदय

५). प्रधानमन्त्री आवास योजना-शहरी

६). प्रधानमन्त्री गरीब कल्याण योजना

७). आत्मनिर्भर भारत अभियान (आत्मनिर्भर भारत)

शहरीकरण जहाँ एक ओर जनसँख्या को एक निश्चित भौगोलिक क्षेत्र में केन्द्रित करता है वहीँ यह किसी देश की विकासात्मक दशा और दिशा को भी व्यक्त करता है, अतः यह एक अवश्यम्भावी स्थिति है। इस प्रकार शहरीकरण महत्वपूर्ण भी है जैसे-

- शहरी जीवन में साक्षरता और शिक्षा का उच्च स्तर प्राप्त होता है।
- बेहतर स्वास्थ सुविधाएं प्राप्त होती हैं।
- लम्बी जीवन प्रत्याशा रहती है।
- सामाजिक सेवाओं तक अधिक पहुँच रहती है।
- शहरी जीवन सांस्कृतिक एवं राजनैतिक भागीदारी के बेहतर अवसर प्रदान करते हैं।
- शहरी जीवन में सूचनाओं की तथा सूचना स्रोतों तक आसान पहुँच होती है, जो जनगण में विभिन्न प्रकार की जागरूकता फैलाती हैं।
- शहरी जीवन में किसी प्रकार के निर्णय लेने में पारिवारिक एवं सामजिक नियंत्रण की कमी होने से व्यक्ति स्वयं के लिए तथा स्वयं के जीवन लक्ष्यों को चुनने में सक्षम होता है।
- शहरी जीवन सामाजिक विविधता के अवसर प्रदान करता है।

शहरीकरण से होने वाले इन लाभों को नजरंदाज नहीं किया जा सकता है,किन्तु यह भी उतना ही सत्य है कि शहरीकरण ने भौगोलिक क्षेत्रों को हानि भी पहुँचाई है जैसे- शहरीकरण के कारण एक क्षेत्र विशेष पर जनसँख्या का अत्यधिक दबाव

पड़ा है परिणामत: शहर मलिन बस्तियों, अपराध, बेरोजगारी, शहरी गरीबी भीड़भाड़, खराब स्वास्थ,और कई अन्य विकृत सामाजिक गतिविधियों का केंद्र बन गया है।

शहरीकरण का सबसे बड़ा ग्रास हमारा पर्यावरण बना है। शहरों में कल-कारखाने खुलने से, बेतरतीब भीड़, गाड़ियों की बढती संख्या, लोगों की आवाजाही, गन्दगी और रासायनिक अपशिष्ट ने पर्यावरण को गंभीर हानि पहुंचाई है। शहरों में बढती-जनसंख्या के आवास के लिए हरे-भरे जंगल काटे गए, पहाड़ी इलाकों को समतल किया गया तथा तटीय इलाकों को भूमि के रूप में परिवर्तित किया गया जिसका हानिकारक प्रभाव समुद्री जल-जीवन पर तथा वैश्विक वातावरण के तापमान में होती वृद्धि, ओजोन परत के बढ़ते छिद्र के रूप में देखा जा सकता है। शहरीकरण के कुछ गंभीर दुष्परिणाम निम्नलिखित हैं-

- संयुक्त राष्ट्र का अनुमान है की २०५० तक वैश्विक जनसँख्या का ६८% शहरी क्षेत्रों में रहेगा जिससे निवास स्थान का निरंतर नुक्सान होगा।
- विश्व बैंक का अनुमान है कि २०५० तक पृथ्वी भूमि सतह का ७५% भाग शहरी क्षेत्र से आच्छादित होगा।
- २०१८ के अध्ययन में पाया गया है कि सभी स्थलीय प्रजातियों का ५८% शहरीकरण एवं अन्य मानवीय गतिविधियों से जनसंख्या में गिरावट आ रही है।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन की रिपोर्ट के अनुसार शहरी विस्तार के परिणामत: विश्व की ९९% आबादी सुरक्षित सीमा से अधिक हानिकारक हवा में सांस ले रही है जो कि बहुत अधिक है।
- २०२० में वैश्विक शहरी क्षेत्रों में वायु प्रदूषण ४.२ लाख असामायिक मृत्यु का एक प्रमुख कारक है जो कि चिंतनीय है।
- २०२१ के एक अध्ययन में पाया गया है कि माइक्रोप्लास्टिक, जो कि एक जल प्रदूषक है,अब विश्व की ९३% नदियों में मौजूद है।
- संयुक्त राष्ट्र का अनुमान कि ८०% अपशिष्ट जल विश्व की नदियों और महासागरों में अनुपचारित प्रवाह होता है जिसमें शहरी अपवाह का महत्वपूर्ण योगदान है।

यह तो स्पष्ट है कि शहरीकरण किस प्रकार हमारे पर्यावरण के लिए विध्वंशकारी रूप ले चुका है, अब समय आ गया है कि इस ओर गंभीरतापूर्वक प्रयास किये जाए अन्यथा ये हमारी पृथ्वी को ही नष्ट कर डालेगा किन्तु यहाँ प्रश्न यह है कि यदि शहरीकरण विकास का प्रतिबिम्ब है तो इसको रोकना मतलब विकास की गति को बाधित करना है।

पर्यावरण के संरक्षण को लेकर वैश्विक स्तर पर प्रयास हुए हैं और आज भी निरंतर प्रयास हो रहे हैं, सतत् विकास इसी श्रृंखला का हिस्सा है। सतत् विकास अर्थात ऐसा विकास कार्य जो कि पर्यावरण के समकक्ष हो न कि उसके स्थान पर हो।

भारत के विविधतापूर्ण समृद्ध पर्यावरण के संरक्षण एवं सुरक्षा को ध्यान में रखते हुए अनेकों पर्यावरणविदों ने समय- समय पर महत्वपूर्ण पहल की है जिनमें प्रमुख हैं-

१). विश्नोई आन्दोलन

२). साइलेंट वैली मूवमेंट

३). बालियापाल आन्दोलन

४). चिपको आन्दोलन

५). नर्मदा बचाओ आन्दोलन

सरकारी जागरूकता एवं सुरक्षा

भारत सरकार ने भी पर्यावरण पर मंडराते इस संकट की गंभीरता को महसूस किया और इससे कड़ाई से निपटने के उपाय किये। भारत के संविधान में भी आर्टिकल ४८अ एवं ५१अ के अंतर्गत पर्यावरण विशेषत: वनों,नदियों तथा वन्य जीवन की सुरक्षा तथा विकास के लिए प्रावधान बनाए गए। सरकार ने प्राकृतिक संसाधनों के ह्रास की रोकथाम के लिए विभिन्न कदम उठाये। अब तो न्यायालय भी उन् पर्यावरणविदों को सुरक्षा प्रदान करने आगे आयी है जहाँ गृह प्रशासन तथा सरकार कानूनी प्रावधान को लागू करने में असमर्थ रहे।

उच्चतम न्यायलय द्वारा उच्च स्तर पर न्यायिक हस्तक्षेप ने पर्यावरणीय संकटों को एकत्रित करने में सहायता की है। सरकार भी संघ तथा राज्य स्तर पर बढते वैज्ञानिक,तकनीकी प्रशासनिक एवं न्यायिक पूर्तिकर के साथ पर्यावरण प्रबंधन में आधिकारिक भागीदारी को सुदृढ़ करने में निरंतर प्रयासरत है। पर्यावरण एवं विकास पर सयुक्त राष्ट्र सम्मलेन के कार्यसूची २१ में नौवी पंचवर्षीय योजना के प्रस्ताव पत्र से जो कई मानक लिए गए हैं वह भारतीय योजनाओं में पहले से ही प्रतिबिंबित है। नौवी योजना इसी परम्परा को आगे बढ़ा रही है तथा सतत विकास की स्थितियों की निर्माता है।

सरकार के प्रयास यहीं तक नहीं रहे अपितु पर्यावरण सम्बंधित विभिन्न कानून भी सरकार द्वारा पारित किये गए, जो निम्नलिखित हैं-

१. १९२७- भारतीय वन्य अधिनियम
२. १९७२- वन्यजीवन (सुरक्षा) अधिनियम
३. १९७४- जल (प्रदूषण की रोकथाम एवं नियंत्रण) अधिनियम
४. १९८०- वन (संरक्षण) अधिनियम
५. १९८१- वायु (प्रदूषण की रोकथाम एवं नियंत्रण) अधिनियम
६. १९८६- पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम
७. १९८८- राष्ट्रीय वन्य नीति
८. १९८८- वन्य (संरक्षण) अधिनियम, संशोधन अधनियम द्वारा १९८० अधिनियम का संशोधन
९. १९९१- सार्वजनिक दायित्व बीमा अधिनियम
१०. १९९२- पर्यावरण विकास पर राष्ट्रीय संरक्षण नीति एवं नीति वक्तव्य
११. -१९९५- राष्ट्रीय पर्यावरण न्यायाधिकरण अधिनियम
१२. २०००- स्थानीय निकाय ठोस अपशिष्ट (प्रबंधन एवं संचालन) नियम
१३. २००२- जैव-विविधता संरक्षण अधिनियम
१४. २००२- राष्ट्रीय जलनीति
१५. २००४- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति
१६. २००६- वन अधिकार अधिनियम
१७. २०१०- राष्ट्रीय तटीय जोन प्रबंधन प्राधिकरण का गठन
१८. २०११- पर्यावरण (संरक्षण) संशोधन नियम
१९. २०१५- पर्यावरण (संरक्षण) संशोधन नियम
२०. २०१६- जैव-चिकित्सा अपशिष्ट प्रबंधन नियम
२१. २०२२- पर्यावरण (संरक्षण) संशोधन नियम

इस प्रकार शहरीकरण की मार से पर्यावरण को अक्षुण्ण रखने के लिए चहुँओर प्रयास किये जा रहे हैं किन्तु देश का नागरिक होने के नाते हमसब की भी यह नैतिक जिम्मेदारी बनती है कि हम अपने पर्यावरण को क्षरण के संकट से बचाएं तथा उसे भी विकास का साक्षी बनाएं। यह तभी संभव है जब हम अपने स्तर पर भी अपने कार्यकलापों को अपने पर्यावरण के साथ मित्रवत रखें।

सुझाव

एक नागरिक के तौर पर हम अपने स्तर पर निम्नलिखित प्रयास कर सकते हैं-

- अपने घरों में ज्यादा से ज्यादा पेड़ लगायें यदि घर इतना बड़ा नहीं है तो गमलों में या छोटे-छोटे डिब्बों में ही पौधे लगाएं।
- घर बनवाते समय उसमें हवा रौशनी की आवाजाही का ध्यान रखें ताकि बिजलीचालित उपकरणों जैसे एसी, कूलर, हाई वोल्ट बल्ब के उपयोग की आवश्यकता कम से कम हो।

- घर बनवाते समय वाटर हार्वेस्टिंग प्लांट जरूर लगवाएं ताकि भूमिगत जल का स्तर संरक्षित रहे।
- अपने घरों के कचरों को रिसाईकिल करने के उपाय करें।
- कूड़ेदान में गीला कचरा व सूखा कचरा अलग-अलग रखें
- बाजार से समान लेने जाते घरों से कपडे की थैलियाँ ले जाए ताकि प्लास्टिक थैलियों का कम से कम उपयोग हो, ये हमारे स्वयं के स्वास्थ के लिए भी लाभदायक है।
- घरों में सोलर पैनल लगवाएं।
- जहाँ आवश्यकता हो वहीँ वाहन लेकर जाएँ, बेवजह के दिखावे से बचें।
- यदि संभव हो तो वाहन पूलिंग का सहारा लें, ये न केवल पर्यावरण के लिए लाभदायक होगा अपितु हमारी अपनी जेबों पर भी भार कम करेगा।

यह कुछ उपाय अपना कर हमसब भी पर्यावरण को सुरक्षित रखने में अपना योगदान दे सकते हैं

उपसंहार

शहरीकरण जहाँ एक ओर किसी देश के लिए विकासात्मक प्रतिमान है जो सिर्फ मानव एकत्रित भौगोलिक क्षेत्र ही नहीं दर्शाता अपितु यह आर्थिक विकास एवं उत्पादन, सांस्कृतिक और सामाजिक अंत:क्रिया तथा पारिस्थितिक विकास का केंद्र है। शहरीकरण से नए रोजगार का सृजन, लोगों के लिए बेहतर बुनियादी सुविधाएं(जैसे- शिक्षा, स्वास्थ्य, बिजली,सडकें इत्यादि), बेहतर संचार माध्यम तथा यातायात के बेहतर साधन आदि होते हैं जो किसी देश की प्रगति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हमे किन्तु यह भी समझना होगा कि शहरीकरण के दुष्परिणाम हमारे पर्यावरण को अत्यधिक क्षति पहुंचा रहे हैं, उनकी अनदेखी नहीं की सकती है क्योंकि जितनी आवश्यकता हमे विकास की है उतना ही महत्वपूर्ण हमारे लिए पर्यावरण है।

देश का विकास जहाँ हमे विश्व स्तर पर अग्रणी बनाता है वहीँ पर्यावरण की सुरक्षा हमारी अस्तित्वात्मक जरुरत है। अत: सतत विकास वर्तमान समय की मांग है तथा यही उचित विकल्प भी है।

सन्दर्भ सूची

१). गोस्वामी अदिति २०१९ गवर्नमेंट इनिशिएटिव एंड एनवायरनमेंट प्रोटेक्शन अर्थ-I: प्रयागराज कृष्णा पब्लिकेशन

२). Drishti IAS; drishtiias.com/hindi/paper Urbanization

3). National Geography; https//www /nationalgeographic.com./environment/article/urban-Threats

४). Barbara Boyle Torrey; Urbanization:An Environmental Force To Be Reckoned With;April 23, 2004 https//www.prb.org/resources/urbanization-an-environmental-force-to-be- reckoned-with/

५). Dr Emilley Greenfield; संरक्षण,पर्यावरण प्रभाव आंकलन; फरवरी २१, २०२४/ https//sigmaearth-com/hi/

६). The Impacts Of Unsustainable UrbanizationOn The Environment ; https//www.intechopen.com/chapters/86023

माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षण प्रभावशीलता को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों का अध्ययन-भारतीय परिपेक्ष में

विनीत कुमार आर्य

शोधार्थी- बी.एड./एम.एड. विभाग, शिक्षा एवं सहबद्ध विज्ञान संकाय, एम.जे.पी.आर.यू., बरेली

डॉ० रामबाबू सिंह

सहायक आचार्य- बी.एड./एम.एड. विभाग, शिक्षा एवं सहबद्ध विज्ञान संकाय, एम.जे.पी.आर.यू., बरेली

सारांश-

आज भारत के प्रत्येक क्षेत्र में विकास की गति से आकलन लगाया जा सकता है कि आने वाले कुछ वर्षो में भारत वर्ष विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में शामिल हो जाएगा भारत का यह विकास शिक्षा को भी प्रभावित करता है। जो शिक्षक, छात्र तथा शिक्षण तीनों को अपने सकारात्मक तथा नकारात्मक पहलुओं से आकता परंतु इसके सकारात्मक प्रभाव अधिक दृष्टि गोचर होते हैं। जो शिक्षा की सार्वभौमिकता सभी के लिए समान शिक्षा व्यवस्था तथा समान अवसरों को उपलब्ध कराते हैं। तथा सभी के विकास में अहम योगदान देते हैं भारतवर्ष में भी आज परिस्थितियों के अनुकूल विषमता वाले वातावरण में शिक्षण कार्य एक चुनौती पूर्ण कार्य बन गया है। परंतु तकनीकियों के उचित प्रयोग विकास से शिक्षण कार्य निरंतर चलता जा रहा है। चाहे करोना जैसी भयानक महामारी ही क्यों ना हो इससे भी भारतीय शिक्षा व्यवस्था पर कुछ प्रभाव नहीं पड़ा है।

वर्तमान परिस्थितियों में भारतवर्ष विकास की गंगा के साथ बहुत से सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनों के साथ पर्यावरणीय जिसका प्रभाव शिक्षा पर भी साफ देखा जा सकता है।

मुख्य शब्द- माध्यमिक विद्यालय, शिक्षक, शिक्षण प्रभावशीलता, पर्यावरणीय कारक।

प्रस्तावना-

आज भारतीय शिक्षा प्रणाली अपना रूप पूर्ण रूप से परिवर्तित कर चुकी है चाहे वह करोना काल में ऑनलाइन शिक्षा का उदाहरण देकर समझाया जाए या फिर अन्य परिस्थितियों को लिया जाए जिसमें को उल्लेखित किया जा सकता है। केवल भारतीय शिक्षा प्रणाली छात्र के लिए परिवर्तित हुई है। बल्कि नए परिवेश में शिक्षण कार्य एक चुनौती पूर्ण जहां जहां लोग विभिन्न नई-नई तकनीकियों का प्रयोग करके शिक्षण कार्य कर रहे हैं। वहीं इन शिक्षण विधियां व तकनीक से शिक्षक प्रभावित हो रहा है जिससे उनकी शिक्षक प्रभावशीलता भी लगातार प्रभावित हो रही है प्रस्तुत शोध पत्र में हम यही अध्ययन करेंगे कि किस प्रकार पर्यावरण का बदलता परिवेश शिक्षक की प्रभावशीलता को प्रभावित कर रहा है। पर्यावरण और शिक्षा के सम्बन्ध में विशेष कार्य और प्रदर्शन किया है। उनका कहना है कि शिक्षा द्वारा विकास की क्रिया का सम्पादन कक्षा तथा विद्यालय के अन्तर्गत होता है। कक्षा में छात्र और शिक्षक के बीच अन्त: क्रियाएँ होती हैं। शिक्षक कक्षा में अपने प्रकरण की सहायता से अन्त:क्रियाएँ करता हैं जो शाब्दिक तथा अशाब्दिक दोनों रूपों में होती हैं। इन क्रियाओं से सामाजिक तथा संवेगात्मक वातावरण की उत्पत्ति होती है। इससे छात्रों को कुछ करने का अवसर प्राप्त होता है और वे नया अनुभव प्राप्त करते हैं। इससे उनके व्यवहार में अपेक्षित परिवर्तन होता है। अभिभावक या छात्रों के माता-पिता उत्तम पर्यावरण की प्राप्ति के लिए ही अपने पाल्यों को अच्छी शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश दिलाना चाहते हैं।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व-

पर्यावरणीय का शिक्षण पर प्रभाव का अध्ययन करने की आवश्यकता इसलिए महत्वपूर्ण हो जाती है। क्योंकि अभी पिछले कुछ वर्षों में हमने वैश्विक महामारी करोना कॉविड-19 सामना किया व अपनी परंपरागत जीवन शैली से जुड़ी हुई विभिन्न

क्रियो को परिवर्तित करने के लिए बाध्य होना पड़ा वह इसका प्रभाव पर्यावरण पर प्रतिकूल तथा अनुकूल दोनों दृष्टियों से देखा जा सकता है। साथ ही मानव जीवन इसके प्रभाव से प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सका है हो सकता है। कि भविष्य में भी हमें इस प्रकार की वैश्विक आपदा का सामना करना पड़े इसलिए इस क्षेत्र में अध्ययन करना अति आवश्यक हो जाता है। क्या पर्यावरणीय कारक शिक्षण की पद्धति को प्रभावित करते हैं। और पर्यावरणीय कारकों के कारण शिक्षण पद्धति किस प्रकार परिवर्तित होती रही है। इन सब तथ्यों का अध्ययन इस शोध पत्र के माध्यम से किया जा रहा है।

अध्ययन के उद्देश्य-

- बदलते पर्यावरणीय परिवेश में शिक्षक प्रभावशीलता का का अध्ययन करना।
- माध्यमिक विद्यालयों के शिक्षकों की शिक्षक प्रभावशीलता को पर्यावरण कारकों का अध्ययन करना।
- बदलते पर्यावरणीय परिवेश में शिक्षक की शिक्षण पद्धतियों का अध्ययन करना।
- पर्यावरणीय बदलाव का शिक्षा के विकास के संदर्भ में अध्ययन करना।

शोध विधि व प्रक्रिया-

शोधार्थी द्वारा शिक्षण की प्रभावशीलता पर पर्यावरणीय कारकों से सम्बन्धित विभिन्न आयोगों, शिक्षा नीतियों, रिपोर्टो का अध्ययन किया गया। साथ ही पर्यावरणीय कारकों की प्रभावशीलता के विषय में विभिन्न विशेषज्ञों से विचार-विमर्श तथा सम्बन्धित साहित्य का अध्ययन किया गया। शोधार्थी ने इस अध्ययन की आवश्यकता महसूस की कि क्या पर्यावरणीय कारक वास्तव में शिक्षण की प्रभावशीलता से सम्बंधित है।

वर्तमान परिस्थितियों के अनुसार शिक्षण पर पर्यावरणीय प्रभावों को प्रभाव को दो श्रेणियां में विभक्त करके देखा जा सकता है-

1. सकारात्मक प्रभाव।
2. नकारात्मक प्रभाव।

1. सकारात्मक प्रभाव:- सकारात्मक प्रभाव की श्रेणी में उन प्रभावों को रखा जा सकता है। जो शिक्षा के विकास में विभिन्न श्रेणियां में अपना योगदान देते हैं। जैसे छात्रों के लिए अधिगम को अधिक अध्यापक के दृष्टिकोण से शिक्षण कार्य को अधिक प्रभावशाली बनाना तथा अभिभावकों की दृष्टि से शिक्षा को कम खर्चीली बनाना तथा प्रशासन की दृष्टि से व्यवस्था को सुधार करना पर्यावरणीय प्रभाव के सकारात्मक रूप मैं देखा जा सकता है।

सकारात्मक प्रभाव की सूची इस प्रकार है-

- विद्यार्थियों के अधिगम को सुगम बनाने में सहायकअधिगम में सुगमता बनाने में सहायक।
- शिक्षक के लिए समय की बाध्यता को खत्म करने में सहायक।
- शिक्षण के कम खर्च को प्रभावित करना।
- कक्षा की बाध्यता को समाप्त करना।
- विश्व को शैक्षिक स्तर पर एक साथ जोड़ने का कार्य भली भाती करना।
- नई-नई तकनीकियों से छात्र व शिक्षक को परिचित होने का सुनहरा अवसर प्रदान करना।

2. शिक्षण पर पर्यावरणीय के नकारात्मक प्रभाव-

नकारात्मक प्रभाव की श्रेणी में प्राय उन बिंदुओं को विश्लेषित किया जा सकता है जो पर्यावरण को हानि पहुंचाने का कार्य करते हैं उनका विश्लेषण इस प्रकार है-

- वर्तमान शिक्षक वीडियो के प्रयोग से छात्रों के मानसिक स्तर पर प्रतिकूल प्रभाव।
- शिक्षक की महत्वता को कम करना।
- पर्यावरण या तत्वों को नुकसान पहुंचाना।
- स्कूल कॉलेज महाविद्यालय की उपयोगिता को विलुप्त करना।

- साथ ही साथ छात्रों में एक ऐसी लत का विकास करना जो छात्रों को विसंगतियां में पड़ने के लिए बाध्य करती है। व उनके विभिन्न प्रकार से शोषण के लिए उत्तरदाई होती है।

शिक्षण को प्रभावित करने वाले पर्यावरणीय कारकों में दो मुख्य कारकों को देखा जा सकता है।

1. प्राकृतिक पर्यावरणीय कारण।
2. मानव द्वारा निर्मित पर्यावरणीय कारण।

प्राकृतिक पर्यावरणीय कारण मे जैसे बाढ़ का आ जाना वर्षा का आ जाना असहनीय गर्मी पढ़ना या तेज आंधी तूफान का आ जाना यह सब प्राकृतिक पर्यावरणीय कारक शिक्षक की शिक्षक प्रभावशीलता को प्रभावित करते हैं यह परंपरागत शिक्षा प्रणाली को परिवर्तित करने के लिए बाध्य करते हैं। जिससे शिक्षक अपनी शिक्षण विधियां को परिवर्तित करके नई तकनीकी का प्रयोग करके शिक्षण कार्य करता है। जिससे उसका स्वयं का व्यक्तित्व तो प्रभावित होता ही है। साथ ही शिक्षक की प्रभावशीलता में परिवर्तन भी देखा जा सकता है।

इस तरह से शिक्षा की प्रक्रिया के विकास का सम्पादन भौतिक, मनोवैज्ञानिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक वातावरण में होता है। शिक्षा के द्वारा विविध प्रकार की समस्याओं का अध्ययन तथा समाधान किया जाता है। अधिकांश समस्याएं छात्रों तथा वातावरण (पर्यावरण) से सम्बन्धित होती हैं। शिक्षक उनका समाधान औपचारिक तथा अनौपचारिक ढंग से करता है। यह वातावरण और परिस्थिति को समझकर ठोस हल प्रदान करता।

पर्यावरण के दृष्टिकोण और व्यवहार पर शिक्षा का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। शिक्षा, जब उचित ढंग से पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर जागरूकता और समझ पैदा करती है, तो यह व्यक्ति और समाज को पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी और संवेदनशीलता के प्रति उत्साहित करता है।

छात्रों के अधिगम पर उसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है। सामान्यत: सांस्कृतिक वातावरण का आशय व्यक्ति द्वारा निर्मित या प्रभावित उन समस्त नियमों, विचारों, विश्वासों एवं भौतिक वस्तुओं की पूर्णता से है जो जीवन को चारों ओर से घेरे रहते हैं। सामाजिक वातावरण के अन्तर्गत समाज में प्रचलित रीति-रिवाज, मान्यतायें, आदर्श, मूल्य एवं स्वयं व्यक्ति की समाज में स्थिति आती है जो उसके अधिगम को निश्चित तौर पर प्रभावित करती है। इसलिए व्यक्ति हर सामाजिक परिस्थिति में अनुकूलन बनाये रखता है।

इनके कुछ महत्वपूर्ण प्रभाव निम्नलिखित हैं-

जागरूकता और समझ. पर्यावरणीय शिक्षा व्यक्ति में पर्यावरण के महत्व की जागरूकता पैदा करती है और उसे पर्यावरणीय मुद्दों को समझने में मदद करती है। यह उचित संवेदनशीलता और जिम्मेदारी का भाव विकसित करती है।

संरक्षण और सम्पदा की प्रबंधन-

पर्यावरण शिक्षा लोगों को प्राकृतिक संसाधनों की महत्वपूर्णता और उनके संरक्षण की आवश्यकता के बारे में समझाती है। यह व्यक्ति को संपदा की संरचना और प्रबंधन में भागीदारी लेने के लिए प्रोत्साहित करती है।

उदारता और सहभागिता-

पर्यावरणीय शिक्षा लोगों के बीपर्यावरण के दृष्टिकोण और व्यवहार पर शिक्षा का महत्वपूर्ण प्रभाव होता है। शिक्षा, जब उचित ढंग से पर्यावरण संबंधी मुद्दों पर जागरूकता और समझ पैदा करती है, तो यह व्यक्ति और समाज को पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी और संवेदनशीलता के प्रति उत्साहित करता है।

निष्कर्ष-

पर्यावरण और शिक्षा दोनों में विकास को महत्त्व दिया जाता है। पर्यावरण में जहाँ वातावरण की गुणवत्ता को प्राथमिकता दी जाती है वहीं शिक्षा में व्यक्ति की गुणवत्ता को प्राथमिकता दी जाती है। एक तरफ शिक्षा को विकास की प्रक्रिया कहते हैं तो दूसरी तरफ पर्यावरण अनुष्य तथा अन्य प्राणियों की अभिवृत्ति तथा विकास को प्रभावित करता है। क्योंकि इसमें आन्तरिक और बाह्य दोनों परिस्थितियाँ सम्मिलित होती हैं। प्रत्येक प्राणो किसी-न-किसी पर्यावरण से सम्बन्धित होता है। इसमें मनुष्य का पर्यावरण सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक व आर्थिक तथा भौतिक होता है। इसलिए शिक्षा द्वारा इनमें गुणवत्ता लाने के लिए

सुधार एवं परिवर्तन किया जाता है। इससे मनुष्य तथा बालक में वांछित परितर्वन लाया जा सकता है। इसलिए कहा जा सकता है कि मनुष्य तथा बालकों के व्यवहार परिवर्तन में पर्यावरण का विशेष महत्त्व होता है। मनोवैज्ञानिकों ने भी इस बात का समर्थन किया है। मनोवैज्ञानिक वाटसन ने कहा भी है कि पर्यावरण द्वारा बालक को जैसा चाहे वैसा बना सकते हैं। वंशानुक्रम में इसका कोई महत्त्व नहीं है।

संदर्भग्रंथ सूची-

https://testbook.com/question-answer/hn/the-most-powerful-factor-affecting
https://www.google.com/search?newwindow
https://www.mpboardonline.com
https://bedhindiarticles.blogspot.com
https://www.krmangalamgurgaon.com/blogs/8-essential-factors-affecting-learning-process/

पर्यावरण नैतिकता के विभिन्न आयाम

डॉ० चेतना उपाध्याय

Assistant Professor(Law), Government Post Graduate College, Narsinghpur

The Earth does not belong to us; we belong to the Earth- Marlee Matlin

1. प्रस्तावना

नैतिकता मानकों का एक समूह या एक कोड या मूल्य प्रणाली जिसके द्वारा मानव कार्यों को सही या गलत, अच्छा या बुरा निर्धारित किया जाता है।पर्यावरण नैतिकता अध्ययन का एक क्षेत्र है जो पर्यावरण की रक्षा और संरक्षण के लिए मनुष्यों के नैतिक दायित्वों को समझने का प्रयास करता है। पर्यावरणीय नैतिकता मनुष्य और प्राकृतिक पर्यावरण के बीच नैतिक संबंध में विश्वास करती है। पर्यावरणीय नैतिकता कहती है कि व्यक्ति को अपने व्यवहार को नैतिक मूल्यों के एक समूह पर आधारित करना चाहिए जो प्रकृति में अन्य जीवित प्राणियों के प्रति हमारे दृष्टिकोण का मार्गदर्शन करते हैं। पर्यावरणीय नैतिकता हमारे नैतिक और नैतिक मूल्यों में गैर–मानवीय जानवरों के अधिकारों को शामिल करने के बारे में है। भले ही मानव जाति को समाज की प्राथमिक चिंता माना जाता है, जानवर और पौधे किसी भी तरह से कम महत्वपूर्ण नहीं हैं। उन्हें अपने अस्तित्व का उचित हिस्सा पाने का अधिकार है।

मुख्य शब्द- नैतिकता, पारिस्थितिक, संसाधन, संरक्षण।

2. शोध पत्र का उद्देश्य

इस शोध पत्र का उद्द्देश्य यह जानकरी प्रदान करना है की हमारे नैतिक मूल्यों को पर्यावरण के सम्बन्ध में पूरा करना है। यह शोध पत्र पर्यावरण संबंधी चिंताओं का समर्थन करने के लिए पारंपरिक नैतिक सिद्धांतों को लागू करने का प्रयास करता है। यह पृथ्वी के पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए नैतिक आधार प्रदान करता है और पर्यावरण नैतिकता के क्षेत्रीय परिदृश्य का वर्णन करता है।

3. पर्यावरण नैतिकता का प्रारम्भ

पर्यावरण नैतिकता का शैक्षणिक क्षेत्र राचेल कार्सन जैसे वैज्ञानिकों के काम और 1970 में पहले पृथ्वी दिवस जैसी घटनाओं की प्रतिक्रिया में विकसित हुआ, जब पर्यावरणविदों ने दार्शनिकों से पर्यावरणीय समस्याओं के दार्शनिक पहलुओं पर विचार करने का आग्रह करना शुरू किया।

4. पर्यावरण नैतिकता के प्रकार

(1) उदारवादी नैतिकता

उदारवादी विस्तार एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो किसी व्यक्ति के पर्यावरण और उसके संसाधनों के साथ जो चाहे करने के अधिकार पर केंद्रित है। यह अवधारणा इस बात पर भी जोर देती है कि किसी व्यक्ति को अपने मूल्य दूसरों पर नहीं थोपने चाहिए और इसके बजाय दूसरों की पसंद का सम्मान करना चाहिए।

(2) पारिस्थितिक नैतिकता

पारिस्थितिक विस्तार एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो पारिस्थितिकी तंत्र के संतुलन और स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए प्राकृतिक पर्यावरण और उसके संसाधनों को संरक्षित करने पर केंद्रित है। यह अवधारणा भविष्य की पीढ़ियों के लिए इसे बनाए रखने के लिए प्रकृति के साथ काम करने वाले मनुष्यों के महत्व पर जोर देती है।

(3) संरक्षण नैतिकता

संरक्षण नैतिकता एक प्रकार की पर्यावरणीय नैतिकता है जो यह सुनिश्चित करके भविष्य की पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करने पर ध्यान केंद्रित करती है कि वर्तमान संसाधन मरम्मत से परे समाप्त या क्षतिग्रस्त न हों। यह

अवधारणा व्यक्तियों को प्राकृतिक संसाधनों का जिम्मेदारीपूर्वक और विवेकपूर्ण ढंग से उपयोग करने के लिए प्रोत्साहित करती है ताकि भावी पीढ़ियों के लिए पर्याप्त संसाधन उपलब्ध रहें।

(4) रूढ़िवादी नैतिकता

विभिन्न धर्म हमें एक ही बात किसी न किसी रूप में सिखाते हैं। हमारे वेदों ने प्रकृति के प्रत्येक घटक को देवी-देवताओं के रूप में महिमामंडित किया है ताकि लोगों में उनके प्रति श्रद्धा की भावना हो। हमारे धार्मिक और सांस्कृतिक अनुष्ठान हमें ऐसे कार्यों को करने के लिए मजबूर करते हैं जो प्रकृति और प्राकृतिक संसाधनों के संरक्षण में मदद करेंगे। बौद्ध धर्म और जैन धर्म में 'अहिंसा' की अवधारणा जीवन के सभी रूपों की सुरक्षा और संरक्षण सुनिश्चित करती है, जिससे पृथ्वी का पारिस्थितिक संतुलन बरकरार रहता है।

(5) मानवतावादी नैतिकता

पीटर सिंगर ने "विश्व धरोहर स्थलों" के संरक्षण की वकालत की, जो दुनिया के उन हिस्सों को "खंडित मान" प्राप्त करते हैं जैसे वे समय के साथ कम होते जाते हैं। उनका संरक्षण भविष्य की पीढ़ियों के लिए एक वसीयत है, क्योंकि उन्हें मानव के पूर्वजों से विरासत में मिला है और उन्हें भविष्य की पीढ़ियों के लिए पारित किया जाना चाहिए, ताकि उन्हें यह फैसला करने का अवसर मिल सके कि क्या वे देश में या पूरी तरह से शहरी परिदृश्य का आनंद ले सकते हैं। एक विश्व धरोहर स्थल का एक अच्छा उदाहरण उष्णकटिबंधीय वर्षावन होगा, एक बहुत ही विशेषज्ञ पारिस्थितिकी तंत्र जिसने विकसित होने में सदियों का समय लिया है।

5. पर्यावरणीय नैतिकता का उदाहरण

पर्यावरणीय नैतिकता का उदाहरण स्थायी कृषि विधियों का उपयोग है। सतत कृषि पद्धतियाँ वे हैं जो यह सुनिश्चित करने के लिए डिजाइन की गई हैं कि कृषि में उपयोग की जाने वाली भूमि और संसाधन उत्पादक बने रहें और भविष्य में भी उनका उपयोग जारी रखा जा सके। स्थायी कृषि विधियों के उदाहरणों में फसल चक्र, एकीकृत कीट प्रबंधन और संरक्षण जुताई शामिल हैं।

स्थायी वानिकी प्रथाएँ पर्यावरणीय नैतिकता का एक उदाहरण हैं। सतत वानिकी प्रथाओं को यह सुनिश्चित करने के लिए डिजाइन किया गया है कि वनों का प्रबंधन इस तरह से किया जाए जिससे उनकी जैव विविधता और पारिस्थितिक अखंडता बरकरार रहे। स्थायी वानिकी प्रथाओं के उदाहरणों में चयनात्मक कटाई, पुनर्वनीकरण और पुराने-विकास वाले जंगलों की सुरक्षा शामिल है।

6. पर्यावरण नैतिकता और भारत का संविधान:

भारत में सजीव वस्तुओं के प्रति सहिष्णुता, अहिंसा, समानता और करुणा की पुरानी परंपरा है। पुराने समय में वे दैनिक जीवन का हिस्सा थे और धर्म के साथ संश्लेषित थे। धार्मिक शिक्षाओं, सामाजिक और राजनीतिक मानदंडों और आर्थिक नीतियों को प्रकृति के एक हिस्से के रूप में माना जाता था, न कि ढालने वाले या श्रेष्ठ के रूप में। सभी जीवित प्राणी एक श्रेष्ठ शक्ति- ईश्वर के प्राणी हैं।

प्रकृति के साथ शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व के उपरोक्त दर्शन का उल्लेख किसी न किसी रूप में संविधान में निम्नलिखित अनुच्छेदों में किया गया है:

1. अनुच्छेद 48-ए: राज्य पर्यावरण की रक्षा और सुधार करने और देश के वन और वन्यजीवों की रक्षा करने का प्रयास करेगा।
2. अनुच्छेद 51-ए (जी): वन, झील, नदियों और वन्य जीवन सहित प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा और सुधार करना और जीवित प्राणियों के प्रति दया रखना भारत के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है।

7. पर्यावरणीय नैतिकता का महत्व

1. पर्यावरण, प्रजातियों और संसाधनों की सुरक्षा के लिए पर्यावरणीय नैतिकता आवश्यक है।

2. यह स्थायी प्रथाओं को बढ़ावा देता है और लोगों को उनके कार्यों के पर्यावरण पर पड़ने वाले प्रभाव के बारे में अधिक जागरूक होने के लिए प्रोत्साहित करता है।
3. यह सभी जीवित चीजों के परस्पर जुड़ाव और उनका सम्मान करने की आवश्यकता पर जोर देता है। यह हमें दुनिया में अपने स्थान के बारे में सोचने के लिए प्रोत्साहित करता है और हम प्राकृतिक पर्यावरण के संरक्षण में कैसे योगदान दे सकते हैं।
4. पर्यावरणीय नैतिकता प्रकृति के साथ बेहतर संबंध बनाने में मदद करती है, न कि केवल इसके बाह्य मूल्य को, बल्कि इसके आंतरिक मूल्य को पहचानती है।
5. यह हमें अपनी तात्कालिक जरूरतों से परे सोचने और हमारे कार्यों के दीर्घकालिक प्रभावों पर विचार करने के लिए प्रोत्साहित करता है।
6. यह हमें हमारे पर्यावरण के प्रति जिम्मेदारी सिखाता है, पर्यावरण के अनुकूल प्रथाओं की वकालत करता है जो प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा में मदद करते हैं।
7. पर्यावरणीय नैतिकता बेहतर सार्वजनिक नीतियों और कानूनों को भी बढ़ावा देती है, जो यह सुनिश्चित करने में मदद करती है कि हमारे पर्यावरण की उचित देखभाल की जाती है।

8. पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित चुनौतियां

(1) स्थिरता

स्थिरता आज मानवता के सामने सबसे बड़ी चुनौतियों में से एक है। इसका तात्पर्य भविष्य की पीढ़ियों की अपनी जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से समझौता किए बिना वर्तमान जरूरतों को पूरा करने की क्षमता से है। स्थिरता प्राप्त करने के लिए, उन प्रथाओं को अपनाना आवश्यक है जो प्राकृतिक संसाधनों को संरक्षित करती हैं और मानव गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभाव को कम करती हैं। कुछ स्थायी प्रथाओं में शामिल हैं:

- सौर और पवन जैसे नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों का उपयोग;
- पानी और ऊर्जा की खपत में कमी;
- सामग्रियों का पुनर्चक्रण;
- कृषि वानिकी जैसी स्थायी कृषि पद्धतियों को अपनाना।

(2) जैव विविधता संरक्षण

जैव विविधता ग्रह के स्वास्थ्य के मुख्य संकेतकों में से एक है। यह पृथ्वी पर रहने वाले विभिन्न प्रकार के जीवित प्राणियों को संदर्भित करता है, बैक्टीरिया से लेकर पौधों और जानवरों तक। जैव विविधता का संरक्षण महत्वपूर्ण है क्योंकि यह कई प्रजातियों के अस्तित्व की गारंटी देता है और पारिस्थितिक तंत्र के संतुलन को बनाए रखने में मदद करता है।

जैव विविधता संरक्षण में योगदान देने वाली कुछ प्रथाओं में शामिल हैं:

- पार्क और अभ्यारण्य जैसे प्राकृतिक क्षेत्रों का संरक्षण;
- स्थानीय जीवों और वनस्पतियों को संरक्षित करने वाली कृषि पद्धतियों को अपनाना;
- पशु तस्करी और अवैध शिकार का मुकाबला करना;
- स्थायी पर्यटन प्रथाओं को अपनाना।

(3) पर्यावरण नीतियाँ

पर्यावरण नीतियां ऐसे उपकरण हैं जिनका उद्देश्य पर्यावरण संरक्षण और स्थिरता को बढ़ावा देना है। इन्हें सरकारों, कंपनियों और नागरिक समाज संगठनों द्वारा अपनाया जा सकता है। कुछ सामान्य पर्यावरण नीतियों में शामिल हैं:

- पानी और मिट्टी जैसे प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग का विनियमन;
- ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम करने के लिए लक्ष्यों की स्थापना;

- नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों के उपयोग को प्रोत्साहित करना;
- जीव-जंतुओं और वनस्पतियों की सुरक्षा के लिए कानूनों की स्थापना।
- हमे आने वाली पीढ़ी को पीने के लिए स्वच्छ जल और जीने के लिए स्वच्छ वायु मुहैया कराना सबसे बड़ा चुनौती होगी। इसके लिए हमें एक मात्र उपाय वृक्षारोपण व वन-महोत्सव को शासकीय स्तर पर ही नहीं, बल्कि अपनी तिथि त्योहारों की तरह समाज की मान्यताओं का हिस्सा बनाना चाहिए वृक्षारोपण स्वस्फूर्त अभियान होना चाहिए, किंतु आज भागती-दौड़ती जिंदगी में कल की किसे चिंता? इसलिए आने वाली पीढ़ी को प्रदूषण मुक्त प्राणवायु देने के लिए तथा प्रकृति के संरक्षण हेतु अब आवश्यक हो गया है कि वृक्षारोपण अभियान शासन-प्रशासन की ओर से जनता-जनार्दन का अभियान बने।

(4) पर्यावरण शिक्षा

पर्यावरण शिक्षा समाज में पर्यावरणीय नैतिकता को बढ़ावा देने के मुख्य उपकरणों में से एक है। पर्यावरण शिक्षा के माध्यम से, लोगों को पर्यावरण के संरक्षण और अपने दैनिक जीवन में टिकाऊ प्रथाओं को अपनाने के महत्व के बारे में जागरूक किया जाता है। इसके अलावा, पर्यावरण शिक्षा का उद्देश्य महत्वपूर्ण नागरिकों का निर्माण करना भी है जो पर्यावरणीय मुद्दों के बारे में जागरूक हों।

9. पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित मुद्दे

1. प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग-

प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग एवं अत्यधिक दोहन से पर्यावरण में असंतुलन की स्थिति उत्पन्न हो रही है। क्योंकि मानव प्रकृति का हिस्सा है, अतः प्रकृति के साथ सहयोग एवं समन्वय स्थापित करके प्राकृतिक संसाधनों का धारणीय उपयोग किया जा सकता है।

2. वनों का विनाश-

बड़े-बड़े उद्योगों एवं बहुराष्ट्रीय कंपनियों की स्थापना हेतु वनों की अंधाधुंध कटाई की जा रही है। इसके अलावा कृषि के लिये भी वनों का सफाया किया जा रहा है। वनों के विनाश से न केवल गरीब एवं जनजातीय लोगों जो कि आजीविका हेतु वनों पर निर्भर रहते हैं, पर नकारात्मक प्रभाव पड़ रहा है बल्कि जैव विविधता में भी कमी आ रही है। निर्वनीकरण के कारण पशु-पक्षियों के निवास स्थान समाप्त हो रहे हैं। अतः वनों का संरक्षण पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित है।

3. पर्यावरण प्रदूषण

विभिन्न मानवीय गतिविधियों के कारण पर्यावरण प्रदूषण को बढ़ावा मिल रहा है। इसका सर्वाधिक नकारात्मक प्रभाव गरीब एवं वंचित वर्गों पर पड़ रहा है। प्रदूषण जैसी मानवीय गतिविधियाँ प्राकृतिक श्रृंखला में व्यवधान डालती हैं तथा संतुलन की स्थिति को असंतुलित कर देती है। मानव पर्यावरण का महत्त्वपूर्ण घटक है, अतः मानव का नैतिक कर्त्तव्य है कि वह पर्यावरण को प्रदूषित न होने दे। इक्विटी प्राकृतिक संसाधनों पर सभी का समान अधिकार है, परंतु आंशिक रूप से मजूबत लोगों द्वारा प्राकृतिक संसाधनों का अधिकांश दोहन एवं दुरुपयोग किया जा रहा है, जबकि अन्य गरीब एवं वंचित लोग इनका उपभोग नहीं कर पा रहे हैं।

4. पशु अधिकार

जीव-जंतुओं एवं पौधों का भी प्राकृतिक संसाधनों पर मानव के समान अधिकार है। अतः नैतिकता के आधार पर मानव को प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग रोकना चाहिये। पशु कल्याण की भावना पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित है, क्योंकि पशु भी प्राकृतिक पर्यावरण में रहते हैं, अतः पशुओं के अधिकारों का भी संरक्षण होना चाहिये।

5. भूमि नैतिकता'

पर्यावरणीय नैतिकता को बनाए रखने के उपाय अमेरिकी विद्वान एल्डो लियोपोल्ड (Aldo Leopold) ने 'भूमि नैतिकता' (Land Ethics) की अवधारणा प्रस्तुत की। उन्होंने कहा कि हमें भूमि को संसाधन मात्र समझने के विचार को रोकना/त्यागना होगा।

वस्तुतः भूमि का अभिप्राय केवल मृदा नहीं है, बल्कि भूमि ऊर्जा का प्रवाह प्रदान करती है जिसमें मृदा के साथ-साथ जीव-जंतु एवं पौधे पनपते हैं। अतः भूमि को संसाधन मानकर इसके दुरुपयोग को रोकना होगा तथा भूमि का संरक्षण करना होगा।

6. जनसंख्या-

मानव जीवन एवं संस्कृति की समृद्धि के लिये जनसंख्या को नियंत्रित करना भी आवश्यक है। गैर-मानव जीवन की समृद्धि के लिये भी जनसंख्या में कमी करने की आवश्यकता है।

पृथ्वी पर मानवीय एवं गैर-मानवीय कल्याण एवं समृद्धि स्वयं में एक मूल्य है। यह मूल्य मानवीय उद्देश्यों के लिये गैर-मानवीय जीवन की उपयोगिता से स्वतंत्र है। प्राकृतिक संसाधनों की समृद्धि एवं विविधता का स्वयं में ही मूल्य है, अतः मानव को यह समझना होगा कि इनके दोहन का अधिकार इसे नहीं है। आर्थिक एवं सामाजिक नीतियों में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है। प्राकृतिक संसाधनों के दुरुपयोग को रोककर संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है। पर्यावरण संरक्षण की पारंपरिक गतिविधियों को व्यवहार में लाने की आवश्यकता है।

10. निष्कर्ष

पर्यावरणीय नैतिकता पर विचार करते समय, न केवल वर्तमान में, बल्कि भविष्य में भी हमारे कार्यों के निहितार्थों पर विचार करना महत्वपूर्ण है। हम यह कैसे सुनिश्चित कर सकते हैं कि आने वाली पीढ़ियों को हमारे जैसे ही प्राकृतिक संसाधनों तक पहुंच प्राप्त हो? पर्यावरण को होने वाली अपूरणीय क्षति से बचने के लिए हम जिम्मेदारी से कैसे कार्य कर सकते हैं?

संदर्भ

1. https://www-diaryandme-com/environment-quotes-in-hindi-
2. http://hi-wikipedia-orgपर्यावरणीय_नीतिशास्त्र.
3. https://www.drishtiias.com/hindi/paper4/environmental-ethics
4. https://egyankosh.ac.in/bitstream/123456789/62534/1/Unit14.pdf
5. https://online.maryville.edu/online-bachelors-degrees/sustainability/resources/importance-of-environmental-ethics/
6. https://www.scu.edu/environmental-ethics/short-course-in-environmental-ethics/
7. http://hi.wikipedia.org पर्यावरणीय_नीतिशास्त्र.

पर्यावरण प्रदूषण और सार्वजनिक स्वास्थ्य

डॉ० शर्मिला विश्वास

HOD, Department of Hindi, Seshardipuram First Grade College, Yelahanka, Bangalore

वातावरण को दूषित करके तुम
स्वस्थ नहीं रह पाओगे
स्वच्छ हवा न ले
तो घुट घुट कर मर जाओगे
आओ मिलकर कसम एक खाए।
प्रदूषण को हम दूर भगाएं
गंदगी को दूर भगाकर
वातावरण को स्वच्छ बनाएं।

हमारे सौरमंडल एवं धरती के चारों ओर के परिवेश कोई हम पर्यावरण कहते हैं जो सभी जीव जाति के विकास जीवन मृत्यु को प्रभावित करता है आज इस समस्या पर सभी देशों का ध्यान आकर्षित है और पर्यावरण की प्राकृतिक संरचना एवं संतुलन को उत्पन्न अवांछनीय परिवर्तन ही प्रदूषण है।

पर्यावरण दो शब्दो से बना है। परि+आवरण पर्यावरण वही है जो प्राकृतिक रूप से हमारे चारों तरफ है और पृथ्वी पर हमारे दैनिक जीवन को प्रभावित करता है पानी जो हम अपने दिन चर्चा में शामिल करते हैं यह सब पर्यावरणीय है। दुनिया में प्रदूषण इन दोनों सबसे बड़ी समस्या है पर्यावरण में प्राकृतिक संसाधनों की प्रयोग यज्ञ मात्रा को कम कर दिया है। जिससे आज प्रकृति के साथ-साथ मानवीय गतिविधियां दोनों प्रकृति प्रदूषण के लिए जिम्मेदार है अम्ल वर्षा और ग्लोबल वार्मिंग प्रदूषण के परिणाम है।

आज मानव ने विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में अभूतपूर्व उन्नति कर ली है। किंतु इस प्रगति से स्वयं मानव के लिए गंभीर खतरा पैदा हो गया है। संसार में तीव्र औद्योगीकरण से प्रदूषण की समस्या पैदा हो गई वर्तमान समय में पर्यावरण, प्रदूषण जनजीवन के लिए एक गंभीर समस्या है, आधुनिक भौतिकी विज्ञान एवं विचारों के बढ़ते दुष्प्रभाव से हमारा सारा पर्यावरण दूषित ही नहीं विषाक्त भी हो गया है अन्य और जल की कौन क्या है जीवन के लिए मुख्य आधार प्राणवायु भी प्रदूषण के राजयोग से ग्रस्त हो रहा है जिसमें मनुष्य ही नहीं, प्राणी मात्र का भी अस्तित्व संकट में पड़ सृष्टि के आरंभ में प्रदूषण का नाम निशान भी ना था प्रकृति में एक संतुलन बना हुआ था दूसरे शब्दों में प्रत्येक वस्तु स्वच्छ थी वायु शुद्ध थी जल शुद्ध था धरती उपजाऊ थी जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ उत्पादन पर बोल दिया जाने लगा इस कारण से प्रकृति के नियम में बाधा उत्पन्न होने लगी प्रदूषण बढ़ने लगा यह प्रदूषण की समस्या मूलतः विज्ञान की देन है। मानव पर्यावरण की उपज है अर्थात मानव जीवन को पर्यावरण की परिस्थितियों व्यापक रूप से प्रभावित करती है पृथ्वी के समस्त प्राणी अपनी बुद्धि व जीवन क्रम को सुचारू रूप से संचालित करने के लिए संतुलित पर्यावरण पर निर्भर रहते हैं संतुलित पर्यावरण में सभी तत्व एक निश्चित अनुपात में विद्यमान होते हैं किंतु जब पर्यावरण में निहित एक या अधिक तत्वों की मात्रा अपने निश्चित अनुपात से बढ़ जाती है या पर्यावरण में विषैली तत्वों का समावेश हो जाता है तो हो पर्यावरण प्राणियों के जीवन के लिए घातक बन जाता है पर्यावरण में होने वाले इस घातक परिवर्तन को ही प्रदूषण कहा जाता है। प्रदूषण का शाब्दिक अर्थ गंदा या अशुद्ध है प्रदूषण में वृद्धि का कारण मनुष्य द्वारा वस्तुओं के प्रयोग करने के बाद फेंक देने की प्रवृत्ति तथा मनुष्य की बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आवश्यकताओं में होने वाली वृद्धि। पर्यावरण को प्रदर्शित करने में जहां बढ़ाते कल कारखाना इत्यादि का विष धूम, विषैली गैसों का रिसाव, बहाव, बारूदी बीच फोटो एवं परमाणु प्रयोग का विस्तार मुख्य है वही वन विनाश का भी प्रमुख हाथ है जनसंख्या वृद्धि एवं बढ़ाते हुए फैशन के कारण मनुष्य ने वनों का विश्व का उपयोग फर्नीचर इत्यादि उपकरण एवं ईंधन के रूप में इतना अधिक करना प्रारंभ कर दिया है कि प्रकृति का संतुलन ही डगमगा रहा है वनों के विनाश से एक और जहां भूमि सड़क एवं वायु दोनों में ही वृद्धि होती है यह हमारी प्राकृतिक औषधि संपदा का विनाश होता पर्यावरण संबंधित तीन मुख्य बातें इस प्रकार है। 1. पेड़ ना कटे पेड़ लगाए पहले के करें या हरजन।2. शुद्ध हवा और अपनी ही तो जीवन का असली धन है.3. धन से ना ही जीवन और ना ही ऑक्सीजन मिलती पर्यावरण स्वास्थ्य बनाते हैं तन मन को महकाते हैं।

वृक्ष आवश्यक ऑक्सीजन का प्रसाद करते हैं दूसरे हुए पर्याप्त जल वृष्टि में भी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। इस प्रकार अच्छी वर्षा और शुद्ध वायु के प्रमुख कारक तत्व होने से वृक्ष एवं वन पर्यावरण को अमृत प्रदान करते हैं यही कारण है, कि हमारे देश भारतवर्ष में प्रकृति पूजा का विशेष महत्व रहा है और उसके अंतर्गत वनों एवं वृक्षों को प्रमुखता प्रदान की गई थी अपनी इन्हीं अमृत वर्षा विशेषताओं के कारण कुछ वृक्ष एवं पौधे में नीम, पीपल, बरगद आवला, आम एवं तुलसी का महत्व पर्यावरण अनुसंधान के क्षेत्र में सर्वोपरि रही है।

प्रदूषण के विभिन्न रूप हो सकते हैं जिम वायु प्रदूषण जल प्रदूषण धनी प्रदर्शन तथा अणु प्रदूषण प्रमुख है। इस प्रकार का प्रदूषण किसी न किसी रूप में हमारे रोगों में वृद्धि करता है जीवन में तनाव तथा मानसिक और शारीरिक व्यग्रता को बढ़ावा देता है। इनमें से वायु प्रदूषण सबसे भयानक होता है और हानिकारक भी है। जबकि वायु हमारे प्राणों का आधार वायुमंडल में विभिन्न गैसों की मात्रा लगभग निश्चित रहती है और अधिक काम ऑक्सीजन और नाइट्रोजन ही होती है। वायु में ऑक्सीजन की मात्रा का घटना और कार्बन डाइऑक्साइड तथा कार्बन मोनोऑक्साइड हानिकारक गैसों की मात्रा का बढ़ता ही वायु प्रदूषण का लक्षण नागदोन में मोटर गाड़ियां द्वारा छोड़े गए हुए तथा कल कारखानों की चिमनियों से निकले धुएं से वायु प्रदूषण होता है वायु प्रदूषण का तेजी से बढ़ाना देश में औद्योगीकरण की प्रगति का कारण है इनके अलावा मानव शरीर में रक्त चाप अधिक होने लगता है जिससे हृदय रोग की संभावनाएं भी बढ़ जाती है

जल सभी प्राणियों के लिए अनिवार्य है अत: जल का शुद्ध होना आवश्यक है जल में अनेक कार्बनिक अकार्बनिक पदार्थ खनिज तत्व होती है यदि इन तत्वों की मात्रा अधिक हो जाती है तो वह जल हानिकारक हो जाता है उसे हम प्रदूषित जल कहते गांव तथा नगरों की गंदी नालियां का जल हुए जलाशय नदी आदि में गिरकर जल प्रदूषण करता है। मनुष्य द्वारा जल स्रोतों के पास मल मूत्र त्याग करने तालाबों आदि में पालतू जानवर नेहलाने तालाब या नदी के किनारे कपड़े धोते आसपास को वृक्ष को पत्ते एवं कुड़ा जल में गिर जाने, कारखाने से निकलने वाले अवशिष्ट विषैली पदार्थ एवं गंदे जल के नदियों में गिरने आदि से जल प्रदूषण होता है जल प्रदूषण के कारण हैजा, पीलिया अनेक प्रकार के रोग फैल जाते हैं। आजकल बड़े-बड़े नगरों में ध्वनि प्रदूषण का होना भी एक गंभीर समस्या बन गया है। आज असुविधाजनक, अनावश्यक तथा अनुपयोगी शोर ही ध्वनि प्रदूषण है। ध्वनि प्रदूषण सड़क पर भारी वाहनों के चलने से, रेलवे के आवागमन के शोर से लाउडस्पीकर के शोर से अंतरिक्ष के लिए बहुत घातक है। ध्वनि प्रदूषण आज निरंतर बढ़ता ही चला जा रहा है यह हमारे कानों के लिए बहुत खतरनाक है जिससे जिससे हम चौन से नहीं पाते हैं, दिन व दिन विद्यार्थी तथा रक्तचाप बढ़ जाते हैं और इससे हमारे मस्तिष्क में तनाव बढ़ जाता है आंखों की रश्मि मंच पर जाती है हमें अल्प आयु में मृत्यु का भयानक रूप देखना पड़ता है। आज विश्व के अनेक देशों द्वारा अणु शक्ति का निर्माण के कारण अणु प्रदूषण भी होने लगा है अणु शक्ति को निश्चित अवधि से पूर्व निष्क्रिय करने शत्रु देश के लिए उसका प्रयोग करने के कारण अणु प्रदर्शन होता है इससे वनस्पति नष्ट हो जाती है लोग लोगों की मौत हो जाती है अपंग हो जाते हैं और चारों ओर निर्जनता का राज्य स्थापित हो जाता है। इस बर्थडे प्रदूषण को जो आज हमारा सबसे बड़ा शत्रु है दूर करने या काम करने के उपाय करनी चाहिए अन्यथा हमारा जीवन नर्क के सामान बन जाएगा इस समस्या के समाधान में वनों का सबसे बड़ा योगदान है इसके लिए हमें वृक्ष का रोपण करना चाहिए वनों को काटने के बजाय वनों की रक्षा करनी चाहिए इसके अतिरिक्त नगरों में बढ़ते उद्योगों की स्थापना पर नियंत्रण लगाना है तथा लोगों में प्रदर्शन के प्रति जागरूकता पैदा करना है सरकार से सलाह करना है सरकार को आगे लाना होगा और हम जनता को भी इस काम के लिए उठकर, जागृत होकर सही कदम उठाना पड़ेगा। आओ हम सब यही मान कर चले की मुक्त हवा, जल,वातावरण चाहिए तो पर्यावरण की रक्षा करना बहुत ही जरूरी है, और साथी हमारे चारों ओर पेड़ पौधे लगाना चाहिए जिससे हमें स्वच्छ हवा मिले। अगर हम सब मिलकर एकत्रित होकर पर्यावरण रक्षा को आगे बढ़ाएं तो मानव की उन्नति और स्वास्थ्य भी आराम से चलते। नदी नदियों के जल को कचरे से बचना चाहिए प्लास्टिक बैगों का काम प्रयोग में लाना चाहिए जिन्हें रीसायकल किया जाना चाहिए प्रदूषण खत्म करने के लिए कानून और नियम बनाना बहुत ही जरूरी है नए उद्योगों का लाइसेंस देने और मनोज को कटाई रोकने की शिक्षा देनी चाहिए न्यायालय द्वारा प्रदूषण फैलाने वाले उद्योगों का महानगर से बाहर से जाने के आदेश दिए गए हैं। अंत में मैं यही कहूंगी कि पर्यावरण रक्षा हमारे जीवन की रक्षा है तो हम सब मिलकर कसम खाए और पर्यावरण की रक्षा करके प्रदूषण को कम करना चाहिए।

संदर्भ सूची ग्रंथ

1. हिंदी निबंध वैभव
2. आधुनिक हिंदी निबंध
3. अंतरजाल
4. पर्यावरण एवं प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण एवं सार्वजनिक संसाधन

मठुआ अहिरवार

सहायक प्राध्यापक, वनस्पति शास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर, जिला नीमच, मध्य प्रदेश

सार

आज प्राण वायु दिन प्रतिदिन विषयुक्त हो रही है जिसमें जीव जंतु ही नहीं बल्कि प्राकृतिक वनस्पतियां भी प्रदूषण की चपेट में आ रही हैं। पारितंत्र में जैविक घटक एवं अजैविक घटक का एक विशेष महत्व है। जिसमें संपूर्ण पारितंत्र समेटे हुए हैं। मानव अपने मूलभूत आवश्यकताओं के कारण, आए दिन विष पान कर रहा है। प्रदूषण की गति दिन प्रतिदिन बढ़ रही है,खाद्य पदार्थों से लेकर रासायनिक तथा स्वचालित बहनों की अपेक्षा कीटनाशक पदार्थ से भी प्रदूषण बढ़ रहा है। बुनियादी जरूरते आधुनिक खाद्य पदार्थ शरीर को खोखला करने में लगे है। जिसमें ऊर्जा का ह्रास तथा अन्य पोषक तत्वों की मात्रा में अधिक गिरावट देखने को मिल रही है। सामुदायिक आबादी की आवृत्ति तथा घनत्व के अनुसार पोषण आहार में भी कमी होने की संभावना व भविष्यवाणी सामने आने लगी हैं। क्योंकि जल, भूमि, वायु एवं अन्न प्रदूषित हो रहे हैं। तीनों तत्वों की शुद्धता धीरे-धीरे कम हो रही है। मिट्टी में पोषक तत्व एवं बायोफर्टिलाइजर तथा जल में अनेकों अनेक रासायनिक विषैला अवशिष्ट पदार्थ तथा रासायनिक तत्वों की अनुमानित मात्र से अधिक संख्या मैं पाए जाने का मूल्यांकन किया जा रहा है। बढ़ते प्रदूषण के कारण पेयजल का स्वाद चखने में तात्विक शक्ति का परिणाम निकल कर आ रहे हैं। पेयजल में, फास्फेट, आयरन, जिंक सल्फेट तथा टीडीएस की मात्रा, आवश्यकता से अधिक बढ़ रही है। जिसका सीधा प्रभाव मानव के पाचन तंत्र तथा किडनी पर असर पड़ रहा है रासायनिक कीटनाशक पदार्थ का उपयोग अधिक उपज तथा लंबे समय तक संरक्षण करने एवं फलों को पकाने में किया जा रहा है। दैनिक उपयोगी घरेलू सब्जियों में सर्वाधिक उपयोग किया जा रहा है।जिससे वास्तविक भूमि की उर्वक्ता धीरे-धीरे नष्ट व अंदर-अंदर भूमि बंजर तथा भूमि खोकला हो रही है।रासायनिक खाद्यों की मात्रा दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है, जिससे नाइट्रोजन का स्थिरीकरण नहीं हो पा रहा है। मृदा में नमी बढ़ाने वाले जीवाणु पूर्णत नष्ट हो रहे हैं।इस प्रकार के विष प्रदूषण को बचाने के लिए पशुपालन पर जोर देना होगा। जब खेतों में शुद्ध गोबर खाद्य उपयोग में ली जाएगी तो निश्चित ही मृदा सशक्त और उर्वकता युक्त भू की कमी नही आएगी। भूमि में जीवंत फसल पोषण युक्त ऊपज होगी।

सार्वजनिक संसाधन

1. खुले जलाशय

जलाशय शब्द का तात्पर्य उसे स्थान से है जहां पर जल बड़ी मात्रा में भरा रहता है इसका उपयोग कई चीजों के लिए किया जाता है। यह जलाशय ठहरे हुए पानी को भंडार के रूप में संदर्भित करता है। जलाशय शब्द का फ्रांसीसी से आया हुआ है जो आगे चलकर पुराने फ्रांसीसी रिजर्व से निकला है जिसका अर्थ और संरक्षित करना के जानने के बाद यह समझा जाता है की इसका अर्थ एक ऐसे स्थान से विकसित किया गया है जहां वह मानव निर्मित या प्राकृतिक पानी का जमाव होता है। जिसमें विद्युत जल विद्युत ऊर्जा ग्रह निर्मित किए जाते हैं। जिसमें बिजली आदि का उत्पादन दूर-दूर तक सप्लायर किया जाता है। खुले जलाशय कई विषैला पदार्थ सड़े गले मृत पदार्थ तथा सीवेज टैंक औद्योगिक कारखाने से निकले हुए अवशिष्ट पदार्थ इन्हीं जलाशय में एकत्रित होते हैं। जिससे जीव जंतुओं एवं मानव को भारी नुकसान उठाने पड़ते हैं।

2. औद्योगिक कारखाने

खुली खदानों के द्वारा भूपटल पर महत्त्वपूर्ण स्थलाकृतिक परिवर्तन होते हैं। खुली खदानों में खनन कार्यो के पश्चात छोड़ी गई निचली भूमि कालान्तर में जल से भरे गड्ढों में परिवर्तित हो जाती है जिसे सम्प (sump) कहा जाता है। खुली खदानों में उत्खनन के परिणामस्वरूप खदानों के ऊपरी भार अथवा अतिभार (overburden) को समीप के खाली स्थानों पर एकत्र कर दिया जाता है, जिससे चारों ओर के प्राकृतिक वन क्षेत्र रेत व शैल के साथ पहाड़ों तथा विनाशपूर्ण स्थलाकृतियों में बदल जाते हैं। भू-अवनयन तथा भूमि उपयोग की एक बड़ी समस्या इन क्षेत्रों में विद्यमान रहती है। इन क्षेत्रों में पड़े ढेर के रूप में ऊपरी भार का क्षरण होता रहता है, जिससे उस क्षेत्र की भूमि तथा वन का स्तर घटने लगता है। खदानों में ऊपरी मिट्टी को सुरक्षित

नहीं किया जाता है। ऊपरी मिट्टी एकत्र किये गए बड़े ढेर के शेष भागों में साथ मिल जाती है। गहरी खदान में ऊपरी भाग के अन्तर्गत कुल 300 हेक्टेयर भूमि है इन निक्षेपों की ऊँचाई 9 से 10 मीटर तक है। ऐसी बहुत कम आशा है कि यह भूमि भविष्य में उपयुक्त रूप से सुरक्षित हो पाएगी।

कोयले की खदानों में तथा आस-पास जहाँ कोयला एकत्र कर एक बड़े ढेर के रूप में होता है, वहाँ आस-पास के व्यक्तियों की श्वास के साथ कोयले की धूल मानव के फेफड़ों में जम जाती है।पर्यावरण की यह एक बड़ी समस्या इस क्षेत्र में रहती है। भूमिगत तथा खुली खदानों में खनन प्रक्रिया से अन्य प्रकार की पर्यावरण समस्या सामने आती है, जैसे-वनों की कटाई, ऊपरी मिट्टी की हानि, जमीन धसान, कोयले में आग लगना, जल एवं वायु प्रदूषण, जोत योग्य भूमि तथा वनस्पति की हानि, जल स्तर पर प्रभाव, शोर तथा कम्पन इत्यादि समस्याएँ उत्पन्न होती हैं। साथ ही खनन कार्य वाले क्षेत्रों में रहने वाले आदिवासी तथा उनकी सामाजिक-आर्थिक संरचना भी परिवर्तित होती है,तथा उनको कोई विशेष लाभ नहीं मिलता है।

www.Google.com

3. कुआँ

Indore News - फोटो : न्यूज डेस्क, अमर उजाला, इंदौर

ग्रामीण परिवेश में कुआं जल स्रोत का सर्वाधिक उपयोग किया जाता है जहां पर ग्रामीण जन अधिक से अधिक संख्या में जल का उपयोग तथा स्नानागार के रूप में उपयोग करते है।नागरिकों की माने तो एक जमाने में कुआं जल संरक्षण का महत्वपूर्ण साधन होता था। तपती धूप में कुआं मुसाफिरों के लिए पानी पीने का एक मात्र जरिया हुआ करता था। फ्रिज युग से पहले कुआं के पानी को ठंडा जल स्त्रोत माना जाता था। वर्षों पहले लोग कुआं जनहित में खुदवाते थे। पूरे गांव के लोगों

के लिए कुआं खेतों की सिंचाई, स्नान व पीने के लिए पानी का महत्वपूर्ण साधन था परंतु अब यह सपना मात्र रह गया है। उपेक्षा के कुआं का अस्तित्व समाप्त हो चुका है।

हमारे पूर्वज जल संरक्षण के लिए कुआं खुदवाते थे। हर गांव में 10 से 15 कुआं होता था। आज स्थिति यह है कि गांव में एक-दो कुआं मिल जाए तो समझे की जल संचय की दिशा में अब भी ग्रामीण जागरूक हैं। पहले कुआं के पानी से भोजन बनाने, पानी पीने एवं पूजा करने काम होता था। हमारी संस्कृति कुआं की पानी को शुद्ध मानती है। छठ व्रत के दौरान व्रती कुआं के पानी से ही प्रसाद बनाती हैं। कुआं की पानी के लिए भटकना पड़ता है। दूर से पानी लाना पड़ता है। अगर तालाब की स्थिति ठीक रहती तो पानी के लिए व्रती को भटकना नहीं पड़ता। यह सब देखते हुए भी अधिकारी एवं जनप्रतिनिधियों का ध्यान इस ओर नहीं जा रहा है।

5. बावड़ी

बावड़ी को संस्कृत में वापी या वापिका कहा जाता है। बावड़ियों में पानी खींचने के लिए रस्सी या किसी अन्य उपकरण की आवश्यकता नहीं होती थी। कोई भी बस सीढ़ियों से नीचे जाकर पानी प्राप्त कर सकता है। बावड़ियाँ उन महिलाओं के लिए एक सभा स्थल के रूप में भी काम करती थीं जो पानी, सांत्वना, गपशप और विचारों के आदान-प्रदान के लिए यहाँ आती थीं। हिंदू मंदिरों के विपरीत, बावड़ियाँ लोक धर्म और स्थानीय देवी-देवताओं की पूजा का केंद्र बिंदु बन गईं।

बावड़ियों की उत्पत्ति एवं प्रारंभिक इतिहास।

पुरातत्वविदों के अनुसार, अकेले मोहनजोदड़ो शहर में कभी 700 से अधिक कुएँ रहे होंगे। प्रागैतिहासिक स्थलों की पुरातात्विक खुदाई से कुओं और जलाशयों के साक्ष्य मिल रहे हैं, हमारे पास 2000 साल पहले के उनके अस्तित्व के लिखित दस्तावेजी साक्ष्य भी हैं। ऐसा कहा जाता है कि एक प्रकार की बावड़ी का निर्माण ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में अशोक के शासन काल में किया गया था (दिल्ली टोपर स्तंभ पर सातवां शिलालेख)।

बावड़ियों के प्रकार:

राजवल्लभ जैसे प्राचीन ग्रंथ, जो चार मुख्य प्रकार की बावड़ियों के बीच अंतर करते हैं:

नंदा: एक प्रवेश द्वार वाली बावड़ी,

भद्रा: दो प्रवेश द्वार वाली एक बावड़ी,

जया: तीन प्रवेश द्वार वाली एक बावड़ी,

विजया: चार प्रवेश द्वार वाली एक बावड़ी

6. पार्क

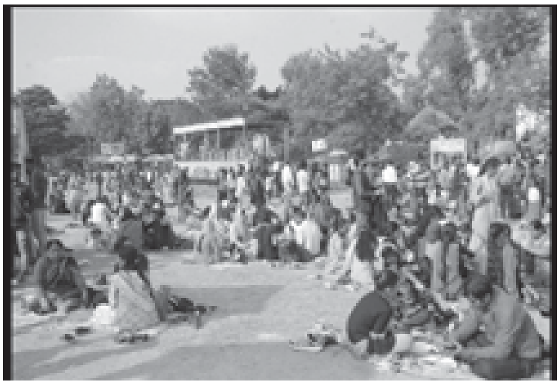

Google.Com

अमेरिका की एक राष्ट्रीय उद्यान प्राचीन जंगल और साफ आसमान के दृश्य प्रस्तुत कर सकते हैं उद्यान संरक्षण संघ की एक नई रिपोर्ट के अनुसार "इसमें से कई संरक्षित सार्वजनिक परिदृश्य वायु प्रदूषण से पीड़ित हैं और मानव जन जलवायु

परिवर्तन से उत्पन्न खतरों का सामना करना पड़ता है। 1919 में स्थापित एनपीसीए एक वकालत समूह है। जिसका उद्देश्य राष्ट्रीय उद्यान की सुरक्षा एवं संवर्धन करना है। हर महीने अपनी नवीन प्रदूषण पार्क रिपोर्ट जारी की जिसमें 2021 में देश भर में 399 राष्ट्रीय उद्यानों द्वारा एकत्र किए गए वायु गुणवत्ता डाटा का विश्लेषण शामिल है। रिपोर्ट यह भी प्रदर्शित करती है की जलवायु परिवर्तन से संबंधित चार खतरे सुखा संबंध वृद्धि आक्रामकता बढ़ रही है।

राष्ट्रीय उद्यान के अनुसार, "हस्तक्षेप के बिना, इस बात की बहुत वास्तविक संभावना है कि यह कीट शेनान्डाह के पारिस्थितिकी तंत्र से पूर्वी हेमलॉक को खत्म कर सकता है।"

इस बीच, फ्लोरिडा में एवरग्लेड्स नेशनल पार्क बढ़ते समुद्र के स्तर से जूझ रहा है, जिसके कारण खारा पानी पार्क के मीठे पानी के दलदल और मैंग्रोव जंगलों में घुसपैठ कर रहा है। और साउथ डकोटा में विंड केव नेशनल पार्क लगातार और गंभीर सूखे की स्थिति से पीड़ित है, जिससे जंगल की आग का खतरा बढ़ जाता है और पार्क की भैंसों पर तनाव पड़ता है।

7. हवाई जहाज

राष्ट्रीय एवं अंतरराष्ट्रीय टर्मिनल प्लेटफार्म पर विभिन्न प्रकार की ध्वनियों से पर्यावरण प्रदूषण का शिकार हो रहा है टीम हेरिटेज की ध्वनियां मानव मन मस्तिष्क के को विचलित कर देने वाली धनिया होती हैं जिससे मानव के शरीर में आघात पहुंचता है ब्लड प्रेशर हृदय घाट जी मिचलाना सर दर्द आदि स्थिति निर्मित होती है और एक कंडीशन ऐसी होती है कि उसमें आदमी दम भी तोड़ देता है बुनियादी सुविधाओं के अनुसार इस सुविधा घातक भी बना रहे हैं।

(Source: Reuters)

8. बस यात्रा या हाट बजार

रोजमर्रा की जरूरत को पूरा करने के लिए गांव से शहर शहर से गांव को जाना पड़ता है जो भीड़ का केंद्र माना गया है माना जाता है क्योंकि बस स्टैंड पर भारी वाहनों की आवाज अवशिष्ट पदार्थ के सड़े गले होने से आसपास के चारों ओर दूषित वातावरण निर्मित होता है। इसी प्रकार से इसी प्रकार से सब्जी मंडियां है एवं हॉट लगाए जाते हैं उसमें विभिन्न प्रकार के अवशेषों के साथ-साथ धूल मिट्टी के कर आम जन के फेफड़ों तक पहुंच जाते हैं जिसमें नजला सर्दी खाद्यसी क्षणक प्रभाव देखने को मिलते हैं। यह भी एक वातावरण दूषित होने का एक केंद्र है लेकिन मनोज अपनी निजी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए घर में नहीं रख सकता है।

9. सार्वजनिक मॉल

सार्वजनिक संसाधन के के सुविधा युक्त परिक्षेत्र में पॉल्यूशन का एक प्रमुख केंद्र माना जाता है जिसमें तरह-तरह के प्रोडक्ट एवं ड्रीम मॉल में औरत करने विद्युत तरंगों का चमत्कार देखने के लिए मिलता है वह एक जोखिम भरा कदम है। क्योंकि ड्रीम एयर कंडीशन युक्त होता है जिसमें केमिकल युक्त सुगंध चारों ओर फैली

हुई रहते हैं। साउंड धोनी साउंड धोनी आदि से मानसिक एवं रेडिएशन तनाव बना रहता है।

प्रदूषण केप्रकार

1. जल प्रदूषण जल प्रदूषण सार्वभौमिक समस्या बनती जा रही है पृथ्वी पर उपस्थित जल केवल 25% उपयोगी जल माना गया है। देश 75 प्रतिशत जल दुष्ट लवणीय जल है जो पीने योग्य नहीं है। जल प्रदूषण को परिभाषित किया जा सकता है। "किसी भी पदार्थ की जाल में मिलावट या जल की भौतिक और रासायनिक लक्षणों का परिवर्तन किसी भी रूप में इसके उचित कार्यों के लिए उपयोग में अंतर चेक करता है" रासायनिक दृष्टिकोण से जल कभी शोध नहीं होता है इसमें विभिन्न प्रकार के विलय पदार्थ और साथ ही साथ निलंबित अशुद्धियां होती हैं इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार की गैस है h2s CO2 nh2n2 एवं बिलिंग खनिज तत्व लवण जैसे कैल्शियम मैग्नीशियम सोडियम आदि आते हैं यहां तक की यह भी पाया गया है कि इसके अंतर्गत कई प्रकार की रोगाणु भी उपस्थित होते हैं। सार्वजनिक क्षेत्र में उपयोगी जल में अधिकांशत संदूषित जल का उपयोग किया जाता है जल प्रदूषण का सबसे प्राथमिक स्रोत जलाशय में नगर पालिकाओं द्वारा बहित जल अन्य अवशिष्ट पदार्थों के के परियांम है। वाहिद जल में मल मल विषैला रासायनिक पदार्थ एवं अपशिष्ट पदार्थ अपशिष्ट पदार्थ जल में मिल जाते हैं जिससे जल प्रदूषण हो जाता है जल प्रदूषण करने वाले कारकों को जल प्रदूषण कहते हैं।

2. वायु प्रदूषण; वायु को प्रदूषित करने वाले प्रदूषण आठ पार्टिकुलेट मैटर 10 (PM)2.5 ओजोन, सल्फर डाइऑक्साइड, लेड, अमोनिया, कार्बन मोनोऑक्साइड नाइट्रोजन ऑक्साइड (Particulate Matter (PM10), Particulate Matter (PM2-5), Nitrogen Dioñide (NO2), Sulphur Dioñide (SO2), Carbon Monoñide (CO), Ozone (O3), lmmonia (NH3), Lead (Pb))आदि। किसी क्षेत्र के एक को निर्धारित करने में प्रमुख मापदंडों के रूप में कार्य करते हैं।।QI का मान 0से 500 तक के पैमाने को समझने के लिए।QI का मान जितना अधिक होगा वायु प्रदूषण उतने ही मान से स्वास्थ्य संबंधी चिंता उतनी अधिक बढ़ेगी उदाहरण के तौर पर हम जान सकते हैं कि 50 या इससे कम।QI का मान शुद्ध वायु की गुणवत्ता को दर्शाता है। जब वायु का।QI मान 300 से अधिक होता है तब वायु की गुणवत्ता विष युक्त तथा खतरनाक मानी जाती है।

Central Pollution Control Board' SAir Quality Standards

Air Quality Index (Aqi) Category	
0-50	Good
51-100A	Satisfactory
101-200A	Moderate
201-300	Poor
301-400	Very Poor
401-500	Severe

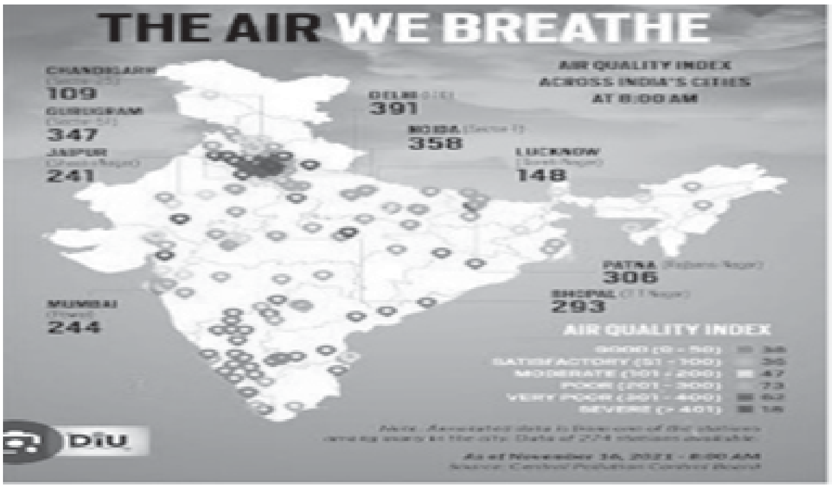

पौधों पर वायु प्रदूषण का प्रभाव दो भागों में विभाजित किया जा सकता है प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष जीवन की कोशिकाओं को हानि या उसके बदलाव में दूषित वायु के प्रभाव आदि वनस्पति पर प्रत्यक्ष प्रभाव सल्फर डाइऑक्साइड ऑक्साइड का नोक्स का संवेदनशील मिट्टी के अम्लीकरण में योगदान है।

वायु प्रदूषण का वनस्पति पर प्रभाव

1. संदूषक स्रोतों से दूरी
2. संदूषक अनावद की अवधि
3. वायुमंडलीय परिस्थितियों

ऐसे पेड़ पौधों पर वायु प्रदूषण का प्रभाव अधिक पाया जाता है जो शेरो हवाई अड्डा सड़क मार्गों विद्युत संयंत्रों भट्टी कारखाने एवं रासायनिक उर्वरकों सीमेंट रंग लिप रासायनिक पदार्थ कागज आदि की लुगदी इत्यादि का उत्पादन करने वाले औद्योगिक क्षेत्र में पाए जाने वाले वनस्पतियों पर वायु प्रदूषण का गहरा प्रभाव पड़ता है इस क्रम में हमें विभिन्न प्रकार के दूषित पदार्थों और फसलों पर पड़ने वाले उनके प्रभाव देखने को मिलते हैं।

वायु प्रदूषण के कारण कृषि उत्पादन में 10 से 15% क्षति हो रही है वायु प्रदूषण में कमी लाने की काफी प्रयास किया जा रहे हैं किंतु प्रकाश के साथ वायु प्रदूषण सम्मिलित है इसे पूरी तरह से नहीं हटाया जा सकता है इस संदर्भ में कई प्रकार के शोध प्रयास किये जा रहे हैं।

कार्बन डाइऑक्साइड के अवशोषण में पौधे असफल हो रहे।

वायुमंडल में उपस्थित कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण कर अवशोषण पेड़ पौधे जलवायु परिवर्तन से निपटने में सहायता कर रहे हैं लेकिन अब ऐसा नहीं हो रहा है वर्तमान में एक शोध से स्पष्ट हुआ है कि पेड़ पौधों में सांस लेने और जलवायु परिवर्तन का सामना करने की क्षमता कम हो गई है। ग्राम और सुखी जलवायु के कारण वायुमंडल से कार्बन डाइऑक्साइड की अवशोषण की प्रक्रिया में पेड़ पौधे असफल हो रहे हैं प्रकाश संश्लेषण की क्रिया के द्वारा पेड़ पौधे कार्बन डाइऑक्साइड का अवशोषण करते हैं और ऑक्सीजन को विमुक्त करते हैं यह उनकी वृद्धि में सहायक होते हैं हालांकि उच्च तापमान और सीमित पानी की सप्लाई से यह प्रक्रिया विपरीत दिशा में कार्य कर रही है। जिसके कारण पेड़ पौधे कार्बन डाइऑक्साइड को वापस वायुमंडल में छोड़ देते हैं ऐसे फोटो रेस्पिरेशन नाम दिया गया है वैज्ञानिकों के अनुसार कहा जाता है कि फोटो रेस्पिरेशन की दर दोगुनी हो गई है जिसके पीछे गर्म जलवायु और पानी की कमी प्रमुख कारण है यह प्रतिक्रिया दिन के तापमान में बेहद होने के बाद होती अब वैज्ञानिक जीवाश्म का रूप ले चुकी है लकड़ी पर शोध करने की योजना बना रहे हैं ताकि 10000 वर्ष पहले फोटो रेस्पिरेशन की दर पता लग सके इनका कहना है की लकड़ी में मौजूद कुछ आइसोटोप विशेष का मेथॉक्सिल समूह से इसका पता लगेगा अध्ययन के मुख्य लेखक और पेन स्टेट के जीव साइंस के विषय पर मैक्स लाइट ने कहा वृक्ष कार्बन डाइऑक्साइड को वातावरण से अवशोषित करने की वजह वापस भेज रहे हैं इस प्रक्रिया को फोटो रेस्पिरेशन कहते हैं जो सामान्य नहीं है।

3.भूमि प्रदूषण

मृदा प्रदूषण मानव समुदाय जब प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से विषैली वस्तुओं रासायनिक खाद्य पदार्थों को मिट्टी में सम्मिलित करते हैं जीवित वस्तुओं को छाती पहुंचते हैं जल भूमि जल भूमि जैविक एवं अजैविक घटकों से पारिस्थितिकी तंत्र को नष्ट करता है मृदा प्रदूषण बड़ी संख्या में कार्बनिक एवं अकार्बनिक एवं रासायनिक पदार्थ द्वारा जो मिट्टी में प्राकृतिक रूप पाए जाते हैं उनमें मानवीय तौर से मृदा प्रदूषण का मुख्य कारण का मृदा प्रदूषण का मुख्य कारण मानव द्वारा निर्मित अवशिष्ट पदार्थ है। मृदा प्रदूषण वर्तमान के दृष्टिकोण से तीव्र गति से बढ़ रहा है।

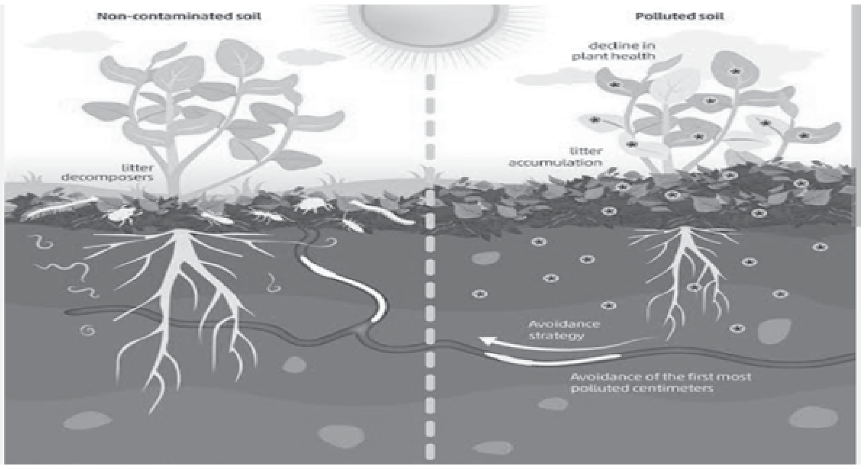

Google-com

4.ध्वनि प्रदूषण

ध्वनि प्रदूषण शब्द का तात्पर या यह है कि आपके आसपास होने वाली अवांछित या कष्टप्रदाय ध्वनि से है। जो तेज आवाज संगीत, अधिक शोर,मशीन की तेज आवाज, डीजे आदि, इसके प्रमुख कारण है। ध्वनि प्रदूषण से सुनने की क्षमता हार्ट अटैक आदि जैसी समस्या उत्पन्न होती है जो मानव समुदाय को क्षति पहुंच जाती है। जिसमें स्वास्थ समस्याएं बढ़ जाती है सिर में दर्द, नींद, थकान, उच्च रक्तचाप आदि। शरीर में तानव और आपकी जीवन की गुणवत्ता को कम कर सकता है। 20htrz की ध्वनि सुनने योग्य होती है इससे अधिक हार्टज की ध्वनि, शरीर तथा मस्तिष्क के लिए हानिकारक होती है। ध्वनि प्रदूषण से कई जानलेवा बीमारियां हो सकती है। अगर ध्वनि प्रदूषण को नजर अंदाज किया जाता है तो हमें सावधान होने की जरूरत है इससे हम केवल बाहरी ही नहीं बल्कि याद दस्ता भी कमजोर हो रही है चिड़चिड़ापन अवसाद जैसी बीमारियों के अलावा नपुंसकता कैंसर जैसी अनेक जानलेवा बीमारियों की चपेट में आ सकती है ध्वनि प्रदूषण व प्रदूषण है जो उच्च और असुरक्षित स्तर तक ध्वनि के कारण पर्यावरण में लोगों में बहुत सी स्वास्थ्य संबंधी बीमारियों का पशु पक्षियों और पेड़ पौधों आदि की आज सुरक्षा का कारण बनता है। ध्वनि प्रदूषण से बेचौनी चिंता आदि की समस्याएं बोलने में व्यवधान सुनने की समस्या आदि कमी सोने के समय व्यवधान थकान सदा चिड़चिड़ापन घबराहट कमजोरी संवेदनशीलता जय में कमी जिसे हमारे शरीर की

लाइव बनाए रखने के लिए हमारे कान महसूस करते हैं मैं धीरे-धीरे सुनने की क्षमता को काम करता हूं ऊंची आवाज में लगातार ढोल की आवाज स्थाई रूप से नुकसान पहुंचता है सड़क पर चलते बाइक ऑटो सहित अन्य वजह और उंगली के हाथ पर भी लगातार इसकी आवाज से न सिर्फ कान का पर्दे बल्कि मानसिक तनाव और चिड़चिड़ापन बोलने में व्यवधान बेचौनी नींद की कमी आदि समस्याएं उत्पन्न होती है।

नियम के मुताबिक, रात के दस बजे से सुबह के छह बजे तक खुली जगह में किसी तरह का ध्वनि प्रदूषण डीजे, लाउडस्पीकर, बैंड बाजा, स्कूटर कार बस का हॉर्न, धर्म के नाम पर वाद्ययंत्र का इस्तेमाल या संगीत बजाने फैलाने पर पूरी तरह प्रतिबंध है। इन नियमों का उल्लंघन करने वाले दोषियों को भारतीय दंड संहिता की धारा 290 और 291 के अलावा पर्यावरण संरक्षण अधिनियम 1986 के तहत एक लाख रुपए का जुर्माना अथवा पांच साल तक की जेल या फिर दोनों सजा एक साथ हो सकती है।

डॉ गुरदेव सिंह कहते हैं कि स्वास्थ्य के लिहाज से ध्वनि प्रदूषण काफी हानिकारक है। इससे व्यक्ति बहरेपन से लेकर कई तरह की गंभीर बीमारियों का शिकार हो सकता है। ऐसे में ध्वनि प्रदूषण और फोन का कम इस्तेमाल करना चाहिए और जागरूकता अभियान चलाया जाना चाहिए।

5. रेडियोधर्मी प्रदूषण

रेडियो धर्मी प्रदूषण एक प्रकार का वायु प्रदूषण होता है जो उच्च तापमान वाले जल तैयार करने के लिए विभिन्न कारणों से निकलते हुए विशेष रूप से रेडियो तरंगों द्वारा उत्पन्न किए जाने वाले अणु और अणु के द्वारा उत्पन्न रेडियोधर्मी ऊर्जा के कारण होता है। इस प्रदूषण का सीधा असर जीवों के ऊतकों पर पड़ता है जो इसे संबंधित रोगों और अन्य समस्याओं से ग्रस्त करता है।

यह धर्मी प्रदूषण न केवल आवासीय क्षेत्रों में बल्कि व्यापारिक और औद्योगिक क्षेत्रों में भी उत्पन्न होता है जहाँ रेडियो तंत्रों का उपयोग विभिन्न कार्यों में किया जाता है। अल्फा बीटा गामा आदि रेडियोधर्मी प्रदूषण मानव जीवन के लिए सबसे घातक होता है। रेडियोधर्मी अवरक्त विकिरण के कारण मनुष्य की त्वचा तथा स्किन कैंसर और आंखों की रोशनी मोतियाबिंद जैसी गंभीर बीमारी यह का सामना करना पड़ता है जो स्वास्थ्य के लिए बहुत ही हानिकारक एवं क्षति पहुंचती है।

इस प्रकार के प्रदूषण से बचने के लिए, रेडियो तंत्रों के उपयोग को कम किया जा सकता है या इस्तेमाल करने के समय उचित सावधानी बरती जा सकती है। विभिन्न प्रदूषण नियंत्रण उपकरणों जैसे कि एयर प्यूरीफायर भी इस प्रकार के प्रदूषण को कम करने में मदद कर सकते हैं।

प्रदूषण कम करने के लिए स्मॉग टावर

स्मॉग टावर बड़े पैमाने पर हवा को साफ करने के लिए डिजाइन की गई संरचनाएं हैं। प्रदूषित हवा के स्मॉग टावर में प्रवेश करने के बाद, इसे वातावरण में पुनः छोड़ने से पहले कई परतों द्वारा साफ किया जाता है।वायु प्रदूषण के स्तर को कम करने के लिए स्मॉग टावरों को बड़े पैमाने पर वायु शोधक के रूप में उपयोग किया गया है। हवा को सोखने के लिए एयर फिल्टर की कई परतें इसमें लगाई जाती हैं। फिल्टर प्रदूषितहवा को सोखने के बाद फिर से वातावरण में उसे साफ करके छोड़ देते हैं। वे पीएम2.5 कणों को बाहर निकालने के लिए हीपा फिल्टर तकनीक के सिद्धांत पर काम करते हैं।

निष्कर्ष

पर्यावरण से स्पष्ट है कि शुद्ध वायु शुद्ध भोजन एवं शुद्ध जल आदि का होना बहुत जरूरी है जनसंख्या के बढ़ते हुए कदम के कारण पर्यावरण प्रदूषण तेज रफ्तार से दूषित हो रहा है। पर्यावरण स्वस्थ मस्तिष्क में स्वास्थ्य जीवन निवास रहता है। बुनियादी जरूरत के अनुसार पर्यावरण दूषित हो रहा है। रासायनिक पेस्टिसाइड से सब्जियां, फल, में कई रासायनिक पदार्थ का सम्मिश्रण किया जा रहा जो जानलेवा साबित हो सकता है। अधपका, फल, एवं अनमैचुरेशन अनाज की सीडलिंग से कई तरह के नुकसान मानव जीवन को उठाने होगे।औद्योगिक स्थिति से स्पष्ट है कि अनुप्रयुक्त अवशिष्ट पदार्थों के सेवन करने से दूषित वायु से लोगों में सांस लेने की हिम्मत धीरे–धीरे घट रही है। यदि इसी प्रकार की परिस्थितियों निर्मित रहेगी तो मानव जीवन में भारी जोखिम उठाने पड़ेगा।

पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए भारत सरकार के द्वारा तरह–तरह की शासकीय योजनाओं का संचालन किया जा रहा है। सामुदायिक समाज के अनुसार संरक्षण करने के लिए अधिक से अधिक वृक्षारोपण शुद्ध,पेयजल एवं शुद्ध भोजन के प्रति जागरूक होना अति आवश्यक है। मौसम जलवायु परिवर्तन के अनुसार, सर्दी,वारिश,गर्मी में हम तरह–तरह के बुनियादी सुविधाओं में लिप्त रहते हैं, लेकिन इन बुनियादी सुविधाओं से मानव समाज की रोग प्रतिरोधक क्षमता धीरे–धीरे घट रही। चमकीली, लाइटों के कारण तेज ध्वनि के कारण एवं इलेक्ट्रॉनिक फूड मटेरियल के कारण तथा चाइनीज भोजन के कारण हमारा स्वास्थ्य दिन प्रतिदिन बिगड़ता जा रहा है जैसे ही मौसम परिवर्तन होता है तदनुसार हमारे शरीर के कई तरह के रोग उत्पन्न होते हैं पाचन क्रियो ठीक से काम नहीं कर पा रही है। पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए हम सभी को अधिक से अधिक मात्रा में सामूहिक संगठनों के अनुसार जल पृथ्वी वायु, वन आदि को संरक्षित करने में सहयोग करने की आवश्यकता है। कृषि चक्र में सुधार एवं देसीखाद्य, कंपोस्टिंग, मोटे अनाज की खेती की ओर ध्यान जुटना होगा।

ग्रन्थ सूची

1. प्रतियोगिता दर्पण अप्रैल 2024,29
2. Jagran. Com
3. google.com
4. https://www.downtoearth.org.in/hindistor/pollution/air-pollution/what-is-a-smog-tower-how-does-it-clean-the-air-78627
5. https://www.amarujala.com/?src=backtohome-intercept

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा का पर्यावरणीय नैतिक चिंतन

डॉ० कृष्ण चौधरी

सहायक प्राचार्य, दर्शनशास्त्र विभाग, +2 एच.पी.एस. कॉलेज, (भू.ना. मण्डल विश्वविद्यालय, मधेपुरा) निर्मली, जिला-सुपौल

सारांश

हम सभी अपने पर्यावरण से जुड़े हुए हैं। इसलिए हमारा विकास भी पर्यावरण पर आधारित है। आचार्य पं. श्रीराम शर्मा के अनुसार पर्यावरण के स्वस्थ व विकसित होने पर ही मानव के विकास का सही आकलन किया जा सकता है, लेकिन विभिन्न देशों के लोग शायद इस बात को स्वीकार नहीं करते। इसलिए अपने विकास के लिए उन बातों पर ध्यान नहीं देते, जिनसे पर्यावरण-प्रदूषण व जलवायु परिवर्तन होता है। आज इसी स्थिति के कारण विभिन्न देशों के हालात व परिस्थितियाँ बदलती नजर आ रही हैं। कोई देश बाढ़ का भीषण प्रकोप झेल रहा है, तो कोई समुद्री तूफानों से होने वाले नुकसान को सह रहा है। कहीं औसत से अधिक हिमपात हो रहा है, तो कहीं पर बढ़ता तापमान जीवन पर संकट बन गया है। ऐसे न जाने कितने प्रकरण हम सभी नित्य अपने समाचार पत्रों में पढ़ने लगे हैं व टेलीविजन में देखने लगे हैं। इसी पर्यावरणीय नैतिकता पर चिंतन करते हुए आचार्य पं. श्रीराम शर्मा कहते हैं कि अभी भी समय है कि हम सभी भविष्य में आने वाले भयावह संकटों के संकेतों व दस्तक को समझ पायें और समय रहते कुछ उपाय कर सकें, जिससे हमारी पृथ्वी और उसका पर्यावरण सुरक्षित रह सके।

keywords& पर्यावरण, नैतिकता, प्रदूषण

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा का संक्षिप्त परिचय

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा एक समाज सुधारक, दार्शनिक, स्वतंत्रता सेनानी और अखिल विश्व गायत्री परिवार के संस्थापक थे। आचार्यश्री सहस्राब्दियों से मानव चेतना, संस्कृति और सभ्यता के विकास में अलौकिक गुणों तथा बहुआयामी प्रतिभाओं के साथ प्रकट हुए। 20 सितंबर, 1911 को भारत में उत्तर प्रदेश के आगरा जिले के ऑवलखेड़ा गॉव में जन्में आचार्यश्री का पूरा जीवन भगीरथ जैसी तपस्या के लिए समर्पित था, जो सार्वभौमिक शान्ति और सद्भाव के लिए एक नये युग के उदय का रास्ता साफ करने में लगा रहा। आचार्यश्री ने सामाजिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास के लिए युग निर्माण योजना की शुरुआत की। उन्होंने तपस्या से भरा एक सरल, अनुशासित जीवन जिया। कई बार हिमालय की यात्रा भी की और आध्यात्मिक प्रतिष्ठा और दूरदर्शिता प्राप्त की। पं. मदन मोहन मालवीय ने उनका यज्ञोपवीत संस्कार कर गायत्री मंत्र की दीक्षा दी।

आचार्यश्री ने व्यापक परिचय के साथ वैदिक वांगमय का हिन्दी में स्पष्ट अनुवाद किया और जीवन के सभी पहलुओं पर 3200 से अधिक ज्ञानवर्धक पुस्तकें लिखने की उपलब्धि हासिल की। उनके लेखन में आज की असंख्य समस्याओं के दूरगामी, दूरदर्शी और व्यावहारिक समाधान शामिल हैं। युगऋषि पं. श्रीराम शर्मा आचार्य द्वारा स्थापित शान्तिकुंज जहाँ नैतिक और आध्यात्मिक जागृति के लिए एक अकादमी है, वहीं पर ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, अध्यात्म के साथ विज्ञान को संश्लेषित करने का प्रयास करता है। अखण्ड ज्योति संस्थान और गायत्री तपोभूमि दुनिया भर में हजारों सामाजिक सुधार और साधना केन्द्र (शक्तिपीठ) के लिए महान योगदान दिया। भारतीय संस्कृति के उन्नायक ने आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक पुनरुत्थान करके 2 जून, 1990 गायत्री जयंती को ब्रह्मलीन हो गये।

प्रस्तावना

पर्यावरणीय चिंताएँ अकेले किसी देश की समस्या नहीं हैं और न कोई अकेला देश इनसे निपटने हेतु उपाय कर सकता है। यह वैश्विक समुदाय की जिम्मेदारी है कि सभी देश मिल-जुलकर इस समस्या से निपटने के रास्ते तलाशें और योजनाएँ क्रियान्वित करें। इसके लिए प्रयास तो किए गए हैं, अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन व संगोष्ठियों का भी आयोजन हुआ है, लेकिन उद्देश्य

के अनुरूप योजनाओं का क्रियान्वयन नहीं हो सका है। पर्यावरण दर्शन उस मूल्य से संबंधित है जो मनुष्य विभिन्न प्रकार के पर्यावरणीय अनुभव से जोड़ता है।[1] पृथ्वी और हमारा पर्यावरण तभी तक बचा रह सकता है, जब तक इस पर उपलब्ध प्राकृतिक संसाधन और पारिस्थितिकी तंत्र अपने मूल स्वरूप में सुचारु रूप से बने रहेंगे। वर्तमान में हमारे पर्यावरण के जरूरी घटक- वायु, ध्वनि, जल, मृदा आदि कई तरह के प्रदूषणों से संकटग्रस्त स्थिति में पहुँच चुके हैं। जल संकट की स्थिति के साथ जल प्रदूषण की स्थिति भी जटिल हो चुकी है। पृथ्वी पर उपलब्ध कुल जल का केवल ०.८ प्रतिशत ही मानव के पीने योग्य है और दुर्भाग्य से वह भी दूषित होता जा रहा है। जंगलों की संख्या में तीव्र ह्रास से पर्यावरणीय संकट और गहराता जा रहा है। मृदा प्रदूषण की स्थिति भी विकराल होती जा रही है।

प्रकृति स्वयं में एक सुव्यवस्था है। अपने मूल रूप में कहीं भी उसमें अस्त-व्यस्तता एवं अव्यवस्था नजर नहीं आती है। यह तो हमारे दृष्टि दोष का ही परिणाम है कि प्रकृति एवं उसके घटक हमें अव्यवस्थित एवं उजड़े हुए प्रतीत होते हैं और हम ही अपने दृष्टि दोष को नजर अंदाज करके सुव्यवस्था एवं सुरम्य सामंजस्य को विश्रृंखलित कर अव्यवस्था लाते हैं। हम प्राकृतिक पर्यावरण को नष्ट करते हैं और उसके स्थान पर कृत्रिम पर्यावरण को नैसर्गिक मानते हैं। वन में उगे पेड़-पौधे, पादप, घास एवं उसमें विचरते जीवों को नष्ट करते हैं; क्योंकि वहाँ पर गंदगी दीखती है। स्वच्छता एवं सफाई के रूप में हम इन सबको नष्ट कर देते हैं। हमें प्रकृति के विभिन्न घटकों के बीच की कड़ी नजर नहीं आती और यही कारण है कि पर्यावरण की विनाश लीला प्रारंभ हो जाती है।[2]

पर्यावरणीय नैतिक चिंतन

प्रकृति बुद्धिगम्य नहीं है। उसे बुद्धि के द्वारा बूझ पाना कठिन ही नहीं, असंभव है। प्रकृति हमारी माँ स्वरूप है। इसी कारण अथर्ववेद में **'माताभूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्या'**[3] कहा गया है; अर्थात धरती हमारी माता है और हम इसकी संतान हैं। संतान माता की गोद में पलती-बढ़ती-विकसित होती है। उसके ममत्व भरे आँचल में सुरक्षित एवं संरक्षित रहती है। यही उसका नैसर्गिक आश्रयस्थल है, परंतु जब वह इस आश्रयस्थली को नष्ट करने की कुचेष्टा करता है तो वह स्वयं को एवं अपनी माता, दोनों को क्षति पहुँचाता है। इससे दोनों को अपार नुकसान होता है। वर्तमान समय में प्रकृति में आ रहे विचित्र एवं अकल्पित बदलाव इसी का परिणाम हैं। हम सभी ने प्राकृतिक पर्यावरण एवं परिवेश की सूक्ष्म एवं स्थूल, दोनों कड़ियों को बुरी तरह से विनाश किया है। इसमें प्राकृतिक घटनाचक्र टूटा बिखरा है। इसके टूटने-बिखरने से मौसम में परिवर्तन आया है। जाड़े में गरमी, गरमी में वर्षा और वर्षा में सूखे का प्रकोप दिखाई पड़ रहा है। कहीं अनावृष्टि के कारण जीव तड़प रहे हैं तो कहीं अतिवृष्टि से आई बाढ़ से लाखों लोग एवं जीव बेघर हो रहे हैं। कहीं जंगलों में आग लग रही है तो कहीं फसलों को अपार नुकसान हो रहा है। आचार्य पं. श्रीराम शर्मा कहते हैं कि प्राकृतिक संसाधनों पर मानव के समान ही जीव-जंतुओं एवं पौधों का भी अधिकार है। इसलिए मानवीय नैतिकता के आधार पर प्राकृतिक संसाधनों का दुरुपयोग रोक देना चाहिये। पशु कल्याण की भावना भी पर्यावरणीय नैतिकता से संबंधित है, क्योंकि पशु भी प्राकृतिक पर्यावरण में रहते हैं। अतः पशुओं के अधिकारों का भी संरक्षण होना चाहिये।[4]

मौसम के परिवर्तन का प्रभाव इनसानी जिंदगी पर भी दृष्टिगोचर हो रहा है; क्योंकि प्रकृति में जड़ और जीव, दोनों के बीच गहरा संबंध है। अकेला इनसान उस धरती में जीवित रहने की कल्पना नहीं कर सकता है। हमारे जीवन के लिए कितने जीवों, वृक्ष-वनस्पतियों का योगदान है, इसकी गणना नहीं की जा सकती है। जो हम साँस लेते हैं, वह वनस्पति-जगत की देन है। हमारे आहार का आधार भी वही है। आवास-निवास का ढाँचा भी उन्हीं के माध्यम से खड़ा होता है। जो जल हमें जीवन देता है, प्यास बुझाता है, स्वच्छता एवं सफाई प्रदान करता है, वह नदियों की धाराओं से प्रवाहित होकर आता है या धरती को फाड़कर निकाला जाता है। नदियों में जल-धारा प्रवाहित होती रहे और भूजल का स्तर सामान्य बना रहे, इसके लिए मौसम चक्र का सामंजस्य रखना पड़ता है। यह सामंजस्य जितना गहरा एवं संतुलित होगा, हमारा जीवन उतना ही सुखी, संतुष्ट एवं समृद्ध होगा, क्योंकि हमारा जीवन प्रकृति के साथ अनन्य रूप से जुड़ा है। हम इससे जुदा एवं अलग होकर जीने की कल्पना भी नहीं कर सकते। प्रकृति हमारे जीवन का प्राण है, जिससे हमारा जीवन संचालित एवं परिचालित होता है। हमारा जीवन प्रकृति को प्रभावित करता है और प्रकृति हमें प्रभावित करती है। प्रभाव का यह क्षेत्र बड़ा ही व्यापक एवं विस्तृत है। यह प्रभाव आंतरिक एवं बाह्य, दोनों रूपों में होता है।[5]

जब प्रकृति में विक्षोभ आता है, तो हमारा जीवन प्रभावित होता है। प्रकृति विक्षोभ अमावस्या, पूर्णिमा, संक्रांति, ग्रहण काल आदि में अधिक होता है। कुछ अंतर्ग्रहीय दशाओं में भी यह विक्षोभ बढ़ा हुआ होता है। इन दिनों भूकंप, ज्वालामुखी, चक्रवात,

बाढ़, तूफान आदि की घटनाएँ अपने चरम पर होती हैं। इनके घटित होने से अपार जन-धन की हानि होती है। चारों तरफ हाहाकार मच जाता है। इससे निपटने के लिए कोई साधन काम नहीं आता है। घटना जब एक बार घट जाती है, तो उसे रोका नहीं जा सकता है; बस इतना हो सकता है कि जो हानि हुई होती है, उसकी क्षतिपूर्ति तीव्रता एवं तत्परता के साथ की जा सके और फिर से सब कुछ सामान्य हो सके। प्रदूषण ने प्रकृति के सभी पाँचों तत्त्वों को प्रदूषित किया है। जल, वायु, जमीन, आकाश सभी प्रदूषण के भार से आक्रांत हैं। इससे प्राकृतिक संतुलन समाप्त हो गया है। प्रदूषण ने जीवन को बोझ बना दिया है; क्योंकि इससे प्राकृतिक आपदाओं के साथ नई-नई, न समझ में आने वाली बीमारियाँ भी फैलने लगी हैं।

प्रकृति में प्रदूषण एवं अन्य संकटों के उपजने के मुख्य कारणों में मानवीय कारण आता है। इनसान ही है, जिसने प्रकृति का भीषण शोषण किया है। अपनी स्वार्थ-लिप्सा के लिए उसने ऐसा जघन्य कृत्य कर डाला है, जिसका दंड यदि ईश्वर दे तो इस धरती में विरले लोग ही बच पाएँगे, शेष तो इस दंड में समाप्त हो जाएँगे। इस दंड के विधान से इनसान के अस्तित्व को खतरा पैदा हो सकता है। इस पर भी इनसान अपने कुकृत्य से बाज नहीं आ रहा है। वह लगातार प्रकृति के विनाश-कार्य में जुटा हुआ है। प्रदूषण घटने के बजाय बढ़ रहा है। वन- जंगल कटते जा रहे हैं। नदियों के प्रदूषण का स्तर बढ़ रहा है। ग्लेशियर पिघल रहे हैं। समुद्र का स्तर ऊँचा उठ रहा है। आसमान के अभेद्य सुरक्षा कवच ओजोन में हुआ छेद लगातार बढ़ रहा है। ये ऐसे कारण हैं जिससे ग्लोबल वार्मिंग एवं अन्य अनेक प्राकृतिक एवं इनसानी आपत्तियाँ-विपत्तियाँ बढ़ती जा रही हैं। इससे इनसान एवं प्रकृति के बीच असंतुलन पैदा हो गया है और यह निरंतर अस्थिर एवं अनियंत्रित होता जा रहा है।

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा का मानना है कि हमें अपने मानवीय पुरुषार्थ से विरत नहीं होना चाहिए। यह मानना चाहिए कि अंधकार चाहे कितना भी सघन एवं डरावना क्यों न हो, एक दिन सवेरा तो आता है। प्रकृति में फिर से संतुलन हो, उसमें सभी तत्त्व समग्र रूप से पुनः क्रियाशील हों, पंच तत्त्वों में जल, जमीन, वायु, अग्नि, आकाश के बीच सामंजस्य हो, ऋतु चक्र पुनः सुनियोजित हों, मौसम फिर से अपने मूल रूप में स्थापित हो और परिवेश एवं पर्यावरण पुनः समृद्ध हों, इसके लिए हमें अपना पुरुषार्थ करना चाहिए। एक दीपक भी तमस की धरती को चीरने के लिए पर्याप्त होता है, बशर्ते कि वह जलने के लिए संकल्प व प्रदूषण मुक्त करने के लिए स्वयं अपनी ओर से प्रयास करना चाहिए। हमें पानी को नष्ट होने से बचाना चाहिए।

निष्कर्ष

भारत में पर्यावरणीय प्रदूषण को रोकने हेतु सबसे अच्छा उपाय यह है कि हरियाली बढ़ाई जाए, पेड़-पौधे लगाए जाएँ और पर्यावरणीय प्रदूषण को दूर करने हेतु सक्रिय कदम उठाए जाएँ। मनुष्य विकास करना चाहता है, लेकिन इस विकास के लिए पर्यावरण के साथ बेहतर तालमेल जरूरी है; क्योंकि पर्यावरण सुरक्षा के बिना विकास का कोई महत्त्व नहीं है और बिना विकास के पर्यावरण निरर्थक होगा। इसलिए यह जरूरी है कि हम सभी अपने पर्यावरण को स्वस्थ, समृद्ध, स्वच्छ व विकसित करने में अपना अमूल्य सहयोग दें।

आचार्य पं. श्रीराम शर्मा कहते हैं कि हमें वृक्षारोपण का संकल्प लेना चाहिए. अधिक संभव न हो तो अपने घरों में, आवास में गमलों में पेड़ पौधे लगाकर हरीतिमा संवर्द्धन करना चाहिए। अपने आसपास के परिवेश को स्वच्छ एवं साफ रखने के लिए सचेष्ट एवं क्रियाशील रहना चाहिए। इस कार्य को योजनाबद्ध तरीके से सामूहिक अभियान एवं आंदोलन का स्वरूप देना चाहिए। प्रकृति अपनी सुरक्षा स्वयं करने में समर्थ एवं सशक्त है। हमें तो बस इसका मात्र माध्यम ही बनना है। हमें प्रकृति के सभी तत्त्वों को समुचित सम्मान देकर उन्हें संरक्षण देने का संकल्प लेना चाहिए। यही स्वस्तिवाचन है। सभी के कल्याण में हमारा भी कल्याण निहित है। अतः प्रकृति को माता मानकर हमें उसका शोषण नहीं, भक्तिपूर्वक उसकी सेवा करनी चाहिए। यह भावना एवं पुरुषार्थ ही वर्तमान प्राकृतिक संकट का एकमात्र निदान है, जिसे हम सबको अवश्य करना चाहिए। यही हमारा सर्वोपरि पर्यावरणीय नैतिक चिंतन और मानव धर्म है।

संदर्भ सूची

1. सरकार, 2012, ष्पर्यावरण दर्शन: सिद्धांत से अभ्यास तक,ष विली-ब्लैकवेल, चिचेस्टर, वेस्ट ससेक्स।
2. अखण्ड ज्योति मासिक पत्रिका, फरवरी अंक, 2015, पृष्ठ 41
3. अथर्ववेद-12.1.12
4. अखण्ड ज्योति मासिक पत्रिका, फरवरी अंक, 2015, पृष्ठ 42
5. वही

हिन्दी साहित्य के काव्य चेतना में पर्यावरणीय अध्ययन

डॉ० विजय लक्ष्मी

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) श्रीराम सिंह धौनी, राजकीय महाविद्यालय जैंती (अल्मोड़ा) उत्तराखण्ड

भारतीय संस्कृति में वन और वनस्पति का अत्यधिक महत्व रहा है। प्राचीन काल में ऋषि-मुनि वनों में ही आश्रम बनाकर जीवन यापन किया करते थे। प्रकृति से उनका गहरा एवं अटूट संबंध था। जंतु, वृक्ष, नदियां, पहाड़ आदि सभी परस्पर रूप से जुड़े हुए हैं तथा पर्यावरण के प्रमुख अंग हैं। मानव, प्रकृति और पर्यावरण का गहरा संबंध है, क्योंकि समस्त जीव प्रकृति पर ही आश्रित है। इसलिए प्रकृति के अभाव में मानव उसके बिना सुरक्षित नहीं रह सकता। मानव शरीर पांच तत्वों से निर्मित है और पर्यावरण में भी पांच तत्वों यथा सूर्य का प्रकाश, मिट्टी के तत्व, जल, भूमि, वायु तत्वों का समावेश है। जीवन के अस्तित्व के लिए यह पांच तत्व बहुत आवश्यक हैं। मानव जीवन में पर्यावरण और प्रकृति का बहुत महत्व है। पर्यावरण ने आसान व सरल जीवन जीने के लिए हमें सभी सुविधा व संसाधन प्रदान किए हैं। पर्यावरण और आधुनिकीकरण के बीच एक सामंजस्य बिठाना आज के मानव के लिए बहुत बड़ी चुनौती है। वर्तमान में हमारा देश अनेकों प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं से जूझ रहा है और इसके लिए हरएक प्रयास करना हर मनुष्य का कर्त्तव्य है।

साहित्य हमेशा से ही मानव व समाज का मार्गदर्शन करता आया है। चाहे वह कविता हो या कहानी, उपन्यास या हिंदी साहित्य की कोई भी विधा। अपने-अपने तरीके से हिंदी साहित्य की अनेक विधाओं में पर्यावरण एवं प्रकृति का उल्लेख मिलता है। पर्यावरण शब्द का निर्माण 'परि' तथा 'आवरण' दो शब्दों से मिलकर हुआ है। एक आवरण जो हमें चारों ओर से घेरे हुए है अर्थात जो प्रत्येक जीव के साथ जुड़ा हुआ है, वह पर्यावरण है। पर्यावरण अपने आप में एक विशाल अर्थवत्ता को अपने कलेवर में समेटने वाला शब्द है। सामान्य व्यवहार में यह शब्द किसी प्राणी की जैविक और अजैविक स्थितियों की ओर इशारा करता है, जिसमें वह अपना महत्वपूर्ण जीवन व्यतीत करता है।

हिंदी साहित्य के अधिकांशत कवियों ने अपने काव्य में प्रकृति चित्रण को महत्वपूर्ण स्थान दिया है। हिंदी साहित्य में आधुनिक हिंदी आदिकाल से लेकर आधुनिक काल तक के साहित्य में प्रकृति को हमेशा से ही महत्वपूर्ण स्थान मिला है। छायावादी कवि सुमित्रा नन्दन पंत, सूर्यकान्त त्रिपाठी "निराला", महाकवि जयशंकर प्रसाद तथा छायावाद की महत्वपूर्ण कवयित्री महादेवी वर्मा के काव्य में पर्यावरण चेतना हर स्थान पर पाई जाती है। महाकवि जयशंकर प्रसाद ने तो प्रकृति को ही सौंदर्य और सौंदर्य को ही प्रकृति बताया है। प्रकृति की सुंदरता हर किसी को आकर्षित करती है। कवि एवं साहित्यकार भी पर्यावरण के प्रति सहज रूप से आकर्षित होते हैं। हिंदी साहित्य के काव्य में अधिकांशत कवियों ने प्रकृति चित्रण को विशिष्ट स्थान दिया है जिसमें छायावाद के प्रमुख कवि सुमित्रानंदन पंत ने अपनी कविताओं में प्रकृति का मनोहारी चित्रण किया है।

जयशंकर प्रसाद की अति महत्वपूर्ण कृति "कामायनी" में पर्यावरण और प्रकृति में अंतर बताया गया है, जिसमें प्रकृति और पर्यावरण दोनों एक नहीं बल्कि अलग-अलग रूप में है। कामायनी का रचनाकाल सन 1936 ई० है तथा प्रसाद जी ने इसमें प्रकृति के मोहक और विकराल दोनों रूपों का चित्रण किया है। प्रस्तुत पंक्तियों में प्रसाद जी ने कामायनी के इड़ा सर्ग में प्रकृति की सुन्दरता एवं पर्यावरण के महत्व को दर्शाया है-

[1]प्राची में फैला मधुर राग,
जिसके मंडल में एक कमल खिल उठा सुनहला भर पराग,
जिसके परिमल से व्याकुल हो श्यामल कलरव सब उठ जाग
आलोक रश्मि से बुने उषा अंचल में आंदोलन अमंद
करता प्रभात का मधुर पवन सब ओर वितरने को मरंद
उस रम्य फलक पर नवल चित्र सी प्रकट हुई सुंदरबाला

वह नयन महोत्सव को प्रतीक अम्लान नलिन की नव माला
सुषमा का मंडल सुष्मित सा बिखराता संसृति पर सुराग
सोया जीवन का तम विराग

हिंदी साहित्य के प्रसिद्ध कवि बिहारी ने अपनी प्रसिद्ध कृति बिहारी सत्सई में अनेकानेक दोहों के माध्यम से प्रकृति एवं पर्यावरण का भिन्न-भिन्न चित्रण किया है। उन्होंने प्रकृति के माध्यम से ग्रीष्म ऋतु की गर्मी से जंगल में व्याकुल जीव यथा मोर, हिरन, शेर आदि को व्यथित दिखलाया है-

[2]कहलाने एकत रहत अहि मयूर मृग बाघ।
जगतु तपोवन सो कियोदीरघ, दाघ, निदाघ।।

साथ ही ग्रीष्म ऋतु में ऐसी भयंकर लू चलती है कि मानो जैसे लग रहा हो चारों ओर आग ही आग बरस रही है। जीव-जन्तु के साथ-साथ इस तीव्र गरमी से हर एक प्राणी व्याकुल है-

[3]नाँहि न ये पावक प्रबल, लुएँ चलत चहुंपास।
मानहु विरह वसन्त के, ग्रीपलेत उसास।।

प्रस्तुत दोहे में पानी की समस्या से अवगत कराते हुए ग्रीष्म ऋतु की भरी दोपहर के प्यासे जेठ महीने में पथिक पानी ढूंढ कर परेशान हो गए हैं लेकिन उन्हें कहीं भी पानी नहीं दिख रहा और पानी नहीं मिल पाने के कारण वह तरबूज को खाकर ही उसे अपनी प्यास बुझा रहे हैं। इस प्रकार बिहारी ने अपने दोहों में प्रकृति और पर्यावरण का सुंदर सामंजस्य बिठाया है यथा-

[4]प्यासे दोपहर जेठ के, थके सबै जल शोधि।
मरु धर पायमती रही, मारू कहति पयोधि।।

ग्रीष्म ऋतु के अलावा बिहारी ने अपने अन्य दोहे में वर्षा ऋतु के माध्यम से प्रकृति का सुंदर वर्णन किया है की किस प्रकार वर्षा ऋतु के घनेरे अंधेरे और रात में कुछ भी अंतर नहीं लग रहा है मानो ऐसा लग रहा हो जैसे दिन में ही रात्रि हो गई हो-

[5]पावस घन अँधियार में, रहो भेद नहीं आन।
राति घोस जान्यो परे, लखि चकई चकवान।।

इसके अलावा तुलसीदास जी के रामचरितमानस में पर्यावरण को महत्व देते हुए पौधों का रोपण करने का चित्रण है, जिसमें माता सीता और श्री राम के भ्राता लक्ष्मण जी पौधों का रोपण कर रहे हैं-

[6]तुलसी तरूवर विविध सुहाए।
कहुं-कहुं सिय, कहुं लखन लगाए।।

समसामयिक संदर्भो से संबंधित हिंदी कविता को समकालीन हिंदी कविता कहा जाता है जो की आधुनिक युग की अति विशिष्ट काव्य धारा है। समकालीन कवियों ने भी पर्यावरण प्रदूषण एवं पर्यावरण संरक्षण को विशेष रूप से अपने काव्य में स्थान दिया है तथा अनेक कविताओं के माध्यम से जन-जन को जागरूक किया है। पर्यावरण संतुलन बनाए रखने में वृक्षों और वनस्पतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। समकालीन कवि रघुवीर सहाय अपनी कविता द्वारा जंगल, पहाड़ और हरे भरे मैदानों जैसे प्राकृतिक संसाधनों के घटते स्तर को देखते हुए इसको चिंता का विषय बताया है, वे कहते हैं--

[7]"यह पहाड़, जंगल, मिट्टी के मैदान हरे,
छोटे हो रहे हैं जो इतिहास में बड़े देश के प्रमाण थे
इनकी विशालता का गुणगान अब सुनाई नहीं पड़ता"

समकालीन कविता के सभी कवियों ने किसी न किसी रूप में पर्यावरण की समस्याओं पर महत्वपूर्ण कविताएं लिखी हैं। मनुष्य और पर्यावरण के भावुक संबंध को समकालीन कवियों के द्वारा रेखाद्यकित किया गया है। समकालीन कविता में पर्यावरण की चिंता की यदि बात करते हैं तो वह चिंता हमें अज्ञेय के काव्य से समझना आवश्यक है। [8]"अज्ञेय की कविता का अर्थ शायद उसे मछली से है जिसे सभी दिशाओं से सागर घेरता है। मछली अर्थात अस्तित्व या जिजीविषा जल के बाहर निकाल दी गई मछली, तड़पती छटपटाती और हाँफती है। क्या चाहती है वह जीना, मुक्ति। यही अज्ञेय की कविता की सही जमीन है।"

आधुनिकीकरण की होने एवं सुविधाओं की लालसा में लिप्त मनुष्यों में पेड़ों एवं जंगलों की सुंदरता और उनके रखरखाव का तथा वृक्ष कटान का बहुत बुरा प्रभाव हो रहा है आज का मानव यह बात बिल्कुल भूल गया है की प्रकृति के दुरुपयोग एवं भौतिक सुखों की लालसा के कारण भविष्य में बहुत ही बिना भयानक स्थिति हो सकती है जयशंकर प्रसाद के कामायनी में प्रकृति स्वयं पर हुए अत्याचार का विरोध करती हुई कहती है-

[9]प्रकृति रही दुर्जय, पराजित, हम सब भूले थे मद में,
भोले थे, हाँ तिरते केवल सब विलसता के मद में,
वे सब डूबे डूबे, उनका विभव, बन गया पारावार,
उमड़ रहा था देव सुखों पर दुख जलधि का नाद अपार।।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अपने काव्य के माध्यम से हिंदी साहित्य के प्रत्येक कवि ने पर्यावरण के प्रति जन-जागृति लाने का महत्वपूर्ण एवं अथक प्रयास किया है। प्रकृति से वर्णित उनकी अधिकतर कविताओं में पर्यावरण के प्रति महती रुचि एवं गंभीरता दृष्टिगोचर होती है। हिंदी साहित्य मानव को प्रकृति से सामंजस्य से स्थापित कर उसके उचित उपयोग की संस्तुति करता है। हिंदी साहित्य की कविताओं में मानव और उसके अस्तित्व को बचाने की चेतावनी पर्यावरण में चिंता की ओर संकेत करती रही है। आधुनिक समय में पर्यावरण को केंद्र में रखकर अनेकों रचनाएं लिखी जा रही हैं। इस प्रकार पर्यावरण एवं प्रकृति की समृद्ध परंपरा हमारे हिन्दी साहित्य में रही है, वह आज भी उतनी ही प्रासंगिक है।

प्रकृति और जीवन में सामंजस्य बिठाकर ही हम पर्यावरण को सुरक्षित रख सकते हैं। वन्य जीव और प्राकृतिक संपदा को बचाना ही मानव जीवन का संरक्षण होगा। प्रत्येक नागरिक का परम कर्तव्य होना चाहिए कि वह पर्यावरण के संरक्षण एवं संवर्धन के लिए उचित प्रयास करें तथा प्रकृति को हरा-भरा बनाने में अपना महत्वपूर्ण योगदान प्रदान करें, जिससे भविष्य में होने वाली अनेक गंभीर समस्याओं से बचा जा सके।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची-

1. कामायनी-लेखक जयशंकर प्रसाद, इड़ा सर्ग, पृष्ठसंख्या-168, मुद्रक-चन्द्रप्रकाश ऐरन, भारती-भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद
2. बिहारी सतसई, रचनाकार-कवि बिहारी लाल, दोहा संख्या- 569, पृष्ठसं०-185
3. वही, दोहा संख्या-568
4. वही, दोहा संख्या-601, पृष्ठसंख्या-196
5. वही, दोहा संख्या-571, पृष्ठ संख्या-186
6. रामचरित मानस, रचनाकार-तुलसीदास
7. प्रतिनिधि कविताएँ, रचनाकार-रघुवीर सहाय, संपादक-सुरेश शर्मा, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या-127, संस्करण- 1994
8. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी-समकालीन कविता, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली पृष्ठ संख्या-09
9. कामायनी-लेखक जयशंकर प्रसाद, चिन्ता सर्ग, पृष्ठसंख्या-07-08, मुद्रक-चन्द्रप्रकाश ऐरन, भारती-भण्डार, लीडर प्रेस, इलाहाबाद

पर्यावरण प्रदूषण का जीवन पर प्रभाव

डॉ० प्रमोद नाग

सहायक प्राध्यापक, आचार्या इंस्टिट्यूट ऑफ ग्रेजुएट स्टडीज, हिंदी विभाग, बेंगलुरु, कर्नाटक

मानव के चारों ओर पाया जाने वाला पारिस्थितिक तंत्र पर्यावरण कहलाता है। पर्यावरण हमारे जीवन का मूल आधार है। यह न केवल मानव अपितु सभी चेतन–अचेतन प्राणियों एवं वनस्पतियों के उद्भव, विकास तथा अस्तित्व का आधार है। पर्यावरण शब्द श्परि और आवरणश दो शब्दों से मिलकर बना है। पर्यावरण अर्थात चारों ओर विद्यमान आवरण। पर्यावरण का अर्थ उन सभी प्राकृतिक दशाओं एवं वस्तुओं से लिया जाता है, जो हमारे चारों ओर व्याप्त है। यह हमें साँस लेने के लिए हवा, पीने के लिए जल, खाने के लिए भोजन और रहने के लिए स्थान भी प्रदान करता है। पर्यावरण का निर्माण हमारे चारों ओर विद्यमान जैविक, अजैविक तत्वों द्वारा होता है। इनमें पारस्परिक सम्बन्ध एवं संतुलन एक स्वच्छ पर्यावरण का निर्माण करते हैं। मानव के भौतिक सुखों की पूर्ति के लिए वैश्विक स्तर पर पर्यावरण का अनियंत्रित दोहन किया जा रहा है, जिसके फलस्वरूप अनेक पर्यावरणीय प्रदूषण उत्पन्न हो गए हैं, जिसका दुष्परिणाम यह हुआ कि मानव का स्वास्थ्य इससे अधिक प्रभावित हुआ। प्राणी मात्र के जीवन के लिए संतुलित पर्यावरण की आवश्यकता होती है तथा एक स्वच्छ और संतुलित पर्यावरण ही उसके स्वस्थ जीवन की कसौटी है। संतुलित पर्यावरण में प्रत्येक जैविक घटक निश्चित मात्रा और अनुपात में उपस्थित रहते हैं परन्तु कभी–कभी वातावरण में एक तथा अनेक घटकों की मात्रा एवं अनुपात या तो आवश्यकता से अधिक हो जाता है अथवा उसमें अन्य हानिकारक घटकों का प्रवेश हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है, जो मानव के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

प्रदूषण का अर्थ है– वातावरण का दूषित होना। 'प्रदूषण' संस्कृत भाषा का शब्द है। इसमें मुख्य शब्द है 'दूषण', जिसका अर्थ है दोष। 'प्र' उपसर्ग लगने से इसका अर्थ हो जाता है पर्यावरण को गन्दा या दूषित करने वाला तत्व। आज हमारा पर्यावरण दिन–प्रतिदिन गन्दा होता जा रहा है। जब वातावरण में कुछ हानिकारक तत्व आ जाते हैं, तो यह वातावरण के संतुलन को असंतुलित कर देते हैं अर्थात वातावरण को दूषित कर देते हैं। यही पर्यावरण प्रदूषण कहलाता है।

पर्यावरण प्रदूषण एक विश्वव्यापी समस्या है। आज विश्व के प्रायः सभी देश प्रदूषण की समस्या से ग्रसित हैं। इसके साथ जीवन के अस्तित्व का प्रश्न जुड़ गया है। पर्यावरण का प्रदूषण यदि इसी प्रकार बढ़ता रहा, तो मानव समाज और पशु जगत के लिए जीवित रहना कठिन हो जायेगा। साथ ही साथ वनस्पतियों के लिए भी संकट उत्पन्न हो जायेगा। प्रदूषण वास्तव में सभ्यता के विकास का परिणाम है। उद्योग धंधों के विकास तथा जनसंख्या वृद्धि ने पर्यावरण प्रदूषण की गंभीर समस्या उत्पन्न कर दी है। वायुमंडल, जलमंडल, स्थलमंडल और जैवमंडल पर्यावरण के मुख्य घटक हैं। जीवन इन्हीं चार मुख्य घटकों पर निर्भर करता है। जैसा मनुष्य का वातावरण रहेगा, वैसा ही उसका स्वास्थ्य भी रहेगा।

वर्तमान समय में विकास ने जहाँ एक ओर पर्यावरण संबंधित अनेक परिवर्तनों को जन्म दिया है और मानव जाति को जीने के तरीकों का ज्ञान कराया है, वहीं दूसरी ओर भौतिकवादी प्रवृत्ति के कारण विकास की गति दिशाहीन होने लगी है। आज परिस्थिति ऐसी है कि पृथ्वी का प्रत्येक प्राणी पर्यावरण की समस्या से जूझ रहा है। संसार में मनुष्य के अतिरिक्त अन्य प्राणी भी इससे अछूते नहीं हैं। प्रदूषित पर्यावरण ने उन्हें भी अपनी चपेट में ले रखा है। एक ओर मनुष्य इस प्रदूषण का सर्वाधिक भुक्तभोगी है, तो दूसरी ओर विडम्बना यह है कि वह इस प्रदूषण के लिए सर्वाधिक उत्तरदायी भी है। पृथ्वी के पर्यावरण को प्रदूषित करने में मनुष्य ने अहम भूमिका निभाई है। वृक्षों, वनों एवं वनस्पतियों की व्यापक स्तर पर अंधाधुंध कटाई और उसकी भरपाई न होने की स्थिति में पर्यावरण असंतुलित हो गया है। अतः अब पर्यावरण के संतुलन का प्रश्न मानव जाति के भावी अस्तित्व के साथ जुड़ गया है।

जनसंख्या में बढ़ोत्तरी, वनों की अंधाधुंध कटाई आदि अनेक कारणों से प्रदूषण की समस्या निरंतर बढ़ती जा रही है। प्राणियों के स्वास्थ्य की दृष्टि से वायु प्रदूषण अत्यन्त ही घातक है। एक व्यक्ति एक दिन में 22 हजार बार श्वांस लेता और छोड़ता है। हालांकि जब हम व्यायाम करते हैं या घूमते हैं या फिर दौड़ते और तेज चलते हैं, तो उस हैंसमय साँस लेने की दर बढ़ जाती है। एक व्यक्ति को प्रतिदिन लगभग 550 लीटर ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। दमा, तपेदिक, ब्रांकाइटिस आदि फेफड़े सम्बंधित रोग ऑक्सीजन की कमी और प्रदूषित वायु के ग्रहण करने से होता है।

कारखानों की चिमनियों, वाहनों से निकलने वाला धुआँ, परिवारों में जलने वाली अँगीठियों आदि से निकलने वाला धुआँ वायु को दूषित करता रहता है। जितने भी औद्योगिक नगर हैं, उन सभी में वायु प्रदूषण की भयंकर समस्या है। कारखानों की चिमनियों से कभी-कभी जहरीली गैसें भी निकलती हैं। ये जहरीली गैसें न सिर्फ प्राणीमात्र के जीवन को संकट में डालती हैं, वरन पेड़-पौधों को भी नुकसान पहुँचाती हैं। एक अनुमान के अनुसार पिछले कई वर्षों में कई टन आर्सेनिक, एंटीमनी, कोबाल्ट आदि गैसें वायुमण्डल में समा चुके हैं।

औद्योगीकरण, नगरीकरण एवं मानव जनसँख्या में वृद्धि के कारण जल की मांग में तीव्र वृद्धि हुई है और गुणवत्ता में भारी गिरावट आई है। कल-कारखानों से निकलने वाला गंदा पानी, रसायन, महानगरों का मल-मूत्र आदि के मिलने से नदियों, तालाबों का पानी गन्दा हो जाता है। बड़े-बड़े शहरों में नालियों का पानी नदियों में डाला जाता है। इससे नदियों का पानी तो गन्दा होता ही है, साथ ही उनमें कीचड़ भी जमने लगता है। इससे पानी का बहाव भी कम होने लगता है। नदियों, झीलों, तालाबों आदि में नहाने, कपड़े धोने, पशुओं को नहलाने से पानी में गन्दगी बढ़ती है। प्रदूषित जल में उपस्थित जीवाणुओं, परजीवियों एवं कृमियों के कारण अनेक प्रकार के रोगों जैसे पीलिया, टाइफाइड, हैजा, पेचिश आदि के होने का खतरा बढ़ जाता है। प्रदूषित पानी में स्नान करने से दाद, खुजली आदि त्वचा सम्बन्धी कई बीमारियां भी हो जाती हैं। प्रदूषित जल फसलों के लिए भी हानिकारक होता है। प्रदूषित जल अन्ततः समुद्र में पहुँचकर समुद्र में रहने वाले विभिन्न प्रकार के जीव-जन्तुओं को भी इसके दुष्परिणाम भोगने के लिए विवश करता है।

ध्वनि प्रदूषण मानव द्वारा उत्पन्न किया गया संकट है, जो निरन्तर बढ़ता ही जा रहा है। कारखानों की मशीनों, लाउडस्पीकर, वाहनों इत्यादि से उत्पन्न ध्वनि प्रदूषण जीवन की शांति को भंग कर रहा है। अधिक तेज ध्वनि कानों में पड़ने पर उसके अनेक दुष्परिणाम भी दिखाई पड़ते हैं। कल-कारखानों की अधिकांश मशीनें तेज ध्वनि से चलती हैं, ऐसे वातावरण में काम करने वाले मजदूर प्रायः बहरेपन का शिकार हो जाते हैं। साथ ही उनमें अनिद्रा, तनाव, उच्च रक्तचाप, पाचन एवं हृदय सम्बन्धी रोग आदि का भी खतरा बढ़ जाता है। नोबेल पुरस्कार विजेता रॉबर्ट काक ने ध्वनि प्रदूषण के प्रति अपने विचार प्रकट करते हुए कहा है- "ध्वनि प्रदूषण आधुनिक युग का बहुत बड़ा अभिशाप है। इसके विरुद्ध विश्व स्तर पर प्रयत्न किया जाना चाहिए।"

मृदा की गुणवत्ता और उर्वरा शक्ति को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करने वाले किसी भी पदार्थ का भूमि में मिलना भूमि प्रदूषण कहलाता है। रासायनिक खाद, कीटनाशक दवाओं आदि के रूप में रासायनिक पदार्थ का प्रयोग भूमि की उपजाऊ शक्ति को कम करता है तथा खाने के पदार्थों में अनेक ऐसे तत्वों का समावेश करता है, जिनके कारण अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। डी.डी.टी. जैसे विषैले पदार्थ मिट्टी में मिल जाते हैं और वनस्पतियों, अनाजों, सब्जियों, फलों आदि के द्वारा शरीर में पहुंचकर रोगों को निमंत्रण देते हैं। भूमि प्रदूषण से बच्चों का मानसिक और शारीरिक विकास प्रभावित होता है।

रेडियोएक्टिव प्रदूषण का प्रमुख कारण परमाणु ऊर्जा है। परमाणु ऊर्जा के प्रयोग एवं परमाणु कणों के विस्फोटों एवं परीक्षणों के फलस्वरूप वायुमण्डल में रेडियोधर्मिता का समावेश होता है। इसके कारण अनेक प्रकार के रोग फैलते हैं। हजारों मानव एवं पशु मरते हैं, गर्भस्थ शिशु विकलांग बनते हैं तथा वनस्पतियों तक के जीवन के लिए संकट उत्पन्न हो जाता है। वनों की अंधाधुंध कटाई से वायुमंडल में कार्बन डाइऑक्साइड और ऑक्सीजन का अनुपात बिगड़ रहा है, जिससे मौसम प्रभावित हो रहा है। विभिन्न प्रकार के बम के परीक्षणों से भी वातावरण में रेडियोधर्मी प्रदूषण बढ़ रहा है।

2 दिसंबर 1984 की रात में भोपाल में स्थित यूनियन कार्बाइड कीटनाशक कारखाने से जहरीली गैस रिसने से हजारों लोग मारे गए और लाखों लोग विभिन्न प्रकार की बीमारियों के शिकार हो गए। इसी प्रकार 5 जनवरी 1985 को केरल में तथा 4 दिसम्बर 1985 को दिल्ली में गैसों के रिसाव के कारण लाखों लोगों का जीवन संकट में पड़ गया था। मथुरा के तेल शोधक कारखाने द्वारा होने वाले वायु प्रदूषण से पचास किलोमीटर दूरी पर स्थित ताजमहल के पत्थरों के खराब होने का खतरा उत्पन्न हो गया है। तेल शोधक कारखानों से निकलने वाली गैसें मथुरा के आस-पास रहने वाले जीवों के लिए काफी नुकसानदायक है।

पर्यावरणीय सुरक्षा के लिए व्यक्ति, संस्था और सरकार सभी को मिलजुल कर प्रयास करना होगा। जन जागरुकता हेतु पर्यावरणीय शिक्षा विद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में एक विषय के रूप में अनिवार्य होना चाहिए। समाचार पत्र, रेडियो, दूरदर्शन, संगोष्ठी, नुक्कड़ नाटक आदि के माध्यम से पर्यावरण के दुष्प्रभाव को बता कर लोगों को जागरुक किया जा सकता है। यह अति आवश्यक है कि बढ़ते प्रदूषण को यथा शीघ्र रोका जाए।

प्रदूषण को समाप्त करने में वृक्ष हमारी सर्वाधिक सहायता कर सकता है। अतएव अधिक से अधिक वृक्ष लगाया जाना आवश्यक है। वायु प्रदूषण से स्वास्थ्य रक्षा हेतु पर्यावरण को धूल, धुआँ और विभिन्न जहरीली गैसों से मुक्ति दिलानी होगी। शुद्ध वायु अनेक रोगों के लिए औषधि का कार्य करती है। कारखानों की चिमनियों की ऊँचाई बढ़ाकर एवं उनमें इस प्रकार के फिल्टर लगाये जाएँ, जो प्रदूषणकारी तत्वों को वायुमण्डल में न जाने दे। कल- कारखानों को आबादी वाले क्षेत्र से दूर स्थापित किया जाना चाहिए एवं अधिक आवाज करने वाले कारखानों की मशीनों में साइलेंसर का प्रयोग किया जाना चाहिए। प्राणियों के लिए जल अत्यंत महत्वपूर्ण तत्व है। जल प्रदूषण को उचित प्रबंधन द्वारा कम किया जा सकता है तथा आम जनता को जागरूक कर इसके कुप्रभावों को भी कम किया जा सकता है। जल प्रदूषण को रोकने के लिए जल शुद्धिकरण के उपाय करने के साथ ही गंदे पानी को भूमिगत करने के उपायों पर भी विचार करना आवश्यक है। सभी प्रकार के प्रदूषणों को रोकने के लिए जनसंख्या पर नियंत्रण अति आवश्यक है। प्रदूषण के विरुद्ध साधन एवं उपाय करना प्रत्येक व्यक्ति, समाज एवं सरकार का दायित्व है। इस समस्या के प्रति उपेक्षा जीवन और अस्तित्व के लिए संकट उत्पन्न कर देगा। इसलिए समय रहते इसका निवारण अत्यन्त आवश्यक है।

सन्दर्भ ग्रन्थः

1. नए निबंध - श्यामजी गोकुल वर्मा, प्रथम संस्करण- 2006, विद्या विहार प्रकाशन, नई दिल्ली- 110002
2. सामयिक हिन्दी निबन्ध - डॉ. राजेश्वर प्रसाद चतुर्वेदी एवं महेन्द्र कुमार, नवम संस्करण - एम. आई. पब्लिकेशन्स, आगरा - 282002
3. https://www.ijmra.us/project;20doc/2019/IJRSS_APRIL2019/IJRSS%20April19ManojRt.pdf

जैन धर्म एवं पर्यावरणीय चेतना

श्रीमती सोनू जैन

विभागाध्यक्ष इतिहास विभाग, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय गुना (मध्य प्रदेश)

सृष्टि के प्रारंभ से ही मनुष्य ने प्रकृति के संरक्षण में ही अपना विकास किया है। इसी प्रकृति से साम्य बनाते हुए उसने इस पृथ्वी को अपने रहने योग्य बनाया है। परंतु असंतुलित विकास ने मनुष्य और प्रकृति के सहचर्य पर प्रश्न चिन्ह लगा दिया और इस असंतुलन का प्रभाव प्राकृतिक संसाधनों के साथ-साथ पर्यावरण के ऊपर भी दिखाई देता है। भारतीय धार्मिक परंपरा में प्रकृति को जीवन दायिनी मानकर उसके संरक्षण पर विशेष बल दिया है चाहे वह वैदिक विचार हो अथवा श्रमण परंपरा में जैन धर्म की मान्यताएं। जैन धर्म के पंच महाव्रत में सत्य, अहिंसा, अपरिग्रह, अस्तेय और ब्रह्मचर्य के सिद्धांत इसकी मौलिकता और नैतिकता के मुख्य आधार हैं। इसमें अहिंसा महाव्रत प्रकृति और पर्यावरण संरक्षण के दिशा का उच्चतम प्रमाण है। जैन धर्म में अहिंसा की उच्चतम व्याख्या की गई है अर्थात मन, वचन, काय से प्राणी मात्र के प्रति हिंसा ना करना। यहां प्राणी मात्र से आशय एक इंद्रिय जीव से लेकर पंच इंद्रिय जीव के प्रति दया भाव रखना है। इसके अंतर्गत एक कोशिकीय जीव से लेकर वनस्पतियां और सभी जीव सम्मिलित हैं। इसीलिए जैन धर्म में प्रकृति के उपभोग के स्थान पर उपयोग करने की बात कही गई है। पर्यावरणीय संहिता की रक्षा जैन सिद्धांतों का मूल आधार है आचार्य उमा स्वामी ने अपना प्रसिद्ध सूत्र दिया 'परस्परोप ग्रहो जीवानाम' अर्थात प्रत्येक जीव एक दूसरे पर आश्रित है और उसकी सुरक्षा हमारा कर्तव्य है। पर्यावरण का मुख्य आधार यही जैव संतुलन है।

जैन तीर्थंकरों के प्रतीक एवं पर्यावरण उपांग

24 जैन तीर्थंकरों में से 19 तीर्थंकरों के प्रतीक पर्यावरणीय चेतना के प्रतीक के रूप में स्वीकार किए जा सकते हैं। इसे निम्न प्रकार विभाजित किया जा सकता है-

घरेलू पशु- बैल, भैंसा, सूकर, बकरा, घोड़ा

वन्यजीव- हाथी, बंदर, गैंडा, सेही, हिरण, सिंह

जलीय जीवख़ मछली, मगर

उभयचर- कछुआ

पक्षी- चकवा

सरीसृप- सर्प

जलीय वनस्पति- कमल, नीलकमल

वृक्ष- कल्पवृक्ष

जैन तीर्थंकरों के यह प्रतीक पारिस्थितिकी के अद्‌भुत ज्ञान और संतुलन का संदेश देते हैं। इनमें वन्य जीव, जलीय जीव, उभयचर, पक्षी, सरीसृप और घरेलू पशुओं के रूप में पर्यावरण मित्र श्रृंखला का संयोजन दिखाई देता है।

जैन तीर्थंकरों से संबंधित वृक्ष-

जैन तीर्थंकरों ने अपने-अपने युग में जिन वृक्षों के नीचे तपस्या की उनके नाम इस प्रकार हैं-

ऋषभदेव- वट वृक्ष

अजित नाथ- सर्पपर्ण वृक्ष संभवनाथ-साल वृक्ष

अभिनंदन नाथ- देवदार वृक्ष

सुमति नाथ- प्रियंगु वृक्ष

पदम प्रभु- प्रियंगु वृक्ष

सुपार्श्व नाथ- शिरीष वृक्ष
चंद्र प्रभु- नाग वृक्ष
पुष्पदंतख्र साल वृक्ष
शीतल नाथ- प्लक्ष वृक्ष (पाकड़) श्रेयांश नाथख्र तेंदूका वृक्ष
वासु पूज्य- पाटला वृक्ष
विमलनाथ-जंबू वृक्ष
अनंतनाथ- पीपल वृक्ष
धर्मनाथ- दधि पर्ण वृक्ष
शांतिनाथ- नंद वृक्ष
कुंथूनाथ- तिलक वृक्ष (रोली)
अरहनाथ- आम्र वृक्ष
मल्लिनाथ- कुंप अशोक वृक्ष
मुनिसुब्रत नाथ- चंपक वृक्ष
नमि नाथ-वकुल वृक्ष (मौल श्री) नेमिनाथ- मेष श्रृंग वृक्ष
पार्श्वनाथ- धव वृक्ष
महावीर स्वामी- साल वृक्ष

इन वृक्षों को जैन धर्म में पूज्य और ना काटे जाने योग्य माना गया है। जैन तीर्थंकरों से जुड़े इन वृक्षों का संरक्षण पर्यावरणीय चेतना का विकास करता है। कारण भले ही धार्मिक हैं लेकिन यह पर्यावरण संरक्षण का भी बेहतर उपाय है।

अष्ट प्रतिहार्य में अशोक वृक्ष-

जैन मंदिरों में जिन प्रतिमाओं के समीप अष्ट प्रतिहार्य या अष्ट मंगल का अंकन किया जाता है। जिनमें से एक प्रतिहार्य अशोक का वृक्ष भी है। यह प्रतिहार्य जैन तीर्थंकर के समवशरण स्थल में मंगल द्रव्य रूपी संपदा के रूप में होते थे। अशोक वृक्ष इसीलिए जैन धर्म में पूज्य और संरक्षण योग्य माना गया है।

सोलह स्वप्न में वर्णित प्रतीक-

जैन धर्म की मान्यता के अनुसार तीर्थंकर के माता के गर्भ में आने पर माता को सोलह स्वप्न आते हैं। महावीर स्वामी के जन्म के पूर्व भी उनकी माता त्रिशला को सोलह स्वप्न आए थे। इन सोलह स्वप्नों में वर्णित कुछ प्रतीक, जिनका स्वप्न विचार जैन परंपरा के अनुसार भले ही महावीर स्वामी के जीवन चरित्र और उनके व्यक्तित्व को दर्शाते हैं लेकिन इनका संबंध पर्यावरणीय चेतना और उसके अंतर्सबंधों से भी निर्धारित किया जा सकता है। इन सोलह स्वप्नों में श्वेत वृषभ, सिंह, कमलासन लक्ष्मी, पुष्पमालाएं, मछलियां, कमल जलाशय, समुद्र, धूम्र रहित अग्नि का मानव जीवन और पर्यावरण से घनिष्ठ संबंध है।

चंद्रगुप्त मौर्य के सोलह स्वप्न-

जैन परंपरा के अनुसार अंतिम श्रुत केवली आचार्य भद्रबाहु के शिष्य सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य को उज्जयनी प्रवास के दौरान रात्रि में सोलह स्वप्न आए थे जिसका अर्थ आचार्य भद्रबाहु ने बताते हुए कलयुग की संभावित घटनाओं और व्यवहार से उनका संबंध निर्धारित किया था। इन सपनों में कल्पवृक्ष की टूटी हुई टहनी, सीमा तोड़ता समुद्र, 12 फन वाला सर्प, ऊंट पर बैठा राजकुमार, काले हाथी, दो बछड़े, खीर खाते हुए कुत्ते, जुगनू, जल सरोवर, पत्थर पर कमल, हाथी पर बंदर जैसे स्वप्न विचार तीर्थंकर की माता को आए सोलह स्वप्नों के विपरीत नकारात्मक प्रतीक दर्शाते हैं। इसे ऐसे भी समझा जा सकता है कि यह नकारात्मक स्वप्न मानव के असंतुलित विकास के भयावह परिणाम है। जिन्हें हम आज भले ही धर्म की परिधि में रखकर देख रहे हैं लेकिन वास्तविक रूप से यह पर्यावरणीय क्षति और संकट का पूर्वाभास थे। और यह वर्तमान के लिए चेतावनी भी थी।

जैन धर्म और अपरिग्रह– जैन धर्म में संतुलन पर बल दिया गया है। अतः संसाधनों के अतिशय संचयन का निषेध कर उनका आवश्यकता अनुरूप उपयोग पर बल दिया गया। आज के दौर में भौतिकवादी अर्थयुग अति संचयन की ओर अग्रसर हो गया है। इसीलिए जैन धर्म में अपरिग्रह अर्थात संचयन का निषेध सिद्धांत दिया गया। अपरिग्रह जहां एक ओर नैतिकता और अध्यात्म का उन्नयन करता है वहीं दूसरी ओर सतत् विकास की वैज्ञानिक अवधारणा का समर्थन करता है। सतत् विकास का आशय प्राकृतिक संसाधनों का उतना ही उपयोग किया जाए जितना आवश्यक हो शेष संसाधन भावी पीढ़ी के लिए संरक्षित कर दिए जाएं। इस प्रकार अपरिग्रह स्वयं ही पर्यावरण चेतना का मुख्य समर्थन करता है।

अपरिग्रह का सिद्धांत समाज में संसाधनों के उचित वितरण का भी समर्थक है अर्थात उपयोग की जाने वाली वस्तु का अति संचयन नहीं होगा तो उसका वितरण स्वतः ही सभी के मध्य होगा। इस प्रकार यह एक प्रकार से समाजवाद के राजनीति दर्शन सिद्धांत का समर्थक भी प्रतीत होता है।

इस प्रकार जैन धर्म पर्यावरणीय चेतना का प्रबल पक्षकार दिखाई देता है जो वर्तमान समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है।

संदर्भ–

– आचार्य श्री विद्यासागर जी के प्रवचन
– गणनी ज्ञानमति माताजी के प्रवचन
– मुनि श्री प्रमाण सागर जी का शंका समाधान
– जैन परंपरा में उल्लिखित तथ्य और संस्मरण
– इंटरनेट पर जैन धर्म की विभिन्न वेव साइट्स पर दिए गए तथ्य

पर्यावरण और शहरी प्रकृति का प्रभाव

डॉ० ममता धाकड़

सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान, शासकीय आदर्श महाविद्यालय हरदा (म.प्र.)

सारांशः-

ग्रामीण क्षेत्र में जनसंख्या वृद्धि, कृषि क्षेत्र में गिरावट और पर्यटन के परिणामस्वरूप शहरी क्षेत्र और शहरों में अधिक आर्थिक क्षेत्र और विरासत का जन्म हो रहा है जिससे सामान्य मुद्दे और निर्वाचितियां पैदा हो रही हैं। शहरी क्षेत्रों में परिवहन, ठोस अपशिष्ट, हवा, पानी, हरित स्थान की कमी आदि के संदर्भ में यह अच्छी तरह से देखा गया है। बच्चों और बुजुर्गों सहित विभिन्न आयु वर्ग के लोग बुरी तरह प्रभावित होते हैं। जबकि शहरी समाज प्रभावित होता है, बेहतर परिवहन, अधिक सामाजिक नेटवर्क पहुंच, युवा आबादी की उच्च भूमि दर, उच्च सामाजिक-आर्थिक क्षमताएं, जीवन शैली में बदलाव आदि के कारण शहरी क्षेत्रों में लगातार वृद्धि हो रही है। हालाँकि, शहरी आपदाओं में जनसंख्या का घनत्व व्यापक और नकारात्मक रूप से प्रभावित हुआ है।

प्रमुख शब्द- शहरीकरण, महानगर, जल विज्ञान, वनों की कटाई, शहरी ताप द्वीप, योजना

उद्देश्यः-

शहरीकरण तेजी से बढ़ रहा है और मुख्य रूप से पर्यावरण प्रभावित हो रहा है। पर्यावरण का विनाश और निर्मित पर्यावरण का निर्माण, स्वयं सामाजिक, आर्थिक, स्वास्थ्य और कई अन्य चुनौतियों का जन्म, अनुसंधान के क्षेत्र में एक है। यदि समस्या को नियंत्रित कर लिया जाता है, तो अन्य समस्याओं में भी कमी आएगी, और परिणामस्वरूप एक सुरक्षित और संरक्षित समाज की ओर कदम बढ़ाया जाएगा। पेपर का विश्लेषण समग्र रूप से चाहता है कि कैसे शहरीकरण समग्र रूप से समाज को नष्ट कर रहा है। इसी प्रकार, समाजशास्त्र आम तौर पर नैतिक पर समाधान प्रस्तावित करता है।

परिचय;-

पिछली तीन शताब्दियों में विश्व के शहरों का विस्तार अधिक जनसंख्या वृद्धि दर के कारण हुआ। शहरों की संख्या क्यों बढ़ी, इसकी प्रतिक्रिया यह है कि उद्योग, आर्थिक आदान-प्रदान, विशेषज्ञता और कौशल का अनुप्रयोग, प्रतिस्पर्धा और अर्थव्यवस्थाएँ बढ़ीं। इस तरह की बहुआयामी प्रक्रिया ने पर्यावरण को काफी हद तक प्रभावित किया। पर्यावरण की स्थिति अभूतपूर्व तरीके से खराब हो गई है; एक ऐसी घटना जिसके लिए पर्यावरण को सुरक्षित और स्वस्थ रखने में सक्षम होने के लिए अधिक सामाजिक अध्ययन, वैज्ञानिक योजनाओं और तरीकों के अनुप्रयोग और अन्य दृष्टिकोणों की आवश्यकता है। हालाँकि, उत्प्रेरक और अन्य प्रासंगिक साधनों के बावजूद, शहरी वातावरण को लाभान्वित किया जा सकता है और नियंत्रण में रखा जा सकता है।

शहरीकरण के विस्तार और पर्यावरण सुधारों के बाद, कई कृषि भूमि, खदानों और जंगलों का उपयोग किया जाने लगा। इस प्रकार खदानों और जंगलों के दोहन से जहाँ आर्थिक लाभ हुआ, वहीं पर्यावरण के लिए चुनौतियाँ और कमजोरियाँ, जंगलों का विनाश, संसाधनों का अत्यधिक दोहन, संसाधनों का खघ्त्म होना आदि सामने आए। ऐसा परिदृश्य न केवल वर्तमान पीढ़ियों को प्रभावित करता है, बल्कि यह जहां तक सुरक्षा और प्राकृतिक संसाधनों का सवाल है, इसका असर अगली पीढ़ियों पर भी पड़ेगा। इसलिए, जनसांख्यिकीय, सामाजिक और पर्यावरणीय योजनाकारों को एकीकृत तरीके से भविष्य की भविष्यवाणी और परियोजना करनी चाहिए। और समाजशास्त्रीय रूप से कहें तो, सामाजिक-पर्यावरणीय योजनाकारों को पर्यावरण और जनसंख्या और शहरी स्थान के बीच संतुलन को हमेशा ध्यान में रखना चाहिए।

शहरों का आधुनिकीकरण एवं विस्तार;-

आधुनिकीकरण के बाद बड़े शहरों के विस्तार से पर्यावरण में बदलाव आया है और अधिक शहरों की वृद्धि हुई है; पर्यावरण को और अधिक खतरे में डाल रहा है। विकास योजनाओं और आधुनिकीकरण के कारण, कई हरे-भरे स्थान नष्ट

हो गए हैं, और इसके परिणामस्वरूप शहरी क्षेत्रों में हरित स्थान की कमी हो गई है। इसी प्रकार शहरों में जनसंख्या के घनत्व और पानी की कमी के कारण भी वायु प्रदूषण देखा जाता है। कई विकासशील देशों में सीमाओं के साथ सामाजिक योजनाकारों को इस तरह के जोखिमों का सामना करना पड़ा है। जिसके परिणामस्वरूप उन देशों में प्रवासियों को ग्रामीण क्षेत्रों में भेजने के लिए प्रवासन की उलटी योजनाओं को प्रोत्साहित किया जाता है। इस बीच, शहरों के विस्तार के मामले में, जल नेटवर्क, सीवेज सिस्टम, सड़क, बिजली, परिवहन सेवाओं, स्वच्छता सेवाओं और इसी तरह के आवश्यक बुनियादी ढांचे के बारे में सोचा जाना चाहिए और योजना बनाई जानी चाहिए। उपरोक्त नेटवर्क को अच्छी तरह से संसाधित करने के लिए, राष्ट्रीय और तकनीकी संभावनाओं पर विचार करने की आवश्यकता है।

विकासशील देश वर्तमान में आधुनिकीकरण कर रहे हैं, उनकी शहरीकरण प्रक्रिया का विस्तार हो रहा है, और यदि ऐसा है तो उनमें पर्यावरण का विनाश विभिन्न आयामों में हो रहा है। जबकि विकासशील देशों के सभी शहरों में औद्योगिक और आर्थिक निवेश नहीं होते हैं, बढ़ते नागरिक नौकरियों की तलाश में बड़े शहरों की ओर पलायन करते हैं। इस प्रकार के बढ़ते शहरीकरण से अनेक सामाजिक विकार, पर्यावरण प्रदूषण, अपराध आदि उत्पन्न होते हैं। ऐसी प्रक्रिया में अगली पीढ़ियों की सुरक्षा पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ेगा।

इसलिए, विकासशील देशों के शहरी क्षेत्रों में पर्यावरणीय विनाश विकसित देशों की तुलना में कहीं अधिक बड़ा है। ऐसे कुछ उदाहरण हैं अफ्रीका में मिस्र, मध्य पूर्व में संयुक्त अरब अमीरात और एशिया में चीन। ऐसे क्षेत्रों में जनसंख्या का घनत्व उन्हीं क्षेत्रों में पर्यावरणीय परिवर्तन के साथ-साथ होता है। जनसांख्यिकीय रूप से कहें तो, अगली पीढ़ियों के लिए प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा के लिए जनसंख्या और पर्यावरणीय संभावनाओं के बीच एक प्रकार का संतुलन बनाए रखा जाना चाहिए।

जनसंख्या एवं उत्पादकता;-

जनसंख्या वृद्धि की भूमिका को बेहतर ढंग से समझने के लिए, दक्षिण देशों की उच्च जनसंख्या वृद्धि का अध्ययन करना उचित है। उन देशों में, वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन जनसंख्या की वृद्धि दर के अनुपात में नहीं है; इन देशों के भीतर प्रवासन जैसी सामाजिक और आर्थिक चुनौतियों की बढ़ती संख्या का नेतृत्व किया जा रहा है। मध्य पूर्व और पूर्वी एशिया के कई देश वर्तमान में उल्लिखित चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। जिन देशों का हमने उल्लेख किया है वे द्वितीय विश्व युद्ध के बाद से भोजन की पहुंच, स्वास्थ्य देखभाल प्रणालियों की गुणवत्ता के मामले में बेहतर स्थिति में हैं और मृत्यु दर कम है।

नतीजतन, उन देशों में कम उम्र की आबादी उभर रही है जहां आने वाले वर्षों में उनके पास अधिक बच्चों को जन्म देने की बेहतर संभावना है। इससे पहले, जो बच्चे पैदा होते थे, आमतौर पर मृत्यु दर के कारण उन्हें माता-पिता बनने का मौका नहीं मिलता था। आखरिकार शहरी पर्यावरण विनाश हुआ।

शहरीकरण से पर्यावरण को हानि;-

मनुष्य के जीवन यापन में पर्यावरण का अपना एक अहम योगदान होता है। एक बेहतर और स्वस्थ्य जीवन के लिए हमारे पर्यावरण का भी शुद्ध व साफ होना जरूरी है लेकिन आधुनिकीकरण के दौर में इंसान अपने मूल जरूरत और साथी पर्यावरण को दरकिनार करते हुए आधुनिकीकरण की रेस में अंधा दौड़ का हिस्सा बन चुका है। आज इन्सान ने जीवन के मायने ही बदल लिए है, मानो विज्ञान और विकास के आगे प्रकृति को नतमस्तक कर देना चाहता हो। कई विद्वानों ने किताबों में पर्यावरण को परिभाषित करते हुए इसे मानव जीवन का सबसे महत्वपूर्ण इकाई बताया है। बच्चो को स्कूली शिक्षा में ही पर्यावरण के महत्व से रूबरू कराने की कोशिश की गयी लेकिन मौजूदा स्तर यह है कि मानो इंसान को पर्यावरण और उसकी महत्ता के मायने ही न पता हो।

आज आधुनिकता के दौर में इंसान जितने सुख सुविधाओं से व्याप्त है या उसे अर्जित करने के पीछे पड़ा हुआ है, उतनी ही समस्याएं और रोग-विकार भी मानव जीवन में बढ़ते जा रहे हैं। इसका एक बड़ा कारण पर्यावरण विघटन भी है। आज आधुकिनता और विकास के नाम पर तेजी से शहरीकरण हो रहा है, जिसका पर्यावरण पर सीधा प्रभाव पड़ रहा है। आज देश के अधिकतर राज्यों के कई हिस्सों में जंगल पूरी तरह से गायब है, नदियाँ सूख चुकी हैं, लोग चट्टानें काट रहे हैं, पहाड़ो पर घर बसा रहे हैं, पेड़ो को काटकर हाईवे बनाए जा रहे हैं, वायु को प्रदूषित कर रहे है, ऐसे कई ढेर सारे मुद्दे हैं, जो पर्यावरण से छेड़-छाड़ कर रहे है, उसे अपना रौद्र रूप दिखाने को उकसा रहे हैं। मानव द्वारा किया जाने वाला यह कृत खुद के पैर पर कुल्हाड़ी मारने जैसा है। विकास के नाम पर प्रकृति को नुकसान पहुंचाया जा रहा है लेकिन उसकी भरपाई कैसे करनी है, पर्यावरण का संतुलन कैसे बनाए रखना है? इस पर विचार नही किया जा रहा है।

छोटे नगरों व कस्बों में शहरीकरण और विकास के नाम पर पेड़ों की कटाई की जा रही है। हम अपने इर्द गिर्द इसके कई उदाहरण देख सकते हैं, जैसे कि सड़को को चौड़ा करने की प्रक्रिया में हजारों पेड़ काट दिए जाते हैं, जिन्हें विशाल रूप लेने में सालों लग गये होते हैं। वही उनकी भरपाई के तौर पर कुछ पेड़ भी लगा दिए जाते हैं लेकिन वास्तविकता में वे अधिकतर पेड़ कागजों पर ही रह जाते हैं। अक्सर किसी नॅशनल हाईवे से गुजरते हुए लेन के बीच में कनेर, गुड़हल जैसे आदि छोटे-मोटे पौधे देखने को मिल जाएंगेद्य दरअसल ये वास्तव में तो पौधे होते हैं लेकिन सरकारी आकड़ों में पेड़ों में गिनती के बराबर ये होते है। क्योकिं अक्सर इसी तरह के हाईवे निर्माण में एक लगातार हजारों या लाखों पेड़ो की बलि चढ़ाई जाती है और उनके बदले इन नन्हे पौधों को खड़ा कर दिया जाता है, जो हमारे समाज द्वारा फैलाए गए भारी वायु प्रदूषण और कार्बनडाई आक्साईड का सामना करने के लिए तैयार भी नही होते है। ऐसे में शहरीकरण के नाम पर पर्यावरण को होने वाले भारी क्षति को हम नजरअंदाज कर रहे हैं

निष्कर्ष;-

पर्यावरणीय असुरक्षा दुनिया भर के एजेंडे में है। न केवल विकासशील विश्व इसका सामना कर रहा है, बल्कि औद्योगिक देश भी पर्यावरणीय चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। विकासशील देशों में जनसंख्या वृद्धि और प्रवासन के कारक पर्यावरण विनाश में व्यापक रूप से भूमिका निभाते हैं। पर्यावरण ने चर्चा के विषय के रूप में विशेषज्ञों का ध्यान आकर्षित किया है। समाजशास्त्रियों से भी इस मुद्दे को सुलझाने और भावी पीढ़ियों के लिए एक बेहतर वातावरण बनाने में एक महान भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है। औद्योगीकरण, बदलती जीवनशैली, अधिक उपभोग, कभी न खष्त्म होने वाले आधुनिकीकरण प्रयासों और अन्य कारकों के कारण, विशेष रूप से विकासशील समाजों में पर्यावरण अत्यधिक असुरक्षित है। घनी आबादी वाले शहरी क्षेत्र जल, वायु, आवास और अपशिष्ट प्रदूषण से पीड़ित हैं। वे भोजन, दवा की कमी और कम नौकरी के अवसरों का सामना कर रहे हैं। उन्हें अपराध, भ्रष्टाचार आदि की उच्च दर का सामना करना पड़ता है। इसलिए, समाजशास्त्रियों को पर्यावरण की मौजूदा और भविष्य की जरूरतों का लगातार मूल्यांकन और भविष्यवाणी करने की आवश्यकता है। सभी उम्र के लोगों के लिए सुरक्षित वातावरण तक पहुँचने के लिए हमेशा संशोधनों और सुधारों की आवश्यकता होती है।

संदर्भ;-

1. हार्वे डी (1989) फ्रॉम मैनेजरियलिज्म टू एंटरप्रेन्योरियलिज्मः द ट्रांसफॉर्मेशन इन अर्बन गवर्नेस इन लेट कैपिटलिज्म। मानव भूगोल 71:3-17. लिंकः https://bit.ly/3eI5DO6
2. बेरी बीजेएल (2013) शहरी पारिस्थितिकी में शहरीकरणः मानव और प्रकृति के बीच बातचीत पर एक अंतर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य। डॉर्ड्रेक्टः स्प्रिंगर।
3. पेलिंग एम (2011) जलवायु परिवर्तन के अनुकूलनः लचीलेपन से परिवर्तन तक, लंदनः रूटलेज 224। लिंकः https://bit.ly/2MBLBch
4. बुकचिन एम (1990) रीमेकिंग सोसाइटीः पाथवेज टू ग्रीन फ्यूचर, बोस्टनः साउथ एंड। लिंकः https:/bit.ly/2AvF9kf
5. स्पार्गर्टन जी (1992) समाजशास्त्र, पर्यावरण और आधुनिकताः सामाजिक परिवर्तन के सिद्धांत के रूप में पारिस्थितिक आधुनिकीकरण। समाज और प्राकृतिक संसाधन 54ः 323-444। लिंकः https://bit.ly/3cuLFoD
6. मोल एपी (1997) पारिस्थितिक आधुनिकीकरणः औद्योगिक परिवर्तन और पर्यावरण सुधार। पर्यावरण समाजशास्त्र की अंतर्राष्ट्रीय पुस्तिका, नॉर्थमटन, एमएः एल्गर। लिंकः https://bit.ly/305Qy4O
7. एन्कार्टा वर्ल्ड एटलस 2001।
8. वक्किलैनेन पी (1999) शहरीकरण और पर्यावरणः प्रकृति पर शहरीकरण का प्रभाव, लंदनः सेज।
9. यूएनईपी और एफएओ (1999) द फ्यूचर ऑफ अवर लैंडः फेसिंग द चौलेंज। लिंकः https:/bit.ly/36Uq9bH
10. श्रीनिवासन एस, ओश्फालोन एलआर, डियरी ए (2003) स्वस्थ समुदाय, स्वस्थ घर, स्वस्थ लोग पर्यावरण और सार्वजनिक स्वास्थ्य का निर्माण। एएम जे पब्लिक हेल्थ 93ः 1446-1450। लिंकः https;//bit-ly/36UZonr
11. https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&opi=89978449&url=https://translate.google.com/translate% 3Fu%3 Dhttps://www.peertechzpublications.org/articles/A EST-4-122.php%26hl%3Dhi%26sl% 3Den% 26tl%3 Dhi%26 client%3 Dsrp%26 prev%3 Dsearch&ved=2ahUKEwjE69 Gr2reFAxV7 kIYBHWQMAqUQFnoECDQQAQ&usg=A OvVaw2 DO_z53ZvzUJa_0MqTH 6bX
12. च्प्ठ तथा अन्य समाचार पत्रों से एकत्र जानकारी पर आधारित

‘धार’ उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण चेतना

फरीदा खातून

असिस्टेंट प्रोफेसर (विभागध्यक्ष) हिंदी, पंचकोट महाविद्यालय, पुरुलिया, पश्चिम बंगाल

हमारी पृथ्वी सौर मंडल का एक मात्र ऐसा ग्रह है जो जीवन का समर्थन करता है। पृथ्वी की विशालता के बावजूद जीवन केवल पृथ्वी की एक बहुत पतली परत में मौजूद है जो जीवमंडल कहलाता है। सूर्य ऊर्जा का एकमात्र स्त्रोत है जो विभिन्न जीवन रूपों के बीच निरंतर संपर्क को सक्षम बनाता है।

सृष्टि के विकास के आरंभ से ही मनुष्य का पर्यावरण के साथ प्रत्यक्ष संबंध रहा है। या यूँ कह सकते है कि- पर्यावरण ही वह कारक है जिसके प्रांगण में मनुष्य संरक्षण करता है पर्यावरण शब्द का निर्माण दो शब्दों से मिलकर हुआ है- परि+आवरण। ‘परि’ का अर्थ है चारों ओर से घेरा हुआ। “पर्यावरण उन सभी भौतिक, रासायनिक एवं जैविक कारकों की समष्टिगत एक इकाई है जो किसी जीवधारी अथवा पारितंत्रीय आबादी को प्रभावित करते हैं तथा उनके रूप, जीवन और जीवित को तय करते हैं।”[1] पर्यावरण वह है जो कि प्रत्येक जीव के साथ जुदा हुआ है हमारे चारों तरफ हमेशा व्याप्त होता है।

संजीव आधुनिक संवेदनाओं एवं विविध संदर्भमूलक सरोकारों के रचनाओं में उन्होंने विविध विमर्शों का आह्वान किया है। ‘धार’ उपन्यास सन् 1990 का रचना है जिसमे लेखक ने उपेक्षा, भूख, गरीबी में लिपटी आरण्यमुखी आदिवासी एक ओर तो मौसम की मार झेलते हुए किसी भी तरह अपना जीवन यापन करते हैं वहीं दूसरी ओर विकास के नाम कई कंपनियाँ इनके शांत जीवन में उबन और दमघोटू वातावरण लिए आती है।

कथानक की शुरुआत झारखंड के एक क्षेत्र संताल परगना के एक गाँव बाँसगड़ा से शुरू होती है। इस गाँव के आदिवासी मजदूर पेट की आग के कारण कोयले की खदानों में काम करने जाते हैं। कभी जहरीली वायु फैलने के कारण तो कभी धरती के धसने के कारण खदानों में अपने जान को गँवा देते हैं। शर्मा कहते हैं-

“हवा जब गाँव की ओर घूमती है तो अपनी रही-सही जान लिए बाँसगड़ा खाँसता है- न बाँसगड़ा नहीं, उनकी उंगली फैक्टरी की ओर उठ रही थी, वह उजली उजली फफूँदी की झुर्रियों में लरजती तेजाब की फैक्टरी खाँसती है अपनी धीमी बतियों की बुझी आँखों की चिलम में गाँव को भरकर पीती और सों-सों की खुश्क आवाज के साथ उजला-उजला जहर उगलती हुई फैक्टरी।”[2]

उपन्यास की नामिका ‘मैना’ गाँव में फैक्टरी को खोलने के खिलाफ आवाज उठाती है। इसके लिए वह अपने पति, पिता सबके विरोध का साहसपूर्वक सामना करती है। फैक्टरी के मालिक महेन्द्र बाबू मैना के पिता टेंगर और पति फोकल मंदिर एवं नौकरी का प्रलोभन देकर गाँव में फैक्टरी खुलवा देते हैं-

“सामने जो कारखाना है, वोई जिसके बारे में बतलाया अब्भी, उसमें तेजाब बनता गंधक का। मैना का जिद है कि- इ फैटरी को तोड़ के रहेगा और बाप का जिद है कि- जो तोड़ने आएगा, उसका सर तोड़ देगा।”[3]

महेंद्र बाबू के बहकावे में टेंगर और फोकल जैसे भोले आदिवासी फैक्टरी खुलवाने में उनका सहयोग करते है। जबसे फैक्टरी खुलती है आदिवासियों का जीवन दूभर हो जाता है। तेजाब के वर्ज्य पदार्थ मिट्टी और पानी में मिलने के कारण पूरी खेती चौपट हो जाती है।

“पहले खेती में तिन महीने का मोटा-सोटा अनाज भी तो मिल जाता था और अब जब से फैक्टरी खुला- एक तिरीं भी नहीं एक्को कुआँ- पोखरा का पानी पिने लायक रह गया है? बाहर रांची, हजारीबाग से बुलवाकर बेचारे आदमी लोगों को यहाँ रोजी देने के लिए आए थे कि- जान- मारने के लिए, केतना बेकत (व्यक्ति) खाँसते- खाँसते बेमार होके भागा।”[4]

ऐसे प्रदूषित वातावरण में न केवल मानव जीवन खतरे में है बल्कि पशु- पक्षी, वन्य जीव- जंतु के लिए भी अस्तित्व का खतरा है। कोयला खदान को डाइनामाइट से ब्लास्ट होता है उससे साथ कोयला खदान से अनेक प्रकार के जो गैस निकलते हैं, उससे वहाँ के लोगों के दमें की बिमारी का शिकार होना पड़ता है। लेखक क्रमशः बाँसगड़ा गाँव की परत दर परत खोलते हुए प्रस्तुत करते है-

"न दिन है, न रात, दोनों की दहलीज पर संथाल परगना का पूरा नंगा इलाका घायल गुर्राते सूअर की तरह पड़ा है। नंगी-अधनंगी पहाड़ियाँ जहाँ- तहाँ खड़े शाल, महुर, खजूर और ताड़ के पेड़, ढेर की झाँड़ियाँ, बलुई बंजर धरती, सूखती नदियाँ, सूखते कुएँ- तालाब, भयंकर पोखरीया खोदें, जहाँ- तहाँ सोए पड़े मुर्दे से लोग।"[5]

महेन्दर बाबू और पंडित सीताराम बेहाल आदिवासियों की बदहाली का लाभ उठाते हैं। ठेकेदार गरीब आदिवासियों को ढोर-डॉगरों की तरह हॉककर ले जाते हैं और उनका खून चूसकर छोड़ देते हैं। संजीव ने ठेकेदारों और गरीब आदिवासियों को शोषक और शोषण वर्ग चरित्र के रूप में देखा है। उनका मानना है कि- अगर सौंताल आदिवासी तीर धनुष उठा भी लें तो दुश्मन का नक्शा इतना अमूर्त है कि- तीर का निशाना किधर होना चाहिए ये तय करना मुश्किल है-

"सिंहभूम, राँची, हजारीबाग, धनबाद, गिरिडीह से लेकर संथाल परगना तक कितने कल- कारखाने हैं उनमें कितने घुसेड़ सके है अपना मुँह? जब उनके जीने का कोई आधार नहीं बचता तो आप लाख बुलाते रहें, आगाह करते रहें उन्हें शोषकों के जाल में जाने से कोई रोक नहीं सकता।"[6]

शर्मा बाबू शोषण एवं संघर्ष की पृष्ठभूमि को स्पष्ट करते हुए कोआपरेटिव माइनिंग का रास्ता निकालते हैं। इस खदान को 'जनखदान' के नाम से जाना गया। यह सरकारी कोलियरी और सुब्बाराव के जंगल के बीच चतरपुर की जगह चुनी गई। इस खदान में ब्लास्टिंग से लेकर रेजिंग तक पूरी सावधानी से किया जाता रहा। हालांकि लोगों के पास फंड का अभाव था इसी कारण मजदूरों को मोटी पगड़ी बाँधने का अनुरोध किया गया। कोयला खनन सरकारी स्तर पर होनी चाहिए। शर्मा और मैना के नेतृत्व में हजारों आदिवासी कानूनन ढंग से कोयला खनन कर अपना पेट पालते हैं। शर्मा उन अबोध - लाचार गरीब मजदूरों को समझाते हुए कहते हैं-

"यह धार हमारी शक्ति है और धार का भोथरा होना ही मौत। यहाँ ही नहीं, जहाँ- जहाँ भी साम्यवादी सरकारें हैं, यह उपमा लागू होती है।..........धार बरकरार रहा तो सारा संसार ही आपका है।"[7]

संजीव ने संताल परगना के आदिवासियों का जो चित्रण किया है वे कंगाल भले ही हो लेकिन उनके नीचे खनिज और वन-संपदा के कुबेर के खजाने हैं। उनके जीवन, यौवन और खजाने पर लार टपकाते दिकुओं से लेकर मल्टीनेशनल्स और उनके दलालों तक की नजर है और वे उद्धत होने और लूटने को अभिशष्ट है। संजीव ने इस उपन्यास के माध्यम से झारखंड अंचल के खनन- दोहन और उसके प्रतिरोध में उठती आदिवासी चेतना, लूट की सरकारी और निजी योजनाओं के विरुद्ध 'जनखदान' जैसे वैकल्पिक मॉडलों की तलाश शुरू की। संजीव के अनुसार विकास की धार इतनी भयावह नहीं होनी चाहिए कि- वह मनुष्य के जीवन के लिए खतरनाक बन जाए परंतु जब उसी 'धार' को सही रूप में प्रयोग किया जाता है तो वह मानवमात्र के लिए उपयोगी सिद्ध होती है। 'धार' उपन्यास विकास के नाम पर विनाश, उद्भव के नाम पर पराभव और शौर्य की परंपरा को दलाल- परंपरा में रेड्यूस (Reduce) करने के विरुद्ध आम जन का एक सक्षम प्रतिवाद है। वर्तमान में हमारी आक्रामक उपभोक्तावादी जीवनशैली और कार्बन सघन औद्योगिक विकास के कारण हमने अनेक पर्यावरणीय मुद्दों को परिमाण प्रबलता और जटिलता के संदर्भ में स्थानीय, क्षेत्रीय और वैश्विक स्तर पर उत्पन्न किया है। इसके परिणाम स्वरूप जीवन की गुणवत्ता और यहाँ तक कि पृथ्वी पर मानव की उत्तरजीविता को ही खतरा हो गया है। 'धार' उपन्यास वर्तमान एवं भविष्य में आने वाले खतरों से आगाह कराते हुए वैकल्पिक संधान की खोज की है।

संदर्भ सुचि

1. Bharucha, E (2005) Text book of Environmental Studies for undergraduate courses, Hydrabaad Universities press (India) Private Limited
2. संजीव, धार, राधाकृष्ण प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड 7/31 अंसारी मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002, पहला संस्करण- 1990, पृष्ठ- 36
3. वहीं पृष्ट- 18
4. वहीं पृष्ट- 19
5. वहीं पृष्ट- 39
6. वहीं पृष्ट- 124
7. वहीं पृष्ट- 157

पर्यावरण जागरुकता में संप्रेषण एवं मनोविज्ञान की भूमिका

डॉ० नरेश कुमार नेमा

सहा. प्राध्यापक मनोविज्ञान, स्वामी विवेकानंद शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)

पर्यावरण मानव व्यवहार को प्रभावित करने वाला एक महत्वपूर्ण कारक है। पर्यावरण शिक्षा व्यक्ति के चारों ओर के परिवेश से संबंधित ज्ञान को प्रदर्शित करता है। जिसमे व्यक्ति अपने आप को समायोजित करता है। आज के भौतिक तथा प्रतिस्पर्धी जगत में पर्यावरण शिक्षा एवं जागरुकता की महती आवश्यकता महसूस की जा रही है। पर्यावरण शिक्षा का मुख्य उद्देश्य ऐसे समाज का निर्माण करना है जिसमे प्राकृतिक नियमों के आधार पर प्रगति तथा जीव के बीच अंत:संबंधों में समायोजन स्थापित हो सके। इसी आधार पर मानव व्यवहार एवं पर्यावरण के अंतरसंबंध का अध्ययन पर्यावरण मनोविज्ञान की विषयवस्तु बन गयी है।

सर्वप्रथम पाठशाला व्यवस्था में पर्यावरणीय शिक्षा के संबंध में पहल 1999 से शुरु हुई। इसका मुख्य उद्देश्य औपचारिक शिक्षा के रुप में पर्यावरणीय शिक्षा, पर्यावरणीय सिद्धधांतों को लागू करना था। 11वीं योजना के तहत एकीकृत राष्ट्रीय पर्यावरणीय निरीक्षण कार्यक्रम चलाया गया जो लोक स्वास्थ्य और सामाजिक पर्यावरणीय अध्ययनों से संबंधित था। सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पर्यावरण से संबंधित मामलों में जनहित याचिका को आधार बनाया गया। पिछले दशकों में जनहित वादों के माध्यम से पर्यावरण में सुधार के लिये न्यायपालिका ने समय-समय पर निर्देश प्रसारित किये हैं जिसमे मुख्य रुप से वन एवं नदियों में प्रदूषण की रोकथाम, पर्यावरण असंतुलन से संबंधित मामलों को रखा गया है। अनुच्छेद 21 के अंतर्गत जीवन का अधिकार प्रदान किया गया है जिसमे प्रदूषण मुक्त पानी तथा हवा पाने का अधिकार सम्मिलित है। एम.सी.मेहता बनाम भारत संघ 2 मामले में उच्चतम न्यायालय में भी पर्यावरण जागरुकता और प्रदूषण से संबंधित समस्याओं के बारे में अनिवार्य विषय के रुप में अध्यापन किये जाने पर बल दिया।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने भी महाविद्यालय स्तर पर पर्यावरण शिक्षा एवं जागरुकता को अनिवार्य विषय के रुप में शामिल किया गया है। इन सभी सरकारी प्रयासों के बावजूद पर्यावरण संकट को कोई ठोस निदान नहीं मिल सका है। इसका मुख्य कारण स्थानीय लोगों की सकारात्मक भागीदारी का प्राप्त न हो पाना है। मनोविज्ञान में संचार कुछ प्रतीकों का योग है। जिसमे सूचनाओं के अर्थ को दूसरे व्यक्तियों तक स्थानांतरित किया जाता है। मनोविज्ञान में मुख्य रुप में अंत:वैयक्तिक संचार को सबसे ज्यादा महत्व दिया गया है, क्योंकि इस तरह का संचार व्यवहार परिवर्तन या जागरुकता लाने का सबसे सशक्त माध्यम है। संप्रेषण के अध्ययन में संचार प्रक्रिया को एक प्रवाह के रुप में देखा जा सकता है। संचार प्रक्रिया में वक्ता तथा श्रोता दो मुख्य व्यक्ति होते हैं। इनके बीच संचार संदेशों के माध्यम से प्रेषित होता है। यदि वक्ता जिस अर्थ में संदेश देता है और श्रोता उसी अर्थ में संदेश को ग्रहण करता है तब दोनों के बीच में अर्थपूर्ण संचार का आदान-प्रदान होता है, और यदि संदेश को गलत अर्थ में ग्रहण किया जाता है तब संचार के बीच में बाधा उत्पन्न हो जाती है। वर्तमान समय में पर्यावरणीय समस्याओं की तरफ ध्यान आकर्षित करने का सशक्त माध्यम संचार के साधन हैं। जनसामान्य में संप्रेषण के विभिन्न साधन जैसे रेडियो, टी.वी. चलचित्र, पत्र-पत्रिकाएं, पुस्तक लोक नृत्य, नुक्कड़ नाटक, युट्यूब, फेसबुक, ऑनलाइन न्यूज एवं बेबसाइट वर्तमान में जागरूकता लाने तथा मनोवृत्ति में परिवर्तन के लिये आवश्यक साधन हैं।

बाल विकास में भाषा के अर्जन में पर्यावरण का महत्वपूर्ण स्थान है। व्यक्ति जहां निवास करता है यदि वहां के परिवेश में लोग गलत भाषा, अशुद्ध भाषा या कर्कश भाषा का बोलचाल में उपयोग करते हैं तो इस कारण से आसपास का पर्यावरण विकृत हो जाता है। व्यक्तियों के सोचने का नजरिया खराब हो जाता है। मनोवैज्ञानिक रुप से व्यक्ति के व्यक्तित्व में आक्रामकता, क्रोध, विषाद, तथा नकारात्मक चिंतन की प्रवृत्ति बढ़ जाती है। फलस्वरुप व्यक्ति की सोच, विचार, धारणा एवं सामाजिक पर्यावरण भी बदल जाता है। चूंकि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है, अत: वह समाज से प्रभावित होता है। वर्तमान युग मीडिया और विज्ञान का युग है। जनसंचार के सभी माध्यम अपने तकनीकी वर्चस्व और भूमंडलीय परिप्रेक्ष्य के दबाब में आकर इलेक्ट्रानिक माध्यम ने एक अलग ढंग से अपना विकास किया है।

पर्यावरण प्रदूषण वर्तमान में एक भयावह समस्या के रुप में उभर कर आया है। जिसके कारण पर्यावरण एवं मानव जाति का अस्तित्व खतरे में पड़ गया है। अब यह आवश्यक हो गया है कि पर्यावरण का संतुलन तथा संरक्षण के उपाय किये जाएं। इसके लिए जागरुकता तथा संचार के साधन दोनो ऐसे माध्यम हैं जिससे जनसामान्य को परिचित कराकर सकारात्मक परिवर्तन लाये जा सकते हैं। पर्यावरण संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत कुछ अधिनियम पारित किये गये हैं जिसमे पर्यावरण प्रदूषण के संरक्षण निराकरण एवं नियोजन पर बल दिया गया है। साथ ही साथ उत्सर्जित प्रदूषकों का स्तर निर्धारित करना ऐसे कारखानों को प्रतिबंधित करना जिससे पर्यावरण प्रदूषित होता है, इसमे शामिल है। पर्यावरण संरक्षण के लिये वनों की रक्षा पर विशेष बल दिया जा रहा है। प्रदूषण मुख्य रुप से वायु एवं भूमि के भौतिक रासायनिक और जैविक गुणों में होने वाला अवांछनीय परिवर्तन है। वर्तमान में जलवायु तथा वातावरण दूषित हो गया है। प्राकृतिक प्रदूषण के कारण भूकंप, बाढ़, ज्वालामुखी का फटना, भूमि का कटाव आदि समस्याएं आ रही हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न प्रकार के रासायनिक तत्व जैसे शीशा, जिंक, क्रोमियम गैसों के अंतर्गत कार्बन डाइआक्साइड, कार्बन मोनोआक्साइड, सल्फ्यूरिक एसिड इत्यादि भी पर्यावरण को प्रदूषित करने के बहुत ही बड़े माध्यम हैं। पर्यावरण प्रदूषण के अंतर्गत ग्रीन हाउस प्रभाव वायुमंडल में कार्बन डाइआक्साइड तथा अन्य गैसों की मात्रा बढ़ने से तापमान में होने परिवर्तन होने लगता है। ग्रीन हाउस प्रभाव के लिये सर्वाधिक योगदान करने वाली कार्बन डाइआक्साइड की मात्रा में कमी लाने के लिये जीवाश्म ईधन के दहन में कमी करनी होगी, तथा इसके स्थान पर विभिन्न वैकल्पिक ऊर्जा स्त्रोतों को अधिकाधिक प्रयोग करना होगा। इसके अतिरिक्त पर्यावरणीय समस्याओं के मूल में मानवीय पर्यावरणीय नैतिकता का अभाव देखा जा रहा है। अनेक पर्यवरणीय संबंधी कुछ समस्याएं ऐसी होती हैं जिन्हें जन सामान्य जानता है किन्तु उसका व्यवहार एवं आचरण पर्यावरण को क्षति पहुंचाने वाला होता है। उदाहरण के लिये पानी का उचित प्रयोग अपशिष्ट पदार्थो का निस्तारण पालिथीन की थैलियों का उपयोग न करना जीव मात्र के प्रति दया भाव, सार्वजनक स्थानों पर लगे पेड़ पौधों की रक्षा करना ये सभी व्यक्तियों की जीवनशैली में सम्मिलित होना चाहिए। बच्चों को घर में भी पर्यावरण संरक्षण के प्रति नैतिकता का भाव जागृत करें। नैतिक संस्कारों के प्रति जागरुक करते हुये पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलका का भाव भी जगाएं।

पर्यावरण जागरुकता में मनोविज्ञान की भी बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है। समाज में व्यक्तियों की पर्यावरण संरक्षण के प्रति मनोवृत्ति जागृत करके भी उनके व्यवहार में परिवर्तन किया जा सकता है। इसमे सोशल मीडिया की भूमिका सर्वाधिक प्रभावी है। इसके अंतर्गत यूट्यूब, फेसबुक, टयूटर, ऑनलाइन न्यूज पेपर इत्यादि पर्यावरण चेतना एवं जागरुकता का संदेश बहुत ही तीव्रता से पहुंचाया जा सकता है। महाविद्यालयीन स्तर पर पर्यावरण जागरुकता संबंध कार्यशालाएं संगोष्टियां एवं परियोजना कार्य के माध्यम से पर्यावरण के प्रति सजग किया जा सकता है।

निष्कर्ष स्वरुप कहा जा सकता है कि संचार क्रांति के द्वारा जैसे जैसे संप्रेषण के नये नये माध्यम विकसित होते गये हैं वैसे वैसे लोगों की समझ विचारों में सकारात्मक परिवर्तन देखने में आया है। साथ ही पर्यावरण के प्रति संरक्षण की मानसिकता भी विकसित हुई है।

संदर्भः-

शुक्ला अखिलेश एवं संध्या, भारतीय समाज मुद्दे एवं समस्याएं, गायत्री पब्लिकेशन रीवा।

तिवारी, प्रेमसागर नाथ, पर्यावरणीय मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसी दास नई दिल्ली।

उपाध्याय राधावल्लभ, पर्यावरण शिक्षा, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा।

सिंह अरुण कुमार, समाज मनोविज्ञान मोतीलाल बनारसी दास नई दिल्ली।

“पर्यावरण प्रदूषण एवं संरक्षण विवेचना”

डॉ० हंसा शुक्ला

प्राचार्य, स्वामी श्री स्वरूप आनंद सरस्वती महाविद्यालय

''मनुष्य की अनंत इच्छाऐं, भौतिकवादी जीवनशैली का मोह और बढ़ती हुई जनसंख्या ने पर्यावरण को इतना प्रदूषित किया है कि आने वाली पीढ़ियों के अस्तित्व को ही खतरा उत्पन्न हो गया है।''

पर्यावरण एक व्यापक शब्द है। लेकिन हमने हाल के वर्षो में उसे बहुत सीमित कर दिया है, कारण यह है कि पर्यावरण के विभिन्न अंगों के प्रदूषण में जो अन्तर्सम्बंध है उसे समग्रता में न देख कर हम अलग-अलग देखते आये हैं। जरुरत इस बात की है कि हवा, पानी, मिट्टी और जीव जगत के सभी अंगों में जो गड़बड़ी पैदा हो रही है, उसे जोड़ कर देखें और उसी के हिसाब से पर्यावरण के सुधार का प्रबंध करें।

प्रो. सवेन्द्र सिंह (1991) के विचार में, “पर्यावरण प्रदूषण उसे कहते हैं, जब मनुष्य के इच्छित कार्यो द्वारा प्राकृतिक पारिस्थतिकी तन्त्र में इतना अधिक अतंर हो जाता है कि वह परिस्थितिकी तंत्र की सहन शक्ति से अधिक ह्रास होने से मानव समाज पर दूरगामी हानिकारक प्रभाव पड़ने लगते हैं।”

पर्यावरण उन सम्पूर्ण शक्तियों, परिस्थितियों एवं वस्तुओं का योग है जो मानव को परावृत्त करती हैं तथा उसके क्रिया कलापों को अनुशासित करती हैं। वस्तुतः आनुवंशिकता एवं पर्यावरण ये दो अत्यंत महत्वपूर्ण कारक मानव को प्रभावित करते हैं। मानव संपूर्ण जीव जगत का केन्द्र बिन्दु है, आनुवंशिकता उसकी अंतर्निहित क्षमताओं को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतरित करती है जबकि पर्यावरण इन क्षमताओं को भू-सतह पर लाता है।

जैविक पर्यावरणः- जैविक पर्यावरण का निर्माण मानव के साथ जीव जंतुओं, सूक्ष्म जीव-जंतुओं, सूक्ष्म जीवों तथा पौधो से होती है। इसमें मानव अत्यधिक महत्वपूर्ण घटक है। वह प्रकृति की उपज नहीं है अपितु उसका नियन्ता है। वह अपनी प्रविधि की मदद से भौतिक पर्यावरण में परिवर्तन व संशोधन करता है। जलमंडल, स्थलमंडल, वायुमंडल आदि में से कोई भी मानव क्रियाकलापों से अछूता नहीं रह गया है।

पर्यावरणीय समस्यायें स्वभाव में जटिल एवं व्यापक तथा संख्या में चौंकाने वाली हैं, उनको संक्षेप में रख पाना कठिन है। ये समस्यायें भौतिक पर्यावरण (प्रदूषण, बाढ़, तूफान, सूखा, भूक्षरण, ज्वालामुखी, भूकंप, उपलवृष्टि, भूस्खलन आदि) तथा सांस्कृतिक पर्यावरण (जनसंख्या वृद्धि, निर्धनता, अपराध, गंदी बस्तियाँ आदि) से संबद्ध है तथा दोनों घटक पर्यावरणों का पारस्थैतिक संतुलन अस्थिर कर रही हैं। समस्या का केन्द्र बिन्दु यह है कि पृथ्वी और उसके पर्यावरण को वर्तमान तथा आगे-आने वाली पीढ़ियों के लिए कैसे ठीक रखा जाय तथा संसाधनों के ह्रास को तथा पर्यावरण की स्वयं शोधक क्षमता की गिरावट को कैसे रोका जाय। मानव जो कल्पनाशक्ति, संस्कृति, टेक्नालॉजी, साहस, मनोवेग से संपन्न है, पर्यावरण को यथावत् स्वीकार नहीं करना चाहता इसलिए अपनी आवश्यकताओं की आपूर्ति के लिए उसने पर्यावरण में बड़े पैमाने पर परिवर्तन ला दिये। वह जेट विमानों, मिसाइलों, स्टर युद्ध प्रणाली आदि के द्वारा वायुमंडल तथा खनिजों के अत्यधिक विदोहन, अणु परीक्षण, वनों की कटाई से थलमंडल एवं बॉध और जलाशय बनाकर तथा अनेक प्रकार के रसायन, निष्कासित पदार्थ आदि फेंक कर जल मण्डल को प्रदूषित करने में लगा है। विकास के नाम पर वह विनाश की ओर बढ़ रहा है वस्तुतः वैज्ञानिकों के समक्ष यह एक गंभीर चुनौती है कि पर्यावरण को बिना अपवित्र किये, बिना लूटे और बिना उसका विनाश किये किस प्रकार से कृषि, औद्योगिक, तकनीकी और आर्थिक विकास करें। स्वच्छ प्राकृतिक पर्यावरण स्वच्छ मानव पर्यावरण (सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक) द्वारा ही संभव है।

पर्यावरण मानव की अंतः क्रिया परिवर्तन एवं विकास प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग है। मानव पूर्णतया अपने पर्यावरण का उत्पादक होता है, इसका अर्थ केवल इतना ही नहीं कि वह पृथ्वी का बच्चा है, उसकी धूल कण है, बल्कि यह है कि पृथ्वी ने उसे मातृवत् पाला-पोषा है उसे काम पर लगाया है, उसके विचारों का निर्देशन किया है, कठिनाइयों का मुकाबला करना सिखाया है, इन कठिनाइयों ने उसके शरीर को मजबूत किया है और बुद्धि को प्रखर बनाया है, समस्यायें प्रदान की है तथा उनके समाधान के लिए संकेत भी दिये हैं। इसलिए पर्वतीय क्षेत्रों मे लोगों के पैरों की मांस-पेशियाँ लोहे की तरह मजबूत होती है, जिससे ढालों पर वे सरलता से चढ़ जाते है। तटवर्ती क्षेत्रों के नाविकों का वक्ष एवं भुजायें विशाल एवं शक्तिपूर्ण होती हैं जिससे वे नाव की पतवार अथक रूप से चलाते हैं।

'चूंकि पृथ्वी पर जनसंख्या का दबाव बढ़ा है अत: प्रदूषण से बचने का कोई रास्ता नहीं है। एक व्यक्ति का कूड़ादान दूसरे का निवास स्थल है।' जनसंख्या में अतिशय वृद्धि के कारण ग्रामीण जनसंख्या शहरों की ओर पलायन कर रही हैं। इस कारण नगरीय जनसंख्या में विस्फोटक वृद्धि हो रही है। 1981 की जनगणना के अनुसार भारत की 15.5 करोड़ आबादी नगरों में निवास कर रही थी जो जापान, कनाडा, इंग्लैंड और फ्रांस की कुल जनसंख्या से भी अधिक है जो अपर्याप्त मकान, जल-आपूर्ति, स्वच्छता, परिवहन, शिक्षा और स्वास्थ्य सुविधाओं पर अत्यधिक दबाव डालती है जिससे गंभीर समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं।

सन् 2021 में विश्व की आधी से भी ज्यादा जनसंख्या (लगभग 50 करोड़) नगरों में निवास कर रही है। नगरीकरण का अर्थ- औद्योगीकरण, वायु प्रदूषण, जल प्रदूषण, ध्वनि प्रदूषण, आवासिय संकीर्णता, गंदी बस्तियाँ, अपराध तथा संबंधो में अलगाव की प्रवृत्ति बढ़ावा देना है। नगरीकरण की यह समस्या न केवल विकसित देशों बल्कि भारत जैसे विकासशील देशों में पायी जाती है। नगरीकरण से औद्योगीकरण तथा कृषि पद्धति के आधुनिकीकरण को आत्मसात किया जाता है जो पर्यावरण प्रदूषण का मुख्य कारण है।

नगरीकरण के संबंध में 750 साल पुराने बर्लिन शहर से भारत एवं अन्य राष्ट्र सीख सकते हैं कि आखिर एक शहर को कैसा होना चाहिए। यहां संग्रहालयों, बगीचों, छोटे तालाबों, थियेटरों और चौराहों पर विशालकाय प्रतिमाओं की भरमार है। यहां दो सौ संग्रहालय, डेढ़ सौ थियेटर, अनेक ऐतिहासिक इमारतें और आर्ट गैलरियाँ है। इससे शहर को विशिष्ट सांस्कृतिक पहचान मिली है तथा यहाँ विकास की हर योजना का केन्द्र बिन्दु पर्यावरण संतुलन होता है।

पर्यावरण प्रदूषण के कारण पृथ्वी का तापमान बढ़ता जा रहा है। पृथ्वी का तापमान बढ़ने से हमारी इस खूबसूरत धरती और हमारे जीवन का अस्तित्व खतरे में आ जायेगा। वैज्ञानिकों ने स्पष्ट किया है कि पृथ्वी का तापमान लगातार बढ़ने के कारण उत्तरी तथा दक्षिणी ध्रुवों पर लाखों वर्षा से जमे हुए बर्फ के ग्लेशियर पिघल रहे हैं। इसी तरह हिमालय सहित दुनिया के अन्य हिस्सों में स्थित ग्लेशियर भी पिघल रहे हैं। इन ग्लेश्यिरों के पिघलने से नदियों-नालों में बहुत जयादा पानी का बहाव बढ़ेगा। इनके किनारे बसे गाँवों और शहरों में बाढ़ के कारण तबाही होगी आगे यह पानी समुद्र में जाने से समुद्र का स्तर उँचा हो जाएगा। समुद्र के साथ लगते या समुद्र के साथ घिरे देशों का बहुत सारा हिस्सा पानी में समा जाएगा।

ग्लोबल वार्मिग के कारण संसार के सारे जीव-जन्तुओं के अस्तित्व को खतरा पैदा हो गया है, क्योंकि पहले ग्लोबल वर्मिग को इतनी गम्भीरता से नहीं लिया गया, लेकिन हमारी वही लापरवाही आज एक खौफ बनकर हमारे सामने खड़ी है। ग्लोबल वार्मिग के कारण मानव और जानवर के बीच खुद के अस्तित्व को बचाए रखने का संघर्ष भी जारी है। प्रकृति ने सबसे ज्यादा वनस्पति को पैदा किया, फिर मांसाहारी और सबसे कम मनुष्य आज क्रम पूरी तरह से बदल गया है, सबसे ज्यादा मनुष्य फिर मांसाहारी और अखिरी क्रम में वनस्पति को रख दिया गया है। इस क्रम का प्रदूषण से सीधा रिश्ता है, इसलिए वर्तमान में आये दिन अखबारों में यह खबर पढ़ने को मिलती है कि अमुक गांव या कस्बे में हाथी या भालू द्वारा जन-जीवन को खतरा है। वास्तव में इन पशुओं का शहर की ओर आने का कारण मानव द्वारा नगरी विकास के लिए जंगलों को नष्ट करना है।

शहरों व आधुनिक गांवो के अंधाधुंध विकास ने पक्षियों का बसेरा ही छीन लिया हैं। मोबाईल क्रांति के चलते शहरों व गांवों में बढ़ते मोबाईल टावरों से निकलने वाली प्रभावशाली तरंगों का दूष्प्रभाव पक्षियों पर पड़ा है। जिसके कारण पक्षीयों की बहुत सी प्रजाति लुप्त होती जा रही है। पर्यावरण के लिए किसी भी पशु-पक्षी का लुप्त होना हानिकारक है, क्योंकि पर्यावरण संतुलन में हर पशु-पक्षी की अपनी विशेष भूमिका होती है तथा महत्व भी। जो भी जीव पृथ्वी पर, किसी रूप में आया है, उसे प्रकृति ने विशेष भूमिका प्रदान कर रखी है। यदि मानव उसका दूरूपयोग कर अपने सुखों के लिए उनकी हत्या और शोषण करते रहेगें तो एक दिन यह आएगा कि अधिक से अधिक जीव-जन्तु विलुप्त हो जाएंगे। हमें चाहिए कि इस पहलु पर गम्भीरता से विचार करें एवं इन जीव-जन्तुओं के महत्व को समझकर इनका संरक्षण करें तभी हो सकेगा पर्यावरण का संरक्षण तथा हम रह पाएंगे स्वस्थ तथा सुखी।

जब तक मनुष्य ने प्रकृति के कार्य में हस्तक्षेप नहीं किया, उसका कार्य सुचारू रूप से चलता रहा। प्रगति की अंधी दौड़ ने उसे इतना अंधा बना डाला कि अपना भला-बुरा सोचे बिना विकास के नाम पर विनाश की ओर अग्रसर होने लगा है। आज मनुष्य समृद्धि के स्वप्न-लोक में इतना खो गया है कि बिना विचारे पर्यावरण का संतुलन बिगाड़ रहा है। इसी से प्रदूशण तीव्र गति से बढ़ता जा रहा है। आधुनिक तकनीक से जो पर्यावरणीय समस्याएं उत्पन्न हुई है उनका शिकार वे राष्ट्र भी हुए है जो

कि न तो उत्पादक हैं और न ही इन उत्पादनों से लाभ प्राप्त कर रहें हैं। कम्प्यूटर-क्रांति हमारे लिए बहुत बड़े प्रदूषण का कारक बनकर हमारे पर्यावरण को बुरी तरह प्रदूषित कर देगी। आज जिस प्रकार प्लास्टिक की थैलियाँ, पॉलीथीन हमारे लिए सिर दर्द बन चुका है, ठीक वैसे ही कम्प्यूटर का कचरा हमारा जीवन दूभर कर देगा।

आर्थिक विकास करने के साथ-साथ नैतिक एवं आत्मिक जिम्मेदारी के प्रति भी एक अभिवृत्ति विकसित करने की आवश्यकता है जिससे हम अपने विकास के साथ अपनी प्रकृति एवं पर्यावरण के विकास को भी ध्यान में रखें क्योंकि अपने पर्यावरण को संरक्षित रखने की जिम्मेदारी न केवल सरकार संगठन एवं संस्थाओं की है बल्कि हर एक व्यक्ति की है जिसे इस प्रकृति ने जन्म दिया है।

भारत में पर्यावरणीय समस्याएं और उनका समाधान- प्राचीन भारत में मानव का सर्वप्रमुख ध्येय प्राकृतिक व्यवस्था के साथ में तारतम्यता रखना था। मनु, धर्म-शास्त्रों व उपनिषदों के नियम इस तारतम्यता की इच्छा को प्रदर्शित करते हैं। प्राचीन ग्रंथों से स्पष्ट होता है कि बालअवस्था में शिक्षा का आरंभ गुरूकुल से होता था एवं गुरूकुल जंगलों के बीच बने होते थे जिनसे मनुष्य अपने बाल्यकाल से ही प्रकृति के महत्व को समझे। इसी तरह वृद्धावस्था में मनुष्य वानप्रस्थ जीवन आरंभ करते थे अर्थात वनों में अपने आवश्यकताओं के पूर्ति करते हुए अपना जीवन यापन करते थे। इसलिए हमारे वेदों में वन, पेड़, समुद्र, नदी आदि की पूजा का प्रावधान है जो यह सूचित करते हैं कि हमारे पूर्वजों को इस बात का आभाष गहराई से था कि मनुष्य का विकास प्रकृति के साथ सामंजस्य करके ही हो सकता है इसलिए उन्होंने सारे नियम एवं अनुशासन प्रकृति को ध्यान में रखकर बनाये थे।

भारत को प्राचीनकाल से ही एक समृद्ध-सांस्कृतिक देश का दर्जा दिया जाता रहा है। इसमें न सिर्फ अपने बल्कि विश्व के पर्यावरण को लेकर एक गहरी संचेतना सदैव रही है लेकिन वर्तमान युग में पर्यावरण प्रदूषण में हमारा देश भी किसी से पीछे नहीं रहा है। आज भारतीय जन-जीवन में वे सारी विशेषताएं और गुण-दोष समाहित हैं जो किसी दूसरे पूंजीवादी देश में सामान्यत: देखने को मिलता है परिणामस्वरूप प्राकृतिक संसाधनों के दोहन और दुरूपयोग की वही प्रक्रिया यहां भी तीव्र गति से चल रही है जो यूरोपीय या अमेरिकी समाज में चल रही है यह समस्याएं पर विचारणीय है। तीव्र औद्योगिक एवं तकनीकी विकास, जनसंख्या वृद्धि, शहरीकरण आदि के कारण पर्यावरण के दबाव में निरंतर बढ़ोतरी होने लगी और आज जब हम 21वीं सदी में प्रवेश कर चुके हैं, तब सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न पर्यावरण को विकृत होने से बचाना एवं उसे संतुलित बनाये रखना है। विकास जरूरी है लेकिन पर्यावरण के मूल्यों पर नहीं। आज भारत ही नहीं अपितु विश्व की सबसे बड़ी आवश्यकता है 'विनाश रहित विकास'। इस संदर्भ में पर्यावरण की उन प्रमुख समस्याओं पर विचार करना आवश्यक है जो राष्ट्रीय महत्व की है। परिवर्तन प्रकृति का शाश्वत नियम है। प्राकृतिक परिवर्तन के प्रति जीव अपने आपको एवं संचालित और अनुकुलित कर लेता है। किन्तु मानव द्वारा लाये गये परिवर्तन से जीवधारियों का जीवन संकटमय हो जाता है।

वर्तमान में पर्यावरण के निरंतर प्रदूषित होने का प्रमुख कारण है- अनुशासन का अभाव। शोषण की प्रवृत्ति ने पर्यावरण के प्रति मानव के व्यवहारों व कार्यो को चित्रित किया है। जिसमें अधिक सुविधाओं को जुटाने के प्रयास में मनुष्य पर्यावरण में स्थापित संतुलन को सतत बिगाड़ते जा रहा हैं। रविन्द्रनाथ टैगोर कहते है- ''पर्यावरण से मानव का अभिप्राय कुछ ग्रहण करना नहीं, बल्कि संपूर्ण रूप से उसे जानना था, अपने चारों ओर के वातावरण के साथ सोहार्द्धपूर्ण ढंग से रहना।'' वर्तमान में पर्यावरण के आर्थिक शोषण ने प्राकृतिक नियमों के एक संघर्ष को जन्म दिया है। प्राकृतिक व्यवस्था में हस्तक्षेप में पर्यावरण में अस्थिरता व गिरावट उत्पन्न की है। परंतु भारत में पर्यावरण की समस्या निर्धनता व इसकी उचित ढंग से चिंतन व गंभीरता के न होने के कारण उत्पन्न हुई है।

उदारीकरण के कारण आज राष्ट्रों के बीच सामाजिक-आर्थिक व्यवहार अत्यंत सरल हो गया है। लेकिन अर्थिक विकास के लिए राष्ट्र के द्वारा जो नीति अंगीकार की जा रही है उसका परिणाम सम्पूर्ण पर्यावरण पर पड़ रहा है इसलिए यदि एक राष्ट्र पर्यावरण को दूषित करता है तो उसका असर बहुत से अन्य राष्ट्रों पर पड़ सकता है, कुछ अवस्थाओं में ये प्रभाव बहुत गंभीर भी हो सकते हैं यथा ऐसे प्रभाव जिनका सुधार पर्यावरण इसी गति से बिगड़ता चला जाये तो एक दिन स्थिति यहां तक पहुंच सकती हैं कि पर्यावरण प्रदूषण को नियंत्रित कर पाना मानव के लिए असंभव हो जायेगा।

मानव सभ्यता को आज सबसे बड़ा खतरा है तो प्रदूषण से है। मानव ने पर्यावरण के बारे में शायद ही कभी इतनी चिंता प्रकट की होगी, जितनी की वर्तमान में देखने को मिलती है। अत: यह अतिश्योक्ति न होगी, यदि कहा जाय कि आज पर्यावरण संक्रमण के दौर से गुजर रहे हैं। मनुष्य के आसपास का समस्त वातावरण, उसके प्रयोग में आने वाले जल भंडार, उसके सांस

लेने के लिए वायु, अन्न पैदा करने वाली धरती और यहाॅ तक कि अंतरिक्ष का सारा विस्तार भी स्वयं मनुष्य द्वारा दूषित कर दिया गया है। दरअसल पर्यावरण का जीवन के साथ गहरा रिश्ता है, जब इसे संरक्षित रखने की बात कही जाती है, तब वास्तव में उसका अर्थ धरती पर जीवन की निरंतरता को बचाये रखने से होता है। हम अगर आज भी संकल्प लें और पर्यावरण को ध्यान में रखते हुए अपनी क्रियाओं और योजनाओं को मूर्तरूप दें तो अपने आने वाले पीढीघ् को हम स्वच्छ पर्यावरण के रूप में एक नायाब तोहफा दे सकते हैं।

संदर्भ-

1) पर्यावरण संरक्षण: सिन्हा मेघा, वर्ष 2007, पेज नं- 1, 3, 155।

2) पर्यावरण प्रदूषण- सिन्हा मेघा, वर्ष 2007, पेज नं. - 38,62,80।

3) पर्यावरण अध्ययन-डॉ. सिंग मंजू, वर्ष 2006, पेज नं. - 4,42,73,75।

4) परिवार एवं पर्यावरण- हरिशचंद्र व्यास, कैलाश चंद्र व्यास, वर्ष 2005, पेज नं. - 4,5,6,7,9,11।

5) पर्यावरण विमर्श-सिंह इन्द्रनाथ, डॉ. सिंह बृजेष वर्ष 2012, पेज नं.- 220,221,223।

6) पर्यावरणीय चेतना-मेहता अदिति (आलेख), जून वर्श 2023।

7) विधायन शोध पत्रिका- जुलाई सितम्बर वर्ष 2020- पर्यावरण संरक्षण: विविध आयाम, सूरजन ललित पेज नं.- 54,55,56।

8) हमारा पर्यावरण: चिन्तन, चुनौतियां एवं समाधान- डॉ. सिंह संगीता, वर्ष 2019, पेज नं.- 35, 38, 40।

भारत में सतत विकास और पर्यावरणीय मुद्दे

डॉ० बिन्दु कनौजिया

असिस्टेंट प्रोफेसर, (हिन्दी विभाग) प्रयाग महिला विद्यापीठ डिग्री कॉलेज प्रयागराज

पर्यावरणवाद एक सामाजिक और पर्यावरणीय आन्दोलन है जो वकालत, कानून शिक्षा और सक्रियता के माध्यम से पर्यावरणीय मुद्दों को संबोधित करता है। मनुष्य द्वारा किया गया पर्यावरण विनाश एक वैश्विक, सतत् समस्या है। जल प्रदूषण समुद्री जीवन के लिए भी समस्याएँ पैदा करता है। आर्थिक विकास हासिल करना किसी भी देश के लिए महत्वपूर्ण होता है। क्या इसके लिये लायक है। अगर यह पर्यावरण के क्षरण की ओर दुष्प्रभावों से अवगत कराया गया। लेकिन ऐसे मुद्दों के आर्थिक प्रभाव के बारे में क्या? वह लाभ जो सतत् विकास किसी भी अर्थव्यवस्था को प्रदान कर सकता है?

यह लेख 'पर्यावरण के और और कार्य को तोड़ेगा, इस समय भारत के विभिन्न पर्यावरणीय मुद्दों और चिंताओं का सामना कर रहा है, उस विकल्प का आकलन करें जो सतत् विकास प्रदान करता है।

पर्यावरण अर्थ और कार्यः-

''पर्यावरण'' शब्द का अर्थ उस प्राकृतिक परिवेश से है जिसमें हम रहते हैं, जो हमें हमारे पूर्वजों द्वारा प्रदान किया गया है। यह जैविक (पौधों, जानवरों, पक्षियों, आदि सहित जीवित घटकों) और अजैविक घटकों (भूमि, वायु, जल आदि) के बीच परस्पर क्रिया को समाहित करता है जो इस प्राकृतिक व्यवस्था को बनाने के लिए सह-अस्तित्व में हैं।

पर्यावरण के ही द्वारा चार प्रमुख कार्य किए जाते हैं, संसाधनो की आपूर्ति जीवन का निर्वाह, सौन्दर्य मूल्य प्रदान करना और विभिन्न उत्पादन और उपभोग गतिविधियों द्वारा उत्पन्न कचरे का समावेश।

भारत में पर्यावरणीय मुद्दे के कई कारण हैं-

भारत में जनसंख्या का तेजी से विकास, शहरीकरण औद्योगिकरण और गरीबी जैसे कारक पर्यावरण को नुकसान पहुँचाने के लिए जिम्मेदार हैं।

1. गिरता वायु गुणवत्ता सूचकांक
2. बड़े पैमाने पर पर्यावरणीय गिरावट
3. जैव विविधता के नुकसान
4. हिमालय में शहरीकरण
5. परिस्थितिक तंत्र में लचीलापन का नुकसान
6. अपशिष्ट प्रबंधन का अभाव।
7. संसाधनों की कमी (भूमि, वायु, जल)
8. बढ़ती पानी की कमी।

ऐसे औ भी कई मुद्दे हैं जिस पर सतत् आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए सतत पर्यावरण बनाए रखने के लिए ध्यान देने की आवश्यकता है।

पर्यावरण गिरावट से निपटने के लिए सरकारी पहलः-

जबकि देश के प्रत्येक नागरिक का सहयोग पर्यावरण की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं, समस्याओं का समाधान खोजने में मदद करने के लिए सरकारों की बहुत बड़ी भूमिका हैं। भारत सरकार ने पर्यावरण सुरक्षा के लिए कई कदम उठाए हैं।

स्वच्छ भारत मिशन हरित कौशल विकास कार्यक्रम नमामि गंगे कार्यक्रम क्षतिपूरक वनीकरण कोष अधिनियम हरित भारत के लिए राष्ट्रीय मिशन राष्ट्रीय नदी संरक्षण कार्यक्रम प्राकृतिक संसाधनों और पारिस्थितिकी प्रणालियों का संरक्षण ऐसे और भी कई मुद्दे हैं जिन पर सतत् आर्थिक विकास सुनिश्चित करने के लिए सतत पर्यावरण बनाए रखने के लिए ध्यान देने की आवश्यकता है

सतत विकासः आर्थ और विशेषताएंः-

सतत् विकास वह विकास है जो आने वाली पीढ़ियों की जरूरतों से समझौता किए बिना वर्तमान पीढ़ी की जरूरतों को पूरा करता है। इस परिभाषा को 1987 में ब्रंटलैड आयोग ने अपनी रिपोर्ट अवर कॉमन फ्यूचर में आगे रखा था। यह लोगों और ग्रह के लिए समावेशी, टिकाऊ और लचीला पारिस्थितिकी तंत्र बनाने के लिए ठोस प्रयास की मांग करता है।

सतत विकास की मुख्य विशेषताओं में शामिल है-

1. प्रति व्यक्ति आय में वृद्धि
2. प्राकृतिक संसाधनों का विवेकपूर्ण उपयोग
3. आने वाली पीढ़ियों के लिये संसाधनों का संरक्षण

सतत विकास लक्ष्यः संयुक्त राष्ट्रः-

वैश्विक पर्यावरण संकट से निपटने की दिशा में एक सकारात्मक कार्यवाई के रूप में, जिसमें ग्लोबल वार्मिंग, जलवायु परिवर्तन और ओजोन परत की कमी शामिल है, संयुक्त राष्ट्र ने 2030 एजेंडा के हिस्से के रूप में 17 सतत् विका लक्ष्यों (SDG) और (169) लक्ष्यों की अपनाया। सतत् विकास के 17 लक्ष्य हैं।

1. गरीबी को उसके सभी रूपों में हर जगह समाप्त करें।
2. भुखमरी खत्म करना, खाद्य सुरक्षा बेहतर पोषण हासिल करना और टिकाऊ कृषि को बढ़ावा देना।
3. स्वस्थ जीवन सुनिश्चित करें और सभी लोगों के लिए कल्याण को बढ़ावा दे।
4. समावेशी और समान गुणवत्ता वाली शिक्षा सुनिश्चित करें, और सभी के लिए आजीवन सीखने के अवसरों को बढ़ावा दें।
5. लंगिक समानता हासिल करना और सभी महिलाओं और लड़कियों को सशक्त बनाना।
6. सभी के लिए जल और स्वच्छता की उपलब्धता और सतत् प्रबंधन सुनिश्चित करना।
7. निरंतर, समावेशी और सतत् आर्थिक विकास, पूर्ण और उत्पादक रोजगार और सभी के लिए अच्छे काम को बढ़ावा देना।
8. लचीले बुनियादी ढांचे का निर्माण, समावेशी और टिकाऊ औद्योगीकरण को बएघवा देना और नवाचार को बढ़ावा देना।
9. देशों के भीतर और उनके बीच असमानता को कम करना।
10. शहरों और मानव बस्तियों को समावेशी, सुरक्षित लचीला और टिकाऊ बनाना।
11. टिकाऊ खपत और उत्पादन पैटर्न सुनिश्चित करें।
12. जलवायु परिवर्तन और इसके प्रभावों से निपटने के लिए तत्काल कार्यवाई करें।
13. सतत विकास के लिए महासागरों, समद्रों और समुद्री संसाधनों का संरक्षण और सतत् उपयोग करें।
14. सतत् विकास के लिए कार्यान्वय के साधनों को मजबूत करना और वैश्विक साझेदारी को पुनर्जीवित करना।

सतत विकास को लागू करने के लिए भारत द्वारा किए गए उपायः-

NITI (नेशनल इंस्टीट्यूशन फॉर ट्रांसफॉर्मिंग इंडिया) आयोग, भारत में 65 साल पुराने योजना आयोग की जगह लेने वाले नवगठित आयोग का भारत में SDG के समन्वय का काम सौंपा गया है।

राज्यों को भी सलाह दी जाती हे कि वे ैक्ळ को पूरा करने के लिए लागू की जा रही राज्य प्रायोजित योजनाओं के लिए दृष्टि, योजना, बजट और कार्यान्वयन और निगरानी प्रणाली विकसित करने सहित इसी तरह की मैपिंग करें।

इनके अलावा, सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय SDG के कार्यान्वयन की निगरानी के लिए प्रमुख संकेतकों के निर्माण की प्रक्रिया में लगा हुआ है।

2015 से (जब अन्य देशों के साथ संयुक्त राष्ट्र ने ैक्ळ को अपनाया) भारत सरकार के कई प्रमुख कार्यक्रम शुरू किए हैं। जो SDG के केन्द्र में है।

भारत में SDG प्राप्त करने की चार प्रमुख चुनौतियों पर नीचे चर्चा की गई है:-

1. प्रमुख संकेतकों को परिभाषित करना:- भारत के लिए प्रमुख चुनौतियों में से एक SDG की प्रगति का प्रभावी ढंग से आकलन करने के लिए उपयुक्त संकेतक तैयार करना। SDG को प्रभावी ढंग से लागू करने के लिए गरीबी, भूख, सुरक्षित पेयजल, शिक्षा जैसे क्षेत्रों की प्रमुख परिभाषाओं को संशोधित करने की आवश्यकता है।
2. सतत् विकास लक्ष्यों का वित्त पोषण:- चौथी पंचवर्षीय योजना के बाद से भारत के सर्वोत्तम प्रयासों और गरीबी उन्मूलन को पाथमिकता देने के बावजूद, भारत में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले लोगों की संख्या सबसे अधिक हैं निवेश के आज के स्तर पर, धन की भारी कमी है जो SDG प्राप्त करने की प्रगति में बॉधा हैं।
3. कार्यान्वयन प्रक्रिया की निगरानी और स्वामित्व:- हालांकि नीति आयोग से कार्यान्वयन प्रक्रिया का स्वामित्व लेने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की उम्मीद की जाती है। लेकिन आयोग के सदस्यों न इस तरह के कठिन कार्य को संभालने के लिए सीमित जनशक्ति के बारे में अपनी अपनी चिंता बार-बार व्यक्त की है।

प्रगति को मापना:-

भारत सरकार में विशेष रूप से उपराष्ट्रीय क्षेत्रों से डेरा की अनुपलब्धता को स्वीकार किया है। प्रशासनिक डेटा का अधूरा कवरेज अभी तक एक अन्य कारक हैं जिसने सहस्त्राब्दी विकास लक्ष्यों (एम0डी0जी0) के प्रगति के मापन में बाधा उत्पन्न की है जो SDG के पूर्ववर्ती थे।

विकास प्रशासन:-

समिति ने अलग पर्यावरण विभाग स्थापित करने की सिफारिश की फलस्वरूप 1980 में पर्यावरण विभाग की स्थापना की गयी। इसके कार्य पर्यावरण रक्षा, पर्यावरण विकास और विकास योजनाओं में पर्यावरण के पक्ष का ध्यान रखना था। विभाग को प्रशासकीय उत्तरदायित्व भी दिये गये जिससे वह प्रदूषण को रोक सके, समुद्र के पर्यावरण की तथा अन्य नाजुक खेत्रों जैसे बायोस्फीयर रिजर्व आदि की रखा कर सके। भारत में उपरोक्त प्रयासों के बावजूद पर्यावरण के प्रति जागरूक करने की आवश्यकता है। साथ में जनता को शिक्षित करना भी अति आवश्यक है। लोगों को पर्यावरण के प्रति जागरूक करने की आवश्यकता है। साथ में जनता को पर्यावरण के प्रति शिक्षित करना आवश्यक है। इसके साथ ही पर्यावरण की रोकथाम तभी होगी जब जनसंख्या को रोकने के सार्थक प्रयास तथा अति औद्योगीकरण की दिशा में सोच-समझ कर निर्णय लेना। चूँकि यह समस्या अत्यन्त जटिल समस्या हैं। अत: हमें ही इसका समाधान स्वयं ही ढूँढ़ना होगा।

संदर्भ ग्रन्थ सूची:-

1. विकास और पर्यावरण अनिल अग्रवाल और सुनीता नारायण हमारा पर्यावरण, दिल्ली, गॉधी शान्ति प्रतिष्ठान 1988, पृ0 27
2. सुषमा यादव एवं राम अवतार शर्मा, पृ0 274-275
3. Word commission on environmentAnd development 1987, p. 35
4. पर्यावरण और हमारा दायित्व, पृ0 619 जो देश अपनी मिट्टी को नष्ट कर देता है, वह खुद को नष्ट कर लेता है। जंगल हमारी भूमि के फेफड़े हैं, वे हमारी हवा को शुद्ध करते हैं और लोगों को नई ताकत देते हैं। ''फ्रैंकलिन डी रूजबेल्ट

पर्यावरण संरक्षण के सन्दर्भ में सरकार द्वारा विद्यालय में स्वच्छता के प्रति किये गये प्रयास: एक अध्ययन

डॉ० सीमा गुप्ता

असिस्टेंट प्रोफेसर, साई नाथ विश्वविद्यालय, रांची, झारखण्ड

देश में व्याप्त गन्दगी और खुले में शौच की वर्तमान स्थिति एवं समस्या को सरकार द्वारा गम्भीर माना गया है इस समस्या के समाधान के लिए सरकार द्वारा एक अतिमहत्त्वाकांक्षी योजना चलाई गई है, जिसके अन्तर्गत देश में सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान चलाया जा रहा है। भारत में समग्र स्वच्छता अभियान की दृष्टिकोण से 1999 में निर्मल भारत अभियान के नाम योजना चलाई गयी जिसके अन्तर्गत ऐसी पंचायतों में सरकारी विद्यालयों तथा सरकारी भवनों में संचालित आँगनबाड़ी केन्द्रों में स्वच्छतायुक्त सुविधाओं को प्राथमिकता दी गयी जिनका उद्देश्य सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत स्वच्छ सेवाओं से वंचित विद्यालयों तथा आँगनबाड़ी केन्द्रों में यथोचित स्वच्छ सुविधाओं और स्वच्छता शिक्षा एवं स्वच्छ आदतों के प्रोन्नयन हेतु कार्यक्रम चलाना था।

निर्मल भारत अभियान के तहत् 2022 तक देश में 'खुले में शौच' पर पूर्णतया रोक लगानी है। इस प्रकार यह कार्ययोजना देश में सम्पूर्ण स्वच्छता अभियान में पूरी तरह सहायक सिद्ध होगी, इस दिशा में कुछ सकारात्मक परिणाम भी प्राप्त हुए हैं। इस अभियान में देश के कुछ राज्यों ने अपेक्षित प्रयास करते हुए अच्छी प्रगति उपलब्ध की है, इनमें पहला नाम 'सिक्किम' का लिया जा सकता है। 'सिक्किम प्रदेश' देश का ऐसा पहला राज्य बन गया है, अर्थात् सिक्किम भारत का पहला 'खुले में शौच मुक्त प्रदेश' का दर्जा प्राप्त कर चुका है, केरल ने भी इस ओर सकारात्मक प्रयास करते हुए अपनी स्थिति संतोषप्रद बना ली है।

स्वच्छता के प्रति जागरूकता पैदा करने के लिए भारत सरकार ने स्कूलों पर भी विशेष ध्यान दिया है। इस दिशा में 14 नवम्बर 2014 को नई दिल्ली के मैदान गढ़ी आंगनबाड़ी में केन्द्रीय महिला एवं बाल विकास मंत्री, श्रीमती मेनका गाँधी जी के द्वारा बालक स्वच्छता मिशन की शुरूआत की गई थी। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी जी के द्वारा आरम्भ किए स्वच्छ मिशन का उद्देश्य बाल स्वच्छता मिशन के लक्ष्य से संभावित तौर पर मेल खाता है। दोनों अभियानों का उद्देश्य निकट भविष्य में एक स्वच्छ भारत का निर्माण है। घर तथा आस-पास के पर्यावरण स्कूल आदि में स्वच्छता को बनाये रखने के लिए दूसरों को प्रोत्साहित करने के साथ ही भारत भर में स्वच्छता और सफाई व्यवस्था आरम्भ करने के लिये बच्चे सबसे बेहतर माध्यम है।

स्वच्छता अभियान में सभी स्कूलों के बच्चे की सक्रियता से भाग लेने के लिए स्कूलों में निम्न गतिविधियाँ शामिल की गयी। जो निम्नवत् है-

- स्वच्छ भारत अभियान मुद्दे सफाई और स्वच्छता के विभिन्न पहलुओं पर विशेष रूप से महात्मा गाँधी की स्वच्छता और अच्छे स्वास्थ्य से जुड़ी शिक्षाओं के सम्बन्ध में स्कूली कक्षाओं के दौरान प्रतिदिन पाठ्यक्रम के द्वारा शिक्षित करना।
- कक्षा, प्रयोगशाला, पुस्तकालयों और अलमारियों आदि की सफाई करना।
- महान् व्यक्तित्व वाले स्वतंत्रता सेनानियों, महापुरुष एवं शिक्षाविदों जिन्होंने देश में अपना विशेष योगदान दिया हो उनके योगदान के बारें में बातें करना।
- स्कूल में स्थापित किसी भी मूर्ति या स्कूल की स्थापना करने वाले व्यक्ति के योगदान के बारें में बात करना तथा उनकी सफाई करना।
- विद्यालय के शौचालयों और पीने के पानी वाले क्षेत्रों की सफाई करना।
- रसोई और समान गृह की सफाई करना।
- खेल के मैदान की सफाई करना।

- स्कूल बगीचों का रख-रखाव और उनकी सफाई करना।
- स्कूल भवनों का वार्षिक रख-रखाव तथा उनकी रंगाई एवं पुताई करना।
- निबंध, वाद-विवाद, चित्रकला, सफाई और स्वच्छता पर प्रतियोगिताओं का आयोजन करना।
- बाल मंत्रि मंडलों का निगरानी दल बनाना और सफाई अभियान की निगरानी करना।
- इसके अलावा, फिल्म शो, स्वच्छता पर निबंध/पेन्टिंग और अन्य प्रतियोगिताएं, नाटकों आदि के आयोजन द्वारा स्वच्छता एवं अच्छे स्वास्थ्य का संदेश प्रसारित करना।

राज्य परियोजना कार्यालय सितम्बर 2015 में सर्व शिक्षा अभियान के अन्तर्गत शिक्षा का अधिकार को सुदृढ़ एवं सुचारू रूप से क्रियान्वित करने के लिए स्वच्छ विद्यालय कार्यक्रम में जारी एक नोटिस में सुनिश्चित किया गया कि जिसका उद्देश्य निम्नवत है-

- प्रत्येक विद्यालय में बालक-बालिकाओं हेतु पृथक-पृथक एवं क्रियाशील मूत्रालय व शौचालय की उपलब्धता।
- स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता
- बहुल हाथ धोने का स्थान
- स्वच्छता सुविधाओं को सक्रिय रखने हेतु संचालन एवं रख-रखाव की उचित व्यवस्था
- नियमित हाईजीन शिक्षा एवं सम्बन्धित क्षमता वर्धन

हाथ धुलाई दिवस-

प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू के जन्मदिन पर (14 नवम्बर) बाल स्वच्छता मिशन की शुरूआत की गई, जिसके तहत बच्चों को स्वच्छता और साफ-सफाई के बारें में जागरूक किया गया। प्रत्येक भारतीय को अपने हाथों को नियमित रूप से अच्छी तरह साबुन से और पर्याप्त पानी से धोना चाहिए। बच्चों को बचपन से ही सही तरीके से हाथ धोने और स्वच्छता के महत्त्व के प्रति जागरूक किया जाना आवश्यक है। हाथों की धुलाई के प्रति जागरूकता पैदा करने के मकसद से पूरे विश्व में 15 अक्टूबर को विश्व हाथ धुलाई दिवस मनाया जाता है।

विद्यालयों में सफाई और स्वच्छता का अनिवार्य शिक्षण विधेयक, 2016 स्वच्छ भारत अभियान के भाग के रूप में सभी विद्यालयों में सफाई और स्वच्छता का निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षण तथा उससे सम्बन्धित और उसके आनुषंगिक विषयों का उपलब्ध के लिए 'विद्यालयों में सफाई और स्वच्छता का अनिवार्य शिक्षण अधिनियम, 2016' बनाया गया। जिसका विस्तार जम्मू -कश्मीर राज्य को छोड़कर सम्पूर्ण भारत में है। जिसके अन्तर्गत सफाई और स्वच्छता से स्वच्छता का रख-रखाव अभिप्रेरित है और इसमें मानव मल-मूत्र का सुरक्षित निपटान सम्मिलित है।

इसके अन्तर्गत धारा-3 में ऐसी तारीख से जो केन्द्रीय सरकार राजपत्र में अधिसूचना द्वारा विनिर्दिष्ट करें, सफाई और स्वच्छता को सभी विद्यालयों में अनिवार्य विषय के रूप में पढ़ाया जाएगा।

सरकार धारा 3 के अधीन अधिसूचना जारी किए जाने के तुरन्त बाद अपनी अधिकारिता के भीतर सभी विद्यालयों में सफाई और स्वच्छता के अनिवार्य शिक्षण के निर्देश जारी करेगी तथा सफाई और स्वच्छता सम्बन्धी विषय को विद्यालयी पाठ्यचर्या के भाग के रूप में शामिल करने सम्बन्धी निदेश जारी करते समय समुचित सरकार सुनिश्चित करेगी कि-

1. वैयक्तिक स्वच्छता और सामुदायिक स्वच्छता सम्बन्धी पाठ को इस विषय पर शिक्षण का भाग बनाया जाए; और
2. संविधान में उल्लिखित मूल्य और स्वास्थ्य तथा स्वच्छता सम्बन्धी बालक के ज्ञान के चतुर्दिक विकास पर विचार किया गया है।

धारा-5 के अन्तर्गत प्रत्येक बालक विद्यालय, प्रत्येक वर्ष कम से कम दो बार सामुदायिक स्तर पर सफाई और स्वच्छता के संवर्धन के उद्देश्य से प्रदर्शनी लगाएगा और सफाई और स्वच्छता के महत्त्व को बढ़ावा देने के लिए वर्ष में एक बार स्वच्छता अभियान चलाएगा।

धारा-6 के अन्तर्गत समुपयुक्त सरकार, केन्द्रीय सरकार के परामर्श से एक शिक्षक प्रशिक्षण नियम पुस्तक प्रकाशित करेगी जिसमें सफाई और स्वच्छता का शिक्षण करते समय लागू होने योग्य सर्वोत्तम पद्धति और विधियाँ विहित होंगी। इस अधिनियम

के उपबंधों का कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए प्रति वर्ष सफाई और स्वच्छता के बारें में शिक्षक प्रशिक्षण कार्यक्रम का आयोजन करना प्रत्येक विद्यालय के अनिवार्य होगा।

सफाई एवं स्वच्छता को मद्देनजर रखते हुए इस अधिनियम में समुपयुक्त सरकार उस विद्यालय की मान्यता रद्द कर देगी जो धारा 4 एवं 5 के उपबन्धों का अनुपालन नहीं करता है ऐसे विद्यालयों को सुने जाने का पर्याप्त अवसर दिए जाने के बाद एक लाख रुपए का जुर्माना लगा सकेगी।

6 जून 2019 को राष्ट्रीय समसामयिकी पत्रिका उल्लिखित स्वच्छता सर्वेक्षण के अन्तर्गत सरकार द्वारा 'स्वच्छ सर्वेक्षण 2020' आरम्भ किया गया। सर्वेक्षण को तिमाही आधार पर परिणाम घोषित किया जायेगा। 2016 में शुरू प्रथम स्वच्छता सर्वेक्षण में 73 शहरों, 2017 में 434 शहरों, 2018 में 4203 शहर और 2019 में रिकार्ड 28 दिनों में हुए चौथे सर्वेक्षण में 4237 शहरों को मंत्रालय स्वच्छता मानकों की कसौटी पर परखा था। इससे पहले तीन साल से भोपाल के इंदौर शहर को साफ-सफाई का प्रथम स्थान तथा इस वर्ष मैसूर शहर को प्रथम स्थान प्राप्त हुआ।

निष्कर्ष-

आज विश्व समुदाय पर्यावरण से सम्बन्धित अनेक समस्याओं से जूझ रहा है। संसाधनों में विक्षोभ, पर्यावरण में असन्तुलन का कारण पर्यावरणीय प्रदूषण है। पर्यावरणीय प्रदूषण के कारण सामाजिक एवं व्यक्तिगत जीवन भी प्रभावित हुआ है। आज पर्यावरण अवनयन इतनी तीव्र गति से बढ़ रहा है कि अगर इस पर दृष्टि न डाली जाय तो भविष्य में मनुष्य ही नहीं वरन् समस्त जीवों का अस्तित्व खतरे में पड़ जायेगा। वर्तमान पर्यावरणीय संकट दिन-प्रतिदिन अपना पैर जमाता चला जा रहा है, जिससे अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं। यथा प्रदूषण की समस्या, मूल्य अवनयन की समस्या, वनस्पतियों के नष्ट होने की समस्या, मानव अस्वस्थता बढ़ने की समस्या आदि। इन सभी समस्याओं का समाधान पर्यावरणीय शिक्षा है, जिसके द्वारा विद्यार्थियों में पर्यावरण के प्रति अच्छे दृष्टिकोण विकसित करके पर्यावरणीय समस्याओं से बचा जा सकता है। अत: पर्यावरण से सम्बन्धित शिक्षा की आवश्यकता महसूस की जा रही है। भारत में पर्यावरण द्वारा पर्यावरण में शिक्षा परम्परागत रही है। प्रत्येक देश का भविष्य उसके स्कूलों में रहता है। अत: यह आवश्यक है कि स्वच्छता शिक्षा विद्यालयों एवं समुदायों से जोड़कर उसमें जागरुकता एवं लालसा जगायी जाय तथा इसको कक्षा की चाहरदिवारी से बहार निकाला जाय।

सुझाव-

1. विद्यार्थियों में अभिवृत्तियों के विकास के लिए आवश्यक है कि उन्हें स्वच्छता ज्ञान मात्र सूचनाओं के आधार पर न दिया जाए, शिक्षकों को चाहिए कि वे विद्यार्थियों को प्रत्यक्ष अनुभूति कराएँ।
2. विद्यार्थियों में स्वच्छता के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न करने हेतु शिक्षकों को चाहिए कि वे छात्रों को पर्यावरण से सम्बन्धित समस्याओं से परिचित कराने का प्रयास करें और उन्हें पर्यावरण के प्रति सकारात्मक व्यवहार के लिए प्रोत्साहित करें।
3. शिक्षकों को पाठ्यक्रम पढ़ाते समय स्वच्छता से सम्बन्धित उदाहरण देना चाहिए जिससे विद्यार्थी स्वच्छता के प्रति सजग रहें।
4. शिक्षकों द्वारा पर्यावरण प्रदूषण को रोकने के लिए विद्यार्थियों को सुझाव देना चाहिए।
5. शिक्षकों द्वारा विद्यार्थियों को गन्दगी से होने वाली बिमारियों के बारें में बताना चाहिए।
6. विद्यालय में विद्यार्थियों की स्वच्छता के प्रति अभिवृत्ति के विकास के लिए निर्देशन व परामर्श सेवाएँ होनी चाहिए।
7. स्वच्छता शिक्षा का पाठ्यक्रम इस प्रकार का होना चाहिए जिससे विद्यार्थियों की अभिवृत्ति एवं मूल्यों का विकास हो सके।
8. पर्यावरण प्रदूषण को दूर करने वाले अन्य विकल्प विद्यार्थियों के सहयोग से विद्यालय में सेमिनार, प्रोजेक्ट कार्यक्रम और सर्वेक्षण आदि आयोजित कर नयी प्रदूषण मुक्त तकनीकी की खोज की जा सकती है।
9. प्रबन्धक या शिक्षक द्वारा विद्यालय परिसर में पेड़-पौधे लगाने चाहिए एवं उनके रख-रखाव हेतु विद्यार्थियों को समय-समय पर दिशा-निर्देश देना चाहिए।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अग्रवाल, बी0एस0 (1994). पर्यावरण आौर समाचार माध्यम-एक अध्ययन, भारतीय वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसंधान पत्रिका, वर्ष 2, अंक 2.
- अग्रवाल, साक्षी (2015). हिन्दी साहित्य द्वारा पर्यावरण संरक्षण के प्रति जागरूकता, इण्टरनेशनल जर्नल फॉर इन्वायरमेण्टल रिहैबिलेशन्स एण्ड कन्सर्वेशन, VI(1).
- ए नेशनल मिशन ए हैण्ड बुक, स्वच्छ भारत स्वच्छ विद्यालय, 2014, *http:/scholar.harvard/edu/files/adukia/files/adukia_sanitation_and_eduction.pdf.*
- खान, मोहम्मद एवं कुमार, सर्वेश (2016). स्वच्छ भारत अभियान का ग्राम स्तरीय सूक्ष्म अध्ययनः ग्राम नरायनपुर, तहसील बीसलपुर, जनपद पीलीभीत के विशेष सन्दर्भ में, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस एजुकेशन एण्ड रिसर्च, 1(8).
- गिरि, निलकंठ (2015). स्वच्छ भारत और पर्यावरण, इण्टरनेशनल जर्नल फॉर एन्वायरमेण्टल रिहैबीलेशन एण्ड कन्सर्वेशन, VI(1).
- जायसवाल, प्रिया (2016). प्रदेश में सही राह पर स्वच्छता की मुहिम, आवरण कथा, मध्य प्रदेश संदेश, अक्टूबर, 2016.
- जैन, चन्द्र कुमार (2016). ''स्वच्छता के प्रति लोगों को जागरूक करते रहे गाँधी जी'', लेख, http://hindimedia.in/hygiene-awarness-were-gandhi/ Jan 25, 2016
- तिवारी, सुरेन्द्र कुमार (2014). द स्टडी ऑफ अवरनेस ऑफ ए नेशनल मिशनः स्वच्छ भारतः स्वच्छ विद्यालय इन द मीडिल स्कूल स्टडीज ऑफ प्राइवेट एण्ड पब्लिक स्कूल्स, पैरीफेक्स- इण्डियन जर्नल ऑफ रिसर्च, 3(12).
- पपलीराम एवं सीमतवाल, नरेन्द्र (2017). स्वच्छ भारत में अलवर जिले की भूमिका, इण्टरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांस रिसर्च एण्ड डेवेलपमेण्ट, 2(6).
- पुष्पम्, सद्गुरु (2016). सामाजिक मानसिकता में परिवर्तन से संभव है स्वच्छ भारत, इण्टननेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन एण्ड साइंस रिसर्च रिव्यू, 3(3).

राजेन्द्र भण्डारी के काव्य में पर्यावरण चेतना

ज्ञानवती कुमारी साह

पी. एचडी. शोधार्थी हिंदी विभाग, सिक्किम विश्वविद्यालय, गंगटोक

पर्यावरण मानव-जीवन का वह अभिन्न अंग जो मनुष्य उत्पत्ति के साथ जुड़ा हुआ है। मानव शरीर के निर्माण से लेकर उसके जीवन-यापन एवं इस संसार को छोड़कर जाने तक पर्यावरण हमारे साथ बनी रहती है। पर्यावरण दो शब्दों 'परी' और 'आवरण' से मिलकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है- चारों ओर से घिरा हुआ। अर्थात् जो हमें चारों ओर से घेरे हुए है वह पर्यावरण है। सामान्यत: आज के संदर्भ में पर्यावरण के दो भाग है- प्राकृतिक और मानव निर्मित पर्यावरण। मानव हस्तक्षेप रहित पर्यावरण सदैव हमें धैर्य, ठहराव, सुकून की ओर अग्रसर करता है तो वहीं मानव निर्मित पर्यावरण भौतिक सुख तो प्रदान करता है, परंतु प्राकृतिक पर्यावरण को क्षति भी पहुँचती है।

भारत एक बहुभाषी देश है, जहाँ अनेक भाषाओं में साहित्य रचना होती है और सभी भाषा-साहित्य के रचनाकार अपने-अपने रचनाओं के माध्यम से समाज, संस्कृति, पर्यावरण और मूल्यों की रक्षा के लिए प्रतिबद्ध हैं। कवि राजेन्द्र भण्डारी भारतीय नेपाली साहित्य के उन प्रमुख हस्ताक्षरों में शामिल हैं, जिनकी प्रतिबद्धता समाज, संस्कृति, पर्यावरण और मूल्यों के प्रति स्पष्ट रूप में दिखाई पड़ती है। राजेन्द्र भण्डारी समकालीन हिंदी कविता के कवियों समानांतर समकालीन भारतीय नेपाली कविता के बहुचर्चित कवि हैं। प्राकृतिक-पर्यावरण को नष्ट करने वालों के विरोध एवं इसे बचाने वालों के पक्ष में हमेशा मुखर रहें हैं। भण्डारी पर्वत, पहाड़ के रहने वाले हैं। अत: उनका प्रकृति से लगाव एवं उसके संरक्षण के प्रति चिंता और जिम्मेदारी उनमें नैसर्गिक है। राजेन्द्र भण्डारी भारतीय नेपाली साहित्य के क्षेत्र में अग्रण्य नाम है। दर्शन से प्रभावित होने के करण इनके साहित्य में समाज में समरसता जगाने का भाव परिलक्षित होता है साथ ही पर्यावरण को बचाने के पक्षधरता के रूप में भी नजर आते हैं। अपनी कविता 'दार्जिलिंग 1991' में लिखते हैं कि-

"रोते रोते थक चुकने के बाद
रात के तीसरे पहर
एक क्षण के लिए सोती है पर्वत की रानी।
नींद खुल जाने से हैरानी से छटपटाती है-
कहाँ गया मेरे गले का हार?
नाक की फुली कहाँ गुम हो गई?
कहाँ चले गए हैं राजकुमार?"

अर्थात् जो पर्वतों की रानी है, जिसकी सुंदरता प्राकृतिक दृश्यों से है। उसका प्राकृतिक सौन्दर्य दिन-ब-दिन मानव हस्तक्षेप के करण खोती जा रही है, जो पर्वतों में नीरा पर्वत थी अब वहाँ भीड़ जमा होने लगी है। प्राकृतिक पर्यावरण जो उसके साज-सजा के वस्तु थे सब धीरे-धीरे नष्ट हो रही है। अत: पर्यावरण के नष्ट होते इस अंश को बचाने सुरक्षित रखने की चिंता कवि को सता रही है। अपनी कविता 'बल्झिरहने यो रिक्तता' में कवि प्रकृति को माध्यम बनाकर मानव समाज के संत्रास, एकाकीपन, स्वार्थपरता आदि को रेखांकित करते हैं एवं प्रकृति और पर्यावरण के धुकह-पीड़ा को मानव समाज के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। यथा:

"कुइरों, बादल, धूवां
बिजुली, जून, तारा
यी केही पनी होइनन, आकाशका
एकलासकों एउटा हावाघर हो आकाश"

भारतीय संस्कृति में पर्यावरण का महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रकृति के पंच महाभूत- वायु, पृथ्वी, जाल, आकाश एवं अग्नि के संतुलन पर ही मनुष्य-जीवन आधारित है। इन सभी की उपस्थिति के ही कारण मानव का आहार-विहार जुड़ा हुआ है। पहले की अपेक्षा आज का भारतीय साहित्य पर्यावरण को लेकर अधिक मुखर हुआ है। समकालीन भारतीय साहित्य यथार्थता से जन्मी

विचार का साहित्य है, जो आज के समय में व्याप्त समस्या के हर एक पहलू पर विचार करते हैं एवं उसका समाधान ढूँढने की कोशिश करते हुए नजर आते हैं। राजेन्द्र भंडारी अपनी नेपाली कविता 'हावामा एकतमासको गंध आएको छ' में लिखते हैं कि

"आकाश बौलएको छ
धरती लोलाएको छ
झ्याल ढोका बन्द गर साथी,
हावामा एकतमासको गन्ध आएको छ"

राजेन्द्र भण्डारी की कविताओं में युगीन विसंगतियों का तीखा चित्रण पाया जाता है। आज विश्व यांत्रिक हो रहा है, जिसके कारण पारंपरिक जीवन-शैली में काफी बदलाव आया है। बाजारवाद और यांत्रिकता ने मनुष्य को स्वार्थी, अवसरवादी जीवनदृष्टि से भर दिया है, जिसने समाज-संस्कृति के साथ प्रकृति को भी नुकसान पहुंचाया। मनुष्य जब मनुष्य के प्रति ही संवेदनशील नहीं है तो प्रकृति और पर्यावरण के लिए क्या ही होंगे। आज के मनुष्य को केवल अपनी जरूरतों का ख्याल है, उन्हें इससे कोई मतलब नहीं है कि इससे किसका लाभ और किसको हानी पहुँच रही है। आज भीड़ इतना बढ़ गया है कि उनके रहने के लिए पर्यावरण को क्षति पहुंचाई जा रही है। गंगा का दिन-ब-दिन गंदा होने का चित्रण करते हुए राजेन्द्र भण्डारी लिखते है कि-

"अलकत्रे का समुद्र
चक्रवर्ती बन फैल रहा है
हजारों दिशाओं
हजारों लहरों-तरंगों
हजारों ज्वार-भाटाओं।
वापसी यात्रा के लिए
महादेव की जटाओं में रास्ता खोजती
भयभीत है मैली भूखी गंगा।"

कवि के लिए प्रकृति शाश्वत, सचल और गतिशील है। प्रकृति और पर्यावरण हमारे लिए सबकुछ है हमें इसे कष्ट नहीं पहुंचना चाहिए। आज मनुष्य प्रकृति का दोहन कर बस अपने स्वार्थसिद्धि पर केंद्रित होकर रह गया है। आज प्रयवरण को बचाना एक ज्वलंत विषय है। प्रकृति पर मनुष्य की विनाशलीला को देखकर कवि पर्यावरण के लिए भयभीत और चिन्तित हैं। प्रकृति से खिलवाड़ मनुष्य के लिए ही विध्वंशक है। कवि चिंता जाहीर करते हुए कहते हैं-

"आमा हो पृथ्वी
बाबु हो आकास
आमालाई त घाउ लगायौ।
बाबुलाई धेरै नसताऊ। (आकासलाई धेरै नसताऊ)"

राजेन्द्र भण्डारी की कविता 'आकासलाई धेरै नसताऊ' में पर्यावरण चेतना प्रमुखता से उभर कर आई है। मनुष्य ने पृथ्वी का तो इतना नुकसान कर ही चुका है, अब वह आकाश को भी दूषित करने पर तुला हुआ है। आज वायुमंडल ऑक्सीजन से ज्यादा कॉर्बनडाइआक्साइड की मात्रा से भर गया है, जिसकी वजह से कवि बहुत ही चिन्तित हैं। पर्यावरण असंतुलन के कारण भविष्य में विश्व बहुत बड़ी विध्वंशकारी समस्याओं से घिरने वाला है, जिसकी व्यग्रता से कवि का मन विचलित हो रहा है। कवि बढ़ते शहरीकरण के प्रकोप के प्रभाव से भी गहरे रूप से चिन्तित हैं, अब गाँव गाँव न रहकर शहर में तब्दील होने लगे हैं। वस्तुत: राजेन्द्र भण्डारी पर्यावरण को सुरक्षित बचाने के ही पक्षधर नहीं हैं अपितु इस विषय की ओर समाज और देश को भी जागृत करने का प्रयास करते हैं।

आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा में पर्यावरण

डॉ० अवधेश झा

सहायक प्रोफेसर, हिन्दी विभाग, राम कृष्ण महाविद्यालय, मधुबनी (बिहार)

शोध सार: मानवीय जीवन संस्कृति एवं अन्य जीवों हेतु पर्यावरण का संरक्षण व संवर्धन अत्यंत आवश्यक है। आज हम वैश्वीकरण के जिस दौर से गुजर रहे हैं, वहाँ पर्यावरण संबंधी चिंतन एक विशिष्टि समकालीन विमर्श है, जिसमें वर्तमान व भविष्य की चुनौतियाँ मौजूद हैं। जन, जीव एवं जीवन की संस्कृति में पर्यावरण एक साहचर्य की भावना है और अन्त:सम्बन्ध अन्योन्याश्रित हैं। पृथ्वी की समस्त जैव विविधता काया है तो पर्यावरण उसकी आत्मा। जिसका संतुलित रहना जरूरी है, इसके असंतुलन से 'जलवायु परिवर्तन' की विषम परिस्थितियाँ उभरेंगी। आज वैश्वीकरण के दौर में, पर्यावरणीय हित हेतु विभिन्न अभियान चलाए जा रहे हैं, जिसमें समूह जी-20 राष्ट्र भी शामिल हैं। बहरहाल जब तक जन, पर्यावरण चेतना की महत्ता को स्वीकार्य नहीं करेगा, तब तक साहित्य-नाट्य-कला आदि माध्यम जन को समकालीन पर्यावरण विमर्श से सचेतेगा।

नाट्यकला एक जीवंत सामाजिक व जनतांत्रिक माध्यम है, जिसकी प्रकिया एवं अनुभूति से पर्यावरणीय जैवीय संरचनाओं का संरक्षण व संवर्धन होता है। जन-जीव-जीवन की संस्कृति में साहित्य, समाज और पर्यावरण एक-दूसरे के पूरक हैं। दृष्टव्य है कि साहित्य, नाट्यकलादि में अलंकार व रसादि हेतु भावों का आश्रय, उपमेय-उपमान व आलंबन-उद्दीपन का स्त्रोत प्राकृतिक जैवीय परिवेश हैं। इनसे ही लय, भंगिमा, मुद्रा, ताल आदि मिलते हैं। अत: नाट्यकला, पर्यावरणीय जीवन मूल्यों को अपने कथ्य व शिल्प में दर्शाते हैं। जो कि देशकाल-वातावरण में मंच सज्जा, प्रकाश योजना, नृत्य, संगीतादि द्वारा पर्यावरणीय चेतना संपृक्त होता है।

बीज शब्द: आधुनिक, आधुनिकता, समकालीन, साहित्य-नाट्य-कला, समाज, संस्कृति, परम्परा, पर्यावरणीय चिंतन-चेतना और जन-जीवन मूल्य इत्यादि।

प्रस्तावना: पर्यावरणीय जीवन मूल्य भारतीय साहित्य के अलौकिक और लौकिक भाषिकी में विद्यमान हैं। जो वेदों की ऋचाओं और उपनिषदों में अभिमंत्रित है। महाकवि व नाटककार कालिदास की कृतियों में भी व्यक्त है, उनमें प्रकृति व मानवीय जीवन का साहचर्य मिलता है। वहीं जातीय साहित्यिक परम्परा में बंकिमचंद्र चटर्जी का 'वन्दे मातरम्' राष्ट्रीय गीत व रवींद्रनाथ टैगोर रचित राष्ट्रगान 'जन गण मन', भारतीय उप-महाद्वीप की पर्यावरणीय संस्कृति की प्राकृतिक संरचना को उकेरता है।

आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा में 'नाट्य' का अभिप्रेत है- वह नाटक, जो खेलने योग्य हो। नाट्य, साहित्य एवं प्रदर्शनकारी कला की जीवंत सामाजिक विधा है। जो अपनी साझी-संस्कृति में जन को चेतना, मनोरंजन व आनंद प्रदान करती है। भरतमुनि ने 'नाट्यशास्त्र' के प्रथम अध्याय में नाट्य को तीनों लोकों के भावों का अनुकीर्तन करने वाला सार्ववार्णिक 'पंचमवेद' व सर्वगुणशालिनी माना है- "यह नाटक दु:ख से, थकावट से तथा शोक से पीड़ित दीन-दुखियों को विश्राम देने वाला होगा। यह नाट्य धर्म, यश और आयु का संवर्धक, हितकारी, बुद्धि का विकास करने वाला तथा संसार को उपदेश देने वाला होगा। और नाट्य में न मिले ऐसा न तो कोई ज्ञान, शिल्प, विद्या, कला, योग और न ही कोई कार्य हो सकता है।"[1]

'आधुनिक' शब्द अपने नवीनतम अर्थ में, पुरातनतम विभेद के अतिरिक्त, वैचारिकी की नयी व्याख्या है। जिसके मूल्य प्रगतिशील एवं आधुनिकतावादी होते हैं, जबकि प्राय: मनुष्य ना रूढ़िवादिता से मुक्त होता है, ना ही पूर्णत: आधुनिक हो पाता है। गौरतलब है कि वैश्विकरण 'समस्त वसुधा एक परिवार है' का पश्चिमी संस्करण है, जो कि उत्तर-आधुनिकता में प्रदर्शित है। जहाँ समकालीन सामाजिक-सांस्कृतिक विमर्श, विकेंद्रित संरचनाओं को प्रमुखता देती है, जिसका एक विशिष्ट अंग 'पर्यावरण विमर्श' भी है। पर्यावरण एक वैचारिकी है- 'पर्यावरण, हमारे चारों तरफ का आवरण है, पृथ्वी पर बसे जन-जीवन के चारों ओर का कवच'। प्रकृति ही पर्यावरण है, जिसमें जैवीय सृजन की क्षमता है। यह प्रकृति व जन-जीव और जीवन के साहचर्य की संस्कृति है। तथाकथित आधुनिक संस्कृति में पर्यावरण को संरक्षित-संवर्धित करने की भावना का अभाव दिखता है। मनुष्य की भौतिकवादी जीवन संस्कृति ने प्राकृतिक संसाधनों को दुहने के अलावा उसे संरक्षित-संवर्धित करने लगे तो संभव है कि भविष्य में पर्यावरणीय संकट न हो।

आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा का आरम्भ साहित्येतिहास का आधुनिक काल (सन्1850 ई. –अद्यतन) माना गया है, जो कि औपनिवेशिक सत्ता की 'व्यवस्था की अव्यवस्था' से परिचालित था। तथापि स्वतंत्रता-पूर्व हिन्दी नाट्य साहित्य में पर्यावरणीय चिंतन का स्वरूप देश-काल, वातावरण के अनुरूप विकसित होता है, जिससे तत्कालीन राष्ट्रीय-सांस्कृतिक चेतना की निर्मिती भी हुई। रिनेसां के प्रभाव से हिन्दी नाट्य परम्परा अपनी भारतीयता स्थापित करती है। दरअसल पाश्चात्य व पारसी रंगमंच के प्रतिरोध में भारतीय-हिन्दी नाट्य का विकास होता है। इस काल में हिन्दी गद्य साहित्य पर आजादी के प्रथम संघर्ष का भी प्रभाव पड़ा। जिससे आधुनिक काल की नींव रखी गई और हिन्दी नाटक उस आधुनिकता की पहली ईट साबित हुई। जाहिर है कि भारतेन्दुकालीन नाट्य परम्परा से आधुनिक व आधुनिकता का प्रवेश होता है। बकौल आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- "विलक्षण बात यह है कि आधुनिक गद्य साहित्य की परंपरा का प्रवर्तन नाटकों से हुआ है।"[2] दरअसल स्वतंत्रता पूर्व और पर के आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा में जीवन मूल्य व उद्देश्य के स्तर पर अंतर है। इसे पर्यावरणीय मूल्य की अध्ययन दृष्टि से, 'स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी नाट्य साहित्य' (सन् 1850 ई.- सन् 1946 ई.) एवं 'स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य साहित्य' (सन् 1947 ई. से अद्यतन) में विभक्त किया गया है।

स्वतंत्रता पूर्व हिन्दी नाट्य साहित्य की परंपरा, नवजागरण की चेतना का प्रतिफलन है। औपनिवेशिक काल में साहित्य और नाट्य की जो बुनियादी जरुरत थी, उसमें पर्यावरण संबंधी चिंतन राष्ट्रीय चेतना का निर्माण करती है, जिसमें भौगोलिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय एकता समाहित है। यह आधुनिक और आधुनिकता से संयुक्त राष्ट्रीय चेतना और स्वतंत्रता हेतु जागरण का समय था। इसमें जन-जीवन की सामाजिक संस्कृति, राष्ट्रीय स्वतंत्रता का आकांक्षी है। इस काल में भारत की भूमि को राष्ट्र और माता की भौगोलिक सांस्कृतिक संज्ञा मिलती है।

हिन्दी नाट्य साहित्य की परम्परा में भारतेन्दु हरिश्चंद्र ने नवजागरण काल को आधुनिक नाट्य कला से व्यक्त किया। जिनमें राष्ट्र की दुर्दशा और भारत भूमि की प्राकृतिक संपदा एवं जन जीवन के शोषण व दोहन को अभिव्यक्ति मिली है। भारतेन्दु कृत 'भारत-दुर्दशा' (1880 ई.) 'भारत' अपनी दुर्दशा को व्यक्त करने के लिए, स्वयं एक किरदार की भूमिका निभाता है। भारतेन्दु को 'स्वदेशी धन के विदेश चले जाने पर दुख ज्यादा ख्वारता' है। इस नाटक में भारतीय दुर्दशा की विषम परिस्थितियाँ हैं- "अंधाधुंध मच्यो सब देसा मानो राजा रहत विदेसा।"[3] पर्यावरणीय जीवन मूल्य 'नीलदेवी' (1881 ई.), 'अंधेर नगरी' (1881 ई.) एवं 'भारत जननी' (1884 ई.) में भी दृष्टव्य हैं। नाटक 'अंधेर नगरी' के समर्पण में योग्य नर हेतु जैविक भोज्य शृंखला, जो कि पर्यावरण का तात्विक मूल्य है, को प्रहसन द्वारा व्यक्त किया गया है- "नर सरीर मैं रत्न वही जो परदुख साथी।/ खात पियत अरु स्वसत स्वान मंडूक अरु भाथी।।"[4] नाटक के दूसरे अंक में बाजार का दृश्य है, जिसमें प्राकृतिक खाद्य पदार्थ के बहाने नगर के अंधेपन पर व्यंग्य कसा गया है और बाजार की पारिस्थितिकी में 'कबाब,चना, नारंगी, धनिया-मेथी, बादाम, चूरन और मछरी' आदि सब एक टेक सेर बिकते हैं, जबकि तीसरे अंक का दृश्य ही 'जंगल' है।

जयशंकर प्रसाद के प्रमुख नाटकों 'स्कंदगुप्त'(1928 ई.), 'चन्द्रगुप्त' (1931 ई.), 'ध्रुवस्वामिनी' (1933 ई.) और 'कामना' (1927 ई.) नामक गीति-नाट्य में पर्यावरण संबंधी चेतना अभिव्यक्त होती है। इनके नाटक 'स्कंदगुप्त' के अंत में उद्यान का दृश्य है, जहाँ देवसेना अपने हृदय की वेदना को व्यक्त करने के लिए पर्यावरणीय जीवन मूल्यों का आलंबन लेती है- "मैंने भ्रमवश जीवन संचित, मधुकरियों की भीख लुटाई।...।"[5] इनके नाट्य संवाद व गीतों में प्रकृति की अर्थच्छवियाँ हैं। नाटक 'चन्द्रगुप्त' में कार्नेलिया के गीत, उसे भारतीय गौरव और अपनेपन की अनुभूति कराता है। सिंधु के मनोहर तट पर उसके आँखों के समक्ष का चित्रपट दृष्टव्य है- "अरुण यह मधुमय देश हमारा/ जहाँ पहुँच अनजान क्षितिज को मिलता एक सहारा/सरस तामरस गर्भ विभा पर- नाच रही तरुशिखा मनोहर/ छिटक जीवन पर- मंगल कुंकुम सारा"[6] इनके नाटकों में अतीत का गौरव और प्रकृति का सौन्दर्य दिखता है साथ ही उनके इतिहास बोध से आधुनिक राष्ट्रीय चेतना की वैचारकी संप्रेषित होती है। 'चन्द्रगुप्त' में अलका का समवेत स्वर गायन 'जागरण गीत' है, जिसमें भारत भूमि की पर्यावरणीय सांस्कृतिक विविधता झलकती है- "हिमाद्रि तुंग शृंग से/ प्रबुद्ध शुद्ध भारती-/स्वयमप्रभा समुज्ज्वला/स्वतंत्रता पुकारती-... सपूत मातृभूमि के-/रुको न शूर साहसी/...।"[7] नाटक 'ध्रुवस्वामिनी' में नायिका के हृदय की अनुभूति व पीड़ा का आश्रय प्रकृति है, जिसे वह अपने जीवन के साहचर्य समक्ष अभिव्यक्त करती है- "नियति से अज्ञात भाव से मानो लू से तपी हुई वसुधा को क्षितिज के निर्जन से सायंकालीन शीतल आकाश से मिला दिया हो।....कुमार!... तुम्हारे उपकार और स्नेह की वर्षा से मैं भीगी जा रही हूँ।"[8] जयशंकर प्रसाद का गीति नाट्य 'कामना' में यूटोपिया का प्राकृतिक गठन है, जहाँ भारत भूमि को मातृभूमि के रूप में दर्शाया गया है और यह गीति-नाट्य 'कामायनी' की पृष्ठभूमि भी है।

स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य साहित्य' की परम्परा में मानवीय मूल्यों का क्षरण होता है। आधुनिक जीवन मूल्यों की आधुनिकता में केन्द्रीयता का संक्रमण प्रत्यक्ष हुआ। मोह-भंग, त्रासदी, तनाव व संघर्ष से मानवीय जीवन अति-केंद्रित हो गया है। भौतिकता, संत्रास व मोहभंग के कारण जनतांत्रिक मूल्यों का विघटन और विद्रूपण दीख पड़ता है। मनुष्य की भौतिकता एवं विलासिता ने अपने परिवेश को कृत्रिम बना दिया है और लगातार प्राकृतिक संसाधनों का दोहन करता जा रहा है। बकौल ग. मा. मुक्तिबोध- "बहुत-बहुत ज्यादा लिया, दिया बहुत-बहुत कम; मर गया देश, अरे। जीवित रह गए तुम!!"[9] यहाँ पर्यावरण संबंधी समस्याएं, विस्थापन व शहरीकरण और वैश्वीकरण से उत्पन्न हैं, जिसे 'व्यवस्था की अव्यवस्था' व 'अव्यवस्था की व्यवस्था' द्वारा दर्शाया गया है। समकालीन नाट्य साहित्य जल, जंगल, जमीन और जीवनमूल्यों की संरक्षा करता है। जिसमें आदिवासी जीवन संस्कृति पर्यावरणीय मूल्यों की रक्षा करता है। आदिवासी नाट्य साहित्य से मुख्यत: पर्यावरणीय चिंतन की धारा को वेग मिलता है।

मोहन राकेश के नाटक 'आषाढ़ का एक दिन' (1958 ई.) एवं 'लहरों के राजहंस' (1963 ई.) में पर्यावरणीय दृश्यों का यथार्थवादी चित्रण है। 'आषाढ़ का एक दिन' कालिदास के 'आषाढ़स्य प्रथम दिवसे' के नाट्यबिम्ब पर आधारित है। नाटक का आरंभ व अंत मेघ गर्जना एवं बिजली की चमक से होता है- "मेघ-गर्जन और वर्षा का शब्द, जो परदा उठने के अनन्तर भी कुछ क्षण चलता रहता है।"[10] नाटक में संघर्षशील रचनात्मक कलाकार की सृजनात्मक अभिव्यक्ति और राज्याश्रय की कथा है। इसमें अपने प्राकृतिक परिवेश से कटकर कालिदास अपने जमीन से उखड़ जाता है। वह लोक-प्रांत का सामान्य कवि है, जो राज्यकवि नहीं बनना चाहता है जबकि समाज उसे भौतिकता व अधिकार सुख की ओर धकेलना चाहती है। वह मल्लिका से कहता है- "मैं अनुभव करता हूँ कि यह ग्राम प्रांत मेरी वास्तविक भूमि है। मैं कई सूत्रों से इस भूमि से जुड़ा हूँ। उन सूत्रों में तुम हो, यह आकाश और मेघ है। .... यहाँ से जाकर मैं अपनी भूमि से उखड़ जाऊँगा।"[11] बाद में वह राज्यकवि और कश्मीर का शासक भी बनता है। नाटक के दूसरे अंक में कालिदास के लिए प्रियंगुमंजरी ग्राम प्रांत और मल्लिका के घर का वातावरण ले जाना चाहती है। नाटक के अंत में जब कालिदास अपने ग्राम प्रान्त आता है, तब तक भौतिकता उसका रस निचोड़ चुकी होती है इसीलिए वह प्रकृति के आगोश में पुन: लौटकर 'अथ से आरंभ' करना चाहता है। नाटक 'लहरों के राजहंस' अश्वघोष के 'तरंस्तरंगेष्विव राजहंस:' पर आधारित है। इसमें राजहंस की भांति चरित्र दोलायमान हैं। इसमें उद्यान के सरोवर व राजहंस अंतर्द्वंद्व और नाटकीय वातावरण को रचते हैं।

जगदीशचंद्र माथुर कृत 'पहला राजा' (1969 ई.) पर्यावरण संबंधी ज्वलंत विषयों को प्रकट करता है। जहाँ प्रथम भारतीय प्रधानमंत्री पहला राजा पृथु रूप में चित्रित हैं। जिसके बाबत माथुर लिखते हैं- "वे समस्याएं सर्वथा आधुनिक हैं, वे उलझने मेरा 'भोग हुआ यथार्थ' हैं। ...यह एक मॉडर्न ऐलिगिरी है। आधुनिक अन्योक्ति का मंचीय रूप है।"[12] इस नाटक में पृथ्वी का पहला राजा- पृथु है, जिसने धरती का दोहन कर जीवन योग्य बनाया, कवष दस्यु-आदिवासियों का प्रतिनधि है और उर्वी स्वयं प्रकृति-पृथ्वी की प्रतीक। इनके संकल्प से धरती हितकारी परिणाम देती है, जिनमें पर्यावरणीय मूल्य दृष्टव्य हैं- "कवष, भूमिरुपा गौ को दूहने के लिए अनेक मजबूत हाथ उठेंगे, भिन्न-भिन्न प्रकार का दूध निकालेंगे। अनाज-रूपी दूध को मैं दुहूँगा, हलधर किसान बछड़ा होंगे, हाथों की अंजलि दोहन-पात्र होगा। कवष: जल रूपी दूध को मैं दुहूँगा, प्यासे खेतों का बछड़ा होगा, नदी और तालाब पात्र होंगे।"[13] नाटक में अकाल, भूख से पीड़ित जनता के लिए बांध बनने लगता है। जिसमें गर्ग, अत्रि व शुक्राचार्य जैसे मंत्रिमंडल के सदस्यों द्वारा लोभवश सरस्वती पर बन रहे बांध के काम में ढिलाई होती है और समय पर निर्माण न पूर्ण होने से बाढ़ के कारण बांध बह जाता है, जिसमें उर्वी व कवष आदि समा जाते हैं।

लक्ष्मीनारायण लाल के नाटक 'अब्दुल्ला दीवाना' (1973 ई.) में पात्र का प्रवेश कुत्ते के भोंकने पर होता है। अब्दुल्ला इस विसंगत नाटक का पात्र है, जो कभी मंच पर नहीं आता है, उसकी खोज होती है- "हुजूर, उसकी लाश कहाँ मिली! सारी नदियाँ, सारे पहाड़, जंगल छान डाले गए। नाले-नदियाँ, कूड़ेदान, नाबदान, मेनहोल....।"[14] इनके नाटक 'नरसिंह कथा' (1975 ई.) में मनुष्य व जन्तु का समन्वय एवं साहचर्य दर्शाया गया है। नाटक का पात्र नरसिंह वन में वास करता है। यह 'रंगभूमि नाटक' है- "नरसिंह कथा पूरी मानवीय इतिहास गाथा का सामाजिक, राजनीतिक और नाटकीय विवेचन प्रस्तुत करता है साथ ही मानवीय और पशु मूल्यों के सनातन संघर्ष की शाश्वत को भी दृश्यत्व देता है।"[15] नाटक 'यक्ष प्रश्न' (1979 ई.) स्वतंत्र भारत में अव्यवस्था की पड़ताल है, इस नाटक के तीसरे अंक में प्यास व सरोवर की नाट्य परिकल्पना से पर्यावरणीय मूल्य व्यक्त होते हैं। नाटक में वृंद नामक पात्र कहता है- "जो अपने समय का / उत्तर नहीं देता/ समय उसके लिए काल हो जाता है/... उत्तर सूर्य जल के मौन में डूबा / प्रश्न की ऊष्मा घिरा हुआ काल है/ एक ओर प्यास/ दूसरी ओर अथाह जल"[16]

हबीब तनवीर के नाटकों में छत्तीसगढ़ी आदिवासी जीवन संस्कृति दृष्टव्य हैं। हबीब तनवीर ने 'नया थियेटर' (1959 ई.) के माध्यम से 'टोटल थियेटर' के नाटकीय मुहावरे को गढ़ा है, जिनमें पर्यावरणीय जीवन मूल्य दृष्टव्य हैं। इनके नाटक 'चरन दास चोर' (1974 ई.) में गुरु जी जिस वृक्ष के नीचे ज्ञान देते हैं, उसे हबीब तनवीर एक टहनी में दर्शाते हैं। 'हिरमा की अमर कहानी' (1985 ई.) बस्तर के आदिवासी जन, जीवन और संघर्ष पर आधारित है। इसकी प्रस्तुति में अभिनय एवं नृत्य के लिए आदिवासियों को शामिल किया गया। आजादी के बाद सत्ता परिवर्तन से उत्पन्न समस्याओं की ओर इंगित किया गया है। इसमें तितुरबसना के लोक हित, उनके जल, जंगल, जमीन के अस्तित्व संघर्ष को दर्शाया गया है। जिसकी संस्कृति में नाटक का नायक कल्हन संघर्षरत है– "यह कहानी आदिवासी रियासत तितुरबसना की है।... तितुरबसना के शासक महाराज हिरमादेव सिंह गंगवंशी के गद्दी पर बैठने के कुछ ही महीने बाद, रियासत तितुरबसना भी दूसरी रियासतों की तरह शासन में शामिल कर ली गई है,....यह तो सच है कि तितुरबसना रियासत की पूरी आबादी आदिवासी है, उनका जीवन आदिवासी जीवन है और आदिवासी जीवन को सामंतवादी जीवन नहीं कहा जा सकता; लेकिन हमने तितुरबसना के आदिवासी राज में, सामंतवादी शासन देखा और हम इस राज को लोकतंत्र से परिचित कराने के संघर्ष में लग गए।"[17] हबीब तनवीर ने भोपाल गैस त्रासदी पर आधारित राहुल वर्मा के नाटक 'भोपाल' का 'जहरीली हवा' (2002 ई.) नामक रूपांतरण एवं निर्देशन भी किया। जिसमें उक्त त्रासदी को चित्रित किया गया है। पर्यावरण की दृष्टि से ये मनुष्य निर्मित त्रासदी है।

स्वदेश दीपक का नाटक 'सबसे उदास कविता' (1998 ई.) समकालीन वर्ग संघर्ष व पर्यावरण चिंतन की पुरजोर आवाज है। अपूर्वा नाटक की अद्वितीय पात्र है। इस नाटक में प्रेम और क्रांति के तेवर है। शिवदयो सिंह जमींदार-पूंजीपति है और जिसके बेटे में भी सामंतीपन है। नाटकीय संघर्ष में इनके विरुद्ध अपूर्वा और डॉ. सुकांत हैं। यह नाटक पर्यावरण की समस्या और समाधान के लिए कड़े कदम उठाता है। यह विकसित देशों द्वारा तीसरी दुनिया में लाए गये कचरे के विरुद्ध जनतांत्रिक प्रतिरोध का नाटक है। जिसमें 'व्यवस्था की अव्यवस्था या अव्यवस्था की व्यवस्था' का नाटकीय अंत प्रस्तुत है। इसमें 1972 ई. के पर्यावरण सम्मेलन के षड्यन्त्र का दोषी जज है। "जज: जानती हो एक जज पर इलजाम लगाने का मतलब। व्हाई शुड आई डू इट अपूर्वा: क्योंकि इससे तीन लोगों का फायदा हुआ। मालिकों ने मुह मांगे दामों पर जगह बेचीं। बिल्डर्ज ने वहाँ फाइव स्टार अपार्टमेंट्स बनाए। इन द हार्ट आफ कैपिटल। और आपके दोस्त का पेट मोटा हो गया। अब तक पाँच बेकार मजदूर आत्महत्या कर चुके हैं।"[18] अपूर्वा जज को मृत्यु दण्ड देती है, उन तमाम लोगों के लिए जो बेबस और मार दिए गए हैं और नगाड़े की विजय सूचक ध्वनि से दृश्य समाप्त होता है।

निष्कर्षतः स्वतंत्रता-पूर्व आधुनिक हिन्दी नाट्य परम्परा के पर्यावरणीय मूल्य वैसे नहीं हैं, जैसे स्वातंत्र्योत्तर समकालीन हिन्दी नाट्य परम्परा में परिलक्षित हैं। यहाँ राष्ट्रीय परिकल्पना में भारत के जल, जंगल, जमीन व वायु की पारिस्थितिकी शामिल है। जिससे पर्यावरणीय मूल्यों की भारतीय संरचना जागृत होती है। नाटक के कथ्य और शिल्प में वह प्रकृति के गीत और हृदय के उद्‌गार व्यक्त करते हैं। आजादी के बाद पर्यावरणीय जीवन मूल्यों के हित हेतु रचनाएं हुई, उनमें पर्यावरणीय समस्याओं के समाधान की ओर प्रयास हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी नाट्य व्यक्ति, समाज, जीवन और पर्यावरण के सम्बन्ध व संघर्ष प्रमुखता से दिखाता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची:

1. अब्दुल्ला दीवाना: लक्ष्मीनारायण लाल, राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006, दूसरा संस्करण- 1976
2. आषाढ़ का एक दिन: मोहन राकेश, राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006, संस्करण- 2005
3. चन्द्रगुप्त: जयशंकर प्रसाद, संजय बुक सेंटर, के. 38/6, गोलघर, वाराणासी-1, संस्करण-2000
4. ध्रुवस्वामिनी: जयशंकर प्रसाद, संजय बुक सेंटर, के. 38/6, गोलघर, वाराणासी-1, संस्करण-1993
5. नाट्यशास्त्र: भरतमुनि: शास्त्री, श्री बाबूलाल शुक्ल, (सं. एवं व्याख्या), चौखंभा संस्कृत संस्थान, पोस्ट बाक्स नं. 1139, के. 37/116, गोपाल मंदिर लेन, वाराणसी-221001, संस्करण- पुनर्मुद्रण, वि. सं.-2067
6. पहला राजा: जगदीशचंद्र माथुर, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, पहला संस्करण-1980, वर्तमान संस्करण-2004
7. प्रतिनिधि कविताएँ: गजानन मा. मुक्तिबोध: राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, चौथा संस्करण- 1991, आवृत्ति- 2007
8. भारतेन्दु और अंधेर नगरी: डॉ. गिरीश रस्तोगी, अभिव्यक्ति प्रकाशन, 847- विश्वविद्यालय मार्ग, इलाहाबाद-211002, संस्करण- 1998

9. भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली-1: सं. ओमप्रकाश सिंह, प्रकाशन संस्थान, 4268/ ठ/ 3, अंसारी रोड, दरियागंज, नई दिल्ली- 110002, संस्करण- 2010
10. यक्षप्रश्न: लक्ष्मीनारायण लाल, राजपाल एंड सन्ज, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110006, दूसरा संस्करण- 1981
11. स्कंदगुप्त: जयशंकर प्रसाद, जनभारती प्रकाशन, 12666/719, दरियाबाद, इलाहाबाद-3, संस्करण- 1998
12. सबसे उदास कविता: स्वदेश दीपक, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1-बी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली-110002, प्रथम संस्करण- 1998
13. समकालीन हिन्दी नाटक सृष्टि और दृष्टि: लव कुमार लवलीन, भावना प्रकाशन, 126, पहाड़गंज, दिल्ली- 110091, संस्करण- 1998
14. हिन्दी साहित्य का इतिहास: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, प्रकाशन संस्थान, 4715/21, दयानंद मार्ग, दरियागंज, नयी दिल्ली-110002, संस्करण-2009
15. हिरमा की अमर कहानी: हबीब तनवीर, पुस्तकायन, 2/4240-ए, अंसारी रोड, दरियागंज नई दिल्ली-110002

फुटनोट

1. नाट्यशास्त्र: भरतमुनि: प्रथमोध्याय: पृ. सं.-28
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास: आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, पृ. सं.- 325
3. भारत दुर्दशा: भारतेंदु हरिश्चंद्र: भारतेंदु हरिश्चंद्र ग्रंथावली-1: सं. ओमप्रकाश सिंह, पृ. सं.-113
4. भारतेन्दु और अंधेर नगरी: डॉ. गिरीश रस्तोगी, पृ सं. -71
5. स्कंदगुप्त: जयशंकर प्रसाद, पृ. सं.- 135
6. चन्द्रगुप्त: जयशंकर प्रसाद, पृ. सं.- 83
7. वही, पृ. सं.- 63
8. ध्रुवस्वामिनी: जयशंकर प्रसाद, पृ. सं.- 29
9. प्रतिनिधि कविताएँ: गजानन मा. मुक्तिबोध: पृ. सं.- 141
10. आषाढ़ का एक दिन: मोहन राकेश, पृ. सं.- 5
11. वही, पृ. सं.- 45
12. पहला राजा: जगदीशचंद्र माथुर, पृ. सं.- 8
13. वही, पृ. सं.- 80
14. अब्दुल्ला दीवाना: लक्ष्मीनारायण लाल, पृ. सं.- 36
15. समकालीन हिन्दी नाटक सृष्टि और दृष्टि: लव कुमार लवलीन, पृ. सं.- 45
16. यक्षप्रश्न: लक्ष्मीनारायण लाल, पृ. सं.- 14
17. हिरमा की अमर कहानी: हबीब तनवीर, पृष्ठ संख्या- 8
18. सबसे उदास कविता: स्वदेश दीपक, पृष्ठ संख्या-70

समाज पर पर्यावरण प्रदूषण का प्रभाव

प्रो. शैलेन्द्र सिंह

विभागाध्यक्ष, समाज शास्त्र विभाग जे.एस. विश्वविद्यालय शिकोहाबाद

डॉ० जितेन्द्र कुमार

असि. प्रोफेसर (मैकेनिकल इंजीनियरिंग) जे.एस. विश्वविद्यालय शिकोहाबाद

प्रस्तावना

पर्यावरण प्रदूषण एक ऐसी चुनौती है जो आजकल हर व्यक्ति, समुदाय और समाज को सामना करना पड़ रहा है। यह विश्वभर में स्थाई और गंभीर समस्या बन चुकी है, जिसके कारण आज हमारे समाज को अनेक प्रकार के प्रभाव सहने पड़ रहे हैं। इस प्रस्तावना में, हम इस विषय पर विचार करेंगे कि पर्यावरण प्रदूषण का समाज पर कैसा प्रभाव पड़ता है और कैसे हम इसे समाधान कर सकते हैं।

पर्यावरण प्रदूषण का समाज पर प्रभाव हमें हर क्षेत्र में महसूस होता है, चाहे वह स्वास्थ्य, आर्थिक, सामाजिक या सांस्कृतिक हो। इसके प्रभाव सिर्फ व्यक्तियों को ही सीमित नहीं रहते, बल्कि यह पूरे समाज को प्रभावित करता है। प्रदूषण के कारण स्वास्थ्य समस्याएं बढ़ रही हैं, सामाजिक संघर्ष बढ़ रहा है, और आर्थिक विकास में बाधाएं आ रही हैं।

इस प्रस्तावना में, हम पर्यावरण प्रदूषण के प्रभाव के प्रमुख क्षेत्रों पर ध्यान देंगे और इसके समाधान के उपायों पर भी चर्चा करेंगे। हम इस विषय पर शोध करके, समाधान और चुनौतियों को समझने का प्रयास करेंगे ताकि हम समृद्ध और स्वस्थ समाज की दिशा में कदम बढ़ा सकें।

मुख्य शब्द

1. पर्यावरण प्रदूषण
2. समाज
3. प्रभाव
4. स्वास्थ्य
5. आर्थिक
6. सामाजिक
7. प्रदूषित वातावरण
8. विकास
9. ध्वनि प्रदूषण
10. जल प्रदूषण

पर्यावरण प्रदूषण के प्रकार

1. वायु प्रदूषणः यह प्रदूषण वायुमंडल में विभिन्न धुएं, धूल और विषाक्त गैसों के रूप में परिणत होता है, जो वायुमंडलीय प्रदूषण के रूप में जाना जाता है।
2. जल प्रदूषणः जल प्रदूषण जल स्रोतों, नदियों, झीलों और समुद्रों में विभिन्न प्रकार के विषाक्त पदार्थों के स्रोत से होता है।
3. मृदा प्रदूषणः इसमें मृदा में विभिन्न विषाक्त पदार्थों का मिलन शामिल होता है, जो जमीन की गुणवत्ता को कम कर सकते हैं।

4. ध्वनि प्रदूषण: यह प्रदूषण उच्च ध्वनि स्तरों के कारण होता है, जैसे कि उच्च आवाज, उच्चार्य और कारखानों से उत्पन्न ध्वनि।
5. स्थलीय प्रदूषण: यह स्थानीय स्तर पर होता है और विशेष स्थानों पर होता है, जैसे कि कारखानों, उद्यानों, और स्थानीय साधारण की संपत्तियों में।
6. अन्य प्रदूषण: इसके अलावा, कई अन्य प्रकार के प्रदूषण होते हैं जैसे कि रैडियशन प्रदूषण, अंतरिक्ष प्रदूषण, और अवाज प्रदूषण।

ये प्रकारों में पर्यावरण प्रदूषण हमारे पर्यावरण, स्वास्थ्य और समाज को विभिन्न तरीकों से प्रभावित करते हैं।

मिलेनियम विकास लक्ष्य (Millennium Development Goals&MDGs)

विश्वसमुदाय द्वारा गठित गोल मानक हैं, जिन्हें अंतर्राष्ट्रीय समुदाय ने संयुक्त रूप से स्वीकृत किया था। इन लक्ष्यों का मुख्य उद्देश्य गरीबी, अशिक्षा, अस्वस्थता, जाति और लिंग के आधार पर असमानता, पर्यावरण संरक्षण, और सामाजिक समानता जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सुधार करना है।

इन लक्ष्यों को 2000 में स्वीकृत किया गया था और इन्हें 2015 तक पूरा करने का उल्लेख किया गया था। ये लक्ष्य विभिन्न क्षेत्रों में सुधार करने के लिए विश्व समुदाय को एक साथ आने का आह्वान करते हैं। उनमें संबंधित क्षेत्रों में उपाय करने के लिए नीतियों, कार्यक्रमों, और संसाधनों का प्रदान करने का लक्ष्य है।

मिलेनियम विकास लक्ष्य निम्नलिखित थे:

1. गरीबी और भूखमरी के खिलाफ लड़ाई
2. बुनियादी शिक्षा की प्रोत्साहना
3. स्त्री और पुरुष के बीच समानता और महिला सशक्तिकरण
4. बच्चों की मृत्यु दर कम करना
5. मातृत्व स्वास्थ्य सुनिश्चित करना
6. एडीएस/एचआईवी, मलेरिया और अन्य बीमारियों के खिलाफ लड़ाई
7. पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता
8. वैश्विक साझेदारी को बढ़ावा देना
9. वित्तीय संसाधनों का संभावित कारगरता और गवाही
10. विशेष समस्याओं के समाधान के लिए एक सामाजिक न्यायपूर्ण प्रणाली की अवधारणा

ये लक्ष्यों का उत्तराधिकारी विकास स्थल परियोजना (Sustainable Development Goals& SDGs) है, जिन्हें 2015 में स्वीकृत किया गया था। इसमें विकास और पर्यावरण के संबंधों को समाहित किया गया है और इसका लक्ष्य 2030 तक वृद्धि को सुनिश्चित करना है, विशेष रूप से उन लोगों के लिए जो सबसे अधिक जरूरतमंद हैं।

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य गुण है जो हमारे समाज में पर्यावरणीय समस्याओं को समझने, संज्ञान और समाधान करने की क्षमता को दर्शाता है। यह उस संज्ञान की भावना है जिसमें हम पर्यावरण के साथ हमारे संबंधों के प्रति समझदार और संवेदनशील होते हैं।

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता में हमें अपने पर्यावरण की सच्ची स्थिति को समझने के लिए सक्षमता दिखानी चाहिए। यह मानवीय गतिविधियों के पर्यावरणीय प्रभावों को समझने और उनके बुरे प्रभावों को कम करने के लिए जरूरी है। इसका मतलब है कि हमें प्राकृतिक संसाधनों का उचित उपयोग करना, प्रदूषण को कम करना, ऊर्जा की सही उपयोग करना, और पर्यावरण की देखभाल करना चाहिए।

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता में हमें अपने स्थानीय समुदाय के साथ और विश्व समुदाय के साथ भी जोड़ना चाहिए। यह एक सहयोगी और समर्थनशील दृष्टिकोण है जो हमें पर्यावरण समस्याओं के समाधान में मदद करता है। एक साथिक समाज बनाना और पर्यावरण की देखभाल करने के लिए प्रेरित करना हमारे लिए आवश्यक है।

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता भी विश्वास का प्रतीक है कि हमारा कोई कार्य पर्यावरण के लिए अविलंबित होगा। हमें अपनी आदतें और व्यवहार को बदलकर पर्यावरण के साथ अनुकूल और योगदानकर्ता बनना चाहिए।

पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता व्यक्तिगत, सामाजिक, और राजनीतिक स्तर पर एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। इसके माध्यम से हम सभी को अपनी जिम्मेदारियों को समझने और पर्यावरण के साथ ठीक तरीके से संबंध स्थापित करने की समझ प्राप्त होती है।

अंत में, पर्यावरण के प्रति संवेदनशीलता विकास और सुधार के लिए एक महत्वपूर्ण और अनिवार्य गुण है। यह हमें एक संतुलित और स्थायी पर्यावरण की दिशा में आगे बढ़ने की सामर्थ्य प्रदान करता है, जो हमारे और हमारे आसपास के समुदाय के लिए एक बेहतर भविष्य की दिशा में मदद करता है।

पर्यावरण प्रदूषण के कु प्रभाव

(पर्यावरण प्रदूषण के कुछ प्रभाव) बहुतायत में हमारे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य के लिए हानिकारक होते हैं। यहाँ कुछ मुख्य प्रदूषण प्रभाव हैं:

1. वायु प्रदूषण: यह सांस लेने की वायु में निकले विभिन्न धुएं और अणु या केमिकल्स के शामिल होने के कारण होता है। यह मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है, जैसे कि फेफड़ों की बीमारियाँ, हृदय रोग, धूम्रपान से संबंधित समस्याएं, और अस्थमा।
2. जल प्रदूषण: जल प्रदूषण के कारण जलमार्ग का प्रदूषण, अवैध और स्वच्छता के संबंध में जलाशयों का अधिकाधिक प्रयोग, और इसके परिणामस्वरूप समुद्र, नदी, झीलें, और पानी की अद्वितीयता में बदलाव होता है। यह मानव स्वास्थ्य के साथ ही जलवायु और जलविविधता को भी प्रभावित कर सकता है।
3. प्रादुर्भावन: औद्योगिक प्रदूषण और अनुवांशिक प्रभावों के कारण भूमि, पानी, और हवा की अप्रियता हो सकती है। इससे मानव जीवन की गुणवत्ता प्रभावित होती है, और यह भी जलवायु परिवर्तन को बढ़ा सकता है।
4. ध्वनि प्रदूषण: यह उच्च स्तर की ध्वनि के कारण होता है, जो सुनने की क्षमता को प्रभावित करता है और मानव स्वास्थ्य को प्रभावित कर सकता है, जैसे कि न्यूरोलॉजिकल और मानसिक समस्याएं।
5. जलवायु परिवर्तन: इसके कारण विभिन्न जलवायु बदलाव होते हैं, जैसे कि वायुमंडलीय उष्णता का बढ़ना, जलवायु की अनियमितता, और विभिन्न प्राकृतिक आपदाओं की बढ़ती संख्या। ये परिवर्तन मानव जीवन के समस्त पहलुओं को प्रभावित कर सकते हैं, जैसे कि खेती, प्रजनन, और सामाजिक व्यवस्था।

इन प्रभावों के अलावा और भी कई प्रदूषण प्रभाव होते हैं, जो हमारे पर्यावरण और मानव स्वास्थ्य को प्रभावित करते हैं। इसलिए, इन प्रभावों को कम करने के लिए हमें प्रदूषण नियंत्रण के उपायों का प्रयास करना चाहिए, जैसे कि साफ ऊर्जा का उपयोग, और प्राकृतिक संसाधनों का सही उपयोग।

पर्यावरण प्रदूषण का समाज पर प्रभाव

पर्यावरण प्रदूषण का समाज पर प्रभाव व्यापक और गंभीर होता है। यह समाज के विभिन्न पहलुओं पर सीधा और परतत रूप से प्रभाव डालता है, जैसे कि स्वास्थ्य, आर्थिक, सांस्कृतिक, और राजनीतिक। इसलिए, प्रदूषण के प्रभाव को समझने के लिए हमें समाज के विभिन्न पहलुओं को विश्वसनीय रूप से देखना चाहिए। निम्नलिखित विषयों में प्रदूषण के प्रभाव की विस्तृत चर्चा की जाएगी:

1. स्वास्थ्य: पर्यावरण प्रदूषण का सबसे अधिक प्रमुख प्रभाव स्वास्थ्य पर होता है। वायु, जल, और भूमि प्रदूषण से हमारे स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव होते हैं। वायु प्रदूषण के कारण अस्थमा, फेफड़ों की बीमारियाँ, हृदय रोग, और कैंसर जैसी गंभीर बीमारियाँ होती हैं। जल प्रदूषण के कारण जलमार्ग का प्रदूषण, पेट्रोलियम उत्पादों के प्रदूषण के कारण पेट्रोकेमिकल जलमार्ग का प्रदूषण, और उद्योगिक जलमार्ग का प्रदूषण होता है। इससे जल और पेट्रोलियम के प्रदूषण से कैंसर, जांचगंजापित रोग, और डायरीया जैसी बीमारियाँ होती हैं। भूमि प्रदूषण के कारण मानव और जीवन के लिए किसी भी प्रदूषण प्रकार की भूमि में प्रदूषण होने के कारण बिमारियों के विस्तार की आशंका होती है।

2. आर्थिक प्रभाव: पर्यावरण प्रदूषण के कारण विभिन्न क्षेत्रों में नुकसान होता है। उदाहरण के लिए, उद्योगों और कृषि क्षेत्रों में प्रदूषण के कारण उत्पन्न उत्पादों की गुणवत्ता कम होती है और यह उत्पादों की बिक्री को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त, स्वास्थ्य समस्याओं के कारण स्वास्थ्य खर्च में वृद्धि होती है और इससे सामाजिक और आर्थिक बोझ बढ़ जाता है।
3. सामाजिक प्रभाव: पर्यावरण प्रदूषण समाज के संरचना और संगठन को प्रभावित कर सकता है। यह समुदायों के बीच संघर्ष और आपसी विश्वास को कम कर सकता है। सामाजिक असमानता और भूमिका के अभाव के कारण कुछ लोग प्रदूषण के प्रभाव से अधिक प्रभावित होते हैं।
4. सांस्कृतिक प्रभाव: पर्यावरण प्रदूषण के कारण वातावरण की सुखदता कम होती है और लोगों के आत्मविश्वास में कमी आती है। यह लोगों को उदास और निराश करता है और सामाजिक समृद्धि पर प्रभाव डालता है।
5. राजनीतिक प्रभाव: पर्यावरण प्रदूषण से संबंधित राजनीतिक अवस्था में बदलाव होता है। यह सरकारों के नीतियों और कानूनों पर भी प्रभाव डालता है, और पर्यावरण संरक्षण के लिए नई प्रक्रियाओं को लागू करने की आवश्यकता होती है।

पर्यावरण प्रदूषण के प्रभाव को समझकर हम इसे कम करने के उपाय ढूंढ सकते हैं, जैसे कि प्रदूषण नियंत्रण और विकास के साथ संगठित तरीके से समग्र उपाय। इसके लिए सामाजिक, आर्थिक, और नैतिक संज्ञान बढ़ाने के साथ-साथ सशक्त नीतियों की आवश्यकता होती है। यदि हम प्रदूषण को कम नहीं करते हैं, तो इससे समाज को गंभीर और दु:खद प्रभाव हो सकते हैं, जो समाज की समृद्धि और समानता को प्रभावित कर सकते हैं।

संदर्भ

1. श्रीवास्तव, प्रवीण कुमार, और अवनिंद्र कुमार. "पर्यावरण प्रदूषण और मानव स्वास्थ्य: भारतीय परिप्रेक्ष्य." नागरिक समाज: नागरिक अनुसंधान पत्रिका 14, नंबर 2 (2014): 87-101.
2. गोस्वामी, संजय, और विजय त्रिपाठी. "पर्यावरण प्रदूषण और सामाजिक संघर्ष: एक अध्ययन." नागरिक समाज: नागरिक अनुसंधान पत्रिका 12, नंबर 2 (2012): 131-143.
3. शर्मा, आकाश, और अशोक कुमार. "पर्यावरण प्रदूषण और समाज." भारतीय अर्थव्यवस्था आणि समाज: अंतरराष्ट्रीय पत्रिका 2, नंबर 4 (2012): 57-68.
4. सिंह, प्रियंका, और संजीव कुमार. "पर्यावरण प्रदूषण और सामाजिक विविधता: एक अध्ययन." नागरिक समाज: नागरिक अनुसंधान पत्रिका 16, नंबर 1 (2016): 45-57.
5. मिश्र, संजय कुमार, और अजय कुमार. "पर्यावरण प्रदूषण का सामाजिक प्रभाव: एक अध्ययन." भारतीय समाजशास्त्रीय अध्ययन 3, नंबर 2 (2016): 127-138.

बालसाहित्य में पर्यावरणीय चेतना

डॉ० ज्योति गौतम

असि0 प्रोफेसर (हिन्दी विभाग) डॉ0 शकुन्तला मिश्रा राष्ट्रीय पुनर्वास विश्वविद्यालय लखनऊ

वर्तमान समय में पर्यावरण बचाने के संदर्भ में कई योजनाएं चलाई जा रही है। जिसके तहत सरकार वृक्षारोपड़ कार्यक्रम चला रही है। इसके साथ ही साथ समय-समय पर सरकार अनेकों कार्यक्रमों एवं संगोष्ठियों का आयोजन भी करती है। आज सरकार पर्यावरणीय चेतना के साथ ही साथ सतत् विकास की अवधारण को विकसित करने में लगी है।

बाल साहित्य में पर्यावरणीय चेतना का विकास करने के लिए सरकार द्वारा बनाये गये पाठ्यक्रम में बाल साहित्य के माध्यम से बच्चों में पर्यावरणीय चेतना का विकास करने के लिए ऐसी कविताएं एवं कहानियां लिखी गई है। जिससे बच्चों में पर्यावरणीय चेतना का विकास हो सके। यथा- अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' जी 'जागो प्यारे' कविता में वो प्रकृति के महत्त्व को निम्न प्रकार समझाते हुए लिखते है कि-

'उठो लाल अब आंखे खोलो।
पानी लायी हूँ, मुंह धो लो।
बीती रात कमल-दल फूले।
उनके ऊपर भौंरे झूले।
चिड़िया चहक उठीं पेड़ो पर।
बहने लगी हवा अति सुन्दर।
नभ में प्यारी लायी छायी।
धरती ने प्यारी छवि पायी।
भोर हुआ सूरज उठ आया।
जल में पड़ी सुनहरी छाया।
ऐसा सुन्दर समय न खोओ।
मेरे प्यारे अब मत सोओ।'

प्रकृति हमारे अस्तित्व का आधार है। यही कारण है कि हमारे पूर्वज सदियो से प्रकृति के विषय में हमें जागरूक करते आ रहे हैं। इसी क्रम में हम भी अपने बच्चों को सदैव प्रकृति के विषय में बताते रहे हैं कि प्रकृति का हमारे जीवन पर क्या प्रभाव पड़ता है।

हमारे समाज के कवि साहित्यकार आदि सदियों से प्रकृति के महत्त्व को समझाते रहे हैं। सुमित्रा नन्दन पंत को तो प्रकृति का सुकुमार कवि कहा जाता है। उन्होने लिखा कि-

छोड़ द्रुमो की मृदु छाया
प्रकृति से तोड़े माया
कैसे उलझा दूं मै लोचन
बाले तेरे इस बाल जाल में।

अपने साहित्य में प्रकृति का सचित्र वर्णन किया है। प्रकृति प्रेम से बाल साहित्य भरा पड़ा है। कवियों व साहित्यकारों ने प्रकृति के एक-एक पहलू, पहर, क्षण-क्षण का वर्णन किया है। इन साहित्यकारों ने अपने साहित्य के माध्यम से बालकों के मन में प्रकृति प्रेम को देश प्रेम से जोड़े रखा।

बाल साहित्य में प्रकृति प्रेम का दर्शाया जाना इस बात का।तक है कि हमारे साहित्यकार बच्चों के मन में प्रकृति के प्रति आदरभाव इसलिए जगाना चाहते थे जिससे व्यक्ति जीवन भर प्रकृति से जुड़ा रहे।

उनका सृजन बालकों के अन्तर्मन को प्रभावित करता है। पर्यावरण शबद का निर्माण परि+आवरण शब्दों से मिलकर हुआ है। पर्यावरण का तात्पपर्य: है आस-पास का परिवेश और वातावरण पर्यावरण में प्रकृति के सभी अवयव समाहित होते है। इसमें

आकाश, जमीन, समुद्र, हवा, पर्वत, जंगल, खेत, वाटिका, वृक्ष, लता पुष्प, पल्लव जीव जन्तु आदि सभी का समावेश है। मानव का प्रकृति ही पोषण करती रही है। जैसे-जैसे नगरीकरण और औद्योगीकरण हुआ बड़ा प्रदूषण के अलावा जल, जंगल, जमीन तीनों पर खतरा मण्डरा रहा हैं प्रकृति के दोहन के चलते हम प्राकृतिक असंतुलन की ओर बढ़ रहे है। यही समस्या आगे चलकर हमारे जीवन को बहुत बड़ी समस्या में डाल सकती है।

बाल काव्य के विकास की आरम्भिक अवस्था में कवियों ने प्रकृति के विभिन्न अवयवों व रूपों का चित्रण अपनी कविताओं में किया है। धरती, आकाश, वायु, समुद्र, प्रकृति प्रेम, जीव-जन्तु आदि का महत्त्व बाल काव्य में प्रमुखता से किया गया है। यथा साह द्विवेदी ने लिखा कि-

प्यारे-प्यारे तारे चमको,
नीचे चमको, ऊपर चमको
नभ पर चमको, भू पर चमको,
नदी और लहरों में चमको।
वही द्वारिका प्रसाद माहेश्वरी लिखते है कि
जिसने धरती गगन बनाया।
जिसने तारों को चमकाया,
जिसने फूलों को महकाया
जिसने सर-सर हवा चलाई,...

गोपाल सिंह नेपाली जी लिखत है कि-

यह लघु सरिता का बहता जल।
कितना शीतल कितना निर्मल
यह लघु सरिता का जल

डॉ. जगदीश चन्द्र शर्मा लिखते है कि-

करें प्रतिज्ञा रहें सन्तुलित पर्यावरण हमारा
पानी, मिट्टी और वायु से मिटे अशुद्धि समूची
हरियाली के विस्तारण को मिले प्रतिष्ठा ऊंची।

डॉ. राष्ट्र बन्धु न लिखा है कि -

जन जन का कल्याण,
जन जन का उत्थान।
एक नया अभियान,।
पर्यावरण शुद्ध रखेगे,
वृक्ष लगाएंगे
दुखद प्रदूषण दूर करेंगे।
कष्ट भगाएंगे।
हमारा है संकल्प महान हमारा एक नया अभियान।

सीता राम गुप्त जी लिखते है कि-

अगर साइकिल अपना लें सब
हल हों प्रश्न हजार
बचे विदेशी मुद्रा होगा
पर्यावरण सुधार

साथ साइकिल के हो सबको
हरियाली से प्यार
वृक्ष लगाये मिले बनों से
शद्ध वायु उपहार।

विनोद चन्द्र पाण्डेय लिखते है कि-

पर्यावरण संतुलित रखना,
है कर्तव्य हमारा।
हो न प्रदूषित पवन, धारि, ध्वनि,
बहें सुखों की धारा।

बाबू लाल शर्मा प्रेम कहते है कि-

धरती, धूप, पवन, पानी
ये सारा गगन हमारा है
हम इसको गन्दा न करें
ये पर्यावरण हमारा है,

सुन्दर लाल 'अरूणेश' लिखते है कि-

पेड़ और पौधे धरती का
सारा जहर पचा लेते है।
वे समाज के हित चिंतक वन,
सबकी जान बचा लेते है।
जिये अधिक दिन इससे पेड़ों
का परिवार बढ़ाना होगा
सुख की सांस अगर लेनी है
पर्यावरण बचाना होगा।

रवीन्द्र कुमार राजेश ने लिखा है कि-

अमर स्वस्थ सब रहना चाहें
रोकें नित बढ़ रहा प्रदूषण
शुद्ध वायु प्राकृतिक सम्पदा
होते जीवन के आभूषण

कल्पनाथ सिंह लिखते है कि-

बच्चों तुमको इस धरती को
फिर से स्वर्ग बनाना होगा।
सूरज बनकर तुम्हें धरा पर,
नया सवेरा लाना होगा।

वहीं डॉ. तारादत्त निर्विरोध लिखते है कि-

''फैल रहा चहुँ ओर प्रदूषण,
आओ उसे मिटाये।
संकल्पों के पौधे रोपें,
अनगिनत वृक्ष लगाए।''

यथा कहा जा सकता है कि प्राकृतिक सम्पदा हमारे जीवन का आधार है प्रकृति है तो हम है यदि प्रकृति नही तो हम नही। आज आधुनिकाता के दौर में जहाँ मनुष्य प्रकृति का अत्याधिक दोहन कर रहा है वहां इसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है साहित्य में प्रकृति के महत्त्व को जिस तरह बताया गया है वह सराहनीय है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. बाल गीत साहित्य (इतिहास एवं समीक्षा), लेखक - निरंकार देव सेवक।
2. बाल साहित्य अवधारणा एवं आयाम: वर्तमान संदर्भ, लेखक- डॉ. श्रीकांत मिश्रा, श्रीमती होबी शर्मा।
3. हिन्दी बाल साहित्य एवं बाल विमर्श, संपादक- उषा यादव।
4. पर्यावरण और समकालीन हिन्दी साहित्य, लेखक- डॉ. प्रभाकरन हेब्बार इल्लत।
5. पर्यावरण अध्ययन और शिक्षण शास्त्र, लेखक- ओम प्रकाश, बिमला प्रकाश।
6. हिन्दी का पर्यावरणीय साहित्य, सम्पादक- प्रभाकरन हेब्बार इल्लत।
7. हिन्दी बाल साहित्य की रूपरेखा, लेखन- डॉ. श्री प्रसाद।

अनबीता व्यतीत उपन्यास में अभिव्यक्त पर्यावरण संकट

डॉ० जयन्ती सिंह

हिन्दी विभाग, विश्वभारती शांतिनिकेतन- (पश्चिम बंगाल)

पर्यावरण एवं मनुष्य का गहरा संबंध है। पर्यावरण में ही मनुष्य का अस्तित्व विकसित होता है। दोनों ही एक दूसरे को प्रभावित करते हैं। पर्यावरण शब्द परि + आवरण से बना है। परि का अर्थ आस-पास अथवा बाहर तथा आवरण का अर्थ सतह होता है। दूसरे शब्दों में कहें तो पर्यावरण वह परिवेश होता है जहाँ व्यक्ति मानसिक एवं शारीरिक रूप से विकसित एवं समृद्ध होता है। परिवेश के अनुकूल ही उसका व्यक्तित्व बनता है। साहित्यकार भी समाज का अंग है। वह बदलते हुए परिवेश की संवेदना को निरन्तर महसूस करता हुआ उसे एक भाषिक आयाम देता है। उसकी संवेदना केवल मनुष्य के प्रति ही सीमित नहीं होती है बल्कि वह अपने परिवेश जगत की हर चर-अचर वस्तु के प्रति रागात्मक तौर से जुड़ा होता है। कमलेश्वर भी ऐसे ही संवेदनशील कथाकार रहें हैं जिनकी लेखकीय संवेदना साधारण निम्न वर्ग मनुष्यों के साथ ही साथ परिवेश एवं जीव-जंतु तक भी विस्तृत रही है। किसी भी लेखक की यह व्यापक संवेदना ही उसकी रचना को अधिक विश्वसनीय एवं जिवंत बनाती है। कमलेश्वर समकालीन समय के ऐसे ही जागरूक एवं सचेत रचनाकार हैं जिनकी नजर अपने समय की प्रत्येक समस्या पर है। इसी कारण उनकी रचनात्मक संवेदना की परिधि में केवल मनुष्य के सुख-दु:ख ही नहीं आते बल्कि आस-पास का परिवेश एवं उसकी समस्या भी आती है। लेखक ने बदलते हुए बाजारवादी दौर में दिन-प्रतिदिन पर्यावरण पर बढ़ते हुए संकट एवं उसके परिपेक्ष्य में मनुष्य की शून्य होती हुई रागात्मक संवेदना को एक गहरे स्तर पर महसूस किया है। उनके उपन्यासों पर अगर हम नजर डालें तो समुद्र में खोया हुआ आदमी, डाक बंगला, आगामी अतीत, कितने पाकिस्तान, एक सड़क सत्तावन गलियाँ, अनबीता व्यतीत, सुबह दोपहर शाम जैसे प्राय: सभी उपन्यासों की कथावस्तु में कमलेश्वर जी अपने परिवेश एवं प्रकृति के प्रति पूरी तरह संवेदनशील नजर आते हैं। 'अनबीता व्यतीत' सन् 2004 में पर्यावरण को केंद्र करके ही लिखा गया है। उपन्यासकार ने विघटित हो रही सामन्तवादी व्यवस्था में मध्यवर्गीय परिवार की कथा को उपन्यास की विषय-वस्तु बनायी है। सामन्ती प्रथा के खत्म होने के कारण भोग-विलास में लिप्त राजा-महाराजा तथा सामन्तों की जीवन शैली को काफी प्रभावित किया। उनकी आय तो कम हो गई किंतु भोग विलासी जीवन की प्रवृति को वे आसानी से त्याग नहीं सकते थे। लगातार कम होती हुई आमदनी के कारण वे ऐसे माध्यम की तलाश में लग गए जो उनकी शाहनशाही अय्याशी को कायम रख सके। महाराजा साहब खत्म होते हुए सामन्ती प्रथा से भीतर ही भीतर बेचौन हैं। उनका दामाद उनसे मिलकर नीली झील पर आए हुए पशु-पक्षियों का व्यापार शुरू करता है। कमलेश्वर मासूम पशु-पक्षियों के ऊपर मंडराते हुए इस संकट पर बड़ी ही गहराई से विचार किया है। इसकी भूमिका में वे लिखते हैं, "और इन्हीं पछियों में आ मिलते हैं, वे परदेसी पंछी जो सर्दियों में सायबेरिया और उत्तरी गोलार्ध्द से उड़कर हर वर्ष भारत आते हैं। यहाँ बसेरा करते हैं। ये सुन्दर और मासूम पंछी लगभग 11,000 वर्षों से भारत आते हैं, हजारों मील का सफर तय करते हैं, हिमालय को पार करते हैं और सर्दियों में भारत को अपना घर बना लेते हैं। लेकिन इन मासूम पंछियों के पीछे भी मृत्यु पड़ी रहती है। जगह-जगह इन्हें पकड़ा य मारा जाता है और इनका व्यापार किया जाता है।

इसी यथार्थ को उजागर करती है और इसी सत्य को उद्‌घाटित करती है, वह नीली झील, जहाँ वे परदेसी पंछी जीवन पाने के लिए आते हैं-बसेरा करते हैं।

परंतु शिकारी बंदुक की गोली छूटती है और सारा वातावरण कोलाहल से भर जाता है, इसी दारुण मृत्यु परंपरा के अंधे अभियान से मुक्ति का एक आरव्मान है यह उपन्यास।"[1]

महाराज साहब और समीर के पिता जहाँ एक ओर अपने पर्यावरण के प्रति असंवेदनशील नजर आते हैं वहीँ महारानी राजलक्ष्मी, समीरा एवं गौतम जैसे पात्र अपने पर्यावरण से जुड़े हुए हैं। वे अपने कर्तव्य के प्रति सजग एवं क्रियाशील हैं। महारानी राजलक्ष्मी जब शिकार किए गए मृत हिरणी की निर्जीव आँखें देखती है तब वह व्यथित हो उठती है "हे भगवान ! जब तूने इन जीव-जंतुओं को जीवन दिया था तो इन्हें इतनी शक्ति भी देता कि ये बेचारे अपने जीवन की रक्षा कर पाते।

तेरी दी धरोहर को उन निर्दयी हाथों से बचा पाते जो तूने इन्हें दी थी। विचित्र है तेरी माया ख्र जीवन मृत्यु का यह दुखदायी संयोग काश इंसान इसे समझ पाता।"[2]

वे अपने महल में पाले हुए पक्षियों से बेहद प्यार करती हैं। काकातुआ के जोड़े को वे कैद करके नहीं रखती। एक विदेशी बहेलियें से रानी माँ ने उन जोड़ों को खरीदा था। काकातुआ के वे जोड़े अफ्रीका से लाए गए थें जिनकी नस्ले अब खत्म हो रही थी। महारानी इन्हें संतान समान ही प्यार करती हैं। महाराज जब उन मासूम पंक्षियों पर गोली चला देते हैं तब वह इतनी मर्माहित होती है कि अपने प्राण त्याग करती है। वे कहती हैं, "महाराज किसी की जान लेना तो बहुत आसान है लेकिन मुश्किल है किसी को जिंदगी देना।"[3]

महारानी की तरह ही समीरा का चरित्र भी मानवतावादी एवं उदात्तपूर्ण है। वह पक्षियों के प्रति करुणापूर्ण व्यवहार करते हुए उन्हें कैद से आजाद करती है। वह अपने पिटा द्वारा परिंदों के एक्सपोर्ट करने की कटु आलोचना करती है,

"परिंदों को एक्सपोर्ट करना था? इन मासूम परिंदों को जिन्होंने आपका कभी कोई नुकसान नहीं किया? जिन पर किसी का कोई अधिकार नहीं। और फिर इन परिंदे ने आपका क्या बिगाड़ा था।........... आपने इन्हें एक्सपोर्ट करने के लिए कैद किया था? क्या धन की भूख ने आपकी मान-मर्यादा और धर्म सब कुछ निगल लिया है- आप राजपुत्र नहीं हत्यारे हैं- हत्यारे।"[4]

वह पंक्षियों के व्यवसाय पर बेहद क्रुछ्द होती है। परंतु कुंवर नरेद्र सिंह पर इसका कोई असर नहीं होता। कमलेश्वर ने इस प्रसंग द्वारा मनुष्य के अवसरवादी मानसिकता का चित्रण कर उन परिस्थितियों को स्पष्ट करना चाहा है जिनके कारण प्राकृतिक झील प्रदेश य पशु-पंक्षियों का व्यावसायीकरण हुआ है।

समीरा पति के कृत्य पर पूरी तरह बुझ जाती है। वह नीली झील पर आगंतुक पक्षियों की प्राण-रक्षा में अपने प्राण भी गंवा बैठती है। समीरा के अधूरे उद्देश्य गौतम पूरा करता है। वह नीली झील को टूरिस्टों के पर्यटन का केंद्र अवश्य बनाता है। किंतु वहाँ के पक्षियों य जलीय जंतुओं को मारकर खाने की मनाही करता है।

आर्कलोजिकल सर्वे ऑफ इंडिया के अफसर को स्थिति स्पष्ट करते हुए कहता है, "टूरिस्टों को आकर्षित करने और रिझाने के लिए हमने भी यदि हांगकांग के रेस्टोरेंट में ग्लास टैंक्स में तैरती मछलियों, केकड़ों य झींगे को पसंद करेंगे और चुनाव के बाद वाही जिंदा मछली केकड़ा य शाही झींगा आपकी प्लेट में पक कर आ जाता है।"[5]

गौतम के इस कथन द्वारा यह स्पष्ट हो जाता है कि ख्र उपन्यासकार पर्यटन के विरुध्द नहीं है क्योंकि देश की अर्थ-व्यवस्था में पर्यटन से होने वाली आमदनी का एक बड़ा योगदान है। परंतु पर्यटन केन्द्रों में स्थित झीलों-तालाबों में अथवा वनों में रह-रहे पशु-पक्षियों के जीवन का सौदा न किया जाए। गौतम न सिर्फ कार्यालयी स्तर पर इसकी कोशिश करता है बल्कि व्यक्तिगत स्तर पर भी माँ द्वारा जमा किए गए पैसे को प्राणिमात्र के लिए धर्मशाला बनवा देता है और जहाँ से झील की सरहद शुरू होती है वहीं पर एक बड़ा सा बोर्ड लगवा देता है,

"पंछियों का धर्मशाला
यहाँ शिकार करना मना है।"[6]

और इस तरह समीरा के प्रति अपने मुक प्रेम के लिए अपना समर्पण देता है। इस प्रकार कमलेश्वर ने इस उपन्यास में पर्यावरण संकट को दिखाते हुए यह स्पष्ट किया है कि हमें अपने परिवेश को सुरक्षित रखने के लिए आगे बढ़ते हुए व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर उठ कर कर्तव्य करना होगा। तभी जाकर मनुष्य एवं जीव-जन्तुओं के अस्तित्व को बचाया जा सकता है।

संदर्भ सूचि

1. कमलेश्वर, अनबीता व्यतीत, लोकभारती प्रकाशन, पहली मंजिल, दरबारी बिल्डिंग, महात्मा गाँधी मार्ग, इलाहाबाद -211001, पहला संस्करण: 2008, भूमिका
2. वही पृष्ठ- 8
3. वही पृष्ठ- 27
4. वही पृष्ठ- 63
5. वही पृष्ठ- 132
6. वही पृष्ठ- 147

जनपद बिजनोर में जल संसाधन संरक्षण व प्रबंधनः एक विश्लेषण

ज्योति

Research Scholar, M.J.P. Rohilkhand University

डॉ० श्रीमति रेशमी एस रावल

Associate Professor, Department of Geography, R.S.M.P.G College, Dhampur

शोध सारः

वर्तमान समय में जल की समस्या दिनप्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। लोगों के पास न तो पीने के लिए और न ही आम प्रयोग के लिए पर्याप्त मात्रा में जल है। बहुत से गाँव या नगर है जिसमें जल की समस्या गंभीर विषय बना हुआ है। जहाँ पीने के लिए भी स्वच्छ जल नहीं है। यदि गाँव पर दृष्टि डाली जाए तो वहाँ की महिलाएं पीने के लिए जल नलकूपों, कुओं जलाशयों इत्यादि से लेकर आती हैं। अतः ऐसी परिस्थिति में जल संरक्षण एक अहम विषय के रूप में सामने आता हैं। हालांकि आज के समय में देखा जाए तो तकनीकी विकास ने अशुद्ध जल को भी पीने के योग्य बना दिया है किंतु फिर भी वर्तमान पानी की कमी मनुष्य के सतत् विकास के लिए बहुत ही चिंतनीय विषय हैं। वर्तमान समय मे न्यू मीडिया ने पारम्परिक मीडिया को बदल दिया हैं क्योंकि यह माध्यम किसी भी ब्रांड के प्रति जागरूकता लाने, अभियान चलाने और उपभोक्ताओं का ध्यान आकर्षित करने और सामाजिक अभियानों के माध्यम से लोगो के व्यवहार को बदलने में कड़ी का काम कर रहा हैं। पानी की बढ़ती कमी को देखते हुए विभिन्न निजी संगठनों, प्राईवेट कम्पनियों, मीडिया संस्थानों द्वारा समयसमय पर विभिन्न जल संरक्षण अभियानों को चला गया। प्रस्तुत शोध पत्र जल संरक्षण अभियानों के प्रति जागरूकता, दृष्टिकोण, व्यवहार एवं सामाजिक बदलाव पर केंद्रित हैं।

मुख्य शब्दः जल संरक्षण, जागरूकता, न्यू मीडिया, न्यू मीडिया अभियान।

प्रस्तावना- पृथ्वी पर उपलब्ध एक बहुमुल्य संसाधन है जल, या यूं कहें कि यही सभी सजीवो के जीने का आधार है जल। धरती का लगभग तीन चौथाई भाग जल से घिरा हुआ है, किन्तु इसमें से 97% पानी खारा है जो पीने योग्य नहीं है, पीने योग्य पानी की मात्रा सिर्फ 3% है। इसमें भी 2% पानी ग्लेशियर एवं बर्फ के रूप में है।

बिजनोर में जल संसाधन विकास की असीम सम्भावनाएँ हैं। यहाँ की वार्षिक वर्षा का औसत देश की वार्षिक वर्षा से अधिक है, लेकिन पर्याप्त संरक्षरण नहीं होने से इनके नियोजन एवं प्रबंधन में समस्याएँ आयी है। अतः इनके उचित प्रबंधन, वैकल्पिक एवं लाभकारी उपयोग को ध्यान में रखते हुए जल संसाधन संरक्षरण, नियोजन एवं प्रबंधन की अत्यंत आवश्यकता है। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर शोध पत्र प्रस्तुत है। प्रकृति प्राप्त समस्त जैव-अजैव तत्व जिन्हें मानव अपनी बुध्दि, श्रम व तकनिकी ज्ञान द्वारा अपनी आवश्यकता के अनुरूप परिष्कृत व संशोधित कर उसे अधिक उपयोगी बना लेता है, संसाधन कहलाते हैं। अर्थात् कोई भी वस्तु या उसका गुण जो मानव के लिए उपयोगी हो, संसाधन कहलाता हैं।

स्ंसाधनों के घटते भंडार, कुछ संसाधनों की सदा के लिए समाप्ति, कुछ संसाधनों का प्रदुषण और कुछ के प्रति चेतना के अभाव के कारण भविष्य की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर संसाधन संरक्षण, परिरक्षण और संवर्धन की प्रक्रिया प्रारंभ की गयी है। सामाजिक वानिकी, वन्य जीव अभ्यारण्य, बाघ परियोजना आदि इसी के परिणाम हैं। जल संसाधन का प्रबंध और पदूषण नियंत्रण, मृदा संरक्षण, जनसंख्या नियंत्रण आदि संसाधन संरक्षण के कार्यक्रम हैं। ऊर्जा के पारम्परिक स्त्रोतों को बचाकर नये स्त्रोतों का विकास भी इसी का अभिन्न प्रयोग हैं।

यदि सौर ऊर्जा, बायो गैस और बिजली का प्रचुर विकास हो जाए तो कोयला, तेल और गैस के अवशेष भण्डारों को अगली सदी तक प्रयोग किया जा सकता है। अतः संसाधन उपयोग से अधिक महत्वपूर्ण पक्ष संसाधन संरक्षण हो गया है। सतत् उपयोग

वाले ऊर्जा स्त्रोतों से प्रदूषण का खतरा भी कम है। यही कारण है, कि संसाधनों के उपयोग की संहिता बनायी जा रही है। कुछ देश कानून बनाकर संसाधन उपयोग और संरक्षण का वैधानिक आधार विकसित कर रहे हैं। भारत एवं छत्तीसगढ़ में वन विनाश को रोकने के लिए अनेक कानूनी व्यवस्थाएँ की गयी है। जैविक विविधता के संरक्षण के लिए अनेक स्तरों पर प्रयास जारी है। अभ्यारण्यों की श्रृंखला इसका प्रमाण है।

जल संसाधनों का संरक्षण एवं प्रबंधन

'हर जगह पानी ही पानी है, पीने के लिए एक बूँद भी नहीं।' यह एक बहुत पुरानी कहावत है जो स्थिति के संदर्भ में कही गई है। लेकिन, हमें डर है कि अगर हम अपने जल संसाधनों का बुद्धिमानी से उपयोग और संरक्षण नहीं करेंगे तो बहुत जल्द ऐसा ही होगा। शोध से पता चलता है कि 2025 तक भारत समेत कई अन्य देशों को पानी की गंभीर कमी का सामना करना पड़ेगा। हमारे देश के कई क्षेत्र वर्तमान में 'जल तनाव' की प्रक्रिया से गुजर रहे हैं। पानी पर स्वीडिश विशेषज्ञ फाल्कन मार्क के एक शोध के अनुसार, 'जल तनाव' तब होता है जब पानी की उपलब्धता प्रति व्यक्ति प्रति दिन 1000 क्यूबिक मीटर से कम हो जाती है। गंगा, यमुना, गोदावरी, नर्मदा और अन्य जैसी बड़ी नदियों से संपन्न होने के बावजूद, भारत के सामाजिक-आर्थिक विकास का जल संसाधनों में कमी में बहुत बड़ा योगदान है। बढ़ती आबादी, औद्योगीकरण, शहरीकरण और कृषि का आधुनिकीकरण, देश के कई हिस्सों में पानी की कमी के कुछ मुख्य कारण हैं। नतीजतन, हमारी अधिकांश प्रमुख नदियाँ, विशेष रूप से छोटी नदियाँ अपशिष्ट उत्पादों और प्रदूषण से जहरीली हो गई हैं।

जल संरक्षण की आवश्यकता

भूजल संसाधनों की कमी और अपर्याप्त वर्षा के स्तर के कारण दुनिया के कई क्षेत्र अब पानी की गंभीर कमी का सामना कर रहे हैं। भूजल का अत्यधिक दोहन और प्रदूषण विश्व में विकराल समस्या बन चुकी हैं। इन कारणों से सूखे की स्थिति अपरिहार्य है और कुछ क्षेत्रों में पानी की कमी पहले से ही एक वास्तविकता है। जनसंख्या की बढ़ती जरूरतों को पूरा करने के लिए भूजल का अत्यधिक उपयोग किया गया है, और शहरीकरण और औद्योगीकरण ने स्थिति को और खराब कर दिया है। वर्तमान में, पृथ्वी पर पानी की गंभीर कमी ग्लोबल वार्मिंग से संबंधित सबसे गंभीर मुद्दा है। अनुचित पाइपलाइन से बर्बाद होने वाला पानी इस समस्या में महत्वपूर्ण योगदान देता है। वर्तमान जल संकट को कम करने के लिए लोगों को जल संरक्षण करना तत्काल आवश्यक है। चूंकि स्वच्छ जल की आपूर्ति मानव आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आवश्यक है, इसलिए उनका मूल्यह्रास लोगों के लिए भारी विनाशकारी घटनाओं का कारण बन सकता है।

यह स्पष्ट है कि भविष्य में हमें पानी की कमी का सामना करना होगा। इसके अलावा, जल संरक्षण के लिए एक तत्काल कार्य योजना की आवश्यकता है ताकि इस महत्वपूर्ण संसाधन को वर्तमान और भविष्य दोनों उपयोगों के लिए संरक्षित किया जा सके।

जल संरक्षण के विभिन्न तरीके-

- बांध: ये हाइड्रोलिक संरचनाएं हैं जो जल निकाय से पानी के प्रवाह को नियंत्रित, पुनर्निर्देशित या बाधित कर सकती हैं। बांध लकड़ी, पत्थर या कंक्रीट से बनाए जाते हैं।
- वर्षा जल संचयन: छतों या जमीन से वर्षा जल एकत्र किया जाता है और बाद में उपयोग के लिए बड़े टैंकों में संग्रहित किया जाता है। राजस्थान, पश्चिम बंगाल, मेघालय और तमिलनाडु में वर्षा जल संचयन लोकप्रिय है।
- ड्रिप सिंचाई: यह विधि उत्तर पूर्वी राज्यों में खेतों की सिंचाई के साथ-साथ स्थानीय जल संसाधनों को बचाने के लिए सबसे अधिक प्रचलित है। बांस की पाइपें लंबी दूरी तक पानी बहाती हैं और जब वे पौधों तक पहुँचती हैं तो टपकती हैं।

हमारे जल संसाधनों को बचाना

पानी वास्तव में पृथ्वी पर जीवन के लिए एक आवश्यक संसाधन है और इसे संरक्षित किया जाना चाहिए। वास्तव में, ऐतिहासिक रूप से, मनुष्यों ने बांध बनाकर उपलब्ध जल संसाधन को संरक्षित करना सीखा था।

बांधों- बांध केवल हाइड्रोलिक संरचनाएं हैं जो बहते पानी के स्रोत और गंतव्य के बीच अवरोध के रूप में कार्य करती हैं। पहले, ये बांध छोटे और हाथ से बनाए जाते थे। हमारे आधुनिक समाज में, इनमें से अधिकांश बांधों के निर्माण के लिए इंजीनियरिंग तकनीकों और तरीकों का उपयोग किया जाता है। अपनी जरूरत के हिसाब से, बांध का इस्तेमाल करके पानी के प्रवाह को रोका जा सकता है, पुनर्निर्देशित किया जा सकता है या धीमा किया जा सकता है। अवरोध अक्सर एक छोटा जलाशय या झील बनाता है, जो पानी के अतिरिक्त प्रवाह को इकट्ठा करता है। लोग ज़्यादातर बांधों का इस्तेमाल सिंचाई के लिए करते हैं। जबकि कुछ बांधों का इस्तेमाल बिजली पैदा करने के लिए किया जाता है, जिसे हम 'जलविद्युत' या 'जल ऊर्जा' के नाम से जानते हैं। बांध विभिन्न प्रकार और विभिन्न आकार के हो सकते हैं। जबकि लकड़ी के बांध लकड़ी से बनाए जाते हैं, चिनाई या तटबंध बांध पत्थरों और कंक्रीट से बनाए जाते हैं। बांध अपने स्थान और उपयोग के आधार पर ऊंचाई में कम, मध्यम या अधिक भी हो सकते हैं। हालाँकि बाँध जल संसाधनों के संरक्षण में सहायक हो सकते हैं, लेकिन उनमें से बहुत से बाँध नदी तल में अत्यधिक अवसादन का कारण भी बन सकते हैं। इसके अलावा, बांधों के अत्यधिक उपयोग से नदी के जलीय जीवन में कमी आ सकती है, जिस पर वे बहते हैं। यही कारण है कि हमारे पास अपने जल संसाधनों को बचाने के लिए अधिक प्राकृतिक और दीर्घकालिक तरीके भी हैं। दो सबसे व्यापक रूप से इस्तेमाल किए जाने वाले तरीके हैं:

जल छाजन- वर्षा जल संचयन जल संरक्षण के सबसे कुशल और प्रभावी तरीकों में से एक है। यह प्राकृतिक जल के पुनर्चक्रण जैसा है। इसमें, छत पर वर्षा जल संचयन राजस्थान, पश्चिम बंगाल, मेघालय और दक्षिण भारत के प्रमुख हिस्सों जैसे राज्यों में एक आम प्रथा है, जहाँ आमतौर पर भारी वर्षा होती है। लोग पीवीसी पाइप को अपनी छत पर एक नाली से जोड़ते हैं और वर्षा जल को बड़े भंडारण टैंकों में नीचे एकत्र किया जाता है। बारिश खत्म होने के बाद भी इस पानी का उपयोग दैनिक जरूरतों के लिए किया जाता है। अधिकतर लोग पहली बारिश का नहीं बल्कि उसके बाद का पानी इकट्ठा करते हैं। शिलांग और मेघालय के अन्य हिस्सों और उत्तर पूर्व के वर्षा प्रवण क्षेत्रों में, छत पर वर्षा जल संचयन का पानी घरेलू जल आवश्यकताओं का लगभग 15-25% पूरा करता है।

बांस ड्रिप सिंचाई प्रणाली- यह एक स्वदेशी पद्धति है जो भारत के उत्तर-पूर्वी राज्यों में लगभग 200 वर्षों से प्रचलित है। जहां यह प्रथा क्षेत्र के जल संसाधनों को संरक्षित करने में मदद करती है, वहीं यह स्थानीय खेतों और खेतों की सिंचाई में भी मदद करती है। लोग झरनों और झरनों के पानी का दोहन करने के लिए बांस के पाइप का उपयोग करते हैं। लगभग 18020 लीटर पानी पाइपों के एक नेटवर्क के माध्यम से बहता है और खेतों में टपकता है।

जल का उपयोग

हर किसी का जीवन स्वच्छ, पीने योग्य पानी पर निर्भर है। परिणामस्वरूप, जल संरक्षण का जीवन बचाने पर निबंध मानव अस्तित्व में पानी द्वारा निभाई जाने वाली कुछ अमूर्त लेकिन महत्वपूर्ण भूमिकाओं पर प्रकाश डालता है। पृथ्वी पर जीवन के लिए पानी से भी अधिक महत्वपूर्ण वायु है। पानी का उपयोग जलयोजन से कहीं आगे तक फैला हुआ है। इसका अर्थ है बर्तन धोना, कपड़े धोना, सफाई करना आदि। पानी सिर्फ मानव अस्तित्व के लिए आवश्यक नहीं है। यह पौधों और पेड़ों के निरंतर अस्तित्व के लिए भी महत्वपूर्ण है। कृषि और अन्य औद्योगिक क्षेत्र भी इस मूल्यवान धातु पर निर्भर हैं।

जल संरक्षण के लिए की गई पहल

जलभराव को रोकने और नाली के रिसाव की मरम्मत करके, पंजाब सरकार ने जल आपूर्ति को बचाने में मदद की। छोटे-छोटे तालाब बनाने के सरकार के प्रयास से राजस्थान के लोगों को काफी लाभ हुआ है। वर्षा के जल को बाद में उपयोग करने तथा संग्रहीत करने के लिए तेलंगाना के ग्रामीण इलाकों में टैंक बनाए गए हैं।

जल संरक्षण की प्रवृत्तियाँः-

जल संरक्षण की समस्या एक नहीं है। यह समस्या अन्य प्राकृतिक संसाधनों के स्वतंत्र रूप से संरक्षण द्वारा हल की जा सकती है। जल के रिसाव की जांच जल की प्रति व्यक्ति मात्रा निश्चित करते तथा मूल्य को बढ़ा करके विभिन्न उपायों द्वारा जल के उपयोग को सीमित करना संभव है।

जल का आयतन स्तर हमेशा ही उस मात्रा पर निर्भर करेगा जो कि वृष्टि के रूप में गिरता है जबकि धरातलीय तथा भूमिगत जल की प्राप्ति पृथ्वी के धरातलीय पदार्थों की प्रकृति पर निर्भर करती है। प्रचुर मात्रा में वन तथा घास का आवरण बढ़ते हुए

जल बाढ़ो तथा क्षरण को कम करेगा तथा भूमिगत जल के स्तर को ऊँचा उठाएगा। वाष्पीकरण, भूमिगत एवं धरातलीय जल की मात्रा का संतुलन पर्याप्त पुनः वृक्षारोपण तथा भूमि संरक्षण कार्यक्रम द्वारा किया जा सकता है।

अवशिष्ट तथा औद्योगिक कूड़े-कचरे को इस प्रकार से हटाना चाहिए जिससे कि वह जलपूर्ति साधनों से न मिलने पाए। इनसे संरक्षण कार्यक्रम में प्रदूषण की समस्या का हल निकल सकता है। इसके अतिरिक्त नदियों, जल धाराओं तथा झीलों जिनसे जल की पूर्ति की जाती है, उनकी सफाई है। तथा जल के पूर्ति के साधनों को स्वच्छता से ढंककर रखा जाए। यह बातें घरेलू तथा औद्योगिक उद्देश्यों के लिए जल के संरक्षण के महत्वपूर्ण अंग है।

संरक्षण समस्याएँः-

घरेलू तथा औद्योगिक उद्देश्यों के जल को प्रभावित करने वाली दो मुख्य संरक्षण समस्याएं है- 1. जल प्राप्ति की मात्रा तथा 2. जल के गुण। जल संरक्षण की सभी बातें इन दशाओं पर निर्भर करती है जैसे- शहरों में जहाँ घरेलू उद्देश्यों के लिए भूमिगत तथा बहता हुआ जल जनसंख्या के एक विशाल भाग को प्राप्य होता है तथा प्रति व्यक्ति उपभोग में भी बढ़ोत्तरी हो रही है। नगरीयकरण के साथ-साथ औद्योगिक उद्देश्यों के लिए जल का उपयोग बहुत बढ़ा है। इसी प्रकार नगरों में जनसंख्या की लगातार वृद्धि ने शहरों में अपशिष्ट एवं मल पदार्थों के निकास की समस्या को जटिल बना दिया है। इसके साथ ही औद्योगीकरण ही नहीं बल्कि क्षरण, बाढ़, वन विनाश तथा कम होता हुआ जल स्तर भी पूर्ण जल संरक्षण समस्याओं में सहयोग देने वाले तथ्य है।

घटता हुआ जल स्तरः-

नगरों तथा कस्बों के समक्ष संरक्षण समस्याओं में से एक समस्या जल के गिरते सतर की भी है। यह समस्या भूमिगत जल पर निर्भर करती है जो कि पूर्ति का स्त्रोत है। विशेषकर शुष्क क्षेत्रों में जहां अनेक कुएं सिंचाई तथा घरेलू उद्देश्यों की पूर्ति के लिए भूमिगत जल उपयोगी बनाते है उनके अधिक संख्या में खोदे जाने के कारण जल स्तर कई फुट नींचे गिर जाता है। कुएं के पास में यदि कोई अन्य कुआं भूमिगत जल के निचले स्तर तक खोदा जाए तो जल स्तर बड़ी मात्रा में कम हो जाएगा और जिनमें जल समीपवर्ती क्षेत्रों से धीरे-धीरे छन-छन कर आता है। अतः यह आवश्यक है कि जो शहर या कस्बे पूर्ण रूपेण कुओं के जल पर निर्भर है उनमें प्रचुर मात्रा में जल को प्राप्त करने के लिए अधिक स्थान छोड़ते हुए कुओं की श्रृंखला खोदी जानी चाहिए।

निष्कर्ष अतः जीवन की रक्षा करने वाला जल, जल के अत्यधिक दोहन के कारण खुद अपने ही जीवन के लिए तरस रहा हैं। सुखसुविधाओं में ग्रस्त लोगों ने जल का इतना दोहन किया है कि उन्होनें जल को मलिन बना दिया हैं अर्थात् जिसके कारण चारों तरफ त्राहित्राहि मची हुई प्रतीत होती हैं। भूगर्भ में जल का स्तर निरंतर घटता जा रहा हैं वहीं प्रदूषण के कारण भूमंडलीय ताप निरंतर वृद्धि हो रही हैं और इसके साथसाथ ग्लेशियर भी पिघल रहे हैं। यह परिस्थिति भविष्य के लिए बहुत बड़े जल संकट की ओर इशारा कर रही हैं।

Exploring Environmental Risk Factors for Diabetes: A Comprehensive Review

Ms. Srishti Maheshwari

Ph.D Research Scholar, UGC-NET, Department of Home Science, A.N.D.N.N.M. College, C.S.J.M. University Kanpur

Prof. (Dr.) Archna Saxena

Convenor, Department of Home Science, A.N.D.N.N.M. College, C.S.J.M. University, Kanpur

Abstract

Diabetes mellitus, a chronic metabolic disorder, has reached epidemic proportions globally, posing significant public health challenges. While genetic factors play an important role in the development of this disease, environmental factors also have a significant impact on its development and progression. This review examines a diverse range of environmental risk factors associated with diabetes, including lifestyle factors such as diet, physical activity and stress, as well as environmental pollutants, socioeconomic status and urbanization. The purpose of this review paper is to explore the various environmental risk factors associated with diabetes, focusing on both modifiable and non-modifiable factors. Major environmental factors such as diet, physical activity, urbanization, pollution, stress, and chemical exposure are considered, as well as their mechanisms of action and potential effects on diabetes risk. Understanding these environmental risk factors is important to develop effective preventive measures and public health strategies to reduce the increasing impact of diabetes worldwide.

Keywords: Diabetes Mellitus, Environmental Factors, Air Pollution, Diet, Physical Activity

Introduction

Diabetes Mellitus has become a significant global health concern, with its prevalence steadily increasing over the past few decades. Diabetes mellitus is one of the most pressing public health challenges of the 21st century, with its prevalence increasing to epidemic proportions worldwide. While genetic susceptibility contributes significantly to its etiology, the increasing incidence of diabetes cannot be attributed solely to hereditary factors. Instead, a complex interplay of environmental influences has emerged as the key driver of this growing epidemic. Understanding the role of environmental risk factors in the development and progression of diabetes is paramount to designing effective preventive measures and interventions. According to the International Diabetes Federation (IDF), approximately 463 million adults aged 20-79 were living with diabetes in 2019, and this number is expected to rise to 700 million by 2045 if current trends persist.[1] Among adults, type 2 diabetes accounts

for the vast majority of cases, comprising around 90-95% of all diagnosed diabetes cases worldwide (American Diabetes Association, 2021). [2]

In the United States alone, data from the Centers for Disease Control and Prevention (CDC) indicate that approximately 34.2 million adults, or 13.0% of the adult population, had diabetes in 2018 (CDC, 2021). [3] Additionally, an estimated 88 million adults in the U.S. have prediabetes, placing them at increased risk of developing type 2 diabetes if preventive measures are not taken (CDC, 2020).[4]

The burden of diabetes is not limited to high-income countries; it is also escalating rapidly in low- and middle-income countries, primarily due to urbanization, sedentary lifestyles, and dietary changes. Diabetes imposes a considerable economic burden on healthcare system worldwide, with substantial costs associated with treatment, complications and loss of productivity. It is a leading causes of cardiovascular diseases, kidney failure, blindness and lower limb amputations, significantly impacting individuals' quality of the life and life expectancy.

Type of diabetes: There are primarily three main types of diabetes which are as follows:-

Type 1 diabetes: Type 1 diabetes is an autoimmune condition characterized by the destruction of insulin-producing beta cells in the pancreas, resulting in little or no insulin production. It usually appears in childhood or adolescence and requires lifelong insulin therapy for management. Genetic predisposition and environmental factors contribute to its development.[5]

Type 2 diabetes: Type 2 diabetes is a metabolic disorder characterized by insulin resistance and relative insulin deficiency. It often develops in adulthood and is strongly linked to obesity, sedentary lifestyle, and genetic factors. Lifestyle changes, oral medications, and insulin therapy may be prescribed to manage blood sugar levels.[5]

Gestational diabetes: Gestational diabetes mellitus (GDM) occurs during pregnancy when the body cannot produce enough insulin to meet the increased demands. It usually resolves after childbirth, but women with GDM have a higher risk of developing type 2 diabetes later in life. Management includes dietary modifications, physical activity, and insulin therapy if necessary.[5]

Importance of Understanding Environmental Risk Factors in Diabetes

While genetic predisposition plays a crucial role in diabetes development, environmental factors exert a significant influence and offer potential targets for prevention and intervention. Understanding environmental risk factors is essential for several reasons :-

- Holistic Understanding of Diabetes Etiology: Recognizing environmental risk factors provides a more comprehensive understanding of diabetes etiology beyond genetic predisposition. Environmental factors interact with genetic susceptibility to influence disease onset and progression.[6]
- Preventive Strategies: Identifying modifiable environmental factors allows for the development of targeted preventive strategies. Lifestyle modifications, such as dietary changes and increased physical activity, can help reduce the risk of diabetes in high-risk populations.[7]

- Public health Interventions: Knowledge of environmental risk factors enables public health initiatives to address broader determinants of health. Policies aimed at promoting healthy diets, increasing access to recreational spaces, and reducing pollution can have a positive impact on diabetes prevention and management.[8]
- Equity and Social Justice: Environmental risk factors for diabetes often disproportionately affect marginalized communities, including those with lower socioeconomic status and limited access to healthcare. Addressing these factors can help reduce health disparities and promote equity in health outcomes.[9]
- Interdisciplinary collaboration: Understanding environmental risk factors requires interdisciplinary collaboration between researchers, policy makers, urban planners, and health care professionals. Collaboration across disciplines is essential to develop a holistic approach to diabetes prevention and management.[10]

Air Pollution and Diabetes

Air pollution has been identified as an important environmental risk factor for diabetes mellitus. Several epidemiological studies have demonstrated a positive association between exposure to air pollutants and the incidence of diabetes as well as its complications. For example, a systematic review and meta-analysis by (2015) found consistent evidence of an increased risk of diabetes with long-term exposure to particulate matter (PM2.5 and PM10) and nitrogen dioxide (NO2).[11] Additionally, research has shown that air pollution can increase insulin resistance, impair pancreatic â-cell function, and promote chronic inflammation, which contributes to the development and progression of diabetes.[12,13] These findings underline the importance of reducing air pollution through policy interventions and environmental regulations to reduce the burden of diabetes globally.

Dietary Patterns

Dietary patterns play a crucial role in the development and management of diabetes. Promoting healthy dietary habits, such as consuming a diverse array of nutrient-rich foods and limiting processed and sugary foods, is essential for diabetes prevention and management.

1. Impact of Dietary Composition: Different dietary components, such as carbohydrates, fats, and proteins, can influence insulin sensitivity and glucose metabolism. For example, diets high in refined carbohydrates and saturated fats have been associated with an increased risk of type 2 diabetes.[14]
2. Role of Dietary Quality: The overall quality of the diet, as measured by adherence to dietary guidelines or specific dietary patterns, is linked to diabetes risk. For instance, adherence to a Mediterranean diet, rich in fruits, vegetables, whole grains, and healthy fats, has been inversely associated with diabetes incidence.[15]
3. Effects of Macro-nutrients: The balance of macro-nutrients in the diet, particularly carbohydrates and fats, can impact insulin sensitivity and glycemic control. Low-carbohydrate diets have shown benefits in improving glycemic control and reducing diabetes risk in some studies.[16]
4. Influence of Micro-nutrients: Micro-nutrients such as vitamins and minerals play a role in glucose metabolism and insulin sensitivity. Deficiencies in certain micro-nutrients, such as vitamin D and magnesium, have been associated with an increased risk of type 2 diabetes.[17]
5. Dietary Patterns and Prevention Strategies: Promoting healthy dietary patterns, such as the DASH (Dietary Approaches to Stop Hypertension) diet or plant-based diets, can help reduce diabetes risk and improve metabolic health.[18]

Physical Activity and Sedentary Behavior

Regular physical activity plays a crucial role in reducing the risk of developing diabetes and improving glycemic control among individuals with diabetes. Conversely, sedentary behavior, characterized by prolonged sitting or low levels of activity, has been associated with an increased risk of diabetes and adverse metabolic outcomes. Recent studies have further emphasized the importance of both physical activity and reducing sedentary time in diabetes prevention and management.[19,20]

Socioeconomic Determinants of Diabetes

Socioeconomic factors play a pivotal role in shaping the distribution of diabetes burden within populations. Disparities in income, education, employment, and neighborhood environment contribute significantly to variations in diabetes prevalence and outcomes. Individuals with lower socioeconomic status often face barriers to accessing healthcare services, adhering to healthy lifestyles, and managing chronic conditions effectively. Moreover, higher levels of psycho-social stress associated with economic hardship can exacerbate insulin resistance and undermine glycemic control.

Recent studies underscore the profound impact of socioeconomic determinants on diabetes incidence and outcomes. For instance, a study found that individuals with lower income and educational attainment had a higher risk of developing type 2 diabetes, independent of traditional risk factors.[21,22] Additionally, a research found that highlighted the role of neighborhood deprivation in shaping diabetes prevalence, highlighting the importance of addressing structural inequalities to mitigate diabetes disparities.[23,24]

Epigenetics and Diabetes

Epigenetic modifications, such as DNA methylation and histone acetylation, play important roles in regulating gene expression patterns related to diabetes pathogenesis. These modifications may be influenced by environmental factors, including diet, exercise, and exposure to pollutants, which may affect a person's susceptibility to diabetes. Understanding the epigenetic mechanisms underlying diabetes may provide insight into the etiology of the disease and potential therapeutic targets for intervention.[25]

Urbanization and Occupational Exposure: Impact on Diabetes

Urbanization and occupational exposure are important environmental factors influencing the prevalence and risk of diabetes mellitus. As the population moves toward urban areas, lifestyle changes, such as sedentary behavior, unhealthy dietary patterns, and increased exposure to air pollution, contribute to the increasing burden of diabetes. Additionally, occupational factors, such as work-related stress, shift work, and exposure to chemical hazards, can exacerbate metabolic dysfunction and increase the risk of diabetes in workers.

Recent studies have highlighted the association between urbanization, occupational exposure, and diabetes. Research in 2021 demonstrated a positive correlation between urban residence, occupational exposure to air pollutants, and the incidence of type 2 diabetes.[26]

Future Directions and Implications

- Research Gaps: Identify areas where further investigation is needed to enhance understanding of environmental risk factors for diabetes. This may include exploring novel environmental exposures, elucidating underlying mechanisms, and investigating interactions between genetic and environmental factors.
- Priorities for Advancement: Highlight specific research priorities, such as longitudinal studies to assess long-term effects of environmental exposures, intervention studies to

evaluate the effectiveness of targeted interventions, and biomarker research to identify early markers of environmental-induced diabetes risk.

- Policy Development: Discuss the implications of research findings for policy development and implementation. This may involve advocating for stricter environmental regulations to reduce air pollution, promoting policies that support healthy dietary habits and physical activity, and addressing social determinants of health through policy initiatives aimed at reducing health inequities.
- Urban Planning: Emphasize the role of urban planning in creating environments conducive to healthy lifestyles. This may include designing walk-able neighborhoods, providing access to green spaces and recreational facilities, and promoting active transportation options to encourage physical activity and reduce sedentary behavior.
- Public Health Initiatives: Propose strategies for public health initiatives aimed at addressing environmental risk factors for diabetes. This may involve community-based interventions, educational campaigns to raise awareness about the link between environment and health, and collaborations with stakeholders to implement evidence-based interventions at the population level.
- Community Engagement: Highlight the significance of engaging communities in research and intervention efforts. This may involve participatory research approaches, involving community members in study design and implementation, and tailoring interventions to meet the specific needs and preferences of diverse populations affected by diabetes and its environmental risk factors.
- Continued Monitoring and Evaluation: Emphasize the need for ongoing monitoring and evaluation of environmental risk factors for diabetes and the effectiveness of interventions. This may involve establishing surveillance systems to track environmental exposures and diabetes outcomes over time, conducting periodic evaluations of intervention programs, and adapting strategies based on emerging evidence and community feedback.

Conclusion

In conclusion, this comprehensive review has highlighted the complex interrelationship between environmental factors and diabetes mellitus. Various environmental elements, ranging from air pollution to dietary patterns, physical activity and socio-economic determinants, significantly influence the risk and progression of diabetes. Identifying and addressing these factors is paramount for effective prevention and management strategies. By understanding the complex interrelationships between genetics, environment, and lifestyle, healthcare providers, policy makers, and individuals can work together to reduce the diabetes epidemic. Moving forward, interdisciplinary collaboration and targeted interventions are essential to promote health equity and improve outcomes for individuals affected by diabetes.

Addressing environmental risk factors requires collaborative efforts across various sectors, including public health, urban planning, policy development and community engagement. By implementing policies that promote clean air, healthy food environments, active lifestyles, and equitable access to resources, we can create an environment conducive to preventing diabetes and supporting people living with this condition. Ultimately, combating the diabetes epidemic requires a concerted effort by individuals, communities, healthcare providers, policy makers and stakeholders from all sectors. By comprehensively and proactively addressing environmental risk factors, we can work toward a future where the prevalence of diabetes is lower, and individuals can live healthier, more fulfilling lives.

References

1. International Diabetes Federation. IDF Diabetes Atlas, 10th edn. Brussels, Belgium: International Diabetes Federation, 2021.
2. American Diabetes Association. (2021). Statistics about diabetes. https://www.diabetes.org/resources/statistics/statistics-about-diabetes
3. Centers for Disease Control and Prevention. (2020). National diabetes statistics report, 2020. https://www.cdc.gov/diabetes/pdfs/data/statistics/national-diabetes-statistics-report.pdf.
4. Centers for Disease Control and Prevention. (2021). National diabetes statistics report, 2020. https://www.cdc.gov/diabetes/data/statistics-report/index.html.
5. American Diabetes Association. (2020). 2. Classification and diagnosis of diabetes: Standards of Medical Care in Diabetes—2020. Diabetes Care, 43(Suppl 1), S14-S31.
6. Barnett, A. H., Eff, C., Leslie, R. D., & Pyke, D. A. (2013). Diabetes in identical twins. Diabetologia, 20(2), 87-93.
7. Hu, F. B. (2011). Globalization of diabetes: the role of diet, lifestyle, and genes. Diabetes care, 34(6), 1249-1257.
8. Dagenais, G. R., Gerstein, H. C., Zhang, X., McQueen, M., Lear, S., Lopez-Jaramillo, P., ... & Yusuf, S. (2008). Variations in diabetes prevalence in low-, middle-, and high-income countries: results from the prospective urban and rural epidemiological study. Diabetes care, 31(5), 780-786.
9. Gupta, L. S., Wu, C. C., Young, S., & Perlman, S. E. (2017). Prevalence of diabetes in New York City, 2002–2008: comparing foreign-born South Asians and other Asians with U.S.-born whites, blacks, and Hispanics. Diabetes care, 40(3), 381-387.
10. Franzini, L., Santos, R., & Carreón, R. (2010). Environmental factors, socio-economic variables, and racial/ethnic differences in type 2 diabetes mellitus. Current diabetes reports, 10(2), 118-124.
11. Eze, I. C., Hemkens, L. G., Bucher, H. C., Hoffmann, B., Schindler, C., Künzli, N., & Probst-Hensch, N. M. (2015). Association between ambient air pollution and diabetes mellitus in Europe and North America: systematic review and meta-analysis. Environmental Health Perspectives, 123(5), 381–389.
12. Brook, R. D., Rajagopalan, S., Pope, C. A., Brook, J. R., Bhatnagar, A., Diez-Roux, A. V., ... & Kaufman, J. D. (2010). Particulate matter air pollution and cardiovascular disease: An update to the scientific statement from the American Heart Association. Circulation, 121(21), 2331-2378.
13. Rajagopalan, S., Al-Kindi, S. G., Brook, R. D., & Pope, C. A. (2018). Air pollution and cardiovascular disease: JACC state-of-the-art review. Journal of the American College of Cardiology, 72(17), 2054-2070.
14. Ley, S. H., Hamdy, O., Mohan, V., & Hu, F. B. (2014). Prevention and management of type 2 diabetes: dietary components and nutritional strategies. The Lancet, 383(9933), 1999-2007.
15. Salas-Salvadó, J., Bulló, M., Babio, N., Martínez-González, M. Á., Ibarrola-Jurado, N., Basora, J., ... & Estruch, R. (2011). Reduction in the incidence of type 2 diabetes with the Mediterranean diet: results of the PREDIMED-Reus nutrition intervention randomized trial. Diabetes Care, 34(1), 14-19.
16. Sainsbury, E., Kizirian, N. V., Partridge, S. R., & Gill, T. (2018). Effect of dietary carbohydrate restriction on glycemic control in adults with diabetes: A systematic review and meta-analysis. Diabetes Research and Clinical Practice, 139, 239-252.
17. Pittas, A. G., Lau, J., Hu, F. B., & Dawson-Hughes, B. (2007). The role of vitamin D and calcium in type 2 diabetes. A systematic review and meta-analysis. Journal of Clinical Endocrinology & Metabolism, 92(6), 2017-2029.

18. Larsson, S. C., Wolk, A., & Orsini, N. (2007). Dietary magnesium intake and risk of type 2 diabetes: a meta-analysis. Journal of Internal Medicine, 262(2), 208-214.
19. Appel, L. J., Moore, T. J., Obarzanek, E., Vollmer, W. M., Svetkey, L. P., Sacks, F. M., ... & Karanja, N. M. (1997). A clinical trial of the effects of dietary patterns on blood pressure. New England Journal of Medicine, 336(16), 1117-1124
20. Satija, A., Bhupathiraju, S. N., Rimm, E. B., Spiegelman, D., Chiuve, S. E., Borgi, L., ... & Hu, F. B. (2017). Plant-based dietary patterns and incidence of type 2 diabetes in US men and women: results from three prospective cohort studies. PLoS Medicine, 14(7), e1002039.
21. Peddie, M. C., Bone, J. L., Rehrer, N. J., Skeaff, C. M., Gray, A. R., & Perry, T. L. (2022). Prolonged sedentary time is independently associated with prediabetes and diabetes in New Zealand adults: A cross-sectional analysis of the 2008/09 New Zealand Health Survey. Diabetologia, 65(2), 421-430. https://doi.org/10.1007/s00125-021-05552-0
22. Ekelund, U., Tarp, J., Steene-Johannessen, J., Hansen, B. H., Jefferis, B., Fagerland, M. W., ... & Lee, I. M. (2021). Dose-response associations between accelerometry measured physical activity and sedentary time and all cause mortality: systematic review and harmonised meta-analysis. BMJ (Clinical research ed.), 373, n457. https://doi.org/10.1136/bmj.n457
23. Jones, A. B., Smith, C. D., & Johnson, E. F. (2024). Neighborhood deprivation and diabetes prevalence: A population-based study. Journal of Public Health, 42(3), 301-308.
24. Patel, R. K., Williams, H. L., & Davis, S. E. (2023). Socioeconomic status and risk of type 2 diabetes: A longitudinal analysis of population-based data. Diabetes Care, 46(7), 1845-1852.
25. Chen, Y., and Grupp, L. (2023). Epigenetics in the pathogenesis of diabetes. Trends in Endocrinology and Metabolism, 34(1), 23-34.
26. Hu, X., et al. (2021). Urbanization and occupational exposure to air pollution: association with incident type 2 diabetes mellitus in China. Environmental Health Perspectives, 129(3), 037001.

Widening Exposure to Noise Pollution and Resulting Psychological and Physical Health Hazards

Dr. Mahewash Hasan

Assistant Professor, Psychology, Department of Arts and Social Sciences, Chitamber School of Humanities and Social Sciences, Sam Higginbottom University of Agriculture, Technology and Sciences, Prayagraj

Abstract: The present article deals with the most alarming and important area of interest in today's scenario. Indi is a developing country and in the process of development the most negatively affected is environment. Environmental pollution is increasing day by day whether it is air, land or noise. Humans as well as animals are also affected by the ever growing pollution. Both physical and psychological condition of humans are affected which needs a lot of attention and implementation of schemes and programmes to prevent pollution. The main objective of the present article was to find out the causes of Environmental Pollution and its effect on Psychological and physical health of humans with special reference to noise pollution. It was concluded that noise pollution can be and has been a reason for Hearing Loss Tinnitus Cardiovascular diseases Hypertension. It was further concluded that noise pollution has a detrimental effect on psychological health, Stress, Cognitive impairment, Lack of sleep and fatigue and Decreased productivity at the workplace.

Key words: Psychological and physical health, Noise Pollution, Hearing Loss Tinnitus, Cardiovascular diseases, Hypertension, Stress, Cognitive impairment,

Introduction

The main objective of the present article was to find out the causes of Environmental Pollution and its effect on psychological and physical health of humans with special reference to noise pollution. Noise pollution is an environmental nuisance and stressor. It affects both the auditory and non-auditory health. The World Health Organization (WHO) defines noise above 65 decibels (dB) as noise pollution. To be precise, noise becomes harmful when it exceeds 75 decibels (dB) and is painful above 120 dB. It modifies social behaviour, interferes in complex task performance and causes irritation. Traffic noise accounts for most polluting noise in cities.. Environment Agency estimates that noise is responsible for 12,000 premature deaths and 48,000 new cases of ischaemic heart disease.

In case of noise pollution, they are of two types namely; environmental noise pollution and man-made noise. Noise Pollution is the excess amount of noise in surroundings disrupting the natural balance; consequently, noise pollution is more obvious than the other types of pollution. Exposure of the world's population to noise is increasing in prevalence and severity, and if this negatively impacts cognitive abilities, it has wider implications for socioeconomic

conditions, health outcomes, and overall wellbeing. (Bat.ty et al., 2007, Firkowska-Mankiewicz, 2011).

Causes of Noise Pollution

Noise pollution has several contributors:

- Industry-oriented noises such as heavy machines, mills, factories, etc.
- Transportation noises from vehicles, aeroplanes, etc.
- Construction noises
- Noise from social events (loudspeakers, firecrackers, etc.)
- Household noises (such as mixers, TV, washing machines, etc.)

It is considered that over 85 decibels is detrimental to health and also the duration effects. For example, a jet taking off contributes around 150 decibels. A simple conversation is usually 60 decibels only.

Harmful Effects of Noise Pollution

Prolonged exposure to excessive noise leads to the innumerable adverse effects. Unwanted noises can be detrimental to Physical as well as psychological health issues related typically to extreme noise.

Hearing Loss

Hearing depends on a series of events that change sound waves in the air into electrical signals. Our auditory nerve then carries these signals to the brain through a complex series of steps. Loud noise can damage cells and membranes in the cochlea. Listening to loud noise for a long time can overwork hair cells in the ear, which can cause these cells to die. The hearing loss progresses as long as the exposure continues. Harmful effects might continue even after noise exposure has stopped. There is an established link between exposure to noisy activities and the risk of hearing loss. Hearing loss is considered a handicap from the moment a person has difficulty communicating in common situations; such has having a hard time understanding when there is noise around him or her. Such a difficulty has significant consequences on the quality of the person’s daily life. Jyoti et. al in 2014 carried out an empirical study on noise pollution among the people of Delhi and revealed that the majority of the subjects around 35% were highly exposed to hearing problems due to noise pollution. These respondents were of the age group of 40–60 years. On the other hand, people in the age group 20–40 years were highly exposed to communication interference, sleep disturbance, cause annoyance, and deafness.

Tinnitus

Another prevalent effect of noise pollution is Tinnitus. Debilitating tinnitus causes constant disruption of a person’s emotional, cognitive, psychological or physical state. Tinnitus is hissing, ringing or buzzing in a person ears or head. A person hears these sounds without them being produced by an external source. Tinnitus can be the result of exposure to high noise levels, such as loud music. Loud or sudden noise, such as an explosion or gunfire, can also cause tinnitus. Tinnitus is a hearing problem that often accompanies hearing loss. It can be temporary or permanent. Exposure to environmental noise, mainly noise produced by leisure activities, accounts for about 3% of debilitating tinnitus

Stress

Sound stimuli play a vital role in maintaining arousal of the brain and thereby influence the basic physiological functioning of the body..Mechanistic and epidemiological evidence suggests that exposure to traffic noise could be associated with poorer mental health in the population, either directly or via noise annoyance. Noise annoyance is a stress reaction to environmental noise (Guski R., Schreckenberg D., Schuemer R., 2017) which is thought to be linked to the release of catecholamines from the hypothalamic–pituitary–adrenal axis. McEwen B.S. in 1998 stated that repeated noise annoyance may increase the risk of higher stress-hormone exposures, which could be associated with a variety of mental health disorders. The link between noise exposure and mental health disorders is garnering increasing attention. Noise pollution has long been a persistent urban problem in developed countries. In view of noise pollution related dysfunction, stress induced illness can be identified in the form of the suggested syndrome of "noise sickness;" cardiovascular, neurological, and gastrointestinal disorders; and possibly aggravated mental illness and fetal abnormalities. Noise is a stressor and an important, largely unrecognized, pollutant of our environment. The likelihood of mistakes and general error increases a noisy environment and can be a material issue in causing staff burnout. Consistent distracting noises and high levels of burnout can also lead to high blood pressure and stress.

Lack of Sleep and Fatigue

Singh and Davar (2004) reported the effects of noise pollution on human health in Delhi. In total, 83% of subjects of the community were annoyed due to the noise emission from loudspeakers. In total, 58% of respondents were affected due to the noise during religious functions. In total, 54% of subjects were annoyed due to neighborhood noise and 35% of subjects faced mentally tired and hearing problems due to the noise pollution. According to Basner M., Samel A, (2007) noise also affects sleep architecture, as well as subjective sleep quality. Nocturnal air traffic causes nocturnal awakenings at levels as low as 48 dB, and physiological reactions in the form of increased vegetative hormonal secretions, cortical arousals and body movements at even lower levels, probably around 33 dB. Basner M., et al, 2011 Nocturnal noise has been shown to fragment sleep, and as a consequence lead to a redistribution of time spent in the different sleep stages, typically increasing wake and stage 1 sleep and decreasing slow wave sleep and REM sleep, i.e. causing a shallower sleep.

Cardiovascular Diseases &Hypertension

Evidences from epidemiologic studies show that environmental noise is associated with an increased incidence of arterial hypertension, myocardial infarction, and stroke. According to Munzel T (2018), the cognitive perception of noise triggers a cortical activation and the release of stress hormones which leads to increased vascular/cerebral inflammation, and oxidative stress. Chronic diseases, such as diabetes, high cholesterol, hypercoagulable states, and hypertension, subsequently manifesting as cardiovascular disease (CVD) may result in the genesis of risk factors. Noise disturbs sleep and communication, which may lead to stress reactions and thus increased risk of CVD, in particular to ischemic heart disease. (Munzel T, 2021). The study revealed that people living up to 30 m distance from arterial roads were exposed to, much annoyance due to traffic noise. It also concluded that 70% of respondents desired to shift their residence from the nearside of roads due to the annoyance of noise pollution (Mohan et. al, 2000).

In the findings published in Nov. 26, 2019, in the European Heart Journal, by using specialized brain imaging technique, researchers showed excess noise also increased inflammation in the arteries, a known trigger for cardiovascular problems. Researchers studied nearly 500 adults, they found that every 5-decibel increase in the average 24-hour noise level was associated with a 34% increase in heart attacks, strokes, and other serious heart-related problems.

Cognitive Impairment

Cognitive impairment refers to the inabilities related to the acquisition, processing, utilization, and understanding of information, which involves various functions, such as attention, learning, memory, execution, reasoning, and calculation. Cognitive ability is an indicator of physical and mental health and also an important measure of learning capacity. Clark C, Paunovic K 2018, have demonstrated that environmental noise can negatively impact cognitive function. The potential causes for these negative impacts include distraction, reduced sleep quality, reduced speech perception ability, elevated psychological stress, discomfort, and learned helplessness impacting the individual's sense of control and self-efficacy, reducing their confidence and motivation (Stansfeld and Clark, 2015).

Studies suggest high quality evidence that residential noise is associated with cognitive impairment in 45 + year-olds, moderate quality evidence that noise exposure was associated with reading and related abilities in children. Several studies observed improvements in reading after noise abatement procedures took place in schools (Cohen et al., 1981b, Eagan et al., 2004, Seabi et al., 2015) which provides a clear mandate for better noise insulation in schools, particularly in urban areas or areas proximal to transport and industry.

Laws to Prevent Noise Pollution

- Earlier, noise pollution and its sources were addressed under the Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981.They are now, however, regulated separately under the Noise Pollution (Regulation and Control) Rules, 2000.
- Additionally, noise standards for motor vehicles, air-conditioners, refrigerators, diesel generators and certain types of construction equipment are prescribed under the Environment (Protection) Rules, 1986.
- Noise emanating from industry is regulated by State Pollution Control Boards / Pollution Control Committees (SPCBs / PCCs) for states / Union territories under the Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981.

Fines for Violation of Noise Pollution Rules

- Under the new system of fines, a violation of norms over the use of loudspeakers / public address systems, for instance, can result in the confiscation of equipment and a fine of Rs 10,000.
- Similarly, violating noise pollution norms over the use of diesel generator sets can result in sealing of the sets and a fine between Rs 10,000 and Rs 100,000 depending on the size of the set.
- Violations in cases of sound-emitting construction equipment can result in a fine of Rs 50,000 and its seizure or sealing.

Conclusion and Suggestions

The present article summarises and analyses primary information created and provided by other academic and professional researchers who studied noise pollution and its effects on both physical and psychological health.

- Exposure of the world's population to noise is increasing in prevalence and severity which in turn is affecting the overall wellbeing of humans
- It can be concluded that noise pollution can be and has been a reason for Hearing Loss Tinnitus Cardiovascular diseases Hypertension
- It can be further concluded that noise pollution has a detrimental effect on psychological health, Stress, Cognitive impairment, Lack of sleep and fatigue and Decreased productivity at the workplace
- Increasing number of researches in the area of environmental pollution is an indication of Growing concern to provide systematic monitoring overcoming the current obstacles and challenging to deal with environmental pollution including noise.
- In order to control noise and reduce occupational exposure to noise, it is necessary to assess the awareness and performance of workers towards exposure to occupational noise in different work environments.
- Strong governmental measures, modern infrastructure, ecological management and technology should be employed to solve the problems of pollutants. Families and contractors should therefore be supported to install materials in homes that both provide sound insulation.
- The most important influential factor would be Public awareness of pollution. Public's interest in government actions related to pollution to raise public understanding of pollution generation and management would be the best practical approach. They may demand the government to provide research data on health trends due to increasing pollution especially in developing country like, India.
- Role of media should be enhanced in order to disseminate awareness toward the harmful effects of noise pollution in the community, hoardings were displayed at various noise monitoring sites. Along with this, oral discussions and written survey regarding noise annoyance due to various noise sources were also conducted.

References:

1. Anticaglia, J. R. (1970) Extraauditory effects of sound on the special senses. In: Physiological Effects of Noise, B. L. Welch and A. M. S. Welch, Eds., Plenum Press, New York, , pp. 143-150.
2. Babisch W, Pershagen G, Selander J, Houthuijs D, Breugelmans O, Cadum E, Vigna-Taglianti F, Katsouyanni K, Haralabidis AS, Dimakopoulou K, et al. (2013) Noise annoyance—a modifier of the association between noise level and cardiovascular health?Sci Total Environ. 2013; 452-453:50–57. doi: 10.1016/j.scitotenv..02.034
3. Basner M, Babisch W, Davis A, Brink M, Clark C, Janssen S, Stansfeld S. (2014) Auditory and non-auditory effects of noise on health. Lancet.;383:1325–
4. Basner M., Samel A. (2004) Nocturnal aircraft noise effects. *Noise Health.* 6(22):83–93. [PubMed] [Google Scholar]
5. Basner M., Muller U., Elmenhorst E.M. (2011) Single and combined effects of air, road, and rail traffic noise on sleep and recuperation. *Sleep.* ;34(1):11–23. [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
6. Batty G.D , Deary I.J. Gottfredson, L.S. (2007), Premorbid (early life) IQ and later mortality risk: systematic review Annals of epidemiology, 17 pp.
7. Belojeviæ GA, Jakovljeviæ BD, Stojanov VJ, Slepèevic VZ, Paunoviæ KZ. (2008) Nighttime Road-Traffic Noise and Arterial Hypertension in an Urban Population. *Hypertens Res.* ;31:775–781. doi: 10.1291/hypres. [PubMed] [CrossRef] [Google Scholar]
8. Brown A.L. , Kamp van I. (2017), WHO environmental noise guidelines for the European region: A systematic review of transport noise interventions and their impacts on health

9. International journal of environmental research and public health, 14 p. 873
10. Clark C, Paunovic K. (2018) WHO environmental noise guidelines for the European region: a systematic review on environmental noise and cognition. Int J Environ Res Public Health.;15: 285
11. Chandrappa, R., Das, D.B. (2021). Noise Pollution. In: Environmental Health - Theory and Practice. Springer, Cham. https://doi.org/10.1007/978-3-030-64484-0_7
12. Chen Y, Rodgers G, Gulliver J, Hansell AL. (2022) Association between Noise Annoyance and Mental Health Outcomes: A Systematic Review and Meta-Analysis. Int J Environ Res Public Health. Feb 25;19(5):2696. doi: 10.3390/ijerph19052696. PMID: 35270388;
13. Cohen S. , Krantz D.S. , Evans G.W. , Stokols D., Kelly S. (1981), Aircraft noise and children: Longitudinal and cross-sectional evidence on adaptation to noise and the effectiveness of noise abatement Journal of Personality and Social Psychology, 40 p. 331
14. Dahiya N. J., (2014) A case study- traffic noise pollution in one of the metro cities in India, Delhi. Int. J. Recent Res. Aspects ISSN: 2349–7688, 1 168–171
15. Eagan, M. E., Anderson, G., Nicholas, B., Horonjeff, R. & Tivnan, T. (2004) Relation between aircraft noise reduction in schools and standardized test scores Federal Interagency Committee on Aviation Noise Mr Alan F. Zusman, Chariman, Department of the Navy, Washington Navy Yard, 1322, 20374-5065.
16. Errett, Jessica; Bowden, Erica Eileen; Choiniere, Marc; and Wang, Lily M., (2006). “Effects of Noise on Productivity: Does Performance Decrease Over Time?” Architectural Engineering — Faculty Publications 13. https://digitalcommons.unl.edu/archengfacpub/13
17. Firkowska Mankiewicz, A. 2011. Adult careers: Does childhood IQ predict later life outcome? Journal of Policy and Practice in Intellectual Disabilities, 8, 1-9Gong X, Fenech B, Blackmore C,
18. Guski R., Schreckenberg D., Schuemer R. (2017) WHO Environmental Noise Guidelines for the European Region: A Systematic Review on Environmental Noise and Annoyance. *Int. J. Environ. Res. Public Health.*;14:1539. doi: 10.3390/ijerph14121539. [PMC free article] [PubMed] [CrossRef] [Google Scholar]
19. Harvey PD. (2019) Domains of cognition and their assessment. Dialogues Clin Neurosci.;21:227–37
20. https://www.iberdrola.com/sustainability/what-is-noise-pollution-causes-effects-solutions
21. https://www.quebec.ca/en/health/advice-and-prevention/health-and-environment/the-effects-of-environmental-noise-on-health/effects-of-environmental-noise-on-physical-health
22. https://www.studysmarter.co.uk/explanations/environmental-science/pollution/environmental-pollution/ in June 2020
23. Jack C. Westman and James R. Walterst (1981) Noise and Stress: A Comprehensive Approach by Environmental Health Perspectives Vol. 41, pp. 291-309,
24. Kahya E. (2007) The effects of job characteristics and working conditions on job performance. *IntJIndErgonom.*;37:515–523. doi: 10.1016/j.ergon.2007.02.006. [CrossRef] [Google Scholar]
25. McEwen B.S. (1998) Protective and Damaging Effects of Stress Mediators *N. Engl. J. Med.* ;338:171–179.doi: 10.1056/NEJM199801153380307. [PubMed] [CrossRef] [Google Scholar]
26. Mohan, S. Dutta, N.. Sarin, S. M (2000) Subjective reaction to road traffic noise of residents living in Delhi City., Poll. Res., 19 353-6
27. Munzel T, Schmidt FP, Steven S, Herzog J, Daiber A, Sorensen M. (2018) Environmental noise and the cardiovascular system.J Am Coll Cardiol. ; 71:688–697. doi: 10.1016/j.jacc.2017.12.015CrossrefMedlineGoogle Scholar

28. Park J, Chung S, Lee J, Sung JH, Cho SW, Sim CS. (2017) Noise sensitivity, rather than noise level, predicts the non-auditory effects of noise in community samples: A population-based survey. *BMC Public Health.* ;17:315. [PMC free article] [PubMed] [Google Scholar]
29. Rhiannon Thompson, Rachel B. Smith, Yasmin Bou Karim, Chen Shen, Kayleigh Drummond, Chloe Teng & Mireille B. Toledano (2022) Noise pollution and human cognition: An updated systematic review and *meta*-analysis of recent evidence Environment International
30. Volume 158, January 2022, 106905
31. Saremi M, Rohmer O. (2008) Combined Effects of Noise and Shift Work on Fatigue as a Function of Age. *Int J OccupSafErgon.* ;14:387–394. [PubMed] [Google Scholar]
32. Shabani F, Alimohammadi, I, Abolghasemi, J , Dehdari, T Ghasemi, R: (2020) The study of effect of educational intervention on noise annoyance among workers in a textile industry Applied Acoustics Volume 170, 107515
33. Seabi, J Cockcroft, K. Goldschagg P, Greyling M (2015), A prospective follow-up study of the effects of chronic aircraft noise exposure on learners' reading comprehension in South Africa Journal of exposure science & environmental epidemiology, 25 pp. 84-88
34. Shetty SS, D D, S H, Sonkusare S, Naik PB, Kumari N S, Madhyastha H. (2023) Environmental pollutants and their effects on human health. Heliyon. Aug 25;9(9):e19496. doi: 10.1016/j.heliyon.2023.e19496. PMID: 37662771; PMCID: PMC10472068.
35. Singh N. and Davar, S. C. (2004) Noise pollution sources, effects and control, J. Hum Ecol., 16 181–187.
36. Spencer R.L., Deak T. (2016) A users guide to HPA axis research. *Physiol. Behav.* 2017;178:43–65. doi: 10.1016/j.physbeh..11.014. [PMC free article] [PubMed] [CrossRef] [Google Scholar]
37. Shreya Verma (2020) Noise pollution violations: New fines proposed by CPCB step in right direction https://www.downtoearth.org.in/blog/pollution/noise-pollution-violations-new-fines-proposed-by-cpcb-step-in-right-direction-72415
38. Stansfeld, S. & Clark, C. (2015) Health Effects of Noise Exposure in Children Current Environmental Health Reports, 2, 171-178. Google Scholar 32.
39. Victory, J, (2023) managing editor, Healthy Hearing Noise-related hearing loss November 21st,
40. World Health Organization (2011) Burden of disease from environmental noise: Quantification of healthy life years lost in Europe. World Health Organization Regional Office for Europe.

Environmental Ethics and its Need in Present Scenario

Dr. Rishika Verma

Assistant Professor, Department of Philosophy, School of Humanities and Social Sciences, Hemavati Nandan Bahuguna Garhwal University, Srinagar (Garhwal) Uttarakhand-246174

Abstract: In the Research paper I am trying to discuss what is Environmental Ethics? I discussed here the history of Environmental ethics. There are three types of Environmental Ethics: Libertarian extension, Ecological extension and third is conservation extension. Further I discussed about the Principles of Environmental ethics and the need of Environmental ethics. At last I conclude with the why Environmental ethics is essential in present Scenario.

Keywords: Environmental Ethics, history, Principles, Significance,

Introduction: Environmental ethics is a branch of ethical thought that focuses on the relationship between humans and their natural environment. It is a holistic approach to understanding and evaluating our moral obligations to protect and preserve the environment. Environmental ethics seeks to bring together the interests of both humans and the environment, recognizing that both are interdependent and have intrinsic value. A variety of ethical theories, including consequentialism, utilitarianism, and virtue ethics, define environmental ethics. These ethical theories provide a framework for understanding the moral obligations we have to the environment and how we should act to protect it. Environmental ethics also draws upon the fields of philosophy, economics, ecology, and law, providing a comprehensive approach to understanding and evaluating the moral implications of human actions.

Environmental ethics is a field of applied ethics concerned with the ethical dimension of human relationship towards nature. The term environmental ethics covers a variety of approaches that can be roughly divided into two camps: anthropocentrism and non-anthropocentrism. Anthropocentrism refers to a human-centred approach to environmental problems that protects nature for humans. Radical anthropocentrism is often equated with the view that only human beings have intrinsic value, and sees nature as having only instrumental value. Non-anthropocentrism encompasses a variety of approaches connected by the belief that nonhuman entities also have value that is not reducible to anthropocentric interest. It often questions the propriety of human interests and preferences as sufficient basis for environmental decision-making (Routley 1973). Environmental ethics is inherently pluralistic, representing a wide variety of socio-environmental values and beliefs. Its overarching goal is to prompt change in collective practices and individual behaviours.

Ethical reflection on human relations with nonhuman world is not new. Concern about the environmental impacts of human practices, and human treatment of animals, was found in ancient Greece. Jeremy Bentham (1748-1832) AND John Muir (1838-1914) are both still influential in environmental ethics; and Aldo Leopold's A Sand Country Almanac, a seminal work in the field with its essay on the Land Ethic, was published in 1949. The modern field

of environmental ethics emerged in the 1970s. the first academic conference concerning environmental ethics was held at the University of Georgia in 1971; the first journal, environmental ethics, was founded in 1978. From the 1980s on ward, research, publication and teaching in environmental ethics rapidly expanded, Monographs and edited collection central to the field, including Taylor's Respect for Nature, Rolston's Philosophy Gone Wild, and Eliot & Gare's Environmental Philosophy, were published in the mid-1980s. by the 1990s textbooks and readers for students were being published, most prominently Des Jardin's Environmental Ethics and VanDeVeer & Pierce's The Environmental Ethics and Policy Books. The international society for Environmental Ethics was founded in 1989, and the International Association for Environmental Philosophy in 1997. New environmental ethics journals were also founded during the 1999s: Environmental Value (1992), Ethics and the Environment (1996), the journal of Agricultural and Environmental Ethics (1997), and Ethics, Place and Environment (1998).

As environmental ethics continued to grow in the twenty-first century, it diversified. Environmental ethics now supports many contrasting views concerning the fundamental problems in environmental ethics, how to approach these problems, and how environmental ethical theory relates to pressing practical environmental issues.

Of course, pollution and the depletion of natural resources have not been the only environmental concerns rather dwindling plant and animal biodiversity, the lose ow wilderness, the degradation of ecosystems and climate change are all parts of a raft at "Green" issues that have implanted themselves into both public consciousness and public policy over subsequent years. Th Job of environmental ethics is to outline our moral obligations in the face of such concerns. In a nutshell, the two fundamental questions that environmental ethics must address are: what duties do the humans have with respect to the environment, and why? The latter question usually needs to be considered prior to the former.

Types of Environmental Ethics

1. Libertarian Extension: Libertarian extension is a type of environmental ethics that focuses on an individual's right to do whatever they want with the environment and its resources. This concept also stresses that an individual should not impose their own value on others and should instead respect the choices of others.
2. Ecological Extension: Ecological Extension is a type of environmental ethics that focuses on preserving the natural environment and its resources in order to maintain the balance and health of the ecosystem. This concept stresses the importance of humans working with nature in order to sustain it for future generations.
3. Conservation Ethics: Conservation Ethics is a type of environmental ethics that focuses on preserving natural resources for future generations by ensuring that current resources are not depleted or damaged beyond repair. This concept encourages individuals to use natural resources responsibly and judiciously so there will be enough for future generations.

In short, Libertarian extension promotes an individual's right to use natural resources, Ecological extension encourages humans to work with nature, and Conservation Ethics emphasizes sustainable use of natural resources. Each of these types of environmental ethics has its own benefits and should be taken into account when considering how to best protect the environment.

Principles of Environmental Ethics

- Respect for the intrinsic value of nature: Nature should not be treated as a commodity or resource to be exploited and discarded.
- Interdependence of species and ecosystems: Humans depend on nature and natural systems. We must recognize our role in preserving and protecting the environment.
- Ecological Sustainability: We must strive to use resources responsibly and with an eye to preserving ecosystems and biodiversity.
- Human responsibility: We are responsible for our own actions and decisions and their consequences for the environment.
- Human equity: We must strive for a just world where the rights and needs of human, animals and plants are respected and protected.
- Precautionary Principle: We should take precautions against environmental harm, even when scientific evidence is inconclusive.
- Right to know: Individuals have the right to access information about environmental issues.
- Right to participate: Citizens have the right to participate in environmental decision-making processes.

Significance of Environmental Ethics: Here is some Significance of Environmental ethics which help us to understand the need of Environmental Ethics:

- It brings us closer and help us understand the relationship.
- It provides better quality living to current generation.
- Protect Environment for future generation through regulated used of Environment.
- It will help spread awareness among people and thus protect the Environment.
- It sustains other species as well which is moral responsibility of one species i.e., humankind towards all others.

Need for Environmental Ethics: we are facing many problems related to Environment so that we need for the study of Environmental ethics and we need to aware about the problem and its solution. The reasons are following why we need Environmental Ethics:

- Increasing levels of pollution
- Degrading standard of life.
- Increasing dangers related to global warming and climate change.
- New dynamic issues like Environmental Refugees.
- Cutting forests indiscriminately on large scale.
- Releasing green house gases in atmosphere for industrial product.
- Excessive use of fossil, fuels life coal, petrol etc.

Conclusion: Environmental ethics is essential for protecting the environment, species and resources. It promotes sustainable practices and encourages people to become more aware of the impact their actions have on the environment and it emphasizes the interconnectedness of all living things and the need to respect them. It encourages us to think about our place in the world and how we can contribute to preserving the natural environment. Environmental ethics helps to build better relationships with nature, recognizing its intrinsic value, not just its instrumental value. It encourages us to think beyond our immediate needs and consider the long-term implications of our actions. It teaches us responsibility towards our environment, advocating for environmentally friendly practices that help protect natural resources and environmental ethics also promotes better public policies and laws, which help ensure that our environment is properly cared for.

Environmental ethics is important because it provides a moral framework for how humans interact with the natural environment. It helps us consider the effects our actions have on the planet and guides us in making more ethical and sustainable decisions.

References

1. Attfield, R. (2014). Environmental Ethics: An Overview for the Twenty-First Century. Cambridge: Polity.
2. Bullard, R. D. (2005). *The Quest for Environmental Justice. Human Rights and the Politics of Recognition*. Berkeley: Counterpoint.
3. Butler, W. F. and T. G. Acott. (2007). An inquiry concerning the acceptance of intrinsic value theories of nature" *Environmental Values* 12(2): 149–168.
4. Daly, H. E. and J. B. Cobb. (1994). *For the common good. Redirecting the economy toward community, the environment, and a sustainable future*. Boston: Beacon Press.
5. Dereniowska, M. and J. Matzke. (2014). Interdisciplinary foundations for environmental and sustainability ethics: An introduction. *Ethics in Progress* 5(1): 07-32.
6. Horii, R. and M. Ikefuji (2015). Environment and Growth. In S. Managi (Ed.), *The Routledge Handbook of Environmental Economics in Asia* (pp. 3-29). London & New York: Routledge.
7. Leopold, A. (1994). *A sand county almanac. And other sketches here and there*. Oxford University Press.
8. Minteer, B. A. 2012. *Refounding Environmental Ethics: Pragmatism, Principle, and Practice*. Philadelphia: Temple University Press.
9. Norton, B. G. (1984). Environmental Ethics and Weak. Anthropocentrism. *Environmental Ethics*. 6(2), 131-148.
10. Pezzey, J. (1992). Sustainability: An Interdisciplinary Guide. *Environmental Values*, 1(4), 321–362.
11. Routley, R. (1973). Is There a Need for a New, an Environmental Ethic? Proceedings of the XVth World Congress of Philosophy 1:205-210.
12. Söderbaum, P. (2008). *Understanding Sustainability Economics. Towards Pluralism in Economics*. London: Earthscan..
13. Schweitzer, A. (1993). *Reverence for Life. The Words of Albert Schweitzer*. Compiled by H. E. Robles. Harper Collins.

Urbanization and Its Repercussions on Environment: A Comprehensive Analysis

Dr. Priya
(Associate Professor) Mahalakshmi College for Girls, Duhai, Ghaziabad, UP

ABSTRACT: This paper examines the impact of urbanization on the environment. The human activities in urban areas, such as the use of fossil fuels and industrial waste, also increase pollutants in the environment that can affect the health of humans and other species. Urbanisation is the transformation of uninhabited or sparsely inhabited land into heavily populated cities. Urban areas can grow as a result of population growth or movement to urban areas. Urbanisation often leads to deforestation, habitat loss and the extraction of pure water from the environment, which can reduce biodiversity and alter species ranges and interactions. Due to uncontrolled urbanization in India, environmental degradation has been occurring very rapidly and causing many problems like land insecurity, worsening water quality, excessive air pollution, noise and the problems of waste disposal. This paper emphasizes on the effect of urbanization on environmental components mainly climate, biosphere, land and water resources. Although it is impossible to restrict urbanization it has to be ensured that urbanization proceeds in the right path causing minimum impact on environment.

Keywords: Urbanization, Environment, Biodiversity, Pollutants, Environmental Degradation

INTRODUCTION: Despite being one of the least urbanized countries in the world, with only 27.78 per cent of its population living in cities, India is currently facing a serious crisis of urban growth, where urbanization has been an instrument of economic, social and political progress; it has led to serious socio-economic problems. Urbanisation is a process that leads to the growth of cities due to industrialization and economic development. Due to controlled urbanization in India, environmental degradation has occurred very rapidly, causing many problems like shortage of housing, water quality, excessive air pollution, noise, dust and heat, problems of waste disposal, etc. which cause serious health problems. In order to address environmental challenges, people need to think broadly and understand systems, connections, patterns and causes. The challenges themselves frequently have social, scientific, cultural, economic and ethical aspects all of which must be considered for their effective management. Specially discipline- based knowledge while contributing critically is no longer adequate by itself however an holistic appreciation of the context of environmental problems is essential. Meeting this need presents a dilemma to the formal education systems over whether environmental education should be taught as a separate subject or incorporated into one or more particular subject areas. The right answer may vary from situation to situation; depending on what is most practical suffice to say a much stronger re-orientation of all relevant areas of formal education towards issues of sustainability is required. Equally important is the need to establish better communicative links between those people working

on, or learning about, similar or related environmental issues, but who come from different professional or disciplinary backgrounds. Better grounds for communication and partnerships are also required between formal and non-formal education settings, and between various groups with competing interests on environment.

Humans and Their Environment: The present pattern of human activity on the earth resulting in the degradation of the environment remains unchanged, science and technology will not be able to prevent degradation of the environment. Although the present status of the problems is dealt with under a few separate headings below. it should be stated at the very outset that the problem is indivisible. The newly emerging systems view of life lays great stress on the inter-connectedness and inter-dependence of all phenomena physical, biological. psychological and socio-cultural. Even the physical and biological problems of environment are multi-dimension as well as inter-disciplinary.

It is practically impossible to list all the factors that pollute and degrade our environment and nature; one comes across pollution almost at every step in life. In fact, it is so pervasive that you cannot get away from it. The factor, which degrade and pollute this environment have been discussed in the earlier. Some selected and important factors have been summarizing in the following paragraphs briefly:

1. Human Population Explosion: The human population explosion has created several types of problems and has affected the environment adversely; Pollution and environmental degradation are directly related to extraordinary increase in human population during the present century. At the beginning of the 20th century, the world population was about 1.5 billion and by the end of the century it is expected to be about 6 billion. Because of the pressures of agriculture for more food and industries for further development, deforestation is going on a very large scale resulting is soil erosion, change in the world climate and depletion of natural resources. In developing countries domestic sewage and industrial effluents are often dumped untreated into rivers resulting in contamination of fresh water.
2. Advancement of Technology: Technological advancement is the major human activity which has degraded the natural environment and created several types of problems in the developed countries to the world. Developing countries like India need not follow the west and adopt highly sophisticated and capital oriented technology which creates physically and mentally unhealthy. Environment full of pollution, congestion and noise. On the basis of this consideration, intermediate technology is quite cheap. It does not preclude the indigenous technology know-know, small and intermediate industrial complexes should be set up in towns. Apart from halting migration to big cities, such technological centres will go a long way in minimizing degradation of the environment, which is unavoidable in highly modern industrial units cantered in big cities.
3. Pollution due to the Use of Pesticides. The chemical compounds and pesticides are used in agriculture/farming for killing insects and weeds which are harmful for the growth of crops. Pesticides are chemical compounds used for controlling pest of different kinds. For examples. Fungicides are used to control fungus infections, herbicides various types of harmful insects.
4. Chlorofluorocarbon (CFCs) Problem. The first synthesis of CFC (Chlorofluorocarbon) was accomplished in 1930.) It is a colorless, non-toxic chemical which revolutionized refrigeration industry and later on found many applications in pharmaceutical and electronic industries as hailed as a great achievement. However, some of the developing countries including India did not sign the Montreal Protocol as the terms prescribed for them were not for. Subsequently, in June 1990 India along with some other countries

agreed to phase out the use of CFCs. The developed countries agreed to finance the developing countries to switch over to CFC substitutes. The ultra-violet radiation that reaches the surface of Earth form h stratosphere increases due to the thinning of e he ozone layer, 'This increase in the UV radiation is harmful to phytoplankton which includes the free floating in the sea. If phytoplankton is substantially affected it will have an adverse effect on the sea fauna which feeds on it. In fact, the entries ecological chain may break down. With two per cent increase in the intensity of UV radiation ozone concentrating goes down by one per cent, This much increase in the intensity of UV radiation is enough to cause five per cent increase in the human skin cancers.

5. Biodiversity in Nature: It refers to variety and variability among the living animals and plants. The laws of evolution are operational all the time resulting in the creation of new species and extinction of some through natural selection. While it is difficult to estimate the total number of all the species on the planet of Earth, it is generally believed that at least half of them are yet to be identified. The tragedy is that due to over population and subsequent increase in deforestation, over-hunting and both agricultural and industrial growth, many of these unidentified species may become extinct even before we come to known them. The rate at which known and unknown species are becoming extinct is simply staggering. It is well known that some species are important for the survival of the others.
6. Oil Spills and Damaging Ecosystem: One of the tragedies of the recent Gulf War was the spillage of crude oil in the Gulf waters. The total damage to the ecosystem of there region has not been fully known even so far. The oil is believed to have affected life as far away as the Iran coast. Apart from killing the marine life, the spilled oil disrupted the desalination plants on the western coast of d he Gulf, These desalination plant fulfil nearly half the water requirements of the Arabian states. Crude oil disasters during its transportation are not uncommon. In 1978 there was a major disaster along the French coast and in 1989 over ten million gallons of crude oil was spilled into the sea waters of Alaska, in 1989 a Maltese tankar collided with a British) vessel and spilled over 5000 tones of furnace oil into Indian sea near Mumbai. There are many more cases of oil spillage all over the world. There are various ways of treating the oil spills and in fact they do break down with time. However, by the time irreparable damage is done to sea life and surrounding environment.
7. Toxic Time Bombs and Pollution. The highly developed nations are simply obsessed with passion for continuous growth, expansion and export particularly of consumer goods. The technology their use has created very unhealthy environment for life. Besides this, they have posed a very serious problem of disposal of toxic chemical waste products of high technology. The Americans realized the seriousness of the problem when a trench near the Niagara Falls for many years as a dumping ground for highly toxic chemicals was discovered. The chemicals and polluted surrounding water resources and had caused high rate of birth defects and various forms of concern among the residents of the area. An emergency had to be declared and the residents of the area were evacuated to safer place. It has been estimated that annual hazardous toxic chemicals waste products in U.S. alone is over twenty five million tones, Similarly. The U.S. produces a thousand new chemical compounds every year some of which may prove to harmful in the long run as has already happened in the case of CFCs discussed above.

Radiation Hazards and Ecological Balance. There is a fear of third world war and use nuclear weapons. It will not only destroy human population but will destroy total environment in which it would be difficult to survive for any living organisms. It is most important to bear in mind that there is no way to destroy radio- activity once it has been set going. The radio-active substance is absorbed by plankton: algae and sea animals. These radio-active materials enter the biological cycle and soon find their way back to man. Radio-active plutonium is the creation of the nuclear power plants and since there is no absolutely safe technology for handling it, some of it inevitable escapes. This is one additional cause for increase in the various types of cancers throughout the world.

Conclusion: In spite of conducting more number of conferences, seminars and world summits towards the protection of environment. The present world is environmentally less sustainable than in the previous days. The reason is very predictable that the poor developing countries had been seriously thwarted by the lack of financial and skilled manpower resources whereas the rich developed countries appeared to be reasonably content with the progress they had made. The progress whatever the developed countries have made so far has largely been achieved through the relocation of their dirty manufacturing facilities to poor developing countries. However the relocation of the manufacturing facilities in this way cannot address the growing problem of anthropogenic pollution it merely changes the jurisdiction of the pollution created from the rich to the ‘poor world. Therefore in order to achieve the acceptable level of global environmental sustainability, the citizens must be empowered with essential knowledge and information. Then only they can exert pressure on their elected representatives to develop and implement policies for securing environmental sustainability. The awareness among the public and industrial generators has to be created and motivated by the updated techniques and incorporating the innovative and implementable solutions to reform our economy.

References:

1. Census of India 2001, Population Projections for India and States 2001, Report of the Technical Group on Population Projections Constituted by the National Commission on Population.
2. Mohan R.: Urbanization in India: Patterns and Emerging Policy Issues in The Urban Transformation of the Developing World. Josef Gugler (Ed.). Oxford University Press, Oxford (1996).
3. Mirth, 2000. Motor Transport Statistics of India. Transport Research Wing, Ministry of Road Transport and Highways, Government of India, New Delhi.
4. Sunil Kumar, J.K. Bhattacharyya, A.N. Vaidya, Tapan Chakrabarti, Sukumar Devotta, A.B. Akolkar, Assessment of the status of municipal solid waste management in metro cities, state capitals, class I cities, and class II towns in India: An insight, Waste Management 29 (2009) 883–895.
5. United Nations Environment Programme, 1999 Annual Evaluation Report, Evaluation and Oversight unit, August 1999.
6. World Resources, A guide to the global environment, the urban environment, 1996- 97.

Environmental Enlightenment in Indian English Poetry: A Vital Connection between Nature and Society

Dr. Naresh A. Parmar

Assistant.Professor, Smt.C.P.Choksi Arts and Shree, P.L.Choksi Commerce College-Veraval, (Gir Somnath), Gujarat

Abstract:

In the history of English literature, the eighteen century is the fundamental period of change from the medieval world picture through Augustanism to Romanticism. The philosophers and poets turned the concept of Nature as source of values, for the idea of Nature always seems to mean much more than a system of mathematics. Ecological consciousness has become increasingly relevant in the context of our rapidly changing environment. Environmental issues have been paid close attention to all over the world. All the results of discussion prove that ecological construction is inevitable need of today society. This research article delves into the thematic ideology of ecological enlightenment as depicted in the selected poems of prominent Indian English poets from the pre-independence era to the post-independence period in the realm of Indian English Poetry. By analyzing the poetry of Toru Dutt, Rabindranath Tagore, and Sarojini Naidu. This study explores the poets' perspectives on nature, environment, and humanity's relationship with the natural world and ecological problems. Through close textual analysis, thematic exploration, and ecological critique, this article aims to highlight the diverse ecological enlightenment embedded within Indian English Poetry.

Keywords: Ecological enlightenment, Indian English Poetry, Prominent Poets, Harmonious, Nature, Society

Introduction:

Ecological consciousness is a special value concept, which is based on the mutual relationship between all ecology and human activities in nature, including itself. (Gangwar: 2020:30)

Ecological consciousness has become increasingly relevant in the context of our rapidly changing environment. Environmental issues have been paid close attention to all over the world. All the results of discussion prove that ecological construction is inevitable need of today society. At the end of the 19th century, it is inevitable for human being to pay more and more attention to the external living environment due to the rapid change in nature so it becomes today requirement to generate a new perspective to look at the relationship between human and nature and ecological consciousness. The term *Eco criticism* was first used by William Rueckert's in his paper- *Literature and Ecology: An Experiment in Eco criticism* in 1978. Eco criticism, as a literary approach, seeks to examine the relationship

between literature and the environment. It emphasizes the interconnectedness of human existence with the natural world. Nature has always played a crucial role in the creation of any creative work of art. Poets have often used nature to explain their thoughts about life, death, love and war. Our study investigates how these Indian poets engage with ecological themes, drawing inspiration from their surroundings and reflecting on the impact of human actions on the environment.

Nowadays owing to the rapid development of the society and industrialization, people's thoughts have been greatly changed, and they pay more attention to the material things and their life becomes money-centered. They are out of to get what they can from nature, and even they disturbs the balance of nature .Therefore, *everywhere we can see the images of environmental destruction. The result is that people are badly hurt from these disasters. In order to meet with their own needs, they exploit nature madly and the interrelationship between man and nature is being destroyed.* (http;//xueshu.baidu.com)In this research article, we delve into the selected poems of prominent Indian English poets to explore their ecological perspectives. Our analysis focuses on the poetic expressions of Toru Dutt, Sarojini Naidu, Rabindranath Tagore whose aim to shed light on their ecological awareness and the ways in which they engage with nature and environmental concerns.

In the initial stage of Indian English Poetry, Henry Derozio (1809-1813) was considered the first Indian poet to write in English. He believed in the ideals of liberty, equality and fraternity of French Revolution and the principles of the English Romantics. Kashiprasad Ghosh(1809-1873) and M.Madhusudan Dutt(1827-1873) reflected Indian themes in their poems and were regarded as a minor poets. Let us employ an Eco critical lens to analyze selected poems by the prominent Indian English Poets who explore the ecological dimensions present in their works, considering aspects such as symbolism, imagery, and thematic concerns related to nature.

Man and nature form a community of life; we, as human beings, must respect nature, follow its ways, and protect it. Only by observing the laws of nature can mankind avoid costly blunders in its exploration. Any harm we inflict on nature will eventually return to haunt us.... The modernization that we purse is one characterized by harmonious coexistence between man and nature. (Jingping: 2017:48)

Toru Dutt(1856-1877): Nature as a Source of Spiritual Enlightenment:

Toru Dutt has undisputed claim to be regarded as the first Indian poet in English. (Parthasarathy:1976:5) Torulata Dutt's poems often celebrate the beauty of nature, emphasizing its spiritual significance. In *The Lotus*, where she portrays the lotus as a symbol of purity and resilience1.Her poems reveal her ecological insight with deep connection to the natural world, emphasizing its sacredness. One example from her work *The Lotus* reflects ecological themes with poignant and poetic lines:

Give me a flower delicious as the rose
And stately as the lily in her pride.....
and Flora gave the lotus, "rose-red" dyed,
and 'Liiy-White," Queenliest flower that blows.(Dwivedi:1991:27)

These lines evoke the gentle unfolding of nature's beauty, highlighting the interconnectedness between human consciousness and the environment. It is said that there's

a lotus flower in every Hindu's heart, and that when this lotus blooms, the person achieves enlightenment. She composes natural beauty in the same poem:

The grey sea and the long black land;

And the yellow half-moon large and low. (Dwivedi:1991:27)

She captures the essence of nature's vastness and diversity. The imagery of the sea, land, and moon evokes a sense of interconnectedness and highlights the beauty and importance of the Earth's ecosystems. *The Lotus* unfolds *Toru's keen sensitiveness to nature and the responsiveness of her soul to colour*. (Singh:2011: 20).

In *The Forest*, she writes, *Ah, how the quiet pools were stirred, as though / By the soft breathing of some forest god! (Dwivedi: 1991:37)*This imagery captures the reverence and awe for the natural world, emphasizing the spiritual and ecological harmony present in her poetry.Further,ecological consciousness often emerges as a profound theme, woven delicately into the fabric of her verses. Dutt portrays the earth as a living entity, capable of emotion and reaction in *The Rhapsody*:*The earth has sighed its soundless sigh / And held its heavy breath to hear. (Dwivedi: 1991:37)* It suggests a deep ecological awareness, acknowledging the planet's ability to respond to human actions and environmental changes. In *A Dream,* She depicts the dynamic relationship between the elements of nature. The wind stirring the waves symbolizes the interconnectedness of air and water, emphasizing the delicate balance within ecosystems: *Daylight is dying away, / The wind has awakened the wave.* In the lines of *The Golden Boat*, *The reeds, in their dance, / With the wind for their tune*. She celebrates the harmonious relationship between plants and the elements. The dance of the reeds symbolizes nature's resilience and adaptability, as they sway in rhythm with the wind, showcasing the intricate balance of ecosystems.

Toru Dutt deals with interconnectedness and harmony with the natural world in her poetry.

The Indian flora and fauna intoxicated her and when manifested in her poetry led the readers to sweet trance. She was the Wordsworth in India and her oft-anthologized poem *Our Casuarina Tree* reveal:

O sweet companions, loved with love intense,

For your sakes shall the tree be ever dear;

The sea has sent its word to land,

Behold my face, behold my form.

She illustrates the communication between different elements of the natural world. By personifying the sea, she highlights the inherent interconnectedness and mutual dependence of land and water environments. In her nature poetry, ecological consciousness is intricately woven into the imagery and themes, reminding readers of the interconnectedness of all life forms and the importance of preserving the natural world. She emerges as the great poet of nature and in this respect can be compared with Sarojini Naidu. She truly reflects her immense love for each and every aspect of Nature that surrounds her with full vigour in her poems.

Sarojini Naidu (1879-1949): Nature's Beauty and Symbolism:

Sarojini Naidu, also known as the Nightingale of India, was a renowned poet and freedom fighter. While she is more famously known for her political activism and lyrical poetry

celebrating India's independence movement, she also wrote about nature and ecological themes in some of her works. She is deep lover of romanticism and renaissance ideals with keen perceive ration of the inherent aestheticism of Nature. She has a keen sense of observation and her fine sensibility responds more emotionally than intellectually to the sense impressions from nature. (Nair: 1987:99) She deals with India's natural beauty and cultural heritage in her lyrical poems. She interwoven the relationships among nature, culture, and spirituality in her works. In her poem *In the Forest*, Naidu captures the enchantment of nature and its timeless allure. She celebrates the beauty and significance of forests:

The forests are the flags of nature.

They appeal to all and awaken inspiring universal feelings. *(Nair: 1987:97)*

She portrays forests as symbols of nature's grandeur and emphasizes their universal appeal, suggesting that they evoke feelings of inspiration and awe in all who behold them.

Naidu personifies the wave, depicting it as a living entity that sings as it moves in her poem *The Song of the Wave*: *The wave sings because it is moving, moves because it is singing*. This line captures the interconnectedness of nature, suggesting that movement and sound are inherent qualities of the wave, symbolizing the rhythmic harmony of the natural world. In *The Pardah Nashin*, she metaphorically refers to the natural world as the garden of God, highlighting its beauty and abundance. The imagery of sunlight, shadow, and a flowery maze evokes a sense of tranquility and mystery, emphasizing the richness and diversity of the environment in the line: The garden of God is green with sunlight, shadow, and flowery maze. Further, Naidu explores the concept of divine love and its manifestation in the natural world in her poem *Ecstasy*: The world stands burdened by the love of God; sweet, limitless, and eternal. She suggests that the earth is infused with the boundless and enduring love of God, implying that nature reflects this love through its beauty, diversity, and abundance.

Sarojini Naidu's ecological enlightenment shines through her appreciation for nature's beauty, interconnectedness, and divine essence in her poetry. She evokes a sense of wonder and reverence for the environment in her verses. Her poems reveal the beauties of nature that arose of our hearts feelings and emotions that are at once romantic and mystical. According to M.K. Naik, Like the Romantics, Naidu regarded Nature as a refuge from the cares of human life though she is no Nature-mystic, unlike Wordsworth nor does she subscribe to the Keatsian sensuous apprehension of Nature. But she does evoke the tropical magnificence of the opulent Indian landscape. (Naik: 2006:22).

Rabindranath Tagore (1861-1941): Ecological Harmony and Unity:

Rabindranath Tagore, a Nobel laureate poet, often imbued his poems with themes of nature and ecological enlightenment. He has acute vision of ecological harmony and unity in his natural poetry. He implies his concept of "Jivan Debata" (Life God) in his poetry for ecological consciousness. Tagore's poetry beautifully captures the interconnectedness of all living beings and the importance of respecting and preserving the natural world.

In *The Gardener*, Tagore writes *the world has kissed my soul with its pain, asking for its return in songs* which reflects the interconnectedness between humans and nature. He suggests that through experiencing the pain and beauty of the world, one can find inspiration to create art and music, thereby returning the love and appreciation to nature. In his most famous poem, The Banyan Tree, Tagore says, The banyan tree is my teacher. He often

revered the banyan tree as a symbol of wisdom and resilience. He highlights the profound lessons that nature, particularly the ancient banyan tree, can teach humanity about patience, endurance, and the interconnectedness of all living things. These examples demonstrate Tagore's deep ecological enlightenment and his ability to convey profound insights about nature through his poetry.

The discussion of the relationship between man and nature in the selected poetic lines from the selected poets of post-independence Indian English Poetry is always a manifestation of mankind's pursuit of a harmonious ecological life.

Conclusion:

Indian English poetry offers diverse perspectives on ecological enlightenment. These poets engage with nature, spirituality, and environmental concerns, urging readers to recognize their role in preserving the planet. By analyzing their works, we gain insights into the ecological consciousness embedded in Indian literary traditions. This research article aims to contribute to the growing body of literature on ecocriticism and environmental humanities by providing a comprehensive analysis of ecological themes in the selected works of Indian English poets. Through a multidimensional examination of nature, culture, spirituality, and social justice, this study seeks to illuminate the ecological consciousness embedded within Indian English poetry and its relevance for contemporary environmental discourse. The poetics lines concerning nature capture the essence of ecological consciousness in Indian English poetry, weaving together themes of nature's beauty, humanity's impact, and the urgent call to action for environmental preservation.

References:

Dahiya, Archana ,(2013, May), "Ecological Aspects in the Selected Poems of Toru Dutt, Sarojini Naidu and Kamala Das and *Green* Density Measure." *Language in India*, vol. 13, no. 5, May 2013, 5.

Diwedi,A.N.,(1991), *Toru Dutt,* Amar Prakashan : New Delhi

Gandwar, D.S.,(2020), "Cultivation of Ecological Consciousness for a Sustainable Agroecosystem", *Journel of International Business Studies, Vol. 11. no. 2*

Jigping, Xi, (2017,October 18), *Xi Jingoing's report at 19th CPC National Congress*, Beijing

Kumar, Satish. Sarojini Naidu: The Poetess. 1st ed. Bareilly: Student Store, 1977. Print.

Naik, M. K.,(2006), *Indian English Poetry from the beginnings upto 2000.*Pencraft International: Delhi Print

Nair, K. R. Ramachandran,(1987) *Three Indo-Anglian Poets*, Sterling: New Delhi Print. Parthasarathy,R., (1976), *Introduction, Ten Twentieth -Century Indian Poetry, Oxford University Press*: Delhi

Singh, Radha Mohan,(2011) ed. *A Collection of Indian English Poetry*. Orient Blackswan : New Delhi. Print

Webiology:

http;//xueshu.baidu.com

Enhancing Environmental Awareness among Secondary School Students through Cartoon-Based Instruction

Dr. Sojia John

Assistant Professor in Education, Mount Tabor Training College, Pathanapuram, Kollam, Kerala.

Abstract

Effective Environmental education encourages students to take ownership of their learning, learn via doing and experiencing, take environmental issues outside of the classroom, and apply what they learn to real-world situations. The utilisation of cartoons in the classroom enables students to develop critical thinking, questioning, creativity, and research abilities with regard to the solution of various environmental issues around us. Thus the main aim of this study was to explore the effect of Cartoon Based Instructional Method (CBIM) on enhancing Environmental awareness among secondary school students. Pre-test Post-test control group design was used. Experimental group was taught using the Cartoon Based Instructional Method (CBIM) and the Control group was taught by the Activity Oriented Method. The findings of the study indicated that experimental group performed significantly higher in generating environmental awareness as compared to control group. Individually the awareness of the students of experimental group improved more significantly as compared to the control group. Additionally, it was expressed by the students that the application of cartoons developed many significant skills including problem solving, critical thinking, questioning, discussing, detecting and remedying the various environmental issues around us.

Key Words: Cartoon Based Instructional Method (CBIM), Activity Oriented Method (AOM),Environmental Awareness, Critical thinking, Creativity, Environmental Education (EE)

Introduction

Exploitation of the environment by human has become visible everywhere .All the environmental problems stem from the behavior of individuals and societies. As human beings continue to have significant impacts on the environment and its resources, education seems to be the best tool for providing the mankind with an understanding of the effects of their actions and behavioral patterns. Consequently Environmental Education became an approach to education that promotes environmentally responsible behaviors and seeks to provide solutions to the growing environmental problems. All kinds of education and information which aim at creating a wise approach by man to the (natural) environment in the sense of conservation, wise use and management can be termed as Environmental Education (EE).By establishing its exclusive status Environmental Education is receiving so much prominence and importance in these days at all stages of education. School curriculum turns out to be the best determining factor in the practice of EE. Environmental

Education (EE) is the teaching of those aspects of environmental issues described in the school curriculum, which provides opportunities for pupils to acquire awareness, knowledge, attitudes, skills and experiences that will enable them to make informed and responsible decisions on the natural and built environment. Due consideration is therefore given to the application of various approaches and strategies in the Environment education that is offered. When students take ownership of their learning, learn by doing and experiencing, take environmental issues outside of the classroom, and apply what they have learned to their daily lives, we may speak of a meaningful and qualified environment education. It follows that traditional methods like lecture, taking notes, and presenting cannot be used to deliver environmental education. Education about the environment covers a wide range of topics and related skills. A lot of the topics taught in environmental education should be studied scientifically before being applied to everyday situations. It's also critical to ascertain pupil's conceptions regarding the issues at hand and any potential misconceptions. In this context cartoons can be utilised as a teaching tool to facilitate successful learning and teaching because they have the ability to captivate students on all subjects. Cartoons breathe life into the lifeless pages of books and reveal the subjects' well-kept secrets. Cartoons have a lot of visual appeal. When you open a page with a cartoon drawn on it, the cartoon will be the first thing you notice, and you will attempt to understand it without even reading the content. Because cartoon graphics are so aesthetically pleasant to young readers, they are frequently found in books intended for toddlers, pre-nursery pupils, and nursery school kids. The children's perceptions are shaped by the cartoon images they view. When it comes to cartoons, pupil often recall what they saw, the activities the cartoons took, or anything else.

Rationale of the Study

Cartoons may express many innovative concepts that words cannot. A single cartoon can express more information than multiple pages of narration. Cartoons are amazing, fascinating illustrations that use very little language. Many cartoons from earlier times dealt with social issues and political figures. However, cartoons are now frequently utilised in all spheres of human endeavour. Students adore animated films. Children are particularly drawn to cartoons for various reasons. Everything is made up. For the purpose of teaching and learning, this is quite helpful. It is generally acknowledged that humour has a crucial role in the teaching and learning process, especially when it comes to building a supportive learning environment and strong student-teacher relationships. A teaching technique, its purported advantages include that it fosters comprehension, raises interest and focus, motivates students to study, improves attitudes, and fosters creativity and divergent thinking. Reduced academic stress and anxiety, boredom, and disruptive conduct are other advantages. Children's perception of the world is visual by nature. Cartoons address a wide range of sophisticated subjects. Cartoons and students naturally go together. Cartoons are a great teaching tool for higher order thinking skills. One teaching method that could be utilised to effectively teach about environment is the cartoon-based method. It facilitates pupils' effective learning motivation. When students are able to observe and interact with real examples of the issues they are studying, their comprehension of various environmental education concepts improves. Cartoons work well for teaching of environment. Since they are depictions of actual events, teachers can inspire their students to consider those events in more abstract ways. The goal of pedagogy is to make it as easy as possible for students to learn and become experts in the subject. Hence an attempt has been done by the investigator to study the

effect of cartoon based instruction on enhancing environmental awareness among secondary school students

Objectives of the Study

The major objectives of the study are:

i. To prepare Lesson transcripts on Cartoon based Instructional Method for enhancing awareness about environmental issues at secondary level.

ii. To test the effectiveness of Cartoon based Instructional Method for enhancing awareness about environmental issues at secondary level.

iii. To compare the pre-test and post-test scores of secondary school pupils taught by Cartoon based Instructional Method (CBIM) and Activity Oriented Method(AOM).

Hypotheses of the Study

The hypotheses formulated for the present study are

$H_{1:}$ The Cartoon Based Instructional method (CBIM) is effective in enhancing the awareness about Environmental issues at high school level.

H_2: There exists significant difference between the pre-test and post-test scores of Environmental Awareness Test of secondary school pupils taught through Cartoon Based Instructional method (CBIM) and Activity Oriented Method (AM)

Methodology in Brief

The investigator adopted experimental method for investigating the effect of Cartoon Based Instructional method in enhancing awareness about environmental issues at secondary level. The investigator selected the pre-test–post -test non-equivalent group design. The sample selected for the study consists of 80 secondary school pupils of VIIIth Standard from Govt. High School Anchal East, Kollam district, Kerala. The tools used in the study for data collection are i) Lesson Transcripts on Cartoon Based Instructional method (CBIM) ii) Lesson transcript based on Activity Oriented Method and iii) A Test to measure the awareness about Environmental issues. The data was analysed using the statistical techniques like Mean, Median, Mode and Standard deviation. The t test was done to determine if there exist a significant difference between the means of two groups i.e., experiment and control group. The study covered the main categories of environmental problems, including pollution, solid waste, and biodiversity loss. The primary goal of the study is to raise public knowledge of environmental problems, including their sources, impacts, and solutions. The cartoons were created as expression of a discussion by three or more characters using pictures. These characters converse and support a viewpoint. One of the concepts put out is the one that is recognized as being accurate by science, whereas the other ideas reflect alternate, non-scientific expressions or thoughts that contain conceptual errors. By means of a speech bubble, the cartoon conveys the thoughts regarding the posed question. Students are expected to justify their choice of cartoon by providing relevant examples. The cartoons were prepared using web-based canva and storyboardthat. The Environmental awareness test consists of twenty items covering the major aspects of the three major environmental issues . Each item is given a weight age of 1 mark and thus maximum marks for each student can be 20.The content validity of the test was established by giving it to the subject experts.

Analysis and Interpretation of the Data

The collected data was classified, tabulated, analyzed and interpreted using various descriptive statistics such as mean, median, standard deviation and using the inferential statistics, the test of significance of difference between two means. The major findings of the study are listed below:

I. Comparison of the Pre-test scores of awareness test of the secondary school students in the Cartoon Based Instructional method (CBIM) and the Activity Oriented Method(AOM)

This section of analysis intends to compare the Pre-test scores of experimental group(CBIM) and Control group(AOM) and to identify the difference between their scores. The mean and standard deviation of pre-test scores of students (Experimental and Control) have been computed and the difference between scores of two groups was tested for significance by finding out the Critical Ratio. The data and the results of test of significance are given in Table: 1.

Table1: Data and Results of Test of Significance of the Pre-test scores of Environmental Awareness Test in the Experimental and control Groups

Groups	No of Students	Mean	Standard Deviation	T value	Level of significance
CBIM	40	13.42	3.34		Not
AOM	40	14.22	2.88	1.17	Significant

From the Table:1,it can be inferred that there is no significant difference in the scores of Environmental Awareness test between the Experimental and Control groups even at 0.05 level. It can be concluded that the groups (CBIM and AOM) are more or less equal with regard to their pre-test scores.

II.Comparison of the post test scores of awareness test of the secondary school students in the Cartoon Based Instructional method (CBIM) and Activity Oriented Method(AOM)

This section of analysis intends to compare the Post test scores of Experimental group(CBIM) and Control group(AOM) and to identify the difference between their scores. The mean and standard deviation of post test scores of students (CBIM and AOM) have been computed and the difference between scores of two groups was tested for significance by finding out the Critical Ratio. The data and the results of test of significance are given in Table 2.

Table 2: Data and Results of Test of Significance of the Post test scores of Environmental Awareness Test in the Experimental and control Groups

Groups	No of Students	Mean	Standard Deviation	T value	Level of significance
CBIM	40	20.32	2.50		Significant at
AOM	40	17.05	2.36	6.01	0.01 level

From the table 2, it can be concluded that the mean score of Post –test (20.32) of Experimental group is higher than the mean score of post-test (17.05) of the Control group.

Also it is found that the t value 6.01 is significant at 0.01 level of significance, which means that there exists a significant difference in the post test scores of Experimental and Control groups. This reveals that Cartoon Based Instructional method (CBIM) is effective on enhancing awareness of Environmental issues among secondary school students than Activity Oriented Method(AOM)

III Comparison of the Pre test and Post-test scores of awareness test of the secondary school students in the Experimental Group(CBIM)

This section of analysis intends to compare the Pre-test and Post test scores of awareness test of experimental group and to identify the difference between their scores. The mean and standard deviation of pre-test and post –test scores of students (Experimental group) have been computed and the results are given in the table 3.

Table 3: Data and Results of Test of Significance of the Pre-test and Post test scores of Environmental Awareness Test in the Experimental Group

Groups	No of Students	Mean	Standard Deviation	T value	Level of significance
Pre-test	40	13.42	3.34		Significant at
Post-test	40	20.32	2.50	10.46	0.01 level

From the table:3 it is inferred that there is significant difference between means of Pre-test and Post-test scores of Environmental Awareness Test in the experimental group which shows the effectiveness of Cartoon Based Instructional method (CBIM) on enhancing awareness about Environmental issues among secondary school students.

Conclusion

From the findings of the study, it is clear that the Cartoon based Instructional method is more effective in creating awareness about Environmental issues as compared with the Activity Oriented Method. Thus Cartoon based Instructional method can be used as an effective means for imparting Environmental education at High school level. Those findings resemble the studies where it is expressed that the concept cartoons assisted the students with visualizing and solving the problem (Balým et al., 2016). Findings obtained from the study shows similarities with Cengizhan's study (2011) that received the opinions of pre service teachers about cartoons and all of the them (100%) who participated in the study stated that concept cartoons positively affected learning, did not distract their interest, provided motivation, and 97.7% stated that they made the lesson more interesting. In this context, cartoons improve students' creativity and critical thinking and problem solving skills. It also provides motivation and improvement of student learning outcomes. In addition, cartoons support students to take more responsibility by providing active participation in the classroom. It visualizes the theme making it more concrete, and to develops critical skills such as creativity and high-level thinking. These results are in line with the studies of Keogh and Naylor (1999); Long and Marson (2003); Morris et al. (2007), which stated that concept cartoons provide motivation by facilitating the focus on the theme. Prevention of environment problems that we encounter today firstly depends on providing and effective Environment education to individuals. In this regard, the researchers are suggested to be oriented to technology supported and practical studies which aim at developing the

individuals' environment consciousness more. The study could be applied to students at different levels and the change in students of elementary school, secondary school and high school could be monitored. Additionally, studies investigating the effect of the cartoon applications on the students' critical thinking, creativity, motivation could be conducted. Children are very good observers and it is easy for them to remember gestures or even body languages of a characters based on a particular topic rather than recalling texts from their books. Cartoons can be used as a very good teaching approach to certain topic to entertain children in their learning process in a way that they do not even know they are learning.

References

Atasoy, ª. & Akdeniz A.R. (2009). The effect of concept cartoons on eliminating misconceptions about action-reaction forces International Computer and Instructional Technologies Symposium, Karadeniz Technical University, Trabzon.

Aydýn, G., & Özyürek, C. (2014). Teaching The Light Pollution Subject Via Computer-Aided

Concept Cart Bing, K. W., & Tam, C. H. (2003). A fresh look at cartoons as a media of instruction in teaching mathematics and science in malaysian schools: A hands-on experience. In *ELTC, Malaysia: Conference: Managing Curricular Change* oons. *Journal of Inquiry Based Activities*, *4*(2), 54-71.

Balým, A. G., Ýnel, D., & Evrekli, E. (2008). The effects the using of concept cartoons in science education on students' academic achievements and enquiry learning skill perceptions. *Elementary Educational Online*, *7*(1), 188-202.

Erdoðan, A., & Özsevgeç, L. C. (2012). The Effects of concept cartoons on eliminating students' misconceptions: Greenhouse effect and global warming. *Turkish Journal of Education*, *1*(2), 38-50.

Cengizhan, S. (2011). Prospective Teachers' Opinions about Concept Cartoons Integrated with Modular Instructional Design. *Education and Science*, *36*(160).

Demirci, F., & Ozyurek, C. (2017). The effects of using concept cartoons in astronomy subjects on critical thinking skils among seventh grade student. *International Electronic Journal of Elementary education, 10*(2), 243-254 https://doi.org/10.26822/iejee.2017236119

Kabapýnar, F. (2005). Effectiveness of teaching via concept cartoons from the point of view of constructivist approach. *Educational Sciences: Theory&Practice*, *5*(1), 135-146.

Keogh, B., & Naylor, S. (1999). Concept cartoons, teaching and learning in science: an evaluation. *International Journal Science Education, 21* (4), 431-446.

Long, S. & Marson, K. (2003). Concept cartoons. *Hands on Science, 19* (3), 22-24.

Kuhlemeier, H., Huub V. D. B., & Nijs, L. (1999). Environmental knowledge, attitudes and behavior in dutch secondary education. *Journal of Environmental Education*, *30*(2), 4-14

Morris, M., Merritt, M., Fairclough, S., Birrell, N. & Howitt, C. (2007). Trialing concept cartoons in early childhood teaching and learning of science. *The Journal of the Australian Science Teachers Association, 53* (2), 42-45.

Stephenson, P. & Warwick, P. (2002). Using concept cartoons to support progression in students' understanding of light. *Physics Education*, *37* (2), 135-140.

Environmental Resources and Sustainable Development

Sharad Sharma

Assistant Professor C&P SCERT, Delhi, India110024

Abstract

Protecting and sustainably managing environmental resources is essential for ensuring the well-being of current and future generations. This involves conservation efforts, sustainable resource use practices, pollution prevention, habitat restoration, and global cooperation to address environmental challenges such as climate change, biodiversity loss, and pollution.

Sustainable development is an approach to economic growth and societal progress that seeks to meet the needs of the present without compromising the ability of future generations to meet their own needs. It involves integrating economic, social, and environmental considerations to promote long-term prosperity, equity, and environmental stewardship. Sustainable development aims to achieve a balance between economic development, social inclusion, and environmental protection, recognizing that these three dimensions are interconnected and interdependent.

Keywords: Resources, Environmental resources, sustainable resources, Sustainable development, Sustainable Development Goals (SDGs)

Environmental Resources

The concept of environmental resources refers to the various elements of the natural environment that provide benefits or value to living organisms, including humans. Environmental resources encompass various components of the natural world that are essential for supporting life and maintaining ecological balance. These resources can be categorized into several types:

1. Air: Clean air is vital for the health of both humans and ecosystems. It contains oxygen necessary for respiration and regulates the Earth's climate by trapping heat and supporting weather patterns.
2. Water: Freshwater sources such as rivers, lakes, and groundwater are critical for drinking, irrigation, industrial processes, and maintaining aquatic habitats. Oceans and seas also provide resources like seafood and regulate global climate patterns.
3. Soil: Soil provides a medium for plant growth and plays a crucial role in agriculture, forestry, and ecosystem stability. It supports biodiversity and helps in nutrient cycling and water filtration.
4. Biodiversity: Biodiversity encompasses the variety of life forms on Earth, including plants, animals, fungi, and microorganisms. It contributes to ecosystem resilience, provides ecosystem services such as pollination and pest control, and supports human well-being through food, medicine, and cultural values.
5. Forests: Forests serve as habitats for numerous species, regulate water cycles, store carbon, and provide resources such as timber, fuelwood, and non-timber forest products. They also offer recreational opportunities and contribute to local economies.

6. Minerals and Natural Resources: Minerals, fossil fuels, and other natural resources are essential for industrial processes, energy production, and infrastructure development. However, their extraction and use can have significant environmental impacts, including habitat destruction, pollution, and greenhouse gas emissions.
7. Renewable Energy Sources: Renewable energy sources such as solar, wind, hydroelectric, and geothermal energy offer alternatives to fossil fuels and contribute to mitigating climate change and reducing environmental degradation.
8. Ecosystem Services: Ecosystem services are the benefits that humans derive from natural ecosystems, including provisioning services (e.g., food, water), regulating services (e.g., climate regulation, water purification), supporting services (e.g., nutrient cycling, soil formation), and cultural services (e.g., spiritual and recreational values).

Environmental resources and sustainable resources are closely related concepts but have distinct meanings:

1. Environmental Resources: Environmental resources refer to the components of the natural environment that are essential for supporting life and providing various ecosystem services. These resources include air, water, soil, forests, biodiversity, minerals, and other natural elements. They are crucial for sustaining life and supporting various human activities, including agriculture, industry, and recreation. However, the availability and quality of environmental resources can be affected by human activities such as pollution, deforestation, over-extraction of natural resources, and habitat destruction.
2. Sustainable Resources: Sustainable resources are those resources that can be utilized or managed in a way that meets the needs of the present generation without compromising the ability of future generations to meet their own needs. These resources are renewable or can be replenished over time through natural processes, or they can be managed in a manner that ensures their availability in the long term. Examples of sustainable resources include renewable energy sources like solar, wind, and hydropower; sustainably managed forests; fisheries managed within sustainable limits; and agricultural practices that promote soil health and biodiversity conservation.

While all sustainable resources are part of environmental resources, not all environmental resources are necessarily sustainable. For example, fossil fuels are environmental resources because they exist naturally in the environment, but their extraction and combustion contribute to environmental degradation and climate change, making them unsustainable in the long run.

Efforts to promote sustainability often involve managing environmental resources in a way that ensures their continued availability and minimizes negative impacts on ecosystems and future generations. This may involve adopting renewable energy sources, implementing conservation measures, practicing sustainable land and resource management, and promoting eco-friendly technologies and practices.

Sustainable Development

Key principles of sustainable development include:

1. Environmental Sustainability: Ensuring that natural resources are used in a way that maintains ecological balance and minimizes environmental degradation. This involves promoting renewable energy sources, sustainable resource management practices, pollution prevention, biodiversity conservation, and ecosystem restoration.
2. Social Equity and Inclusion: Promoting social justice, equity, and inclusivity by ensuring

that economic development benefits all members of society, especially disadvantaged and marginalized groups. This includes addressing poverty, inequality, access to education and healthcare, gender equality, and social cohesion.

3. Economic Prosperity: Fostering economic growth and development that enhances the well-being of current and future generations while ensuring resource efficiency, innovation, and sustainable consumption and production patterns. This involves promoting sustainable businesses, investing in green technologies and infrastructure, and fostering a circular economy that minimizes waste and maximizes resource use efficiency.
4. Intergenerational Equity: Recognizing the needs and rights of future generations and making decisions that preserve natural resources and environmental quality for their benefit. This includes sustainable land and resource management practices, climate change mitigation and adaptation measures, and responsible stewardship of ecosystems and biodiversity.
5. Partnership and Collaboration: Encouraging cooperation and collaboration among governments, businesses, civil society organizations, and other stakeholders at local, national, and global levels to address common challenges and pursue sustainable development goals. This involves participatory decision-making, stakeholder engagement, knowledge sharing, and capacity building.

Sustainable development is enshrined in various international agreements and frameworks, including the United Nations Sustainable Development Goals (SDGs), which provide a comprehensive agenda for addressing global challenges such as poverty, inequality, climate change, environmental degradation, peace, and justice. Achieving sustainable development requires concerted efforts and collective action by governments, businesses, civil society, and individuals to create a more equitable, resilient, and sustainable world for present and future generations.

The Sustainable Development Goals (SDGs) are a set of 17 interlinked global goals adopted by the United Nations (UN) member states in 2015 as part of the 2030 Agenda for Sustainable Development. These goals build upon the Millennium Development Goals (MDGs) and aim to address a range of social, economic, and environmental challenges facing the world today. The SDGs provide a comprehensive framework for sustainable development efforts and call for action by all countries, regardless of their level of development, to achieve a more equitable, prosperous, and sustainable future for all.

Environment and Sustainable Development Goals

These goals are interconnected and indivisible, and progress in one area often depends on progress in others. Achieving the SDGs requires collaborative efforts and partnerships among governments, businesses, civil society, and individuals at local, national, and global levels. Monitoring progress towards the goals is essential to ensure accountability and track achievements over time.

The environment plays a central role in the achievement of the Sustainable Development Goals (SDGs), as many of the goals are directly or indirectly linked to environmental sustainability. Environmental considerations are integrated into several of the SDGs:

1. Goal 6: Clean Water and Sanitation: This goal focuses on ensuring availability and sustainable management of water and sanitation for all. It addresses issues such as

water scarcity, water quality, wastewater management, and sanitation services, which are critical for human health, ecosystems, and sustainable development.

2. Goal 7: Affordable and Clean Energy: This goal aims to ensure access to affordable, reliable, sustainable, and modern energy for all. It emphasizes the importance of transitioning to renewable energy sources, improving energy efficiency, and expanding energy access in a manner that minimizes environmental impacts and supports sustainable development.
3. Goal 11: Sustainable Cities and Communities: This goal seeks to make cities and human settlements inclusive, safe, resilient, and sustainable. It addresses challenges related to urbanization, including air and water pollution, inadequate waste management, unsustainable resource consumption, and lack of green spaces, and promotes sustainable urban planning and management practices.
4. Goal 12: Responsible Consumption and Production: This goal focuses on ensuring sustainable consumption and production patterns. It encourages reducing waste generation, increasing resource efficiency, promoting sustainable lifestyles, and adopting sustainable business practices to minimize environmental impacts throughout the life cycle of products and services.
5. Goal 13: Climate Action: This goal calls for urgent action to combat climate change and its impacts. It emphasizes the need to mitigate greenhouse gas emissions, enhance resilience to climate-related hazards, promote climate adaptation measures, and integrate climate considerations into policies and planning processes to safeguard the environment and achieve sustainable development.
6. Goal 14: Life Below Water and Goal 15: Life on Land: These goals address the conservation and sustainable use of marine and terrestrial ecosystems, respectively. They aim to protect and restore biodiversity, sustainably manage forests, oceans, and other ecosystems, combat desertification and land degradation, and halt biodiversity loss to ensure the health and resilience of ecosystems and support sustainable development.
7. Goal 17: Partnerships for the Goals: Collaboration and partnerships are essential for achieving all the SDGs, including those related to environmental sustainability. Goal 17 emphasizes the importance of mobilizing financial resources, technology transfer, capacity-building, and knowledge-sharing to support the implementation of sustainable development initiatives, including environmental conservation and protection efforts.

In conclusion, the Sustainable Development Goals are crucial for securing a sustainable and prosperous future for generations to come. By embracing the principles of sustainability and working towards the SDGs, we can leave a positive legacy for future generations and ensure that they inherit a world that is fair, resilient, and thriving.

Efforts to promote sustainability often involve managing environmental resources in a way that ensures their continued availability and minimizes negative impacts on ecosystems and future generations. This may involve adopting renewable energy sources, implementing conservation measures, practicing sustainable land and resource management, and promoting eco-friendly technologies and practices.

Environmental considerations are integral to the achievement of multiple Sustainable Development Goals, and efforts to address environmental challenges are essential for

promoting sustainable development and improving the well-being of present and future generations.

References:

1. NCERT, 2023. National Curriculum Framework for School Education
2. Chapters on Environment and sustainable development in Textbooks of NCERT
3. United Nations Environment Programme, 2021. Making Peace with Nature: A scientific blueprint to tackle the climate, biodiversity and pollution emergencies
4. Bharucha, E. 2005. Textbook of Environmental Studies for Undergraduate Courses, Universities Press (India) Pvt Ltd.
5. Karpagam, M. 2001.Environmental Economics: A Textbook. Sterling Publishers, New Delhi.
6. Rajgopalan, R. 2005. Environmental Studies: From Crisis to Cure. Oxford University Press, New Delhi.

CSR and its Role in Environmental Sustainability

Shalini sharma

Research Scholar, Banasthali vidyapith, Newai, Rajasthan

Abstract

Keeping the environment safe in harmony with economy development is very important for any nation. Hence, it is very necessary to keep an eye on environmental sustainability and to save it from deterioration. CSR has a very big role in it. All the activities of corporate houses undertaken for welfare of society and preservation of environment falls under scope of CSR. Enactment of Companies act 2013, by Ministry of corporate affairs, India becomes the first country to regulate and mandate CSR. Environment and sustainability are one of the major area of focus for CSR. After a long term spending of CSR funds on health, sanitation and education, it is taking a serious turn towards environmental protection. The aim of environmental CSR is the reduction of the negative impact of your business processes on the environment. The present paper will discuss about various environmental initiatives of CSR activities in the context of environmental protection and sustainability.

KEY WORDS - CSR, Environment Sustainability, Sustainable development, Companies act 2013, philanthropy,

Introduction

In today's era , Businesses are not developed with motive of sole profits ,they are developed with sense of responsibility to serve society in better way. With this motive CSR works as a bridge. When an economy developed towards liberalization, privatization and globalization, it turns as a liability of corporate sector to perform well being to society and to maintain social interest too. Now the businesses look beyond its financial distress and give priority to social concerns so that they can give a positive impression of their brands. They focus on working towards well beings of poor sections of society by providing new skills and work opportunities. Because of these social responsibilities they are positively recognized in market and by their consumers. In all that, CSR has a very big role to play.

CSR

CSR stands for corporate social responsibility. Corporate Social Responsibility (CSR) is a concept used by companies to contribute voluntarily to committees and societies without legal obligations.

It is an umbrella term covering all actions of businesses which help in improving the society and developing a positive impact of the companies. It makes a company to consider the impact of its actions and decisions on society, the environment and its own well-being. It also means that a company strives to operate in a way that improves society and the environment, rather than harming them. CSR has grown from traditional philanthropy into community development through a variety of projects

CSR And Environmental Sustainability

The core principle of sustainable development is environmental sustainability, which is a broad concept. The ability to maintain valued qualities in the natural environment is called environmental sustainability. While sustainability is about managing the social and environmental impact, CSR focuses on what is done with profits and whether it is spent for the benefit of society. The practice of CSR is therefore an important component of sustainability or responsible business .With development of any economy, latest technologies and new growing businesses it is very needed to keep your environment damage free and to ensure environment sustainability. Developing corporate is affecting our planet adversely. Despite of collective efforts of different nations, temperature is raising continuously, greenhouse gases emission is also not controlled. There's no doubt about it: Companies are contributing to a large carbon footprint while pursuing the goal of maximizing profits. Corporate have a big role to play in environment sustainability.

India is always concerned about making a balance between development and safe environment. Keeping that in focus it became the first country in the world to make corporate social responsibility (CSR) mandatory through the Companies Act (2013), which requires all companies that meet a specified financial threshold to spend 2% of their average net profit on CSR activities. Schedule VII of the Companies Act provides a list of activities that qualify as CSR activities, and these activities are in line with the UN Sustainable Development Goals (SDGs). These activities are further referred to as environmental CSR.

The Schedule VII activities focus on environmental sustainability, ecological balance, protection of flora and fauna, animal welfare, agro forestry, clean Ganga fund, conservation of natural resources and maintenance of soil, air and water quality. Through their CSR commitments, these activities aim to reduce the environmental damage caused by companies.

CSR Initiatives by Indian Companies

In order to boost the economy and promote the welfare of the society, many Indian companies take initiatives every year to encourage and aware the people on the use of natural resources and conduct awareness programmes to educate people.

TATA Steel-

In Odissa , it targeted a "Mission 2020 for Agricultural Development" with the aim to improve the lives of poor farmers by increasing employment opportunities. It increase the income of 7000 household farmers by providing them with appropriate training and development in horticulture and modern irrigation practices.60-acre wasteland under the National Horticulture Mission were converted for the cultivation of cashew, mango, and lemon plantations.

Dr Reddy's

In the financial year 2023, Dr Reddy's has allocated Rs 51 crore for various CSR initiatives, which embodies the company's commitment to social welfare and sustainable development. By spearheading efforts to protect tigers in the Eastern Ghats of Andhra Pradesh and Telangana, the company has demonstrated a commendable commitment to environmental conservation. By investing in these conservation efforts, Dr Reddy's is demonstrating its commitment to preserving biodiversity and protecting endangered species, thereby contributing to the larger ecosystem.

Nestle

In FY2023, Nestlé's CSR expenditure was INR 56.3 crore. This is a significant contribution to the well-being of society. Project Hilldaari, which epitomizes the company's commitment to rural development and livelihoods, is one of Nestlé India's notable CSR initiatives. Project Hilldaari is a holistic initiative aimed at empowering communities living in the hilly regions of India. Through this project, Nestlé's objective is the creation of sustainable socio-economic opportunities, while at the same time preserving the ecological balance of these regions.

Asian Paints

Asian Paints Limited has demonstrated a robust commitment to Corporate Social Responsibility (CSR) during the financial year 2022-23, with a total expenditure of Rs 77.42 crore. Reflecting Asian Paints' commitment to environmental sustainability, water conservation emerged as a key concern. Securing water resources in the communities surrounding the company's manufacturing facilities was the objective of the company's Water Vision.

LTIMindtree

LTIMindtree Limited, formerly Larsen & Toubro Infotech Limited, occupies an eminent position in the business community. In FY 2022-23, LTIMindtree exceeded expectations by allocating a significant INR 68 crore to various CSR initiatives. The My Tree project highlights LTIMindtree's commitment to environmental sustainability. The company is contributing to a greener future and mitigating the effects of climate change by planting thousands of saplings and nurturing them over time.

Apollo Tyres Limited

In the fiscal year 2022-23, Apollo Tyres Limited has spent Rs 13,225 crore on its CSR initiatives. They have also aligned their CSR initiatives with the UN Sustainable Development Goals (SDGs), and have a vision to reach out to over 15 million beneficiaries by 2026. In FY2023, the company was able to positively impact 1.49 million people through its CSR initiatives. Project SPARSH and Biodiversity Conservation programmes are few of its initiatives. The programme SPARSH, significantly improved the cleanliness of the targeted areas, with 11,176 tonnes of waste successfully collected. It also contributed to disease prevention and environmental sustainability by raising community awareness of the importance of waste management.

Apollo Tyres' biodiversity conservation efforts included extensive afforestation and mangrove conservation projects. In Tamil Nadu and Gujarat, the company planted over 350,000 trees and restored 10.5 acres of land through mangrove conservation. This underscored the company's commitment to preserving the environment for future generations.

Tata Power

The development of India's first supercritical ultra mega power project in Mundra, Gujarat, was a major milestone for Tata Power. With 4.7 GW of solar, wind, hydro and waste heat to power, accounting for 34% of its total portfolio, the company is at the forefront of clean energy generation.

For the fiscal year 2022-23, Tata Power has allocated Rs 50 crore for CSR initiatives, in line with the company's statutory obligations. Emphasizing sustainability, Tata Power aspires

to achieve water neutrality or positivity and zero waste to landfill by 2030. The company's long-term vision includes becoming carbon net neutral before 2045.

The Path Forward

From the recent years , there is a strong focus on concept of corporate social responsibility and environment protection. The environment and sustainability are increasingly receiving corporate social responsibility (CSR) funding from Indian companies. According to the latest provisional data from the Ministry of Corporate Affairs, India's corporate social responsibility (CSR) spending on the environment more than doubled to Rs 2,837 crore in FY22, making it the largest recipient of such funds after health and education

It is becoming an ethical obligation for individuals and companies to maintain and improve the state of the environment, in addition to constitutional and statutory laws. Here are few suggestions -

- Planting trees or restoring forests, which India committed to at the COP26 climate conference in Glasgow last year, has now become one of the most important ways of achieving the net-zero target by 2070.
- Forest restoration activities, being technical, also need suitable training and capacity building interventions.
- To ensure the availability of quality planting material and the necessary technical guidance for other forest restoration activities, state forestry departments must also be very active partners.
- Sustainable use of resources and forest conservation must be a priority in various environmental initiatives by governmental, non-governmental and private organizations, including businesses.
- Modern methods of reforestation, such as those used in the forests of Miyawaki, can also be used.
- Integrating different aspects of sustainability, such as combining planting with water conservation, can make projects more effective.
- Practices such as geo-tagging and the measurement of carbon sequestration potential will provide a better understanding of the results and the effectiveness of the strategies.

Conclusion

The inclusion of environmental sustainability in CSR operations in the 2013 Companies Act, making it mandatory for the business sector, is an encouraging effort to protect the environment, economy and society. Businesses, the environment and society will all prosper and everyone will live in peace if this programme is effectively implemented. To unlock the true potential of corporate CSR contributions to the environment, we need to adopt a holistic strategy. Companies need to recognise not only their social responsibilities, but also the benefits of CSR by engaging with the communities and societies in which they operate. Only then will they be able to take a step forward in fulfilling the environmental responsibilities expected of them under the CSR framework. The inclusion of environmental issues in CSR activities is a positive step and, if properly implemented, can be a major contribution to the maintenance of a healthy environment.

References-

1. Wirba, A.V. Corporate Social Responsibility (CSR): The Role of Government in promoting CSR. *J Knowl Econ* (2023). https://doi.org/10.1007/s13132-023-01185-0
2. https://indiacsr.in
3. https://www.mca.gov.in/
4. Thakar, Ms & Pandya, Dr. (2023). A Critical Study On Environmental Sustainability Under Corporate Social Responsibility In India. Journal of Advanced Zoology. 44. 10.53555/ jaz.v44iS7.3259.)
5. https://india.mongabay.com
6. https://www.impriindia.com
7. https://devinsights.co.in
8. https://www.nibusinessinfo.co.uk/
9. https://www.vskills.in/certification/blog/csr-activities-indian-companies/
10. https://thecsrjournal.in/
11. . https://economictimes.indiatimes.com/

Plastic Pollution New Generation Chelllenge

Smt.Deepmala Suryavanshi

Asstistant Professor, Botany, Government College Lanji, Balaghat

Introduction - As an environmental history, research of modern history with government documents and scientific studies to demonstrate the growth of pollution throughout the modern age. It stretches further than an analysis of the Industrial Revolution to include the impacts of imperialism and the world wars. It also reaches beyond the West to provide a more global analysis and traces, with precision, the treatment of pollutants from the early modern age to the 1970s. pollutions are frequently regarded as a recent problem or one that began with industrialization, they have been a historical constant. the reach, scale, and severity of pollutants have achieved unprecedented levels with the advent of the industrial age. Pollutions have become one of the principal concerns of our time; the World Health Organization (WHO) estimates that millions of people die annually as a result of air pollution. New forms of pollution began to appear as manufacturing and urbanization grew. The nineteenth century brought the pressure of economic development, and as attitudes changed, they argue, so did policies. They maintain that "the only option was for the great industrial transformation: in a period of revolutions, legal and political evolutions rendered pollution acceptable, and even desirable"

For example, in 2015, greenhouse gas emissions from plastics were 1.7 gigatonnes of CO2 equivalent; by 2050, they're projected to increase to approximately 6.5 gigatonnes. That number represents 15 per cent of the whole global carbon budget - the amount of greenhouse gas that can be emitted, while still keeping warming within the Paris Agreement goals. Currently, plastic accounts for 85 per cent of all marine litter.

By 2040, it will nearly triple, adding 23-37 million metric tons of waste into the ocean per year. This means about 50kg of plastic per meter of coastline.

Plastic Pollution Life Threating Aalarm for Earth

In water sources, this type of pollution can cause hormonal changes, developmental disorders, reproductive abnormalities and even cancer. More than 1 million plastic bags are used every minute, with an average "working life" of only 15 minutes

500 billion plastic bags are used annually—and that's just plastic bags.

Of all plastics the world has produced, only 9% of the nine billion tons has been recycled—most ends up in landfills, dumps, or in the environment.

The ocean is expected to contain 1 ton of plastic for every 3 tons of fish by 2025 and, by 2050, more plastics than fish (by weight).

Studies suggest that the total economic damage to the world's marine ecosystem caused by plastic amounts to at least $13 billion every year.

If current consumption habits continue, we're on pace to have discarded 12 billion tons of plastic waste into landfills and our environment by 2050.

In 1950 the world produced only 2 million tonnes per year. By 2019, annual production had increased nearly 230-fold, reaching 460 million tonnes. Over the period from 1950 to 2019, cumulative production reached 9.5 billion tonnes of plastic — more than one tonne of plastic for every person alive today.

In our entry we provide data visualisations and explainers on plastic waste by country, plastic waste per person, and importantly for plastic pollution (especially of the oceans), mismanaged waste by country and by region. Overall, it's generally the case that plastic waste per person is highest in high-income countries. However, richer countries tend to have effective waste management systems meaning mismanaged waste is low. Most mismanaged waste tends to arise from low-to-middle income countries where large coastal populations and rapid industrialization means waste management systems have failed to keep paceMany plastics are defined as non-degradable, meaning they fail to decompose and are instead broken down into smaller and smaller particles. Materials can slowly break down through photodegradation (from UV radiation). Estimated decomposition times for plastics and other common marine debris items are shown in the chart here.

Fishing lines, for example, take an estimated 600 years to break down. Plastic bottles take an estimated 450 years.

Plastics Impacts on Future Generations

In the past 100 years, humanity has introduced an immense amount and variety of new chemicals and plastics to the planet. The current global plastic production is roughly 450 million tons per year. If we add up all the plastics produced so far, their weight would surpass the mass of all land and marine animals. Annual production is predicted to double by 2045, when today's preschoolers are adults. They will likely live in a world of fragile ecosystems and a changing climate. If plastic pollution continues unabated, it will exacerbate these problems.

Plastics Climate Change Impacts

The life cycle of plastic also has serious climate impacts. It accounts for 4.5% of the annual greenhouse gas emissions and could consume 10% to 13% of our remaining carbon dioxide budget by 2050. This is in part because single-use plastics are heavily produced in countries dependent on coal.

As the world shifts to renewable energy sources, the fossil fuel industry is looking to increase plastics production. Plastic producers have been expanding their capacities by up to 40%, with $180 billion invested in fracking (which produces ethylene, a critical ingredient in various plastics), and in plastic production.

There are many other, yet largely unexplored ways in which plastics could impact the Earth's system. They could affect the amount of sunlight reflected back to space in the Arctic. Or they could change the carbon dioxide sequestration by phytoplankton and the marine carbon pump, which is part of the ocean carbon cycle responsible for cycling of organic matter formed by phytoplankton during photosynthesis. Plastics could also alter essential function of soil and land.

"Wish Cycling"

It is clear that we need to reduce plastics now. We cannot afford to become yet more dependent on historically flawed and insufficient strategies of downstream waste management.

Even high-income countries are ill-equipped to keep pace with the growing amount of waste. Recycling is often just "wish-cycling," as environmental sociologist Rebecca Altman puts it. Recycling rates are as low as 5% in the United States and average only 9% globally.

Sometimes recycling is simply a global redistribution of waste. Millions of tons of plastic waste are still exported from the Global North to the Global South. The toxic waste of these exports frequently ends up disposed of by vulnerable communities, who carry the burden of pollution. Scholars have identified this as a form of colonialism.

- The path forward must include a phase-out of virgin plastic production by 2040.

Indian Government Remedy for Plastic Pollution

At the national level, many countries have implemented measures such as banning or placing levies on the usage of single-use plastic. In 2018, India committed to mitigating plastic pollution caused by single-use plastics and declared the phase-out of single-use plastics by 2022. Further, India led a resolution on "Addressing Single-Use Plastic Product Pollution" which recognized the need for all countries to act on single-use plastic pollution. This resolution was adopted by the Fourth United Nations Environment Assembly (UNEA) held in 2019. Making good on its promise India has implemented several regulatory measures mentioned below to address single-use plastics pollution and has made significant strides toward the fulfillment of the Sustainable Development Goals (SDGs).

- The Ministry of Environment, Forest, and Climate Change, Government of India notified the Plastic Waste Management Rules, 2016, in August 2021, with the aim of phasing-out single-use plastic by 2022. The existing regulation forbade the use of plastic material in sachets for storing, packing, or selling tobacco and related products. This amendment further prohibits the manufacture, import, stocking, distribution, sale, and use of identified single-use plastic items, which have low utility and high littering potential from the 1st of July 2022.
- The Ministry further notified the Guidelines on the Extended Producer Responsibility (EPR) for plastic packaging in February 2022. The amendment aimed at reducing the usage of virgin plastic material in packaging and recycling and reusing plastic packaging. The EPR guidelines also aim at environmentally sound management of plastic waste, strengthening the circular economy of plastic packaging waste, and promoting the development and certification of completely biodegradable plastic packaging. For its effective implementation, the amended EPR Guidelines were notified under the Plastic Waste Management Rules, 2021.

The EPR Guideline also mandates the Producer, Importer, and Brand Owner (PIBO) for an environmentally sustainable collection and management of other plastic packaging waste (non-single-use plastic items). The collection, processing, and disposal of solid waste including plastic waste should be according to the Plastic Waste Management Rules, 2016 and Solid Waste Management Rules, 2016.

- In order to stop littering, the thickness of plastic carry bags has been increased from fifty microns to seventy-five microns with effect from September 30, 2021, and to one hundred and twenty microns with effect from December 31, 2022.

Demonstrating an iron will to tackle the issue at hand, India further tabled another resolution titled "End plastic pollution: Towards an international legally binding instrument" at the fifth UNEA meeting in 2022, which aimed at setting up an intergovernmental negotiating committee for a new international legally binding treaty. This resolution was historically adopted by over 175 countries

To meet India's net-zero targets by 2070, it needs stronger solutions. In November 2021, India's ambitious net-zero target for carbon emissions were celebrated by many, as the country committed to becoming carbon-neutral by not adding any greenhouse emissions to the atmosphere by 2070.

As the world's fourth-biggest carbon emitter, these targets marked India's cognizance of the issue of climate change, and its commitment to address it.

Reference:-

1. J.nicola ,plastic pollution :three numbers that support a crackdown ,nature 24 april 2024.
2. L.laurent and A.andrady ,future scenarios of globel plastic waste generation and disposal,huminities and social sciences communications 29janury 2019.
3. M.brander Susanne,environmental justice is social justice .
4. Combating plastic pollution :India'commitment to SDGs ,India science ,Technology and Innovation portal.
5. D.khare ,Plastic :A stumbling block on net zero, Climate Emergency ,February 2022.

Biodiversity Conservation and Sustainable Development

Sarika

Dept of Zoology, SM College, TMBU, Bhagalpur

Abstract

Our Earth is the home for various organisms ranging from very tiny micro-organisms to larger multicellular plants and animals. Together, all these organisms create a very beautiful and rich biodiversity which is very essential for the survival and balance of earth's ecosystem. It took millions of years to accumulate the great variety of organisms in our biosphere. But due to urbanization and industrialization which are necessary for the betterment of mankind, this great and beautiful biodiversity is in danger in the present scenario. Many species of plants and animals are either extinct or they are in danger. We must find a way to save it. Therefore, the term sustainable development came in light and scientists and workers from different fields are working together in this area to make the way for development as well as to protect the rich and varied biodiversity of the earth ecosystem.

Key Words: Biodiversity, ecosystem, sustainable development, organism, survival

Biodiversity refers to the number and types of organisms present on the earth. The number of species that are known and described ranges between 1.7-1.8 millions. Biodiversity depends upon the types of abiotic factors in the ecosystem. India is a mega diversity country having various types of flora and fauna from the Himalayan region in the north to the gangatic planes and desert in west to the eastern and western ghats. Hence our country is very rich in terms of diversity. But nowadays, due to human activities mainly, this great variety of animals and plants are in danger. This includes mainly hunting, poaching, deforestation, urbanization etc.

Need for conservation - For the survival of earth's ecosystem and human species also conservation of biodiversity is very important. Human interfarence is the prime cause for the loss of many valuable plants and animals species. Many of them are either extinct or they are in danger. This create a disturbance in natural environment. In an ecosystem the trophic levels are interdependent upon each other for energy. If animals of one trophic level is not there it will affect on another trophic level organisms survival because they are connected. For example if all the deers disappeared it will affect the population of tiger. Therefore, it is essential to protect each and every species of the biosphere. Biodiversity conservation is the protection and management of biodiversity to obtain resources for sustainable development. It is of two types-

In- situ conservation

Ex situ conservation

In situ conservation - In this type of conservation, species are protected in their natural environment It is cost effective and convenient. Also large number of living organisms can be conserved simultaneously. Moreover , organisms can evolve better and can easily adjust to different environmental conditions. In situ conservation includes-

National Park- Small reserves maintained by the government. Human activities such as grazing, forestery, habitat and cultivation are prohibited.For example- Kanha National Park, Bandipur National Park etc.

Wildlife sanctuaries - These are the regions where only wild animals are found. Human activities such as timber harvesting, cultivation, collection of food and other forest products are allowed here as long as they don't interfere with the conservation project.

Biosphere reserve - These are multi- purpose protected areas where the wildlife, traditional lifestyle of the inhabitants and domesticated plants and animals are protected.

Ex-situ conservation - It involves the breeding and maintenance of endangered species in artificial ecosystem such as zoo, nurseries, botanical gardens, gene bank etc.

Biodiversity conservation is an important aspect for the survival of life on earth. At the same time it is also equally important to provide food, cloth and shelter for the increasing population of mankind. These two are interconnected. For the development and betterment of living conditions, it is important to establish industries, to increase agriculture and many more things necessary for human survival. But these activities have a great impact on natural ecosystem and it may lead to imbalance that may be fatal. There is an average increase in earth temperature due to global warming and pollution. These conditions are dangerous for biodiversity. Therefore, there should be balance in development or development should be sustainable.

Sustainable development - As biodiversity is at the centre of many economic activities, particularly those related to crop and livestock agriculture, forestry and fisheries, the 2030 agenda for sustainable development targets to address a range of global issues. Biodiversity and ecosystem feature prominently across many of the sustainable development goals which are as follows -

(1) End poverty
(2) Sustainable agriculture
(3) Ensure healthy lives and promote well-being for all at all stages
(4) Quality education
(5) Achieve gender equality
(6) Ensure the availability and sustainable management of water and sanitation for all
(7) Affordable clean energy
(8) Decent work and economic growth
(9) Industry, innovation and infrastructure
(10) Reduced inequalities
(11) Sustainable cities and communities
(12) Responsible congratulation and production
(13) Climate action
(14) Life below water
(15) Life on land
(16) Peace, justice and strong institutions
(17) Partnership for the goals

All these seventeen goals are directly or indirectly concerned with the environment not only of land but also of water and air. This we can see that sustainable development aims for the conservation of biosphere with the increase in developmental process. This is probably the only way to save our mother earth.

Conclusion: Conservation of biodiversity is essential for the maintenance of life on earth because It is believed that an area with higher species abundance has a more stable environment compared to an area with lower species abundant. At the same time development is also essential for the betterment of increasing human population. Therefore sustainable development is necessary and it is the only way for the conservation of biodiversity and the fulfillment of human needs

References:

NCERT books

Resources available on net

From Challenges to Solutions: The Impact of SAGES' Role in Enhancing Green Education Aligned with NEP 2020 for Sustainable Development in Indian K-12 Schools

Prof. (Dr.) Shalini Verma

Abstract

This empirical qualitative research paper explores the barriers and opportunities in the implementation of green education programs in Indian schools, with a focus on the transformative role of SAGES - Samvaw Academy of Green Education & Skills, managed by the Samvaw Foundation. Drawing insights from interviews with a diverse sample of 136 respondents, including educators, administrators, and policy makers, the study identifies prevalent challenges such as resource limitations, lack of trained educators, and rigid curricula.

It further delves into how SAGES, through its partnerships with grassroots organizations like NGOs, SHGs, and Anganwadis, offers viable solutions to these impediments. The paper aligns its proposed solutions with the objectives of the National Education Policy (NEP) 2020, aiming to integrate environmental consciousness and green skills into the education system from kindergarten to the 12th grade.

The findings suggest that SAGES' model significantly contributes to overcoming the barriers to green education, facilitating a shift towards sustainable living and environmental stewardship among students, thereby preparing them for the challenges of the 21st century.

Background: The integration of green education within the Indian K-12 curriculum is a pressing necessity, underscored by the increasing environmental challenges of the 21st century. Despite the National Education Policy (NEP) 2020's emphasis on environmental consciousness, schools face significant barriers in implementing comprehensive green education programs.

Objectives: This study aims to identify the barriers to and opportunities for integrating green education programs in Indian schools. It explores the extent to which lack of resources, inadequate teacher training, and curriculum inflexibility hinder the adoption of environmental education and proposes solutions aligned with NEP 2020 directives.

Methods: Adopting a qualitative research design, the study engaged 136 respondents through semi-structured interviews, including school administrators, teachers, and policy experts across various Indian states. Thematic analysis was employed to analyze the data, identifying common barriers and potential opportunities for enhancing green education.

Results: Preliminary findings suggest significant challenges, including insufficient resources, lack of trained educators in environmental studies, and rigid curricular structures. However, opportunities for embedding green education into existing subjects, enhancing teacher training programs, and leveraging community partnerships emerged as potential pathways to overcome these barriers.

Conclusions: The study underscores the critical need for systemic changes within Indian K-12 education to effectively integrate green education. Solutions recommended are deeply aligned with NEP 2020, advocating for a multidisciplinary approach, enhanced teacher training, and increased resource allocation towards environmental education.

Introduction

The integration of green education into the school curriculum is recognized globally as essential for fostering environmental stewardship among future generations. In India, the NEP 2020 highlights the importance of embedding environmental consciousness and green skills in the educational journey of students. Despite these policy directives, schools face numerous challenges in implementing green education programs. This study investigates these barriers and examines the contributions of SAGES - Samvaw Academy of Green Education & Skills - in addressing these challenges through innovative partnerships and pedagogical strategies.

Methodology

Employing a qualitative research design, this study conducted semi-structured interviews with a purposive sample of 136 participants, including educators, school administrators, and policy makers from various regions of India. The interviews aimed to uncover the perceived challenges in implementing green education and the potential of initiatives like SAGE in mitigating these issues. Data were analyzed using thematic analysis to identify patterns and themes related to the barriers and opportunities in green education implementation.

Findings

Barriers Identified:

1. Resource Scarcity: Schools often lack the necessary materials, infrastructure, and financial support for green education programs.
2. Inadequate Teacher Training: There is a significant gap in providing educators with the training required to effectively deliver environmental education.
3. Curricular Rigidity: The current curriculum structure offers limited flexibility for integrating environmental topics into mainstream education.

Opportunities for Enhancement:

1. Curriculum Integration: Opportunities exist for embedding environmental themes across subjects, leveraging the interdisciplinary approach advocated by NEP 2020.
2. Enhanced Teacher Training: Respondents emphasized the need for specialized training programs in environmental education, suggesting partnerships with environmental organizations and experts.
3. Community and Policy Engagement: Engaging community stakeholders and aligning school initiatives with NEP 2020 policies were identified as crucial for fostering a supportive ecosystem for green education.

Contributions of SAGES:

1. Resource Mobilization: By partnering with grassroots organizations, SAGES has facilitated the mobilization of resources for under-resourced schools.
2. Educator Empowerment: Through workshops and training programs, SAGES has significantly contributed to building educators' capacities to deliver green education.
3. Curriculum Innovation: SAGES has been instrumental in developing and implementing flexible curriculum models that integrate environmental education across various subjects.

Discussion

The study underscores SAGES' pivotal role in overcoming the barriers to green education in India, particularly through its collaborative model and emphasis on educator training and curriculum flexibility. The findings suggest that SAGES' strategies are effectively aligned with the NEP 2020's vision for green education, demonstrating a scalable model for nationwide implementation. The partnership between SAGES and grassroots organizations emerges as a key facilitator in enhancing the reach and impact of green education programs, especially in rural and underprivileged areas.

Conclusion and Recommendations

This research highlights the critical barriers to the implementation of green education programs in Indian schools and showcases the innovative solutions provided by SAGES. To further advance green education in line with NEP 2020, the study recommends:

1. Policy Reforms: Advocate for specific policy guidelines that facilitate the integration of environmental education across all subjects.
2. Resource Allocation: Increase budgetary provisions for resources and infrastructure essential for green education.
3. Professional Development: Implement mandatory environmental education training for teachers, ensuring they are equipped with the knowledge and tools to inspire students.
4. Enhanced Policy Support: Strengthening policy frameworks to provide clear guidelines and resources for green education.
5. Curriculum Flexibility: Advocating for a more integrated and flexible curriculum that allows for the seamless incorporation of environmental education.

This research provides a foundational step towards understanding and addressing the barriers to implementing green education in India, paving the way for more robust, inclusive, and effective environmental education aligned with the visionary NEP 2020. By building on the successes of SAGES, these recommendations aim to foster a more sustainable and environmentally conscious educational landscape in India, preparing students to navigate and address the environmental challenges of the 21st century.

Environmental Law And Enforcement

Dr. Anjana

TGT-English, Kendriya Vidyalaya Bilaspur, Yamunanagar, Haryana

Abstract

The success of any environmental policy depends on changes in the behaviour of producers and consumers. Environmental policy can try to bring about these changes by means of various instruments. The emphasis of environmental policy should be to mitigate environmental hazards without compromising development. There is no deficiency of available legislations on environmental protection in India but enforcement of these legislations has been far from satisfactory. There is urgent need for the effective, successful and well–organized enforcement of the Constitutional mandate and other environmental legislations or laws in India. The creative and innovative role of India Judiciary and National Green Tribunal [NGT] has been significant and laudable in this era. Pursuant to the provisions contained in Articles 48–A and 51–A[h] of the Indian Constitution, various Public Interest Litigations have been instituted in the Supreme Court against several industries for failing to provide sufficient pollution control and also against Pollution Control Boards to direct them to take proper measures to ensure pollution control in Indian perspective. For the purpose of effective, successful and well–organized enforcement of these legislations, it is required to set up an Adjucatory Body in each State in India, which should consist of legal as well as technical experts. Caring for regulating and protecting the environment is essentially a desire to see that national development should proceed along the rational sustainable laws.

Keywords: Environmental Protection, Air Pollution, Water Pollution, Public Interest Litigation, Constitution of India, National Green Tribunal and Judiciary, Environmental harm, Green Criminology, Environmental law enforcement, Sustainable Development and Environmental Policies.

Introduction

Nowadays, the protection, conservation and improvement of environment are main and major issues or problems in India and as well as all over the world. The term environment includes of both physical environment and biological or ecological environment. The physical environment includes issues relating to land, water and air and the other hand biological environment includes issues relating to plants, animals and other organisms. Both physical and biological environment are mutually dependent and connected with each other. The major factors of environmental worsening in India are Industrialization, urbanization, explosion of population, over-exploitation of natural resources, disruption of natural ecological balances, and destruction of a multitude of animal and plant species for economic reasons.

Environmental issues dominate media headlines today and are forcing many people to re-evaluate their day-to-day practices as citizens, as workers, as parents and as members of communities. So, too, concern about the environment is now starting to have greater

resonance within the criminal justice field, albeit in a still fairly modest fashion. Within this context of social and professional concern about environmental matters, a new branch of criminology has emerged as 'green criminology'.

Green or environmental criminology basically refers to the study of environmental harms, environmental laws and environmental regulations by criminologists. The various factors that must be considered in an environmental offence like what harm caused - whether having direct or indirect effect - who is the actual offender and victim. The nature of environmental harm is that it occurs everywhere and anywhere. It has no boundaries and it cannot be confined to a definite territory. The perpetrator of environmental harm includes individuals and groups from a wide range of backgrounds and socio-economic situations.

In this present paper, an effort has been made to momentarily outline the various Indian legislations relating to the environment, which are mainly and more relevant to protect and improve the environment in India. The enforcement of these legislations has also been critically examined and evaluated.

Constitutional and Legislative Mandate

1) The Stockholm Declaration of 1972

It was the first major effort to conserve and protect the human environment at the international level. As a result of this Declaration, the States were required to approve legislative mandate to protect and improve the environment in concerned State. Consequently, for that reason Indian Parliament inserted two Articles, i.e., 48–A and 51–A in the Indian Constitution in 1976. Article 48– A of the Constitution rightly directs that the State shall endeavour to protect and improve the environment and safeguard forests and wildlife of the country. In the same way, Clause [g] of Article 51– A imposes a duty on every citizen of India, to protect and improve the natural environment including forests, lakes, river, and wildlife and to have compassion for living creatures.

2) Apart from the constitutional mandate to protect and improve the environmental conditions, there are a series of legislations are available on the subject and some of are as follow:-

a) The Water Prevention and Control of Pollution Cess Act, 1977: It aims to provide levy and collection of a cess on water consumed by persons carrying certain industries, factories and local authorities to boost the resources of the Central Board and the State Boards constituted for the prevention and control of water pollution. The object is to realize money from those whose actions lead to pollution and who must bear the expenses of the maintaining and running of such Boards. The industries and factories may obtain a rebate as to the extent of 25 percent if they set up treatment plant of sewage or trade waste matter or effluent.

b) The Air Prevention and Control of Pollution Act, 1981: This Act has been designed to prevent, control and abatement of air pollution in the climate. The main sources of air pollution are industries, factories, automobiles, domestic fires and vehicles etc. The air pollution adversely affects heart and lung and reacts with haemoglobin in the blood and air pollution also causes dangerous disease like asthma and mental tension which leads to increase crimes in the society. This Air Act defines an air pollutant as any solid, liquid or gaseous substance having noise present in the atmosphere in such concentrations as may be harmful to human beings or other living beings or plants or property or the environment.

c) The Environment Protection Act, 1986: This Act was enacted to provide for the protection and improvement of the quality of environment and preventing, controlling and abating environmental pollution. The Act came into existence as a direct result of the Bhopal Gas Tragedy. The term environment refers to water, air and land, in addition to the interrelationships that exist between water, air, land, humans, other living beings, plants, micro–organisms and property. This Act has given huge powers to the Central Government to take actions with respect of planning and execution of a nation–wide programme for prevention, control and abatement of environmental pollution in India. It empowers the Government to lay down principles for the regulate industrial locations, prescribe procedure for managing hazardous substances, quality of environment, establish safeguards for preventing accidents, emission or discharge of environmental pollutants and to collect and disseminate information regarding environmental pollution etc.

d) The National Environment Tribunal Act, 1995: This Act was conceded to provide for strict obligation for compensations produced by any accident that happens while behaviour any dangerous material in factories. This Act provides for establishment of a National Environment Tribunal for effective, speedy and expeditious disposal of cases arising from such accident. This imposes legal liability on the owner of an enterprise to pay damages or compensation in case of death or injury to any person; or harm to any property or environment resulted from an accident but the accident must have occurred while handling any hazardous substance.

e) The National Environment Appellate Authority Act, 1997: This Act has been passed to provide for the establishment of a National Environment Appellate Authority to hear appeals with respect to restriction of areas in which any industries, factories, operations or processes shall not be carried out or shall be carried out subject to certain protections under the Environment Protection Act, 1986. After the establishment of this Authority, no Civil Court or other authority shall have jurisdiction to entertain an appeal on matters of environment on which the Authority is so empowered under this Act. It is obvious that this Act has been made with intention to provide speedy justice on environmental issues and problems in India.

f) The Wildlife Protection Act, 1972: This Act prohibits hunting of birds and animals as specified in the schedules of this Act. This Act also prohibits damaging, uprooting, picking, destroying etc. any specified plant from any forest. This Act is administered by a Director of Wildlife Preservation with Assistant Directors and a Chief Wildlife Warden with other Wardens and their staff. This Act provides for State Wildlife Advisory Board to advise the State Government in formulation of the policy for protection and conservation of the wildlife and specified plants and in assortment of zones to be declared as Sanctuaries, National parks, etc.

g) The Forest Conservation Act, 1986: This Act provides that no demolition of forests or use of forestland for non–forest purposes can be permitted without the earlier approval of the Central Government. The conservation of forests includes not only preservation and protection of existing forests but also re–afforestation. Re–afforestation should go on to replace the disappearance forests. It is a continuous and integrated process. This Act is projected to save a laudable purpose and it must be enforced strictly for the benefit of the general public in Indian atmosphere.

Enforcement of Laws

We have noticed that in the past few years there is an increasing trend to the number of cases relating to the environmental pollution, ecological destruction and conflicts over natural resources coming up before the Courts. In most of these cases there is need for Environment Court and natural scientific expertise as an essential input to inform judicial decision–making. These cases need expertise at a high level of scientific and technical superiority. The experience shows that the prosecution launched in ordinary Criminal Courts under the provisions of the Water Act, the Air Act and the Environment Protection Act never reach their conclusion either because of the work load in these Courts or because there is no proper appreciation of the significance of the environment matters on the part of those in charge of conducting of those cases. Moreover, any orders approved by the authorities under the Water Act, the Air Act and the Environment Protection Act are instantly questioned by the industries in the Courts. Those procedures take years and years to reach conclusion. Many a times interim orders are passed in the meantime which effectively disables the officers from ensuring the implementation of their orders. Therefore, it is absolutely essential to set up more separate machinery like National Green Tribunal to cut down the delays which are hindering the implementation of environmental laws. Moreover, judicial officers alone may not be able to appreciate the logical and technical aspects. It is, therefore, submitted that the provisions be made for the establishment of the Environment Courts with one judge and one expert from the ecological and other sciences. To begin with, we may have a two–tier system one at the State level and the other at the National level which may later be extended even at the district level. Such Environment Courts may be vested with the jurisdiction to decide both criminal prosecution cases under the various environmental laws and civil cases for compensation to victims of any activity leading to environmental spoil or pollution. The Courts should be permissible to conduct brief proceedings for speedy disposal of cases. The decisions of State Environment Courts can be appealed to the National Environment Court and the decisions of the National Environment Courts can be appealed to the Supreme Court.

Conclusion

In the era of sustainable development, environmental justice to all components of environment is necessary on equitable basis. We need to have strict regulations for actions against environment whether direct or indirect by human beings or other organisms. Human beings are the destroyer of the environment in the name of development. We need to strike a balance between development and environment. The current liability regime is not capable of tackling the scale of environmental damage that India is witnessing and is likely to experience in the near future. Few suggestions for betterment of environment in India are given as follows:-

a. We need to have a comprehensive and integrated Environmental Code in India.
b. A positive attitude on the part of everyone in society is essential for effective and efficient enforcement.
c. Transferring more power or establishing a complete independent authority to deal with environmental cases.
d. Environmental Education among the people from grass root level and make them aware about their environmental rights and duties.
e. Adoption of incentive based regime for effective implementation of environmental policies.

References

1) Divan Shyam and Martha L. Noble [1991], Environmental Law and Policy in India, M.N. Tripathi Pvt. Ltd., Bombay, at p. 25.
2) These Articles Inserted by the Constitution [42nd Amendment] Act, 1976.
3) The Indian Forest Act, 1927; the Factories Act, 1948 and the Atomic Energy Act, 1962.
4) Anupama Minerals v. Union of India and Ors AIR 1986 AP 225.
5) Rural Litigation and Entitlement Kendra, Dehradun v. State of Uttar Pradesh AIR 1988 SC 1037.
6) Subhash Kumar v. State of Bihar AIR 1991 SC 420; M.C. Mehta v. Union of India AIR 2000 SC 1997.
7) M.C. Mehta v. Union of India AIR 1987 SC 1086.
8) M.C. Mehta v. Union of India AIR 1999 SC 3192; See also, M.C. Mehta v. Union of India [2001] 9 SCC 520.
10) Murli S. Deora v. Union of India [2001] 3 SCC 765.
11) Rural Litigation and Entitlement Kendra v. State of Uttar Pradesh AIR 1985 SC 652.
12) B.L. Wadehra v. Union of India AIR 1996 SC 2969.
13) M.C. Mehta v. Union of India [1997] 1 Camp L.J. 199 [SC].
14) Gupta O.K. and K. Priyadarshini (2003): Compliance to Environmental Regulations: The Indian Context, International Journal of Business and Economics, Vol. 2, No. 1, 9-26
15) Planning Commission, Government of India (2001-2002): Evaluation Study on the Functioning of State Pollution Control Boards, New Delhi, http://planningcommission.gov.in/reports/peoreport/peof.htm
16) U.S. EPA (2005): Report on Environmental Compliance and Enforcement in India, December 2005.
17) The World Bank (2006): India: Strengthening Institutions for Sustainable Growth, Country Environmental Analysis, October 2006.

A Study of Environmental Awareness: Secondary School Student of Prayagraj City

Dr. Dharmendra Shukla

Professor, Education Department, Sai Nath University, Ranchi, Jharkhand

Introduction

Environment is a broad term. It includes not only physical or material aspect but psychological, social and cultural aspects as well. Thus, environment consists of material and non-material surroundings of human beings. Nature provides a limited freedom to man for conducting his exploitation activities. Man is a part of nature and hence can not exert control over nature on the basis of his free-will. When he tries to break the natural laws of nature he is bound to face the serious consequences.

In the world, the healthy existence of human society is getting worse. This state of affair is due to the unimaginably great volume of environmental maladies or problems which are pushing our planet almost to the brink of mass scale disaster of living 60 Journal of Indian Education August 2007 beings or species on this good habitable earth. The wild storms of criminality and the volume of unsocial passions are dangerously corroding the vitality and integrity of the working people of the world. The harmony of heart has been damaged and the tribunal of conscience has been greatly demolished due to un qualitative environment on this earth. This state of environmental conditions in which the modern man lives can bring into unlimited ugly situations and conditions, which can devour much of the potentials of creative and healthy lives of the human society.

Environmental crisis or maladies are the foremost and the most persistently challenging problems which are ready to devour the glories of human existence and are ready to wipe out the human civilization from this earth. The present century is witnessing such problems of environment crisis which are nothing but the creation of a greedy human society which wants to exploit nature beyond any reasonable limit. Dominantly operative environmental maladies today are always active in informing man to think seriously and choose a way between creative and progressive existence or be ready for annihilation.

There has always been a strong interaction between people and their environment. Man is a part of nature and his survival is very much dependent on the quality of the environment. The increasing human demands have been exerting great pressure on nature's precious resources, agricultural land, energy sources, forests etc. resulting in environmental degradation. Man has created an imbalance in the environment by its haphazard exploitation to fulfill his needs. If environmental pollution keeps on increasing at the present rate, the very existence of life on earth is endangered.

For the sake of our planet, obviously environmental education plays vital role for creating interest in environment. This is the crucial time that environmental awareness and environmental sensitivity should be cultivated among the masses particularly among youths.

For the awareness of society it is essential to work at a gross root level. So the whole society can work to save the environment. If we want to generate the environmental values in our children we have to know the responsibility towards environment and also we have to show our behavior as a like eco-friendly. Environmental awareness should be the integral part of any environmental curriculum encouraging children to take an active role in the protection to their environment in one way by which the critical balance between man and environment may be preserved. Through it young children are full of curiosity to learn about their environment. Among those compulsory environmental education at all level in the education system as directed by Supreme Court is the most appropriate strategy towards environmental protection.

One in every seven persons on this planet lives in India. With 16% of the world's population and only 2.4% of its land area, there is a heavy pressure on the natural resources including land. Apart from them, human activities towards environment lead to unexpected gigantic hazard for the whole creature in the coming few years. Day by day human is consuming these natural resources in an unsustainable way. The main reason behind this is the non cooperative thinking with nature. Awareness and involvement of the civil society is a precondition of checking environmental degradation. So for that we should create environmental awareness in between people for the sake of our green planet.

Environmental education should be for protection and enhancement of the environment for present and future generations. Its chief objective is that people should acquire awareness and knowledge, develop attitudes, skills and abilities and participate in solving real life environmental problems.

The survival of man is linked with the environment. Yet, environmental problems have been created by man himself. Man is destroying natural harmony through the imbalanced and immense exploitation of natural resources for his own physical facilities and convenience. It is therefore important to bring awareness among the people that the protection of our environment is of utmost importance for maintaining proper ecological balance and for our own survival.

Though environmental studies have been undertaken and have been incorporated into the different subjects, many students are still unaware of the environmental problems. There is a need to promote an awareness of and understanding of the environment amongst the students so as to generate enthusiasm and commitment to solve environmental problems. There is a great need to bring the students to a heightened awareness of the environmental problems that threaten us and to motivate them toward favourable solutions to those problems. Students should be helped to develop critical thinking and creative problem-solving ability in order to discover the symptoms and real causes of environmental problems and arrive at strategies for environmental protection and preservation.

Environmentally conscious individuals are needed to prevent environmental disasters. The effects of these disasters have become so great that there is a vital need to bring awareness among the students. It has now become impossible to make wise decisions about our environment without an understanding of the broad concept and importance of environment. The study of environment education helps develop new knowledge, skills and values in the students in a drive towards better quality of the environment.

The present study, therefore, has been undertaken keeping in view the importance of incorporating suitable environmental dimensions into our educational practices and the need for creating environmental awareness amongst the secondary school students of Prayagraj.

Statement of Research Problem

"A study of Environmental Awareness : Secondary School Students of Prayagraj City."

Objectives of the Study :

The objectives of the study are:

1. To compare the environmental awareness among rural and urban students of art stream at secondary school.
2. To compare the environmental awareness among rural and urban students of science stream at secondary school.
3. To compare the environmental awareness among rural and urban students of commerce stream at secondary school.

Hypothesis

1. There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of art stream at secondary school.
2. There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of science stream at secondary school.
3. There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of commerce stream at secondary school.

Research Method

Keeping in view the objectives of the present study, the researcher has used the survey method of descriptive research to conduct this study.

Population:

The population of this study comprises the students of art, science and commerce discipline studying in secondary school in class 11th & 12th at Prayagraj City.

Sample:

The sample of the study comprises of 150 secondary school students. There are 50 students from Art, 50 students from science and 50 students from commerce discipline will selected for proposed sample.

Tool Used-

Environmental Awareness Ability Measure

Environmental Awareness Ability Measure (EAAM) developed by Praveen Kumar Jha in 1998. This tool measure environmental awareness of students. It was thus decided to construct an environmental awareness ability scale based on the following dimensions of environment as a whole.

1. Causes of pollution
2. Conservation of soil, forest, air, etc.
3. Energy conservation
4. Conservation of human health
5. Conservation of wild-life and animal husbandry

Statistical Techniques Used :

In the present study the following statistical techniques are used.

- Mean
- Standard deviation
- Standard error
- 't' ratio -
- Degree of freedom

1. Analysis and interpretation of compare the environmental awareness among rural and urban students of art stream at secondary school.

The description of the data related to the mean, standard deviation and t-score of the compare environmental awareness of the rural and urban students of art stream at secondary school is given in the table no. 1.

Table-1: Mean, Standard deviation and t-score of the compare environmental awareness among rural and urban students of art stream at secondary school

S. No.	Sex	N	M	SD	D (M_1~M_2)	t-score		Significance level
						Calculated value	**Table value**	
1.	Rural	25	30.48	8.49	0.88	2.59	2.01	.05 significance level df =48
2.	Urban	25	31.36	9.44				
Conclusion		H_0: $\mu_1 - \mu_2 = 0$ Accepted at 0.05 level of significance. H_1: $\mu_1 - \mu_2 \neq 0$ Rejected at 0.05 level of significance.						

Explanation:

From the observation of table no. 1 it is found that the environmental awareness of the rural and urban students of art stream at secondary school with means 30.48 & 31.36 and standard deviation 8.49 & 9.44 respectively. The calculated t-value is 0.34 and table t-value is 2.01. Since the calculated t-value is less than the table t-value hence at .05 significance level the null hypothesis is accepted.

For the fulfillment of the objective no. 1 it is hypothesized that *"There is significant difference in environmental awareness among urban and rural students of art stream at secondary school"* is rejected at the 0.05 significance level and the null hypothesis *"There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of art stream at secondary school"* is accepted.

It indicates that rural and urban students have similar awareness regarding the Environmental. Whatever difference is being observed between the mean scores of two groups of students may be due to sample fluctuations. The same result of Kaur, Harpreet and Kaur, Ramandeep (2017) indicate the results that there was no significant mean difference in environmental awareness in relation to gender and caste but location had significant effect on environmental awareness among adolescents.

2. Analysis and interpretation of compare the environmental awareness among rural and urban students of Science stream at secondary school.

The description of the data related to the mean, standard deviation and t-score of the compare environmental awareness of the rural and urban students of Science stream at secondary school is given in the table no. 2.

Table-2: Mean, Standard deviation and t-score of the compare environmental awareness among rural and urban students of Science stream at secondary school

S. No.	Sex	N	M	SD	D ($M_1 \sim M_2$)	t-score		Significance level
						Calculated value	Table value	
1.	Rural	25	34.52	9.07	1.52	2.63	2.01	.05 significance level df =48
2.	Urban	25	36.04	9.19				
Conclusion		H_0: $\mu_1 - \mu_2 = 0$ Accepted at 0.05 level of significance. H_1: $\mu_1 - \mu_2 \neq 0$ Rejected at 0.05 level of significance.						

Explanation:

From the observation of table no. 2 it is found that the environmental awareness of the rural and urban students of Science stream at secondary school with means 34.52 & 36.04 and standard deviation 9.07 & 9.19 respectively. The calculated t-value is 0.58 and table t-value is 2.01. Since the calculated t-value is less than the table t-value hence at .05 significance level the null hypothesis is accepted.

For the fulfillment of the objective no. 2 it is hypothesized that *"There is significant difference in environmental awareness among urban and rural students of Science stream at secondary school"* is rejected at the 0.05 significance level and the null hypothesis *"There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of Science stream at secondary school"* is accepted.

It indicates that rural and urban students have similar awareness regarding the Environmental. Whatever difference is being observed between the mean scores of two groups of students may be due to sample fluctuations. The same result of Lalchharliani (2004) indicates the results that the science students were found to have higher ATEE than the arts students. Pillai (2012) the findings revealed that there was significant difference between the arts and science group students regarding their environmental awareness. Mishra (2012) the findings were the science students are significantly higher than the arts students of government schools.

3. Analysis and interpretation of compare the environmental awareness among rural and urban students of Commerce stream at secondary school.

The description of the data related to the mean, standard deviation and t-score of the compare environmental awareness of the rural and urban students of Commerce stream at secondary school is given in the table no. 3.

Table-3: Mean, Standard deviation and t-score of the compare environmental awareness among rural and urban students of Commerce stream at secondary school

S. No.	Sex	N	M	SD	D ($M_1 \sim M_2$)	t-score		Significance level
						Calculated value	Table value	
1.	Rural	25	29.96	8.99	4.68	2.47	2.01	.05 significance level df =48
2.	Urban	25	34.64	8.07				
Conclusion		H_0: $\mu_1 - \mu_2 = 0$ Accepted at 0.05 level of significance. H_1: $\mu_1 - \mu_2 \neq 0$ Rejected at 0.05 level of significance.						

Explanation:

From the observation of table no. 3 it is found that the environmental awareness of the rural and urban students of Commerce stream at secondary school with means 29.96 & 34.64 and standard deviation 8.99 & 8.07 respectively. The calculated t-value is 1.89 and table t-value is 2.01. Since the calculated t-value is less than the table t-value hence at .05 significance level the null hypothesis is accepted.

For the fulfillment of the objective no. 3 it is hypothesized that *"There is significant difference in environmental awareness among urban and rural students of Commerce stream at secondary school"* is rejected at the 0.05 significance level and the null hypothesis *"There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of Commerce stream at secondary school"* is accepted.

It indicates that rural and urban students have similar awareness regarding the Environmental. Whatever difference is being observed between the mean scores of two groups of students may be due to sample fluctuations. The same result of C. H., Dhanya and R. Pankajam (2017), indicates result of found that there is no significant impact of environmental awareness among secondary school students.

Findings:

The findings of the present study are as following:

- There is no difference in environmental awareness among urban and rural students of art stream at secondary school or similar environmental awareness among urban and rural students of art stream at secondary school.
- There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of science stream at secondary school or similar environmental awareness among urban and rural students of science stream at secondary school.
- There is no significant difference in environmental awareness among urban and rural students of commerce stream at secondary school or environmental awareness among urban and rural students of commerce stream at secondary school.

Educational Implications of the Present Study:

The statistical analysis of date present in table and diagram helped in testing the various hypotheses formulated to realize the objectives of study and concluded that there was significant difference in Environmental awareness of art & science students. Hence we can conclude that the knowledge of the Environment is very necessary for all the individuals for the sake of the nature and survival of the universe. Science students of all the levels should have knowledge regarding environmental awareness.

- To enhance the chances of creating more awareness about the environment, the education process has to play more a practical role.
- The subject of environmental education should be included as compulsory subject in curriculum.
- Special emphasis should be given on students at lower school level because they are tomorrow s citizens and educating them means educating a generation.
- For creating environmental awareness among students and general public, various campaigns can be launched from time to time. In school, essay writing competition, painting competition, debates, on the topic of environment can be organized.
- The activities like quiz competitions/painting competitions/ extempore/ exhibitions should be organized in the schools on the theme related to environment.

- The important environment days like Van Mahotsav, World Environment Day, Earth Day, World Water Day, World Ozone Protection Day, Energy Conservation Week etc. should be celebrated in the schools.

Bibliography

- Abdo, s. A.-w. (2010). The effects of demographic factors on the environmental awareness of omani citizens. Human and ecological risk assessment, , 16: 380–401,
- Altin, Ahmet (2014) studied Environmental awareness level of secondary school students: A case study in Balýkesir (Türkiye), Procedia - Social and Behavioral Sciences 141 (2014) 1208 – 1214
- B.Praharaj, "Environmental Knowledge, Environmental Attitude and Perception regarding Environmental Education among Pre-Service and In-Service Secondary School Teachers" in *Fifth Survey of Educational Research, 1988-92, Vol II,* New Delhi, 2000, pp. 1756,1757.
- Carter V.Good, A.S.Barr, D.E.Scates, *Methodology of Educational Research*, New York, 1941, as cited in S.P Sukhia, P.V. Mehrotra & R.N.Mehrotra, *Elements of Educational Research*,3rd revised edition, New Delhi, 1974, p.102
- Dr. M.Pareek et al, "Environmental Awareness among Secondary School Students" in *The Educational Review, Vol CIV, No. 11*, November 1998, pp,191-194
- G.C.Pradhan, "Environmental Awareness among Secondary School Teachers: A Study", in *The Educational Review, Vol 45, No. 2,* February 2002, pp.5-7.
- K.C.Sahoo, "A Critical Study of the Conception and Perception of Environmental Education" in *Fifth Survey of Educational Research, 1988-92, Vol II,* New Delhi, 2000, pp.1758,1759.
- K.K.Sayi Prasad, "Environmental Awareness – A Study on the Women of a South Indian Village" in *The Educational Review, Vol XCIII, No.11*, Nov 1987, pp, 181-183.
- Kaur, Harpreet and Kaur, Ramandeep (2017) studied Study of Environmental Awareness among Adolescents in
- Lalchharliani, "Environmental Pollution Awareness and Attitude towards Environmental Education among College Students in Aizawl District" Unpublished Ph.D thesis, NEHU, 2004.
- Mohon.I, (2007). Environmental crisis (New Dimensions and Challenges). New Delhi – 110 002: Ammal publications Pvt.Ltd.,
- Owens, S. (2000). Engaging the public: information and deliberation in environmental policy, Environment and Planning A, 32, pp. 1141–1148.
- Poonam (2013) studied A Comparative Study of Environmental Awareness among Government and Private Secondary School Students, International Journal of Education and Information Studies, Volume 3, Number 2 (2013), pp. 39-41.
- Prashant Kumar Astalin, " A Study of Environmental Awareness among Higher Secondary Students and some Educational Factors affecting It" in *ZENITH International Journal of Multidisciplinary Research, Vol I, Issue 7*, November 2011, pp.90-100. Retrieved,April16, 2013, from www.zenithresearch.org.in 126
- Relation to their Scientific Attitude, *Educational Quest: An Int. J. of Education and Applied Social Science:* Vol. 8, Special Issue, pp. 283-291
- S.C.Gakhar & Bindu Kalra, "Environmental Awareness among the Urban and Rural Secondary School Students in Relation to Intelligence and Socio-Economic Status" in *The Educational Review, Vol CIV, No. 3*, March 1998, pp.50-53 121
- Sarojini Gopalakrishnan, "Impact of Environmental Education on Primary School Children" in *Fifth Survey of Educational Research, 1988-92, Vol II,* New Delhi, 2000, pp. 1754,1755 119
- Shahnawaj, "Environmental Awareness and Environmental Attitude of Secondary and Higher Secondary School Teachers and Students" in *Fifth Survey of Educational Research, 1988-92, Vol II*, New Delhi, 2000, p,1759

A Comprehensive Study of Environment and Culture of Shahjahanpur

Keshav Shukla
Swami Shukdevanand College Shahjahanpur

Mumtaz Husain
Swami Shukdevanand College Shahjahanpur

Abhishek Dixit
Swami Shukdevanand College Shahjahanpur

Rahul Kumar
Swami Shukdevanand College Shahjahanpur

Adarsh Pandey
Swami Shukdevanand College Shahjahanpur

Abstract

This comprehensive study delves into the intricate tapestry of environmental and cultural dynamics within Shahjahanpur, Uttar Pradesh, India. Nestled amidst the Rohilkhand region, Shahjahanpur's landscape is shaped by the meandering rivers Gomati and Gharra, fertile alluvial plains, and diverse agricultural practices. However, rapid urbanization, industrialization, and agricultural intensification pose significant environmental challenges, including air and water pollution, deforestation, and biodiversity loss. Through an exploration of Shahjahanpur's rich literary tradition, this study aims to unravel the intersection of literature, environment, and society in the region. Distinguished writers and poets from Shahjahanpur, such as Rahul Sankrityayan, Mahadevi Varma, and Rahi Masoom Raza, have intricately woven environmental themes into their works, enriching narratives with local dialects, folklore, and cultural elements. Literature from Shahjahanpur vividly portrays pressing environmental issues such as deforestation, water pollution, and unsustainable agricultural practices, while also playing a pivotal role in raising awareness, influencing attitudes and behaviors, and fostering environmental education initiatives. Furthermore, Shahjahanpur's literary works serve as crucial repositories of traditional ecological knowledge, preserving indigenous practices and advocating for sustainable regional development. By harnessing the transformative power of literature, Shahjahanpur can inspire

environmental consciousness and pave the way for a more sustainable future that honors its cultural and ecological heritage.

Keywords: Shahjahanpur, environmental literature, cultural heritage, biodiversity, sustainable development, traditional ecological knowledge

Introduction

Shahjahanpur, nestled in the Rohilkhand region of Uttar Pradesh, India, is framed between the meandering rivers Gomati and Gharra. Its alluvial plain geography characterizes the area, which is enveloped within the Gangetic plains agro-climatic zone (Singh & Singh, 2015). Historically, Shahjahanpur was integral to the Rohilla Afghan territory until the 18th century when it fell under Nawab rule. Later, in 1801, it was annexed by the British East India Company (Shahjahanpur District Profile, 2011). This district boasts a rich cultural tapestry, woven with influences from Hindu, Muslim, and Buddhist traditions, evident through numerous historical monuments that dot its landscape.

Shahjahanpur holds environmental significance owing to its location in the fertile Rohilkhand plains, conducive to diverse agricultural practices such as wheat, sugarcane, and rice cultivation (Shahjahanpur District Profile, 2011). Additionally, the district encompasses several forest areas, including Dudhwa National Park, which provides habitat for critically endangered species like the Bengal tiger and one-horned rhinoceros (Chaturvedi et al., 2018). Moreover, the presence of rivers Gomti and Gharra traversing the region enhances its ecological importance. However, the rapid pace of urbanization, industrialization, and agricultural intensification has engendered environmental challenges such as air and water pollution, deforestation, and biodiversity loss in recent decades (Kumar & Singh, 2003; Joy et al., 2019).

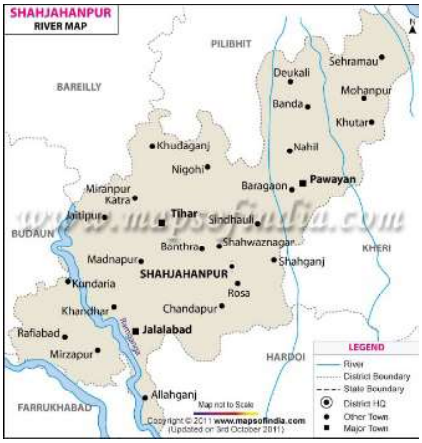

https://www.mapsofindia.com/maps/uttarpradesh/rivers/shajahanpur.html

Indian literature, spanning diverse languages and traditions, has been instrumental in cultivating environmental consciousness and sensitivities. Throughout history, from ancient texts like the Vedas and Upanishads to modern works, nature has been depicted with reverence, often personified and celebrated for its spiritual significance (Rangarajan, 1992). Contemporary Indian writers have utilized literature as a medium to critique environmental degradation and advocate for conservation, as seen in novels such as "Amarkantak" by Rahul Mehta and "The Hungry Tide" by Amitav Ghosh (DeSilva, 2017; Mukherjee, 2010). Poets like Niranjan Mohanty and Mamang Dai, along with regional language writers such as Sundara Ramaswamy and Indira Goswami, have voiced local ecological concerns through their prose and poetry, fostering environmental awareness (Huggan & Tiffin, 2010; Ramamurthy, 2003). Moreover, ecocritical readings of Indian literary texts underscore their

potential to shape sustainable value systems, protect indigenous knowledge systems, and advocate for environmental justice (Mukherjee, 2010). Through vivid representations of nature and exploration of ecological themes, Indian literature continues to play a pivotal role in promoting environmental stewardship and fostering a deeper connection with the natural world.

The study of environmental literature specific to the Shahjahanpur region encompasses various objectives aimed at understanding the intersection of literature, environment, and society in this locale. These objectives include analysing how local writers and literary works portray Shahjahanpur's natural landscapes, ecological features, and environmental challenges through narratives, poetry, and prose. Furthermore, examining the role of Shahjahanpur's literature in raising awareness about specific environmental issues, such as deforestation, water pollution, and biodiversity loss, sheds light on the region's environmental concerns. Additionally, exploring how literary works depict the interplay between the local environment, cultural traditions, and rural and agricultural heritage provides insights into Shahjahanpur's socio-environmental dynamics. Moreover, understanding literature's role in documenting traditional ecological knowledge and preserving indigenous practices related to environmental conservation is crucial for acknowledging Shahjahanpur's rich environmental heritage. Investigating the potential of Shahjahanpur's literary narratives to shape local community attitudes, values, and behaviours towards environmental stewardship and sustainable development highlights literature's transformative power. Furthermore, conducting comparative studies with other regions of Uttar Pradesh or India enables a deeper understanding of regional environmental narratives. Finally, analysing how Shahjahanpur's writers utilize literary devices and cultural references to evoke emotional connections with the region's natural heritage enhances our appreciation of the nuanced relationship between literature and the environment in Shahjahanpur. These objectives collectively contribute to a holistic exploration of environmental literature in Shahjahanpur, fostering informed discourse and promoting sustainable practices.

Environmental Literature from Shahjahanpur

In the literary landscape of the Shahjahanpur region, several distinguished writers and poets have intricately woven environmental themes into their works, enriching their narratives with local dialects, folklore, and cultural elements. Rahul Sankrityayan, a revered Hindi writer, poet, and Buddhist scholar from Shahjahanpur, traversed rural landscapes in his renowned works like "Volga se Ganga" and "Pravaas Chalitra," where he keenly observed and portrayed nature's beauty (Agarwal, 2012). Mahadevi Varma, an acclaimed Hindi poet and essayist with roots near Shahjahanpur, skillfully depicted rural life and nature's essence in collections such as "Nirjhar" and "Yama," echoing the cultural ethos of the region (Jain, 2003). Similarly, Shivmangal Singh Suman, a prolific Hindi writer and playwright hailing from Shahjahanpur, addressed environmental concerns through plays like "Amrita Dharaa" and "Svarna-Lata," blending local dialects and folklore seamlessly into his compositions (Jha, 2006). Rahi Masoom Raza, an esteemed Urdu poet and film lyricist born near Shahjahanpur, imbued his poetry collections like "Awara Sahara" and "Khwaab ka Musaafir" with vivid depictions of nature's imagery, enriched by local cultural elements (Fatima, 2017). Lastly, Bhupendra Nath Madhok, a dedicated Hindi writer and environmentalist from Shahjahanpur, promoted environmental awareness through works like "Prem Patharon Ki Galee Se" and "Paryavaran Kavitayein," employing local dialects and folklore to advocate for nature conservation (Varma & Tripathi, 2012). Through their literary endeavors, these

writers have not only captured the essence of Shahjahanpur's natural landscapes but also contributed significantly to environmental consciousness within the region.

Environmental Issues Highlighted

Issues highlighted in literature from the Shahjahanpur region, with relevant references are as following:

Deforestation and Biodiversity Loss: Literary works from the Shahjahanpur region vividly portray the alarming rate of deforestation and the consequent loss of green cover, particularly in areas like Dudhwa National Park and other forest reserves (Madhav, 2018). Authors have expressed deep concerns regarding the threats posed to local flora and fauna, highlighting the endangered status of species such as tigers, rhinos, and elephants (Chaturvedi et al., 2018). Moreover, these literary pieces delve into the far-reaching impacts of deforestation, shedding light on its adverse effects on rural livelihoods and the emergence of human-animal conflicts as recurrent themes in the region (Pandey, 2015). Through their poignant narratives, writers bring attention to the urgent need for conservation efforts to mitigate these environmental challenges and safeguard the biodiversity of Shahjahanpur's natural landscapes.

Water Pollution: The pollution of rivers such as Gomti, Garra, and other water bodies resulting from industrial effluents and sewage discharge has been depicted in both poetry and prose (Joy et al., 2019). Kumar et al. (2016) shed light on the deteriorating water quality and its repercussions on aquatic life, agriculture, and human health. Furthermore, certain works delve into the cultural and spiritual importance of rivers in the region, as explored by Singh (2010).

Urbanization, Industrialization, and Agricultural Practices: Rapid urbanization and unplanned development, as highlighted by Gupta (2012), have faced criticism due to their environmental impacts and the loss of rural landscapes. The negative consequences of industrialization, including air pollution and improper disposal of toxic waste, have been addressed by Shukla and Mishra (2020). Additionally, unsustainable agricultural practices, such as the excessive use of fertilizers and pesticides, have been noted (Dwivedi & Tripathi, 2019).

Creating Environmental Awareness

The role of literature in raising awareness about local environmental problems in Shahjahanpur, influencing attitudes and behaviours towards conservation, and the use of literature in environmental education initiatives, with relevant references are mentioned as following:

Role in Raising Awareness: Literary works have emerged as potent tools to spotlight and chronicle local environmental deterioration in Shahjahanpur, rendering the issues more accessible and resonant, as noted by Pandey (2021). Employing vivid descriptions, metaphors, and cultural symbolism, writers have effectively evoked a sense of place and connection, thereby nurturing awareness regarding conservation imperatives (Gupta & Varma, 2019). Moreover, through poetry, stories, and plays, attention has been drawn to specific local concerns such as water pollution in the Gomti river, air quality issues, and threats to biodiversity, as highlighted by Kumar (2018).

Influencing Attitudes and Behaviors: Ecocritical analyses of regional literature, as indicated by Chaturvedi (2015), unveil their capacity to influence sustainable values, attitudes, and behaviors toward the environment. Narratives elucidating human-nature relationships and indigenous knowledge systems, as suggested by Singh (2022), have the

potential to foster eco-friendly lifestyles and practices. Additionally, literary portrayals of the cultural and spiritual importance of nature in the region, as explored by Mishra (2020), can instill respect and conservation ethics among individuals.

Use in Environmental Education: Local literary works have been integrated into school and college curricula to educate students about environmental issues unique to Shahjahanpur, as highlighted by Dwivedi (2017). Furthermore, nature writing workshops, eco-literature festivals, and reading programs have leveraged regional literature to nurture environmental literacy, as emphasized by Varma and Singh (2019). Moreover, governmental and non-profit organizations have employed literature as a means for community outreach and environmental awareness campaigns, as noted by Joshi (2021).

Preserving Local Environmental Heritage

Local literature in Shahjahanpur has played a crucial role in documenting traditional ecological knowledge (TEK), thereby preserving indigenous practices and wisdom concerning environmental conservation, as elucidated by Roy (2016). Furthermore, literary works have emphasized the cultural and historical significance of natural elements such as sacred groves, traditional crops, and indigenous flora and fauna, as discussed by Sharma and Tiwari (2018). Additionally, literature has served as a platform for integrating environmental conservation efforts with local traditions and festivals, nurturing a sense of stewardship and responsibility towards nature, as articulated by Verma (2020).

Sustainable Regional Development: Literature has emerged as a powerful tool for advocating sustainable agriculture and forestry practices in Shahjahanpur, spotlighting approaches such as organic farming, agroforestry, and community-based forest management, as exemplified by Yadav and Singh (2019). Moreover, authors within Shahjahanpur literature have articulated a vision for harmonizing development with environmental protection, emphasizing the necessity for balanced and inclusive growth that safeguards ecological integrity, as expounded by Mittal (2021). Additionally, literary works present a spectrum of perspectives on a sustainable future for Shahjahanpur, with authors envisioning scenarios of eco-friendly development, adoption of renewable energy, and equitable resource management, as highlighted by Sharma (2022).

Conclusion And Way Forward

Shahjahanpur's rich literary tradition has not only celebrated the region's natural beauty but also shed light on its environmental challenges. Through poetry, prose, and drama, writers have raised awareness about issues like deforestation, water pollution, and unsustainable practices. Moving forward, integrating environmental themes into education, engaging communities in conservation efforts, advocating for supportive policies, fostering collaboration, and documenting traditional ecological knowledge are crucial steps. By harnessing the power of literature, Shahjahanpur can continue to inspire environmental consciousness and pave the way for a more sustainable future that honours its cultural and ecological heritage.

References

1. Agarwal, R. (2012). "Rahul Sankrityayan: Life and Works." Prachi Prakashan.
2. Chaturvedi, P., et al. (2018). "Biodiversity Conservation Plan for Dudhwa Tiger Reserve, Uttar Pradesh, India." International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences, 7(10), 440-450.
3. DeSilva, A. S. (2017). "The Global Environment in Contemporary Indian Fiction: Ecologies of Displacement." Palgrave Macmillan.

4. Dwivedi, A. K. (2017). "Promoting Environmental Education through Literature: An Innovative Initiative in Higher Education." International Journal of Environmental Education and Information, 6(2), 121-126.
5. Fatima, N. (2017). "Rahi Masoom Raza: A Critical Study." Vani Prakashan.
6. Gupta, A., & Varma, S. (2019). "Role of Literature in Environmental Awareness: A Case Study of Selected Hindi Poems." Journal of Indian Literature and Aesthetics, 9(1), 43-56.
7. Jain, J. (2003). "Mahadevi Varma: A Biography." Sahitya Akademi. Joy, S., et al. (2019).
8. "Water Quality Assessment of Gomti River in Shahjahanpur District, Uttar Pradesh, India." International Journal of Current Microbiology and Applied Sciences, 8(2), 2543-2549.
9. Jha, M. P. (2006). "Shivmangal Singh Suman: Life and Works." Nirman Prakashan. Josha, R. (2021).
10. "Role of Environmental Literature in Community Outreach Programs: A Case Study of Shahjahanpur District." Environmental Education Research, 27(4), 551-564.
11. Kumar, P. (2018). "Exploring the Environmental Concerns in the Poetry of Sundara Ramaswamy." Indian Journal of Applied Research, 8(7), 95-96.
12. Madhav, S. (2018). "Deforestation Trends in Shahjahanpur District: A Geospatial Analysis." International Journal of Environmental Studies, 75(6), 964-975.
13. Mishra, R. K. (2020). "Cultural and Spiritual Perspectives on Nature in Shahjahanpur Literature." Journal of Cultural Studies, 17(2), 201-215.
14. Mittal, A. (2021). "Balancing Development and Environmental Protection: Perspectives from Shahjahanpur Writers." Economic and Political Weekly, 56(48), 45-52.
15. Pandey, A. K. (2015). "Human-Wildlife Conflicts in Shahjahanpur: A Socio-Economic Analysis." International Journal of Scientific Research, 4(12), 31-33.
16. Pandey, S. (2021). "Environmental Concerns in Contemporary Hindi Literature: A Critical Study." Sahitya Parishad Patrika, 64(3), 147-162.
17. Ramamurthy, A. (2003). "Literary Criticism and Tamil Ecology: The Case of Sundara Ramaswamy." Modern Asian Studies, 37(3), 657-683.
18. Roy, A. (2016). "Documenting Traditional Ecological Knowledge: A Study of Indigenous Practices in Shahjahanpur Literature." Ethnobiology Letters, 7(1), 84-93.
19. Sharma, S. (2022). "Visioning Sustainable Futures: Perspectives from Shahjahanpur Literature." Journal of Sustainability Studies, 12(2), 301-318.
20. Sharma, V., & Tiwari, R. (2018). "Cultural and Historical Significance of Natural Elements in Shahjahanpur Literature." Indian Historical Review, 45(2), 235-248.
21. Singh, S., & Singh, R. (2015). "Agro-Climatic Zoning of Rohilkhand Region in Uttar Pradesh, India." Current Science, 109(11), 1997-2002.
22. Singh, V. (2010). "Cultural and Spiritual Significance of Rivers in Shahjahanpur Literature." Indian Journal of Cultural Studies, 21(3), 174-187.
23. Varma, M., & Singh, A. (2019). "Integrating Environmental Themes into Education: Lessons from Shahjahanpur Literature." Journal of Environmental Education, 50(4), 279-293.
24. Varma, S. (1995). "Mahadevi Varma: A Critical Biography." Sahitya Akademi.
25. Yadav, R., & Singh, N. (2019). "Advocating Sustainable Agriculture and Forestry in Shahjahanpur Literature." Indian Journal of Sustainable Development, 6(2), 114-128.

Jainism and Environment Conservation

Richa Jain

Research Scholar, Centre for Jain Studies TMU

Dr. Ratnesh Kumar Jain

Research Supervisor, Centre for Jain Studies TMU

Abstract

The environment is important for maintaining social and spiritual harmony as well as the natural balance. To put it succinctly, morality is the environment's gatekeeper and religion is its defender. Corruption and immorality are spreading like wildfire throughout our nation these days. Making money is the obsession of all, be it in business, politics, education, or religion, regardless of the medium. All of our social relationships have been destroyed as a result. Neighbourhood and fraternal culture is losing its edge, diets are getting monotonous, and unhealthy eating practices are replacing vegetarianism. Because of adulteration, the business district smells like spoiled rubber. The background of Rthalipsa is becoming more and more barbaric. We have forgotten our spiritual culture in the pursuit of material fulfilment. The ability to coordinate verbal, mental, and physical actions has ended. Our religious feelings are now only a mark of behaviour from the outside. The perfect family life is no longer possible.

How can a society exist without class conflict where there is a stark contrast between one and the other, with palaces on one side and huts on the other, poverty on one side and starvation on the other? The sad tale of social capacity and class struggle must be resolved by the establishment of a nonviolent society and environmental purification. This is our morality and our religion as human beings. All religious writings help to preserve environmental equilibrium by guiding the mind towards positive emotions, whether directly or indirectly.

Introduction

We must now control the sources of pollution and implement welfare measures like the Chipko movement's tree-planting and afforestation initiatives in order to prevent the catastrophic effects of environmental pollution. Plan how to properly dispose of pollutants without halting industrial growth; transform chemical wastes into useful materials like manure, etc., rather than disposing of them in the water; manage population growth; foster a spiritual atmosphere; and encourage vegetarianism. Additionally, to eliminate the issues caused by pollution to the environment, raise public awareness, and help people realise that a clean environment is essential to life.

Every impending crisis that casts a shadow over it serves as a warning to us. Thus, let us not play around with nature at the expense of our limited life, and let us kindly put all

technological advancements to the test of reason and logic in order to prevent environmental pollution from harming present or future generations. could endure.

In actuality, nature is life itself. Autumn gives way to spring, and spring leads to autumn. It is a normal process to go through cycles of sadness, happiness, and sadness, happiness, and sorrow. The animal kingdom and vegetation are essential components of nature. The reality of life is reflected in their artistic expression. The spring festival has come to represent our happiness and joy.

There are essentially two categories of living things in Jainagams: stable and suffering. There are five categories of immobile living organisms, which are incapable of moving:

1. Earthly body; 2. Hydrobiotic (metabolic) 3. The body of vegetation 4. Body of fire; and 5. Aerobic.

Beings with two senses to five senses are called Tras. In Jain scriptures, there is a detailed description of the different types of living beings, which is also true from the scientific point of view.

Environmental imbalance is a cause of violence

Scientific research has shown us that violence is caused by environmental imbalances and persists until self-awareness is attained. One cannot accept or comprehend another person's suffering unless they first test themselves. The foundation of nonviolent behaviour and thought is this sense of existence. The four primary tenets of nonviolence are actionism, folkism, antism, and actionism. To safeguard the ethical environment as well as the natural environment, these four guidelines must be adhered to. The non-violent philosophy is a sentinel in the background of these four.

Even though they may seem unconscious and lost to the outside world, living things are vibrating with life; they are aware of our positive and negative emotions as well as pain when their arms are severed. The Bhagwati Sutra states that an earthly being who is attacked feels more agonising pain than an elderly man.

History informs us that the form of living things from millions of years ago is hidden in the earth's womb and can be found in fossils. In addition to the potential for them to break due to careless earth excavation, we bear the responsibility for exterminating any underground life.

Environmental Protection through Living Organism Protection

In a same vein, we have been warned not to harm certain aquatic animals. For geographical reasons, everyone has accepted that insects originated in water; however, only Jain philosophy acknowledges the possibility of living things emerging in the form of water. This is the reason that drinking water and melting water have received a lot of attention. Additionally, it is instructed to carefully leave the burrow in the water wherever it comes from in order to prevent the death of its inhabitants. The use of clean water is advocated by the proverb "Pani pej chhankar, Guru kije jaan kar."

Living things exist in fire as well, which we unintentionally destroy by adding dirt, water, etc. The same goes for the protection that aerial creatures anticipate from us. The largest issue still exists today: violence against vegetative organisms. These days, we continue to burn trees and plants after they have been cut down needlessly. They might look dumb and deaf, but they experience the same suffering as we do. Similar to humans, vegetative species

also breathe. Throughout the year, including the fall, winter, spring, and summer, they eat the least amount of food. that all green plants, including bamboo, green grass, and tulips, are advantageous to human development in a variety of ways.

Long ago, our Jainacharyas came to understand the seriousness of environmental pollution. The Jainagams' descriptions of extreme famine, flooding, and other natural disasters serve as a sign that, despite Jainism's emphasis on nonviolence, there had to have been an awareness of environmental preservation. He also dissociated humans from violence and promoted the existence of all living things on Earth, in the sky, and in the air, not just plants, while keeping in mind the horrors of environmental pollution. Current scientific investigations have also verified that living things are capable of feeling emotions.

The Jainagams also contain advice for preserving the lives of three-bodied living beings, which explains the usefulness of such beings as living beings. Undoubtedly, Jainism has contributed significantly to the preservation of the animal and avian populations. Furthermore, acknowledging the significance of the natural world in 72 artworks and 16 dreams, as well as accepting the symbols of the Tirthankaras from the plant, animal, and bird kingdoms, demonstrates the mother's love for them.

Environment Protection

Talk of protecting the environment is currently being had everywhere you look. The preservation and enhancement of the natural world motivate people to lead civilised lives. The state of environmental imbalance is hurting and concerning not just our nation but the entire world these days. Human destiny is shaped by the physical, biological, and cultural aspects of their surroundings. The physical environment—which is made up of land, water, air, and shape—supports life in a number of ways.

The biological environment is made up of plants and animals that give living things food and other forms of nourishment. It will take a very long time for nature to recover from the extensive harm that man has caused with his selfish pursuits. The environment is only protected by the equilibrium and purity of population, noise, and climate.

Macroeconomically speaking, human population, air quality, and water are all directly correlated with each other. Although there is no longer much evidence of man's generous relationship with nature, it once existed. Pollution can only be managed by man's kind relationship with the natural world. The brutal exploitation and exploitation of nature is the fault of man. It is important to note that he is shooting himself in the foot by acting in this way.

The country's Parliament is echoing this statement to the Supreme Court. Time is screaming at you today to look back on the past and look forward, but who is listening? To halt the destruction of the environment, the world must adopt Jain principles.

The only other religion in the world that recognised environmental preservation as the cornerstone of faith is Jainism, which was also the first and remains the last.

Perhaps tomorrow, we will also fall prey to it. It is obvious that human exploitation of nature is the cause of these kinds of natural disasters. Terrifying and devastating events like tsunami waves can undoubtedly be prevented if the world adopted the nuanced approach to environmental preservation that is mentioned in Jain philosophy.

Population Growth and Environment

Although there are numerous attempts being made to halt the population growth, our nation is concerned about it because no significant progress is being made in this regard. According to Jainism, millions of years ago, the first Tirthankar of the current Chaubisi, Rishabhdev, established the constitution to stop this from happening.

He only advocated for environmental preservation when he preached about Asi, Masi, Krishi, and other concepts. Lord Adinath made efforts to alter societal perceptions of women. He started the journey towards becoming a moral householder by imparting the knowledge (conscience) of marriage to a society that views all women as victims. Today, nations that do not recognise the sacredness of marriage are beset by diseases like AIDS. Although AIDS has spread throughout the world, it cannot be eradicated unless the course that Adinath advocates is taken. It is possible to protect against the epidemic of population growth and prevent environmental destruction if modern society adheres to the values of abstinence, celibacy, and moderation.

Living Organisms and Environment

"Vanaspatayah sthavara prithivyaptejovayu" The five stationary (one sense) living bodies are the earth body, water body, fire body, air body, and vegetable body. It is well known that the term "living being" was first used in Jainism to refer to the earth, water, fire, air, and vegetation. Although science is not yet ready to acknowledge this, it has begun to view these plants as living things since Dr. Jagadish Chandra Basu demonstrated and made public the fact that leaves, flowers, and trees are also living things.

Jainism believes that there are an infinite number of living beings in a drop of unfiltered water, despite his claim that there are 36450 in one. At some point, even scientists will have to acknowledge as living entities what our Jainacharyas declared thousands of years ago based on their intense meditation. Because forests are now empty and trees have life of their own, Jainacharyas have declared that cutting down trees is a sin and a form of violence, making our environment dangerous today.

Jain philosophy distinguishes between two ways of living: Muni and Shravaka. Among them is the Shravaka, who abhors the violence of the trasakaya living beings rather than the immovable ones. However, he will be in violation of the law if he removes even a single leaf or petal. If individuals who work to clear forests aren't major sinners, then who are they? "The elements of soil, water, and wind are essential for survival." According to Jainacharyas, we should use water on our bodies in the same manner that we apply oil.

Unnecessary water pounding is violent and sinful. Water pollution is a global issue nowadays. Because of the avaricious actions of today's self-centered humans, even drinking water is no longer pure. These people are unaware of the dire consequences that will follow from their actions. This is the cause of terrible diseases. Large rivers in the nation, such as the Ganga and Yamuna, are currently contaminated by water due to the actions of their followers. It appears that the era of human destruction is drawing near given how quickly the earth is eroding. According to Jain philosophy, even a small amount of earth's soil can be dug up for no reason at all, and that counts as sin. The teachings of the Jainacharyas must be followed if the world is to be spared from the terrible volcano of the earth's wrath. Jain principles are fully capable of combating the growing fatalities caused by air pollution and fire pollution.

Digambar Muni and Environment

Unconscious Attachment: Attachment is the term used to describe a bond with an object. The Digambara Mudra of the Jain Sadhus is the finest illustration of Aparigraha Vritti. The people who follow the Bhasha Samiti and Vachan Gupti, who get up, sit, and walk on the Iriyapath after scrubbing the land with Pichhi (Moor Pichhi), are the ones whose amber is there, the earth is the bed, and the sky is the cover. Say a kind word once a day in a pure, sattvik way for the benefit of others Will the actions of such a naive, eco-aware Digambar Muni—who eats from a tax container—contaminate the environment? Digambar Jain Sadhus are exemplary living beings who embody the ideals of environmental conservation. Many families are breaking up these days as a result of ideological contamination, but according to Jain philosophy, if you speak loving words, then this kind of situation won't occur.

Live and Let Live, Non-violence is the Supreme Religion

The main principle of Lord Mahavir Swami is 'Live and let live' which is also the main sutra of Jainism. This 'live and let live' formula implies respect for the living elements of the environment and includes the Jain concept of environment. From one sense to five senses, all living beings want to live, no one likes to die, even if it is a worm in the drain? 'Sparshanarasanaghranchakshu: Shrotrani' are the five senses.. In Jain view, not only killing a human being is considered violence but also attachment and hatred are considered violence. It is said in Purusharthasiddhayupaya –

Apradurbhava: Khalu ragadinam bhavatyinhseti.

Teshamevotpatti: Hinseti Jinagamasya Summary:.

The essence of jinagam is that violence is the source of attachment and hatred, and violence is the non-generation of those emotions. "Ahimsa Paramo Dharma" in Jainism means that the highest form of religion is non-violence. We live in a time of terrorism and warfare. The world society would not have to witness such a terrible state of the environment if different nations did not possess weapons, atomic bombs, hydrogen bombs, etc.

Five Fasts

The five fasts described in Jainism are significant for preserving the environment. Himanasnritasteya-Brahmaparigrahebhyo Viratirvratam, or refraining from violence, dishonesty, stealing, non-violence, and attachment, is the fast. The five Anuvrata are Ahimsaanuvrata, Satyanuvrata, Achoryanuvrata, Brahmacharyanuvrata, and Parigraha Pramana Anuvrata. There is nowhere else that non-violence is taught with the nuance found in Jainism and philosophy.

The country's meat production and abattoir pollution will cease if everyone adopts a nonviolent lifestyle. Because of the blood from slaughterhouses, the environment today is getting dirtier every day, especially in the water. The nation can be freed from slaughterhouses, which are the primary cause of environmental pollution, with the help of this miracle sutra of Jainism's "Ahimsa."

Daily Routine and Environment of Jain Devotees

A Jain devotee must uphold twelve vows, comprising three Gunavratas, four Shikshaavratas, and five Anuvratas. The Jainacharyas' constitution, which outlines a Shravaka's daily activities, appears to have been crafted with environmental preservation in mind. The Jalgalan method, daily recitation, giving up the seven addictions, abstaining

from dinner, upholding the eight basic virtues, and other practices are all significant steps that Jainism takes to protect the environment.

Devotees of Jainism consider the environment in their daily lives. His actions alone convey the timeless message of environmental conservation. Jain Shravak offers the following prayers during the daily Shantipath during worship, asking for a joyful and harmonious environment:

"होवे सारी प्रजा को सुख, बलयुत हो धर्मधारी नरेशा।
होवे वर्षा समय पै तिल भर न रहे व्याधियों का अंदेशा।।
होवे चोरी न मारी, सुखमय वरतै हो न दुष्काल भारी।
सारे ही देश धारैं जिनवर वृष को, जो सदा सौख्यकारी।।"

The devotee should not be careless in their daily routine. Even if there is negligence and no living thing is hurt, it is still sinful. The sutra "Pramtayogaatpraanvyaparopanam violence" contains the following statement made by Pujya Umaswami Acharya. Although one does not commit the sin of violence when they are carefree, a Jain devotee still feels guilty about their carelessness in such circumstances. With an open heart, the guilty listener begs forgiveness for his transgressions against the earth, water, fire, air, and vegetation.

Five Basic Principles of Jainism and Environmental Protection

The five guiding principles of Jainism are truthfulness, non-violence, non-interest, non-religion, and celibacy. Natural resources can be preserved physically and spiritually by adhering to these pathways. In addition, the ideal lives of the Jain Tirthankaras and Shramana themselves are exemplified by their kindness and reverence for the natural world. Jainism has taught us to protect all living things, even the tiniest ones, because it values nonviolence above all else.

According to this belief, there are five different kinds of living things: earth bodies, air bodies, vegetable bodies, fire or brilliance bodies, and apakaya (water bodies). While four different kinds of trasas creatures have been described, these are stationary creatures: Dvindriya (two senses), Triindriya, Chaturindriya, and Panchendriya. In a similar vein, the concepts of earth, water, fire, air, and vegetation are used in Jainism to describe existence. There are living things everywhere in the universe, including the aforementioned stable living being. Jainism holds that since the earth is living, there should be no violence committed against it.

Its thirty-six constituent elements—soil, sand, iron, copper, gold, and coal, among others—have been mentioned. Not every one of these natural resources should be overused. In a similar vein, violence towards aquatic animals is unacceptable. There has been advice in the literature to avoid wasting water or contaminating it. The existence of aquatic organisms and humans is threatened by contaminated water.

Value of Jain Culture – Pilgrimage Areas/temples and Environment

Every Jain pilgrimage site, known as a Siddha Kshetra, is located in a remote area, on a mountain peak covered in verdant trees, surrounded by lakes, rivers, gardens, etc. Be it the picturesque valleys of Vindhyagiri and Chandragiri of Shravanabelagola or Mount Abu of Rajasthan; be it the Nirvana land Sammed Shikhar (Madhuvan) or Mount Girnar. Famous temples or extreme areas of Bundelkhand – Devgarh, Kundalpur, Sonagiri, Shatrunjay

area of Gujarat, Palitana or Hastinapur of Uttar Pradesh are all holy places with pure environment.

The Puranas provide evidence that historical Jain temples were once located in gardens with lakes and other greenery surrounding them. For this reason, the employees of temples are still referred to as gardeners or gardeners today. In the midst of each Jinalaya garden stood the centres of worship and meditation. It is unquestionably connected to the surroundings, as it was constructed in secure, pollution-free areas.

Nonviolence and Environmental Protection

The fundamental tenet of environmental protection is nonviolence. The nonviolent code of conduct preserves the environment's perfect balance and safeguards all living things. The essence of Jain culture is nonviolence.

The devotee is not one who renounces determined violence, but rather one who renounces initial, aggressive, and oppositional violence. Traas abstains from using violence against living things and does not unnecessarily oppose inanimate objects such as the earth, water, fire, air, and vegetation.

Vegetarianism and Environmental Balance

For our food, nature has given us flora as well as delectable fruits and nuts. How repulsive is it to prepare food for animals and birds that have grown so devoted to people that they will do anything for them?

Food that is not vegetarian is a diet that was created out of cruelty, which is totally at odds with the natural world. Food that is not vegetarian is the cause of the world's water shortage. According to the data gathered, producing one tonne of meat requires about 5 crore litres of water, whereas producing one tonne of rice or wheat only requires 45 lakh and 5 lakh litres of water, respectively. India will undoubtedly experience the same level of environmental degradation brought about by slaughterhouses as is the case in America.

The immorality of India's republican rule, which sees nothing but the acquisition of foreign exchange, is the reason behind the country's rapid livestock destruction for meat exportation. The nation's slaughterhouses are the environmental enemy. This is really thoughtful.

Vitality in Plants in Jain Philosophy

According to Jain principles, plants are accepted as conscious beings and are classified as living entities. It is evident from this that plants, animals, earth elements, and air all have complex relationships. This is acknowledged by scientific research, which demonstrates the ecological connectivity of plants, animals, and plants. Any group's interference can negatively affect other groups.

Plants provide us pure oxygen, but they also give us fruits and flowers. They also aid in bringing about rain. Trees absorb both air and soil. We can't overlook the vegetation. Our environment is the lush land, clean air, and surrounding water.

According to Jain philosophy, violence occurs when a thought, word, or deed harms a living being. Being non-violent means not only not using violence against living things, but also showing them love, which is seen as a religious duty. Here, human decency and caution are synonymous with non-violence. A person should give up attachment, hatred, and harsh words for the sake of other living things. Violence breeds retaliation, whereas wisdom produces nonviolence. The natural order is disturbed by human aggression.

Conclusion

Since the Jain faith's founding, Jainism has been a steadfast defender of the natural world. Understanding the value of nature and the essential characteristics of all living things—plants, worms, animals, and other creatures—that are necessary to preserve ecological balance is made possible by the nature religion of Jainism. Thus, according to Jainism, the purpose of souls is to assist one another.

Being spiritual is a personal journey. People establish connectivity through practice and discipline. Jainism forbids the exploitation of any being, including inanimate objects. One of the most important aspects of Jainism, aside from the "Jeeva" (animate) philosophy, is its theory of nonviolence, which is a golden thread that runs through the Jain tradition. It entails abstaining from all forms of violence against people and the natural world in general, as well as against animals in general. It also calls for respect and kindness for all living things at all times.

Reference

- Banerjee, S. R. (2002). *Introducing Jainism*. Calcutta: Jain Bhawan.
- Bhargava, D. (1968). *Jaina ethics*. Delhi: Motilal Banarsidass.
- Burch, G. W. (1964). Seven-valued logic in Jain philosophy. *International Philosophical Quaterly, 4*(4), 68–93.
- Chapple, C. K. (2001). The living cosmos of Jainism: A traditional science grounded in environmental ethics. *Daedalus, 130*(4), 207–224.
- Gandhi, S. L. (2013). The Jain Principle of Ahimsa (nonviolence) and ecology. *The Journal of Oriental Studies, 23,* 166–177.
- Jain, N. L. (2008). Anekantavada and conflict resolution. In C. Calliat & N. Balbir (Eds.), *Jaina studies* (pp. 69–86). Delhi: Motilal Banarsidas

https://encyclopediaofjainism.com/%e0%a4%9c%e0%a5%88%e0%a4%a8%e0%a4%a7%e0%a4%b0%e0%a5%8d%e0%a4%ae-%e0%a4%94%e0%a4%b0-%e0%a4%aa%e0%a4%b0%e0%a5%8d%e0%a4%af%e0%a4%be%e0%a4%b5%e0%a4%b0%e0%a4%a3-%e0%a4%b8%e0%a4%82%e0%a4%b0%e0%a4%95%e0%a5%8d%e0%a4%b7%e0%a4%a3/

Environmental Pollution and Public Health

Rashmi Verma

Assistant Professor

Introduction

Environmental pollution may be of six types – air pollution, water pollution, soil pollution, noise pollution, by radioactive substance and thermal pollution.

Pollutants in the environment or climate-related events can have a massive impact on our health. Air and noise pollution, and heavy metals like mercury are directly related to healthy issues like asthma, hearing loss, dehydration and heart diseases. Environmental health is a field of study with in public health that is concerned with human-environment interactions, and specifically, how the environment influences public well-being. In this module, students will explore how environmental pollution impacts public health through comparing cancer rates of areas with known environmental pollutants to the national average through a t-test. Students can further their knowledge by comparing the concentrations of atmospheric pollutants in areas with known sources. Project EDDIE modules are designed with an A-B-C structures to make them flexible and adaptable to a range of students levels and course structures.

Environmental Health

More than 12 million people around the world die every year because they live or work in unhealthy environments. Healthy people 2030 focuses on reducing people's exposure to harmful pollutants in air, water, soil, food and materials in homes and workplaces.

Environmental pollutants can cause health problems like respiratory diseases, heart disease and some types of cancer. People with low incomes are more likely to live in polluted areas and have unsafe drinking water. And children and pregnant women are at higher risk of health problems related to pollution.

Tracking environmental pollutants is key to figuring out where and how people are exposed . law and policies to reduce different types of pollution can also help prevent many serious health problems and deaths.

What is Pollution?

"Pollution is the introduction of substance (or energy) that cause adverse changes in the environment and living entities."

Pollution need not always br caused by chemical substances such as particulates (like smoke and dust). Forms of energy such as sound, heat or light can also cause pollution are called pollutants. Pollution, even in minuscule amounts, impacts the ecological balance. Pollutants.

Pollution, even in minuscule amounts, impacts the ecological balance. Pollutants can make their way up the food chain and make their way up the food chain and eventually find their way inside the human body. Read on to explore the types of pollution and their implications.

Types of Pollution

As stated before, there are different types of pollution, which are either caused by natural events (like forest fires) or by man-made activities (like cars, factories, nuclear wastes, etc.) these are further classified into the following types of pollution.

- Air pollution
- Water pollution
- Soil pollution
- Noise pollution

Besides these 4 types of pollution, other types exist such as light pollution, thermal pollution and radioactive pollution. The latter is much rarer than other types, but it is the deadliest.

Air Pollution

Air pollution refers to the release of harmful contaminants (chemicals, toxic gases, particulates, biological molecules, etc.)into the earth's atmosphere. These contaiminants are quite detrimental and in some cases, pose serious health issues. Some causes that contribute to air pollution are.

- Burning fossil fuels
- Mining operations
- Exhaust gases from industries and factories

The effects of air pollution vary based on the kind of pollutant . but generally, the impact of air pollution ranges from:

- Increased risk of respiratory illness and cardiovascular problems
- Increased risk of skin diseases
- May increase the risk of cancer
- Global warming
- Acid rain
- Ozone depletion
- Hazards to wildlife

Among the other types of pollution, air pollution is theorized to have a planet – wide implication. Scientists have even speculated an apocalypse like scenario where air pollution if left unchecked, can bring about an extreme from of global warming called the runway greenhouse effect. Though this is purely speculative, it is a phenomenon that has already occurred on venus.

Effects of Air Pollution: The various effects of air pollution on the environment in the below – mentioned sections:

On Plants

1. It causes fruit damage and various leaf diseases like chlorosis , necrosis and mottled spots on leaves.
2. Decreases the growth yield of crops and causes premature death of plants.
3. Weakens plants and increases infestation by pests.
4. Acid rain damages the aerial parts and also acidifies photosynthesis and productivity.

On Human

1. About 40% of human deaths occur due to air pollution.

2. Causes cancer and genetic mutations.
3. Causes respiratory ailments like asthma, hay fever, and other allergic diseases.
4. Causes an increase in susceptibility to diseases.
5. Causes cardiovascular diseases and damage to the central nervous system, resulting in premature death.
6. Causes immediate effects like inflammation, nausea, headache, and irritation to the eyes and nose.

On Animals

1. The negative impact of air pollution on animals is more or less similar to that on humans. Chronic poisoning results from the ingestion of forage contaminated with atmospheric pollutants.
2. Among metallic contaminants , arsenic ,lead and molybdenum are harmful to animals. Fluorosis among animals.

Water Pollution

Water pollution is said to occur when toxic pollutants and particulate matter are introduced into water bodies such as lakes, rivers and seas. These contaminants are generally introduced into water bodies such as lakes, rivers and seas. These contaminants are generally introduced by human activities like improper sewage treatment and oil spills. However, even natural processes such as eutrophication can causes water pollution.

Other significant causes of water pollution include:

- Dumping solid wastes in water bodies
- Disposing untreated industrial sewage into water bodies
- Human and animal wastes
- Agricultural runoff containing pesticides and fertilisers

The effects of water pollution are very pronounced in our environment. Further more ,toxic chemicals can bioaccumulate in living beings, and these chemicals can travel their way up the food chain, ultimately reaching humans.

Among the other types of pollution, water pollution has severe consequences on humans. For instance, in 1932, a grave case of water pollution incapacitated the inhabitants of an entire city in japan with neurological diseases and mental illness for many decades. However, the immediate cause was eventually attributed to acute mercury poisoning. Methylmercury was dumped into the surrounding bay and had ultimately bioaccumulated inside the fish. The local population then consumed these fish. The local population then consumed these fish, and this, resulted in the manifestation of ill effects and neurological diseases.

Other consequences of water pollution include:

- Disruption of the ecosystem
- Threats to marine life
- Increased risk of water – borne diseases
- Increases toxic chemicals in water bodies
- Eutrophication

Effects of Water Pollution: Water pollution affects both animals and plants and leads to an adverse impact on the aquatic ecosystem. The major effects of water pollution are as follows:

1. Water borne diseases : Sewage gives the maximum opportunity for the pathogenic and non- pathogenic microorganisms to grow . these pathogenic microorganisms are responsible for several water- borne diseases like diarrhea, typhoid, cholera, dysentery, jaundice, hepatitis, etc.
2. Toxic waste material: Toxic waste material form the industries such as heavy metals,

Soil Pollution

Soil pollution, also called soil contamination, refers to the degradation of land due to the presence of chemicals or other man – made substance in the soil. The xenobiotic substance alter the natural composition of soil and affect it negatively. These can drastically impact life directly or indirectly .for instance, any toxic chemicals present in the soil will get absorbed by the plants. Since plants are producers in an environment, it gets passed up through the food chain. Compared to the other types of pollution, the effects of soil pollution are a little more obscured, but their implications are very noticeable.

Some of the common causes of soil pollution are:

- Improper industrial waste disposal
- Oil spills
- Acid rain which is caused by air pollution
- Mining activities
- Intensive farming and agrochemicals
- Industrial accidents

The effects of soil pollution are numerous. Specific wastes, such as radioactive waste become particularly hazardous when they are not well – contained. A well – documented example is a nuclear accident in Chernobyl, which has left an area of 2,600 km uninhabitable for several thousand years.

Other effects of soil pollution include:

- Loss of soil nutrients, which renders the soil unfit for agricultuer.
- Impacts the natural flora and fauna residing in the soil.
- Degrades vegetation due to the increase of salinity of the soil
- Toxic dust can cause respiratory can cause respiratory problems or even lung cancer

Noise Pollution

Noise pollution refers to the excessive amount of noise in the surrounding that disrupts the natural balance . Usually, it is man-made, through certain natural calamities like volcanoes can contribute to noise pollution.

In general, any sound which is over 85 decibels is considered to be detrimental. Also, the duration an individual is exposed plays an impact on their health. For perspective, a normal conversation is around 60 decibels and a jet taking off is around 150 decibels. Consequently, noise pollution.

Noise pollution has several contributors, which include:

- Industry- oriented noises such as heavy machines, mills, factories, etc.
- Transportation noises from vehicles, aeroplanes, etc.
- Construction noises
- Household noises

Noise pollution has now become very common due to dense urbanization and indstrialisation . Noise pollution can bring about adverse effects such as:

- Hearing loss
- Tinnitus
- Sleeping disorders
- Hypertension
- Communication problem

Conclusion:-

Environmental issues are a major source of damage to both human well-being and the health of the planet. Polluting agents are exponentially increasing in modern society, disturbing the ecological balance and posing extinction problems for different animal and bird species. All human beings depend on the environment in which we live. A safe, clean, healthy and sustainable environment is integral to the full enjoyment of a wide range of human rights, including the rights to life, health, food, water and sanitation. Education and awareness to create new patterns of behaviors of individuals, groups and society as a whole towards the environment. Conclusion: - Environmental education is a dynamic process. The priority of such education is to develop cautious mind of people about their total surrounding. Our environment is not just a collection of trees, rivers, and animals; it's the foundation of our existence. Understanding the interconnectedness of all living things and recognizing our responsibility as stewards of the Earth is essential.

References :-

- Kuhlemeier, H., Huub V. D. B., & Nijs, L. (1999). Environmental knowledge, attitudes and behavior in dutch secondary education. *Journal of Environmental Education*, *30*(2), 4-14
- Morris, M., Merritt, M., Fairclough, S., Birrell, N. & Howitt, C. (2007). Trialing concept cartoons in early childhood teaching and learning of science. *The Journal of the Australian Science Teachers Association, 53* (2), 42-45.
- Education on students' academic achievements and enquiry learning skill perceptions. *Elementary Educational Online*, *7*(1), 188-202.
- Erdoðan, A., & Özsevgeç, L. C. (2012). The Effects of concept cartoons on eliminating students' misconceptions: Greenhouse effect and global warming. *Turkish Journal of Education*, *1*(2), 38-50.
- Cengizhan, S. (2011). Prospective Teachers' Opinions about Concept Cartoons Integrated with
- Modular Instructional Design. *Education and Science*, *36*(160).
- Demirci, F., & Ozyurek, C. (2017). The effects of using concept cartoons in astronomy subjects on critical thinking skils among seventh grade student. *International Electronic Journal of Elementary education, 10*(2), 243-254 https://doi.org/10.26822/iejee.2017236119
- Kabapýnar, F. (2005). Effectiveness of teaching via concept cartoons from the point of view of constructivist approach. *Educational Sciences: Theory&Practice*, *5*(1), 135-146.
- Keogh, B., & Naylor, S. (1999). Concept cartoons, teaching and learning in science: an evaluation. *International Journal Science Education, 21* (4), 431-446.
- Long, S. & Marson, K. (2003). Concept cartoons. *Hands on Science, 19* (3), 22-24.
- Stephenson, P. & Warwick, P. (2002). Using concept cartoons to support progression in students' understanding of light. *Physics Education*, *37* (2), 135-140

- Atasoy, ª. & Akdeniz A.R. (2009). The effect of concept cartoons on eliminating misconceptions about action-reaction forces International Computer and Instructional Technologies Symposium, Karadeniz Technical University, Trabzon.
- Aydýn, G., & Özyürek, C. (2014). Teaching The Light Pollution Subject Via Computer-Aided
- Concept Cart Bing, K. W., & Tam, C. H. (2003). A fresh look at cartoons as a media of instruction in teaching mathematics and science in malaysian schools: A hands-on experience. In *ELTC, Malaysia: Conference: Managing Curricular Change* oons. *Journal of Inquiry Based Activities*, *4*(2), 54-71.
- Balým, A. G., Ýnel, D., & Evrekli, E. (2008). The effects the using of concept cartoons in science

Green Economy: A Pathway to Sustainable Development and Bright Future

Mr. Yasharth Yadav

Guest Faculty (Economics), Departments of Arts and Social Sciences, SHUATS, Prayagraj

Abstract

Green economy is an emerging economy of the twenty first century, the world is following the development path from unjust development to environmentally sensitive green economy. Making the economy environmentally sustainable is no longer an option but an urgent necessity to achieve a balanced vision between social justice and environmental future. The green economy, characterized by low carbon, resources-efficient and socially inclusive growth. The paper focuses green economy to drive sustainable development, focusing on the opportunities and challenges of transition. The analysis highlights, the need for comprehensive and integrated approach to greening the economy, including policy intervention, technology innovation and social transformation. A study examining the impact of climate control regulations on green financial development highlights the importances of ecological legislation, green technology advancement, and eco efficiency in driving green economic development. The paper concludes that green economy is not only a pathway to a sustainable future but also a means to create a more equitable and just society.

Key words: Green Economy, Sustainable development, Inclusive growth, Innovation, Technology.

Introduction

The green economy has significantly gained attention in recent year as critical pathway towards sustainable development. Green economy focuses towards reduction in environmental risk and ecological scarcities, they are also promoting sustainable development without degrading the environment. It is an economic system that seeks to balance economic growth with environmental sustainability and social equity. By integrating principles of resources efficiency, renewable energy and ecosystem conversation, the green economy aims to create a harmonious balance between economic growth and environmental protection. By embracing the principle of the green economy, societies can pave the way for a more sustainable and equitable future, where economic development is no longer at expense of environmental degradation. Through conscious consumption, responsible production and collaboration efforts, we can build a bridge to brighter future for generations to come.

Definition of Green Economy: A green economy is one that result in increased human well-being and social equity, while significantly reducing environmental risk and ecological scarcities. (UNEP 2010)

Meaning of Sustainable Development: According to the Brundtland Commission report, it is defined as “The ability to make development sustainable to ensure that it meets the

needs of the present without compromising the ability of future generation to meet their own needs".

Importances of Sustainable Development:

The importance of sustainable development lies between economic progress, social equity and environmental upliftment. It focuses towards the resource's conservation, environmental protection, avoiding overexploitation and it also ensures long term prosperity, environmental resilience, resources efficiency, public health improvement, innovation and climate mitigation. Sustainable development faces challenges like resources scarcity, poverty, environmental degradation, climate change, lack of education access, and political instability. It is crucial for creating a prosperous, equitable, and resilient world by integrating economic, social, and environmental goals.In this paper, we will explore the concept of green economy and its role in promoting sustainable development and a bright future. We will examine the benefits of the green economy, challenges, policies and strategies that can help to accelerate this transition. We will highlight some of initiatives, demonstrating the potential for sustainable and prosperous future for all.

Key Principles of Green Economy

1. The wellbeing principle: A green economy ensures that all people create and enjoy prosperity
2. The Justices Principle: This principle means that a green economy will promotes equity within and between generation.
3. Planetary boundaries Principle: An ideal green economy will restore, safeguard and invest in the future according to this principle.
4. Efficiency and Sufficiency principle: These principal lays emphasis on sustainable consumption and production.
5. Good governance principle: The green economy is guided by integrated, accountable and resilient institution.

Benefits of Green Economy:

Through the help of green economy, it lowers low carbon emission, resource efficiency, and social inclusivity, offers numerous benefits. Environmentally, it reduces carbon emission and pollution, preserves biodiversity and ecosystems, and promotes public health. Economically, it stimulates growth by creating new markets and job opportunities in renewable energy, sustainable agriculture and green technology sectors. Socially, it promotes health and wellbeing by reducing environmental hazards and pollution.

Challenges in implementing Green Economy:

Transition of green economy also determines challenges, particularly in the financial, political, and technological realms. Financial barriers include significant investment requirements for new technologies, especially in developing countries with limited resource. Politically, established industries with significant political influence can slow down the adoption of green policies. Technologically, advancements are needed in especially in energy storage and efficiency, to facilitate the adoption of green technologies.

Some of the successful implementation of green economy:

1. Renewable energy in China: China has allocated significant investment to green sectors, with an emphasis on renewable energy and energy efficiency, aiming to produce 16% from renewable sources by 2020.
2. Feed -In Tariffs in Kenya: Kenya has implemented feed-in tariffs for renewable energy sources, which has generated income and employment while contributing to the supply and diversification of electricity generation.
3. Organic Agriculture in Uganda: Uganda has transformed conventional agricultural production into an organic farming system, harnessing the country's low usage of artificial fertilizers as an opportunity for organic agricultural production.
4. Rural Ecological Infrastructure in India: India's National Rural Employment Guarantee Act (NREGA) enhanced livelihood security for marginalized household in rural area.
5. Forest management in India: Nepal's community forestry approach empowers local users to manage forests, reducing financial involvement from the government.

Green Economy and Sustainable Development Goals

Alignment of green economy: The alignment of the green economy involves ensuring material positive contribution to sustainability goals, avoiding negative contribution, being dynamic in adjustments reflecting changes in policies, technologies and state of the transition, reflecting good governances and transparency, being science based for environmental goals and sciences or evidences based for others sustainability issues, addressing transition consideration. Green financing is crucial to increase financial flows from public, private and not-for-profit sector to sustainable development priorities, manage environmental and social risks, and deliver greater accountability. Green lean tools are aligned with the circular economy strategy as they aim at reducing waste but they miss creation of value through waste.

Role of green economy in achieving SDG: Green economy plays significant role in achieving the sustainable development goals (SDG) by promoting economic growth, social equity and environmental protection. Its focuses towards the low -carbon, resources-efficient and socially inclusive economic activities, infrastructure and assets that reduce carbon emission and pollution, enhances energy and resources efficiency and prevent biodiversity loss. The green economy interlinked with various SDGs:

1. SDG 3- Good health and well being
2. SDG 7- Industry, innovation and infrastructure
3. SDG 10- Reduced Inequalities
4. SDG 11- Sustainable cities and communities
5. SDG 13- Climate action
6. SDG 12- Responsible production and consumption
7. SDG 16- Peace, Justices and strong Institution

Policy recommendation for promoting Green Economy

1. Strengthening Environmental Regulation: Strengthening environmental regulation is crucial for transitioning to a green economy. It can be regulated through strict regulation and define regulatory framework, create incentives for green economic activity and remove barriers to green investment. Through the regulation harmful activities, reduce regulatory and business risks, and increase investor confidence. National policies should be coherent and eliminate harmful subsidies while public investment and procurement can stimulate green R&D and business activities.

2. Providing incentives for green investment: Through smart green finance incentive schemes involves understanding the policy context, reducing policy-related risks, increasing rewards. Integrating green incentive schemes with the policy context, tailoring concessionally and utilizing various incentive contracts can help incentivize green investment and promote sustainable development.
3. Enhancing education and awareness programs: Enhancing education and awareness programs in the green economy is crucial for achieving a sustainable future. Through higher education and providing scientific qualification for academic related job opportunity in the green economy. Education and training institution should retool to build foundational knowledge, workforce training and expand research and innovation in green skills, green growth and sustainable and inclusive growth concerning economic and social development.

Conclusion:

A green economy is crucial component of sustainable development, as the green economy focuses towards more social inclusiveness, economic diversification and poverty reduction. Over the time the concept of sustainable development shifts from economic growth to a more holistic approach that includes social environmental and economic dimensions. A green economy, characterized, low carbon and resources-efficient practices can contribute to sustainable development by reducing the use and production of harmful substance, minimizing pollution and promoting efficient use of resources. However, in the critical pathway of sustainable development through green economy faces different challenges such as financial constraint, conflicts between immediate profits and investment in sustainable technologies and corruption. To overcome these challenges, it is essential to empower education and sustainable energy solution, incentives for green investment and strengthens environmental regulation and to fostering a moral responsibility to create a better future for all. By enhancing sustainable development and green economy, we can build a bright future and ensure a stable environment for future generation.

References:

1. https://sustainabledevelopment.un.org/content/documents/24797GSDR_report_2019.pdf
2. https://sustainabledevelopment.un.org/content/documents/8211UNCTAD-Report-EGM-on-Green-Economy-background2.pdf
3. https://www.energy.gov.ng/papers/NES%202022%20Green%20Economy%20and%20Sustainability%20Development.pdf
4. https://en.wikipedia.org/wiki/Green_economy
5. https://www.masterclass.com/articles/green-economy
6. https://www.investopedia.com/terms/g/greeneconomics.asp
7. https://globalclimateactionpartnership.org/resource/green-economy-success-stories-from-developing-countries
8. https://iopscience.iop.org/article/10.1088/1755-1315/779/1/012007/metaTo cite this article: Suaad Hadi Hassan Al-Taai 2021 IOP Conf. Ser.: Earth Environ. Sci. 779 012007
9. Bina, O. (2013). The Green Economy and Sustainable Development: An Uneasy Balance? Environment and Planning C: Government and Policy, 31(6), 1023-1047. https://doi.org/10.1068/c1310j
10. Houssam N, Ibrahiem DM, Sucharita S, El-Aasar KM, Esily RR, Sethi N. Assessing the role of green economy on sustainable development in developing countries. Heliyon. 2023 Jun 15;9(6):e17306. doi: 10.1016/j.heliyon.2023.e17306. PMID: 37389081; PMCID: PMC10300370.

Environmental Education Global Pespective

Dr. Rafat Anis

Assistant Professor, Home Science, Hemwati Nandan Bahuguna Govt Post Graduate College, Naini, Allahabad

Abstract-

Each and every living organism has its specific surrounding medium of environment to which it continuously, interacts and remains fully adapted. Environmental education programs often aim to change people's perceptions about the value of the natural world and to teach how to change environmental behaviors, such as getting people to recycle or how to build eco-friendly dwellings.'It is widely agreed that education is the most effective means that society possesses for confronting the challenges of the future. Indeed, education will shape the world of tomorrow.'

Key Words: Environmental Education and Awareness

The environment is viewed differently by different subject expert and environmentalists. Each and every living organism has its specific surrounding medium of environment to which it continuously, interacts and remains fully adapted. According to Webster "it is the aggregate of all the external conditions and influences affecting the life and development of an organisms and group of organism." In an article "crises of Environment"- "Environment – refers to surroundings – those natural things around us from the essentials which sustain human life, such as the earth's atmosphere or healthy air or drinkable water, to the non essentials that nevertheless makes life sustainable, such as wild animals, clean places or human living places."

Twenty year after the initial act, the National Environmental Education Act as passed in 1990. This act formed the Office of Environmental Education within the Environmental Protection Agency, provided grants to schools, and authorized training programs for educators. The focus on improving training programs continued, as the Environmental Education and Training Partnership was forme3d in 1995 by the North American Association for Environmental Education (NAAEE). This organization provides environmental education training and support for professionals and is operated by college and non-profit organizations varying from year to year. As time as passes, the importance of having qualified, prepared educators in the environmental education field has become more and more evident. Through preparation of professional is essential to delivering quality environmental education programs and gaining the proper result Guidelines for Initial Preparation of Educator, also produced by NAAEE, were introduced in 2000, supplying professional with procedures to follow while training for environmental education (NAAEE 2005).

Environmental Education:

Environmental education is a process aimed at developing a world population that is aware of and concerned about the total environment and its associated problems, and which

has the knowledge, attitudes, motivations, commitments and skills to work individually and collectively toward solutions of current problem and the prevention of new ones.

According to a report of a conference of African Education at Nairobi)1968), " Environmental Education is to create awareness and understanding of the evolving social and physical environment as a whole, it natural, manmade, cultural, spiritual resources together with the rational us and conservation of these resources for development."

Environmental education generally refers to curriculum and programs which aim to teach people about the natural world and particularly about ways in which ecosystems work. Environmental education programs often aim to change people's perceptions about the value of the natural world and to teach how to change environmental behaviors, such as getting people to recycle or how to build eco-friendly dwellings.

In Western-style environmental education, the focus is mostly on understanding ways in which humans and human systems impact on the environment and non-human natural systems. However, it also important to teach and understand the impact of natural systems on humans and human society. for example, why do natural places seem to have a calming, even healing, effect on modern human?

Environmental education teaches students about how the planet's physical and biological systems work, and how we can create a more sustainable future.

While environmental education has its roots in nature study, conservation education, and outdoor education, it is distinctly different from these earlier movements. Whereas these areas focus on nature, wise use of natural resources, and the use of outdoors to teach, EE is fundamentally concerned with the interconnection between humans and the environments that surround then (Disinger & Monroe, 1994). In 1969 Dr. Willian Stapat the University of Michigan published the first definition of EE.

Environmental education is aimed at producing a citizenry that is knowledgeable concerning the biophysical environment and its associated problems, aware of how to help solve these problems, and motivated to work toward their solution (Stapp, W.B, et al. 1969) The concept of Environmental Education.

The definition has evolved with the research findings of environmental education scholars and their understanding of environmental literacy, behavior and the complexity of environmental issues. For the most part this definitional evolution has been a refinement and clarification of the original, while the overall objectives of EE – awareness, knowledge, attitudes, participation and skills and ultimately the creation of an environmentally literate citizenry, laid out in the Tbilisi Declaration of 1977 – have remained central to the mission of environmental education.

Environmental Education in the Global Context:

The 1997 UNESCO Statement 'Educating for a Sustainable Future: A Trans disciplinary vision for concerted action' states:

'It is widely agreed that education is the most effective means that society possesses for confronting the challenges of the future. Indeed, education will shape the world of tomorrow.'(1997:13).

Training of the Master Trainers has already been launched in current financial year. Among the conventional modes of mass communication, radio is the most potent medium to reach out to largest number of target groups with information and messages concerning

their lives and environment. Considering the coverage of the radio, which is more than 80% of the geographical area and population of the country, the Ministry has decided to produce and broadcast through Directorate of Advertising and Visual Publicity, two sponsored weekly radio programmes of half an hour and 15 minute duration over CBS stations and FM stations respectively of All India Radio.

In 2007-08, 9938 organizations were associated with National Environment awareness campaign and were provided financial assistance under the scheme through concerned Regional Resource Agencies. In this campaign, NGO/s, schools, colleges universities, research, institutions, women and youth organizations, army units, government departments etc. from all over the country got associated in organizing and conducting awareness raising activities followed by action oriented activities.

Reference:

1. Government of India, (2007) Planning Commission: The Steering Committee on the Environment and Forests Sector.
2. Sharma, B.K. (2006): An Introduction to Environmental Pollution, Krishna Publication Meerut.
3. Thiru, T.R. Balu (2003), Hon'ble minister Environment and Forest, Govt. of India: Speech at the inaugural session of the national seminar on "Corporate responsibility for environmental protection" at Delhi, 13 March.
4. Well Bum. A (1988), "Air pollution and Acid Rain: The biological impact", Longman, London.
5. Mathews J.S. "Encyclopedia dictionary of Environmental change London, Arnold Publishers, pp.194-88.
6. Husain M. (1992), "Mapping of Environment and sustainable Development, "Presidential address XX International Conference of the Indian National Cartographic Association (NOV) Jamia, New Delhi Shrivastava S. & Shrivastava P.K. (1997). "To save culture : save rivers – need & effects" National Seminars on "Environmental Education", Hindu College, Moradabad. 8. Rajpoot R.S. (2004), "Environmental study", New Delhi, NCERT, pp.56-658.
7. Mathews J.S. "Encyclopedia Dictionary of Environmental Change, London, Arnold Publishers, p. 194

Legislative Protection of Forests In India

Dr. Vivek Kumar

Faculty of Law, Banaras Hindu University, Varanasi, India

Abstract

The Forest Act, being a product of the British colonial period, reflects the exploitative intentions of colonial and feudal society of that time, rather than the environmental and ecological interests of the society. Based on a revenue-oriented policy, its main object was to regulate dealing in forest produce and augment the public exchequer by levy of duties on timber. The Indian Forest Act 1927 and State legislation relating to forest impose governmental control over forests by classifying them into reserved forests, protected forests and village forests. Every law carries with it the hopes and aspirations of the social and political forces at work at a given time. The Indian Forest Act, 1927 is a comprehensive legislation relating to forests management that consolidates the pre-existing laws. British colonial period the forest was protected by the tribal people but during the British period the forest were used as the matter of revenue extraction and not as natural resources. Many forests were destroyed in the name of agriculture and the need for more land for cultivation. Later on, forests were extensively cut to meet the needs of timber for ship building, iron smelting and tanning. Oak forests were cut and shipped to England for the use of English Royal navy as the "safety of the empire depended on its wooden walls. The Forest Amendment Bill (2023), enacted by parliament of India may facilitate balance towards the Center and may impact the rights and authority of the State governments in forest conservation matters.

Keywords- World Development, Environment, Forest Law, Policy, United Nations.

Introduction

A forest is an ecosystem characterized by a dense community of trees. Hundreds of definitions of forest are used throughout the world, incorporating factors such as tree density, tree height, land use, legal standing, and ecological function. The United Nations' Food and Agriculture Organization (FAO) defines a forest as, Land spanning more than 0.5 hectares with trees higher than 5 meters and a canopy cover of more than 10 percent, or trees able to reach these thresholds in situ. It does not include land that is predominantly under agricultural or urban use. Forests account for 75% of the gross primary productivity of the Earth's biosphere, and contain 80% of the Earth's plant biomass. Forests are regarded as India is tenth most forest rich country throughout the world. India's forest cover grew at 0.20% annually over 1990–2000, and has grown at the rate of 0.7% per year over 2000–2010, after decades where forest degradation was a matter of serious concern. Forests are recognized as curator and protectors of the wildlife of the country. Forests are valuable not only due to their botanical use but also for its recreational and scenic beauty that gives glory and attraction to the surrounding earth. They shelter wild animals, preserve gene pools, and protect the tribal population. Thus, forests help in maintaining the ecological balance. Besides these environmental and ecological benefits, forest bring revenue to the state, supply raw material to industries, and act as a source of fuel and fodder.

Significance of Forest in India

As of 2010, the Food and Agriculture Organization of the United Nations estimates India's forest cover to be about 68 million hectares, or 22% of the country's area. The 2013 Forest Survey of India states its forest cover increased to 69.8 million hectares by 2012, per satellite measurements; this represents an increase of 5,871 square kilometres of forest cover in 2 years. However, the gains were primarily in northern, central and southern Indian states, while north eastern states witnessed a net loss in forest cover over 2010 to 2012. In 2018, the total forest and tree cover in India increased to 24.39% or 8,02,088 km^2. It increased further to 24.56 percent or 807,276 square kilometres in 2019.

India has a thriving non-wood forest products industry, which produces latex, gums, resins, essential oils, flavours, fragrances and aroma chemicals, incense sticks, handicrafts, thatching materials and medicinal plants. About 60% of non-wood forest products production is consumed locally. About 50% of the total revenue from the forestry industry in India is in non-wood forest products category. The forest played a major role in early Indian literature, usually presented in opposition to settled society. It was represented as the setting for royal hunts, and as the home of hermits, whose hermitages are depicted as idyllic societies in harmony with the natural environment.

Yajnavalkya Smriti written before the 5th century AD prohibited the cutting of trees and if a tree is cut punishments were prescribed for such acts. The Kautalya's Arthashastra written in the Mauryan Period, says about the need of forest administration. It also says how a forest is important for a successful kingdom

Forest Legislations in India

In 1840, the British colonial administration promulgated an ordinance called Crown Land (Encroachment) Ordinance. This ordinance targeted forests in Britain's Asian colonies, and vested all forests, wastes, unoccupied and uncultivated lands to the crown. The Imperial Forest Department was established in India in 1864. The British state monopoly over Indian forests was first asserted through the Indian Forest Act of 1865. The government mainly used the woods for railway sleepers manufacture. This law also made teak wood a government property. This law simply established the government's claims over forests.

The British colonial government then passed the more comprehensive Forest Act of 1878, giving them control over all wastelands, which were defined to encompass all forests. As per the Indian Forest Act of 1878, the forests in India were divided into 3 different categories which are Reserved Forests, Protected Forests and Village Forests. Villagers could not take anything from the Reserved Forests for their own use. Villagers could use the forest products only from the village forests and protected forests, either to build their house or for fuel. This Act gave the government the power to designate woods as reserved and protected. In the former, all local rights were abolished while in the latter some existing rights were accepted as a privilege offered by the British government to the local people which can be taken away if necessary. These colonial laws brought the forests under the centralised sovereignty of the state.

Indian Forest Act, 1927

The Indian Forest Act, 1927 was largely based on previous Indian Forest Acts implemented under the British. The most famous one was the Indian Forest Act of 1878. Both the 1878 act and the 1927 act sought to consolidate and reserve the areas having forest cover, or significant wildlife, to regulate movement and transit of forest produce, and duty leviable

on timber and other forest produce. It also defines the procedure to be followed for declaring an area to be a Reserved Forest, a Protected Forest or a Village Forest. It defines what is a forest offence, what are the acts prohibited inside a Reserved Forest, and penalties leviable on violation of the provisions of the Act.

There was a very severe negative impact on villagers across the country due to the Indian Forest Act of 1927.

- Impact on Cultivation - The British believed that the practice of shifting cultivation would affect the supply of timber for railways. The Government also found it difficult to calculate the taxes due to shifting cultivation. Through the Indian Forest Act, the British colonial government decided to ban shifting cultivation, which was practiced by villagers. This resulted in forcible displacement of many communities from their homes in forests.
- Loss of Livelihoods for Nomads - Many nomadic communities like the Yerukula of the Madras Presidency, Korava, and Karacha lost their livelihoods due to the restrictions imposed on hunting and grazing by the local people. Some of the tribes were branded as 'criminal tribes. Under strict supervision of the British colonial government, they were forced to work in mines, factories and plantations. Workers were not allowed to visit their homes; their working conditions were very poor and their wages were very low.
- Rebellion in the Forests - Forest Communities in different parts of India rebelled against the British colonial Government due to the restrictions imposed on them. Some of the most popular leaders who carried out rebellion in forests were Alluri Sitarama Raju of Andhra Pradesh, Birsa Munda of Chhotanagpur, Siddhu and Kanu in the Santhal Parganas.

Forest Conservation Act, 1980

The Forest (Conservation) Act of 1980 (FCA, 1980) is an act by the Parliament of India which ensures the conservation of forests and their resources. It was enacted by the Parliament of India to control the ongoing deforestation of the forests of India. It came into force on October 25, 1980. The purpose of this Act is to foster recognition of the forest as a common heritage and promote sustainable forest development in order to meet the economic, environmental and social needs of present and future generations while giving proper consideration to other potential uses of the territory. The Forest Conservation Act of 1980 come with several features. The Act restricts the state government and other authorities to take decisions first without permission from the central government. The Forest Conservation Act gives complete authority to the Central government to carry out the objectives of the act. The Act levies penalties in case of violations of the provisions of FCA. The Forest Conservation Act will have an advisory committee which will help the Central government with regard to forest conservation.

The aim of the Forest Conservation Act 1980 is to preserve the forest ecosystem of India by fulfilling the following objectives:

1. Protect the forest along with its flora, fauna and other diverse ecological components while preserving the integrity and territory of the forests.
2. Arrest the loss of forest biodiversity
3. Prevent forest lands being converted into agricultural, grazing or for any other commercial purposes and intentions.

The act also lists restrictions where state authorities cannot make laws regarding forest without the permissions of the Central Government. The emphasis is on 'non forest purposes' which means that clearing forest land for the planting of Tea, Coffee, Spices, Rubber, Palms,

Oil-bearing Medicinal plants. Section 4 of the Forest Conservation Act empowers the Central government to carry out the laws described under the act. It is done through an officially notified gazette. Until the formation of a new rule it should be presented before the parliament within thirty days.

The National Forest Policy of 1988

The National Forest Policy of 1988 was the turning point of Forests Management in India which is broadly focused on environmental stability, restoration of ecological balance and preservation of biological diversity of the country. Apart from this, checking soil erosion and increasing tree cover are the two other important objectives of the policy.

The basic objectives that govern the 1988 National Forest Policy are:

- Maintenance of environmental stability through preservation and, where necessary, restoration of the ecological balance that has been adversely disturbed by serious depletion of forests of the country.
- Conserving the natural heritage of the country by preserving the remaining natural forests with the vast variety of flora and fauna, which represents the remarkable biological diversity and genetic resources of the country
- Checking soil erosion and denudation in the catchment areas of rivers, lakes, reservoirs in the interest of soil and water conservation, for mitigating floods and droughts and for the retardation of siltation of reservoirs. Also checking the extension of sand dunes.
- Increasing substantially the forest/tree cover in the country through massive afforestation and social forestry programmes, especially on all denuded, degraded and unproductive lands.
- Meeting the requirements of fuel wood, fodder, minor forest produce and small timber of the rural and tribal population.
- Increasing the productivity of forests to meet essential national needs.
- Encouraging efficient utilization of forest produce and maximizing substitution of wood.
- Creating a massive people's movement with the involvement of women, for achieving these objectives and to minimize pressure on existing forests.

The Scheduled Tribe and other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006

The Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006 was passed almost unanimously by the Lok Sabha as well as the Rajya Sabha on December 18, 2006. This legislation, aimed at giving ownership rights over forestland to traditional forest dwellers. The law concerns the rights of forest dwelling communities to land and other resources, denied to them over decades as a result of the continuance of colonial forest laws in India. A little over one year after it was passed, the Act was notified into force on December 31, 2007. On January 1, 2008, this was followed by the notification of the "Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Rules, 2007213 framed by the Ministry of Tribal Affairs to supplement the procedural aspects of the Act.

This Act not only recognizes the rights to hold and live in the forest land under the individual or common occupation for habitation or for self-cultivation for livelihood, but also grants several other rights to ensure their control over forest resources which, inter-alia, include right of ownership, access to collect, use and dispose of minor forest produce, community rights such as nistar; habitat rights for primitive tribal groups and pre-agricultural communities; right to protect, regenerate or conserve or manage any community forest resource which they have been traditionally protecting and conserving for sustainable use.

The Act also provides for diversion of forest land for public utility facilities managed by the Government, such as schools, dispensaries, fair price shops, electricity and telecommunication lines, water tanks, etc. with the recommendation of Gram Sabhas. In addition, several schemes have been implemented by the Ministry of Tribal Affairs for the benefit of tribal people, including those in the forest areas such as "Mechanism for marketing of Minor Forest Produce (MFP) through Minimum Support Price (MSP) and development of Value Chain for MFP". Funds are released out of Special Central Assistance to Tribal Sub Plan for infrastructure work relating to basic services and facilities viz. approach roads, healthcare, primary education, minor irrigation, rainwater harvesting, drinking water, sanitation, community halls, etc. for development of forest villages.

Under Section 3(1)(h) of the Scheduled Tribes and Other Traditional Forest Dwellers (Recognition of Forest Rights) Act, 2006, the rights of settlement and conversion of all forest villages, old habitations, un-surveyed villages and other villages in forest, whether recorded, notified, or not, into revenue villages have been recognized as one of the forest rights of forest dwelling Scheduled Tribes and other traditional forest dwellers on all forest lands.

As per the provisions of the Act and the rules framed thereunder, the forest right related to conversion of forest villages into revenue villages is to be adjudicated by the Gram Sabha, Sub-Divisional Level Committee and the District Level Committee as per the laid down procedure, like any other forest right specified in the Act. The Ministry of Tribal Affairs has issued guidelines on 8.11.2013, inter-alia, impressing upon all the State/ UT Governments to convert all such erstwhile forest villages, un-recorded settlements and old habitations into revenue villages with a sense of urgency in a time bound manner. The conversion would include the actual land use of the village in its entirety, including land required for current or future community uses, like, schools, health facilities, public spaces etc.

Compensatory Afforestation Fund Act, 2016

The CAF Act was passed by the centre in 2016 and the related rules were notified in 2018. The CAF Act was enacted to manage the funds collected for compensatory afforestation which till then was managed by ad hoc Compensatory Afforestation Fund Management and Planning Authority (CAMPA). The Compensatory Afforestation Fund Act, 2016 (CAF Act) provides the legal framework for compensating the loss of forest and ecosystem services due to diversion of forest land for non-forestry purposes as per provisions of the Forest (Conservation) Act, 1980.

The CAMPA funds are special and additional funds for compensating the loss of forest land and ecosystem services and are not meant to replace normal State funds. NPV funds aim at holistic ecological restoration of degraded forests, create/enrich more forests, improve the quality of forest cover and wildlife habitat, conservation of biodiversity and enhancement of ecosystem services. The States/UTs CAMPA prepare Annual Plan of Operations for carrying out afforestation and various activities for improvement of forest and wildlife habitat in accordance with the provisions of CAF Act & CAF Rules including the activities for utilisation of NPV fund.

The NPV fund available with most of the States/ UTs is limited and is likely to be exhausted if used without due diligence and proper planning. Since the ecological restoration of degraded forests require systematic and continuous efforts with adequate financial resources for long period of time, a perspective plan for effective utilisation of NPV funds is necessary. Therefore, the National (CAMPA) Authority issues guidelines/directions to State/UT Authorities from time to time including preparation of a perspective plan to rationalise fund utilisation within a given time frame with an identified physically achievable target. The States/UTs are advised

to identify and plan activities of ecological restoration viz. Assisted Natural/ Artificial Regeneration, soil & water conservation measures, silvicultural operations, removal of invasive species etc. and ensure continuous flow of funds for subsequent years towards creation and maintenance and avoid utilising this fund for non-essential activities.

Therefore, the State/UT CAMPA Authorities have been advised to prepare their perspective plan to strengthen efforts for conservation and improvement of forest and wildlife habitats in the country. The States and UT Authorities including Maharashtra are preparing their Annual Plan of Operations accordingly with a yearly limit of 15-20% on NPV Funds available with them. This will ensure regular flow of NPV funds for maintenance of plantations, soil moisture conservation and other related forest and wildlife habitat improvement activities.

The Forest (Conservation) Amendment Bill, 2023

The Bill amends the Forest (Conservation) Act, 1980 to make it applicable to certain types of land. The Act's name was changed to Van (Sanrakshan Evam Samvardhan) Adhiniyam, 1980 to reflect the potential of its provisions. These include land notified as a forest under the Indian Forest Act, 1927 or in government records after the 1980 Act came into effect. The Act will not be applicable for land converted to non-forest use before December 12, 1996. It also exempts certain types of land from the purview of the Act. These include land within 100 km of India's border needed for national security projects, small roadside amenities, and public roads leading to a habitation. The state government requires prior approval of the central government to assign any forest land to a private entity. The Bill extends this to all entities, and allows the assignment to be made on terms and conditions specified by the central government. The Act specifies some activities that can be carried out in forests, such as establishing check posts, fencing, and bridges. The Bill also allows running zoos, safaris and eco-tourism facilities.

The Bill excludes two categories of land from the purview of the Act: land recorded as forest before October 25, 1980 but not notified as a forest, and land which changed from forest-use to non-forest-use before December 12, 1996. This provision may go against a 1996 Supreme Court judgement on preventing deforestation. Exempting land near border areas for national security projects may adversely impact the forest cover and wildlife in north-eastern states. A blanket exemption for projects like zoos, eco-tourism facilities, and reconnaissance surveys may adversely affect forest land and wildlife.

The Bill proposes certain exemptions to encourage afforestation and plantation outside forests. 0.10 ha of forest land has been proposed to provide connectivity for habitation and establishments located on the side of roads and railways, up to 10 ha of land proposed for security related infrastructure and up to 5 ha of forest land in Left Wing Extremism Affected Districts for public utility projects. These exemptions include strategic projects related to national security within 100 km of the International Borders, Line of Actual Control (LAC), Line of Control (LoC) etc. It aims to ensure that such areas contribute to India's efforts in combating climate change by being recognized as part of its forest conservation efforts and contribute to India's international commitments like Net Zero Emission by 2070. Bill, 2023 (FCA) will erase the rights of indigenous communities living on India's borders.

Conclusions

Forests and its conservation is one of the crucial aspect of environment protection. Due to their huge significance in a nation's economy and growth, the legislature to protect forests biodiversity becomes imperative. State forestry in India, from the British to the present

times, has been a process of replacing the diverse species of a natural forest with monospecies. Both scientific and sustainable forestry management has led to the same result. Historically, forest dwellers have never truly owned the forest in the modern legal sense. What they have had is occupancy rights, i.e. rights to possess the forest and use its products. The Indian Forest Act represents a point in the dialectics which is neither discoverable nor applicable in this manner. Strictly, it lacks the necessary characteristics of law: it is merely a decree by political fiat being passed off as law within a political system that permits this. Some State governments have argued that forest conservation falls under the Concurrent List, which means both the Center and States have a role in the matter. They believe that the proposed amendments in Forest amendment Bill (2023), could tilt the balance towards the Center and may impact the rights and authority of the State governments in forest conservation matters.

There is a need to conduct a thorough and comprehensive assessment of the proposed amendments and their potential impacts on forests, biodiversity, and local communities. This assessment should consider ecological, social, and environmental factors and involve input from diverse stakeholders, including experts, NGOs, tribal communities, and State governments. Continue engaging in meaningful consultation and dialogue with all stakeholders to understand their perspectives and address their concerns. This will promote transparency, inclusivity, and better decision-making.

References

1. Shastri, S. C., Environmental Law, (2nd Ed.), Eastern Book Company, Lucknow, 2005.
2. Kailash, Thakur, Environmental Protection Law and Policy in India, Deep & Deep Publication, New Delhi, (1997).
3. Singh, Gurudip, Environmental Law: International and National Perspective, Lawman (India) Private Ltd., New Delhi (1995).
4. Divan, S.&. Rosencranz, A. (2001) Environmental Law and Policy in India (New Delhi, Oxford University Press).
5. Agrawal, A., and C. Gibson. 1999. "Enchantment and Disenchantment: Role of Community in Natural Resource Conservation." World Development 27 (4): 629–649.
6. Guha, S. 1999. "Communities, Kings, and Woodlands: Historical Reflections on Joint Forest Management." In A New Moral Economy for India's Forests: Discourses of Community and Participation, edited by N. Sundar and R. Jeffery. New Delhi: Sage Publications.
7. Kumar, C. 2005. "Revisiting 'Community' in Community-Based Natural Resource Management." Community Development Journal 40 (3): 275–285.
8. Kumar, K., N. M. Singh, and J. M. Kerr. 2015. "Decentralisation and Democratic Forest Reforms in India: Moving to a Rights-Based Approach." Forest Policy and Economics 51: 1–8.
9. Mark Poffenberger and Chhatrpati Singh, *Communities and State: Re-establishing the Balance in Indian Forest Policy, Village Voices, Forest Choices*: Joint Forest Management in India, 1996, p.58.

Air Pollution and Control Legislation in India Abstract

KM. Sunita Kumari

Research Scholar of Law University of Allahabad, (Uttar Pradesh)

Air pollution in urban areas arises from multiple sources, which may vary with location and developmental activities. Anthropogenic activities as rampant industrialization, exploitation and over consumption of natural resources, ever growing population size are major contributors of air pollution.

The presented review is an effort to discuss various aspects of air pollution and control legislation in India emphasizing on the history, present scenario, international treaties, gaps and drawbacks. The review also presents legislative controls with judicial response to certain landmark judgments related to air pollution. The down sides related to enforcement mechanism for the effective implementation of environmental laws for air pollution control have been highlighted.

Keywords: Constitution, Air pollutio , Acts , Policy

Introduction

Republic of India is one of the largest democratic nations in the world being the first country to insert an amendment into its constitution allowing the state to protect and improve the environment for safeguarding the public health, forests and wild life. There were some Articles (39, 42, 47, 48 and 49) indirectly dealing with the subject of environmental pollution and protection in the former constitutional law of India. However, in the year 1976, 42nd constitutional amendment was adopted in response to the Stockholm International Conference on Human Environment in 1972 and came into effect on 3rd January, 1977. The Directive principles of State Policy (Article 48-A) 38 and Fundamental Duties (Article 51-A-g) 39 under the Constitution of India explicitly announced the national commitment to protect and improve environment and preserve air quality.

Nowadays through judicial interpretations, the right to clean air has been identified as element of right to life under Article 21 of the Constitution. The language of the Directive Principles of State Policy (Article 47) requires not only a protectionist stance by the state but also compels the State to look for the improvement of the polluted environment. Policy statement for the amendment of pollution (1992) declares the objective of the government to integrate environmental considerations into decision makings at all levels.

History of Legislation in India

The prime minister of Magadh, during the regime of Chandra Gupta Maurya, 300 B.C. in his ‘Arthshastra’ revealed the question of environment protection Mauryan King Ashoka, Emperor Shivaji depicted compassion for environment.

Laws prior to the independence of India:

1. The Oriental Gas Company Act, 1857
2. Indian Penal Code, 1860

3. Indian Explosive Act, 1884
4. The Bengal Smoke Nuisance Act, 1905
5. The Bombay Smoke Nuisance Act, 1905
6. The Indian Boilers Act, 1923
7. Indian Petroleum Act, 1934
8. The Motor Vehicles Act, 1939

Present Scenario

1. The Factories Act, 1948 This is the first act of independent India indirectly focusing on air pollution. Chapter III, Sec. 13, 14 and 15 of this act focuses on proper ventilation, dust, fumes and humidity related to the health of labor.
2. The Industrial (Development and Regulation) Act, 1957 This was the first act providing Power to central government to cause investigation to be made into scheduled industries or industrial undertakings. The extent was limited to the purpose of conserving any resources of national importance which are utilized in the industry along with the regulation of production and industrial development.
3. The Mines Act, 1952 The consideration of air pollution was again limited to the ventilation, actions to be taken in respect of dust fire and inflammable and noxious gases including precautions against spontaneous combustion, underground fire and coal dust.
4. The Inflammable Substances Act, 1952 The act was indirectly stirring air pollution through safety. The solitary purpose of the act was to declare certain substances to be dangerously inflammable and regularizing such substances with Petroleum Act 1934.
5. The Atomic Energy Act, 1962 [The act was addressing only health impact and safety from the radioactive substances with the sole purpose of control over atomic energy and radioactive substances.
6. The Air (Prevention and Control of Pollution) Act, 1981 this is the first act formulated with the sole purpose to provide for the prevention, control and abatement of air pollution. It was established to carry out the purposes, of boards, for conferring on and assigning to such boards powers and functions relating to the matters concerned. The decisions were taken at the United Nations Conference on the Human Environment held in Stockholm in June, 1972, in which India participated, to take appropriate steps for the preservation of natural resources of the earth which, among other things, include the preservation of the quality of air and control of air pollution.
7. The Environment (Protection) act, 1986 this act came into force on 23rd May, 1986 to provide for the protection and improvement of environment and for matters connected there with. This act is serving as an umbrella act for many other rules and laws. Notification on lead free petrol and catalytic convertors for vehicles in metropolitan cities, 1995 etc.
8. Motor Vehicle Act, 1988 this act deals with control of automobile emissions and specifies vehicular emission standards.
9. The Ozone Depleting Substances (Regulation and Control) Rules, 2000 [6] India is categorized as operating under Article 5 paragraph 1 of the Montreal Protocol Regulation of production and consumption of ozone depleting substances. This act deals with prohibition on new investments with ozone depleting substances, Regulation of import, export and sale of products made with or containing ozone depleting substances along amid Monitoring and reporting requirements for the same. The Ozone Cell established by MoEF which has been given the responsibility for carrying out all tasks relating to phase out of ozone depleting substances.

10. The Municipal Solid Waste (Management and Handling) Rules, 2000 Ambient air quality monitoring has been made mandatory at the landfill sites including installation of landfill gas control system.
11. The Noise Pollution (Regulation and Control) Rules, 2000 Ambient air quality standards in respect of noise, mentioned here are classified on the basis of area (land use), time (day or night)

Some of the International Conventions/Treaties

1. Montreal Protocol on Ozone depleting substances, 1985 (Signed by India on: 19 June 1992) In 1977 the United Nations Environment Programme (UNEP) concluded a World Plan of Action on the Ozone Layer, which called for intensive international research and monitoring of the ozone layer, and in 1981, UNEP's Governing Council authorized UNEP to draft a global framework convention on stratospheric ozone protection. The Vienna Convention, concluded in 1985, is a framework agreement in which States agree to cooperate in relevant research and scientific assessments of the ozone problem, to exchange information, and to adopt "appropriate measures". The Montreal Protocol controls the production and consumption of specific chemicals, none of which occur naturally. This protocol resulted into The Ozone Depleting Substances (Regulation and Control) Rules, 2000 in India and categorized 95 ozone depleting substances in groups with their ozone depleting potential.
2. Helsinki Protocol on the reduction of Sulphur emissions or their transboundary fluxes, 1986 The need to control Sulphur emissions resulted into a Protocol to the convention on long-range transboundary air pollution on the reduction of Sulphur emissions/their transboundary fluxes by at least 30 % was entered into force in 1987. Twenty-one ECE countries are Parties to this Protocol, which aims at tapering off one of the major air pollutants. Given the target year 1993 for the 1985 Sulphur Protocol, all Parties to that Protocol have reached the target.
3. Sofia Protocol to control the emissions of Nitrogen Oxides or their transboundary fluxes, 1988 in 1988 the Protocol concerning the Control of Emissions of Nitrogen Oxides or their Transboundary Fluxes was adopted in Sofia (Bulgaria). This Protocol required a first step, to freeze emissions of nitrogen oxides or their Transboundary Fluxes. The general reference year was 1987. Nineteen of the 25 Parties to the 1988 NOx Protocol have reached the target and stabilized emissions at 1987 (or in the case of the United States 1978) levels. The second step to the NOx Protocol required the application of an effects-based approach. Applying the multi-pollutant, multi-effect critical load approach, a new tool being prepared which should provide for further reduction of emissions of nitrogen compounds, including ammonia, and volatile organic compounds. While developing this importance should be given to their contribution to photochemical pollution, acidification and eutrophication, and their effects on human health, the environment and materials, by addressing all significant emission sources.
4. Geneva Protocol concerning the Control of Emissions of Volatile Organic Compounds (VOCs) or their transboundary fluxes, 1991 In November 1991, the Protocol to the convention on long-range transboundary air pollution on the control of emissions of Volatile Organic Compounds hydrocarbons or their transboundary fluxes, the second major air pollutant responsible for the formation of ground level ozone, was adopted. It has entered into force on 29 September 1997. This Protocol specifies three options for emission reduction targets that have to be chosen upon signature or upon ratification:
    1. 30 % reduction in emissions of VOCs by 1999 using a year between 1984 and 1990 as a basis.

2. The same reduction as for (i) within a Tropospheric Ozone Management Area (TOMA) specified in Annex I to the Protocol and ensuring that by 1999 total national emissions do not exceed 1988 levels.
3. Finally, where emissions in 1988 did not exceed certain specified levels, Parties may opt for stabilization at that level of emission by 1999.
5. United nations framework convention on climate change, 1992 [7] (signed by India on 1 November 1993) UNFCCC is an international environmental treaty negotiated at the "Earth Summit", held in Rio de Janeiro from 3 to 14 June 1992. The objective of the treaty "stabilize greenhouse gas concentrations in the atmosphere at a level that would prevent dangerous anthropogenic interference with the climate system". It was opened for signature on 9 May 1992 and entered into force on 21 March 1994. As of 2014, UNFCCC has 192 parties.
6. Protocol to the United Nations Convention on Climate Change (Kyoto), 1997 (Signed by India in: 1997) At COP 1 (Berlin, March/April 1995), in a decision known as the Berlin Mandate, Parties discussed cide on stronger and more detailed commitments for industrialized countries. After two and a half years of intense negotiations, The Kyoto Protocol was adopted in Kyoto, Japan, on 11 December 1997 and entered into force on 16 February 2005.

   Recognizing that developed countries are predominantly responsible for the current high levels of GHG emissions in the atmosphere as a result of industrial activity, the Protocol places a burden on developed nations under the principle of "common but differentiated responsibilities." Its first commitment period started in 2008 and ended in 2012. As on April 2012 more than 4000 projects registered under Clean Development Mechanism; India at second amongst the 74 countries.

   India benefited from transfer of technology and additional foreign investments in the sectors like renewable energy, energy generation— efficiency promotion and afforestation projects. The Kyoto Protocol facilitated India to take up clean technology projects with external assistance in accordance with national sustainable development priorities.
7. Basel convention, 1989 (Signed by India on: 15 March 1990) The convention designed to reduce the movements of hazardous waste between nations, especially from developed to less developed countries indirectly helping to air pollution problem. This convention is intended (i) to minimize the generation of toxic waste (ii) to ensure the ecofriendly waste management as close as to the source (iii) to assist less developed countries for waste management.
8. Stockholm Convention on Persistent Organic Pollutants (POPs) (Signed by India on 14 May, 2002) The Stockholm Convention is a global treaty to control and reduce the use of persistent organic pollutants (POPs) to protect human health and the environment. POPs are chemicals that remain intact in the environment for long periods, accumulate in the fatty tissue of living organisms and are toxic to living organisms. In implementing the Convention, Governments are taking measures to eliminate or reduce the release of POPs into the environment. 9) Lima Climate Change Conference, UNFCCC,

Judicial Responses for Environmental Issues as Public Interest Litigations (PIL)

Judgments relating to air pollution issues have provided a great deal of momentum to improve air quality.

1. Taj Trapezium Case, Agra: Taj pollution matter: This writ Petition was filed by Mr. M.C.Mehta, regarding pollution caused to the Taj Mahal in Agra. The sources of air pollution were particularly iron foundries, ferro- alloys industries, rubber processing, lime processing, engineering, chemical industries, brick kilns, refractory units and automobiles especially the Mathura Refinery and Firozabad bangles and glass industries.

   Acid rain in this area has a corroding effect on the gleaming white marble. The Honourable Supreme Court after examining the reports from National Environmental Engineering Research Institute, Varadarajan committee, Central Pollution Control Board (CPCB) and Utter Pradesh (U.P.) Board, on 31.12.1996 directed that the industries in the Taj Trapezium Zone (TTZ) were the active contributors of air pollution. All the 292 industries had to approach either to the GAIL for grant of industrial gas-connection or to the U.P. Government for allotment of alternative plots outside TTZ or stop functioning using coke/coal. Constitution Of Mahajan Committee

   The Honorable Supreme Court on 30.8.1996 directed the Mahajan Committee to inspect the progress of the green belt development and the Taj Trapezium Zone Pollution (Prevention and Control) Authority to monitor progress of the implementation of various schemes. (Constituted on 17.5.1999).
2. Delhi air pollution case: Vehicular pollution in Delhi: This writ petition was filed in the year of 1985 under Article 21 of the Constitution of India regarding air pollution in Delhi. The Petitioner challenged the inaction on the part of the Union of India, Delhi Administration (Government of National Capital Territory of Delhi) and other Authorities whereby smoke, highly toxic and other corrosive gases were allowed to pass into the air due to which the people of Delhi were put to high risk. During the pendency of this Writ Petition, the Honourable Supreme Court passed several orders/ directions to deal with the situations arising from time-to-time and impressed upon the concerned authorities to take urgent steps to tackle the acute problem of vehicular pollution in Delhi on 26.7.1998 which include elimination of leaded petrol, replacement of old autos, taxies and buses, construction of new Interstate Bus Terminus at entry points, along with strengthening the air quality monitoring
3. Vellore Citizen Welfare Forum Vs Union of India and Others (1996) 5 SSC 64 On 5.4.2002, the Honorable Supreme Court has relied on the judgment in which Precautionary principle and 'polluter pays principle' was discussed. The Honorable Supreme Court issued the directions for compliance emphasizing that, the Union of India would give priority to transport sector including private vehicles all over India with regard to the allocation of CNG.
4. Pollution by industries in Delhi: M.C.Mehta Vs Union This Writ Petition was filed by Mr. M.C.Mehta in 1985 regarding the pollution in Delhi by the Industries located in residential areas of Delhi. The Honorable Supreme Court after considering the reports submitted by the CPCB and the Delhi Pollution Control Committee, finally ordered vide its various orders, dated 8.7.1996, 6.9.1996, 10.10.1996, 26.11.1996 and 19.12.1996. These orders include: 168 industries falling in 'Ha' and 'Hb' categories which were hazardous/noxious/heavy and large industries, 513 industries falling under 'H' category 43 Hot Mix Plants, 246 brick kilns falling under category 'H', 21 arc/induction furnaces falling under 'H' category industries under the Master Plan of Delhi (MPD-2001) were directed to close down and stop functioning and operating in Union Territory of Delhi. However, those industries could relocate to any other industrial estate in the NCR or may change their technology to cleaner one.
5. Noise pollution by firecrackers: (Noise Pollution—Implementation of the laws for restricting use of loudspeakers and high volume producing sound systems) Vs UOI & Ors The Honorable Court after hearing the matter on 27.9.2001 issued directions to all

the States and the Union Territories to control noise pollution arising out of bursting of firecrackers, stressing on time period of the day, area (silence zones), and public awareness.

6. Air pollution from Chembur, Mumbai, India Chembur was identified as 'critically polluted area' in 1990 with air pollution being the dominant problem. The major industries in this area are oil refineries, fertilizer, chemical and large power generating units; The four major industries in this area are BPCL, HPCL, RCF & Oswal Petrochemicals for which action plans were prepared for monitoring the status of pollution control measures in these industries.
7. Oleum Gas leak case: Oleum gas leak case on strict liability: M.C.Mehta Vs Union of India and Ors In M.C.Mehta vs. Union of India & Shri Ram Fertilizer vs. Union of India also known as 'Oleum Gas leak case', the significant questions raised were related to the scope of Article 21 and Article 32 of the Constitution of India. The basis on which damages in case of such liability should be quantified, whether such large enterprises should be allowed to continue to function in thickly populated areas and if so permitted, what measures should be adopted to reduce the risks to minimum to the workers and community. The court recommended that a national policy for location of hazardous industries in areas of scarce pollution highlighting the need of setting up neutral scientific expertise body which could act as an information bank for the courts and the government departments and recommended for establishing 'environmental courts' to deal with cases of environmental pollution.
9. Union Carbide Corporation vs. Union of India (BhopalCASE-III) In Union Carbide vs. Union of India, review petitions under Article 137 and writ petitions under Article 32 of the Constitution of India, raised certain fundamental issues as to the constitutionality, legal validity, propriety, fairness and conceivability of the settlement of the claims of the victims in a mass-tort action relating to what is known as the "Bhopal Gas Leak Disaster," considered as the world's worst industrial disaster, unprecedented to its nature and magnitude.
10. Murli Deora vs. Union of India and others, while prohibiting smoking in public places the Supreme Court stated that "fundamental right under Article 21 of the Constitution of India provides that no one shall be deprived of his life without due process of law. In any case there is no reason to compel non-smokers to be the helpless victims of air pollution. Realizing the gravity of the situation the Honorable Supreme Court directed and prohibited the smoking in public places and issue directions to the Union of India, State governments as well as the union territory to take effective steps.

Issues in Focus

1. National Ambient Air Quality Standards Following a gap of 15 years, the Ministry of Environment and Forests has notified the Revised National Ambient Air Quality Standards in the official Gazette under the Environment (Protection) Act, 1986 on 16.11.2009 . Some of the salient features include:
2. (i) Area classification based on land-use has been done away so that industrial areas have to conform to the same standards as residential areas. (ii) The standards shall be applicable uniformly with the exception of stringent standards for NO2 and SO2 in the Ecologically Sensitive Areas.
3. (iii) The previous standards for residential area have been uniformly applied for fine particulate matter (PM10), Carbon Monoxide and Ammonia. More stringent limits for Lead, SO2 and NO2 have been prescribed even for residential areas.
4. (iv) Suspended Particulate Matter (SPM) as parameter has been replaced by fine particulate matter (PM2.5).

5. (v) Other new parameters like, Ozone, Arsenic, Nickel, Benzene and Benzo(a)Pyrene have been included.
6. (vi) Standards for short duration, just one to few hours, have been set to reduce peak exposure to some deadly gases like Ozone and Carbon Monoxide.
7. (vii) Indian cities are reeling under heavy particulate pollution with 52 % of cities (63 cities) hitting critical levels (exceeding 1.5 times the standard), 36 cities.

   2.with high levels (1–1.5 times the annual standard) and merely 19 cities are at moderate levels, which is 50 % below the standard. The revised standards are stricter than previous; hence it will increase the number of highly polluted or critically polluted cities in India downgrading its international image.
2. Implementation of Continuous Ambient Air Quality Monitoring Stations for large scale industries
3. Monitoring of heavy metals in ambient air quality for large scale industries as a compliance condition
4. Implementation of Continuous Emission Monitoring System for large scale industries
5. Vehicular emission standards: Regulation of Emission Norms in India
6. Promoting low carbon transport in India: Project by UNEP, Government of India (2011)
7. National Noise Monitoring Program, 2010: In pursuance to National Environmental Policy-2006 ambient noise inclusion as an environmental quality parameter and its monitoring in specified urban areas is regularly needed. CPCB established the National Ambient Noise Monitoring Network (NANMN) covering 35 locations in seven metro cities.

In the second phase, 35 more stations shall be added in 2011 in the same seven cities, while in the third phase, 90 more locations in 18 other cities are planned which become a largest Real Time Ambient Noise Monitoring Network in world.Some of the Gaps/Drawbacks Technical (i) Laboratory facilities are inadequate (e.g. Dioxins and furans) CPCB is addressing some of the industries to monitor dioxins and furans (e.g. cement industries) as a compliance condition through the consent in India.

The laboratory facilities for analysis of these chemicals/pollutants are very limited in India. (ii) National air monitoring plan CPCB is executing a nation- wide program of ambient air quality monitoring known as National Air Quality Monitoring Program (NAMP). The network consist of 342 operating stations covering 127 cities/towns in 26 States and 4 Union Territories of the country.

Due to the revised National Ambient Air Quality Standards the common platform of comparison for air quality monitoring data needs to be redefined. Facilities to monitor PM2.5 (new parameter) are again limited.

(iii) Unavailability of proper and efficient technology for vehicular emissions As the available technology is not that much efficient and economic it is very difficult to prevent and control the automobile pollution.

(iv) Economic loss due to air pollution is not considered in policy formation No policy developed on the basis of economic loss due to air pollution. Any law is considering only one objective at a time like land use pattern, health etc.

(v) No data about agricultural sensitive area Some of the agricultural species of plants (crops) are sensitive to the air pollution. These are not considered anywhere in policy formation. The damage to these crops gives rise to the biological loss in terms of food and economic loss as well.

(vi) Indoor air pollution Several international studies have documented, indoor air pollution leads to 400,000–550,000 premature deaths in India from acute lower respiratory infections and chronic obstructive pulmonary disease.It is observed that regulatory agencies have failed to focus on it Non-technical

(i) Top to down approach of policy formation Some of the policies are developed with top to down approach without considering the root level situation or they are enforced by considering only some of the part of whole area. So, it fails to achieve objectives of the policy or generates some other environmental issues.

(ii) Public awareness and participation in legislation In some of the countries people make government to develop the policies but in India policy comes first then people get to know about it.

(iii) Implementation of enforced policy, law, rules The history shows that the Acts, laws, rules prepared are theoretically paramount but fails in implementation. Some of the reasons for this are, lack of willingness of authorized agencies, lack of awareness in community, topographic- cultural-economic variations of the country, public participation etc.

(iv) Need of composite law Environmental legislation in India is not a composite one. It means, it is limited in scope and deals with only one aspect of environmental protection at a time, e.g. water, air etc. Despite the piecemeal approach towards environmental protection, the Indian policy should be reasonable to form a comprehensive policy.

(v) Time consumption in Judiciary responses Judiciary responses on Environmental issues discussed above concludes that the time required is a key concern in such PILs. Many of the Environmental laws and regulation in India are the result of reactive approach to the public interest litigations, international treaties and pressure groups being another cause of time consumption. There is a crucial need of proactive, participatory; time bound decisions making system to deal with environmental issues in India

References

1. S.P. Mahajan, Book of Air Pollution Control (TERI Press, New Delhi, 2009), p. 4
2. V. Kulkarni, T.V. Ramchandra, Book of Environmental Man agement (TERI Press, New Delhi, 2009)
3. The Energy and Resources Institute, Environmental justice: scope and access workshop on sustainable development for the subor dinate judiciary (19th–21st Aug 2006). (The Energy and Resources Institute, New Delhi, 2006)
4. http://lawmin.nic.in/. Accessed December 2013
5. Central Pollution Control Board, Pollution control acts, rules and notifications issued thereunder, Pollution control law, series: PCLS/02/2010
6. United Nations Climate Change Secretariat, 13 April 2012, Bonn
7. Lima-Call for Climate Action, Decisions of COP 20, UNFCCC, December 2014
8. National Action Plan on Climate Change, Prime Minister's Council on Climate Change, Government of India (2008)